## स्व० पुण्यञ्लोका माता मूर्तिदेवीकी पवित्र स्मृतिमें तत्सुपुत्र साहू शान्तिप्रसादजी द्वारा

संस्थापित

# मारतीय ज्ञानपीष्ठ मृतिदेवी जैन-यन्यमाला



इस ग्रन्थमालामें प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, हिन्दी, कञ्चढ, तामिल आदि प्राचीन भाषाओं में उपलब्ध आगमिक, दार्शनिक, पौराणिक, साहित्यिक और ऐतिहासिक आदि विविध-विषयक जैन साहित्यका अनुसन्धानपूर्ण सम्पादन और उसका मूल और यथासंभव अनुवाद आदिके साथ प्रकाशन होगा । जैन भण्डारोंकी सूचियाँ, शिलालेख-संग्रह, विशिष्ट विद्वानोंके अध्ययन-ग्रन्थ और लोकहितकारी जैन-साहित्य ग्रन्थ भी इसी ग्रन्थमाला में प्रकाशित होंगे।

ग्रन्थमाला सम्पादक डॉ॰ हीरालाल जैन, एम॰ ए॰, डी॰ लिट् डॉ॰ आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्याय, एम॰ ए॰, डी॰ लिट्

प्रकाशक

अयोध्याप्रसाद गोयलीय,

मन्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ
दुर्गाकुण्ड रोड, बनारस

स्थापनाब्द फाल्गुन कृष्ण ९ वीर नि०२४७०

सर्वाधिकार सुरक्षित

विक्रम सं० २००० १८ फरवरी सन् १९४४



स्वर्गीय मृतिदेवी सातेश्वरा साह शास्त्रियसाद जन

# JNANAPITHA MURTIDEVI JAINA GRANTHAMALA PRAKRIT GRANTHA NO. 5

## **MAHABANDHO**

[ MAHADHAVAL SIDDHANTA SHASTRA]

2. Bidio Tthidi bandhahiyaro

Vol. 111

#### STHITI BANDHADHIKARA

WITH

HINDI TRANSLATION



Editor

Pandit, PHOOL CHANDRA, Siddhant Shastry.



Published by

Bharatiya Inanapitha, Kashi

First Edition 1000 Copies.

JYESHTHA VIR SAMVAT 2480 VIKRAMA SAMVAT 2011 JUNE 1954

Price Rs. 11/-

# Bharatiya Jmana-Pitha Kashi

FOUNDED BY

#### SAHU SHANTI PRASAD JAIN

IN MEMORY OF HIS LATE BENEVOLENT MOTHER

#### SHRI MURTI DEVI

#### BHARATIYA JNANA-PITHA MURTI DEVI JAIN GRANTHAMALA

PRAKRIT GRANTHA NO. 5

<u>ままなのなんのものもののとのものものものがないかんしゅんとうべんのとんせん</u>

IN THIS GRANTHAMALA CRITICALLY EDITED JAIN AGAMIC PHILOSOPHICAL,
PAURANIC, LITERARY, HISTORICAL AND OTHER ORIGINAL TEXTS

AVAILABLE IN PRAKRIT, SANSKRIT, APABHRANSA, HINDI,
KANNADA AND TAMIL ETC., WILL BE PUBLISHED IN
THEIR RESPECTIVE LANGUAGES WITH THEIR
TRANSLATIONS IN MODERN LANGUAGES

AND

CATALOGUES OF JAIN BHANDARAS, INSCRIPTIONS, STUDIES OF COMPETENT SCHOLARS & POPULAR JAIN LITERATURE WILL ALSO BE PUBLISHED

ひかため ひどうさうひうしんじゅうしゅう ライドイ けつきそう レクセク レクセク しゃんかんかん からん

General Editors

Dr. Hiralal Jain, M. A. D. Litt. Dr. A. N. Upadhye, M. A. D. Litt. Publisher

AYODHYA PRASAD GOYALIYA Socy., BHARATIYA JNANAPITHA, DURGAKUND ROAD. BANARAS

Founded in
Phalguna Krishna 9.
Vira Sam. 2470

All Right's Reserved.

Vikrama Samvat 2000 18th Febr. 1944

### सम्पादकीय

त्राजसे लगभग सवा वर्ष पूर्व स्थितिबन्धका पूर्व भाग सम्पादित होकर प्रकाशमें श्राया था। यह उसका शेष भाग है। भारतीय ज्ञानपीठकी त्र्रोरसे सब तरहकी सुविधाएँ प्राप्त होने पर भी इसके सम्पादनमें श्रपने वैयक्तिक कारणोंसे हमें पर्याप्त समय लगा है इसके लिए इम स्नमाप्रार्थी है।

#### सहयोग

श्रीयुत बन्धु रतनचन्द्रजी मुख्तार व बन्धुवर नेमिचन्द्रजी वकील सहारनपुर षट्खण्डागम श्रीर कषाय-प्राभृतके विशेष श्रभ्यासी हैं। श्री रतनचन्द्रजीने तो एक तरहसे गाईस्थिक मंभरोसे श्रपनेको मुक्त ही कर लिया है श्रीर श्राजीविकाको तिलाज्ञिल दे दी है। योड़े बहुत साधन जो उनके पास बच रहे हैं उन्होंसे वे श्रपनी श्राजीविका चलाते हैं। जीवनमें सादगी श्रीर निष्कपट सरल व्यवहार उनके जीवनकी सबसे बड़ी विशेषता है। इस वर्ष दस लच्चण पर्वके दिनोमें हम सहारनपुर श्रामन्त्रित किये गये थे, इसिलए निकटसे हमें उनके जीवनका श्रध्ययन करनेका श्रवसर मिला है। इस श्राधारसे हम कह सकते हैं कि वे घरमें रहते हुए भी साधु जीवन विता रहे हैं। योगायोगको बात है कि इन्हें पत्नी भी ऐसी मिली हुई हैं जो इनके धार्मिक कार्योमें पूरी साधक हैं। यो तो दोनो बन्धु भिलकर इन महान् ग्रन्थोका स्वाध्याय करते है परन्तु श्री रतनचन्द्रजीका श्रम्थास तगड़ा है श्रीर इन ग्रन्थोंके सम्पादनमें उनके परामर्शकी श्रावश्यकता श्रमुभवमें श्राती है। वे यह इच्छा तो रखते हैं कि इन ग्रन्थोंके प्रकाशनके पहले हमें उनके स्वाध्यायका श्रयसर मिल जाय तो उत्तम हो श्रीर ऐसा करनेमें लाभ भी है पर कई कारणोसे इस व्यवस्थांक जमानेमें कठिनाई जाती है। स्थितबन्धका श्रम्तिम कुछ भाग श्रवश्य ही उन्होंने देखा है श्रीर उनके सुक्ताबोसे लाभ भी उठाया गया है। श्राशा है भिवष्योमें इस सुविधाके प्राप्त करनेमें सुधार होगा श्रीर उनके सुक्ताबोसे लाभ भी उठाया गया है। श्राशा है भिवष्योमें इस सुविधाके प्राप्त करनेमें सुधार होगा श्रीर उनके श्रावश्यक सहयोग मिलता रहेगा।

#### शुद्धि-पत्रक

श्री रतनचन्द्रजीने प्रकृतिबन्ध श्रीर स्थितिबन्धके पूर्वभागका श्रुद्ध-पत्रक तैयार करके हमारे पास मेजा है। उसमें त्रावश्यक संशोधन करके मुद्रित कर देनेमें लाभ भी है। िकन्तु इधर हमारे मित्र श्रीयुत लाला राजकृष्णजी देहलीके निरन्तर प्रयक्त करनेके फलम्बरूप मूडिबद्रीसे कनडी मूल ताडपत्रीय प्रतियोंके कोटो देहली वीरसेवा मन्दिरमें श्रा गये हैं। श्री लाला राजकृष्णजीने दौड़ धूप करके यह काम तो बनाया हो है श्रीर इसमें उन्हें श्रीयुत बाबू छोटेल लजी कलकत्ता वालोंका भी पूरा सहयोग मिला है। िकन्तु सबसे श्रिषक उत्तेलनीय बात यह है कि लाला राजकृष्णजी की पत्नीका इन प्रन्थोंके उद्धार कार्यमें विशेष हाथ रहा है। वे स्वयं इन महानुभावोंके साथ मूड़िबद्री गई श्रीर हर तरहकी कमीकी पूर्तिमें साधक बनों तभी यह काम हो सका है। श्रतएव इस भागके साथ हमने पूर्व भागोंका श्रुद्धिपत्रक नहीं जोड़ा है, क्या कि इन प्रन्थों के उत्तर भारतमें सुलभ हो जानेसे हमारा विचार है कि एक बार प्रकाशित श्रीर श्रमकाशित भागका शान्तिसे इन मूल प्रन्थोंके साथ मिलान कर लिया जाय श्रीर तब जाकर प्रकाशित भागोंमें जो कमी रह गई हो उसे प्रकाशमें लाया जाय। इमें विश्वास है कि हमारे साथी हमारे इन विचारांका समर्थन करेंगे।

#### आवश्यक निवेदन

हमें भारतीय ज्ञानपीठके सुयोग्य मन्त्री श्रीयुत ऋयोध्याप्रसादजी गोयलीयने जितनी तत्परतासे यह कार्ये करनेके लिए सौंपा था उतनी तत्परता हम इस काममें दिखा नहीं सके। ऋगशा है वे हमारी इस कमजोरीकी ऋगेर विशेष ध्यान नहीं देंगे और जिस तरह ऋभी तक सहयोग देते ऋगये हैं देते रहेंगे।

श्रन्तमें हमें समाजसे इतना ही निवेदन करना है कि दिगम्बर परम्परामें इन महान् ग्रन्थोंका बड़ा महत्व है। द्वादशांग बाणीसे इनका सीचा सम्बन्ध है। एक समय था जब हमारे पूर्वेज ऐसे महान् ग्रन्थोंकी लिपि कराकर उनकी रच्चा करते थे किन्तु वर्तमान कालमें हम उन्हें स्वल्प निछावर देकर भी श्रपने यहाँ स्थापित करनेमें सकुचाते हैं। यह शङ्का को जाती है कि हम उन्हें सममते नहीं बुलाकर क्या करेंगे। किन्तु उनकी ऐसी शङ्का करना निर्मृत है। ऐसा कौन नगर या गाँव है जहाँके जैन एहस्थ तात्कालिक उत्सवमें कुछ न कुछ खर्च न करते हो। जहाँ उनकी यह प्रवृत्ति है वहाँ जैनधर्मके मूल साहित्यकी रच्चा करना भी उनका परम कर्तव्य है। कहते हैं कि एक बार धार रियासतके दीवानको वहाँके जैन बन्धुश्रोंने जैन मन्दिरके दर्शन करनेके लिए बुलाया था। जिस दिन वे श्रानेवाले थे उस दिन मन्दिरजीमें विविध उपकरणोंसे खूब सजावट की गई थी। जिन उपकरणोंकी धारमें कमी थी वे इन्दौरसे बुलाये गये थे। दीवान सा० श्राये श्रौर उन्होंने श्री मन्दिरजी को देखकर यह श्रामियाय व्यक्त किया कि जैनियोंके पास पैसा बहुत है। श्रन्तमें उन्हें वहाँका शास्त्र मण्डार भी दिखलाया गया। शास्त्र भण्डारको देखकर दीवान सा० ने पृत्रा कि ये सब ग्रन्थ किस धर्मके है। जैनियोंकी श्रोरसे यह उत्तर मिलने पर कि ये सब जैनधर्मके ग्रन्थ है दीवान सा० ने कहा कि यह जैनधर्म है।

इससे स्पष्ट है कि साहित्य ही धर्मकी श्रमूल्य निधि है। महान्से महान् कीमत देकर भी यदि इसकी रह्मा करनी पहे तो करनी चाहिए। यहस्थोंका यह परम कर्तव्य है। हम यह शिकायत तो करते है कि मुसलिम बादशाहोंने हमारे प्रन्थोंको ईंघन बनाकर उनसे पानी गरम किया किन्तु जब हम उनकी रह्मा करनेमें तत्पर नहीं होते श्रीर उन्हें भण्डारोंमें सड़ने देते हैं या उनके प्रकाशित होने पर उन्हें बुलाकर श्रपने यहाँ स्थापित नहीं करते तब हमें क्या कहा जाय ? क्या हमारी यह प्रवृत्ति उनकी रह्मा करनेकी कही जा सकती है ? स्पष्ट है कि यदि हमारी यही प्रवृत्ति चालू रही तो हम भी श्रपनेको उस दोपसे नहीं बचा सकते जिस का श्रारोप हम मुसलिम बादशाहों पर करते हैं। शास्त्रकारोंने देव श्रीर शास्त्रमें कुछ भी श्रन्तर नहीं माना है। श्रतएव हम यहस्थोंका कर्तव्य है कि जिस तरह हम देवकी प्रतिष्ठामें धन व्यय करते हैं उसी प्रकार साहित्यकी रह्मामें भी हमें श्रपने बनका व्यय करनेमें कोई न्यूनता नहीं करनी चाहिए। श्राशा है समाज श्रपने इस कर्तव्यकी श्रोर सावधान होकर पूरा ध्यान देगी।

हमने इस भागके सम्पादन त्रादिमें पृरी सावधानी बरती है फिर भी गाईस्थिक अंअकटोके कारण ब्रिटि रह जाना स्वाभाविक है। श्राशा है स्वाध्यायप्रमी जहाँ जो कमी दिखाई दे उसकी सूचना हमें देनेकी कृपा करेंगे ताकि भविष्यमें उन दोषोंको दूर करनेमें हमें प्रेरणा मिलती रहे।

—फूलचन्द्र सिद्धान्तशास्त्री

#### प्रकाशन-व्यय

१४६१) कागज २२ × २६ = २८ पौण्ड

७१ रीम ६ दस्ता

१७५७) छुपाई ६३॥ फार्म

११००) जिल्द बँघाई

४०) कवर कागज

५०) कवर छपाई

२५१०) सम्पादन

३००) कार्यालय व्यवस्था

दरप) मेंट, श्रालोचना, १०० प्रति

१५०) पोस्टेज ग्रंथ मेंट मेजनेका

३०००) कमीशन, विज्ञापन, विक्री ऋादि

कुल लागत ११२५३)

१००० प्रति छुपी । लागत एक प्रति ११।)

मूल्य ११ रु०

#### प्रशस्ति

स्थितिबन्धके श्रन्तमें एक प्रशस्ति श्राती है वह इस प्रकार है— यो दुर्जयस्मरमदोस्कटकुंभिकुंभ-

संचोदनोत्सुकतरोध्रमृगाधिराजः।

शल्यम्रयादपगतस्त्रयगारवारिः

संजातवान्स भुवने गुणभद्रसूरिः ॥ १ ॥

दुर्वारमारमदसिन्धुरसिन्धुरारिः

शल्यत्रयाधिकरिपुस्रयगुप्तियुक्तः ।

सिद्धान्तवाधिपरिवर्धनशीतरिक्यः

श्रीमाघनंदिमुनिपोऽजनि भूतलेऽस्मिन् ॥ २ ॥

वरसम्यक्तवद देशसंयमद सम्यग्बोधद्त्यन्तभा-

सुरहारत्रिकसौख्यहेतुवेनिसिर्दादानदौदार्यदे-।

लुतरदिंगीतने जन्मभूमियेनुतं सानंददिं कूर्तुभू

भरमेलुं पोगलुत्तमिर्पुद्भिमानाबीननं सेननं ॥ ३ ॥

सुजनते सत्यमोलपु गुणोन्नति पेंपु जैनमा-

र्गजगुणमें ब सद्गुणविन्यधिकं तनगोप्पन्र्नध-

र्मजनिवनेंदु किसे सुमदीधरे मेदिनिगोप्पितोब्बे चि-

शजसमरूपनं नेगल्द सेनननुद्धगुणप्रघाननं ॥ ४ ॥

अनुपमगुणगणदतिब-

र्मन शीलनिदानमेसेक जिनपदसत्को ।

कनद्शिलीमुखि येने मां-

तनदिंदं मिल्लकब्बे ललनारतनं ॥ ५ ॥

जो दुर्जय स्मररूपी मदोन्मत हाथीके गण्डस्थलके विदारण करनेमें उत्सुक सिंहके समान हैं, जिन्होंने तीन शल्योंको दूर कर दिया है और जो तीन गारवोंके शत्रु हैं वे गुणभद्रसूरि इस लोकमें प्रसिद्धिको प्राप्त हुए ॥१॥

जो दुर्वार माररूपी मदिवहिल हाथीके समान हैं तथा जो तीन शल्योंके लिए शत्रुके समान है, जो तीन गुप्तियोंके चारक हैं श्रीर जो सिद्धान्तरूपी समुद्रकी दृद्धिके लिए चन्द्रमाके समान हैं वे श्रीमायनिन्दि श्राचार्य इस भृतलपर हुए ॥ २॥

सचरित्र, संयमी, सम्यग्जानवान् , सबको सुख देनेवाले, दानी, उदार श्रौर श्रिभिमानी सेनकी बहुत ही श्रानन्दसे सभी खोग प्रशंसा करते थे ॥ ३ ॥

सौजन्य, सत्य सद्गुणोंकी उन्नति श्रीर जैनमार्गमें रहना इन सद्गुणों से युक्त, स्मरके समान सुन्दर गुण प्रधान सेन नवीन भ्रमात्मज कहलाता था ॥ ४ ॥

त्र नुपम गुणगणयुक्त, सुशील, जिनपदभक्त, स्त्रीरल मिल्लकवा उसकी पत्नी थीं ॥ ५ ॥

था वनितारसद पें-

पावंगं पोगललरिद् जिनपुजेयना-।

ना विधद दानदमलिन-

भावदोला मिल्लकब्बेयं पोल्ववरार ॥ ६ ॥

श्रीपंचिमयं नोतु-

द्यापनमं माडि बरसि राखान्तमना ।

रूपवती सेनवधू जित-

कोपं श्रीमाधनंदि-यतिपतिगित्तल् ॥ ७ ॥

उस वनितारत्नको जिनपूजाके बारेमें प्रशंसा कौन कर सकता है, उस मिल्लकव्याके समान भक्त कोई थी ही नहीं ॥ ६॥

जिन सिद्धान्तको माननेवाली रूपवती उस सेनपत्नीने श्रीपञ्चमीका उद्यापनकर जितकोष माधनन्दि यतीश्वरको लिखवाकर यह (सिद्धान्त प्रनथकी प्रति ) दी है ॥ ७ ॥

इस प्रशस्तिमे चार व्यक्तियोंका नामोल्लेख सहित गुणकीर्तन किया गया है—गुणभद्रसूरि, त्र्याचार्य माधनन्दि. सेन त्रौर उसकी पत्नी मिल्लकन्त्रा।

मिल्लिकव्या सेनकी पत्नी थी। पं॰ सुमेरुचन्द्रजी दिवाकरने भी प्रथम भागकी भूमिकामें यह प्रशस्ति उद्भुत की है। उन्होंने सरकर्मपञ्चिकाके श्राधारसे 'सेन' का पूरा नाम शान्तिषेण निर्दिष्ट किया है। यह तो स्पष्ट है कि मिल्लिकव्या सेनकी पत्नी थीं। परन्तु गुणधर मुनि श्रौर माधनन्दि श्राचायका परभ्पर श्रौर इनके साथ क्या सम्बन्ध था यह इससे कुछ भी जात नहीं होता है। मात्र प्रशस्तिके श्रन्तिम श्रोकसे यह जात होता है कि मिल्लिकव्याने श्रीपञ्चमीव्रतके उद्यापनके फलम्बरूप सिद्धान्तव्यको प्रतिलिपि कराकर वह श्री माधनन्दि श्राचार्यको भेंट की।

ऐतिहासिक दृष्टिसे इस प्रशस्तिका बहुत महत्त्व है अतएव इसकी छानबीनकी विशेष आवश्यकता है।



# विषय-सूची

	विषय	58	विपय	तेष्ठ
१्य	बन्धसन्निकर्प	१-२०२	<b>ग्र</b> न्तरके दो मेद	२५६
	बन्धसन्निकपंके मेद	१	उत्कृष्ट ग्रम्तर	२४६-२५८
	उत्कृष्ट सन्निकर्ष	8-384	जधन्य श्रन्तर	२५६-२६०
	स्वस्थान	१-५७	२३ भागप्रकपणा	<b>२</b> ६१
	परस्थान	५७-११५	भावके दो भेद	२६ १
	जधन्य सन्निकर्प	११'१-२०२	उत्कृष्ट भाव	२६१
	<b>ग्र</b> र्थपद	११५-११८	जघन्य भाव	२६१
	म्बस्थान	११=-१६४	२४ श्रारुपबहुम्ब	२६१
	पराथान	१६४-२०२	श्रल्पबहुत्वके दो भेद	= ६१
१६	नाना जीवोंकी ऋपेक्षा मंगविचय	२०२-२०४	जीव ग्राल्पबहुत्व	२६१
	मंगविचयके दो भेद	२०२	जीव ग्रह्पबहुत्वके तीन भेद	२६१
	उत्कृष्ट भंगविचय	२०२-२०३	उत्हब्ट जी <b>व श्रल्पबहु</b> त्व	२६ <b>१-</b> २६ <b>२</b>
	जघन्य भंगविचय	२०३-२०४	जधन्य जीव <b>ग्राल्प</b> बहुत्व	२६२-२६३
१७	भागाभागप्रस्पणा	२०४-२०६	जघन्यात्कृष्ट जीव श्रल्पबहुत्व	२६३-२७०
	भागाभागके दो भेद	२०४	स्थिति <b>श्रल्पबहु</b> त्व	२७०
	उत्कृष्ट भागाभाग	२०४-२०५	स्थिति श्रल्पबहुत्वके तीन भेद	२७०-२७२
	जवन्य भागाभाग	२०५-२०६	उत्कृष्ट स्थिति <b>श्रल्पबहु</b> त्व	२७०
۶ <del>در</del>	परिमाणप्ररूपणा	६०६-३१३	जवन्य रिथाति ग्राल्पबहुत्व	२७०
	परिमाणके दो भेद	२०६	जघन्योत्कृष्ट न्थिति ग्रल्यबहुत्व	२७०-२७२
	उत्कृष्ट परिमाण	२० <b>६-</b> २०६	भूयःस्थिति <b>श्रल्पबद्दु</b> त्व	२७२
	जधन्य परिमाग	२०६- <b>२</b> १३	भ्यःस्थिति ग्रल्पबहुत्वके दो भेद	२७२
38	त्तेत्रप्र <b>रुप</b> णा	হ্গর্-হগ্ড	स्वम्थान ऋल्पबहुन्य	२ ३२-२६ २
	चेत्रके दो भेद	२१३	उत्हब्द	२७५-२=२
	उत्कृष्ट चेत्र	२१३-२१५	जघन्य	२=३-२६२
	जघन्य दोत्र	२१५-२१७	परम्था <b>न ऋत्प</b> बहुत्व	२६३-३२३
20	म्पर्शनप्ररूपणा	२१७-२५३	परस्थान श्राल्पबहुत्वके दो भेद	२९३
	स्पर्शनके टो भेद	२१७	उत्कृष्ट परस्थान श्रल्पबहुत्व	२६३-३०२
	उत्कृष्ट स्पर्शन	२१७-२३३	जघन्य परस्थान ऋल्पबहुत्व	३०२-३२३
	जधन्य स्पर्शन	२३३-२४३	<b>भु जगारबन्ध</b>	३२४
ĘΫ	कालप्र <b>म्</b> णा	२४३-२५६	भुजगारबन्धके १३ ऋनुयोगद्वार	३२४-३६३
	कालके दो मेद	<b>२</b> ४३	स <b>मु</b> त्कीर्ननानुगम	३२ <b>४-</b> ३ <b>२</b> ⊏
	उत्कृष्ट <b>काल</b>	२४३-२४६	स्वामित्वानुगम	३२८-३३३
	जघन्य काल	२४६-२५६	कालानुगम	₹ <b>₹-₹</b> ₹
ठ२	त्रन्तरप्ररूपणा	२५६-२६०	श्चन्तरा <u>न</u> ुगम	३३६-३६१

१० महाबन्ध

विषय	àß	विषय	<b>र्व</b> ष्ठ
नाना जीवांकी ऋषेदा		स्वामित्व	४०६-४१६
<b>भंगविचयानुगम</b>	३६ <b>१-३</b> ६३	काल	४१७-४१=
भागाभागानुगम	३६०-३६४	श्चन्तर	888-588
परिमाणानुगम	३६४-३६५	नाना जीवंकि श्रपेद्धा भंगविचय	४४५-४४६
च्रेत्रानुगम .	३ <b>६५-३६७</b>	भागाभाग	४४६-४४८
<b>म्पर्शनानुगम</b>	३६७	परिमाग	४४६-४५२
कालानुगम	३८०	चेत्र	४५३-४५५
श्चन्तरानुगम	३८०-३८५	स्पर्शन	४५ ४-४७३
भावानुगम	३६५	काल	
<b>ग्रल्पबहु</b> त्वानुगम्	३६५.३६३	<b>श्र</b> न्तर	
पद्गिच्चेप	३६४	भाव	
पदनिच्चेपके तीन खनुयोगद्वार	8 <b>3</b> 8	<b>ऋल</b> गबहुत्व	४७३-४८५
समुत्कीर्नना	४३६	श्रध्यवसान स <b>मु</b> दाहार	४६५
स्वामित्व	३६५-४०३	<b>ऋध्यवसान समुदाहारके तीन भेद</b>	ठ <b>८५</b>
स्वामित्वके दो भेद	३६५	प्रकृति समुदाहार	४८६
उस्कृष्ट स्वामित्व	३६५-३६८	प्रकृति समुदाहारके दो भेद	¥ ह द्
जघन्य स्वामित्व	३६६-४०२	प्रमाणानुगम	४८६
जवन्योत्हण्ट स्वामित्व	४०२-४०३	<b>श्चलग्बहु</b> रव	8=2-8 <b>E8</b>
<b>श्चल्पन</b> हुत्व	403-408	जीवोंके दो भेद	8= 8
श्रलमबहुत्वके दो भेद	४०३	श्राल्पबहुत्वके दो भेद	४८६
उत्कृष्ट ग्रहनबहुत्व	808-808	म्बम् <b>थान श्र</b> ल्पबहुत्व	४८६-४६२
जवन्य ग्रहमबहुत्व	808	परम्थान श्रलग्रहुत्व	8E 5-8E 8
वृ <b>द्धि</b> यन्थ	808	***************************************	
वृद्धिबन्धके १३ त्रानुयोगद्वार	808		
समुत्कीर्तना	308-808	जीवस <b>मु</b> दाहार	४६४-४६५



## सिरिभगवंतभूदबिलभडारयपणीदो

# महाषंधो

## विदियो द्विदिबंधाहियारो

### वंधसिंग्यासपरूवगा

१. सिण्णयासं दुविधं — जहरण्णयं उक्कस्सयं च । उक्कस्सं दुविधं — सत्थाणं पर-त्थाणं च । सत्थाणं पगदं । दुवि० — अघे० आदे० । अघे० आभिण्विधिगणाणा-वरणीयस्स उक्कस्सिद्दिवंधंतो चदुण्णं णाणावरणीयाणं णियमा बंधगो । तं तु० 'उक्कस्सा वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं काद्ण याव पिलदोवमस्स असंखेळिदिभागहीणं वंधिद । एवं चदुण्णं णाणावरणीयाणं णवएणं दंसणावरणीयाणमएणमएणं । तं तु० ।

#### वन्धसन्निकर्पप्ररूपणा

१. सिन्नकर्ष दो प्रकारका है—ज्ञचन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्ट सिन्नकर्ष दो प्रकारका है—स्वस्थान ग्रीर परस्थान । स्वस्थान सिन्नकर्षका प्रकरण है । वह दो प्रकारका है—ग्रोघ ग्रीर ग्रादेश । ग्रोघसे ग्रामिनिबोधिक श्वानावरणीय कर्मकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव चार श्वानावरणीय कर्मोंका नियमसे बन्ध करनेवाला होता है । किन्तु वह उत्कृष्ट भी करता है । यदि श्रानुत्कृष्ट करता है तो उत्कृष्टसे श्रानुत्कृष्ट स्थितिवन्ध एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग हीन तक करता है । इसी प्रकार चार श्वानावरणीय श्रीर नी दर्शनावरणीय कर्मोंका परस्पर सिन्नकर्प ज्ञानना चाहिए । किन्तु वह उत्कृष्ट भी करता है श्रीर अनुत्कृष्ट भी करता है । यदि श्रानुत्कृष्ट करता है तो उत्कृष्टसे श्रानुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर प्रव्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है ।

मूलप्रतो उक्कस्स वा श्रयुक्कस्स वा इति पाठः ।

- २. सादस्स उक्कस्सिट्टिविंथंतो श्रसादस्स श्रवंधगो । श्रसाद० उक्क०द्विदि-वंथंतो सादस्स श्रवंधगो ।
- ३. मिच्छत्त० उक्तस्सिट्टिवंधंतो सोलसक०-णवुंस०-अरिद-सोग-भय-दुगुं० िणयमा बंधगो । तं तु० । एवमण्णमण्णस्स । तं तु० । इत्थिवं० उक्तस्सिट्टिदिवंधंतो मिच्छत्त-सोलसकसाय-अरिद-सोग-भय-दुगुं० िणयमा वंधगो । िणयमा अणु० चदुभागूणं बंधिद । पुरिस० उक्क०द्विदिवंधंतो मिच्छत्त-सोलसक०-भय-दुगुं० िण० वं० । िणय० अणु० दुभागूणं वंधिद । हस्स-रिद० सिया वंधिद सिया अवंधिद । यदि वंधिद तं तु० समयूणमादिं कादृण याव पिलदो० असं०। अरिद-सोग० सिया वंधि० सिया अवंधि०। यदि वंध० िणयमा अणु० दुभागूणं वंधिद। हस्स० उक्कस्स० वंध० मिच्छत्त-सोलसक०-भय-दुगुं० िणय० वं० । िणय० अणु० दुभागूणं वंधिद । इत्थिव० सिया वं० सिया अवं०। यदि वंध० िणय० अणु० दुभागूणं वंधिद । इत्थिव० सिया वं० सिया अवं०। यदि वंध० िणय० अणु० दुभागूणं वंधिद । इत्थिव० सिया वं० सिया अवं०। यदि वंध० िणय० अणु० तिभागूणं
- २. सातावेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव श्रसातावेदनीयका श्रबन्धक होता है। श्रसातावेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव सातावेद-मीयका श्रबन्धक होता है।
- ३. मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव सोलह कपाय, नपुंसकवेद, श्ररति, शोक, भय श्रीर जुगुप्साका नियमसे बन्ध करनेवाला होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट भी करता है और अनुत्कृष्ट भी करता है। यदि अनुत्कृष्ट करता है तो उसे एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक वाँघता है। इसी प्रकार सोलइ कषाय श्रादि प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिवन्धका श्राश्रय करके परस्पर सन्निकर्प जानना चाहिए। किन्तु वह उत्कृष्टभी करता है और अनुत्कृष्टभी करता है। यदि अनुत्कृष्ट करता है तो <mark>उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक</mark> बाँघता है। स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कपाय, ब्रारति, शोक, भय श्रौर जुगुष्साका नियमसे बन्ध करनेवाला होता है। जो नियमसे श्र<u>ा</u>तुत्कृष्ट चार भाग न्यून बाँधता है। पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय श्रीर जुगुप्साका नियमसे बन्ध करनेवाला होता है। जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट दो भाग न्यून बाँधता है। हास्य श्रीर रितका कदाचित् बन्ध करता है श्रीर कदाचित् नहीं बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्ध करता है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्ध करता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है तो उसे एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँघता है। श्ररति श्रीर शोकका कदाचित् बन्ध करता है श्रीर कदाचित् नहीं बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्ध करता है। हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय श्रीर जुगुप्साका नियमसे बन्ध करने वाला होता है। जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्ध करता है। स्त्रीवेदका कदाचित बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियम से अनुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् ग्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक

१. मूलप्रतौ हस्स रिंद उक्कस्स० इति पाठः ।

वंधिद् । पुरिस० सिया वं० सिया ऋवं० । यदि वं० तं तु० । एवुंस० सिया वं० सिया ऋवं० । यदि वं० णिय० ऋणु० दुभागूणं वंधिद । रदि णिय० । तं तु० । एवं रदीए वि ।

- . ४. णिरयायु० उक्त॰ द्विदिबंधंतो तिरिण आयूर्ण अबंधगो। एवमरण-मरणस्स अवंधगो।
- ५. िणरयग॰ उक्क०द्विदिवं॰ पंचिदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-हुंडसंठा०-वेउव्वि०-श्रंगो०-वर्णण०४-िणरयाणु०--श्रगुरु०४--श्रप्पसत्थ०--तस०४--'श्रथिरादिञ्जक-णिमि० णिय० बं० | तं तु० | एवं वेउव्वि०-वेउव्वि०श्रंगो०-णिरयाणु० |
- ६. तिरिक्खग० उक्क० दिदिवंधं० श्रोरालि०-तेजा०--क०--हुं इसं०-वएए।०४तिरिक्खाणु०-श्रगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-श्रथिरादिपंच०--एिमि० एिय० । तं
  तु० । एइंदि०-पंचिदि०-श्रोरालि०श्रंगो०-श्रसंपत्त०-श्रादाउज्जो०-श्रप्पसत्थ०-तसहोता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक
  होता है तो वह नियमसे उत्कृष्टसे श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ
  भाग न्यून तक वाँधता है। नपुंसकवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक
  होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अमुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता
  है। रितका नियमसे बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट
  स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे
  उत्कृष्टसे अमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका
  वन्धक होता है। इसी प्रकार रितके श्राश्रयसे सिक्षकर्ष जानना चाहिए।
- ४. नरकायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तीन श्रायुश्रोंका अबन्धक होता है। इसी प्रकार परस्परमें श्रवन्धक होता है।
- ४. नरकगितकी उत्रुष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्षियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वैक्षियिक श्राक्षेत्र, वर्णचतुष्क, नरकगित्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, श्रप्रशस्त विद्वायोगित, त्रस चतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह श्रोर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है । यदि श्रनुत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो वह उत्रुष्टसे श्रनुत्रुष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। इसी प्रकार वैक्षियिक शरीर, वैक्षियिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रौर नरकगत्यानुपूर्वीकी श्रपेत्ता सिन्नकर्ष जानना चाहिए।
- ६. तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव श्रौदारिक श्रदीर, तैजस श्रीर, कार्मण श्रीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, वादर, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक श्राङ्गोणाङ्ग, श्रसम्प्राप्तास्पादिका संहनन, श्रातप, उद्योत,

१. मु्लप्रती श्रथिरादिपंच णिमि० इति पाठः ।

थावर-दुस्सर० सिया बंध० सिया ऋवंध०। यदि वंध० । तं तु०। एवं ऋोरालि०-तिरिक्खाणु०-उज्जो०।

- ७. मणुसगदि० उक्कस्सिट्टिवं० पंचिदि०-श्रोरालि०-तेजा०-क० श्रोरा०श्रंगो०-वण्ण०४-श्रगु०-उप०-तस-वाद्र-पत्तेय०-श्रथिरादिपंच०-णिमि० णिय० वं० । णिय० श्रणु० चदुभागूणं वंधित्। दोसंटा०-दोसंघ०-श्रपज्ञ० सिया वं० सिया श्रवं०। यदि वं० संखेज्जदिभागूणं वंधित्। हुंडसं०-श्रसंपत्त०-पर०-उस्सा०-श्रप्प-सत्थ०-पज्ञ०-दुस्स० सिया वं० सिया श्रवं०। यदि वं० णिय० श्रणु० चदु-भागूणं वंधित्। मणुसाणुपु० णिय० वं०। तं तु०। एवं मणुसाणु०।
- द्रतगदि उक्क हिदिवंधं ण पंचिदि ० वेउ विव ० तेजा ० क ० वेउ विव ० खंगो ० वरागा ० ४ अगु ० ४ तास ० ४ शिम ० शिम ० शिम ० वं ० | शिम ० अणु ० दुभागूणं वंधदि | समचदु ० देवाणु ० पसत्थ ० सुभग सुस्सर आदे ० शिण ० वं ० ! तं तु ० | थिर सुभ जस ० अप्रशस्त विद्यायोगित, अस, स्थावर और दुस्तरका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है । यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अगुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अगुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अगुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो वह उत्कृष्ट से अगुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भग न्यून तक वाँधता है। इसी प्रकार औदारिक शरीर, तिर्यक्षगत्यानुपूर्वी और उद्योत इन प्रकृतियोंके आश्रयसे सिक्ष-कर्य जानना चाहिए।
- ७. मनुष्यगितकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोणाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु, उपघात, श्रस, वाद्र, प्रत्येकशरीर, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट चार भाग न्यून बाँधता है। दो संस्थान, दो संहनन श्रौर श्रपर्याप्त इन प्रकृतियोंका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे संख्यातवाँ भाग न्यून बाँधता है। हुण्डसंस्थान, श्रसम्प्राप्ता-स्थादिकासंहनन, परघात, उच्छुास, श्रप्रशस्त विहायोगित, पर्याप्त श्रौर दुस्वर इन प्रकृतियोंका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट चार भाग न्यूनका बन्धक होता है। मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। इसी श्रकार मनुष्य-समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक बाँधता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीके श्राथ्यसे सिन्नकर्य जानना चाहिए।
- द्र. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्षियिक शरीर, नैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैक्षियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रमुरुलघुचतुष्क, श्रसचतुष्क श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यूनका वन्धक होता है। समचतुरस्र संस्थान, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर श्रीर श्रादेय इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। विष्मसे लेकर पल्यका

सिया वं॰ सिया अवं०।यदि वं० तं तु०। अधिर-असुभ-अजस० सिया वं॰ सिया अवं॰।यदि वं० णिय० अणु॰ दुभागूणं वंधदि। एवं देवाणुपु०।

- ६. एइंदियस्स उक्क द्विदिवंधं० तिरिक्खग०-त्रोरात्ति०-तेजा०-क०-हुंडसं० वरण्० ४-तिरिक्खाणु०-त्रगु० ४-थावर-वादर-पज्जत्त-पत्ते०-त्रथरादिपंच०-णिमि० णिय० वं० । तं तु० । त्रादाउज्जो० सिया वं० सिया त्रवं० । यदि वं० । तं तु० । एवं त्रादाव-थावर० ।
- १०. वीइंदि॰ उक्क॰ द्विदिवं॰ तिरिक्खग०-श्रोरालि॰-तेजा॰-क०-हुंड०-श्रोरालि॰ श्रंगो०--श्रसंपत्त०--वर्ण०४-तिरिक्खाणु०--श्रगु०-उप०-तस०-बाद्र-पत्ते०-श्रियरादिपंच०-िएमि० िएय० वं० । श्रणु॰ संस्वेज्जदिभागूणं वंधदि । पर०-उस्सा॰-उज्जो॰-श्रप्पसत्थ०-पर्जा॰-श्रप्रजा०-दुस्सर िसया वं० । तं तु॰ । श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक वाँधता है। स्थिर, शुभ श्रौर यशःकीर्ति इन प्रकृतियोंका कदाित्वत् बन्धक होता है श्रौर कदाित्वत् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो वह अतुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रवत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रवत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रवत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थिर, श्रशुभ श्रौर श्रयशः-कीर्ति इन प्रकृतियोंका कदाित्वत् बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। स्थिर, श्रशुभ श्रौर श्रयशः-कीर्ति इन प्रकृतियोंका कदाित्वत् बन्धक होता है। श्री प्रकार देवगत्यानुपूर्वीके श्राश्रयसे सन्निकर्प जानना चाहिए।

९. एकेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यश्चगति, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मणशरीर, हुएडसंस्थान, वर्णचनुष्क, तिर्यश्चगत्यानुपूर्वी, श्रमुरुलघुचनुष्क, स्थावर, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक शरीर, श्रस्थिर आदि पांच श्रौर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो वह नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक वाँधता है। श्रातप श्रौर उद्योत इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो वह नियमसे उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक बाँधता है। इसी प्रकार श्रातप श्रौर स्थावर प्रकृतियोंक श्राथयसे सन्निकर्प जानना चाहिए।

१०. होन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, श्रौदारिक श्रीर, तैजस श्रीर, कार्मण श्रीर, हुण्डसंस्थान, औदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तास्पाटिका संहनन, वर्णवतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, त्रस, बाद्र, प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। जो श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। परघात, उच्छ्वास, उद्योत, श्रप्रशस्तिव-हायोगित, पर्याप्त, श्रप्रशस्ति श्रोर दुःस्वर, इन प्रकृतियोंका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। किन्तु यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका

१. मूलप्रतौ पज० दुस्पर श्रपज्ज० साधार० सिया इति पाठः। २. मूलप्रतौ तं तु णा० दं० सिया

#### एवं तीइं०-चदुरिं०।

- ११. पंचिदि उक्क दिदिवं तेजा०-क०-हुं हसं ०-वरण ०४-त्रगु०४-त्रप्प-सत्थ०-तस ०४-त्रथिरादिञ्च०-िएमि० णिय० । तं तु । णिरय-तिरिक्खगदि-स्रोरालि०-वेउच्वि०-स्रोरालि०-वेउच्वि०स्रंगो०-स्रसंपत्त०-दो-स्राणु०-उज्जो० सिया वं िसया स्रवं । यदि वं ० तं तु ० । एवं तस ० ।
- १२. ब्राहार० उक्क हिद्वं० देवगृदि-पंचिद्दि०-वेडिव्व०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउिव्व० ब्रंगो०-वएए। ६४-देवाणु०-त्रगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादित्र०-ए। वं० । णि० त्रणु० संखेजजगुणहीएां वंधदि। ब्राहार० ब्रंगो० ए। तं तु०। तित्थय० सिया वं० सिया ब्रवं०। यदि वं० ए। ब्राह्मए ब्रंगो० संखेजगुणहीएां वंधदि। एवं ब्राहारश्रंगोवं०।

बन्धक होता है तो वह उत्कृष्टसे श्रमुष्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां माग न्यूनतक वाँधता है। इसी प्रकार त्रीन्द्रिय जाति श्रौर चतुरिन्द्रिय जातिके श्राश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

- ११. पञ्चिन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, अप्रशस्त विद्यायोगित, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण प्रकृतियों का नियमसे वन्धक होता है जो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है; यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक वाँधता है। नरकगित, तिर्यञ्चगित, औदारिक शरीर, वैकियिक शरीर, औदारिक शाङ्गोपाङ्ग, वैकियिक शाङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तास्पाटिकासंहनन, दो आनुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है; यदि अनुत्कृष्ट वाँधता है तो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है; यदि अनुत्कृष्ट वाँधता है तो उत्कृष्ट से अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यात्वाँ भाग न्यून तक बाँधता है। इसी प्रकार अस काय प्रकृतिके सन्बन्धसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।
- १२. त्राहारक शरीरकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव देवगित, पञ्चिन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तेजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैकियिक त्राङ्गो-पाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, त्रगुरु लघुचतुष्क, प्रशस्तिविहायोगिति, त्रसचतुष्क, स्थिर त्रादि छह श्रीर निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। त्राहारक त्राङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट भी बाँधता है त्रोर उनुत्कृष्ट भी बाँधता है; यदि त्रमुत्कृष्ट बाँधता है तो उत्कृष्टसे त्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका त्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। तोर्थङ्गर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे त्रमुत्कृष्ट संख्यातगुण हीन बाँधता है। इसी प्रकार त्राहारक न्नाङ्गोपाङ्गके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।
- बं ि सिया अवं विद् बं िणय व श्रणु व संखेजदिभागू । श्रपजा व सिया वं विस्ता श्रवं व यदि बं व तं तु । एवं ती इंदि व इति पाठः ।

- १३. तेजा'० उक्क०िंदिवं० कम्मइ०-हुंडसं०-वर्णण०४-अगु०४-वादर-पज्जत्त-पत्ते०-अथिरादिपंच०-िणमि० णिय०। तं तु०। णिरयगदि-तिरिक्खग०-एइंदि०-पंचिदि०-दोसरीर-दोअंगो०-असंपत्त०-दोआणु०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०--तस-थावर-दुस्सर० सिया बं० सिया अवं०। यदि वं०। तं तु०। तेजइगभंगो कम्मइ०-हुंडसं०-वर्ण्ण०४-अगु०४-वादर-पज्जत्त-पत्ते०-अथिरादिपंच०-णिमि० त्ति।
- १४. समचदु० उक्क द्विदिबं पंचिदि नेजा०-क०-वएए।०४-ऋगु ४-तस ४- ए० एए थ । ऋणु ॰ दुभागूएं ० । तिरिक्खग०-दोसरी०-दोश्रंगो०-श्रसंप निरिक्खाण०-उज्जो०-श्रप्पसत्थ श्रियादिञ्च० सिया वं सिया श्रवं ० । यदि वं ॰ एए सा श्रवं ० । यदि वं ॰ एए सा श्रवं ० । पियमा श्राप् ० दं ॰ दुभागूएं ० । सणुसगदिदुगं सिया वं ॰ सिया श्रवं ० । यदि वं ॰ ए० श्राप् ० निमागूणं वं ० । देवगदि वज्ज ॰ देवाणु०-पसत्थ ० थिरादि श्रक्ष ० । देवगदि वज्ज ॰ देवाणु० पसत्थ ० थिरादि श्रक्ष ० । देवगदि वज्ज ॰ देवाणु० पसत्थ ० थिरादि श्रक्ष ० । देवगदि वज्ज ॰ देवाणु० पसत्थ ० थिरादि श्रक्ष ० । देवगदि वज्ज ॰ देवाणु० पसत्थ ० थिरादि श्रक्ष ० । देवगदि वज्ज ॰ देवाणु० पसत्थ ० थिरादि श्रक्ष ० । देवगदि वज्ज ॰ देवाणु० पसत्थ ० थिरादि श्रक्ष ० । । देवगदि वज्ज ॰ देवाणु० पसत्थ ० थिरादि श्रक्ष ० । । देवगदि वज्ज ॰ देवाणु० पसत्थ ० थिरादि श्रक्ष ० । । देवगदि वज्ज ० देवाणु० पसत्थ ० थिरादि श्रक्ष ० थिरादि
- १३. तैजसशरीर की उत्छष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव कार्मणशरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है, जो उत्छप्ट भी बाँधता है और अनुत्छप्ट भी बाँधता है; यदि अनुत्छष्ट बाँधता है तो नियम से उत्छप्ट से अनुत्छप्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक बाँधता है। नरकगित, तिर्यञ्चगित, एकेन्द्रिय-जाित, पञ्चेन्द्रियजाित, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, असंप्राप्तास्पाटिका संहनन, दो आनुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगित, त्रस, स्थावर, और दुःस्वर प्रकृतियोंका कदािचत् बन्धक होता है और कदािचत् अबन्धक होता है, यदि बन्धक होता है तो उत्छप्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्छप्ट बाँधता है तो नियमसे उत्छप्ट से अनुत्छप्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक बाँधता है। इसी प्रकार तैजसशरीरक समान कार्मणशरीर, हुएडसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण प्रकृतियोंके आश्रयसे सिक्न कर्ष जानना चाहिए।
- १४. समचतुरस्र प्रकृति की उत्कृष्ट स्थितिका बन्धकरनेवालो जीव पञ्चेन्द्रिय जाति तेजसग्ररीर, कार्मण्यरीर, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, श्रसचतुष्क श्रौर निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो श्रगुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्ध करता है। तिर्यञ्चगित, दो श्रीर, दो श्राङ्गोपङ्ग, श्रसम्प्रासासृणिटका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत, श्रप्रशस्त विहायोगिति श्रौर शस्थर श्रादि छह प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रगुत्कृष्ट दो भाग न्यूनका बन्धक होता है। मनुष्यगित द्विकका कदाचित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रगुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्ध करता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रगुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्ध करता है। देवगितको छोड़कर देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगिति श्रौर स्थिर श्रादि छहका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्टका बन्धक होता है तो उत्कृष्टका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्टका बन्धक होता है तो नियमसे एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। चार संहननका कदाचित् बन्धक होता है। यदि श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक ह

१. मूलप्रतौ तेजाक॰ उक्क॰ इति पाठः । २. मूलप्रतौ शिमि॰ खिरिथ इति पाठः ।

सिया बं० सिया अवं० । यदि बं० तं तु० । चदुसंघ० सिया वं० सिया अवं० । यदि बं० णि० अणु० संखेजदिभागूणं बं० । एवं पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदेजा०।

१५. एग्गोद् उक्क हिद्बं पंचिद्ध - त्रोरालि - तेजा - क० - त्रोरालि - त्रंगो० - वएए ०४ - त्रुगु०४ - त्रुपसत्थ० - तस०४ - त्रुथिराद्धि ० - एए मि० एप वं । तिर्वित्य - पणुसग्ध - द्रित्राणु ० - उज्जो० सिया वं० सिया अवं०। यदि वं० एप अणु० संखे ज्ञदिभागूणं वं०। वज्ज- एपारा । सिया वं० सिया अवं०। यदि वं० तं तु०। एवं वज्जणारायण् । एवरि दो गदि - चदुसंटा० - दो आणु० - उज्जो० सिया वं० सिया अवं०। यदि वं० एप अणु० संखे ज्ञदिभागू०। सादि० एवं चेव। एवरि एपारायणं सिया०। तं तु०। एवं एपारायणं।

१६. खुज्जसंठाणं उक्क०द्विदिवं० तिरिक्खग०-पंचिद्०-ग्रांगालि०-तेजा०-क०-त्रोरालि०ग्रंगो०-वराण०४-तिरिक्खाणु०-त्रागु०४-त्रप्पसत्थ०-तस०४-त्र्राथरादिञ्च०-

होता है। इसी प्रकार प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुखर श्रौर श्रादेय प्रकृतियोंके श्राश्रयसे सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

१४. न्यप्रोध परिमण्डल संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रमुरुलघुचतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, ग्रस्थिर ग्रादि छह ग्रीर निर्माण प्रकृ-तियोंका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। तिर्मञ्जगति, मन्ध्यगति, चार संहनन, दो ग्रानुपूर्वी, ग्रीर उद्योत प्रकृत तियोंका कदाचित बन्धक होता है श्रीर कदाचित श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रमुतकृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यन स्थितिका वन्धक होता है। वज्रनाराचसंहननका कदाचित बन्धक होता और कदाचित अबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे एक समय न्युनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यन तक स्थितका बन्धक होता है। इसी प्रकार वज्जनाराचसंहननके अश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि दो गति, चार संस्थान, दो श्रानुपूर्वी श्रौर उद्योतका कदाचित बन्धकहोता है श्रीर कदाचित श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यन स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार म्बाति संस्थानके श्राश्रयसे सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि वह नाराचसंहननका कचाचित बन्धक होता है और कदाचित अवन्धक होता है। यदि वश्वक होता है तो उत्कृष्ट वन्धक भी होता है श्रीर अनुत्कृष्ट बन्धक भी होता है । यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नाराचसंहननके श्राश्रयसे सन्निकर्प जानना चाहिए।

१६. कुब्जिक संस्थानकी उत्छष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, श्रप्रशस्त विद्यायोगित, त्रसचतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग

णिमि० णिय० संखे०भागू० । दोसंघ०-उज्जो० सिया वं० सिया अवं० । [ यदि वं० णिय०] संखेज्ज०भागू० । अद्धणारा० सिया० । तं तु० । एवं अद्धणारा० । एवं वामण० । णवरि असंपत्त० सिया० संखेज्ज०भागू० । खीलिय० सिया वं० । तं तु० । एवं० खीलिय० ।

१७. त्रोरालि० अंगो० उ० द्वि० वं० तिरिक्खग०-पंचिदि०-त्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०-त्रसंप०-वएए० ४-तिरिक्खाणु०-त्रगु०४-पसत्थ०-तस०४-त्रथिरादिछ०-णिमि० एप्यि० वं। तं तु०। उज्जो० सिया०। तं तु०। एवं श्रसंप०।

१८. वज्जरि॰ उक्कब्रिटवं॰ पंचिंदि०-त्र्रोरालि॰-तेजा०-क०-त्र्रोरालि० श्रंगो०-वएए।०४-त्रगु०४-तस०४-िएभि० एएय० वं० । ए।० श्रगु० तिरिक्त्वगदि-हंड॰-तिरिक्ताण्ण०-उज्जो॰-श्रणसत्थ॰-श्रथिरादिञ्च० सिया बं॰ सिया न्यन स्थितिका बन्धक होता है। दो संहनन और उद्योत प्रकृतियोंका कदासित बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। अर्धनाराचसंहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृप्ट बन्धक भी होता है श्रीर श्रव-त्रुष्ट बन्धक भी होता है। यदि अनुत्कुष्ट वन्धक होता है तो नियमसे एक समय न्यनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यन तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार अर्ध-नाराचसंहननके श्राश्रयसे सन्निकर्प जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार वामन संस्थानके आश्रयसं सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह श्रसम्वाप्तारुपाटिका संहननका कदाचित बन्धक होता है श्रीर कदाचित श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। कीलक सहननका कदाचित वन्धक होता है श्रीर कदाचित श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक है तो उत्कृष्ट भी बाँधता है और श्रमुत्कृष्ट भी बाँघता है। यदि श्रमुत्कृष्ट बाँघता है तो एक समय न्यनसे लेकर एत्य-का ग्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार कीलक संहननके ग्राश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१८. वज्रषभनाराचकी उत्हृष्टस्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदा-रिकशरीर, तेजसशरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, असचतुष्क श्रीर निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगित, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत, श्रप्रशस्तिवहायोगित श्रीर श्रस्थिर श्रादि छह प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर अवं । यदि वं विषय अणु दुभागू । मणुसग ०-मणुसाणु सिया वं सिया अवं । यदि वं विषय अणु तिभागू । समचदु ०-पसत्थ ०-थिरादि ३० सिया वं सिया अवं । यदि वं । तं तु । चदुसंटा विषया वं सिया अवं । यदि वं विषया। अणु संखेजादिभागू ।

१६. उज्जो० उक्क हि० वं० तिरिक्ष्यग०-ग्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वएए०४-तिरिक्खाणु०-त्रगु०४-वादर-पज्जत्त-पत्ते०--त्र्राथरादिपंच०--िएमि० एि० वं०।तंतु०। एइंदि०-पंचिदि०-ग्रोरोलि०ग्रंगो०-त्र्रमंप०-त्रप्पतत्थ०--तस०--थावर--दुस्सर० सिया वं० सिया त्रवं०। यदि वं० तंतु०।

२०. ऋष्पसत्थ० उक्क० द्विदि० बं० पंचिदि०-तेजा०-४०-हुंड०-वएए०४-ऋगु०४-तस०४-ऋथिरादिछ०-एिमि० एिय० वं० । तं तु० । एिरयगदि-तिरिक्ख-

कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगित श्रौर मनुष्यगत्यानुपूर्वीका कदाचित् वन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्तविद्दायोगित श्रौर स्थिर श्रादि छह प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट भी वाँधता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट भी वाँधता है। यदि श्रनुत्कृष्ट बांधता है तो एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। चार बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियम से श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।

१९. उद्योत प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यश्चगति, श्रौदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मण्यरीर, हुएडसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यश्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रस्थर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट भी बाँधता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि श्रमुत्कृष्ट बाँधता है तो एकसमय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। एके निद्रयजाति, पञ्चेन्द्रयजाति, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तास्पादिका संहनन, श्रप्रशस्त विद्यायोगित, श्रस, स्थावर श्रौर दुःस्वर प्रकृतियोंका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रम्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट भी बाँधता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि श्रमुत्कृष्ट वाँघता है तो श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है।

२०. श्रप्रशस्त विहातोगितकी उत्कृष्टिस्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलधुचतुष्क, त्रसचतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह श्रीर निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है जो उत्कृष्ट भी वाँधता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट भी वाँधता है। यदि श्रनुत्कृष्ट वाँधता है तो एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातयाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगित, तिर्यञ्चगित, दो शरीर, दो श्राङ्गोपाङ्ग, श्रप्रशस्त विहायोगित, दो श्रानुपूर्वी श्रीर उद्योत प्रकृतियोंका कदाचित बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट भी वाँधता

गदि-दोसरी०-दोश्रंगो०-श्रप्पसत्थ०-दोत्राणु०-उज्जो० सिया बं० सिया श्रवं०। यदि वं०। तं तु०। एवं दुस्स०।

- २१. सुहुमे उक्क हिदि ० वं तिरिक्खग ॰ एइंदि ० त्रोरालि ॰ तेजा ० क ० हुं इसं ॰ वर्षा ० ४ तिरिक्खाणु ० त्रागु ॰ उप ॰ थावर ० त्रिथि च ० शिय ० वं ० । त्राणु ० संखे ज्ञदिभागू ० । पर ॰ उस्सास-पज्जत्त-पत्ते ० सिया वं ० सिया श्रवं ० । यदि वं ० शि ० श्रणु ० संखे ज्ञदिभागू ० । एवं साधारण ० ।
- २२. अपज्ज० उक्क०द्विदिवं तिरिक्खगिद-श्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं० वएए०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-अधिरादिपंच०-िएमि० एिय० | अणु० संखेज्जदिभागूणं बंधदि | एइंदि०-पंचिदि०-श्रोरालि० श्रंगो०-तस-थावर-वादर-पत्ते० सिया बं० सिया अवं० | यदि वं० एिय० अणु० संखेज्जदिभागूणं बंधदि । वीइंदि०-तीइंदि०-चदुरिं०-सुहुम-साधार० सिया वं० सिया अवं० | यदि वं० । एए० तं तु० ।
- २३. थिरणाम उक्क०हिदिबं॰ तेजा॰-क॰-वरण्॰४-अगु॰-उप०-परघाद-और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है तो एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार दुखर प्रकृतिके आश्रयसे सिक्षकर्य जानना चाहिए।
- २१. सूच्म प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यश्चगति, एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, स्थावर, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। परघात, उच्छ्नास, पर्याप्त श्रौर प्रत्येक प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार साधारण प्रकृतिके श्राश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।
- २२. अपर्याप्त प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुल्ध, उपघात, श्रस्थिर आदि पाँच श्रौर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन वाँधता है। एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, त्रस, स्थावर, बादर श्रौर प्रत्येक इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन बाँधता है। द्वीन्द्रिय जाति, त्रीन्द्रिय जाति, चतुरिन्द्रिय जाति, सूक्ष्म श्रौर साधारण प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट भी बाँधता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि श्रनुत्कृष्ट वाँधता है तो नियमसे उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है।
- २३. स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्रास, पर्याप्त श्रीर निर्माण इन प्रकृ-

उस्सास-पज्ज०-िण्मि० िण्य० वं० अणु० दुभागूणं वंधित । तिरिक्कादि-एइंदि० पंचिदि०--ग्रांसालि०--वेउव्वि०-हुं इसं०-दांग्रंगो०---असंप०--तिरिक्काणु०--आदा-- उज्जो०-अप्पत्थ७-तस-थावर-वादर-पत्ते०-असुभादिपंच० सिया वं० सिया अवं० । यदि वं० िण्य० अणु० दुभागूणं० । मणुसगिद-मणुसाणु० सिया वं० सिया अवं० । यदि वं० िण्य० अणु० तिभागू० । देवगिद-समचदु०-वज्जिरि० देवाणुपु०-पसत्थ०-सुभादिपंच० सिया वं० सिया अवं० । यदि वं० तं तु० । बेइंदि० तंइं०-चदुर्संठा०-चदुसंघ०-सुहुम-साधार० सिया वं० सिया अवं० । यदि वं० तं तु० । वेदं वं० तिर्ं० प्यत् अणु० संखेज्जिदभागू० । एवं सुभ० ।

२४. जसगि॰ उक्क०द्दि॰वं॰ तेजा०-क॰-वएएए०४-अगु०४-वाद्र-पज्जत्त-पत्ते॰एिभि० एि॰ वं॰ । एि० अणु० दुभागू॰ । तिरिक्ष्वगदि-एइंदि॰-पंचिदि॰ओरालि०-वेउिवि॰-हुं इसं॰--दोश्रंगो०--असंपत्त०--तिरिक्ष्वाणु०--अदाउज्जो॰-अएपसत्थ०-तस-थावर-अथिरादिपंच॰ सिया वं॰ सिया अवं०। यदि वं॰ एिय०
अणु० दुभागू०। मणुसगदिदुगं सिया वं॰ सिया अवं०। यदि वं॰ एिय० अणु०
तियोंका नियमसे वन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट दो भाग न्यृन बाँधता है। तिर्यञ्चगित,
एकेन्द्रिय जाति, पञ्चन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, हुण्डसंस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तास्पाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्त्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगित,
अस, स्थावर, वादर, प्रत्येक और अशुभादिक पाँच इन प्रकृतियोंका कदाचित् वन्धक होता

पाङ्ग, श्रसम्प्राप्तास्पाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रातप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगित, त्रस, स्थावग, वादग, प्रत्येक श्रीर श्रशुभादिक पाँच इन प्रकृतियोंका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगित श्रीर मनुष्यगत्यानुपूर्वीका कदाचित् बन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट भी वाँधता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट भी वाँधता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट भी वाँधता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। द्वीन्द्रिय जाति, त्रीन्द्रिय जाति, चतुरिन्द्रिय जाति, चार संस्थान, चार संहनन, स्क्ष्म श्रीर साधारण इन प्रकृतियोंका कदाचित् वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यूनका वन्धक होता है। इसी प्रकार श्रम प्रकृतिके श्राथ्यसं सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४. यशःकीर्ति प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव तेजस शरीर, कार्मण् शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक शरीर और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यृन स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, वैकियिक शरीर, द्वण्डसंस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तास्पाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगिति, त्रस, स्थावर और अस्थिर आदि पाँच इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यनका बन्धक होता है। मन्ष्यगतिष्ठिकका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित्

तिभागू० । देवगिद-समचदु॰-वज्जित्सिभ०-देवाणु०-पसत्थ०-थिरादिपंच सिया वं॰ सिया अवं० । यदि वं॰ तं तु॰ । वीइं०-तीइं०-चदुरिं०-चदुसंठा॰-चदुसंघ० सिया वं॰ सिया अवं॰ । यदि वं० णिय॰ अर्णु॰ संखेज्जिदिभागू॰ ।

२५. तित्थय॰ उक्क०द्दिदिवंधं० देवगदि-पंचिदि० वेउव्वि॰ तेजा० क० समचदु० वेउव्वि० ग्रंगो० व्याण्०४ देवाणु० - त्रगु० - ४ - पसत्थ० - तस०४ - त्राथर - त्राधुभ - सुभग श्रादे० - श्रजस० - णिमि० णिय० । श्रणु० संखेजदिगुणुहीणं वं० ।

२६, उचा॰ उक्क॰ द्विदिवंधं० ग्रीचा॰ अवंधगो । ग्रीचागो॰ उक्क॰ द्विदिवं॰ उचा० अवंधगो ।

२७. दार्णंतरा० उक्क०िंदिवं० चदुर्ग्णं श्चंतरा० गिय० । तं तु उक्कस्सा वा त्रणुक्कस्सा वा। उक्कस्सादो त्रणुक्कस्सा समयूणमादिं कादृण् पिलदोवमस्स त्रसंखेज्ज० भागूणं वंधदि । एवं त्र्रग्णोएणस्स । तं तु० ।

२८. त्रादेसेण ऐरइएस पंचणा०-णवदंसणा०-सादासा०-मोहणीय०-छब्वीस-

श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट तीन भाग न्यूनका वन्धक होता है। देवगति, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रपंभनाराचसंहनन, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विद्वायोगित श्रौर स्थिर श्रादि पाँच इन प्रकृतियोंका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्टका भी वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्टका भी वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्टका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्टका भाग न्यूनसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका वन्धक होता है। द्वीन्द्रिय जाति, श्रीन्द्रिय जाति, चार संस्थान श्रौर चार संघनन इन प्रकृतियोंका कदाचित् वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है।

२५. तीर्थंकर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिक। बन्ध करनेवाला जीव देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैकियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, असचतुष्क, श्रिस्थर, श्रशुभ, सुभग, श्रादेय, श्रयशःकीर्ति श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका वन्धक होता है।

२६. उद्यगोत्रकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव नीचगोत्रका श्रवन्धक होता है। नीचगोत्रकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव उद्यगोत्रका श्रवन्धक होता है।

२७. दानान्तरायकी उत्हाए स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव चार श्रन्तराय प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। वह उत्हाए भी बाँधता है श्रीर श्रनुत्हाए भी बाँधता है। यदि श्रनुत्हाए बाँधता है तो नियमसे उत्हाएसे श्रनुत्हाए एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पाँचों श्रन्तरायोंका परस्पर सिककर्ष जानना चाहिए। वह उत्हाए भी होता है श्रीर श्रनुत्हाए भी होता है यदि श्रनुत्हाए होता है तो उत्हाएसे श्रनुत्हाए एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक होता है।

२८. त्रादेशसे नारिकयोंमें पाँच क्वानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, श्रसाता-वेदनीय, छव्वीस मोहनीय, दो त्रायु, दो गोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इन प्रकृतियोंका भक्न दोश्रायु०-दोगोद०-पंचंत॰ श्रोघं । तिरिक्खग० उक्क०हिदि-वं० पंचिदि०-श्रोरालि०-तेजा०-क०-हुं इसं०-श्रोरालि०श्रंगो०-श्रसंपत्त०-वएएए०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०४-श्रप्पसत्थ०-तस०४-श्रथिरादिछ०-िएमि० एए० वं० । तं तु० । उज्जो० सिया बं० । तं तु० । एवमेदाश्रो सव्वाश्रो एक्केक्केए सह । तं तु० । सेसं श्रोघेए साधेद्व्वं । एवं असु पुढवीसु । सत्तमाए सो चेत्र भंगो । एवरि मणुसगदि-मणु-साणु०-उच्चा० तित्थयरभंगो । सेसाश्रो तिरिक्खगदिसंजुत्तं काद्व्वं ।

२६. तिरिक्षेमु पंचणा०-णवदंसणा०-सादासा०-मोहणीय० छव्वीस०-चदुत्रायु०-दोगोद०-पंचंत० श्रोघं । णिरयगदि उक्त०हिदिवं० पंचिदि०'-वेउव्विय-तेजा०-क०-हुंडसं०--वेउव्वि०श्रंगो०--वरण०४--णिरयाणु०--श्रगु०४-श्रप्प-सत्थ०-तस०४-श्रथिरादिछ०-णिमि० णि० वं० । तं तु०। एवमेदाश्रो एक-

श्रोघके समान है। तिर्यञ्जगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पञ्जेन्द्रिय जाति. श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्रा-प्तासृपाटिका संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चानुपूर्वा, त्रगुरुलघुचतुष्क, त्रप्रशस्त विहायोगित. त्रसचतुष्क, ग्रस्थिर ग्रादि छह ग्रौर निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करनेवाला होता है जो उत्कृष्ट भी बाँघता है और अनुत्कृष्ट भी बाँघता है। किन्तु उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समयन्यनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक वाँघता है। उद्योतको कदाचित् बाँघता है श्रीर कदाचित नहीं बाँधता है। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है ग्रीर ग्रनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि श्रनुत्कृष्ट **बाँ**धता है तो उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यान तक वाँघता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर एक-एक प्रकृतिके साथ सम्निकर्प होता है। ऐसी श्रवस्थामें इन प्रकृतियोंको उत्कृष्ट भी वाँधता है श्रीर श्रमत्क्रप्र भी वाँधता है। किन्तु उत्कृष्ट्से श्रमत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका श्रसं-ख्यातवाँ भाग न्यन तक वाँधता है। शेष सन्निकर्प श्रीधके समान साध लेना चाहिए। इसी प्रकार छह प्रथिवियोंमें जानना चाहिए। सातवीं प्रथिवीमें यही भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगति मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रीर उचगोत्रका भङ्ग तीर्थंकर प्रकृतिके समान है। यहाँ शेप प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका सन्निकर्प कहते समय तिर्यञ्च-गतिके साथ कहना चाहिए।

२९. तिर्यञ्जोमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावदनीय, श्रसातावेदनीय, छन्द्रीस मोहनीय, चार श्रायु, दो गोत्र श्रोर पाँच अन्तराय प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोघके समान है। नरकगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाित, वैकियिक द्रारीर, तैजस द्रारीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वैकियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वा, श्रायुक्तवयुंका, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह श्रीर निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट भी वाँधता है श्रीर श्रनुन्कृष्ट भी वाँधता है। किन्तु उत्कृष्टमं अनुन्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। इसी प्रकार परस्पर इन प्रकृतियोंका सन्निकर्ष होता है। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है श्रीर अनुत्कृष्ट भी वाँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक बाँधता है। तिर्यञ्चगितकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव

<sup>1.</sup> मूक्षप्रतौ पंचिदिपंचिदि वेउ-इति पाठः।

मेक्सस । तं तु० । तिरिक्खग० उक्क०द्विदिवं० तेजा०-क०-हुं डसं०-वएण०४त्रगु०-उप०-त्रथिरादिपंच०-िएमि० एि० वं० । त्रणु० संखेज्जभागूणं० ।
चदुजादि-वामणसंठा०-त्रोरालि०त्रंगो०-खीलियसंघ०-त्रसंपत्त०--त्रादाउज्जो०-थावरसुहुम-त्रप्रज्ञ०-साधार० णियमा वं० । तं तु० । पंचिदि०-हुं डसं०-पर०उस्सा०-त्रप्पसत्थ०-तस०४-दुस्सर सिया वं० सिया अवं० । यदि वं० णिय०
त्रणु० संखेज्जदिभागूणं० । त्रोरालि०-तिरिक्खाणु० णियमा० । तं तु० । एवं
त्रोरालि०-तिरिक्खाणु० । सेसं मूलोघं । एवरि किंचि विसेसो, अट्टारिसयाओ
एादव्वाओ । एवं पंचिदियतिरिक्खपज्जत्त-जोिएएशिस्न ।

३०. पंचिदियतिरिक्खत्रपञ्ज० पंचणा०-एवदंसणा०-सादासादा०-दोत्रायु०-दोगोद०-पंचंत० स्रोघं। मिच्छत्त उक्क०द्विदिबं० सोलसक०-एावुं स०-त्रप्रदि-सोग-णिय॰ । तं तु॰ । एवमेदात्रो ऋगणमगणस्स । तं तु०। इत्थि॰ उक्क ० द्विदिवं॰ मिच्छ ० - सोलुसक ० - भय-दुगुं० णिय० पाँच श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। जो श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यन बाँधता है। चार जाति, वामन संस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, कीलक संहनन, श्रसम्प्राप्तासूप टिका संहनन, श्रातप, उद्योत, स्थावर, सृक्ष्म, श्रपर्याप्त श्रीर साधारण इन प्रकृतियोंको नियमसे बाँधता है। जो उत्कृप्ट भी बाँधता है श्रीर श्रनुत्कृप्ट भी बाँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँघता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, परघात, उच्छ्वास, श्रप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क त्रौर दुःस्वर इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्युन बाँधता है। श्रीदा-रिकशरीर श्रीर तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट भी बाँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका त्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। इसी प्रकार श्रौदारिक शरीर श्रौर तिर्यञ्चगत्यानु-पूर्वीके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका आश्रय करके सन्निकर्ष जानना चाहिए। शेप सन्निकर्ष मुलोघके समान है। किन्तु कुछ विशेषता है कि श्रठारह कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण स्थिति-बन्धवाली प्रकृतियाँ जाननी चाहिए । इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्त और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्ज योनिनी जीवोंके जानना चाहिए।

३०. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्यात जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेद-नीय, श्रसातावेदनीय, दो श्रायु, दो गोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय प्रकृतियोंका भक्त श्रोघके समान है। मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरित शोक, भय श्रौर जुगुष्सा इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट भी बाँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक बाँधता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सिन्नकर्ष जानना चाहिए। जो उत्कृष्ट भी होता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट भी होता है। किन्तु उत्कृष्टसे श्रमु त्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक होता है। स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय श्रौर जुगुष्साका नियमसे त्रणु॰ संखेजिदिभागूणं० । हम्स-रिद-श्ररिद-सोग सिया बं० सिया अवं० । यदि बं॰ णिय० ऋणु॰ संखेजिदिभागू० । एवं पुरिस० । हस्स० उक्क० हिदिवं० मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दुगुं० णिय० बं० । णि० ऋणु० संखेजिदिभागू०। रिद० णिय० वं० । तं तु० । एवं रिदीए ।

- ३१. तिरिक्खगदि॰ उक्क०िट वं० एइंदि॰-श्रोरालि॰-तेजा०-क०-हुंडसं०-वरण ०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०-उप॰-थावरादि०४-श्रथिरादिपंच०-णिभि० णि॰ वं०। णि॰ तंतु॰। एवमेदाश्रो श्रयणमणणस्स । तंतु॰।
- ३२. मणुसग० उक्क०द्विदिबं० पंचिदि०--श्रोरात्ति०--तेजा०--क०--हुंडसं०--श्रोरात्ति०श्रंगो०-श्रसंपत्त०-वएण०४-श्रगु०-उप०-तस-वाद्र-श्रपज्ञ०-पत्ते०--श्रथिरा--दिपंच०-िणमि० णिय० णिय० वं०। श्रणु० संखेडजदिभागू०। मणुसाणु० णिय०। तं तु०। एवं मणुसाणु०।

बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्ध करता है। हास्य, रित, अरित और शोकका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार पुरुषवेदके आश्रयसे सिन्नकर्ष जानना चाहिए। हास्य प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुं सकवेद, भय और जुगुष्साका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका वन्धक होता है। रितका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट वन्धक भी होता है और अनुत्कृष्ट वन्धक भी होता है। यदि अनुत्कृष्ट वन्धक होता है तो उत्कृष्टसं अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसं लेकर पत्थका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिवन्धका बन्धक होता है। इसी प्रकार रितके आश्रयसं सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

- ३१. तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक जीव एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुएडसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रघुरुलघु, उपघात. स्थावर श्रादि चार, श्रस्थिर श्रादि पाँच, श्रीर निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। जो उत्कृष्ट भो वाँधता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट भी वाँधता है। यदि श्रमुत्कृष्ट वाँधता है तो नियमसे एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्प जानना चाहिए। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि श्रमुत्कृष्ट वाँधता है तो उत्कृष्टसे श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनस लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है।
- ३२. मनुष्यगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तेजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, औदारिक श्राङ्गोपाङ्ग. श्रसम्प्राप्तासृणाटिका संहनन, वर्णचतुष्क, श्रमुरुलघु, उपघात, त्रस, वादर, अपर्याप्त, प्रत्येक शरीर, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यानुपूर्वीके श्राक्षयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

- ३३. वीइंदि॰ उक्क०द्विदिबं॰ तिरिक्खग॰-श्रोरालि॰-तेजा॰-क॰--हुंड०--वएण्०४-तिरिक्खाणु॰-श्रगु०-उप॰-बाद्र--श्रपज्ज॰--पत्तेग०--श्रथिरादिपंच०--िण्मि॰ णिय० वं० | श्रगु॰ संखेज्जदिभागू० | श्रोरालि॰श्रंगो०-श्रसंपत्त०-तस० णिय० | तं तु० | एवं श्रोरालि०श्रंगो०-श्रसंप०-तस० |
- ३४. तीइंदि० उक्क० द्विदिवं० तिरिक्खग०-त्रोरात्ति०--तेजा०--क०-हुं डसं०--त्रोरात्ति० त्रंगो०-त्रसंप०-वएण०४-तिरिक्खाणु०-त्रगु०--उप०-तस-बादर--त्रपण्डज०--पत्तेग०-त्राथरादिपंच०-णिमि० णिय० वं०। णिय० त्रणु० संखेजनिद्भागू०। एवं चदुरिं०-पंचिदि०।
- ३४. समचदु० उक्क०द्विदि-बं० पंचिदि०-स्रोरात्ति०-तेजा०-क०-स्रोरात्ति०-स्रंगो०-वएए।०४-स्रगु०४-तस०४-िएमि० एिय० वं० । एिय० स्रणु० संखेज्जदि-भागू० । तिरिक्ख-मणुसगदि०-पंचसंघ०-दोस्राणु०-उज्जो०-स्रप्यसत्थ०-शिराधिर-सुभासुभ-दूभग-दुस्सर-स्रणादे०-जस०-स्रजास० सिया वं० सिया स्रवं० । यदि वं० णिय० स्रणु० संखेज्जदिभागू० । वज्जरिसभ०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-स्रादे० सिया
- ३३. द्वीन्द्रिय जातिको उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, श्रौदारिक-शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, बादर, श्रपर्यात, प्रत्येक शरीर, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण प्रकृतियोंका नियम-से वन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। श्रौदा रिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तास्प्पाटिका संहनन और त्रस इन प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट भी बाँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तास्प्रपाटिका संहनन और त्रसकाय इन प्रकृतियोंके श्राश्रयसे सन्निकर्प जानना चाहिए।
- ३४. त्रीन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, ग्रौदारिक शरीर, तेजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, ग्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, ग्रसम्प्राप्तास्पादिका संहननन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, त्रस, बाद्र, ग्रपर्याप्त, प्रत्येक शरीर, श्रस्थिर ग्रादि पाँच श्रौर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार चतुरिन्द्रिय जाति श्रौर पञ्जेन्द्रिय जातिके श्राथ्रयसे सिम्नकर्ष जानना चाहिए।
- ३४. समचतुरस्रसंस्थानकी उत्कृप्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोणङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलधु-चतुष्क, त्रसचतुष्क, श्रौर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। जो नियमसे श्रमुत्कृप्ट संख्यातवर भाग न्यृन स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, पाँच संहनन, दो श्रानुपूर्वी, उद्योत, श्रप्रसत्त विहायोगिति, स्थिर, श्रस्थिर, श्रभ, श्रशुभ, दुर्भग, दुस्वर, श्रनादेय, यशःकीर्ति श्रौर अयशःकीर्ति इन प्रकृतियोंका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृप्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। वज्रपभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुखर, श्रौर श्रादेय इन प्रश्नृतियोंका कदाचित् वन्धक होता है।

वं० सिया अवं० । यदि वं० तं तु० । एवं वज्जिरिसभ०-पसत्थ०-[ सुभग ]-सुस्सर-आदे० ।

३६. रागगेद० उक्क० द्विदिवं० पंचिदिय०-त्रोरालि०-तेना०-क०-त्रोरालि०-त्रंगो०-वरण०४-त्रसंपत्त०-तस०४-द्भग-दुस्सर-त्रणादे०-िएमि० रिएय० वं०। रिए० त्रणु० संखेजनिद्भागू०। तिरिक्खगिद-मणुसगिद-चदुमंघ०-दोश्राणु०-जज्जोव०-थिराथिर-सुभासुभ-नस०-त्रनस० सिया वं० सिया त्रवं०। यदि वं० रिए० त्रणु० संखेजनिद्भागू०। वज्नणारा० सिया वं०। तं तु०। एवं वज्जणारायर्णं। सादीर वि एसेव भंगो। राविर सारायरा० तं तु०। एवं सारायर्णं वि।

३७. खुज्ज० उक्क०द्दिद्वं० तिरिक्खगदि--पंचिद्दि०-च्योरालिय-तेजा०--क०-त्र्योरालि०द्यंगो०-वएण०४-तिरिक्खाणु० च्रगु०४-च्रप्पसत्थ०-तस०४--दूभग-दुस्सर-च्रणादे०-णिमि० णि० वं० । णि० च्रणु० संखेज्जदिभागू० । दोगदि-दोसंघ०-दो

यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट भी वाँधता है श्रीर श्रमुन्कृष्ट भी वाँधता है। यदि श्रमुन्कृष्ट वाँधता है तो उत्कृष्टसे श्रमुन्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होतो है। इसी प्रकार वज्रपेभनाराचसंहनन, प्रशस्ति विहायोगित, सुभग, सुम्बर श्रीर श्रादेय प्रकृतियोंके श्राश्रयसे सिचकर्ष जानना चाहिए।

३६. न्युग्रोधपरिमण्डल संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तंजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचनुष्क, श्रसम्प्राप्तासुपाटिका संहनन, त्रस चतुष्क, दुर्भग, दुस्वर, श्रनादेय श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है । जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यन स्थितिका बन्धक होता है । तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, चार संहनन, दो त्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, श्रस्थिर, ग्रभ, ग्रग्नम, यशःकीर्ति ग्रीए अयशःकीर्ति इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्या-तवाँ भाग न्यन स्थितिका बन्धक होता है। बज्जनाराचमंद्रननका कदाचित् बन्धक होता है स्रोर कदाचित् स्रबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट भी वाँधता है स्रोर ब्रनत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि ब्रनत्कृष्ट बाँधता है तो उत्कृष्ट्से अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तककी स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वेज-नाराचसंहननके ग्राश्रयसे सन्निकर्प जानना चाहिए। तथा स्वाति संस्थानका भी यही भङ्ग होताहै । इतनी विशेषता है कि इसके नाराचसंहननका उन्कृप्ट बन्धभी होताहै और ब्रानुत्कृप्ट बन्ध भी होता है। यदि अनुत्कृष्ट वन्ध होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसं संहननके श्राश्रयसे सन्निकर्प जानना चाहिए।

३०. कुब्जक संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, पच्चेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रोदारिक श्राक्षेपाङ्ग, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, श्रप्रशस्त विद्यायोगित, त्रसचतुष्क, दुर्भग, दुस्वर, श्रनादेय श्रोर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यात्वर्ण भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। दो गति, दो संहनन, दो श्रानुपूर्वी, उद्योत,

श्राणु०-उड्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-श्रजस० सिया वं० सिया श्रवं०। यदि वं० णिय० श्रणु० संखेज्जदिभागू०। श्रद्धणारा० सिया वं०। तं तु०। एवं श्रद्ध-णारा०। एवं वामणसंठाणं वि। णविर खीलियसंघ० सिया वं०। तं तु०। एवं खीलिय०।

३८. पर० उक्क०द्विदिवं॰ तिरिक्कत्वग०-एइंदि०-त्रोरालि॰-तेजा॰-क॰-हुंडसं॰ वर्षण॰४-तिरिक्त्वाणु॰-त्रगु०-उप०-थावर-सुहुम-साधारण-दूभग-त्रप्रणादे०-त्रजस०-णिमि॰ णिय० त्रणु० संखेज्जदिभागू० । उस्सास-पज्जत्त० णियमा० । तं तु० । त्रथिर-त्रसुभ० सिया वं० संखेजजदिभागू० । एवं उस्सास-पज्जत्त-थिर-सुभणामाणं ।

३६. त्रादाव० उक्क०द्विदिवं० तिरिक्खगदि-एइंदि०-त्रोरालि०-तेजा०--क०--हुंड०-वएरा०४-तिरिक्खाग्रु०-त्रगु०४-थावर-वादर-पज्जत्त--पत्ते०--दूभग--त्रापादे०--

स्थिर, अस्थिर, शुभ, श्रद्धुभ, यशःकीर्ति श्रौर श्रयशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। अर्धनाराचसंहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि श्रमुत्कृष्ट बाँधता है तो उत्कृष्ट से अमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अर्धनाराचसंहननके श्राश्रयसे सिन्नकर्प जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार वामन संस्थानके श्राश्रयसे भी सिन्नकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह कीलक संहननका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर श्रमुत्कृष्टका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्टका बन्धक होता है तो उत्कृष्टका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्टका बन्धक होता है तो उत्कृष्टका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्टका बन्धक होता है तो उत्कृष्टका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्टका बन्धक होता है तो उत्कृष्टका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्टका बन्धक होता है तो उत्कृष्टका का वन्धक होता है। इसो प्रकार कीलक संहननके श्राश्रयसे सिन्नकर्प जानना चाहिए।

३८. परघातकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, एकेन्द्रिय जाति, योदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण् शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, यगुरुलघु, उपघात, स्थावर, सूक्ष्म, साधारण्, दुर्भग, अनादेय, अयशःकीति और निर्माण् इन प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। उञ्क्लास और पर्याप्त इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट का भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्टका बन्धक होता है तो उत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। अस्थिर अग्रुभका कदाचिद् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार उञ्जास, पर्याप्त, स्थिर, और शुभ प्रकृतियोंके आश्रयसे सिश्वकर्य जानन चाहिए।

३९. श्रातपकी उत्कृष्ट स्थितिकी बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, एकेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानु-पूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, स्थावर, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, दुर्भग, श्रनादेय श्रीर निर्माण णिमि॰ णिय० वं० | णिय० अणु॰ संखेडजिद्भागू० | थिराथिर-सुभासुभ-अजस॰ सिया वं॰ सिया अवं० | यदि वं० णिय॰ अणु॰ संखेडजिद्भागू॰ | जसगि० सिया० | तं तु॰ | एवं उडजोवं जसगित्तीए वि |

- ४०. ऋष्पसत्थ० उक्क॰ द्विदिवं॰ तिरिक्खगदि-बीइंदि॰ ऋोरालिय-तेजा०-क०-हुंडसं०-ऋोरालि० ऋंगो०-ऋसंप०-वर्गण०४-तिरिक्खाणु॰-ऋगु०४-तस०४-दूभग-ऋणादे०-िणिमि॰ णि॰ वं० | णिय० ऋणु० संस्वेज्जदिभागू० | उज्जो०-थिरा-थिर-सुभासुभ-जस०-ऋजस० सिया वं० | यदि वं० संखेज्जदिभागू० | दुस्सर० णिय० | तं तु० | एवं दुस्सर० |
- ४१. वादर० उक्क०द्विदिबं० तिरिक्खगिद-एईदि०-त्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वएए०४-तिरिक्खाणु०-त्रगु०-उप०-थावर-सुहुम-त्रपण्जत्त०--त्रथिरादिपंच०--िएमि० एपिय० वं० । एि० त्रणु० संखेजनिदभागु० ।
  - ४२. मणुस॰-मणुसपज्जत्त-मणुसिस्मीसु मणुसत्र्यपज्जत्त० तिरिक्खर्गाद्भंगो ।

प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट सख्यतवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर, अस्थिर, अभ, अशुभ और अयशक्षीर्ति इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। यशक्ष कीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है। अशि कदाचित् अबन्ध होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्टका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्टका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्टका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार उद्योत और यशक्कीर्तिके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

४०. श्रप्रशस्त विद्दायोगितिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करने वाला जीव तिर्यञ्चगित, द्वीन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, श्रीदारिक श्रीङ्गोणङ्ग, श्रसम्प्राप्तागृणिटिका संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क, दुर्भग, श्रनादेय श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। उद्योत, स्थिर, श्रिस्थर, श्रुभ, श्रशुभ यशःकीर्ति श्रीर श्रयशःकीर्ति इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। दुःस्वर प्रकृतिका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्टका भी वन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार दुःस्वर प्रकृतिके श्राश्रयसे सन्निकर्प जानना चाहिए।

- ४१. वादर प्रकृतिको उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, स्थावर, मुद्दम, श्रपयित, श्रस्थिर श्रादि पांच श्रोर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। जा नियमसे श्रनुत्कृष्ट मंख्यातवां भागन्यून स्थितिका बन्धक होता है।
  - ४२. सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यनी श्रौर मनुष्य श्रपर्याप्त जीवोंमें तिर्य-

णवरि आहारदुगं तित्थयरं ओघं।

४३. देवगदीए देवेमु णाणावर०-दंसणावर०-वेदणी०-मोहणी०-आयुग०-गोद०-त्रंतराइ० ओघं। तिरिक्खग० उक्क०द्विदिबं० ओरालि०-तेजा०-क०-हुंढ०-वएगा०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-अथरादिपंच-णिमि० णि० वं०। णि० तं तु०। एईदि०-पंचिदि-ओरालि०अंगो०-असंपत्तसेव०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-तस-थावर-दुस्सर० सिया वं०। यदि वं० तं तु०। एवमेदाणि एक-मेक्कम्स। तं तु०। सेसाणं गोरइयभंगो।

४४. भवण०-वाणवें०-जोदिसि०-सोधम्मीसाण त्ति तिरिक्खगदि० उक्क०िंदि-वं० एइंदि०-स्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-त्रगु०-थावर-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-स्रथिरादिपंच-णिमि० णि० वं० । णि० तं तु० । स्रादाउज्जोव०

ञ्चगतिके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि ब्राहारक दिक ब्रौर तीर्थंङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ब्रोघके समान है।

४३. देवगतिमें देवोंमें ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, मोहनीय, ऋाय, गोत्र और अन्तराय इनके अवान्तर भेदोंका भङ्ग ओघके समान है। तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जोव श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुंडसंस्थान, वर्ण-चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, त्रागुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त प्रत्येक, त्रस्थिर आदि पांच श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृएका भी वन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्टका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्टका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका ऋसंख्यातवां भाग न्यन तक स्थितिका बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रियजाति, श्रौदारिक श्रांगोपांग, श्रसम्त्राप्तासस्पाटिका संहनन, श्रातप, उद्योत, श्रप्रशस्त विहायोगति, श्रस, स्थावर श्रीर दःस्वर इन प्रकृतियांका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है ग्रीर त्रानुत्कृष्ट स्थितिका भो वन्धक होता है । यदि त्रानुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे ग्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यतवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्प होता है। जो उत्क्रप्रका भी वन्धक होता है श्रीर श्रमुत्क्रप्रका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्क्रप्रका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्युन तक स्थितिका वन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका भन्न नारिकयोंके समान है।

४४. भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी श्रौर सौधर्म—एशान कल्पके देवोंमें तिर्यञ्चगिति को उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक शरीर, श्रस्थिर आदि पाँच श्रौर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँभाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। श्रातप श्रौर उद्योत प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक

सिया० । तं तु० । एवभेदाणि एकभेकम्स । तं तु० । पंचिदिय० उक्क०द्विदिवं॰ तिरिक्खग०-त्रोरालि०-तेजा॰-क०-वर्ण् ॰४--तिरिक्खाण०--त्रगु०४--वादर--पज्जत्त-पत्तेय०-त्र्रथरादिपंच-णिमि० णि० वं० । णि० त्रणु० संग्वेज्जदिभागू० । हुंड॰- उज्जो० सिया० संग्वेज्जदिभागू० । वामणसंटा०-खीलियसंघ०-त्र्रसंपत्त० सिया० । तं तु० । श्रोरालि० त्रंगो-त्रप्पसत्थ०-तस-दुम्सर० णिय० वं० । तं तु० । एवमेदाणि एक्कमेक्कस्स । तं तु० । सेसाणं देवोघं ।

४५. सणकमार यात्र सहस्सार ति णिरयोघं । त्राणद यात्र णत्रगेवज्जा ति णाणाव०-दंसणाव०-वेदणी०-गोद०-त्रांतरा० त्रोघं । भिच्छ० उक्क०द्विदिवं० सोल-

होता है तो उत्कृपका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृपका भी बन्धक होता है। यदि क्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियों-का परस्पर सन्निकर्ष होता है श्रीर ऐसी श्रवस्थामें वह जीव उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी यन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्क्रपूसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यन तक स्थितिका बन्धक होता है। पञ्जेन्द्रिय जानिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्जगति, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्जगत्या-नुपूर्वी, अगुरुल्घु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यन स्थितिका बन्धक होता है। हुण्ड संस्थान श्रोर उद्योतका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यन स्थितिका बन्धक होता है। वामन संस्थान, कीलक संहनन श्रौर श्रसम्प्राप्तास्रपाटिका संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्युनतक स्थितिका बन्धक होता है। श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रप्रशस्त-विहायोगति, त्रस स्त्रीर दुःस्वरका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्क्रप्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्या तवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इस प्रकार इनका परस्पर एक इसरेका सिन्नकर्प होता है और तब उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुतकृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्ट्से अनुतकृष्ट एक समय न्यनसे लंकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यनतक स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है।

४४. सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें सामान्य नारिकयोंके समान भक्त है। श्रानत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें झानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, गोत्र श्रौर श्रन्तरायके श्रवान्तर भेदोंका भक्त श्रोघके समान है। मिथ्यात्वकी मक०-णवुंस०-ऋरदि-सोग-भय-दुगुं० णिय० | तं तु० | एवमेदाश्रो एकमेक्कस्स | तं तु० | इत्थि० उक्क०द्विदिबं० मिच्छ०-सोलसक०-श्ररदि-सोग-भय-दुगुं० णिय० वं० | णि० श्रणु० संखेजनिदभागू० | पुरिस० उक्क०द्विदिबं० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं० णिय० वं० | णिय० संखेजनिदभागू० | हस्स०-रिद० सिया | तं तु० | श्ररदि-सोग० सिया० संखेजनिदभागू० | हस्स'० उक्क०द्विदिबं० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुंगुं० णिय० वं० संखेजनिदभागू० | पुरिस० सिया० । तं तु० | इत्थि०-णवुंस० सिया० संखेजनिदभागू० | रिद० णिय० वं० | तं तु० | एवं रदीए वि० |

उत्कृप स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव सोलह कषाय, नपुंसकवेद, श्ररति, शोक, भय श्रीर जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्ट्से अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष होता है श्रोर तब इनकी स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसं लेकर पत्यका असंख्या तवां भाग न्यनतक स्थितिका वन्धक होता है। स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, ऋरति, शोक, भय और जुगुल्साका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग होन स्थितिका बन्धक होता है । पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय श्रौर जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। हास्य श्रीर रतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसं उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका ऋसंख्यातवां भाग न्यनतक स्थितिका बन्धक होता है। ऋरित और शोकका कदाचित बन्धक होता है और कदाचित अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। हास्य की उत्क्रप्ट स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका नियमसे वन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेदका कदाचित बन्धक होता है और कदाचित श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका ग्रसंख्यातवां भाग न्यनतक स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेद श्रौर नपुंसकवेदका कदाचित बन्धक होता है और कदाचित अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। रतिका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्टस्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पल्यका ग्रसंख्यातवां भाग न्यनतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार रतिकी श्रपेता सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१. मूलप्रती हस्स-रदि उक्क० इति पाठः

४६. मणुसगदि उक्क०द्विदिबं ं पंचिदि ०-त्रोगाति ०-तेजा०-कम्मइय०-हुं ड०-त्रोगाति ० त्रंगो ०-त्रसंपत्तसेव ०--वरण् ०४-मणुसाणु ०-त्रगु०४-त्रप्यत्थ०-तस०४--त्रथिरादिञ्च०-णि ० णिय० वं ० । णि ० तं तु ० । एवमेटात्रो एकमेक्कस्स । तं तु ० ।

४७. समचदु० उक्क०द्दिद्वं० मणुसग०-पंचिद्दिय-त्रोरालिय-तेजा०--क०-त्रोरालि०त्रंगो०-वएण्०४-पणुसाणु०-त्रगु०४-तस०४-िणिमि० णिय० संखेज्जदि-भागू०। वज्जरिसभ०-पसत्थ०-थिराद्विक् सिया०। तं तु०। पंचसंघ०-त्र्राथरादि-छ० सिया० संखेजजदिभागूणं०। यात्रो तं तु समचदुरसंटाणेण तात्रो समचदुर० संसभंगात्रो। संसपगदीणं मणुसगदिसहगदात्रो णिय० संखेजजदिभागू०। यात्रो सियात्रो वं० तात्रो तं तु० वा संखेजजदिभागूणं वा वंथदि। तिन्थयरं देवभंगो।

४६. मनुष्यगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गोणाङ्ग, असम्प्राप्तासृणाटिका संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलधुचतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगित, असचतुष्क, अस्थिरश्रादि छह और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है वेर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टस अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए और तब उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो उत्कृष्टसं श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसं लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है।

४७. समचतुरस्र संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगति, पञ्च-न्द्रिय जाति, श्रौदारिकशरीर, तेजसशरीर, कार्मगुशरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्गाचतुष्कं, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अस चतुष्क श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका वन्धक होता है। वज्रर्षभ नाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, श्रीर स्थिर श्रादि छहका कदाचित् वन्धक होता है श्रोर कदाचित अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रनुत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धकहोता है। यदि अनुत्रुष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्य्रनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यनतक स्थितिका वन्धक होता है । पांच संहनन श्रौर श्रस्थिर श्रादि छहका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यृन स्थितिका बन्धक होता है। यहां पर जिन प्रकृतियोंका समचतुरस्र संस्थानके साथ उत्हुए स्थितिबन्ध होता है या एक समय न्यूनसे लंकर पत्यका असंख्या-तवां भाग न्यूनतक अनुत्कृष्ट स्थितिबम्ध होता है उनका समचतुरस्र संस्थानके समान भङ्ग जानना चाहिए। शेष प्रकृतियोंका मनुष्यगतिके साथ नियमसे संख्यातवां भाग न्यून अनु-त्कृष्ट स्थितिबन्ध होता है। उसमें भी जिनका कदाचितू बन्ध होता है उनका या तो उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिबन्ध होता है या संख्यातवां भाग न्यून स्थितिबन्ध होता है। तीर्थं इर प्रकृतिका भङ्ग देवों के समान है।

१. मृताप्रती-हिद्दिबं० पंचणा० श्रीरा इति पाठः ।

४८. ऋणुदिस याव सन्वद्दा ति पंचणा०-छदंसणा०-सादासा०-वारसक०-सत्तणोक०-पंचंत० श्रोघं। मणुसगदि० उक्क०द्दिदिवं० पंचिदि०-श्रोरालि०-तेजा०-क०-समचदु०--श्रोरालि०श्रंगो०--वज्जरिसभ०--वण्ण०४--मणुसाणु०--श्रगु०४--पसत्थ०-तस०-४-श्रथिर-श्रमुभ-सुभग-सुस्सर-श्रादे०-श्रजस०-णिमि० णिय०। तं तु०। तित्थय० सिया०। तं तु०। एवमेदाश्रो एक्कमेक्कस्स। तं तु०। थिर० उक्क०द्दिदिवं० मणुसगदि० णियमा संखेज्जदिभागृ०। एवं धुवियाश्रो सन्वाश्रो। सुभ-जस० सिया० तं तु०। श्रमुभ-श्रजस०-तित्थय० सिया० संखेज्जदिभागू० वं०। एवं सुभ-जसगित्ति०। ४६. सन्वएइंदि०-सन्विगिलिंदि० तिरिक्खश्रपज्जत्तभंगो। णविर वीचारद्दा-णाणि णादन्वाणि भवंति। 'पंचिदिय-पंचिदियपज्जत्ता० सन्वपगदीणं श्रोघं।

४८. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें पाँच श्रानावरण, छह दर्शनावरण, साताचेदनीय, श्रसाताचेदनीय, बारह कषाय, सात नोकषाय श्रीर पाँच ग्रन्तरायका भङ्ग श्रोघके समान है। मनुष्यगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति. श्रीदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्र-र्षभ नाराच संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति. त्रसचतुष्क, ग्रस्थिर, ग्रशुभ, सुभग, सुखर, ग्रादेय, ग्रयशःकोर्ति श्रीर निर्माण इन प्रकृतियों-का नियमसे वन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुतकृष्ट स्थिति-का भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्ट्स अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लंकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थ-द्वर प्रकृतिका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् ग्रबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है त्रौर त्रजुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रनुत्रुष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो उत्कृष्टसं श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसं लंकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यन तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सिन्नकर्ष होता है। जो उत्कृष्ट भी होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट भी होता है। यदि श्रमु त्कृष्ट होना है तो उत्कृष्ट्से अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यन तक स्थितिका होता है। स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जोव मनुष्यगतिका नियमसे अनुत्रुष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार सव ध्रुव प्रकृतियोंको त्रानुत्कृष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। शुभ और यशःकीर्तिका कदाचित वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्क्रप्ट स्थितिका भी बन्धक होता है स्रोर स्रजुत्कुए स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। श्रशुभ, अयशःकीर्ति श्रीर तीर्थंद्वर इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थिति-का बन्धक होता है। इसी प्रकार ग्रुभ और यशःकीर्तिकी अपेचा सम्निकर्ष कहना चाहिए।

४६. सब एकेन्द्रिय ग्रौर सब विकलेन्द्रिय जीवोंका भङ्ग तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान हैं। इतनी विशेषता है कि इनके बीचार स्थान शांतव्य हैं। पञ्चेन्द्रिय ग्रौर पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त

मृ्लप्रती पंचिदिय-तस श्रपञ्जत्ता इति पाठः ।

पंचिदियश्रपञ्जत्ता॰ तिरिक्खश्रपञ्जत्तभंगो। पंचकायाएं 'पञ्जत्तापज्जत्ताएं तिरिक्ख-श्रपञ्जत्तभंगो। एवरि एइंदिय-पंचकायाएं यम्हि संखेज्जदिभागहीएं तम्हि श्रसं-खेज्जदिभागहीएं वंधदि। तस-तमपञ्जत्ता॰ श्रोघं। तसश्रपञ्जत्ता० 'तिरिक्ख-श्रपज्जत्तभंगो। पंचमए०-पंचवचि०-कायजोगि० श्रोघं। श्रोरालिकायजोगि० मणुसभंगो।

५०. त्रोरालियिमस्से देवगदि० उक्क०हिदिवं० पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वएण०४-त्रगु०४-पसत्थ०-तस०४-त्र्राथर-त्रमुभ-सुभग-सुस्सर-त्रादे०-त्रजस०-िएमि० एय० । त्रणु० एा० संखज्जगुणहीर्णं० । वेउव्वि०-वेउव्वि० श्रंगो०-देवाणु०-णियमा । तं तु० । तित्थय० सिया० । तं तु० । एट्टाश्रो पगदीश्रो तित्थयरेण सह एक्कमेक्कस्स तं तु० काट्वा । सेसाणं पंचिदियतिरिक्खत्रपज्जत्तभंगो ।

५१. वेउव्वियका० देवोघं । एवं चेव वेउव्वियमिस्स० । एवरि यात्रों तं तु०

जीवोंकं सब प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधकं समान है। तथा पञ्चेन्द्रिय श्रप्यांत जीवोंका भङ्ग तियंश्च श्रप्यांतिकोंके समान है। पाँच स्थावर काय तथा इनके पर्यात श्रांर श्रप्यांति जीवोंमें सिन्निकर्षका भङ्ग तियंश्च श्रप्यांतिकोंके समान है। इतनी विशेषता है कि सब एकेन्द्रिय श्रीर पाँचों स्थावर कायिक जीवोंके, जिनका संख्यातवां भाग हीन बन्ध कहा है उनका, श्रसंख्यातवां भाग हीन बन्ध होता है। तस श्रीर त्रस पर्याप्त जीवोंके सब प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधके समान है। तथा त्रस श्रप्यांतिकोंके तिर्यश्च श्रप्यांतिकोंके समान भङ्ग है। पाँचों मनोयोगी, पाँचों ववनयोगी श्रीर काययोगी जीवोंके सब प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधके समान है। तथा श्रीदारिक काययोगी जीवोंमें सब प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्योंके समान है।

५०. श्रौदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचनुरस्नसंथान, वर्णचनुष्क, अगुरुलघुचनुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचनुष्क, श्रस्थिर, श्रग्रुभ, सुभग, सुस्यर, श्रादेय, श्रयशःकीर्ति श्रौर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है । जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका वन्धक होता है । वैकियिक शरीर, वैकियिक श्राङ्गोपङ्ग श्रौर देवगत्यानुपूर्वी इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है । जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है । विधिकर प्रकृतिका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है । विधिकर प्रकृतिका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है । यदि वन्धक होता है तो जत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसं लेकर पत्थका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । इन प्रकृतियोंको तिर्थकर प्रकृतिके साथ परस्पर उत्कृष्ट स्थितिके बन्धकपसे श्रौर एक समय कम पत्थके श्रसंख्यातवों भाग न्यून तक श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धकपसे करना चाहिए। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्थञ्च श्रपर्याकांके समान है।

४१. वैक्रियिक काययोगी जीवोंमें स**ब** प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। इसी प्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जो पर-

१. मृलप्रतौ परमत्ता श्रपरमत्ताणं इति पाठः । र. मृलप्रतौ तिरिक्खपरमत्त इति पाठः ।

पगदीत्रो तात्रो एकमेकस्स तं तु० । सेसात्रो संखेज्जदिभागूणा वंधदि ।

- ४२. ब्राहार॰-ब्राहारिम॰ पंचणा॰-छदंसणा०-दोवेदणी॰-पंचंत॰ ब्रोघं। कोधसंज० उक्क॰ द्विदिवं० तिणिणसंज०-पुरिस॰-अरिद-सोग-भय-दुगुं० णिय० वं०। तं तु०। एवमेदात्रो एक्कमेक्कस्स । तं तु०। हस्स० उक्क० द्विदिवं० चदुसंज०-पुरिस०-भय-दुगुं० णिय० संखेज्जदिभागुणं वं०। रदी० णिय०। तं तु०। एवं रदीए।
- ५३. देवगदि० उक्क ० दिविं पंचिदियादिपगदी श्रो िष्य० वं० । तं तु० । तित्थय० सिया० । तं तु० । एवं देवगदिसहगदा श्रो एक मेक स्स । तं तु० । थिर० स्पर उत्कृष्ट स्थितिबन्धवाली या एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक अनुत्कृष्ट स्थितिबन्धवाली प्रकृतियाँ हैं उनका यह जीव परस्पर या तो उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करता है या उत्कृष्टकी अपेद्या एक समय कमसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक अनुत्कृष्ट स्थितिबन्ध करता है और शेषका संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिबन्ध करता है।
- ४२. त्राहारककाययोगी श्रौर श्राहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें पाँच श्वानावरण, छह दर्शनावरण, दो वेदनीय श्रीर पाँच श्रन्तराय प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोघके समान है। कोध संज्व-लनकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तीन संज्वलन, प्रुपवेद, अरति, शोक, भय श्रीर जगुण्साका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्क्रष्ट्रसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यन तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष होता है। श्रीर तब इनकी उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका असं-ख्यातवाँ भाग न्युनतक स्थितिका बन्धक होता है। हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार संज्वलन, पुरुषवेद, भय श्रौर जुगुत्साका नियमसे वन्धक होता है। जो श्रनुत्कृष्ट मंख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। रितका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट्से अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पल्यका ग्रसंख्यातवाँ भागहीनतक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार रितके ग्राश्रयसे भी सन्निकर्प जानना चाहिए।
- ५३. देवगतिकी उत्हाए स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति श्रादि प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। जो उत्हाए स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रमुत्हृए स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्हृए स्थितिका बन्धक होना है तो नियमसे उत्हृएसे श्रमुत्हृए एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतकस्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है और कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्हृए स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रमुत्हृए स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्हृए स्थितिका बन्धक होता है तो उत्हृएसे श्रमुत्हृए एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तकस्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार देवगितके साथ बँधनेवाली प्रहृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष होता है। तब यह जीव उत्हृृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्हृृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्हृृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्हृृष्ट स्थितिका

उक्क ॰ हिद्वं ॰ देवगदिश्रहावीसं णिय ॰ वं ॰ । संखेजजिद्भा ॰ । सुभ-जस ० सिया ॰ । तं तु ॰ । श्रसुभ-श्रजस ० सिया ॰ संखेजजिद्भागू ॰ । एवं सुभ-जस ० । तिन्थ ० उक्क ० - हिद्वं ॰ देवगदि-पंचिद् ० श्राद्श्रहावीसं पगदीश्रो णिय ॰ संखेजजिद्भागूणं वं ॰ ।

५४. कम्मइ० पंचणा०-एवदंसर्णा०-साटासा०-गोद०-पंचंत० श्रोघं । मिच्छ० उक्क॰ द्विदिवं० सोलसक ०-एावुं स०-ऋरदि-सोग-भय-द्गुं॰ | शिय० | नं तु० | एवमेदात्रो एक्समेकस्स । तं तु० । इत्थिवे० उक्क०द्विदिवं० मिच्छ०-सोलसक०-ऋरदि-सोग-भय-दुर्गु ० णिय० संखेज्जदिभागृषां वं० । पुरिस० उक्क०हिदिवं० इत्थिभंगो । हस्स-रदि० सिया० । तं तु० । ऋरदि-सोग सिया० संखेजनिद्भागूणं० । हस्स० बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यन तक स्थितिका यन्धक होता है। स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका यन्ध करनेवाला जीव देवगति श्रादि श्रद्धाईस प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग-हीन स्थितिका बन्धक होता है। शुभ और यशःकीर्ति प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो उत्कृष्टसे श्रुनुत्कृष्ट एक समय न्युनसे लेकर पत्यका श्रुसंख्यातवाँ भाग न्युनतक स्थितिका बन्धक होता है। त्राशुभ और त्रायशःकीर्ति प्रकृतियोका कदाचित् बन्धक होता है त्रार कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो अनुत्कृष्ट संख्यातयाँ भाग न्यन स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार शुभ और यशकीर्ति प्रकृतियोंके श्राश्रयसे सन्निकर्प जानना चाहिए। तीर्थंकर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव देवगति और पञ्चेन्द्रिय जाति श्रादि श्रद्धाईस प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है । जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट्र संख्यातवां भाग होन स्थितिका बन्धक होता है ।

४४. कार्मण काययोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, साता-त्रसाता वेदनीय, दो गोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय प्रकृतियांका भङ्ग श्रीघके समान है। मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव सोलह कपाय, नपुंसकवेद, ग्ररति, शोक, भय श्रीर जुगुप्साका नियमसे वन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्ट्से अनुत्कृष्ट् एक समय न्यनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यन तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इन सवका परस्पर सन्निकर्प जानना चाहिए। इनमेंसे किसी एककी उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक रोपकी उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता श्रौर श्रवृत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है ता नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लंकर पल्यका ग्रसंख्यातवाँ भाग न्यनतक स्थितिका वन्धक होता है। स्त्रीवेदकी उत्कृप्ट स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, ऋरित शोक, भय श्रीर जगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। पुरुपवंदकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। यह हास्य और रितका कदाचित् बन्धक होता है और कदािचत् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भो बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भो बन्धक होता है। यदि ग्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृपका ग्रपेत्ना ग्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। श्ररित

उक्क ० हिद्वं ॰ मिच्छ ॰ - सोलसक ॰ - भयदुगुं ० णिय० संखेजितिभागू० । इत्थि ॰ -णवुं स ॰ सिया वं ० संखेजितिभागू० । पुरिसवे ॰ सिया० । तं ० तु० । रदि ॰ णिय ० । तं तु० । एवं रदीए ।

४५. तिरिक्खग० उक्क०द्विदिवं० एइंदि०-पंचिदि०-स्रोरालि० स्रंगो०-स्रसंपत्त०-पर०-उस्सा०-स्रादाउज्जो०--स्रप्पसत्थ०--तस-थावर--वादर--स्रहुप--पज्जत्त-पत्तेय०--साधार०-दुस्सर० सिया० । तं तु० । स्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वएण०४-तिरि-क्खाणु०-स्रगु०-उप०-स्रथिरादिपच०-णिमि० णियमा० । तं तु० । एवं तिरिक्खगदि-भंगो स्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वएण०४-तिरिक्खाणु०-स्रगु०-उप०-स्रथिरादिपंच-णिमिण० त्ति ।

श्रोर शोकका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय श्रोर जुगुप्साका नियमसे वन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेद श्रोर नपुंसकवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहोन स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। रितका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। विद अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। स्भी प्रकार रितके अध्यसे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए।

प्रथ. तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रियजाति, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तास्प्रपटिका संहनन, परघात, उच्छ्रास, श्रातप, उचोत, श्रप्रश्नस्त विहायोगित, त्रस, स्थावर, वादर, स्हम, पर्याप्त, प्रत्येक, साधारण श्रीर दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर परुयका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रमुक्ल्घु, उपधात, अस्थिर श्रादि पाँच, श्रोर श्रीनमीण इनका नियमसे वन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। स्थितका वन्धक होता है। स्थितका वन्धक होता है। स्थितका श्रीदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचनुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रमुक्लघु, उपघात, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण इन प्रकृतियाँके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके श्राश्रयसे सन्निकर्षका भङ्ग तिर्यञ्च गतिके समान जानना चाहिए।

५६. मणुसगिह ० उक्त ० दिदिबं ० पैचिदि ० - स्रोरालि ० - तेजा ० - तेजा ० - त्र्योरालि ० - त्र्योगो ० - त्र्याण ० ४ - त्र्याण ० - त्र

५७. देवगदि० उक्क०द्विदिवं० पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०--वरण्०४-त्रगु०४-पसत्थवि०-तस०४-त्रथिर- त्रग्धभ-सुभग-सुस्सर-त्रादे०-त्रजस०-णि० णिय० संखेजजगुण्हीणं वं० । वेउव्वि०-वेउव्वि०त्रंगो०-देवाणु० णि० वं० । णि० तं तु० । तित्थयरं सिया० । तं तु० । एवं देवगदि०४ ।

५८. एइंदि० उक्क०द्विदिवं० तिरिक्खग०-त्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-

'१६. मनुष्यगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गापाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रमुरुलघु, उपघात, त्रस, वादर, प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रीर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है। जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागद्दीन स्थितिका बन्धक होता है। तीन संस्थान, तीन संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगित, परघात, उच्छ्वास, पर्याप्त, श्रप्याप्त श्रीर दुःखर इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागद्दीन स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट श्रितका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्वा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीके श्राश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

४७. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्न संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशःकीर्त और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। तिथमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। तिथिकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार देवगित चतुष्कके आअयसे सिक्षकर्ष जानना चाहिए।

४८. एकेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिक। बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, श्रीदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुल्घु, वरारा०४-तिरिक्लाणु॰-अगु॰-उप॰-अथिरादिपंच-शािम० शि० वं॰ । तं तु॰ । पर०-उस्सा०-आदाउज्जो॰-वादर-सुहुम-पञ्जत्तापज्जत्त--पत्तेय०--साधार॰ सिया॰ । तं तु० । एवं थावर० । बीइं॰-तीइंदि॰-चदुरिं०-चदुसंठा०-चदुसंघ०-अपज्ज० ओघं ।

५६. समचदु० उक्क • द्विदिवं॰ पंचिदि०-श्रोरालि॰-तेजा॰-क॰-श्रोरालि०श्रंगो॰-वएए।०४-तस॰४-िएभि॰ एिय० संखेज्जिदिभागूएं०। दोगिद-पंचसंघ०-दोश्राणुपु॰-उज्जो॰-श्रप्पसत्थ॰-श्रथिरादिछ॰ सिया॰ संखेज्जिदिभागू॰। वज्जिर०-पसत्थ०-थिरादिछ० सिया॰। तं तु॰। एवं वज्जिरिस०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-श्रादे०-जस०।

६०. पंचिदि० उक्क०द्विदिवं० तिरिक्खग०-त्रोरात्ति०--तेजा०-क०-हुंड०-त्रोरात्ति०त्रुंगो०-त्रसंपत्त०-वएण०४-तिरिक्खाणु०--त्रगु०४--त्रप्रसत्थ०--तस०४--

उपघात, श्रस्थिर श्रादि पांच श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्हृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। परघात, उल्लास, श्रातप, उद्योत, बादर, स्क्ष्म, पर्याप्त, श्रपर्याप्त, प्रत्येक श्रीर साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपंचा श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार स्थावर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका श्रालम्बन लेकर सन्निकर्प जानना चाहिए। द्वीन्द्रिय जाति, त्रीन्द्रियजाति, चतुरिन्द्रिय जाति, चार संस्थान, चार संहनन श्रीर श्रपर्याप्त इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्रालम्बन लेकर सन्निकर्प श्रोधके समान जानना चाहिए।

४९. समचतुरस्न संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रसचतुष्क श्रोर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातवां भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। दो गित, पांच संहनन, दो श्रानुपूर्वी, उद्योत, श्रमशस्त विहायोगित श्रौर श्रस्थर श्रादि छह इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। वज्रप्म नाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित श्रौर स्थिर श्रादि छह इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट स्थितका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेक्षा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार चजूर्षभ नाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुखर, श्रादेय, श्रौर यशःकीर्ति इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्रवलम्बन लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

६०. पञ्चेन्द्रियजातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, श्रौदा-रिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड सस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गापाङ्ग, श्रसम्प्राप्ता-सुपाटिकासंहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वा, श्रगुरुलघु चतुष्क, श्रप्रशस्त विहायागित, अथिरादिछ०-णि० णिय० | तं तु० | उज्जो० सिया० | तं तु० | एवं पंचिदियभंगो अरोरालि० अंगो०-असंपत्त०-पर्०-उस्सा०-अप्पसत्थ०-तस०४-दुस्सरा ति । णवरि पर०-उस्सा०-वादर-पज्जत्त-पत्ते० उक्क०द्विदिवं० एइंदि०-पंचिदि०-ओरालि० अंगो०-अप्पसत्थ०-तस-थावर-दुस्सर सिया० | तं तु० |

- ६१. त्रादाव० उक्क०द्विदिवं० तिरिक्खगिद-एइंदि०-त्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वर्गण०४-तिरिक्खाणु०--त्रगु०४--थावर--वादर--पज्जत्त--पत्ते०--त्रथिरादिपंच--णिमि० णिय० वं० | तं तु० | उज्जो० तिरिक्खगिद्भंगो | एवरि सुहुय-त्रप्रजत्त--साधारणं वज्ज० |
- ६२. सुहुम॰ उक्क॰हिद्विं० तिरिक्खगदि-एइंदि॰-त्र्रोरालि॰-तेजा॰-क॰-हुंड०-वएण०४-तिरिक्खाणु०-त्र्रगु०-उप॰-थावर-त्र्रपुजनत्त-साधारण-त्र्रथरादिपंच--िएमि॰

त्रसचतुष्क, ग्रस्थिर ग्रादि छह श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी ऋषेत्वा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका यन्धक होता है। उद्योत प्रकृतिका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिकी अपना अनुत्कृष्ट एक सभय न्यनसं लेकर पत्य-का श्रसंख्यातवाँ भाग न्यन तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार प्रकृतेन्द्रिय जातिके समान ग्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, परघात, उच्छास, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क त्रौर दुःस्वर इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्यका त्रालम्बन लेकर सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि परघात, उच्छास, बादर, पर्याप्त श्रीर प्रत्येक प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, पश्चेन्द्रिय जाति. त्रौदारिक त्राङ्गोपाङ्ग, त्रप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर त्रौर दःस्वर इनका कदाचित बन्धक होता है और कदाचित अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपंत्ता अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसं लंकर पस्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यन तक स्थितिका बन्धक होता है ।

- ६१. श्रातपकी उत्रुष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, एकेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रागुरुलयु चतुष्क, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर श्रादि पांच श्रोर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रानुत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रानुत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्रुष्ट्यकी श्रपेचा श्रानुत्रुष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पर्यका श्रासंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योत प्रकृतिका भङ्ग तिर्यञ्चगितके समान है। इतनी विशेषता है कि सूद्म, अपर्याप्त श्रीर साधारण प्रकृतियोंको छोड़कर इसका सन्निकर्ष कहना चाहिए।
- ६२. सृक्ष्म प्रकृतिको उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्च-गत्यानुपूर्वा, श्रगुरुलवु, उपघात, स्थावर, श्रपर्याप्त, साधारण, श्रस्थिर श्रादि पांच श्रोर

णिय॰ वं० । तं तु॰ । एवं ऋपज्जत्त-साधारण॰ ।

- ६३. थिर० उक्क० द्विदिवं ० दोगदि-एइंदि०-पंचिंदि०-पंचसंठा०-श्रोरालि०श्रंगो०-पंचसंघ०-दोश्राणु०--श्रादाउउजो०-श्रप्पसत्थ०-तस-थावर-बादर-सुहुम-पत्तेय०-साधार०-श्रसुभादिपंच० सिया० संखेजज०भागूणं वं० । श्रोरालि०-तेजा०-क०-वएण०४-श्रगु०४-पज्जत्त-णिमि० णि० वं० संखेजजभागू० । समचदु०-वज्जिर-सभ०-पसत्थ०-सुभगादिपंच सिया० । तं तु० । एवं थिरभंगो सुभ-जसगि० । णवरि जसगित्तीए सुहुम-साधारणं वज्ज ।
- ६४. तित्थय ॰ उक्क ॰ द्विदिवं ॰ मणुसगिद्विपंचग ॰ सिया ॰ संखेजनिद्भागहीणं वं ॰ । देवगिद ०४ सिया ॰ । तं तु ॰ । पंचिद्वियात्रो धुविगात्रो अथिर-असुभ-सुभग-

निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे छेकर पल्यका असल्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसो प्रकार अपर्यात और साधारण प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ण कहना चाहिए।

६३. स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव दो गित, एकेन्द्रिय जाित, पञ्चे निद्रय जाित, पांच संस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, पांच संहनन, दो श्रानुपूर्वी, श्रातप, उद्योत, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस, स्थावर, बादर, स्क्ष्म, प्रत्येक, साधारण श्रोर श्रगु-भािद पांच इनका कदािचत् बन्धक होता है श्रोद कदािचत् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। श्रोदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलष्ट चतुष्क, पर्याप्त और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातवां भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। समचतुरस्र सस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, श्रीर सुभग श्रादि पांचका कदािचत् बन्धक होता है श्रोर कदािचत् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रोर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रवन्धक होता है। यदि श्रवन्धक होता है। यदि श्रवन्धक होता है। यदि श्रवन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रवन्धक होता है। यदि श्रवन्धक होता है। यदि श्रवन्धक होता है। यदि श्रवन्धक होता है। इसी प्रकार स्थर अञ्चतिक समान श्रभ श्रोर यशःकीर्ति प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्रवलम्बन लेकर सन्तिकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिकी श्रपेचा सन्निकर्प कहते समय सक्ष्म श्रोर साधारण इन दो प्रकृतियोंको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

६४. तीर्थं इर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगित पञ्चकका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् ग्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवां भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। देवगितचतुष्कका कदाचित् वन्धक होता है ग्रोर कदाचित् ग्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है ग्रोर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्ता श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति श्रादि ध्रमुबन्धवाली प्रकृतियां तथा श्रस्थिर, श्रमुभ, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रोर श्रयशःकीर्ति

मुस्सर-श्रादे ॰ - अज ॰ णि० वं० अणु० संखेजनिद्भागही एां ० ।

६५. इत्थिवे॰ पंचणा०-णवदंसणा०-दोवेद-मोहणी० छव्वीस-आयु० ४-दोगोद०-पंचंत० ओघं । णिरयगदि० उक्त०हिदि०वं० पंचिदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-हुंड०-वेउव्वि०अंगो०-वरणा०४-णिरयाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि० णिय० वं० । तं तु० । एवं णिरयगदिभंगो पंचिदि०-वेउव्वि०-अंगो०-णिरयाणु०-अपसत्थ०-तस-दुस्सर नि ।

६६. तिरिक्खग॰ उक्क॰ द्विदिवं० एइंदिय-त्रोरालि॰-तेजा०-क०-हुंडसं०-वएए।०४-तिरिक्खाणु॰-त्रगु॰४-थावर-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-त्र्रथिरादिपंच-िएमि॰ एिय० वं० । तं तु॰ । त्रादाउज्जो सिया॰। तं तु॰ । एवं निरिक्खगदिभंगो एइंदि॰-त्र्रोरालि॰-तिरिक्खाणु०-त्रादाउज्जो०-थावर ति ।

इनका नियमसे बन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातवां भागहीन स्थितिका बन्धक होता है।

६४. स्नीवेदवाले जीवोंमें पांच झानावरण, नो दर्शनावरण, दो वेद, मोहनीय छव्वीस, श्रायु चार, दो गोत्र श्रौर पांच अन्तराय इनके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका सन्निकर्ष श्रोधके समान है। नरकगितकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाल। जीव पश्चेन्द्रिय जाित, वैकियिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुगड संस्थान, वैकियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह श्रौर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी श्रपेत्ता श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नरकगितके समान पश्चेन्द्रिय जाित, वैकियिक शरीर वैकियिक श्राङ्गोपाङ्ग. नरकगत्यानुपूर्वी, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस श्रौर दुःस्वर इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्रवलम्बन लेकर सन्निकर्ण जानना चाहिए।

६६. तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, स्थावर, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि पांच श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टको श्रपेक्षा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका वन्धक होता है। श्रातप श्रौर उद्योतका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेक्षा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगतिके समान एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तिर्यञ्चगत्या- नुपूर्वी, श्रातप, उद्योत श्रौर स्थावर प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्रवलम्बन लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

६७. मणुसगदि० उक्कद्विदिबं० श्रोघं । एवरि श्रोरालि०श्रंगो० एिय० बं० संखेज्जदिभागू० । दोसंठा०-तिएिए।संघ०-श्रपज्ज० सिया० संखेज्जदिभागू० !

६८. देवेगदि० उक्क० दिदिबं० श्रोघं । बीइंदि०-तीइंदि०-चदुरिं० उक्क० दिदि० श्रोघं । एवरि विसेसो, श्रोरालि० श्रंगो०-श्रसंपत्तसे० एिय० । तं तु० । श्राहार०-श्राहार० श्रोगो० श्रोघं ।

६६. तेजइग० उक्क ब्रिटिबं० कम्मइ०-हुंडसं०-वएए४-ऋगु०[४]-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-ऋथिरादिपंच०-िएमि०-िएय० वं० । तं तु० । एिरयगदि-एइंदि०-पंचिंदि०-ऋोरालि०-वेउन्वि०-वेउन्वि०ऋंगो०-दोऋाणु०-ऋादाउज्जो०-ऋप्पसत्थ०-तस-थावर--दुस्सर० सिया० । तं तु० । एवं तेजा०भंगो कम्मइग०-हुंड०-वएए।०४-ऋगु०४-वादर-पज्जत-पत्तेय०-ऋथिरादिपंच-िएमिए। ति ।

६७. मनुष्यगितके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्षका विचार करनेपर वह श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्गका यह नियमसे बन्धक है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातयां भागहीन स्थितिका बन्धक है। दो संस्थान, तीन संहनन श्रोर पर्याप्त इनका कदाचित् बन्धक है श्रोर कदाचित् अबन्धक है। यदि बन्धक है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातयां भाग होन स्थितिका बन्धक है।

६८. देवगतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्रवलम्बन लेकर सन्निकर्षका विचार करनेपर वह श्रोधके समान है। द्वीन्द्रिय जाति, श्रीन्द्रिय जाति श्रौर चतुरिन्द्रिय जातिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्रवलम्बन लेकर सन्निकर्पका विचार करनेपर वह श्रोधके समान है। इतना विशेष है कि श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रौर श्रसम्प्राप्तास्पाटिका संहननका नियमसे बन्धक होताहै जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसं उत्कृष्ट की श्रपेचा श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। आहारक श्रीर श्रौर श्राङ्गोपाङ्गके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्रवलम्बन लेकर सन्निकर्षका विचार करनेपर वह श्रोधके समान है।

६६. तैजम शरीरकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण
इनका नियमसे वन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट
स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी श्रपेक्षा
श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता
है। नरकगित, एकेन्द्रिय जाति, पञ्जेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, वैकियिक शरीर, वैकियिक श्राङ्गोपाङ्ग, दो श्रानुपूर्वी, श्रातप, उद्योत, श्रप्रशस्त विद्यायोगित, त्रस, स्थावर श्रौर दुःस्वर
इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो
उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो
वियमसे उत्कृष्टकी श्रपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे
लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तैजस
शरीरके समान कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त,
प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितबन्धका श्रवलम्बन
लेकर सन्धकर्ष जानना चाहिए।

- ७०. समचदु० उक्क०द्विदि० त्रोघं। स्वारि त्रोरात्ति०त्रांगो०-त्रसंपत्त० सियाः॰ संखेज्जदिभागू०। एवं पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-त्रादे०। सम्मोद०-सादि०-खुज्ज-संठा० त्रोघं।
- ७१. वामणसंठा० उक्त॰ द्विदिवं॰ श्रोरात्ति॰ श्रंगो० णिय०। तं तु०। स्वीत्तियसंघ०-श्रसंप० सिया॰। तं तु०। सेसं श्रोघं।
- ७२. त्रोरालि०त्रंगो० उक्त०द्विदिवं० तिरिक्खगिद-त्रोरालिय-तेजा०-क०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-त्रगु०-उप०-तस-बादर-पज्जत्त०-त्र्रथिरादिपंच-णिमि० णि० वं० संखेज्जिदिभागू०। वीइंदि०-तीइंदि०-चदुरि०-वामण०-खीलिय०-त्र्रसंप०-त्रप्रज्ज० सिया०। तं तु०। पंचिंदि०-हुंड०-पर०-उस्सा०-उज्जो०-त्रप्रसत्थ०-पज्जत्त०-दुस्सर
- ७०. समचतुरस्र संस्थानके उत्कृष्ट स्थितवन्धका अवलम्बन लेकर सिन्नकर्पका विचार करने पर वह श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रौर श्रसम्प्राप्ता- स्पाटिका संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुखर श्रौर श्रादेय इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिवन्धका श्रवलम्बन लेकर सन्निकर्ष कहना चाहिए। न्यशोधपरिमण्डल संस्थान, स्वाति संस्थान श्रौर कुन्जक संस्थानके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्रवलन्बन लेकर सन्निकर्पका विचार करने पर वह श्रोधके समान है।
- ७१. वामन संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेचा श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। कीलक संहनन श्रौर असम्प्राप्तासुपाटिका संहननका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। तोउत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। शेष सन्निकर्ष श्रोधके समान है।
- ७२. श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्गकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, पर्याप्त, श्रस्थर श्रादि पाँच श्रोर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। द्वीन्द्रिय जाति, त्रीन्द्रिय जाति, चतुरिन्द्रिय जाति, वामन संस्थान, कीलक संहनन, श्रस-म्प्राप्तास्पाटिका संहनन श्रीर श्रपर्याप्त इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रब-स्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी श्रपेका श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, हुण्ड संस्थान, परघात, उन्नास, उद्योत, श्रमश्रस्त

१. मूलप्रतौ सिया॰ तं तु॰ संखे-इति पाठः।

सिया॰ संखेज्जदिभागू०। एवं ऋसंपत्त०। वज्जरि० ऋोघं। एवरि विसेसो ऋोरालि०ऋंगो॰ एिय० संखेज्जदिभागू०।

- ७३. सुहुम-त्र्यपज्जत्त-साधारणं श्रोघं । णवरि विसेसो । पज्जत्त० उक्त०हिदि-वं० श्रोरालि०श्रंगो०-श्रसंपत्तसे० श्रादेसेण सिया० । तं तु० । थिर० श्रोघं । णवरि विसेसो, श्रोरालि०श्रंगो०-श्रसंपत्त० सिया० संखेज्जदिभागू० । एवं सुभ०-जसगि० । तित्थय० श्रोघं ।
- ७४. पुरिसवेदे सव्वाणं त्रोघं। णवुंसग० सत्तरणं त्रोघं। िएरयगदि० त्रोघं। तिरिक्खगदि० उक्क०द्विदिवं० पंचिंदि०-त्रोरात्ति०-तेजा-०क०-हुंड०ः-त्र्रोरात्ति०-त्रंगो०-त्र्रसंपत्त०-वरण०४-तिरिक्खाणु०-त्र्रगु०४-त्रप्रसत्थ०-तस०४-त्र्राथरादिञ्च०-

विहायोगित, पर्याप्त और दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भागद्दीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार असम्प्राप्तास्प्रपाटिका संहननके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सिन्तकर्ष जानना चाहिए। वज्रपंभनाराच संहननके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सिन्तकर्ष ओघके समान है। इतना विशेष है कि औदारिक आङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भागद्दीन स्थितिका बन्धक होता है।

७३. सुक्ष्म, अपर्याप्त और साधारणके उत्रुष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष ओघके समान है। किन्तु यहां विशेष जानकर कहना चाहिए। पर्याप्तकी उत्रुष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव औदारिक आङ्गोपाङ्ग और असम्प्राप्तास्पाटिका संहननका आदेशसे कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो अनुत्रुष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर प्रकृतिके उत्रुष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्प ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि औदारिक आङ्गोपाङ्ग और असम्प्राप्तास्प्रुपटिका संहननका कदाचित् बन्धक होता है कि और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्रुष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अभ और यशःकीर्ति प्रकृतियोंके उत्रुष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए। तोर्थंकर प्रकृतिके उत्रुष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष आवके समान है।

७४. पुरुषवेदवाले जीवोंके सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवम्लयन लेकर सिन्तकर्प श्रोधके समान है। नपुंसक वेदवाले जीवोंमें सात कर्मोंके उत्कृष्ट स्थितिका अव-लन्बन लेकर सिन्तकर्प श्रोधके समान है। नरकगितके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सिन्तकर्प श्रोधके समान है। तिर्यञ्चगितको उत्कृष्ट स्थितिका वन्धकरनेवाला जीव पञ्चिन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, श्रोदारिक श्राक्षोपाङ्ग, असम्प्राप्तास्पादिका सहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुल चतुष्क, श्रप्रशस्त विद्यायोगित, अस चतुष्क, श्रस्थिर आदि छह श्रोर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता

१. मुलप्रतौ हुंड० उज्जो० सिया तं तु० भोरा—इति पाटः।

णिमि० णिय० वं० । तं तु० । [ उज्जो० सिया० । तं तु० । ] एवं त्र्यारात्ति०-त्र्योरात्ति०त्र्यंगो०-त्रसंपत्त०-तिरिक्खाणु०-उज्जोव त्ति । मणुसगदि-देवगदि० त्र्योघं ।

७५. एइंदि० उक्क ० द्विदिवं० तिरिक्ख गदि-त्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वर्गण्०४-तिरिक्खाणु०-त्रगु०-उप०-त्रिथरादिपंच-णिमि० [िण्य० वं० ।िण्य० त्रणु० ] संखेज जिद्यागू० । पर०-उस्सा०-उज्जो०-वादर-पज्जत्त-पत्तेय० सिया० संखेज जिद्यागू० । त्रादाव-सुहुम-अपज्जत्त-साधारणं सिया० । तं तु० । धावर० णिय० वं० । तं तु० । एवं धावर० । वीइंदि०-तीइंदि०-चदुरिं० त्रोघं ।

७६. पंचिद्दि उक्क हिद्दिवं तेजा - क - हु ड ० - वएए। ०४ - अगु०४ - अप्प-

है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी श्रिपेत्वा अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका असंख्यातवांभाग न्यन तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचिन् बन्धक होताहै श्रौर कदाचिन् अवन्धक होताहै। यदि बन्धक होता है तो कदाचिन् उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। इसो प्रकार श्रौदारिक शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तास्प्रणाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रोर उद्योत इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके श्राश्रयसे सन्निकर्प जानना चाहिए। मनुष्य गति श्रोर देवगतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्रवलम्बन लेकर सन्निकर्प श्रोधके समान है।

७४. एकेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, ग्रीदारिक श्रार, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वा, ग्रगुरु-लघु, उपघात, ग्रस्थिर ग्रादि पाँच श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो नियम से श्रमुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यन स्थितिका बन्धक होता है। परघात, उल्लास, उद्योत, वादर, पर्याप्त ग्रौर प्रत्येक इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् ग्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भागहीन स्थितिका वन्धक होता है। श्रातप, सूक्ष्म, श्रपर्याप्त श्रोर साधारण इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रव-न्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है ग्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेना श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। स्थावर प्रकृतिका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेदा अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लंकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यन तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार स्थावर प्रकृतिके उत्कृष्ट स्थितिवन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए। द्वीन्द्रियजाति, त्रीन्द्रियजाति श्रीर चतरिन्द्रियजातिके उत्कृष्ट स्थितिवन्धका श्रवलम्बन लेकर सन्निकर्ष श्रोघके समान है।

७६. पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सत्थ०-तस०४-त्र्रथिरादिछ०-िएमि० एिय० वं० | तं तु० | एिरयगदि-तिरिक्ख-गदि-त्रोरालिय-वेडिव्विय०-दोत्रंगो०-त्र्रसंपसत्त०-दोत्राणु०-उज्जो० सिया० | तं तु० | एवं पंचिदियजादिभंगो तेजा० क०-हुंड०-वएण्०४-त्र्रगु०४-पसत्थ० तस०४-त्र्रथिरादिछ०-िएमिए त्ति | पंचसंठा० पंचसंघ० त्रोघं |

७७. त्रादाव विक्विदिवं तिरिक्खगिद-त्रोरालिय-तेजा व - क व - हुं ड व व गण् ०४ - तिरिक्खाणु व न्यापु ०४ - वादर-पज्जत्त-पत्तेय ० - त्रियं च - शिमि व श्विष्ठ वं ० संखेज्जदिभागू ० । एइंदिय-थावर व श्विष्य ० । तं तु ० । पसत्थिव ० - सुभग - सुस्सर - त्रादेज्ज व त्रोघं । सुहुम - त्रप्रजत्त - साधार व त्रोघं । श्विर त्रप्रजत्त स्स एइंदि ० - थावर विस्था ० । तं तु ० ।

श्रस्थिर श्रादि छह श्रीर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है। जो उत्कृप्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृप्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृप्ट स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृप्ट स्थितिका वन्धक होता है। नरकगित, तिर्यञ्चगित, श्रीदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, दो श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तास्पाटिका संहनन, दो श्रामुपूर्वी श्रीर उद्योत इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृप्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो उत्कृप्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो उत्कृप्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृप्ट स्थितिका वन्धक होता है तो उत्कृप्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृप्ट स्थितिका वन्धक होता है तो उत्कृप्ट स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान तैजस श्रीर, कामण श्रीर, हुएडसंस्थान, वर्ण चतुष्क, श्रमुरुक्य चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह श्रीर निर्माण इनके उत्कृप्ट स्थितवन्धका श्रवक्षम्वन लेकर सन्निकर्ण श्रीघके समान है।

७९. श्रातपकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, श्रीदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रागुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि पांच श्रीर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति श्रीर स्थावर इनका नियमसे वन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे पक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर श्रीर श्रादेय इनके उत्कृष्ट स्थितिवन्धका श्रवलम्बन लेकर सिन्नकर्प श्रोधके समान है। तथा सुइम, श्रपर्याप्त श्रीर साधारण इनके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्रवलम्बन लेकर सिन्नकर्प श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रपर्याप्तके साथ एकेन्द्रिय जाति श्रीर स्थावर प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेक्ता श्रानुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थिति का बन्धक होता है।

७८. थिर॰ उक्क०द्विदिवं० त्रोघं । एवरि विसेसो, एइंदि०-त्रादाव-थावर० सिया० संखेज्जदिभागू० । एवं सुभ-जस० । तित्थय० त्रोघं ।

७६. श्रवगदवे०े श्राभिणिबो० उक्क०द्विदिवं० चदुणाणा० णि०। णि० उक्कस्सा । एवं चदुणाणा०-चदुदंसणा०-चदुसंजल०-पंचंत० ।

८०. कोघादि०४-मदि०-सुद०-विभंग० त्रोघं । त्राभि०-सुद०-त्रोधि० वरणं कम्माणं त्रोघं । त्रपचक्वाणा०'कोघ० उक्क०द्विदिवं० एक्कारसक०-पुरिस०-त्रपदि-सोग-भय-दुगुं० णि० वं० । तं तु० । एवमेदात्रो एक्कमेक्कस्स० । तं तु० । इस्स० उक्क०द्विदिवं० वारसक०-पुरिस०-भय-दुगुं० णि० वं० संखेळागुणहीणं वं० ।

७८. स्थिर प्रकृतिके उत्कृष्ट स्थितिवन्धकी श्रिपेत्ता सन्निकर्ष श्रोधके समान है। इतना विशेष है कि एकेन्द्रिय जाति, श्रातप श्रौर स्थावर प्रकृतियोंका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रमुख्य संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रुभ श्रौर यशःकीर्त प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिवन्धका श्राश्रय लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए। तीर्थंकर प्रकृतिके उत्कृष्ट स्थितिवन्धके श्राश्रयसे सन्निकर्ष श्रोधके समान है।

७६. ग्रवगतचेदवाले जीवोंमें ग्राभिनिवोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव चार झानावरणका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार चार झानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन श्रीर पाँच श्रन्तराय प्रकतियोंके उत्कृष्ट स्थितिवन्धका श्राश्रय लेकर सन्निक्ष जानना चाहिए।

८०. कोधादि चार कषायवाले, मत्यक्षानी, श्रुताक्कानी श्रौर विभङ्गक्कानी जीवोंमें श्रपनी श्रपनी सव प्रकृतियोंका सन्निकर्ष ओघके समान है। श्रभिनिवोधिकज्ञानी, श्रताज्ञानी श्रौर श्रवधिक्षानी जीवोंमें छह कर्मींके उत्कृष्ट स्थितिवन्धके त्राश्रयसे सन्निकर्प श्रोधके समान है। श्रप्रत्याख्यानावरण क्रोधको उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव ग्यारह कपाय, पुरुषवेद, श्ररति, शोक, भय श्रीर जुगुत्सा इनका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह उत्हृष्ट् स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्क्रष्टकी श्रपेक्षा श्रनुत्कृष्ट एक समय न्युनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यन तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृ-तियोंका परस्पर सन्निकर्प जानना चाहिए । किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी ऋषेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका ऋसंख्यातवां भाग न्यन तक स्थितिका बन्धक होता है। हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव वारह कपाय, पुरुषवेद, भय श्रीर जुगुप्साका नियमसे वन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुण हीन स्थितिका वन्धक होता है । रतिका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका

१. मूलप्रसौ परचक्लाणा०४ कोघ० इति पाठः।

रदि० णिय० वं० । तं तु० । एवं रदीए ।

- द्रे. मणुसगर्व उक्क दिद्वं पंचिदि = त्रोरात्ति तेजा क समचदु त्रोरात्ति व त्रोगे व ज्ञिर व एण = ४ पणुसाणु = त्रगु व ४ पसत्यवि तस = ४ त्र्राय स्थाने त्र्या स्थाने त्र्राय स्थाने त्र्या स्थाने त्र्
- ८२. देवगदि० उक्त०हिदिवं० पंचिदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि० अंगो०-वएण०४-देवाणु०-अगु०४--पसत्थ०--तस०४-अथिर--अग्रुभ--ग्रुभग--मुस्सर-आदे०-अजस०-िएमि० एाय० । तं तु० । तित्थय० सिया वं० । तं तु० । एवं देवगदिभंगो वेउव्वि०-वेउव्वि०-अंगो०-देवाणु०-तित्थय० ।
- द्भ पंचिदि उक्क०िंदिवं तेजा०-क०-समचदु०-वरण्०४-त्रगु०४-पस-त्रसंख्यातवाँ भाग न्यृनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार रितके उत्छष्ट स्थितिबन्ध का त्राश्रय लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए।
- ८१. मनुष्यगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोणङ्ग, वज्रपेभ-नाराच संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, ग्रास्थर, श्राश्य, श्राश्य, श्राश्य, श्राश्य, श्राश्य, श्राश्य, श्राश्य, श्रीर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेक्ता श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगतिके समान श्रौदारिक शरीर, श्रौदारिक आङ्गोणङ्ग, वज्रपेभनाराच संहनन श्रीर मनुष्यगत्यानुपूर्वीके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके श्राध्यसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।
- ८२. देवगतिकी उत्हृण स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वेकियिक श्रीर, तेजस श्रीर, कार्मण श्रीर, समचतुरस्न संस्थान, वैकियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, त्रसचतुष्क, श्रस्यर, श्रशुभ, सुभग, सुस्यर, श्रादेय, श्रयशःकीर्ति श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह उत्हृण्ण स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृण्ण स्थितिका वन्धक होता है। यदि अनुत्कृण्ण स्थितिका वन्धक होता है। यदि अनुत्कृण्ण स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृण्णकी श्रपेक्षा श्रमुत्कृण्ण एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका वन्धक होता है। तीर्थकर प्रकृतिका कदा-चित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृण्ण स्थितिका भी वन्धक होता है तो उत्कृण्ण स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृण्ण स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृण्ण स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृणकी श्रपेक्षा श्रमुत्कृण्ण एकसमय न्यून स्थितिसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार देवगितके समान वैकियिक शरीर, वैकियिक श्राङ्गाणङ्ग, देवगत्यानुपूर्वी श्रीर तीर्थकर प्रकृतियोंके उत्कृण स्थितिव वन्धका श्राश्रय लेकर सन्निकर्प जानना चाहिए।

**८३ पञ्चेन्द्रिय जातिको उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तेजस शरीर, कार्मण** 

१. मुलप्रता बं॰ पचिदि॰ तेजा-इति पाठः ।

त्थवि०-तस०४-त्राथर-त्रमुभ-सुभग-सुस्सर-त्रादेज्ज-त्रजस०-िएमि० वं० । तं तु० । मणुसग०-देवग०-त्रोरालि०--वंउिव०--दोत्रंगावं०--वज्जिर०--दोत्राणु०--ितत्थय० सिया० । तं तु० । एवं पंचिदियं-भंगो तेजा०-क०-समचदु०-वर्णण०४-त्रगु०४-पसत्थवि०-तस०४-त्राथर-त्रमुभ-सुभग-सुम्सर--त्रादेज्ज--त्रजस०--िणमिण ति । त्राहार०-त्राहार०त्रंगो त्रोघं ।

८४. थिर॰ उक्क०द्विदिवं॰ पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वरण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि० णि० वं० संखेज्जगुणहीणं वं० | मणु-सगदि-देवगदि-ओरालि०-वेउव्वि०-दोअंगो०-वज्जरिस०-दोआणु० सिया० संखेज्ज-गुणहीणं वं०ै | सुभ-जसगित्ति० सिया० | तं तु० | असुभ-अजस०-तित्थ० सिया०

शरीर, समचत्रस्य संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, श्रस्थिर, श्रशम, सुभग, सुखर, श्रादेय, श्रयशःकीर्ति श्रीर निर्माण इन प्रवृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेत्रा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगति, देवगति, श्रोदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, दो श्राङ्गोपाङ्ग, वज्रर्पभ-नाराच संहतन, दो आनुपूर्वो और तीर्थंकर इन प्रकृतियोंका कदाचित बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृप्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेद्धा अनुत्कृष्ट एक समय न्युनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यन तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, त्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, ग्रस्थिर, ग्राग्नम, सुभग, सुखर, ग्रादंय, ग्रयशकीर्ति श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिवन्धका श्राश्रय लेकर सन्निकर्प जानना चाहिए। आहारक शरीर त्रौर त्राहारक त्राङ्गोपाङ्गके उत्कृष्ट स्थितवन्धका त्राश्रय लेकर सन्निकर्प श्रोधके समान है।

८४. स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरऋसंस्थान, वर्ण्चतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, असचतुष्क, सुभग, सुस्यर, आदय श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगित, देवगित, श्रीदारिक शरीर, विकियिक शरीर, दो श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ज्ञपंभनाराच संहनन श्रीर दो श्रानुपूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। शुभ श्रीर यशःकोर्तिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका मी बन्धक होता है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका मी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका मी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका सम्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका वन्धक होता है। श्रथभ, श्रयशःकीति श्रीरतीर्थंकर इनका

१. मूलप्रतौ पंचिदिय तेजादि भंगो इति पाठः । २ मूलप्रतौ बं० सुभग-जसगित्ति इति पाठः ।

संखेजागुणहीणं वं०। एवं सुभ-जसगित्ति०।

८५. मणपज्जव० छएणं कम्माणं त्रोघं । कोधसंज० उक्क०हि॰ तिएिणसंज०'
पुरिस॰-त्ररिद-सोग-भय-दुर्गुं० णि० बं०। तं तु०। एवमेदात्रो एकमेकस्स ।
' तं तु॰ । हस्स० उक्क०हिदिबं० चदुसंज०-पुरिस०-भय-दुर्गुं० णि० वं संखेज्जगुणहीर्णुं०। रदि॰ णिय० बं॰ । तं तु० । एवं रदीए ।

८६, देवगदि॰ उक्क० हिंदिवं॰ पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा॰-क०-समचदु० वेउव्वि॰ञ्जंगो०-वएण्०४-देवाणु०-ञ्रगु०४--पसत्थ०--तस०४--ञ्रथिर--ञ्रसुभ--सुभग--सुस्सर-ञ्रादेज्ज॰-त्रजस०-णिमि० णि० वं०। एवमेदात्रो एक्कमेकस्स । तं तु०।

कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रवत्रुष्ट संख्यातगुण्हीन स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार श्रुभ श्रौर यशःकीर्ति प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिवन्धका श्राश्रय लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

८५. मनःपर्ययञ्चानी जीवोंमें छह कमेंकि उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्राश्रय लेकर सन्ति-कर्प श्रोधके समान है। क्रोध संज्वलनकी उत्क्रप्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तीन संज्व-लन, पुरुपवेद, श्ररति, शोक, भय श्रीर जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृप स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्कृप स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनु-त्कृप्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृपकी अपेत्ता अनुत्कृप्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका ऋसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिवन्धका त्राश्रय लेकर सन्निकर्प जानना चाहिए। किन्तु तब वह उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि त्रानुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी त्रापेचा त्रानुत्कृष्ट एक समय न्युनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्युनतक स्थितिका वन्धक होता है। हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्च करनेवाला जीव चार संज्वलन, पुरुषवंद, भय श्रीर जुगुष्साका नियमसे वन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका वन्धक होता है। रितका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृप्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृप्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्क्रप्रकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार रितके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका आश्रय लेकर सन्ति-कर्प जानना चाहिए।

८६. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, श्रस्थिर, श्रशुभ, सुभग, सुसर, श्रादेय, श्रयशःकीर्ति श्रीर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है। इसी प्रकार इनमेंसे प्रत्येकके उत्कृष्ट स्थितिवन्धका श्राश्रय लेकर सन्निकर्प जानना चाहिए। किन्तु तब वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर प्रत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका

१ मूलप्रतौ-संज० बं० पुरिस० इति पाठः।

तित्थय० सिया० । तं तु० । ऋाहार०-ऋाहार० ऋंगो० ऋोघं ।

८७. थिर० उक्क॰ दिदिवं॰ देवगिदश्रहावीसं तिष्णियुगलं वज्ज० णिय॰ वं॰ संखेज्जदिगुणहीणं वं० । सुभ॰-जस० सिया॰। तं तु॰। श्रसुभ-श्रजस०-तित्थय॰ सिया॰ संखेज्जगुणहीणं०। एवं सुभ-जस०।

८८. तित्थय० उक्क०द्विदिबं० देवगदिश्रद्वावीसं णिय० बं०। तं तु०। सामाइ०-छेदो०-परिहार० [ मणपज्जवभंगो ]।

- ्ह. सुहुमसं श्राभिणियो ० उक्क हिद्वं ० चदुणा ० णिय ० वं ० उक्कस्सा । एवमण्णमण्णस्स । एवं चदुदं ० -पंचंत ० । संजदासंजद ० पिरहारभंगो । श्रसंजद चक्खुदं ० ऱ्यां । योधिदं ० योधिणाणिभंगो । किण्णाण् णायुं सगभंगो । कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रयन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रमुत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रमुत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रमुत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्रुष्टको श्रपेत्वा श्रमुत्रुष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यात्वां भाग न्यूनतक श्रमुत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है । श्राहारक श्रीर श्रीर श्राहारक श्राह्मपक श्राह्मणाङ्कके उत्रुष्ट स्थितिबन्धके श्राश्रयसे सन्मिक्ष श्रीष्ठके समान है ।
- 49. स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तीन युगलोंको छोड़कर देवगित श्रादि श्रद्वाईस प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। जो श्रनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका वन्धक होता है। गुभ श्रीर यशःकीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्ता श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पर्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। श्रश्यभ, श्रयशःकीर्ति और तीर्थंकर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार श्रम और यशःकीर्ति इनके उत्कृष्ट स्थितिवन्धके श्राश्रयसे सन्निकर्प जानना चाहिए।
- ८८. तीर्थंकर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव देवगित ग्रादि ग्रहुा-ईस प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है ग्रीग् ग्रमुन्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि ग्रमुन्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो उत्कृष्टकी ग्रपंचा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे छेकर पल्यका ग्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके समान सामायिक संयत, छुदोपस्थापना संयत ग्रीर परिहारविशुद्धि संयत जीवोंके जानना चाहिए।
- दश्य स्वास्ताम्परायिक संयत जीवोंमं श्राभिनिवोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरणका नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिवन्धकी श्रपेक्षा परस्पर सन्निकर्प जानना चाहिए। इसी प्रकार चार दर्शनावरण श्रीर पाँच श्रन्तरायके उत्कृष्ट स्थितिवन्धका श्राथय लेकर परस्पर सन्निकर्प जानना चाहिए। संयतासंयतोंका भङ्ग परिहारिवशुद्धि संयत जीवोंके समान है। श्रसंयत, चकुदर्शनी श्रीर श्रचक्षुदर्शनी जीवोंका भङ्ग श्रोधके समान है। श्रवधिकानी जीवोंके समान है। इष्ण लेश्यामें नपुंसकवेदी जीवोंके समान भङ्ग है।

- ह०. णील-काऊणं सत्तरणं कम्माणं श्रोघं। णिरयगदि० उक्क॰ द्विदि०वं० पंचि-दिय-तेजा०--क॰--हुंड०-वएण॰४-श्रगु॰४-श्रप्यसत्थ०-तस०४-श्रथिरादिछ॰ णिमि० णिय॰ वं०। णि॰ श्रणु॰ संखेज्जगुणहीणं०। वेउन्वि०-वेउन्वि॰श्रंगो०-णिर-याणु॰ णिय॰ वं०। तं तु०। एवं वेउन्वि॰-वेउन्वि॰श्रंगो०-णिरयाणु॰।
- ६१. तिरिक्खगदि० उक्क॰ द्विदि०वं० पंचिदि०-श्रोरात्ति०-तेजा०क०-हुंड०-श्रोरात्ति०श्रंगो०-श्रसंपत्त०-वएए०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०४-श्रप्यस०--तस०४--श्रथि--रादिञ्ञ०-िएभि० ए० वं० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवमेदाश्रो एक-मेकस्स । तं तु० । मणुसगदिद्ग-पंचसंटा-पंचसंघ०-पसत्थ०-थिरादिञ्च० एएरयभंगो ।
- ००. नील श्रीर कापोत लेश्यामं सात कमींका भङ्ग श्रीघके समान है। नरकगितकी उत्ह्रप्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातगुण्हीन स्थितिका वन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी श्रपेत्ता भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो उत्कृष्टकी श्रपेत्ता श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार वैक्रियक शरीर, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर नरकगत्यानुपूर्वीके उत्कृष्ट स्थितिवन्धका श्राश्रय छेकर सिक्कर्ष जानना चाहिए।
- ९१. तिर्यञ्जगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति. श्रीदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तासृपाटिका संहतन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, अप्रशस्त विहायागति, असचतुष्क, श्रास्थर श्रादि छह श्रीर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। किन्त वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेदा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्युनतक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित बन्धक होता है श्रीर कदाचित ग्रयन्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृप्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी ग्रोपेद्धा ग्रानुत्कृष्ट एक समय न्युनसे लेकर पल्यका ग्रासंख्यातवां भाग न्यन तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिवन्धके श्राश्रयसं परस्पर सन्निकर्प होता है। ऐसी श्रवस्थामें वह उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्क्रप्रकी अपेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यन तक स्थितिका वन्धक होता है। मनुष्यगतिद्विक पाँच संस्थान, पाँच संहनन, प्रशस्त विहायोगित और स्थिर ऋदि छह इनके उत्कृष्ट स्थितिवन्धके श्राश्रयसे सन्निकर्प सामान्य नार्यक्योंके समान है।

- ६२. देवगदि० उक्क ० द्वित्वं० पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वराण०४-श्रगु४-पसत्थिव०-तस०४-सुभग-सुस्सर-श्रादे०-िएमि० एि० वं० । िएय० श्रणु० संखेज्जगुणहीर्णा० । वेउ व्वि०-वेड व्वि० श्रंगो० एि० वं० श्रणु० संखे ज्जिदिगुणहीर्णा० ।
  देवाणु० एिय० वं० । तं तु० । थिराथिर-सुभासुभ-जस०-श्रजस० सिया० एि०
  वं० । एवं देवाणु० ।
- ६३. एइंदि॰ उक्क ० द्विदिवं० निरिक्स गिद-श्रोरासि०-तेजा०-क०-हुंड॰-वएए। ४-तिरिक्स गिए० यण् १५-तिरिक्स गिए० उप०-दृभग-श्रणादे०-िएमि० एए० वं० । एए० अण्ठ संस्वे- ज्ञाएण हीएं० । पर०-उस्सा-उज्जो०-वाद्र-पज्जत्त-पत्ते०-िथराथिर-सुभासुभ-जस०-अज-स०सिया वं० । यदि वं० एएय० अण्ठ० संस्वेज जगुण हीएं। आदाव-सुहुमादि-तिएए० सिया० । तं तु० । थावर० एएय० । तं तु० । एवं थावर० ।
- ९२. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरम्न संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, सुभग, सुम्बर, ग्रादेय ग्रोर निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है। जो नियमसे ग्रानुरुष्ट संख्यातगुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। वैकियिक शरीर ग्रीर वैकियिक ग्राङ्गोणङ्कका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे ग्रानुत्रुष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। देवगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। देवगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। यदि ग्रानुरुष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्रुष्टकी ग्रापेचा ग्रानुत्रुष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका ग्रासंख्यानवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर, ग्रास्थर, ग्राम, ग्राहुभ, यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् ग्रावन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो ग्रानुत्रुष्ट संख्यात गुण्होन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार देव-गत्यानुपूर्वीके उत्रुष्ट स्थितिवन्धका ग्राश्रय लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए।
- ९३. एकेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति. श्रोदा-रिक शरीर, तंजस शरीर, कार्मण शरीर, हण्ड संस्थान, वर्ण चतुष्क, तिर्थञ्चगत्यानपूर्वी, श्रमुरुलघ, उपघात, दुर्भग, श्रनादंय और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमने अनुस्कृप संख्यातगुण हीन स्थितिका बन्धक होता है। परधात, उच्छास, उद्योत, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक शरीर, स्थिर, श्रस्थिर, हाम, श्रशुभ, यशकीतिं और श्रयशः-कीर्ति इन प्रकृतियोंका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। आतप श्रीर सक्ष्म श्रादि तीनका कदाचित बन्धक होता है श्रीर कदाचित श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुस्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे अनुस्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पुल्यका ग्रमंख्यातवाँ भाग न्युन तक स्थितिका वन्धक होता है। स्थावर प्रकृतिका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुन्छए स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट-की श्रपेत्ता श्रनुत्रुष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार स्थावर प्रकृतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी श्रेपेचा सन्निकर्ष जानना चाहिए।

- ६४. बीइंदि० उक्क॰ द्विदि०वं॰ तिरिक्खगिद-त्रोरालि॰-तेजा॰-क०-त्रोरालि०-त्रंगो०-त्रसंपत्त॰-वरण॰४-तिरिक्खा॰-त्रगु०-उप०-तस-वादर-पत्ते०-दूभग--त्रणादे०-णिमि॰ णि० वं० संखेज्जगुणहीणं० । पर०-उस्सा०-उज्जो०-त्रप्पसत्थ०-पज्ज०-थिराथिर-सुभासुभ-दुस्सर-जस०-त्रजस० सिया० संखेज्जगुणहीणं० । त्रपज्ज० सिया० । तं तु० । एवं तीइंदि०-चदुरिं० ।
- ६५. त्रादाव॰ उक्क॰िंदिवं॰ तिरिक्खगदि॰-त्रोरात्ति॰-तेजा॰-क॰-हुंड॰-वएएा०४-तिरिक्खाणु०-त्रगु०४-वाद्र-पज्जत्त-पत्ते०-दूभग-त्रणादे०-िएामि॰ एि॰ त्रणु॰ संखेज्जगुण्हीएां०। एइंदि०-थावर॰ एिय०। तं तु॰। थिराथिर-सुभासुभ-जस०-त्रजस० सिया वं॰। यदि वं० संखेजजगुण्हीएां०।
- 8६. पर०- अपज्ज० उक्त०द्विदिवं० तिरिक्खग०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड-सं०-वएए।०४-तिरिक्खाग्रु०-अगु०-उप०-अथिरादिपंच-एिमि० णिय० संखेज्जगुण-
- ९४. द्वीन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गापाङ्ग, श्रसम्प्राप्तास्पाटिका संहनन, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, त्रस, वादर, प्रत्येक, दुर्भग, श्रनादेय श्रौर श्रौर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे संख्यात गुण हीन स्थितिका वन्धक होता है। परघात, उच्छ्वास, उद्योत, श्रप्रशस्त विद्वायोगित, पर्याप्त, स्थिर, श्रस्थर, श्रभ, श्रग्नुभ, दुःस्वर, यशःकीर्ति श्रीर अयशःकीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है । यदि वन्धक होता है । श्रपर्याप्तका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रगुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है यदि श्रगुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकेष्ठ श्रोपत्ता श्रगुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार श्रीन्द्रिय जाति श्रौर चतुरिन्द्रिय जातिके उत्कृष्ट स्थितिकन श्रोत्ता सन्विकर्य जानना चाहिए।
- ध्यः श्रातपकी उत्ऋष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, श्रोदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, दुर्भग, श्रानादेय श्रोर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो स्थावर इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्ऋष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। किन्तु वह उत्ऋष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रानुत्ऋष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रानुत्ऋष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्ऋष्ट की श्रपेत्ता श्रानुत्ऋष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पर्यका असंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका वन्धक होता है। स्थिर, श्रस्थर, श्राम, श्रानुम, यशकीर्ति श्रीर श्रायशकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रावन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रानुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है।
- ९६. परघात और श्रपर्याप्त प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलुच्च, उपघात, श्रस्थिर श्रादि पांच श्रीर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो

ही० | चदुजादि-थावर-सुहुम-साधारण० सिया० | तं तु० | पंचिदि०-श्रोरालि०श्रंगो-असंपत्त०-तस०-वादर-पत्ते० सिया० संखेज्जगुणहीर्ण० | मणुसगदि-मणुसाणु० सिया० संखेजजगुणहीर्ण० |

६७. तिन्थय० णिरयगिद्भंगो । एवरि एीलाए नित्थय० देवगिद्संजुत्तं भाणि-दव्वं । एवरि थिराथिर-सुभासुभ-जस०-त्र्यजस० सिया० संखेजनगुणहीएां । एवं धुविगाएां पि एिय० संखेजनगुणहीएां० ।

६८. तेऊए सत्तरणं कम्माणं द्यांघं । देवर्गाद् उक्क व्हिद्विं पंचिद् -तेजा० क०-समचद् --वरण - ४-त्रगु०४-पसत्थ - नस०४-सुभग-मुग्सर-त्रादे - णिमि० वं० संखेडनगुणहीणं० । वेडव्वि व्यंगो०-देवाणु । णि० वं० । तं तु० । थिराथिर-मुभा-सुभ-जस०-त्रजस० सिया० संखेडनगुणहीणं० । एवं देवगदिभंगो वेडव्वि०-वेडव्वि०

अनुत्रुष्ट संख्यातगुणहोन स्थितिका वन्धक होता है। चार जाति, स्थावर, सृक्ष्म और साधारण इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुन्द्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्रुष्ट स्थितिका वन्धक होता है। यदि अनुत्रुष्ट स्थितिका वन्धक होता है। पञ्चेन्द्रिय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका वन्धक होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तास्यादिका संहनन, त्रस, बादर और प्रत्येक इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियम से अनुत्रुष्ट संख्यातगुणहोन स्थितिका वन्धक होता है। मनुष्यगित और मनुष्यगत्यानुपूर्वीका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियम ते तो नियमसे अनुत्रुष्ट संख्यात गुणहोन स्थितिका वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुत्रुष्ट संख्यात गुणहोन स्थितिका वन्धक होता है।

९७. तीर्थंद्वर प्रकृतिका भक्क नरकगितकं समान है। इतनी विशेषता है कि नील लेखामें तीर्थंद्वर प्रकृतिकं उत्कृष्ट स्थितिवन्धका सिनकर्ष कहते समय देवगितके साथ कहना चाहिए। इतनी विशेषता है कि स्थिर, अस्थिर, अभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशः-कीर्तिका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुण होन स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंका भी नियमसे संख्यातगुणहोन अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है।

९८. पीत लेश्यामे सात कमींका भङ्ग ग्राघके समान हैं। देवगितको उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पश्चेन्द्रिय जाति, तंजम शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्न संस्थान, ग्रागुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, त्रस चतुष्क, सुनग, सुस्वर, ग्रादेय ग्रौर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है । वैकियिक शरीर, वैकियिक ग्राङ्गोपाङ्ग ग्रौर देवगित्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है । किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भो बन्धक होता है । किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भो बन्धक होता है । यदि ग्रानुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है । यदि ग्रानुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी ग्रपेका ग्रानुत्कृष्ट एक सयय न्यूनसे लेकर पत्यका ग्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । स्थिर, ग्रास्थिर, ग्रुभ, ग्रागुभ, यशकोर्ति ग्रौर ग्रयशकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है । स्थिर, ग्रास्थिर, ग्रुभ, ग्रागुभ, यशकोर्ति ग्रौर ग्रयशकीर्ति है तो नियमसे उत्कृष्टकी ग्रपेका ग्रमुत्कृष्ट संख्यातगुण होन स्थितिका वन्धक होता है । इसी प्रकार देवगितके समान वैकियिक

श्रंगो०-देवागु॰ । श्राहार०-श्राहार०श्रंगो० श्रोघं । सेसं सोधम्मभंगो । एवं पम्माए वि । एवरि एइंदि०-श्रादाव-थावरं वज्ज० ।

हित्वं व पंचिद्दिन्तेजा०-क०-समचदु०-वएण् ४- अगु ४-पसत्थ ०-तस ४-सुभगमुस्सर-आदे ०-िएमि० एि० वं । एि० अणु संखेडजगुणहीएं । वेउव्व०वेउव्वि ० अंगे ०-देवाणुपु० णि० वं । तं तु० । थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस०
सिया ० संखेडजगुणहीएं ० । एवं वेउव्व०-वेउव्वि ० अंगे ०-देवाणुपु० । सेसाएं
आण्दभंगो । भवसिद्धिया० ओयं । अव्भवसिद्धिया० मिद्भंगो । सम्मादिही०
ओथिभंगो ।

१००. खइगस० सत्तराणं कम्पाणं श्रोधिभंगो । मणुसगदि० उक्क०द्विदिवं० पंचिदि०-श्रोगालि०--तेजा०--क०-समचद्०--श्रोगालि०श्रंगो०--वज्जरि०--वरणण०४--

शरीर, वैकियिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर देवगत्यानुपूर्वीके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका श्राश्रय छेकर सन्निकर्प जानना चाहिए। श्राहारक शरीर श्रीर श्राहारक श्राङ्गोपाङ्गके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके श्राश्रयसे सिक्किपंश्रोघके समान है। तथाशेष प्रकृतियों के उत्कृष्टिस्थितिबन्धके श्राश्रयसे सन्निकर्प सौधर्म कल्पके समान है। इसी प्रकार पद्मलेश्यामें भी जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके एकेन्द्रिय जाति, आतप श्रीर स्थावर इन तीन प्रकृतियोंको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

९९. शुक्ल लेश्यामें छह कर्माका भङ्ग श्रोघके समान है । मोहनीय कर्मका भङ्ग श्रानत कल्पके समान है। देवगतिको उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मणशरीर समचत्रस्त्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुल्य चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर आदेय श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यानगुण होन स्थितिका यन्यक होता है । वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग श्रीर देवगत्यानुपूर्वा इनका नियमसे पन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्क्रप्रकी श्रपेद्धा श्रमत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्युन स्थितिका वन्धक होता है । स्थिर, श्रस्थिर, शुभ, श्रशुभ, यशःकीर्ति श्रीर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुण हीन स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार वंकियिक शरीर,वेकियिक ब्राङ्गेणाङ्ग श्रीर देवगत्यानुपूर्वीकी उत्कृष्ट स्थितिवन्ध्रकी त्रपंचा सन्निकर्प जानना चाहिए। तथा श्रेप प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी त्रपंचा सन्नि कर्प स्रानत करपके समान है। भन्य जीवोंमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितियन्धकी स्रापेता सन्निकर्प श्रोधके समान है । श्रमव्य जोवांमें मत्यज्ञानियोंके समान है तथा सम्यग्द्रष्टियोंमें श्रवधिबानियोंके समान है।

१००. ज्ञायिक सम्यग्दिष्टियोंमें सान कर्मीका भङ्ग श्रवधिज्ञानियोंके समान है। मनुष्य-गतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय ज्ञाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्जर्षभनाराच संहनन, वर्ण चतुष्क, मनुष्यगत्यानुषुवां, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशम्त विहायागित, त्रसचतुष्क, मणुसाणु०-त्रगु०४-पसत्थ०-तस०४-त्र्रथिर--त्र्रमुभ--मुभग--मुस्सर--त्रादेज्ज--त्र्रजस०-णिभि॰ णिय० वं० | नं तु० | तित्थय० सिया० |तं तु० | एवं त्रोरालि॰-त्र्रोरालि० त्रंगो०-वज्जरि॰-मणुसाणु० |

१०१. देवगदि॰ उक्क०िंदिवं॰ पंचिंदि॰-तेजा०-क०-समचदु०-वएण०४-त्रगु०४-पसत्थ०-तस०४-त्रथिर-त्रमुभ-सुभग-सुभ्सर-त्रादे०-त्रजस०-िणिमि० णि० वं० । तं तु० । तित्थय० सिया० । तं तु० । वेउव्वि०-वेउव्वि०श्रंगो०-देवाणुपु० णि० वं० । तं तु० । एवं वेउव्वियद्ग-देवाणुपु० ।

१०२. पंचिंदि० उक्क०हिंदिबं० तेजा०-क०-समचदु०-वएण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-अथिर-असुभ-मुभग-सुस्सर-आदेज्ज-अजस०-णिमि० णि० वं० । तं तु० ।

श्रस्थिर, श्रशुभ, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, श्रयशःकीर्ति श्रीर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो उत्कृप्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृप्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृप्टकी श्रपेत्ता श्रमुत्कृप्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका वन्धक होता है। तीर्थं इर प्रकृतिका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रयन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृप्ट स्थितिका भी वन्धक होता है।यदि श्रमुत्कृप्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृप्टकी श्रपेत्ता श्रमुत्कृप्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार श्रीदारिक श्रारार, श्रीदारिक श्राहोण्ड, वन्नप्रभ नाराच संहनन श्रीर ममुष्यगत्यामुपूर्वीके उत्कृप्ट स्थितिवन्धकी श्रपेत्ता सिकर्का जानना चाहिए।

१०१. देवगितकी उत्छए स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चिन्द्रिय जाति, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्न संस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, श्रिस्थर, श्रशुभ, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, श्रयशःकीर्ति और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्छए स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रनुत्छए स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्छएकी अपेक्षा श्रमुत्छए एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका वन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्छए स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रमुत्छए स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे उत्छएकी श्रपेक्षा श्रमुत्छए एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। विक्तियक शरीर, वैक्रियिक श्राङ्गोणङ्ग श्रीर देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह उत्छए स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रमुत्छए स्थितिका भी वन्धक होता है। किन्तु वह उत्छए स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रमुत्छए स्थितिका भी वन्धक होता है। पदि श्रमुत्छए स्थितिका वन्धक होता है। किन्तु वह उत्छए स्थितिका प्रचक्त होता है तो नियमसे उत्छएकी श्रपेक्षा श्रमुत्छए एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार वेक्षियिक द्विक श्रीर देवगत्यानुपूर्वीके उत्छए स्थितिवन्धकी अपेक्षा सन्निकर्णजानना चाहिए।

१०२. पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरम्न संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, श्रस चतुष्क, श्रिश्य, अगुभ, सुभग, सुम्यर, श्रादेय, श्रयशकीर्ति और निर्माण इनका नियमसे वन्धक मणुसगदि-देवगदि-त्रोरालि॰--वेउव्वि०-[ दो ]स्रंगो॰--वज्जरि०--दोत्राणु०--तित्थय० सिया० । तं तु॰ । एवमेदे पंचिदियभंगो ।

१०३. थिर॰ उक्क०द्विदिबं० पंचिदि०-तेजा॰-क॰-समचदु०-वराण्०४-श्रगु०४-पसत्थ०-तस॰४-सुभग-सुस्सर-श्रादे०-िएमि॰ णिय० संखेज्जदिभागू०। दोगदि-दोसरीर-दोश्रंगो०-वज्जरि०-दोश्राणु॰-श्रसुभ-श्रजस॰-तित्थय० सिया॰ संखेज्जदि-भागू०। सुभग-जसिगि॰ सिया॰। तं तु०। एवं थिरभंगो सुभ-जस०।

े १०४. वेदग०-उवसमस० श्रोधिभंगो । एवित्र उवसम० तित्थय० उक्क०-हिदिबं ० देवर्गाद-पंचिदि०-वेडिव्वय०-तेजा०-क०-समचदु०-वेडिव्वि०श्रंगो०-वएए०४-देवाणु०-त्रगु०४-पसत्थ०--तस०४--त्रथिर--श्रमुभ-सुभग--सुस्सर--त्रादेज्ज-त्रजस०--

होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगति. देवगति. शरीर. वैक्रियिक श्रोदारिक शरीर. वज्रर्धभनाराच संहनन, दो ऋानपूर्वी तीर्थकर तथा स्यात् वन्धक होता है श्रीर स्यात् श्रवस्थक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रोर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्रुष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रवेत्ता श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यृनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यन तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिक समान इन सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिवन्धकी श्रेपेचा सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१०३. स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस श्रीर, कार्मण श्रीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, असचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। दो गित, दो श्रीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वर्ज्रपंभ नाराच संहनन, दो आनुपूर्वी, अशुभ, अयशःकीर्ति और तीर्थङ्कर इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। सुभग और यशःकीर्तिका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। दसे प्रमुत्केष्ट स्थितिका वन्धक होता है। इसो प्रकार स्थिर प्रकृतिके समान शुभ और यशःकीर्तिके उत्कृष्ट स्थितिवन्धकी अपेन्ना सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१०४. चेदक सम्यक्त्व श्रीर उपशम सम्यक्त्वमें श्रपनी सव प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी श्रपेत्ता सिन्नकर्ष श्रवधिक्षानी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि उपशम सम्यक्त्वमें तीर्थक्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव देवगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलधु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, त्रस चतुष्क श्रस्थर, श्रग्रुभ, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, श्रयशक्रीति श्रीर निर्माण इनका नियमसे वन्धक

णिमि॰ णि॰ वं॰। णि॰ ऋगु॰ संस्वेज्जगुणही॰।

१०५. सासणे छएएं कम्माएं छोतं। छएांतासुर्वधिकोध० उक्क०हिद्विं० पएणारसक०-इत्थि०-छरदि-संग-भय-दुगुं० एग० वं०। एग० तं तु०। एवमेदाछो एक्कमेकस्स। तं तु०। पुरिस० उक्क०हिद्विं० सोलसक०-भय-दुगुं० एग० वं० संखेज्जदिभागू०। हस्स-रदि० सिया०। तं तु०। छरदि-सोग सिया० संखेज्जदिभागू०। हस्स० उक्क०हिद्विं० सोलसक०-भय-दुगुं० एग्य० वं० संखेज्जदिभागू०। इत्थि० सिया० संखेज्जदिभागू०। पुग्सि० सिया०। तं तु०। रदि० एग्यमा०। तं तु०। एवं रदीए वि।

होता है जो नियमसे अनुन्छुए संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है।

२०५. सासादन सम्यक्त्वमें छह कर्मीका भङ्ग श्रोधके समान है। श्रन्तानुबन्धी क्रांधकी उन्क्रप्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पन्द्रह कपाय, खीवंद, अरति, शोक, भय श्रीर जुगुत्साका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उन्छए स्थितिका भी बन्धक होता हैं और अनुस्कृष्ट स्थितिका भी यन्धक होता है। यदि अनुस्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेन्ना अनुत्कृष्ट एक समय न्युनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्युन तक स्थितिका वन्ध्रक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना च।हिए । ऐसी अवस्थामें वह उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्थक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट की अपेक्ष अनुन्कृष्ट एक समय न्युनसं लेकर पत्यका असंख्यातयाँ भाग न्युन तक स्थिति-का वन्धक होता है। पुरुपवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव सोलह कपाय, भय श्रीर जुगुप्साका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रवत्हाए संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका वन्धक होता है। हास्य ग्रीर र्रातका कदाचित वन्धक हाना है ग्रीर कदाचित श्रवन्धक होता है । यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है कोर श्रवत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होताहै । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक हाता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेता अनुत्कृष्ट एक समय न्युनसं लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भागहीनतकस्थितिकावन्यक होता है। अरित और शोकका कदाचित बन्धक होता है और कदाचित अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रानुकृष्ट सख्यातवाँ भागहीन स्थितका वन्धक होता है। हास्यकी उत्क्रप्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव सोलह कपाय. मय श्रीर जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे संख्यातवाँ भाग न्यन स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवंदका कदाचित वन्धक होता है और कदाचित अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका वन्धक होता है। पुरुपवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अपन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट की अपेका अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग होनतक स्थितिकावन्धक होता है ।रितका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रोर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृप्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृपकी अपेचा अनुत्कृप्ट एक समय न्यूनसे लेकर प्रत्यका असंख्यातवाँ भाग होनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार रितके उत्क्रप्र स्थितिवन्यको श्रुपंता मी सन्निकर्प जानना चाहिए।

१०६. तिरिक्खगदि० उक्क० द्विदिवं० पंचिदि०-त्रोरालि०-तेजा०-क०-वामण-संठा०-त्रोरालि० त्रंगो०-खीलियसंघ०-वएण०४-तिरिक्खाणु०-त्रगु०४-त्रप्पत्थ०-तस०४-त्रिथरादिञ्च०-िणिम० णि० । तं तु० । उज्जो० सिया०। तं तु० । एवमेदात्रो एक्कमेकस्स । तं तु० ।

१०७. मणुसगदि० उक्क०द्विदिवं० पंचिदि०-ऋोरालि०-तेजा०-क०-ऋोरालि०-ऋंगो०-वएएा०४-ऋगु०-ऋप्पसत्थवि०-तस०४-ऋथिरादिछ०-िएमि० एए० संखेज्जदि-भागू० । । खुज्जसं०-वामणुसं०-ऋद्ध०-खीलिय० सिया० संखेज्जदिभागू० । मणु-साणु० एि० । तंतु० । एवं मणुसाणु० ।

१०८. देवर्गाद० उक्क०द्विदिवं० पंचिदि०-तेजा०-क०-वराएा०४-ऋगु०४-तस०४-

१०६. तिर्यञ्चगितकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, त्रोदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, वामन संस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गापाङ्ग, कीलक संहनन, वर्णचतुष्क. तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह श्रोर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेक्षा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। उद्योतका कदाचित वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। वियमसे उत्कृष्टकी श्रपेक्षा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्प होता है श्रीर तथ वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर तथ वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेक्षा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका वन्धक होता है।

१०७. मनुष्यगितकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रोदारिक श्राङ्गाणाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रमुकलघु, श्रप्पर विहायोगित, वसचतुष्क, श्रस्थिर श्राद्दि छह श्रार निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है। जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। कुष्पक संस्थान, वामन संस्थान, श्रर्खनाराच संहनन श्रोर कोलक संहनन इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। मनुष्यानुपूर्वांका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रोर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रोर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। वस्तु श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। वस्तु श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। वस्तु श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वांके उत्कृष्ट स्थितिवन्धकी श्रपेत्ता सन्निकर्प जानना चाहिए।

१०=. देवगतिकी उन्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पश्चेन्द्रिय जाति, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क श्रीर निर्माण इनका नियमसं णिमि॰ णि॰ वं॰ संखंज्जिदिभागू०। वेउव्वि०-समचदु०-वेउव्वि०त्रंगो०-देवाणु०-पसत्थिवि०-सुभग-सुम्सर-त्रादे० णिय०। तं तु०। थिर-सुभ-जसिग० सिया०। तं तु०। त्रथिर-त्रसुभ-त्रजस० सिया० संखेज्जिदिभागू०। एवं वेउव्वि०-वेउव्वि० त्रंगो०-देवाणु०।

१०६. समचदु॰ उक्क॰ द्विदिवं० पंचिदि०-तेजा०-क॰-वराग्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि० णि० संखेज्जदिभागु० । तिरिक्खगदि-मणुसगदि-स्रोरालि०-स्रोरालिश्रंगो०-चदुसंघ०-दोस्राणु०-अप्पसत्थवि०-स्राथरादिछ० सिया० संखेज्जदिभागू० । देवगदि-वंउव्वि०-वेउव्वि० अंगो०-वज्जरिस०-देवाणु०-पसत्थवि०-थिरादिछ० सिया० । तंतु० । एवं समचदु०भंगो पसत्थवि०-थिरादिछ० ।

बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्हृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक श्राङ्गिपाङ्ग, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर श्रीर श्रादेय इनका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह उत्सृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्हृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्हृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रनुत्हृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्सृष्ट्यका अपंचा श्रनुत्हृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। स्थर, श्रभ श्रोर यश्रकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो वियमसे उत्कृष्ट्यका अपंचा श्रनुत्हृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। श्रस्थिर, श्रशुभ श्रोर श्रयशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रयन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्हृष्ट संख्यातवाँ भाग होन स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार होता है तो नियमसे श्रनुत्हृष्ट संख्यातवां भाग होन स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार वैक्रियिक शरीर, वैक्रियक श्राङ्गोपाङ्ग श्रोर देवगत्यानुपूर्वीके उत्कृष्ट स्थितिवनधकी श्रपंचा सन्सिकप जानना चाहिए।

१०६. समचतुरस्र संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क और निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है। जो नियमसे अनुन्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। तिर्यञ्चगिति, मनुष्यगिति, औदारिक शरीर, औदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, चार संहनन, दो श्रानुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगित और अस्थिर श्रादि छह इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है सो नियमसे श्रानुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। देवगित, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्जर्षभनाराच संहन, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगिति और स्थिर श्रादि छह इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार समचतुरस्र संस्थानके समान प्रशस्त विहायोगिति और स्थिर श्रादि छहके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी श्रपेक्षा सन्निकर्प जानना चाहिए।

११०. णग्गोद० उक्क०द्विदिवं० पंचिदि०-त्रोरालि०-तेजा०-क०-त्रोरालि० त्रंगो०-वरण०४-त्रगु०४-त्रप्पसत्थ०-तस०४-त्रथिरादिञ्ठ०-िणमि० णिय० बं० संखेज्जदिभागू०। तिरिक्खगदि-मणुसगदि-तिषिणसंघ०--दोत्राणु०--उज्जो० सिया० संखेज्जदिभागू०। वज्जणारा० सिया०। तं तु०। एवं वज्जणारायणं। एवं सादियं पि। एवरि णारायणं सिया०। तं तु०। [ एवं ] णारायणं।

१११. खुज्ज० उक्क॰ द्विदिनं॰ तिरिक्खगर्दि-पंचिदि०-त्रोरालि॰-तेजा०-क०-त्रोरालि॰ ग्रंगो॰-वगण॰ ४-तिरिक्खाणु०-त्रगु०४--त्रप्यसत्थ॰--तस०४-ग्रथिरादिञ्ञ०-णिमि० णि० वं॰ संखेजनिद्भागू० । खीलिय०-उज्जो० सिया॰ संखेजनिद्भागू० । श्रद्धणारा॰ सिया० । तंतु० । एवं श्रद्धणारा० ।

११० न्यग्रोध परिमगडल संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चे-न्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग वर्णचतुष्क, ग्रगुरुलघ चतुष्क, ग्रप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, ग्रस्थिर ग्रादि छह ग्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे संख्यातवां भागहीन अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, तीन संहनन, दो आनुपूर्वी और उद्योतका कदा-चित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है जो नियमसे संख्यातवां भागहीन श्रमुत्कृप्ट स्थितिका वन्धक होता है। वज्रनाराचसंहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रवत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रवत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्क्रपृकी अपेन्। श्रनुत्कृष्ट एक समय न्युनसे हेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग हीनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार बज्जनाराचसंहननके उत्क्रप्ट स्थिति बन्धकी सन्निकर्प कहना चाहिए । तथा इसी प्रकार स्वातिसंस्थानके उत्कृष्ट स्थितवन्धकी अपेक्षा भी सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह नाराच संहतनका कदाचित बन्धक होता है श्रीर कदाचित श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट्र स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेवा अनुत्कृष्ट्र एक समय न्यनसे लेकर पत्यका ऋसंख्यातवां भाग न्यन तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार नाराच संहननके उत्क्रष्ट स्थितिवन्धकी श्रपेक्षा सन्निकर्प जानाना चाहिए।

१११. कुब्जक संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक श्रारीर, नेजस श्रीर, कार्मण श्रीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगिति, त्रसचतुष्क, श्रस्थर श्रादि छह श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका वन्धक होता है। कोलक संहनन श्रौर उद्योतका कदाचित् वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो वियमसे अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो वियमसे उत्कृष्टका श्रपेत्ता श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग हीन तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रधंनाराच संहननके उत्कृष्ट स्थितिवन्धकी श्रपेत्ता सन्विकर्प जानना चाहिए।

- ११२. सम्मामि॰ श्रोधिभंगो । मिन्छे मिद्भंगो । सिएए० मूलोघं । अस-एएीमु पंचणा०-णवदंमणा॰-मोहणी॰ छर्गीस-चदुश्रायु०-दोगोद॰-पंचंत० पंचिदिय-तिरिक्खश्रपज्जनभंगो । णिरयगिद्संजुत्ताणं सामपगदीसं तिरिक्खोघं । तिरिक्ख-गदि० उक्क०हिद्वं० तेजा०-क०-हुंड०-वर्मण्ड४-श्रगु॰-उप॰-श्रथरादिपंच-णिमि॰ णि॰ संखेज्जदिभागू०। एइंदि॰-श्रोरालि॰-तिरिक्खाणु०-थावर-मुहुम-श्रपज्ज०-साधार० सि०। तं तु०। एवमेदासि तंतु० पदिदासं सरिसो भंगो ।
- ११२. मणुसग॰ उक्क०द्विदिवं॰ मणुसाणु० णि॰। तं तु०। सेसाणं संखेज्जदिभागु०।
- ११४. देवगदि॰ उक्क०द्विदिबं० पंचिदि०-वेउव्वि-तेजा०-क०-वेउव्वि॰ अंगो०-वर्गण०४-अगु०४-तस०४-णि० णि० संखेज्जदिभागू० । समचदु०-देवाणु०-पसत्थ०-गुभग-सुम्सर-आदे० णिय० । तं तु० । थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया०
- ११२. सम्यग्मिश्यादृष्टियोंमें श्रविधिश्वानियोंके समान भक्क हैं। मिश्यादृष्टि जीवोंमें मत्यज्ञानियोंके समान भक्क हैं। संशी जीवोंमें मृलोधके समान भक्क हैं। असंशी जीवोंमें पाँच ब्रानावरण, नो दर्शनावरण, छुग्बोस भोहनीय, चार श्रायु, दो गोत्र श्रोर पाँच श्रन्तराय प्रकृतियोंका भक्क पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रप्याप्तकोंके समान है। नरकगित सहित नामकर्मकी प्रकृतियोंका भक्क सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। निर्यञ्चातिकी उन्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु, उपघात, श्रिस्थर श्राद्वि पाँच श्रोर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर, मुक्त, श्रप्यीप्त श्रोर स्थायरण इनका नियमसे वन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर, मुक्त, श्रप्यीप्त श्रोर स्रानुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रानुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है श्रीर स्रानुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रानुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेका स्रानुत्कृष्ट एक समय न्यून से लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार 'तं तु' रूपसे कही गई इन प्रकृतियोंका सदश भंग होता है।
- १२३. मनुष्यगतिको उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे वन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। तथा शेष प्रकृतियोंको अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है।
- ११४. देवर्गातकी उन्छए स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस, शरीर, कार्मण शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, अस चतुष्क और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुन्छए संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। समचतुरस्र संस्थान, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्छए स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुन्छए स्थितिका बन्धक होता है। यदि अनुन्छए स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उन्छएको अपेक्षा अनुन्छए एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका

संखेज्जदिभागू० ! एवं देवाणु० । चदुजादि० पंचिंदिय०तिरिक्खअपज्जत्तभंगो ।

- ११५. समचदु॰ उक्क॰ द्विदिबं० पंचिदि०-तेजा॰-क॰-वग्ण०४-अगु०४-तस॰४-णि० णिय॰ संखेज्जदिभागू० । दोगदि-दोसरीर-दोअंगो॰-पंचसंघ०-दोआणु०-उज्जोव-अप्पसत्थ०-थिराथिर-सुभासुभ-दूभग-दुस्सर-आणादे०-जस०-अजस० सिया० संखेज्जदिभागू० । देवगदि-वज्जरि०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदे० सिया० । तं तु० ।
- ११६. चदुसंठा०-स्रोरालि०स्रंगो-चदुसंघ०--स्रादाउज्जो०-धिर--स्रुभ--जसगि० स्रपज्जत्तभंगो । स्राहार० स्रोघं । स्रणाहार० कम्मइगभंगो । एवं उक्कस्स-सत्थाण-सिएएयासं समत्तं ।
- ११७. उकक्सपरत्थाणसण्णियासे पगदं। एत्तो उकक्सपरत्थाणसण्णियास-साधण्डं अद्वपदभूदसभासलक्ष्यणं वत्तइस्सामो। तं जहा--पंचिदियसण्णीणं

ग्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर, ग्रस्थिर, ग्रुभ, ग्रग्रुभ, यशःकीर्ति ग्रौर ग्रयशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है ग्रौर कदाचित् ग्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे ग्रानुत्कृष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार देवगत्यानुपूर्वीके उत्कृष्ट स्थिति बन्धकी ग्रेपेक्षा सन्निकर्ष जानना च।हिए। चार जातिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी ग्रेपेक्षा सन्निकर्ष ग्रथिक्ष ग्रप्यांतकोंके समान है।

११४. समचतुरस्र संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, अस चतुष्क श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुन्कृष्ट संख्यातवां भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। दो गित, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत. श्रप्रशस्त विहायोगित, स्थिर, श्रस्थर, श्रम, श्रश्चम, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, यशःकीर्ति और श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुन्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुन्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। देवगित, वज्जर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर और श्रादेय इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि श्रनुन्कृष्ट स्थितिका होता है। यदि श्रनुन्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है।

११६. चार संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, चार संहनन, श्रातप, उद्योत, स्थिर, शुभ श्रौर यशःकीर्ति इनका भङ्ग श्रपर्यातके समान है। श्राहारक जीवोंका भङ्ग श्रोघके समान है। तथा श्रनाहारक जीवोंका भंग कार्मणुकाययोगी जीवोंके समान है।

इस प्रकार उत्कृष्ट स्वस्थान सन्निकर्ष समाप्त हुत्रा ।

११७. त्राब उत्कृष्ट परस्थान सन्निकर्पका प्रकरण है । त्रातएव त्रागे उत्कृप्ट परस्थान सन्निकर्पकी सिद्धिके लिए अर्थपद्भृत समास लच्चणको बतलाते हैं । यथा—पञ्चेन्द्रिय त्रपज्जत्ताणं मिच्छादिद्दीणं त्रब्भवसिद्धियपात्रोगं श्रंतोकोडाकोडिपुथतं वंधमाणस्स हिदिउस्सरणं । तदो सागरोवमसदपुथत्तं उस्सिरिद्ण तिरिक्खायु० वंधवोच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिरिद्ण उच्चागोदं वंधवोच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिरिद्ण उच्चागोदं वंधवोच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिरिद्ण पुरिस०-समचढु०-वज्जरिसभ०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-स्रादे० एदात्रो सत्त पगदीश्रो एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिरिद्ण एग्गोद०-वज्जणारा० एदासि दोपगदीर्ण एकदो वंधश्रोच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिरिद्ण सादिय०-णारायण० एदात्रो दोपगदीश्रो एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिरिद्ण इत्थिवे० वंधवोच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिरिद्ण वामणसंठा०-खोलियसंघ० एदाश्रो दोपगदीश्रो एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिरिद्ण वामणसंठा०-खोलियसंघ० एदाश्रो दोपगदीश्रो वंधवोच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिरिद्ण मणुसग०-मणुसाणु० पज्जत्तसंजुत्ताश्रो दोपगदीश्रो वंधवोच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिरिद्ण चद्रिर-द्ण पंचिदिय० पज्जत्तसंजुत्त० वंधवोच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिरिद्ण चद्रिर-दिय० पज्जत्तसंजुत्त० वंधवोच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिरिद्ण तंइदिय० पज्जत्तसंजुत्त० वंधवोच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिरिद्ण तेइदिय० पज्जत्तस्सर०

संही पर्याप्त मिथ्यादृष्टियोंमें श्रमव्यांके योग्य श्रन्तःकोड्।कोड्। प्रथक्तव प्रमाण स्थितिका वन्ध करनेवाले जीवके स्थितिका उत्सरण होता है । इससे ग्रागे सौ सागर पृथक्त प्रमाण स्थिति का उत्सरण करके मनुष्यायुको बन्धव्युच्छित्ति होती है । इससे सौ सागर पृथक्त्व प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर तिर्यञ्चायुको बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर उच्चगोत्रकी बन्धव्यच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर प्रथक्त प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर पुरुषवेद, समन्तरुख संस्थान, वज्रर्षभ-नाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर श्रीर श्रादेय इन सात प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धन्युन्ज्ञित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तवका उत्सरण होनेपर न्ययोध परिमण्डल संस्थान और वज्रनाराच संहनन इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्यचिछत्ति होती है। इससे सौ सागर प्रथक्त्वका उत्सरण होनेपर स्वाति संस्थान ग्रौर नाराचसंहनन इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ वन्ध व्युव्छित्ति होती है। इससे सी सागर प्रथक्तव प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर स्त्री वंदकी बन्धन्युच्छिति होती है। इससे सौ सागर प्रथक्त प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर कुब्जक संस्थान श्रीर श्रर्धनाराचसंहननकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सी सागर प्रथक्त प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर वामन संस्थान और कीलक संहनन इन दो प्रश्नतियोंको एक साथ वन्धव्युच्छिति। होती है। इससे सौ सागर पृथक्तव प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर पर्याप्त प्रकृतिसे संयुक्त मनुष्य-गति और मनुष्यगत्यानुपूर्वी इन दो प्रकृतियोंकी बन्धन्युचिन्नत्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तव प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनंपर पर्याप्त प्रकृतिसे संयुक्त पञ्चेन्द्रिय जातिको बन्धन्युन्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तवका उत्सरण होकर पर्याप्त संयुक्त चतु-रिन्द्रिय जातिकी बन्धन्युन्त्रित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तवका उत्सरण होकर पर्याप्त संयुक्त त्रीन्द्रियजातिकी बन्धन्युच्छित्ति होती है। इससे सो सागर पृथक्त्वका उत्स-

पज्जत्त० एदात्रो तिएिण पगदीत्रो एकदो वंभवोच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सरिद्ण वादरएइंदियपज्जत्त०-पत्तेग०-त्रादाउज्जो०-जसिग० एदात्रो पंच पगदीत्रो
एकदो वंभवोच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिर्ण वादरएइंदियपज्जत्त-साभारण०
एदात्रो दोपगदीत्रो एकदो वंभवोच्छेदो । तदो सागरो० उस्सिर्ण मुहुमेइंदियपज्जत्त-पत्तेय० एदात्रो दोपगदीत्रो एकदो वंभवोच्छेदो । तदो सागरो० उस्सिर्ण मुहुमेइंदियपज्जत्त-साभार०-पर०-उस्सा०-थिर०-मुभ० एदात्रो छ-पगदीत्रो एकदो
वंभवोच्छेदो । तदो सागरो० उस्सिर्ण मणुसग०-मणुसाणु० त्रपज्जत्तसंज्जतात्रो
दुव पगदीत्रो एकदो वंभवोच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिर्ण पंचिदियत्रपञ्जत्त०
वंभवोच्छेदो । तदो सागरोवम० उस्सिर्ण चुरिंदियत्रपञ्जत्त० वंभवोच्छेदो । तदो सागरोवम० [उस्सिर्ण वेइंदियत्रपञ्जत्त० वंभवोच्छेदो । तदो सागरोवम० इस्सिर्ण वादरेइंदियत्रपञ्जत्त० पत्तेयसंजुत्तात्रो हो
पगदीत्रो एकदो वंभवोच्छेदो । तदो सागरो० उस्सिर्ण वादरेइंदियत्रपञ्जत्त० पत्तेयसंजुत्तात्रो हो
पगदीत्रो एकदो वंभवोच्छेदो । तदो सागरो० उस्सिर्ण वादरेइंदिय-त्रपञ्जत०
साभारणसंजुत्तात्रो एदात्रो एकदो वंभवोच्छेदो । तदो सागरो० उस्सिर्ण सुहुमेइंदियत्रपञ्जत० पत्तेग० संजुत्तात्रो एदात्रो दोएण पगदीत्रो एकदो वंभवोच्छेदो ।

रण हो कर पर्याप्त संयुक्त द्वीन्द्रिय जाति, श्रप्रशस्त विहायोगति श्रौर दुःस्वर इन तीन प्रकृतियोंकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सो सागर पृथक्तवका उत्सरण होकर पर्याप्त संयुक्त बादर एकेन्द्रिय जाति, प्रत्येक, आनप, उद्योत ग्रौर यशःकीर्ति इन पाँच प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त श्रीर साधारण इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छिति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तवका उत्सरण होकर सुद्म एकेन्द्रिय पर्याप्त और प्रत्येक इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्यच्छित्ति होती है। इससे सौसागर प्रथक्त्वका उत्सरण होकर सक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त, साधारण, परघात, उच्छास, स्थिर श्रीर ग्रुभ इन छह प्रकृतियोंको एक साथ बन्धन्युच्छि-त्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर अपर्याप्त संयुक्त मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वी इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ वन्धन्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तवका उत्सरण होकर अपर्याप्त संयुक्त पञ्चेन्द्रिय जातिकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तवका उत्सरग्रहोकर ग्रपर्याप्त संयुक्त चतुरिन्द्रिय जातिकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर प्रथक्त्वका उत्सरण होकर अपर्याप्त संयुक्त त्रीन्द्रिय जातिकी बन्धव्युच्छिति होती है। इससे सो सागर पृथक्तवका उत्सरण होकर अपर्याप्त संयुक्त द्वीन्द्रिय जाति, श्रौदारिक श्राङ्गापाङ्ग, असम्प्राप्तासुपाटिका संहनन श्रौर त्रस इन चार प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सी सागर प्रथक्त्वका उत्सरण होकर बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त श्रीर प्रत्येक संयुक्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्ध-ब्युच्छिति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त श्रीर साधारण संयुक्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धन्युन्छित्ति होती है। इससे सौ सागर प्रथक्तवका उत्सरण होकर सक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्त और प्रत्येक संयुक्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्वका उत्सरण

तदो सागरो० उस्सरिद्ध्ण सादावं०-हस्स-रिद्ध्य एदाञ्चो तिरिष्ण पगदीञ्चो अपज्जत्त-संजुत्ताञ्चो एकदो बंधवोच्छेदो । एत्तो सेसाणं पयडीणं एकदो वंधवोच्छेदो होहिदि त्ति उकस्सए हिद्विवंधे । एवमपज्जत्तवंधवोच्छेदा भवंति । एवं सव्वअपज्जत्ताणं ।

११८. उक्कस्सपरत्थाणसणिणयासे पगदं | दुवि०-त्रोघे० आदे० | त्रोघेण आभिणिबोधि० उक्कस्सिट्टिव्वंधंतो चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-भिच्छत्त-सोल-सक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-हुंडसं०-वण्ण०४-अगु०४--वादर-पज्जत्त-पत्तेय०-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० वं० | तं तु० उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा | उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं कादूण याव पितदोवमस्स असंखेजनिदभागूणं वंधदि | णिरयायु० सिया वंधदि सिया अवंधदि | यदि वंधदि णियमा उक्कस्सा | आवाधा पुण भयणिज्जा | णिरय-तिरिक्खगदि-एइंदिय-पंचिदि०-आरालि०-वेउव्व०-दोअंगो०-असंपत्त०-दोआणु०--आदाउज्जो०--अण्पसत्थ०-तस-थावर-दुस्सर सिया० | तं तु० | एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स | तं तु० कादव्वा |

होकर श्रपर्याप्त संयुक्त सातावेदनीय, हास्य श्रौर रित इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे श्रागे उत्कृष्ट स्थितिवन्ध होनेपर शेप प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होगी। इस प्रकार श्रपर्याप्त संयुक्त प्रकृतियोंकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इसी प्रकार सब श्रपर्याप्तकोंके जानना चाहिए।

११८. उत्कृष्ट परस्थान सन्निकर्पका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है--श्रोध श्रीर श्रादेश । श्रोघसे श्रामिनिबोधिकश्वानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव चार ब्रानावरण, नो दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, त्रारति, शोक, भय, जुगुष्सा, तैजस शरीर, कार्मणुशरीर, हुएइसंस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि पांच, निर्माण, नीचगोत्र श्रीर पांच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। उसमें भी उत्कृप्से श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर प्रत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यनतक स्थितिका बन्धक होता है। नरकायका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। परन्तु त्राबाधा भजनीय है। नरकगति, तिर्य-ञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति,पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, वैकियिक शरीर, दो श्राङ्गोपाङ्ग, ग्रसम्प्राप्तासुपाटिका संहनन, दो ग्रानुपूर्वी, श्रातप, उद्योत, श्रप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर श्रीर दःस्वर इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुख्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेत्ता श्रमुत्कृष्ट एक समय न्युनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यन तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकष जानना चाहिए। जो उत्कप्ट भी होता है श्रीर श्रमत्कप्ट भी होता है। उसमें भी उत्कृष्टकी अपेद्धा श्रमत्कृष्ट एक समय न्युनसं लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्युनतक स्थितिका बन्धक होता है।

११६. सादावे॰ उक्क॰ द्वि०वं॰ पंचणा॰-णवदंसणा०-मिच्छ॰-सोलसक०-भय-दुगुं०-तेजा०-क॰-वएण०४-ऋगु०-उप०-िएमि०-पंचंत० िएयमा वं० । िए० ऋगु० । उक्क॰ ऋगु० दुभागूणं वंधित । इत्थिवे॰ मणुसगिद०-मणुसाणु० सिया वं० सिया ऋवं० । यदि वं० िएय० ऋणु० । उक्क० ऋणु० तिभागूणं० । पुरिस०-इस्स-रिद-देवगिद्-समचदु०-वज्जिरस०-देवाणु०-पसत्थ०-थिरादिछ०-उच्चा० सिया वं० । तं तु० । एगुंस०-ऋरिद-सोग-तिरिक्खगिद-एइंदि०-पंचिदि०-ऋरोरालि०-वेउिव०-हुंडसं०-दोश्चंगो०--ऋसंपत्त०-तिरिक्खाणु०--पर०--उस्सा०--ऋ।दाउज्जो०--ऋण्यस्थ० तस-थावर-वादर-पज्जत्त-पत्ते०-ऋथिरादिछ०-णीचा० सिया० दुभागू० । तिएणजादि०-चदुसंठा० चदुसंघ०-सृहुम-ऋपज्ज०-साधार० सिया० संखेज्जिदि भागू० । एवं इस्स-रदीएं ।

ै१२०, इत्थि० उक्क०द्विदि०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-श्रसादा०-मिच्छ०-सोल-सक०-ऋरदि-सोग--भय-दुरगुं०--पंचिदि०--श्रोरालि०--तेजा०--क०--श्रोरालि०श्रंगो०--

११९. सातावेदनोयको उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक जीव पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शना-वरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, श्रगुरुल्घु, उपघात, निर्माण श्रीर पांच श्रन्तराय इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह नियमसे अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। जो नियमसे उत्कृष्टकी अपेत्ना श्रनुत्कृष्ट दो भाग न्यन स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेद, मनुष्यगति श्रीर मनुष्यगत्यान-पूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है जो उत्कृष्टकी अपेदा अनुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेद, हास्य, रित, देवगति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्पभनाराच सहनन, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर श्रादि छह श्रीर उच्चगोत्र इन प्रकृतियांका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता हैं। उसमें भी उत्कृष्टकी अपेत्ता श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। नपुंसक वेद, अरति, शोक, तिर्य-ब्चगति, एकेन्द्रिय जाति, पब्चेन्द्रियजाति, श्रोदारिक शरीर, वैकियिक शरीर, द्वण्डसंस्थान, दो श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तास्यपाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छास, त्र्यातप, उद्योत, त्रप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, त्र्रास्थर **त्र्या**द छह श्रीर नीचगोत्र इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। तीन जाति, चार संस्थान, चार संहनन, सूक्ष्म, ऋपर्याप्त और साधारण इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार हास्य त्रोर रतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी ऋषेद्या सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१२० स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पांच शानावरण, नौ दर्श-नावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, श्ररति, शोक, भय, जुगुप्सा, पष्ट्वेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण्चतुष्क. वण्ण ०४-अगु०४-अप्पसत्थ० तस०४-अथिरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णिय० वं । णि० अणु० । उक्क० अणु० चदुभागू० । तिरिवखग०-हुंडसं०-असंपत्त०-तिरिक्खाणु०-उज्जो० सिया० । यदि० चदुभागू० । मणुसग०-मणुसाणु० सिया० । तं तु० । खुज्ज०-वामणसंठा०-अद्धणारा०-खीलियसं० सिया० संखेज्जदिभागू० ।

१२१. पुरिस० उक्क हिदि बं पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छत्त-सोलसक०-भय-दुगुं० पंचिदि बन्तेजा० क० वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिभि०-पंचंत० णि० वं ब्रिंगि० अणु० दुभागू० । सादावे बन्दिस्त-रिद्द-देवगदि-समचद् ०-विज्ञिर-देवाणु०--पसत्थ०-थिरादि छ०-उच्चा० सिया०। तं तु०। असादा०-अरिद-सोग-तिरिक्खग०-ओरालि०-वेउविव-हुंड०-दोश्रंगो०--असंपत्त०--तिरिक्खाणु०--उज्जो०--अप्पत्थ०--अथिरादि छ०-णीचा० सिया० दुभागू०। मणुसग० मणुसाणु० सिया० तिभागूणं

श्रगुरुलघुचतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह, निर्माण, नीच गोत्र श्रौर पांच श्रन्तराय इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। जो उत्कृष्टकी श्रपेत्ता श्रमुन्कृष्ट चार भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। तिर्यञ्चगित, हुण्डसंस्थान, श्रसम्प्राप्तास्पाटिका संहनन, तिर्यञ्च गत्यामुप्तीं श्रौर उद्योत इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट चार भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। ममुष्यगित श्रौर ममुष्यगत्यामुपूर्वीका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो उत्कृष्टक स्थितिका भी वन्धक होता है तो उत्कृष्टक स्थितिका भी वन्धक होता है तो उत्कृष्टक स्थितिका श्रमुत्कृष्ट पक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्य।त्यां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। कुष्कक संस्थान, वामन संस्थान, श्रधंनाराच संहनन श्रौर कीलक संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।

१२१ पुरुष वेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलधुचतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माणऔर पांच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है । सातावेदनीय, हास्य, रित, देवगित, समचतुरम्य संस्थान, वज्जपंभनाराच संहनन, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगित, स्थिर आदि छह और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदा-चित् अवन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेदा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । असातावेदनीय, अरित, शोक, तिर्यञ्चगित, औदा-रिक शरीर, वैकियिक शरीर, हुण्ड संस्थान, दो आङ्गोपाङ्क, असम्प्राप्तास्प्राटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगिति, अस्थिर आदि छह और नीचगोत्र इनका कदांचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । मनुष्यगित और मनुष्यात्यान्वान स्थितका बन्धक होता है स्थितका बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । मनुष्यगित और मनुष्यात्यान्यान

बं॰ । चदुसंठा०-चदुसंघ० सिया॰ संखेज्जदिभागू॰ । एवं पुरिसवेदभंगो समचदु॰-पसत्थ०-सुभग०-सुस्सर-त्र्यादेज्ज ति ।

१२२. शिरयायु० उक्क॰ द्विदि०वं॰ पंचणा॰ खवदंसणा-असादावे०-भिच्छत्त-सोलसक॰ खुं स०-अरिद-सोग-भय-दुंगुं०-शिरयग०-पंचिदि-०वेउव्वि०-तेजा॰ क०-हुंडसं०-वेउव्वि० अंगो०-वण्ण ०४-शिरयाणु०-अगु०४--अप्पसत्थवि०--तस०४--अथि--रादिछ०-शिमि०-शीचागो०-पंचेत० शि०। तं तु० उक्क० अणु० तिद्वार्णपिददं वंधदि। असंसेज्जभागहीणं वा संसेज्जिदभागहीणं वा संसेज्जिदगुणहीणं वा।

१२३. तिरिक्खायु॰ उक्क॰ द्विदिवं० पंचणा॰-णवदंसणा॰-मिच्छ॰-सोलसक॰-भय-दुगुं०-तिरिक्खग०-पंचिदि०-स्रोरालि॰-तेजा०-क०--समचदु॰--स्रोरालि॰ स्रंगो०--वज्जरिसभ०--वण्ण०४--तिरिक्खाणु०--स्रगु०४--पसत्थवि०--तस०४--सुभग--सुस्सर--स्रादे०-णिमि०-णीचा॰-पंचंत० णि० वं० । णि० स्रणु० संखेज्जदिगुणहीणं वं० । सादासा०-इत्थिवे०-पुरिस०-हस्स-रदि-स्ररुदि-सोग-उज्जो-थिराथिर--सुभासुभ--जस०--

नुपूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। चार संस्थान श्रौर चार संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पुरुपवेदके समान समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर श्रौर श्रादेय इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

१२२. नरकायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पांच ज्ञानावरण. नी दर्शनावरण, श्रसातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसकवेद, श्ररित, श्रोक, भय, जुगुण्सा, नरकगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वैकियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह, निर्माण, नीच गोत्र श्रीर पांच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिकाभी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो तीन स्थान पतित स्थितिका बन्धक होता है। या तो श्रसंख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका वन्धक होता है, या संख्यातवां भागहीन स्थितिका वन्धक होता है।

१२३. तिर्यञ्चायुकी उत्हाप्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पांच ज्ञानावरण, नी दर्शनावरण, मिथ्यात्व. सोलह कपाय, भय, जुगुष्सा, तिर्यञ्चगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्रपंभ नाराच संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पांच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय, श्रमाता वेदनीय, स्थावेद, पुरुषचेद, हास्य, रित, श्ररित, श्रोक, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, श्रशुभ, यशकार्ति श्रौर श्रयशकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यात

श्रनस० सिया॰ संखेजनिद्गुणहीएं०। मणुसायु० तिरिक्खायुभंगो। एवरि एीचागो॰ वज्ज०। उच्चा॰ एए० वं० संखेजनिद्गुणहीएं।

१२४. देवायु० उक्क०द्विदिवं० पंचणा० छदंसणा०-सादा०-चदुसंज०-पुरिसवे०-इस्स-रिद-भय-दुगुं०-देवगदि पंचिदि०-वेउव्वि० तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि० स्रंगो०-वण्ण०४-देवाळु०-च्रगु०४-पसत्थवि०-तस०४ थिरादिछ०-णिम०-उच्चा०-पंचंत०-णि० बं० संखेजनगुणदीणं० । तित्थय० सिया वं० संखेजनगुणदी० ।

१२५. णिरयगदि० उक्क०द्विदि०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-श्रमादा०-मिन्छत्त -सोलसक०-णवुंस०-त्ररिद-सोग-भय-दुगुं०-पंचिदि०-वेडिव्व०-तेजा०-क०-हुंडसंठा०-वेउिव्व० श्रंगो०-वएण०४-िणरयाणु०-त्र्रगु०४-श्रप्पसत्थ०-तस०४ श्रथिरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णिय० | तं तु० | णिरयायु० सिया बं० सिया श्रवं० | यदि वं० णि० उक्क० | श्रावाधा पुण भयणिज्जा | एवं णिरयगदिभंगो वेडिव्व०-वेउिव्व० श्रंगो०-णिरयाणु० |

गुण्हीन स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यायुका भक्न तिर्यञ्चायुके समान है। इतनी विशेषता है कि नीचगोत्रका छोड़कर जानना चाहिए। उच्च गात्रका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रमुत्हुए संख्यातगुण होन स्थितिका बन्धक होता है।

१२४. देवायुकी उत्क्रप्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पांच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनीय, चार संज्वलन, पुरुषवेद, हास्य, रित, भया जुगुण्सा, देवगित,
पञ्चिन्द्रिय जाति, वैिकियिक शरीर, तंजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान,
वैिकियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति,
त्रस चतुष्क, स्थिर श्रादि छह, निर्माण, उच्चगोत्र श्रीर पांच अन्तराय इनका नियमसे
बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है।
तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक
होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है।

१२५. नरकगितकी उत्छए स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पांच ज्ञानावरण, नी दर्शनावरण, ग्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसकवंद, ग्ररित, शोक, भय, जुगुन्सा, पञ्चिन्द्रिय जाति, वैकियिक, शरीर, तंजसशरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वैकियिक ग्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, ग्रगुरुलष्ठ चतुष्क, ग्रप्रशस्त विहायोगिति, त्रस चतुष्क. ग्रस्थिर ग्रादि छह, निर्माण, नीचगोत्र ग्रीर पांच ग्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्छए स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी ग्रपंत्ता श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका ग्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। नरकायुका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् ग्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। परन्तु श्राबाधा भजनीय है। इसी प्रकार नरकगतिके समान वैकियिक शरीर, वैकियिक श्राङ्गोपङ्ग ग्रीर नरकगत्यानुपूर्वीकी प्रमुखतासे सन्नकर्ष जानना चाहिए।

मृलप्रतौ गीचा० जि० इति पाठः ।

१२६. तिरिक्खगदि० उक्क०िंदिवं० पंचणा०-णवदंसणा०-श्रसादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरिद-सोग-भय-दुगुंल-ओरालि०-तेजा०--क०-हुंढ०--वरण्०४--तिरिक्खाणु०-अगु०४-बाद्र-पज्जत्त-पत्तेय०-अधिरादिपंच-णिमि०-णीचागो००-पंचंत० णिय० वं० । तं तु० । एइंदि०-पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-आदाउज्जो०-अप्यसत्थ०-तस-धावर-दुस्सर० सिया० । तंतु० । एवं ओरालि०-[ओरालि०अंगो०-] तिरिक्खाणु० उज्जो० ।

१२७. मणुसगदि० उक्त०द्विदिवं० पंचणा०-णवदंसणा०-श्रसादा०-मिच्छ०-सोलसक०-श्ररदि-सोग-भय-दुर्गुं०-पंचिद्दि०[श्रोरालि०]-तेजा०-क०-श्रोरालि०श्रंगो०-वण्ण०४- श्रगु०-उप०-तस-वाद्र-पत्ते०-श्रथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंतरा० णिय० वं० चदुभागू० । इत्थिवे० सिया० । तंतु० । णुवुंस०-हुंडसं०-श्रसंपत्त०-पर०-उस्सा०-

१२६ तिर्ययमितिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पांच श्वानावरण, नो दर्शनावरण, श्रसातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसकवेद, श्ररित, शोक, भय, जुगुप्सा, श्रीदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चनत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, वादर, पर्यात, प्रत्येक शरीर, श्रस्थिर श्रादि पांच, निर्माण, नीचगोत्र श्रोर पांच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भो वन्धक होता है । यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भो वन्धक होता है । यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है । वियमसे उत्कृष्टकी श्रपेद्या श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका वन्धक होता है । एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तासरुपाटिका संहनन, श्रातप, उद्योत, श्रप्रशस्त विहायोगिति, त्रस, स्थायर श्रीर दुःस्वर इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है । यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेद्या श्रदुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार श्रीदारिक श्ररीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रीर उद्योत प्रकृतियोंकी प्रमुखतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

१२७. मनुष्यगितकी उत्कृष्ट स्थितिका यन्ध करनेवाला जीव पांच ज्ञानावरण, नी दर्शनावरण, श्रासातावेदनीय, मिध्यात्व, सोलह कपाय, श्ररति, शोक, भय, जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रोदारिक आङ्गोपाग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु, उपघात, त्रस, वादर, प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रोर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट चार भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। स्थिवेदका कदाचित् वन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रोर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपंचा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे छेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। नपुंसक वेद, हुएडसंस्थान, श्रसम्प्राप्तासुपाटिका संहनन, परवात, उच्छ्रास, श्रप्रशस्त विहायोगित, पर्यात श्रोर दुःखर इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट चार भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है।

अप्पसत्थ॰-पज्जत्त०-दुस्सर० सिया० चदुभागू०। ट्रोसंठा०-द्रोसंघ०-अपज्जत्त० सिया० संखेज्जगु०। मणुसाग्रु० णिय० वं०। णि० तं तु०। एवं मणुसाग्रु०।

१२८. देवगदि० उक्क०हिदिवं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुंगुं०-पंचिदि०-वेउव्वि०--तेजा०--क०--वेउव्वि० अंगो०--वर्गण०४--अगु०४--तस०४--णिमि०-पंचंत० णि० वं० दुभागू०। सादावे०-पुरिस०-हस्स-रिद-थिर-सुभ-जस०-सिया०। तं तु०। असादा०-अरिद-सोग-अथिर-असुभ-अजस० सिया० दुभागूणं वं०। इत्थिवे० सिया० तिभागू०। समचदु०-देवाणु०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदे०-उच्चा० णिय० वं०। तं तु०। एवं देवाणु०।

१२६. एइंदि० उक्क०द्विदि०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरिद-सोग-भय-दुगुं०--तिरिक्खगिद--ओरालिय०--तेजा०--क०--दो संस्थान, दो संहनन और अपर्याप्त इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अब-न्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणा होन स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे वन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेत्वा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसो प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१२८. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्श-नावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, चेकियिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, वैकियिक ग्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, त्रगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण श्रौर पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रुतुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। सातावेदनीय, पुरुपवेद, हास्य, रित, स्थिर, शुभ श्रीर यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रोर श्रुमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि ग्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृपकी ग्रपंता ग्रनुत्कृष्ट एक समय न्युनसं लेकर पत्यका श्रसंख्य।तवां भाग न्युन तक स्थितिका बन्धक होता है। श्रसाता चेदनीय, अर्रात, शोक, अस्थिर, अशुभ और<sup>ँ</sup> अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृप दो भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है । स्त्री वेदका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसं श्रमुत्कृष्ट तीन भाग न्यन स्थितिका बन्धक होता है। समचतुरस्र संस्थान, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रौर उचगोत्र इनका नियमसे वन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेद्या अनुत्कृष्ट नियमसे एक समय न्युनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार देवगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानेना चाहिए ।

१२६. एकेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, अरित, शोक, भय, जुगु- हुंड०--त्रएगा०४--तिरिक्खाणु०--त्रगु०४-थावर-वाद्र-पज्जत्त--पत्तेय०--त्रथिरादिपंच--गिमि०-णीचा०-पंचंत० गि० वं० | तं तु० | त्रादाउज्जो० सिया० | तं तु० | एव-मादाव-थावर० |

१३०. बीइंदि० उक्क०द्विदिवं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-भिच्छ०-संाल-सक०-णवुं स०-अरिद्-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खगिद-श्रोरालिय०--तेजा०-क०-हुं ड०-श्रोरालि०श्रंगो०--असंपत्त०-वएण०४--तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-तस--बाद्र-पत्तेय०-अधि रादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० संखेज्जिद्भागू०।पर०-उस्सा०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-वज्ज०-दुस्सर० सिया० संखेज्जिद्भागू०। अपज्जत्त० सिया०। तं तु०। एवं वीइंदि० तीइंदि०-चदुरिंदि०।

प्सा, तिर्यञ्चगति, श्रौदारिक शरीर, नैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, स्थावर, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रस्थिर आदि पाँच. निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका श्रमुंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। श्रातप श्रौर उद्योतका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टको श्रोत्ता श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पर्यका श्रमुंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार श्रातप श्रौर स्थावर प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१३०. द्वीन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानाबरण, नो दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, श्ररित, श्रोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगित, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तास्त्रपाटिका संहनन, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, त्रस, वादर, प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्रुष्ट सख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका वन्धक होता है। परघात, उच्छ्रास, उद्योत, श्रप्रशस्त विहायोगिति, वज्रपंभ नाराच संहनन श्रौर दुःस्वर इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्रुष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। श्रपर्यांन प्रश्नतिका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार द्वीन्द्रिय जातिके समान श्रीन्द्रिय श्रौर चतुरिन्द्रिय जातिकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

१३१. पंचिदियस्स उक्क०द्दिद्वं॰ पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छत्त०-सोलसक०-णवुंस०-अरिद्-सोग-भय-दुगुं०-तेना०-क०-हुंड०-वएण०४-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिराद्छि०-णिभि०-णीचा०-पंचंत० णि० वं० । तं तु० । णिरयाणु० णाणावरणभंगो । णिरयगदि-तिरिक्खगदि-ओरालि०-वेउच्वि०-दोअंगो०-असंपत्त०-दोआणु०-उज्जो० मिया० । तं तु० । एवं पंचिद्यभंगो अप्पसत्थ०-तस-दुस्सर० ।

१३२. आहारसरी० उक्क०हिदिवं० पंचणा०-छदंसणा०-सादावं०-चदुसंज०-पुरिस०-हस्स-रिद-भय-दुगुं०-देवगिद्-पंचिदि०-वेउविव०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउविव०अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि०-उच्चा०-पंचेत० णि० वं० संग्वेज्जगुणही० । आहार०अंगो० णि० वं० । तं तु० । तित्थय० सिया० संग्वेजजगुणहीणां० । एवं आहार०अंगो० ।

१३१. पञ्चेन्द्रिय ज्ञातिकी उत्कृष्ट स्थितिका यन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञान।वरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, अरित, शोक, भय, जुगुप्सा, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। तो नियमसे उत्कृष्ट की अपेत्वा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका अनंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। नरक गत्यानुपूर्वाका भक्त ज्ञानावरण्के समान है। नरकगित, तिर्यञ्चगित, औदारिक शरीर, वैकियिक शरीर, दो आक्रेणिक्त, असम्प्राप्तास्त्रपाटिका सहनन, दो आनुपूर्वा और उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भो बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भो बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेत्वा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रय जातिक समान अप्रशस्त विहायोगित, त्रस और दुःखर प्रकृतियोंकी प्रमुखतासे सिक्षकर्य जानना चाहिए।

१३२. श्राहारक शरीरकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनीय, चार संज्वलन, पुरुप वेद, हास्य, रित, भय, जुगुष्सा, देवगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, वेकियिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वेकियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपृश्ची, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, स्थिर श्रादि छह, निर्माण, उच्चगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यात गुण हीन स्थितिका बन्धक होता है। श्राहारक शरीर श्राङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भण न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थङ्कर प्रश्तिका कदाचित् वन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यात गुणहोन स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यात गुणहोन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्राहारक श्राङ्गोपाङ्गकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

१३३. एग्गोद् उक्क हिद्वं पंचणा ० - णवदंसणा ० - असादा ० - भिच्छ ० - सोलसक ० - अर्दि-सोग-भय-दुगुं ० - पंचिद् ० - ओरालि ० - तेजा ० - क० - ओरालि ० ऋंगो ० - वएण ० ४ - अपु० ४ - अप्पसत्थ ० - तस० ४ - अथिरादि छ ० - िणि म० - णीचा ० - पंचंत ० णि० वं ० संखेड जिद्देभागू ० । इत्थि० - एवं स० - तिरिक्ख ग० - मणुसग० - च दुसंघ० - दो आणु० - उज्जो ० सिया ० संखेड जिद्देभागू ० । वज्जणारा० सिया ० । तं तु० । एवं वज्जणारायण् ० । सादिय० एवं चेव । एवरि णाराय० सिया ० । तं तु० । एवं णारायणं ।

१३४. खुज्ज० उक्क०द्विदिवं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोल-सक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खगदि-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वरणा०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ० तस०४-अथिरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० वं० णि० संखेजनदिभागूणं० । दोसंघ०-उज्जोव०

१३३. न्यय्रोध परिमण्डल संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच क्वानावरण, नो दर्शनावरण, ग्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, अरति, शोक, भय, जगुप्सा, पञ्जेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्को-पाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रम चतुष्क, अस्थिर आदि छह. निर्माण, नीचगोत्र ग्रौर पाँच ग्रन्तराय इनका नियमसे बन्यक होता है जो नियमसे ग्रन-त्क्रप्र संख्यातवां भाग न्यन स्थितिका बन्धक होता है। स्त्री वेद, नप् सक वेद, तिर्यञ्जगति. मनुष्यगति, चार संहनन, दो ग्रानुपूर्वी और उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है ग्रौर कदाचित् श्रवन्यक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातयां भाग न्युन स्थितिका वन्धक होता है । वज्र नाराच संहननका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदा-चिन ग्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है ग्रौर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियम-से उत्कृष्टकी अपेत्ता अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार वज्रनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। स्वाति संस्थानको मुख्यतासे भी सन्निकर्प इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह नाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमत्कृष्ट स्थिति का भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेका श्रातत्क्रपु एक समय न्यानसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यान तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार नाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चहिए।

१३४. कुब्जक संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, अस्ति, शोक, भय, जुगुण्सा, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक शाङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो निययसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।

सिया॰ संखेजनिद्भागू० । अद्धणारा० सिया० । तं तु० । एवं अद्धणारा० । वामणसंटा० तं चेव । णवरि खीलिय० सिया० । तं तु० । असंपत्त०-उज्जो० सिया॰ संखेजनिद्भागू० । एवं खीलिय० ।

१३५. त्रोरालि॰ त्रंगो॰ उक्क॰ द्विदिवं० पंचणा०-णवदंसणा०-त्रसादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुं स०-त्रपदि-सोग-भय-दुगुं०--तिरिक्खगदि-पंचिदियजादि-त्रोरालिय०-तेजा०-क०-हुंड०-त्रसंपत्त०-वरणा०४-तिरिक्खाणु०-त्रगु०४-त्रपसत्थ०-तस०४-त्रथिरादिछ०-णिमि०-णीचागो०-पंचंत० णिय० वं०। तं तु०। उज्जो० सिया०। तं तु०। एवं त्रसंपत्त०।

१३६. वज्जरि० उक्क०द्विदिवं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-

त्रर्धनाराच संहननका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रोर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा श्रनुत्कृष्ट एक समय न्युनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग न्युन तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार श्रधंनाराच संहननकी मुख्यतासे सिन्नकर्प ज्ञानना चाहिए। वामन संस्थानकी मुख्यतासे सिन्नकर्प इसी प्रकार है। इतनी विशेषता है कि यह कीलक संहननका कदाचित् वन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रोर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेका श्रनुत्कृष्ट एक समय न्युनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग न्युन तक स्थितिका बन्धक होता है। श्रसम्प्राप्तासुपाटिका संहनन श्रीर उद्योतका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार कीलक संहननकी श्रपेक्षा सन्निकर्प ज्ञानना चाहिए।

१३५. श्रीट्रारिक श्राङ्गोपाङ्गकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञाना-वरण, नो दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसकवेद, श्ररित, श्रोक भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुग्डसंस्थान, श्रसम्प्राप्तास्पाटिका संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघ चतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, श्रस्थर श्रादि छह, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच श्रनतराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रमत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्ता श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योत प्रकृतिका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्ता श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसो प्रकार श्रसम्प्राप्तासृपाटिका संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्प ज्ञानना चाहिए।

१३६. वज्रर्पभ नाराच संहननकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञाना-

भय-दुगुं ॰-पंचिदि०-[त्रोरालि]०-तेजा०-क०-त्रोरालि॰ ग्रंगो०-वएण०४-त्रगु०४-तस० ४-िणिम०-पंचंत० णि०वं० दुभागू०। सादा०-पुरिस०-हस्स-रदि-समचदु०-पसत्थ०-थिरादिद्य०-उचा० सिया०। तं तु०। त्रसादा०-णवुंस०-त्रादि-सोग-तिरिक्खग०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-त्रप्पसत्थ०-त्रथिरादिद्य०-णीचागो० सिया०दुभागू०। इत्थि०-मणुसग०-मणुसाणु० सिया०तिभागू०। चदुसंठा० सिया संखेज्जदिभागू०वंधदि।

१३७. सुहुम० उक्क०द्विदिवं० पंचेणा०-णवटंसणा०-त्र्यसादा०-मिच्छे०-सोल-सक ७- एवं सग ०- ऋरदि-सोग-भय-दुगुं ०-तिरिक्खगदि--एइंदिय ०-- ऋोरालि ०--तेजा ०--क॰-त्रोरालि॰-हुं इसं०-वएए।०४-तिरिक्खाग्र०-त्रगु॰ ४-उप॰-थावर-त्रथिरादिपंच-श्चिमि०-शीचा०-पंचंत० शि० वं० संखेजनिदेभाग० । पर०-उस्सा०-पज्जत्त-पत्तेग० सिया० संखेज्जदिभागृ० । ऋपज्जत्त-साधारण० सिया० । तंतु० । एवं साधारण० । वरण. नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुरक, श्रगुरुलघु चतुरक, त्रस चतुष्क, निर्माण श्रौर पाँच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे त्रानुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, पुरुषवेद, हास्य, रित, समचतुरस्य संस्थान, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर ब्रादि छह ग्रीर उद्यगीत्र इनका कदाचित बन्धक होता है ग्रीर कदाचित् ग्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रोर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्ता श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। श्रसाता चेदनीय, नपुंसकचेद, ग्ररति, शोक, तिर्यञ्चगति, हुण्ड संस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी उद्योत, ग्रवशस्त विहायोगित, त्रस्थिर क्रादि छह ग्रीर नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है ग्रीर कदाचित् ग्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। स्त्रीवेद, मनुष्य गति श्रौर मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट तीन भागन्यन स्थितिका बन्धक होता है । चार संस्थानका कदाचित बन्धक होता है और कदाचित श्रवन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यन स्थितिका वन्धक होता है।

१३७. मृत्मकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, ग्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसकवेद, श्ररित, शोक, भय, जुगुण्सा, तिर्यञ्चगित, एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, उपघात, स्थावर, श्रस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रोर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। परघात, उच्छ्रास, पर्याप्त श्रोर प्रत्येक इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। श्रपर्याप्त श्रौर साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्की श्रपंता श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार साधारण प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

१३८. अपज्ञत्त० उक्क०द्विद्विं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छत्त-सोलसक०-णवुंस०-अर्राद-सोग--भय--दुगुं०--तिरिक्खग०--ओरालि०--तेजा०--क०--हुंडसं०-वएण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०--अधिरादिपंच--िणिमि०--णीचा०--पंचंत० णिय० वं० संखेज्जदिभागू०। एइंदि०-पंचिदि०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-तस-थावर-वादर-प्रचेय० सिया० संखेज्जदिभागू०। तिरिणजादि-मुहुप-साधारणं सिया०। तं तु०।

१३६. थिर॰ उक्क०द्विद्विं॰ पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-वर्गण०४-अगु॰४-पज्जत्त-गिमि०-पंचंत० गि० वं० दुभागू० । सादा०-पुरिस०-हस्स-रिद्-देवगदि-समचदु०-वज्जरिस०-देवाणु०-पसत्थ०-सुभादि-पंच०-उचा० सिया० । तं तु० । असाद०-णवुंस-अरिद्-सोग-तिरिक्खगदि-एइंदि०-पंचिदि०-ओरालिय०-वेउिव्वय०-हुंडसं०-दोअंगो०-असंपत्त०-निरिक्खाणु०-आदा-

१३८. श्रपर्याप्त प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पांच ज्ञानावरण, नी दर्शनावरण, श्रसातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुं सकवेद, श्ररित, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्च गति, श्रोदारिकशरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, हुग्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, श्रस्थिर श्राद् पाँच, निर्माण, नीच गोत्र श्रोर पांच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थिति का बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राधास्प्पाटिका संहनन, त्रस, स्थावर, वादर श्रोर प्रत्येक इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। तीन जाति, सृक्ष्म श्रोर साधारण इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है, यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेज्ञा श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है।

१३६. स्थिर प्रशृतिकी उन्हाए स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नी दर्शनावरण, मिध्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतु एक, श्रमुरुलघु चतुष्क, पर्याप्त, निर्माण श्रोर पाँच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुन्हाए दो भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। साता वेदनीय पुरुपवेद, हास्य, रित, देवगित, समचतुरस्र संस्थान, वज्जपभनाराच संहनन, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगित, श्रम श्रादि पाँच श्रोर उच्चगांत्र इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्हाए स्थितिका भी वन्धक होता है श्रोर अनुन्हिए स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रनुत्हाए स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्हाएकी श्रपेचा श्रनुत्हाए एक समय न्यून से लेकर पत्थका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। श्रसाता वेदनीय, नपुंसकवेद, श्ररित, शोक, तिर्यञ्चगित, एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, विक्रियिक शरीर, हण्ड संस्थान, दो श्राक्षीपक्क, श्रसम्प्राप्तास्पाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रावप, उद्योत, श्रप्रशस्त विहायो-

उज्जो ०-- ऋष्पसत्थ ० -- तस-- थावर -- वादर-- पत्तेय ० -- ऋसुभादिपंच -- णीचा ० सिया ० दुभागू ० । इत्थि ० - मणुसगदि- मणुसाणु ० सिया ० तिभागू ० । तिणिणजादि-चदुसंठा ० - चदुसंघ ० - सुहुम-साधार ० सिया ० संखेज्जदिभागू ० । एवं सुभ-जस ० । एविरे अजस ० - सुहुम-साधारणं वज्ज ।

१४०. तित्थय० उक्क०द्दिदिवं० पंचणा०-छदंसणा०-ऋसादा०-वारसक०-पुरिस०-ऋरदि-सोग-भय-दुगुं०-देवगदि-पंचिदि०--वेउव्वि०--तेजा०--क०---समचदु०--वउव्वि०ऋंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-ऋगु०४-पसत्थ०-तस०४--ऋथिर--ऋसुभ--सुभग---मुस्सर-ऋदि०-ऋजस०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० वं० णि० संवेऽजगुणही०। उच्चा० पुरिसवेदभंगो। णवरि तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जोवं वज्ज।

१४१. त्रादेसेण रोरइएस त्राभिणिवोधियणाणा० उक्क०हिदिवं० चदुणा०-णवदंसणा०-त्रसादा०-मिच्छ०-सोलसक०-एावुंस०-त्ररदि--सोग--भय-दुगुं०--तिरि--क्यादि--पंचिदि०--त्रोरालि०--तेजा०--क०--हुंड०--त्रोरालि०त्रंगो०--न्त्रसंपत्त०---

गित, त्रस स्थावर, वादर, पर्याप्त, श्रद्युभ श्रादि पाँच श्रीर नीचगोत्र इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रमु-त्रुष्ट दो भाग न्यृन स्थितिका वन्धक होता है। स्त्रीयेद, मनुष्यगित श्रीर मनुष्य गत्यानुपूर्वी इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्रुष्ट तीन भाग न्यृन स्थितिका वन्धक होता है। तीन जाति, चार संस्थान, चार संहनन, सृक्षम श्रीर साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्रुष्ट संख्यातवां भाग न्यृन स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार शुभ श्रीर यदाःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रयशःकीर्ति, सृक्ष्म श्रीर साधारण इन प्रकृतियोंको छोड़ कर यह सन्निकर्ष कहना चाहिए।

१४०. तीर्थक्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पाँच श्वानावरण, छह दर्शनावरण, ग्रसाता वेदनीय, वारह कपाय, पुरुप वेद, ग्ररित, शोक, मय, जुगुल्सा, देव-गित, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैकियिक ग्राङ्गोत्वाक्ष, वर्ण चतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, ग्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, त्रस चतुष्क, ग्रस्थिर, ग्रशुभ, सुभग, सुस्वर, ग्रादेय, ग्रयशःकीर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र ग्रीर पाँच ग्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका वन्धक होता है। उच्चगोत्रका भङ्ग पुरुपवेदके समान है। इतनी विशेषता है कि इसके तिर्यञ्चगित, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी ग्रीर उद्योत इन तीन प्रकृतियोंको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

१४१. त्रादेशसे नारिकयोंमें त्राभिनिवोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, श्ररित, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तेंजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्रापास्प्रपाटिका संह-

१. मूलप्रतौ खर्वार जस० इति पाठः।

वएए। ४-तिरिक्ताणु ०-त्रमु ०४-त्रप्पसत्थ ० – तस ०४ - त्रिथराद्ञ् ० - एिम ० - एपि ० - ए

१४२. सादा० उक्क॰ द्विदिवं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगं०-पंचिदि०-स्रोरालि०-तेजा०-क०-स्रोरालि०स्रंगो०-वएण०४--स्रगु०४-तस०४--णिमि०-पंचंत०णि० वं० णि० दुभागू०। इत्थि०-मणुसगदि०-मणुमाणु० सिया० वं० तिभागू०। णवुंस०-स्राद-सोग-तिरिक्षगदि-हुंड०--स्रसंपत्त०--तिरिक्खाणु०--उज्जो०-स्रप्पसत्थ०-स्रिशादिछ०-णीचा० सिया० दुभागू०। पुरिस०-हस्स-रदि-समचदु०-वज्जरि०-पसत्थ०-थिरादिछ०-उच्चा० सिया०। तं तु०। चदुसंटा०-चदु-

नन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह, निर्माण, नीचगोत्र श्रोर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है । यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है । यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है । यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है । विवाससे उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है । उद्योतका कदाचित् वन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है । यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है । यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है । इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । श्रोर ऐसी श्रवस्थामं यह उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है । यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां माग न्यूनतक स्थितिका वन्धक होता है ।

९४२. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक त्राङ्गोषाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुः ष्क, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है स्त्रीवंद, मनुष्यगित श्रौर मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियम से अनुन्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। नपुंसकवेद, अर्रात, शांक, तिर्यञ्च-गति, हुएड संस्थान, असम्प्राप्तास्पाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्यात, अप्रशम विहा-योगति, श्रस्थिर श्रादि छह श्रीर नीचगीत्र इनका कदाचित् यन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुतकृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। पुरुपवेद, हास्य, रति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्पभ नाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, स्थिर ग्रादि छह ग्रीर उच्चगोत्र इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेता अनुत्कृष्ट एक समय न्युनसे लेकर पत्यका असंख्यातयाँ भाग न्युन तक स्थितिका बन्धक होता है। चार संस्थान श्रीर चार संहतनका कदाचित बन्धक

संघ० सिया॰ संखेजनिद्भागू॰। एवं सादभंगो पुरिस०-हस्स-रदि-समचदु०-वजनरि०-पसत्थ०-थिरादिछ॰।

१४३. इत्थि० उक्क०द्विदिवं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादावे०-भिच्छ०-सोलसक०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वणण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० वं० चदुभागू० । तिरिक्खगदि-हुंड०-असंपत्त०--तिरिक्खाणु०--उज्जो० सिया० चदुभागू० । मणुसग०-मणुसाणु० सिया० । तं तु० । दोसंठा०-दोसंघ०--सियो० संखेडजदिभागू० ।

१४४. तिरिक्खायु० उक्क ब्रिटिवं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०--तिरिक्खगिद्--पंचिदियजािद्---ग्रोरािल०--तेजा०--क०--त्रोरािल०ग्रंगो०--वणण ४-तिरिक्खाणु०-त्रगु०४-तस०४-णिमि०-णीचा०-पंचत० णि० वं० संखेज्ज-गुणही० । सादावे०-ग्रसादावे०-सत्तराोक०-छस्संग्र०-छस्संग्र०-उज्जो०-दोिवहा०-

होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार साता प्रकृतिके समान पुरुष वेद, हास्य, रित, समचतुरस्र संस्थान, वज्रपंभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित और स्थिर आदि छहकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१८३. स्त्री वेदकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, अरित, शोक, भय जुगुण्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचनुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चनुष्क, अश्रशस्त विहायोगिति, त्रस चनुष्क, श्रस्थिर आदि स्त्रह, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रमुत्स्य चार भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। तिर्यञ्चगित, हुएड संस्थान, श्रसम्प्राप्ता स्पाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रौर उद्योत इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट चार भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। दो संस्थान श्रौर दो संहननका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है।

१४४. तिर्यञ्चायुकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्श-नावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुष्सा, तिर्यञ्चगित, पञ्चेन्द्रिय ज्ञाति, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। साता चेदनीय, श्रसाता चेदनीय, सात नोकषाय, छह संस्थान, छह संहनन, उद्योत, दो विहायोगित श्रौर स्थिर थिरादिछ० सिया० संखेजनगुणही०।

१४५. मणुसायु० उक्क०द्विद्विं० पंचणा०-छ्रदंसणा०-बारसक०-भय-दुरगुं०-मणुसर्गाद-पंचिदि०-च्योरालि०--तेजा०-क०--च्योरालि०च्यंगो०--वर्गण०४--मणुसाणु०-च्यगु०४-तस०४-णिमि०-पंचेत० णि॰ वं० संखेजजगुणही० । थीणगिद्धितिग-सादा-साद०-मिच्छ०-च्यणंताणुवंधि०४-सत्तर्णोक०-छ्रम्संटा०-छस्संघ०--दोविहा०--थिरादि--छ्युग०-तित्थय०-णीचुचा० सिया० संखेजजगुणही० ।

१४६. मणुसगदि० उक्त०हिद्विं० ग्रोघं । एवरि ग्रपज्ञत्तं वज्ज । चदुसंठा०-चदुसंघ०-तित्थय० ग्रोघं । एवरि तित्थयरं मणुसगद्सिंजुत्तं संखेज्जगुणहीएं काद्व्वं ।

१४७. एवं सत्तमु पुढवीमु । एवरि सत्तमाए मणुसग्०-मणुसाणु०-उचा० तित्थयरभंगो । सादादिपसन्थात्रो इत्थिवे०-पुरिस०-हम्स-रदि-दोणिणसंठा-दोणिण-संघडए० णिय० तिरिक्खगदिसंजुत्तात्रो सणिणयासे साधेद्व्वात्रो भवंति ।

१४८. तिरिक्ष्वेमु आभिणियोधि० उक्क०द्विदि०वं० चदुणाणा०-णवदंस०-असाद०-भिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-णिरयगदि-पंचिदि०-

आदि छह इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्रुष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका वन्धक होता है।

१४५. मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कपाय, भय, जुगुष्सा, मनुष्यगित, पञ्चेन्द्रिय जाित, श्रीदािरक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदािरक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण श्रीर पांच श्रन्तराय इनका नियमसं बन्धक होता है जो नियम से श्रनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका वन्धक होता है। स्त्यानगृद्धि तीन, साता वेदनीय, श्रमाता वेदनीय, मिथ्यात्व, श्रनन्तानुबन्धी चार, सात नोकपाय, छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगित, स्थिर श्रादि छह युगल, तीर्थेङ्गर, नोचगोत्र श्रीर उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है।

१४६. मनुष्यगितकी उत्हाप्ट स्थितिका वन्ध करनेवाले जीवका सन्निकर्प श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रपर्याप्त प्रकृतिको छोड़कर सन्निकर्प कहना चाहिए। चार संस्थान, चार संहनन श्रोर तीर्थद्वर प्रकृतिकी मुख्यतास सन्निकर्प श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगित संयुक्त तीर्थद्वर प्रकृतिको संख्यातगुणा होन करना चाहिए।

१४७. इसी प्रकार सातों पृथिवियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सातवीं पृथिवीमें मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी ग्रीर उच्चगोत्रका भङ्ग तीर्थद्भर प्रकृतिके समान है। तथा साता ग्रादि प्रशस्त प्रकृतियाँ, स्त्रीवेद, पुरुपवेद, हास्य, रित, दो संस्थान ग्रीर दो संहनन इन प्रकृतियोंको सन्निकर्पमें निमयसे तिर्थञ्जगित संयुक्त ही साधना चाहिए।

१४८. तिर्यञ्चोंमें ग्राभिनियोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, ग्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, ग्ररति, शोक, भय, जुगुष्सा, नरकगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तैजस शरीर,

वेउन्त्रिय-तेजा॰-क॰-हुंड०-वेउन्त्रि॰ श्रंगो॰--वएए।०४-एिरयाणु०-ऋगु॰-ऋपसत्य०-तस॰४-ऋथिरादिछ॰-णिमि०-णीचा०-पंचंत॰ णिय० वं० | तं तु० | णिरयायु॰ सिया० | यदि० णि० उक्कस्सा | आवाधा पुण भयणिज्जा | एवमेदाश्रो एकमेक्कस्स | तं तु० |

१४६. सादावे॰ उक्क०ढिदिवं० य्रोघं। एविर तिरिक्खगदि--चढुजादि--त्रोरालि०-चढुसंठा०-त्रोरालि०य्रंगो०-पंचसंघ०-तिरिक्खाणु०-त्रादाउज्जो०--थावर--मुहुम-त्र्यपज्जत्त-साधार० सिया० संस्वेज्जदिभागू०। एवं हम्स-रदीएं।

१५०. इत्थिवे॰ उक्क॰ द्विदिवं॰ श्रोघं । एविरि तिरिक्खगदि-दोसंठा०-तिएए-संघ०-तिरिक्खाणु०-उज्जो० सिया० संखेज्जदिभागु॰ । श्रोरालि॰ श्रोरालि० श्रंगो० ए। वं॰ संखेज्जदिभागु० ।

१५१. पुरिस॰ उक्क ० दिदिवं० श्रोघं। एवरि तिरिक्खग०-श्रोरालि०-चद्-

कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, चैकियिक श्राङ्गोणाङ्ग, वर्ण चतुष्क, नरक गत्यानुपूर्ची, श्रागुरुलघु, अप्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह, निर्माण, नीचगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेचा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रमंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका वन्धक होता है। नरकायुका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। परन्तु श्रावाधा भजनीय है। इसी प्रकार इन सब प्रश्वतियोंकी मुख्यतासे सन्तिकर्प जानना चाहिए। किन्तु तब वह उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रमंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है।

१४९.. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगित, चार जाति, श्रौदारिक शरीर, चार संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, पाँच संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रातप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म, श्रपयीप्त श्रौर साधारण इनका कदाचित् वन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग होन स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार हास्य श्रौर रितकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

१५०. स्त्रीवेदकी उत्हाए स्थितिका वन्ध करनेवाले जीवकी अपेन्ना सिनकर्ष श्रीमिके समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगति, दो संस्थान, तीन संहनन, तिर्यञ्चगत्यानु पूर्वी और उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुत्हाए संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। श्रीदारिक शरीर और औदारिक शाक्षोपाङ्ग इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्हाए संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।

१४१. पुरुषचेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवकी अपेत्ता सन्निकर्प श्रोधके समान है। इतनो विशेषता है कि तिर्यञ्च गति, श्रीदारिक शरीर, चार संस्थान, श्रीदारिक

संठा॰-ञ्चोरात्ति॰ त्रंगो॰-पंचसंघ०-तिरिक्खाणु०-उङ्जो॰ सिया० संखेज्जिदिभागू० । एवं पुरिसभंगो समचदु॰--वज्जिंग०--पसत्थ०--सुभग--सुस्सर--त्र्रादेज्ज० । त्रायु॰ त्रोघं ।

१५२. तिरिक्त्वगः उक्कः हिद्विं पंचणाः -णवदंसणाः -श्रसादाः -भिन्छः -सोलसकः -णवुं सः -अरिद-सोग-भय-दुगुं - स्रोरालियः -तेजाः -कः -हुं डः -वरणः ४-श्रगः ४-उप०-अधिराद्विंच-िणिमः -णीचाः -पंचंतः णि० वं संखडजिद्भागः । चदुजादि--वामणसंटाः -श्रोरालिः श्रंगोः --स्वीलियसंघः -श्रसंपत्तः -श्रादाउडजोः --थावरादिः ४ सियाः । तं तुः । पंचिद्य-परः -उस्साः -श्रप्सत्थः -तसः ४ -दुस्सरः सियाः संखडजिद्भागः । तिरिक्खाणः णिः वं । तं तुः । तिरिक्खगदीए सह तं तुः पदिदाणं णामाणं हेद्वा उविर निरिक्खगदिभंगो । णामाणं सत्थाणभंगो ।

त्राङ्गोपाङ्ग, पाँच संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रौर उद्योत इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातयाँ भागहीन स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार पुरुपवेदके समान समचतुरस्य संस्थान, वर्ज्ञपभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुखर श्रौर श्रादेय इन प्रकृतियोंकी सुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। आयुकी श्रपेचा सन्निकर्प श्रोधके समान है।

१५२. तिर्यञ्चगतिको उत्कृष्ट स्थितिक। यन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण्, श्रसाता वंदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वंद, अरति, शोक, भय, जुगुष्सा, ग्रोदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, ग्रगुरु-लघु चतुष्क, उपघात, ग्रस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रोर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रवत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। चार जाति, वामन संस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, कोलक संहनन, श्रसम्प्राप्तास्-पाटिका सहनन, त्रातप, उद्योत त्रौर स्थावर आदि चार इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् त्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है ग्रौर श्रनुत्रुष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रनुत्रुष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेता अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका असख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, परघात, उच्छास, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क ग्रीर दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है ग्रीर कदाचित् श्रवन्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यन स्थितिका वन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वाका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्क्रप्रकी श्रपंत्रा श्रमुत्कृप्ट एक समय न्यूनसे लेकर पर्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। यहाँ तिर्यञ्चगतिके साथ 'तं तु॰' रूपसे नाम कर्मकी प्रकृतियोंके आगे पोछेकी जितनी प्रकृतियाँ गिनाई गई हैं उनके सन्ति-कर्षका भङ्ग तिर्यञ्चगति प्रकृतिके सन्निकर्षके समान है। तथा नामकर्मकी प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सस्थानके समान है।

१५२. मणुसगिददुग॰ उक्त०द्विदिवं॰ स्रोघं । एवरि स्रोरालिय०-स्रोरालिय-स्रंगो० णिय० वं० संखेडजिदभागू० । खुडजसं०-वामणसंठा०-तिणिणसंघ०-स्रपडजत्त० सिया० संखेडजिदभागू० ।

१५४, देवगदिदुग० उक्क०द्विदिबं० श्रोघं । ग्रागोद० सादि० खुज्जसं०-वज्जणा०-णाराय० श्रद्धणारा० श्रोघं ।

१५५. थिर० उक्त० दिविं श्रोयं । एवरि तिरिक्खगदि-चदुजादि-श्रोरालि॰-चदुसंठा०-श्रोरालि॰ श्रंगो॰-चदुसंघ०-तिरिक्खाणु०-श्राद्उज्जो॰-थावर-सहुम-साधा-रण्० सिया० संखेज्जदिभागू० । एवं सुभ-जस० । एवरि जसगित्तीए सुहुम-साधारणं वज्ज । एवमेसभंगो पंचिदियतिरिक्ख-पंचिदियतिरिक्खपज्जत्त-जोणिएगिसु ।

१५६. पंचिदियतिरिक्खअपज्जत्तगेसु आभिणिबोधि॰ उक्क०द्दिदिबं० चदुणा॰-णवदंसणा॰ -असादा॰-भिच्छ०-सोलसक०-णवुं स०-अरिद-सोग--भय--दुगुं०--तिरि-क्खर्गाद-एइंदि॰-ओरालि॰-तेजा॰-क०-हुंड॰-वएण०४--तिरिक्खाणु॰-अगु॰--उप॰--

१४३ मनुष्यगतिद्विककी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाले जीवकी अपेता सन्निकर्प ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि यह औदारिक शरीर और औदारिक आङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। कुष्जक संस्थान, वामन संस्थान, तीन संहनन और अपर्याप्त इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है।

१५४. देवगतिद्विककी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाले जीवका सन्निकर्प श्रोघके समान हैं । न्यग्रोध परिमण्डल संस्थान, स्पोति संस्थान, कुब्जक संस्थान, वजूनाराच सह-नन, नाराच संहनन श्रोर श्रर्धनाराच संहननकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाले जीवका सन्निकर्प श्रोघके समान है ।

१४४. स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाले जीवका सन्निकर्प श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगित, चार जाति, श्रोदारिक शरीर, चार संस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गोपङ्ग, चार संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रातप, उद्योत, स्थावर, स्दम और साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संस्थातवाँ भाग होन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शुभ श्रोर यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्प कहते समय सदम श्रोर साधारणको छोड़कर सन्निकर्प कहना चाहिए। इसी प्रकार यह सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्त श्रोर पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्त श्रोर पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनी जीवोंके जानना चाहिए।

१४६. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्याप्त जीवोंमें श्राभिनियोधिक श्रानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार श्रानावरण, मौ दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, श्रग्ति, शोक, भय, जुगुष्सा, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, स्थावर श्रादि चार, श्रस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नीच-

थावरादि०४-अथिरादिपंच-िणमि०-णीचा०-पंचंत० िणय० वं० । तं तु० । एवमे-दाओ एकमेकस्स । तं तु० ।

१५७. सादा॰ उक्क०द्विदिवं० पंचणा॰-णवदंसणा॰-मिच्छ॰-सोलसक०-णवुंस॰-भय-दुगुं०-तिरिक्त्वगिद-एइंदि०--स्रोरालि०--तेजा०-क०--हुंड०--वण्ण०४--तिरिक्त्वाणु०-स्रगु०-उप॰-थावरादि०४-स्रथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णिय० वं० संत्वेज्जदिभागू०। हस्स-रदि० सिया०। तं तु०। स्ररदि-सोग० सिया० संज्जदिभागू०। एवं हस्स-रदीणं।

१५८. इत्थिवे॰ उक्क॰िंदिवं॰ पंचणा॰ णवदंसणा॰-मिच्छ०-सोलसक॰-भय-दुंगु॰-पंचिदि॰-छोरालि॰-तेजा०-क०---छोरालि॰छंगो०--वण्ण॰--४ग्रगु०४--ग्रप्प--सत्थ०-तस०४-दूभग-दुस्सर-ग्रणादे॰-णिमि॰-णीचा०-पंचंत॰ णि॰ संखेज्जदि-भागूणं॰ । सादासाद॰-हस्स-रदि-छारदि-सोग-तिरिक्खगदि-मणुसगदि-तिण्णिसंटा०-

गोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो उत्कृष्टकी श्रवेक्षा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इन सवका परस्पर सन्निकर्प जानना चाहिए। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी श्रपेक्षा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है।

१४७. साता प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नी दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सेलह कषाय, नपुं सक वंद, भय, जुगुण्सा, तिर्यञ्चगित, एकेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएह संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, स्थावर श्रादि चार, श्रस्थर श्रादि पाँच, निर्माण, नीच गोत्र श्रीर पाँच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। हास्य श्रोर रितका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टभी श्रपेक्षा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। श्ररित श्रोर शोकका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। दर्सा प्रकार हास्य श्रीर रितको मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

१५८. स्त्रीवंदकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, संालह कषाय, भय, जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, श्रग्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, दुर्भग, दुःस्वर, श्रनादेय, निर्माण, नीचगोत्र श्रोर पांच श्रन्तराय इनका नियमसं बन्धक होता है जो नियमसं श्रनुत्रुष्ट संख्यातवां भागहीन स्थितिका वन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रसाता वेदनीय, हास्य, रित, अरित, शोक, तिर्यञ्चगित, मनुष्य

तिरिणसंघ०-दोत्र्याणु॰-थिराथिर-सुभासुभ-जस॰-त्र्यजस० सिया॰ संखेज्जदिभागू० । उज्जो॰ सिया० संखेज्जदिभागू० ।

१५६. पुरिस॰ उक्क०द्विदिंबं॰ पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भयदृगुं॰ -पंचिदि०-स्रोरालि०-तेजा०-क०-स्रोरालि०स्रंगो०-व्यण्०४-स्रगु॰४--तस०४णिमि॰-पंचंत० णि० वं० संखेज्जदिभागू० । सादासाद०-हस्स-रिद-स्ररिद-सोगतिरिक्खगदि-मणुसगदि-पंचसंटा०-पंचसंघ०-दोन्नाणु०--उज्जो०--थिराथिर--सुभासुभ-दूभग-दुस्सर-स्रणादेज्ज-जस०-स्रजस०-णीचा० सिया० संखेज्जदिभागू० । समचदुर०-वज्जरि०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-स्रादे०-उच्चा० सिया० । तं तु०। एवं पुरिसवदभंगो समचदु०--वज्जरिस०--पसत्थ०-सुभग--सुस्सर--स्रादे०--उच्चा० । णवरि
उच्चागो०-तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-उज्जो० वज्ज ।

१६०. तिरिक्ख-मणुसायु० णिरयभंगो । एवरि संखेज्जदिभागूणं वं० ।

गित, तीन संस्थान, तीन संहनन, दो श्रानुपूर्वी, स्थिर, श्रास्थिर, श्राम, श्रश्रम, यशःकीर्ति श्रीर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है।

१५६. पुरुषवेदकी उत्क्रप्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक ब्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, ब्रग्रुरुलघुचतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण श्रीर पांच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। साताबेदनीय, श्रसाताबेदनीय, हास्य, रित, श्ररित, शोक,तिर्यञ्चगति,मनुष्यगति,पांच संस्थान,पांच संहनन,दो त्रानुपूर्वा, उद्योत,स्थिर, ग्रस्थिर, शुभ, त्रशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, श्रनादेय, यशःकीर्ति, त्रयशःकीर्ति त्रौर नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका वन्धक होता है। समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्पभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, ग्रादेय ग्रीर उद्यगात्र इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्क्रप्रकी अपेत्ता अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार पुरुषवेदके समान समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्पभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, त्रादेय श्रौर उच्चगोत्र की मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उच्चगोत्रकी श्रपंत्रा सन्नि-कर्ष कहते समय तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योत इनको छोड़कर सन्निकर्प कहना चाहिए।

१६० तिर्यञ्चायु श्रोर मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष नरकके समान है। इतनी विशेषता है कि यहां संख्यातवां भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है।

- १६१. मणुसगदि॰ उक्क०िंदिवं॰ पंचणा॰-णवदंसणा॰-मिच्छ॰-सोलसक॰-णवुंस॰-भय-दुगुं०-पंचिदि॰-श्रोरालि०-तेजा॰--क॰-हुंड॰--श्रोरालि०श्रंगो॰--श्रसं-पत्त०-वण्ण०४-श्रगु०-उप॰-तस-बाद्र-पज्जत्त-पत्तेय०-श्रथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णिय० वं० संखेज्जिदिभागू॰। सादासाद॰-हस्स-रिद-श्ररिद-सोग० सिया॰ संखेजिदिभागू०। मणुसाणु० णि॰ वं०। तं तु०। एवं मणुसाणु॰।
- १६२. बीइंदि० उक्क॰ द्विदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दुगुं०-तिरिक्लग०-स्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०--वएण०४-तिरि-क्लाणु०-स्रगु०-उप०-बादर-स्रपज्जत्त-पत्ते०-स्रथिरादिपंच--िएमि०--णीचा०--पंचंतरा० णि० बं० संखेज्जदिभागू०। सादासाद०-इस्स-रिद-स्ररिद-सोग० सिया० संखेज्जदि-भागू०। स्रोरालि०स्रंगो०-स्रसंपत्त०-तस० णि० वं०। तं तु०। एवं स्रोरालि०-स्रंगो०-स्रसंपत्त०-तस० ति।
- १६१. मनुष्यगितकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वंद, भय, जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुगड संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तास्पाटिका संहनन, वर्ण चतुष्क, श्रगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नोचगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग होन स्थितिका वन्धक होता है। साता वंदनीय, श्रसता वंदनीय, हास्य, रित, श्ररित श्रीर शोक इनका कदाचित् वन्धक होता है। साता वंदनीय, श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग होन स्थितिका वन्धक होता है। मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। मनुष्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्ता श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सिक्षकर्प जानना चाहिए।
- १६२. द्वीन्द्रिय जातिको उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिश्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगित, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुष्वी, अगुरुलघु, उपघात, वाद्र, श्रप्यांत, प्रत्येक शरीर, श्रस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रमाता वेदनीय, हास्य, रित, श्ररित श्रीर श्रोक इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका वन्धक होता है। श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्रातास्पादिका संहनन श्रीर त्रस इनका नियमसे वन्धक होता है। श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्रातास्पादिका संहनन श्रीर त्रस इनका नियमसे वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्वा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यात्वां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्रात्वां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्रात्वां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्रात्वां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्रात्वां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रीदारिक ज्ञाङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्रात्वां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रीदारिक ज्ञाङ्गोपाङ्ग ।

१६३. तीइंदि०-चदुरिं०-पंचिंदि० उक्त०द्विदिवं० तं चेव । एवरि श्रोरालि०-श्रंगो०-श्रसंपत्त०-तस० एा० वं० संखेजिदिभाग्० ।

१६४. ग्रागोद० उक्क०हिदिबं॰ पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिदि०-छोरालि०-तेजा०-क०-छोरालि०छंगो०-वएण०४--अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-दूभग-दुस्सर-अणादेज्ज-ग्रिमि०-णीचा०-पंचतरा० णि० वं० संखेज्जदिभागू०। सादासादा०-इत्थि०-णवुंस०-हस्स-रिद-अरिद-सोग-तिरिक्खगदि-मणुसगदि-चदुसंघ०-दोश्राणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० संखेज्जदिभागू०। वज्जणारा० सिया०। तं तु०। एवं वज्जणारा०। सादिय० एवं० चेव। एवरि ग्रारायणं सिया०। तं तु०। एवं णारायणं।

१६५. खुज्ज॰ डक्क॰ द्विदिवं॰ पंचणा०-णवदंसणा॰-मिच्छ॰-सोलसक०-णवुंस०-भय--दुगुं०--पंचिंदि॰--ग्रोरालि॰--तेजा०-क०--ग्रोरालि॰ ग्रंगो॰--वण्ण॰ ४--

१६३. त्रीन्द्रिय जाति, चतुरिन्द्रिय जाति और पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवके सन्निकर्ष इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि औदा-रिक ग्राङ्गोपाङ्ग, ग्रसम्ब्राप्तास्पाटिका संहनन और त्रस इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवां भाग होन स्थितिका वन्धक होता है।

१६४. न्यब्रोध परिमण्डल संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच क्षानावरण, नौ दर्शनावरण, निथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदा-रिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क श्रप्रशस्त विद्यायोगति, त्रस चतुष्क, दुर्भग, दुःम्बर, श्रनादेय, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका वन्धक होता है । साता वेदनीय, श्रसाता वेदनीय, स्त्रीवेद, नपुंसक वेद, हास्य, रित, ग्रारित, शोक, निर्यञ्चगित, मनुष्यगित, चार संहनन, दो त्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर श्रस्थिर, श्रभ, श्रश्रभ, यशःकीर्ति श्रौर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् ग्रबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे ग्रमुत्कप्ट संख्यातवां भाग न्यन स्थितिका वन्धक होता है। वज्रनाराच संहननका कदाचित् वन्धक होता है श्रौ कदाचित् ग्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक हाता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेक्षा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पल्यका श्रसंख्या तवाँ भाग न्यून तकस्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार नाराच संहननकी मुख्यतांस सिन्न-कर्प जानना चाहिए। म्वाति संस्थानकी मुख्यतासे सन्निकर्प इसी प्रकार है। इतनी विशे-पता है कि यह नाराच संहननका कदाचित वन्धक होता है। श्रौर कदाचित। श्रवन्धक होता। है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। ग्रौर ग्रनुन्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा त्रजुत्कृष्ट एक समय न्युनसे लेकर पत्यका त्रसंख्यातवां भाग न्युन तक स्थितिका वन्धक होता है । इसी प्रकार नाराच सहननकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए ।

१६४. कुटजक संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुण्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राह्म, वर्ण चतुरक, श्रगुरुक्षप्र

त्रगु०४-त्रापसत्थ०-तस०४-दूभग-दुस्सर-त्राणादे०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० वं० संखेजनिद्भागूणं० । सादासाद०-हस्स-रिद-त्रिग्रदि--सोग-तिरिक्खगिद--मणुसगिद--दोसंघ०-दोत्राणु०-उज्नो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०--त्रजनस० सिया० संखेज्जिद-भागू०। त्राद्धणारायणं सिया०। तं तु०। एवं त्राद्धणारायणं। वामणसंटाणं पि एवं चेव। णवरि खीलिय० सिया०। तं तु०। एवं खीलिय०।

१६६. पर० उक्क०द्विदिवं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दुगुं०-तिरिक्खगदि-एइंदि०-श्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वग्ण०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०-उप०-थावर-सुहुम-साधारण--दूभग--श्रणादे०-श्रज०--णिमि०--णीचा०-पंचंत० णि० वं० संखेजिदिभागू०। सादासाद०-हस्स-रिद्-श्ररिद्-सोग-श्रथिर-श्रसुभ० सिया० संखेजिदिभागू०। पज्जत्त-उस्सा० णि० वं०। तं तु०। थिर०-सुह सिया०।

चतुष्क, श्रद्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, दुर्भग, दुःखर, श्रनादेय, निर्माण, नीचगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यन स्थितिका वन्धक होता है। साता वेदनीय, ग्रसाता वेदनीय, हास्य, रति, ग्ररित, शोक, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, दो संहनन, दो ग्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, ग्रस्थिर, ग्रुभ, अञ्चम, यशःकीर्ति श्रौर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित वन्धक होता है श्रौर कदाचित श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रवन्कुए संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। अर्थनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियम से उत्क्रप्रकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अर्धनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। वामन संस्थानको मुख्यतासे सन्निकर्प इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह कीलक संहतनका कदाचित यन्धक होता है और कदाचित अबन्धक होता है । यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भीवन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपना श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यन तक स्थितिका यन्धक होता है। इसी प्रकार कीलक सहननकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

१६६. परघात प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद. भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगित, एकेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, स्थावर, सूक्ष्म, साधारण, दुर्भग, श्रनादय, श्रयशःकीति, निर्माण, नीचगोत्र श्रोर पाँच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रसाता वेदनीय, हास्य, रित, श्ररित, शोक, श्रस्थिर श्रोर अश्रभ इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थिति का वन्धक होता है। पर्याप्त श्रीर उच्छास प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट

तं तु० । एवं उस्सास-पज्जत्त-थिर-सुभ० ।

१६७. त्रादाव उक्क हि॰ वं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दुगुं०-तिरिक्लगदि-एइंदि०-स्रोरालि०-तेजा०--क०-हुंड०-वएण०४-तिरि-क्लाणु०-त्रगु०४-तस०४-दृभग०-स्रणादे०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० वं० संखे-ज्जदिभागू०। सादासाद०-हस्स-रदि-स्ररदि-सोग-थिराथिर-सुभासुभ--स्रजस० सिया० संखेज्जदिभागू०। जस० सिया०। तं तु०। एवं उज्जोव-जस०।

१६८. ऋष्पसत्थ० उ०िह०वं० पंचणा०-एवदंसणा०-िमच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दुगुं०-तिरिक्खग०-वेइंदि०-ऋोरालि०--तेजा०-क०-हुंड०--ऋोरालि०ऋं--गो०-ऋसंपत्त०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-ऋगु०४-तस०४--दूभ०-ऋणादे०--िणिम०-णी-

स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेद्या अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। स्थिर और शुभ प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेद्या अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार उच्छ्वास, पर्याम, स्थिर और शुभ प्रकृतियोंको मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१६७. श्रातप प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुं सक वद, भय, जुगुष्सा, तिर्यञ्चगित, एकेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुग्ड संस्थान, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, दुर्भग, श्रानादेय, निर्माण, नीचगोत्र श्रोर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रगुत्रुष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका वन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रसाता वेदनीय, हास्य, रित, श्रग्त, श्रोक, स्थिर, श्रस्थिर श्रुभ, श्रशुभ, श्रोर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रगुत्रुष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका वन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। यदि श्रगुत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रगुत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रगुत्रुष्ट स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रगुत्रुष्ट स्थितिका वन्धक होता है। विसमसे उत्कृष्ट स्थितिका श्रमुत्रुष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार उद्योत श्रीर यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

१६८. अप्रशस्त विहायोगितकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवालाजीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुष्सा, तिर्यञ्चगित, द्वीन्द्रिय ज्ञाति, औदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, असंम्प्राप्तासुपाटिका संहनन,वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, त्रसचतुष्क, कुर्भग, अनादेय, निर्माण, नोचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुन्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यृन स्थितिका वन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रसाता

चा॰-पंचंत० संखेजनिद्भागू० । सादासाद०-हरूस-रिद्-ऋरिद्-सोग-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० मिया० संखेजनिद्भागू० । दुम्सर० णिय० वं० । तं तु० । एवं दुम्सर० ।

१६६. वादर॰ उ॰िंदि॰ पंचणा॰-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक॰-णवुंस०-भय-दुगुं॰-तिरिक्खगिद्-एइंदि०-च्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-च्रोरालि०च्रंगो॰-वगण्०४-तिरिक्खाणु०-च्रगु०-उप०-थावर-च्रपज्जत्त-साधार०-च्रथिरादिपंच-िणिमि०--णीचा०-पंचंत० णि॰ वं० संस्वज्जिदिभागू०। सादासाद०-हस्स-रिद-च्रिरदि-सोग० सिया॰ संस्वज्जिदिभाग्०।

१७०. पत्तेय॰ उ०िट वं० पंचणा॰-एवदंसणा०-मिन्छ॰-सोलमक०-एवुंस०-भय-दु०-तिरिक्खग॰-एइंदि०-श्रोरात्ति०--तेजा॰--क०-हुंड०--श्रोरत्ति०श्रंगो०--तिरि--कखाणु०--वएण०४-श्रगु॰-उप०-थावर-मृहुम-श्रपज्जत्त-श्रथराद्विपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० वं॰ संखज्जदिभागू०। सादासाद०-हम्स-रदि-श्ररदि सोग॰ सिया॰ संखज्जदिभागू०।

चंदनीय, हास्य, रित, ग्ररित, शोक, उद्योत, स्थिर, ग्रस्थिर, शुभ, ग्रशुभ, यशःकीर्ति ग्रौर ग्रयशः कीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है ग्रौर कदाचित् ग्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे ग्रमुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। दुःस्वर प्रकृतिका कदाचित् वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है ग्रौर ग्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टको ग्रुपेत्ता ग्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पर्व्यका ग्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार दुःस्वर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१६९.. वादर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पांच शानावरण, नी दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगित, एकेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक श्ररीर, तेजम श्रगेर, कार्मण श्ररीर, हुण्ड संस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, श्रगुरु लघु, उपधात, स्थावर, श्रपर्याप्त, साधारण, श्रस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रोर पांच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसेश्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रसातावेदनीय, हास्य, रित, श्ररित श्रोर शोक इनका कदाचित् वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है।

१९०. प्रत्येक प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पांच ज्ञानावरण, नी दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुं सक वेद, भय, जुगुष्सा, तिर्यक्षगित, एकेन्द्रियज्ञाति, ख्रोदारिक शरीर, तेजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्ड संस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, तिर्यक्षगत्यानु पूर्वी, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर, सदम, श्रपर्याप्त, श्रस्थरश्रादि पांच, निर्माण, नीचगोत्र श्रीर पांच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात्वां भाग होन स्थितिका वन्धक होता है। सातावेदनीय, असाता वेदनीय, हास्य, रित, श्ररित श्रीर श्रोक इनका कदाचित् वन्धक होता है। सातावेदनीय, अवन्धक होत है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात्वां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है।

- १७१. उच्चा॰ उ॰िट॰वं॰ धुवपगदीएां िएयमा संखेजनिद्भागू० । सेसाओ परियत्तमािएयात्रो तिरिक्लगदिसंजुत्तात्रो वज्ज सिया संखेजनिद्भागूएां॰ ।
- १७२. पणुस॰३ पंचिदियतिरिक्खभंगो । एविर त्राहारदुगं तित्थयरं त्रोघं। मणुसत्रपञ्जत्त॰ पंचिदियतिरिक्खत्रपञ्जत्तभंगो ।
- १७३. देवेसु आभिणिवोधि० उक्क०द्विदिवं० चदृणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरिद-सोग-भय-दुगुं०--तिरिक्खग०-ओरालि०--तेजा०-क०-हुंड०-वएण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-अधिरादिपंच-णिमि०-णीचा० पंचंत० णि० वं० । तं तु० । एइंदि०-पंचिदि०-ओरालि० अंगो०-असंपत्त०-आदाउज्जो०-अपसत्थ०-तस-थावर-दुस्सर० सिया० । तं तु० । एवमेदाओ एकमे-कस्स । तं तु० ।
- १७१. उच्च गोत्रकी उत्ह्रष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव ध्रुव प्रकृतियोंका नियम-सं वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भागद्दीन स्थितिका वन्धक होता है। शेष जितनी परावर्तमान प्रकृतियां हैं उनमेंसे तिर्यञ्चगति संयुक्त प्रकृतियोंको छोड़कर वाकी को प्रकृतियोंका कदाचित् वन्धक होता है छोर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग होन स्थितिका वन्धक होता है।
- १७२. मनुष्यत्रिकका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि ग्राहारक द्विक ग्रार तीर्थकर इन तीन प्रकृतियोंका भङ्ग ग्रोघके समान है। तथा मनुष्य ग्रपर्याप्तकोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च ग्रपर्याप्तकोंके समान है।
- १७३. देवोंमें त्राभिनिवोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, ग्रसातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसकवेद, श्ररति, शोक, भय, जुगुप्सा, निर्यञ्चगति, श्रोदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर. हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रस्थिर ब्रादि पांचा, निर्माण, नोचागोत्र श्रीर पांचा ब्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता हैं जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेन्ना अनुत्कृष्ट एक समय न्युनसे लेकर पत्यका ग्रसंख्यातवां भाग न्युनतक स्थितिका बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति. पञ्चेन्द्रिय जाति, ग्रौदारिक ग्राङ्गोपाङ्ग, ग्रसम्प्राप्तासृपाटिका संहन्य, ग्रातप, उद्योत. **ग्रप्रशस्त विहायोगति. त्रस, स्थावर श्रीर दुःस्वर इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर** कदाचित् ग्रवन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उन्कृष्ट स्थितका भी बन्धक होता है और ग्रानुन्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि ग्रानुन्कृष्ट स्थितिका बन्धकहोता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेना अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इन सव प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्प जानना चाहिए । किन्तु ऐसी अवस्थामें वह उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसं उत्क्रपुकी अपेत्रा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है।

१७४. सादावे० उ०द्वि॰वं॰ पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ॰-सोलसक०-भयदुगुं०--ग्रोरालि॰--तेजा॰--क०-वगण०४-ग्रगु॰४-वाद्र-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि०-पंचंत०
णि० वं॰ दुभागू० । इत्थि०-मणुसग०-मणुसाणु० सिया० तिभागू० । पुरिस०-हस्सरिद-सम्चदु०-वज्जरि॰-पसत्थ०-थिरादिछ०-उचा॰ सिया० । तं तु० । णवुंस०ग्ररदि-सोग-तिरिक्खगिद्-एइंदि॰-पंचिदि०-हुंड०-ग्रोरालि॰ग्रंगो०-ग्रसंपत्त०-उज्जो०ग्रप्पसत्थ०-तस-थावर-ग्राथिरादिछ०-णीचा० सिया० दुभागू० । चदुसंठा०-चदुसंघ० सिया० संखेडजदिभाग्० । एवं हस्स-रिद-थिर-सुभ-जसगित्ति० ।

१७५. इत्थि॰ उ०िंदि॰ बे॰ त्रोघं । पुरिस॰ उक्क॰ द्विदि॰ बं॰ स्रोघं । एवरि देवगदिसंजुत्तं वज्ज । एवं पुरिसवेदशंगो समचदु०-वज्जरिस०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-स्रादेज्ज॰-उच्चा॰ । एवरि उच्चा० तिरिक्खगदितिगं वज्ज ।

१७४. सातावेदनोयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह, कपाय, भय, जुगुप्सा, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण और पांच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे श्रनुत्कृप्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेद, मनुष्यगति श्रोर मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित श्रयन्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट तीन भाग न्यन स्थितिका वन्धक होता है । पुरुपवेद, हास्य, रति, समचत्रस संस्थान, वज्रर्पभनाराचसंहनन, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर ग्रादि छह ग्रीर उच्चगोत्र इनका कदाचित बन्धक होता है और कदाचित अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्थक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेद्धा अनुत्कृष्ट एक समय न्युनसे लेकर परुषका श्रसंख्यातवां भाग न्युनतक स्थितिका बन्धक होता है। नपुं-सकवेद, अरित, शोक, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, पञ्चन्द्रिय जाति, हुण्ड संस्थान, श्रीदा-रिक श्राङ्गोपाङ्ग, ग्रसम्प्राप्तासुपाटिका संहनन, उद्योत, ग्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस, स्थावर, अस्थिर आदि छह और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुन्कृष्ट दो भाग न्यन स्थितिका बन्धक होता हैं । चार संस्थान श्रोर चार संहनन इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्थक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुन्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थिति का वन्धक होता है। इसी प्रकार हास्य, रित, स्थिर, शुभ श्रीर यशःकीर्तिकी मुख्यतास सन्निकर्प जानना चाहिए।

१७५. स्त्रोवंदकी उत्कृष्ट स्थितिक। वन्ध करनेवाले जीवकी अपंचा सन्निकर्प श्रोधके समान है। तथा पुरुपवंदकी उत्कृष्ट स्थितिक। बन्ध करनेवाले जीवकी अपंचा सन्निकर्प श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि यहां देवगित संयुक्तको छोड़क्र सन्निकर्ष कहना चाहिए। इसी प्रकार पुरुपवंदके समान समचतुरस्र संस्थान, वज्रपभनाराच संहनन. प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर, आदय और उच्चगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उच्चगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्प कहते समय तिर्यञ्चगितित्रकको छोड़कर सन्निकर्प कहना चाहिए।

१७६. दो आयु॰ णिरयभंगो । मणुसग॰-मणुसाणु०-चदुसंठा॰-चदुसंघ॰ णिरयभंगो । एइंदियस्स उ०द्वि॰वं० हेट्टा उवरिं णाणावरणभंगो । णामाणं सत्था-णभंगो । एवं आदाव-थावर० । पंचिदि० उ०िट्वं० हेट्टा उवरि णाणावरणभंगो । णामाणं सत्थाणभंगो । एवं ओरालि०अंगो॰-असंपत्त०-अप्पसत्थवि० तस-दुस्सर० । तित्थय० उक्क०टिट्वं० णि० भंगो ।

१७७. भवण व्नाणवंत०-जोदिसिय०-सोधम्मीसाणदेवेसु आभिणिवोधि० उक्त० द्विदंवं० चदुणा०-णवदंसणा०-ग्रसादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०--ग्रदि--सोग-भय-दुगुं०--तिरिक्खग०-एइंदि०-ग्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०--वएण०४--तिरिक्खग०-एइंदि०-ग्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०--वएण०४--तिरिक्खग०-ग्रंवंत० व्याण०-ग्रगु०४-थावर-वाद्र-पज्जत्त-पत्ते०--ग्रथराद्र्पंच--णिम०--णीचा०--पंचंत० णि० वं० । तं तु० । ग्रादाउज्जो० सिया० । तं तु० । एवमेदात्रो एकमेकस्स । तं तु० ।

१७६. दो त्रायुत्रोंका भङ्ग नारिकयोंके समान है। मनुष्यगित, मनुष्यानुपूर्वी, चार संस्थान त्रीर चार संहननका भङ्ग नारिकयोंके समान है। एकेन्द्रिय जातिकी उत्हृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाले जीवके आग पीछेकी प्रकृतियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है तथा नाम कर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार त्रातप त्रीर स्थावर प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाल जीवके त्रागे पीछेकी प्रकृतियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है तथा नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार त्रौदारिक त्राङ्गोपाङ्ग, त्रसम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, त्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस त्रौर दुःस्वर इनकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। तिर्थेङ्गर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग नारिकयोंक समोन है।

१७७, भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी श्रौर सौधर्म-एशान कल्पवासी देवोंमें श्राभि-निर्वोधिक ज्ञानावरणकी उत्क्रप्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, श्ररति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, नैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यान पूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, स्थावर, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रीर पांच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्क्रप्टस्थितिका भी बन्धक होता है त्रौर त्रज़त्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रनुत्कृप्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृप्टकी श्रपेक्षा श्रनुत्कृप्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका ग्रसंख्यातवां भाग न्यनतक स्थितिका बन्धक होता है । त्र्रातप श्रौर उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेत्ता अनुत्कृष्टरक समयन्यूनसे लेकर पत्य-का असंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका वन्धक होता है । इसी प्रकार इनका परस्पर सन्नि कर्ष जानना चाहिए । किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थिति का भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपंका त्रजुत्कृष्ट एक समय न्यूनसं लेकर पल्यका त्रसख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है।

१७८. सादावे० उक्क०द्दिदिवं० देवोघं । एवित् पंचिद्दि०-चदुमंटा०-स्रोरालि०-स्रंगो०-पंचसंघ०-स्रप्पसत्थ०-तस-दुस्सर० सिया० संखेज्जदिभागू० । एवं हस्स-रदि-थिर-सुभ-जसगि० ।

१७६. इत्थि॰ उक्क॰ द्वित्वं० देवोयं । सार्वार पंचिदि॰ योरालि० यंगो०-ऋप्प-सत्थ०-तस-दुम्सर० सिय० वं० संखेजनिद्भागृ० । दोसंटा॰ तिस्सिसंघ० सिया० संखेजनिद्भागृ० । एवं मसुसग०-मसुसासु० ।

१८०. पुरिस० उक्क०िंदि०वं० देवाघं। एविर पंचिदि०-ऋाराति०श्रंगो०-तस० एि० वं० संखेजितिभागू०। चदुसंटा०-पंचसंघ०-श्रप्पसत्थ०-दुस्सर० सिया० संखेजितिभागू०। एवं पुरिसवेदभंगा समचदु०-वज्जिरसभ०-पसत्थवि०-सुमग-सुस्सर-श्रादे०-उच्चा०। एविर उच्चागोदे तिरिक्खगिंदितगं वज्ज ।

१८१. पंचिदि॰ उक्क॰ द्विदिवं॰ पंचणा०-णवदंसणा०-श्रसादा॰-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-श्ररदि-सोग-भय-दृगुं०-श्रोरालि०--तेजा०-क० -वण्ण०४--तिरि-

१९८. साता वेदनीयकी उत्हृष्ट स्थितिके बन्धक जीवका सन्निकर्प सामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय जाति, चार संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, पाँच संहनन, श्रप्रशस्त बिहायोगित त्रस श्रौर दुःस्वर इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यृन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार हाम्य, रित, स्थिर, शुभ श्रौर यशःकीर्तिकी मुख्यतासं सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१७९. स्त्री वेदकी उत्कृष्ट स्थितिक वन्धक जीवका सिन्नकर्ष सामान्य देवोंक समान है। इतनी विशेषता है कि पञ्चे न्द्रिय जाति, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रश्शस्त विहायोगित, त्रस श्रौर दुःखर इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। दो संस्थान श्रौर तीन संहननका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगित श्रौर मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

१८०. पुरुपवेदकी उत्कृष्ट स्थितिकं बन्धक जीवका सिन्नकर्ष सामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रोर त्रस इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। चार संस्थान, पाँच संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगित श्रौर दुःस्यर इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पुरुपवेदके समान समवतुरस्र संस्थान. बज्रपभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रौर उच्चगोत्रकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उच्चगोत्रकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष कहते समय तिर्थञ्चगतित्रिकको छोड़कर सिन्नकर्ष कहना चिहए।

१८१. पञ्चेन्द्रिय ज्ञानिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, ग्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, ग्ररित, शोक, भय, जुगुष्सा, ग्रीदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण, शरीर, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, त्रगुरुलघु

क्खाणु०-अगु०४-वाद्र-पज्जत्त-पत्ते०-अथिरादिपंच-िर्मि०--णीचा०--पंचंत० णि० वं० संखेज्जदिभागू० | वामणसंठा०-खीलिय०-असंपत्त० सिया० | तं तु० ! हुंढ०-उज्जोव० सिया० संखेज्जदिभागू० | श्रोरालि०श्रंगो०-अपसत्थ०-तस-दुस्सर० णियमा० | तं तु० | एवं पंचिदियभंगो वामणसंठा०-श्रोरिल०श्रंगो०-खीलिय०-असंपत्त०-अपसत्थ०-तस-दुस्सर त्ति | एवं चेव तिरिण्णसंठा०-तिरिण्णसंघ० | णविर अद्दारसीगात्रो सिया० संखेज्जदिभागू० | सोधम्मी० तित्थय० देवोघं |

१८२. सणक्कुमार याव सहस्सार त्ति णिरयभंगो । त्राणद् याव णवगेवज्जा त्ति त्राभिणिवोधि० उक्क०द्विदि०वं० चदुणा०-णवदंसणा०-त्रसादा०-मिच्छ०-सोलसक०-त्ररिद-सोग-भय-दुगुं०-मणुसग०-पंचिदि०-त्रोरालि०-तेजा०--क०--हुंड०--त्रोरालि०त्रंगो०-त्रसंपत्त०-वण्ण०४-मणुसाणु०-त्रगु०४-त्रप्यसत्थ०--तस०४--त्रथि--

चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर ग्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और ग्रन्तराय पाँच इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुस्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। वामन संस्थान, कीलक संहनन श्रीर श्रसम्प्राप्तासूपाटिका संहनन इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी ऋषेचा श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्य-का असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिकावन्धक होता है । हण्ड सस्थान और उद्योतका कदा-चित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनु-त्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रवशस्त विहा-योगति, त्रस श्रौर दुःखर इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेद्धा अनुत्कृष्टएक समय न्युनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान वामन संस्थान, औदारिक त्राङ्गोपाङ्ग, कीलक संहनन, त्रसम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, त्रप्रशस्त विहायोगति, त्रस श्रीर दुःखर इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ज्ञानना चाहिए ।तथा इसीप्रकारतीन संस्थान और तीन संहननकी मुख्यतासे भी सन्निकर्प जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि जिन प्रकृतियोंका अठारह कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण उत्कृष्ट स्थितिवन्ध होता है उनका यहां कदाचित वन्ध होता है और कदाचित बन्ध नहीं होता। यदि वन्ध होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग होन श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध होता है। सौधर्म श्रौर **एंशान क**ल्प-में तीर्थंद्वर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्प सामान्य देवोंके समान है।

१८२. सानत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें सामान्य नारिकयोंके समान भङ्ग है। श्रानत कल्पसे लेकर नौ ग्रेवेयक तकके देवोंमें श्रामिनियोधक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, श्ररति, शोक, भय, जुगुल्सा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्ता-स्पाटिका संहनन, वर्ण चतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगित वस चतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह, निर्माण, नीचगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसं

रादिञ्च०-िणमि०-णीचा०-पंचंत० िण० वं०। तं तु०। एवमेदात्रो एकमेकस्स। तं तु०।

१८३. सादा० उक्क॰ द्विदिवं० पंचणा॰-णवदंसणा०-भिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-मणुसग० पंचिदि०-स्रोरालि०-तेजा॰ -क०-स्रोरालि० स्रंगो॰ -वएण॰ ४-मणु-साणु०-त्रगु०४-तस०४-णिमि॰ पंचंत॰ णि० वं० संखेजनिद्भागू॰। इत्थि०-णवुंस०-स्ररिद-सोग-पंचसंठा० पंचसंघ०-स्रप्यसत्थ०-स्रिथरादिछ०-णीचा० सिया० वं० संखेजनिद्भागू०। पुरिस० इस्स-रिद-समचदु०-वज्निरि॰-पसत्थ०-थिरादिछ०-उच्चा० सिया०। तं तु०। एदास्रो तं तु०। पडिदिल्लगास्रो साद्भंगो।

१८४. ऋायु० देवोघं । चदुसंटा०-चदुसंघ० देवोघं । स्वार मणुसगदि० सि० वं० संस्वेज्जदिभागू० । तित्थय० देवोघं ।

बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्प जानना चाहिए और ऐसी अवस्था यह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है।

१८३. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगित, पञ्चेन्द्रिय जाित, ग्रोदािरक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, त्रौदािरक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण श्रौर पाँच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग होन स्थितिका वन्धक हाता है। स्थियद, नपुंसकवेद, श्ररित, शोक, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगित, श्रिस्थर शादि छह श्रौर नोचगोत्र इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रोर कदाचित् अबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग होन स्थितिका वन्धक होता है। पुरुषचेद, हास्य, रित, समचतुरस्र संस्थान, वज्रवभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, स्थिर शादि छह श्रौर उच्चगोत्र इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि त्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्की श्रपेत्ता श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। यहां ये 'तं तु' पाठमें पठित जितनी प्रकृतियां है उनकी मुख्यतासे सिन्नकर्पका विचार करने पर साता प्रकृतिकी मुख्यतासे कहे गये सिन्नकर्पक समान जानना चाहिए।

१८४. त्रायु कर्मकी मुख्यतासे सन्निकर्प सामान्य देवोंके समान है। चार संस्थान त्रौर चार संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्प भी सामान्य देवोंक समान है। इतनी विशेषता है कि यह मनुष्यगतिका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे त्रमुत्कृष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका वन्धक होता है। तीर्थक्कर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्प सोमान्य देवोंके समान है। १८५. ऋणुदिसादि याव सव्वद्वा ति आभिणिवोधि० उक्क०द्विदिबं० चदुणा०-छदंसणा०-असादा० वारसक०-पुरिस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-मणुसगदि-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि० अंगो०-वज्जरिस०-वण्ण०४-मणु-साणु०-ऋगु०४-पसत्थवि०-तस०४--ऋथिर--ऋसभ-सुभग-सुस्सर--आदे०-ऋजस०-णिमि०-उच्चा०-पंचेत० णिय० वं० | तं तु० | तित्थय० सिया० | तं तु० | एवमे-दाओ एक्कमेक्कस्स | तं तु० |

१८६. सादा॰ उक्क॰डिदिवं० हस्स-रिद-थिर-सुभ-जस॰ सिया। तं तु॰। ऋरिद-सोग-ऋजस०-तित्थय० सिया० संग्वेज्जदिभागू०। सेसाणि णिय॰ बं॰ मंखेज्जदिभागू०।

१८५. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें श्रामिनिबोधिक श्रानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, ग्रसाता वेदनीय, वारह कपाय, पुरुपवेद, ऋरति, शोक, भय, जुगुष्सा, मजुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वजर्षभ नाराच संहनन, वर्ण चतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, ग्रस्थिर, श्रश्म, सुभग, सुस्वर, ग्रादेय, ग्रयशःकीर्ति, निर्माण उच्चगोत्र श्रीर पांच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्युनतक स्थितिका वन्धक होता है। तीर्थद्वर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृप्ट स्थितिका भी बन्धक होता हैं और श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्क्रष्टको अपेना अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका असंख्यातचा भाग न्यनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्प जानना चाहिए। किन्तू ऐसी ग्रवस्थामें यह जीव उत्कृप्ट स्थितिका भी वन्धक होता है ग्रौर ग्रानुत्कृप्ट स्थिति-का भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी त्रपेत्ता त्रतुरकृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यनतक स्थितिका वन्धक होता है।

१८६. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक जीव हास्य, रित, स्थिर, शुभ, श्रीर यशःकोर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अमुत्कृष्ट एक समयन्यूनसे छेकर पत्थका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। श्ररित, शोक, श्रयशःकीर्ति श्रोर तीर्थक्कर इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रयन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवां भागहीन स्थितिका वन्धक होता है। शेप प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है।

१=७. एइंदिय-बाद्र-मुहुम-पङ्जत्तापङ्जत्तः विगलिदिय-पङ्जत्तापङ्जत्त पिंचित्य-तसं अपङ्जत्ता पंचकायाणं वाद्र-मुहुम-पङ्जत्ता पङ्जत्त पंचिद्यितिरिक्ख-अपङ्जत्तभंगो । एवरि थावराणं सक्वाञ्चो असंकिङ्जिद्भागूणं बंधिद् । पंचिदिय-तस०२ मृलोषं । पंचमण्०-पंचवचि०-कायजोगि० मृलोषं । अरेरालियकायजोगि० मणुसभंगो । अरेरालियमिस्से मणुस् अपङ्जत्तभंगो । एवरि देवगिद् ० उक्कि दिविं १ पंचणा०-अदंसणा०-असादा०-वारसक०-पुरिस०-अरिद-सोग-भय-दुगुं०-पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वएण्०४-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-अधिर-असभ-सुभग-सुभग-सुस्सर-आदेङ्ज-अजस०-िण्म०-उच्चा०-पंचेत० णिय० वं संकिङ्जिदिगुण्हीणं वंधिद् । वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणु० णि० वं० । तं तु० । तित्थय० सिया० । तं तु० । एवं वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणु० तित्थयरं च । वेउव्वियकायजोगि० देवोघं । एवं वेउव्विपिसस० । णविर किंचि विसेसो जाणिद्वो ।

१८७. एकेन्द्रिय, इनके बादर श्रीर सृक्ष्म तथा इनके पर्याप्त श्रीर श्रपर्याप्त, विकले न्द्रिय तथा इनके पर्याप्त श्रीर अपर्याप्त, पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त त्रस अपर्याप्त, पांच स्थावर काय. तथा इनके बादर और सक्ष्म तथा इनके पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंमें अपनी अपनी प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्तिकर्प पञ्चेन्द्रिय तिर्पञ्च अपर्याप्तकोंके समान है। इतनी विशेषता है कि स्थावरोंमें सव प्रकृतियोंको ग्रसंख्यातवें भाग न्युन वांधते हैं। पञ्चेन्द्रिय-द्विक श्रौर त्रस द्विक जीवोंमें सन्निकर्प मुलोबके समान है। पांचों मनोयोगी, पांचों वचन, योगी श्रौर काययांगी जीवोंमं भो सन्निकर्प मुलोघके समान है। श्रौदारिककाययोगी जीवोंमें सन्निकर्प मनुष्योंके समान है। श्रीदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सन्निकर्प मनुष्य श्रपर्याप्तकोंके समान है। इतनी विशेषता है कि देवगतिकी उत्कृप्ट स्थितिका वन्धक जीव पांच क्रानावरण, छह दर्शनावरण, असाता वेदनीय, बारह कपाय, पुरुषवेद, ग्रारित, शोक, भय. जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्ण चतुष्क, ग्रुगुरुलघचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, ग्रुस्थिर, ग्रुशुभ, सुभग, सुस्वर श्रादेय, श्रयशःकीर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र श्रीर पांच श्रम्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कपू संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। वैकियिक शरीर. वैक्रियिक ग्राङ्गोपाङ्ग ग्रौर देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे वन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेज्ञा अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्युनतक स्थितिका वन्धक होता है। तीर्थंद्वर प्रकृतिका कदा-चित बन्धक होता है ग्रीर कदाचित् ग्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो निययसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुन्कृष्ट एक समयन्यनसे लेकर प्रत्यका क्रमंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार वैक्रियिक शरीर, वैक्रि-यिक आङ्गोपाङ्ग, देवगत्यानुपूर्वी श्रौर तीर्थद्वर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। वैक्रियिक काययोगी जीवोंमें सन्निकर्प सामान्य देवोंके समान है। इसी प्रकार वैक्रियिक मिश्र काययोगी जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु यहां कुछ विशेष जानना चाहिए।

१. मुलप्रती-तसपञ्जत्ता० इति पाठः । २. मुलप्रती-पञ्जत्ता श्रपञ्जत्त इति पाठः ।

१८८. त्राहार०-त्राहारिम० त्राभिणिवोधि० उक्क०हिदिवं० चदुणा०-छदंसणा०-त्रसादा०—चदुसंजल०-पुरिस०-त्ररिद-सोग-भय-दुगुं०-देवगिद-पंचिदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि०त्रंगो०-वर्गण०४-देवाणु०-त्रगु०४-पसत्थवि०-तस०४-त्रथिर-त्रसुभ-सुभग-सुस्सर-त्रादे०-त्रजस०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णिय० वं०। तं तु०। तित्थय० सिया०। तं तु०। एवमेदात्रो एक्कमेक्कस्स। तं तु०।

१८६. सादावे॰ उक्क०िंदिवं० हस्स-रिद-थिर-सुभ-जस॰ सिया० । तं तु० । ऋरिद-सोग-ऋथिर-ऋसुभ-ऋजस॰-तित्थय॰ सिया० संखेज्जिदिभागू० । सेसा॰ धुविगास्रो णि० वं० संखेज्जिदिभागू० ।

१६०. देवायु० त्रोघं । एवं ते तु० सादभंगो ।

१८८. ग्राहारक काययोगी श्रौर श्राहारक मिश्र काययोगी जीवोंमें आभिनिबोधिक भान।वरणकी उत्कृप्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, श्रसातावेदनीय, चार संज्वलन, पुरुष चेद, श्ररति, शोक, भय, जुगुप्सा, देवगति, पञ्चे-न्द्रिय जाति. वैक्रियिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक त्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, त्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क श्रस्थिर, श्राराम, समग, सुस्वर, श्रादेय, श्रयशःकीर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र श्रौर पांच श्रन्त-राय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर अनुतकृष्ट स्थितका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट की ऋषेत्वा ऋनुत्कृष्ट एक समय न्युनसे लेकर पत्यका ऋसंख्यातवां भाग न्युनतक स्थितिका वन्धक होता है। तीर्थद्वार प्रकृतिका कदाचित वन्धक होता है और कदाचित अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृपकी अपेक्षा अनुत्कृप्ट एक समय न्युनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्युनतक स्थितिका बन्धक होता है। इस प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्प जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें यह उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेत्वा अनुत्कृष्ट् एक समय न्यनसे लंकर पत्यका ग्रामंख्यातवां भाग न्युनतक स्थितिका बन्धक होता है।

१८६. सातावेदनीयकी उन्हण्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव हास्य, रित, स्थिर, शुभ और यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उन्हण्ण स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृण्ण स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृण्ण स्थितिका बन्धक होता है। यदि अनुत्कृण्ण स्थितिका बन्धक होता है। वियमसे उत्कृण्की अपेद्धा अनुत्कृण्ण एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। अरित, शोक, अस्थिर, अशुभ, अयशःकीर्ति और तीर्थक्कर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृण्ण संख्यातवां भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। शेप धुववन्धवाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृण्ण संख्यातवां साग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।

१६०. देवायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष श्रोघके समाने हैं। इस प्रकार यहां जितनी 'तं नु' पदवाली प्रकृतियां हैं उनका भङ्ग साता वेदनीयके समान हैं।

- १६१. कम्मइगेसु आभिणिवोधिय० उक्क द्विद्विं चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०--अरिद-सोग--भय--दुगुं०--तिरिक्खगदि--ओरालि०--तेजा०-क०-हुं इसंटा०-वएण०४-तिरिक्खाणु०-अग०-उप०-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा-पंचंत० णि० वं० । तं तु० । दोजादी० ओरालियभंगो । असंपत्त०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०--अप्पसत्थ०-तस--थावर--चाद्र--सुहुम--पज्जत्तापज्जत्त-पत्तेय०-साथार०-दुस्सर० सिया० । तं तु० । एवमेदाओ एकमेक्स्स । तं तु० ।
- १६२. सादावे० उक्त०द्विदिवं० पंचणो०-णवदंसणा०-भिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-ञ्रोरालि०-तेजा०-क०-वर्गण०४-त्रगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० णि० वं० संखेज्जदिभागू० । इत्थि०-णवुंस०-दोगदि-पंचजादि-पंचसंटा०-ञ्रोरालि०ञ्रंगो०-पंच-संघ ०-दोत्राणु ०-पर०--उम्सा०--त्रादाउज्जो०--त्रप्यसत्थ० --तस--थावरादिचदुयुगलं-
- १९१. कार्मण काययोगी जीवोंमें श्रामिनिबोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, ऋसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक बंद, ऋरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस श्रीर, कार्मेण शरीर, हण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी अगुरुल्घु, उपघात, ग्रस्थिर ग्रादि पांच, निर्माण, नीचगोत्र ग्रीर पांच ग्रन्तराय इनका नियमसं वन्धक होता हैं जो उन्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुन्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रुपेत्ना श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका ग्रासंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। दो जातियों का भङ्ग ग्रीदारिक शरीरके समान है। ग्रसम्प्राप्तास्प्रपटिका सहनन, परघात, उछास, त्रातप, उद्योत, त्रप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर, बादर, सृक्ष्म, पर्याप्त, त्रपर्याप्त, प्रत्यंक, साधारण और दुःस्वर इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेता श्रमुत्कृष्ट एक समय न्युनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग न्युनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्प जानना चाहिए। किन्तु तब यह उत्कृप्ट स्थितिका वन्धक होता है या श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है । यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे छेकर पल्यका ऋसंख्यातवां भाग न्यनतक स्थितिका वन्धक होता है ।
- १९२. साता वंदनीयकी उत्ह्रप्ट स्थितिका वन्धक जीव पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुष्सा, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, श्रगुरुलघु, उपघात, निर्माण श्रौर पांच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवंद, नपुंसक वेद, दो गित, पाँच जाित, पांच संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, पाँच संहनन, दो श्रानुपूर्वी, परघात, उङ्कास, श्रातप, उद्योत, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस, स्थावर श्रादि चार युगल, अस्थिर श्रादि छह और नीचगोत्र इनका कदािचत् बन्धक होता है श्रौर कदािचत् श्रवन्धक होता है। पदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। पुरुपवेद, हास्य,

त्र्राथरादिछ०-णीचा० सिया० संखेज्जदिभागू० । पुरिस०-इस्स-रदि-समचदु०-वज्ज-रिस०-पसत्थवि०-थिरादिछ०-उच्चागो० सिया० । तं तु० । एवं इस्स-रदीणं ।

१६३. इत्थि० उक्क०द्विदिवं० पंचणा०-णवदंसणा०-त्रसादा०-भिच्छ०-सोल-सक०-त्ररिद-सोग-भय-दुगुं०-पंचिदि०-त्रोरालि०-तेजा०-क०-त्रोरालि०त्रंगो०--वणण०४-त्रगु०४-त्रप्रसत्थ०-तस०४-त्रथिरादिछ०-णिभि०-णीचा०-पंचंत० णि० वं० संखेज्जदिभागू०। तिरिक्खगदिदुग-तिणिणसंठा०-तिणिणसंघ०-उज्जो० सिया० संखेज्जदिभागू०। मणुसग०-मणुसाणु० सिया०। तं तु०।

१६४. पुरिस० उक्क॰ द्विदिवं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिदि०-स्रोरालि०-तेजा०-क०-स्रोरालि० स्रंगो०-वण्ण०४-स्रागु०४--तस०४--णिमि०-पंचंत० णि० वं० संखेज्जिद्भागू० । सादा०-हस्स-रिद-समचदु०-वज्जिरि०-पसत्थवि०-थिरादिछ०-उच्चा० सिया० । तं तु० । स्रसादा०-स्रादि-सोग-दोगदि-पंच-

रित, समचतुरस्र संस्थान, वज्जर्षभ नाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, स्थिर आदि छह ग्रोर उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है ग्रोर कदाचित् ग्रबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है ग्रीर ग्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि ग्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। यदि ग्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी ग्रपंका ग्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका ग्रसंख्यातचाँ भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार हास्य ग्रीर रितकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१९३. स्त्रींवंदकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, अरित, शोक, भय, जुगुण्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुख्त, याद्य श्रात्य श्रात्य

१०४. पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण श्रौर पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग होन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, हास्य, रित, समचतुरस्र संस्थान, वज्रपंभ नाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, स्थिर श्रादि छह श्रौर उच्चागोत्र इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उन्कृष्ट स्थितिका

संठा॰-पंचमंघ॰-दोत्राणु०-उज्जो०-त्रप्यसत्थ०-त्र्रथिरादिह्य॰-णीचा॰ सिया॰ संखेज्ज-भागू० । एवं पुरिसभंगो समचदु०-वर्ज्जास्य०-पमत्थ०-मुभग-सुम्सर-त्र्रादे०-उच्चा० । णवरि उच्चागोदे तिरिक्खगटितिगं वज्ज ।

१६५. मणुसगदि उक्क विदिवं पंचणा - णवदंसणा - श्रसादा व - मिच्छ व सालसक व - भय-दुगुं व - पंचिद् व एवं याव णिमि व - णोचा व - पंचेत व णि व वं संखे ज - दिभागू व । इत्थिवं व सिया व । तं तु व । णवुं सव - तिण्णिसंदा व - तिण्णिसंदा व - पर व - उस्सा व - श्रप्य स्थ व - पर्च मणुसाणु व । तं तु व । एवं मणुसाणु व ।

भी वन्धक होता है त्रोर अनुन्तृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुन्तृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेत्वा अनुन्तृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। असाता वंदनीय, अरित, शोक, दो गित, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगित, अस्थिर आदि छह और नीचगोत्र इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियम सं अनुन्तृष्ट ए संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार पुरुपवेदके समान समचतुरम्र संस्थान, वज्रपभनोराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुखर आदेय और उच्चगेत्रकी मुख्यतासं सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उच्चगोत्रकी अपेत्वा सन्निकर्प कहते समय तिर्यञ्चगित विकक्षो छोड़कर सन्निकर्प कहना चाहिए।

१९५. मनुष्यगितकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, श्रसाता वदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुष्सा, पञ्चित्विय जातिसे लेकर निर्माण तक तथा नीच गोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। श्रीवेदका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है है यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेना श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। नपुंसकंबद, तीन संस्थान, तीन संहनन, परघात, उन्नास, श्रप्रशस्त विहायोगित, पर्याप्त, श्रप्याप्त श्रोर दुःखर इनका कदाचित् वन्धक होता है। श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक हाता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी सुख्यतायां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी सुख्यतासे सन्निकर्ष ज्ञानना चाहिष्ट।

- १६६. एइंदियजा० उक्क०हिद्वंध० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०--निरिक्खग०-अरोरालि०--तेजा०-क०-हुंडसं०-वरणा०४-तिरिक्खाणु०-अगुरु-उप०-थावर-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचागो०-पंचंत० णि० बं० । तं तु० । पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-वाद्र-सुहुप-पज्जत्तापज्जत्त-पत्तेय-साधारण० सिया० । तं तु० । एवं आदाव-थावर० । णवरि आदावे सुहुप-अपज्जत्त-साधारण० वज्ज ।
  - १८७. निरिणजादि० मणुसत्रपज्जनभंगो । चत्तारिसंठा०-चत्तारिसंह० देवोघं।
- १६ = . पंचिदियजादि० उवक्र ॰ टिदिवं० पंचणाणा०-णवदंसणा॰-श्रसा-दा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-श्ररदि-सोग-भय-दुगुं०-णाम॰ सत्थाणभंगो णीचागो०-पंचेत० णिय० वं० । तं तु० । एवं श्रोरालि०श्रंगो०-श्रसंप०-श्रप-सत्थ०-तम०-दुस्सर्० ।
- १६६. एकेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच श्वानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, अरित, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्च गित, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुगृह संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वा, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर, अस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे छेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। परघात, उल्लास, श्रातप, उद्योत, बादर, सूचम, पर्याप्त, श्रपर्याप्त, प्रत्येक श्रोर साघारण इनका कदाचिन् वन्धक होता है श्रीर कदाचिन् श्रबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रातप श्रीर स्थावर इनकी मुख्यतासे सन्निकर्य जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रातप प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्य कहते समय स्कृम, श्रपर्याप्त श्रीर साधारण इनको छोड़कर सन्निकर्य कहना चाहिए।
- १९७. तीन जातिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष मनुष्य श्रपयीत्रकोंके समान है। तथा चार संस्थान श्रीर चार संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य देवोंके समान है।
- १९८. पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका यन्थक जीव पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, ग्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, श्ररित, शोक, भय, जुगुप्सा श्रोर स्वस्थान भंगके समान नामकर्मको प्रकृतियाँ, नीचगोत्र श्रोर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक है श्रोर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्वा श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक है। इसी प्रकार श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तास्रपाटिका संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस श्रीर दुःस्वर इनकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

१६६. परघाद० उक्क० विद्वं० पंचणा०-णवदंस०-असादा०-भिच्छ०सोलसक०-णवुंस०--अरिद-सोग-भय--दुगुं०--तिरिक्खग०--ओदालि०--तेजा०-क०हुंडसं०--वरणा०४--तिरिक्खाणु०--अगु०--उप०--उस्सा०-वादर-पज्जत्त-पत्तेय०-अधिरादिपंच-णिमि॰-णीचा०-पंचंत० णिय० बं० । तं तु० । एइंदि०-पंचिद०-ओरालि०
अंगो०-असंप०-आदाउज्जो०-अपस०-तस-थावर-दुस्सर० सिया० । तं तु० । एवं
उस्सा०-बादर-पज्जत्त-पत्तेय० । उज्जो० तिरिक्षगिदिभंगो । णवरि सुहुम-अपज्जत्तसाधारण० वज्ज० ।

२००. सुहुम॰ उ॰ष्टि०वं॰ पंचणा॰-एवदंसणा०-श्रसादा॰--मिच्छ०-सोल--सक॰-एवुंस०-त्ररिद-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खग॰-एइंदि०-श्रोरालि०--तेजा॰-क०-हुंड०-वएण०४-तिरिक्खाणु०-त्रगु०-उप०-थावर-त्रपज्जत्त-साधारण--श्रथिरादिपंच--णिमि०-एीचा०-पंचंत० णि० वं० | तं तु० | एवं त्रपज्जत्त-साधारणं |

१९९. परघातकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञान।वरण, नी दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, श्ररति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, श्रौदारिक शरीर, तैज्ञस शरीर, कार्मण शरीर, हुग्ड संस्थान, वर्ण्-चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, त्र्रगुरुलघु, उपघात, उच्छवास, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, त्रस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नीच गोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि त्रानुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी त्रुपेत्ना ग्रानुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवा भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, श्रातप, उद्योत, श्रप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर श्रौर दुःस्वर इनका कदाचित वन्धक होता है श्रौर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अवेत्ता अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातयां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार उच्छास, बादर, पर्यप्ति श्रीर प्रत्येक इनेकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए । उद्यातकी मुख्यतासे सन्निकर्पका भङ्ग तिर्यञ्ज-गतिके समान है। इतनी विशेषता है कि सुक्ष्म अपर्याप्त और साधारण इनको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

२००. स्ह्मकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रमाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसकवेद, श्ररित, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चनित, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघात, स्थावर, श्रपर्यात, साधारण, श्रस्थिर श्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेका श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार श्रपर्यात्र श्रीर साधारणको मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

- २०१. थिर० उ०िह०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भयदुगुं०--ग्रोरालि०--तेजा०--क०--वण्ण०४-ग्रगु०४--पज्जत्त--िणिम०--पंचंत० णि० वं०
  संखज्जिदिभागू० । ग्रसादा०-इत्थि०-णवुंस०--दोगिद-पंचजादि-पंचसंठा०-ग्रोरालि०ग्रंगो०-पंचसंघ०-दोत्राणु०-न्रादाउज्जो०--न्रप्पसत्थ०-तस--थावर--वादर-सहुम--पत्ते०साधारण-त्रमुभादिपंच-णीचा० सिया० संखेज्जिदिभागू०। सादा०-पुरिस०--हस्स-रिदसमचदु०-वज्जिरस०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-त्रादेज्ज-जस०-उच्चा० सिया०। तंतु०।
  एवं सुभ-जस०। णविर जस० सुदुम-त्रपज्जत्त-साधारणं वज्ज।
- २०२. तित्थय० उ०द्वि०वं० पंचणा०-छदंसणा०-ग्रसादा०-बारसक०-पुरिस०-ग्ररदि-सोग-भय-दुगुं०-पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०--वरण ०४--त्रगु०४-पसत्थवि०-तस० ४-त्र्राथर-त्रसभ-सुभग-सुस्सर-ग्रादे०-ग्रजस०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० वं० संखेजनदिगुणही० । मणुसगदिपंचगं सिया० संखेज्जदिगुणहीणं०। देवगदि०४
- २०१. स्थिरकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व. सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, पर्याप्त, निर्माण् और पाँच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातयां भागहीन स्थितिका वन्धक होता है। असाता वेदनीय, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, दो गति, पाँच जाति, पाँच संस्थान, ग्रौदारिक ग्राङ्गोपाङ्ग, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, ऋतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर, वादर, सदम. प्रत्येक, साधारण, त्र्रशुभ त्रादि पाँच त्रौर नीच गोत्र इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, पुरुपवेद, हास्य, रति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्पभनाराचसंहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, यशःकीर्ति ग्रीर उच्चगोत्र इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रतुत्कृष्ट स्थितिका भो वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेज्ञा अनुत्क्रप्र एक समय न्यूनसे छेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शुभ श्रीर यशकोर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष कहते समय मुक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण इनको छोड़कर सन्निकर्प कहना चाहिए।
- २०२. तीर्थक्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, छृह दर्शनावरण, ग्रसाता वेदनीय, वारह कषाय, पुरुषवेद, अरित, शोक, भय, जुगुप्सा, पृक्वेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, ग्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, त्रसचतुष्क, ग्रस्थिर, ग्रगुभ, सुभग, सुखर, ग्रादेय, ग्रयशःकीर्ति, निर्माण, उद्यगोत्र और पांच ग्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे ग्रनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका वन्धक होता है। मनुष्यगित पञ्चकका कदाचित् वन्धक होता है। ग्रीर वन्धक होता है तो नियमसे ग्रनुत्कृष्ट संख्यातगुण होन स्थितिका वन्धक होता है। देवगित चतुष्कका कदाचित् वन्धक होता है। विवासि चतुष्कका कदाचित् वन्धक होता है ग्रीर कदाचित्

सिया० । तं तु० । एवं देवगद्ि ४ । एवरि मणुसगदिपंचगं वज्ज ।

२०३. इत्थिवेदेमु त्राभिणिवोधि० उ०द्वि०वं० पद्मदंडस्रो स्रोघं। णवरि स्रोरालि०स्रंगो०-स्रसंपत्तसेवट्टमंघटणं वज्ज।

२०४. माटा० उ०द्वि०वं० खोवं । एवित् खोरालि०खंगो०-स्रमंपत्त० सिया० संखेजितिभाग् । सेसाएं पि सञ्चाएं मृलोवं । एवित् खोरालि०खंगो०-स्रमंपत्त० खदारिमाहि सह मिएएयासो साथेद्वो । पुरिसवे० खोवं ।

२०५. णवुंस० त्राभिणियो० उ०द्वि०वं० चदृणा०--णवदंसणा०-ग्रसादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-त्ररिद्-सोग-भय-दुगुं०--पंचिद्दि०-तेजा०-क०--वरण्०४-हुंड०-त्रगु०४-त्रप्पसत्थ०-तस०४-त्रथिराद्छि०-णिमि०--णीचा०-पंचंत० णि० वं। तं० तु० । णिरयर्गाद्--तिरिक्ष्यर्गाद्--त्रोरालि०--वेऽव्वि०--दो-ग्रंगो०--त्रप्पसत्थ०-दो

श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उन्छए स्थितिका भी बन्धक होता है श्रोर श्रमुन्हए स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रमुन्हए स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उन्हाएकी श्रपेका श्रमुन्हए एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रमुंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार देवगित चतुष्ककी मुख्यतासे सिश्चकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि देवगित चतुष्ककी मुख्यतासे सिश्चकर्ष कहते समय मनुष्यगति पञ्चकको छोड़कर सिन्तकर्ष कहना चाहिए।

२०३. स्त्रीयेदबाले जीवोंमें ग्राभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जोवको ग्रेपेचा प्रथम दण्डक ग्रोघके समान है। इतनो विशेषता है कि ग्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर ग्रासम्प्राप्तारहपाटिका संहननका छोड़कर यह सन्निकर्ष कहना चाहिए।

२०४. माता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिक वन्धक जीवकी अपेता सिन्नकर्प श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि यह श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रोर श्रमम्प्राताख्रपाटिका मंहनन इनका कदाचित वन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट सम्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। तथा शेष सब प्रकृतियों-का सिन्नकर्प भी मूलोधके समान है। इतनो विशेषता है कि श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रोर श्रसम्प्रामाख्रपाटिका संदनन इनका श्रवारह कोड़ाकाड़ी सागरकी स्थितिका बन्ध करनेवाली प्रकृतियोंके साथ मन्निकर्प साधना चाहिए। पुरुषवेदवाले जोवोंमें श्रपनी सब प्रकृतियोंका सिन्नकर्प श्रोधके समान है।

२०४. नपुंसकवेदवाले जीवोंमें आभिनिवोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नो द्र्यनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, अरित, शोक, भय, जुगुल्सा, पञ्चेन्द्रिय ज्ञाति, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुल्क, हुण्ड संस्थान, अगुरुलघुचतुल्क, अप्रशस्त विहायोगित, असचतुल्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पांच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जा उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। नरकगित, तिर्यञ्चगित, औदारिक शरीर, वैकियिक शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, अप्रशस्त विहायोगित, दो आनुपूर्वी और उद्योत इनका कद।चित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता

त्राणु०-उज्जो० सिया० । तंतु० । एवमेटात्रो एकमेकस्स । तं तु० ।

२०६. सादा० उ०द्वि०वं० त्रोघं । एवि एइंदि०-त्रादाव-थावरं त्रद्वारसि-गाहि सह सिएएयास साधेदच्वं । संसाएां मूलोघं ।

२०७. अवगदवे० आभिणिवोधि० उ०िंद्धः चदुणा०-णवदंसणा०-सादा०-चदुसंज०-जस०-उच्चा०-पंचंत० णि० वं० । णि० उक्त० । एवं एदास्रो एक्समेकेहि उक्तस्सा ।

२० द्र. कोधादि ० ४-मिद् ०-सुद् ०-विभंगे मूलोयं । आभिणि ० -सुद् ०-श्रोधि ०-श्राभिणि ० उ० हि० वं ० चढुणा ०-छदसणा ०-श्रसादा ०-वारसक ०-पुरिस ०--श्रदिसोग-भय--दुगुं ०-पंचिद् ०-तेजा ०-क ०-समच दु ० वण्ण ० ४--श्रगु ० ४-पसत्थि ० ० तस० ४-श्रीथर-श्रसभ-सुभग-सुस्सर-श्रादे ०-श्रजस० - णि मि० - उच्चा ० -पंचेत ० णि० वं ० । तंतु ० । मणुसगदि-देवगदि-श्रोरालि ० वेउ व्वि ० -दोश्रंगो ० -व ज्ञिरि ० -दोश्राणु ० वं ० । तंतु ० । मणुसगदि-देवगदि-श्रोरालि ० वेउ व्व ० -दोश्रंगो ० -व ज्ञिरि ० -दोश्राणु ० वं ० । तंतु ० । मणुसगदि-देवगदि-श्रोरालि ० वेउ व्व ० -दोश्रंगो ० -व ज्ञिर ० -दोश्राणु ० वं ० । तंतु ० । मणुसगदि-देवगदि-श्रोरालि ० वेउ व्व ० -दोश्रंगो ० -व ज्ञिर ० -दोश्राणु ० वं ० । तंतु ० । मणुसगदि-देवगदि-श्रोरालि ० वेउ व्व ० -दोश्रंगो ० -व ज्ञिर ० -दोश्राणु ० -वेउ व्य ० -दोश्रंगो ० -व ज्ञिर ० -दोश्राणु ० -वेउ व्य विका भी वन्धक होता है । इसी प्रकार व्यवस्था लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यू तक प्रियतिका भी वन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उन्कृष्टकी श्रोका श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यू नसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यू तक स्थितिका वन्धक होता है ।

२०६. साता वेदनीयकी उत्हाप्ट स्थितिक वन्धक जीवका सन्निकर्प श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति, श्रातप श्रीर स्थावर इनकी श्रटाग्ह कोड़ा-कोड़ी सागरकी स्थितिवाली प्रकृतियोंके सन्निकर्पमें साथ लेना चाहिए। तथा शेष प्रकृतियोंका सन्निकर्प मृलोधके समान है।

२००. ग्रपगतचेदचाले जीवोंमें ग्रामिनियोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, सातावदनीय, चार मंज्वलन. यशकीर्ति, उद्यगीत्र ग्रीर पांच ग्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार ये सब प्रकृतियां परस्पर एक दृसरेके साथ उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होती हैं।

२०८. क्रोधादि चार कपायवाले, मन्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी श्रोर विभन्नज्ञानी जीवोंमें श्रपनी सव प्रकृतियोंका सन्निकर्प मूलांघकें समान है। श्रामिनिवाधिक ज्ञानो,श्रुत्रज्ञानी श्रोर श्रवधिज्ञानी जीवोंमें श्राभिनिवोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्टिस्थितिका वन्धक जीवचार ज्ञानावरण, छः दर्शना वरण, श्रसाता वदनीय, वारह कपाय, पुरुषवेद, श्ररित, श्रोक, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरम्न संस्थान, वर्णचतुरक, श्रगुरुलघु चतुरक, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुरक, श्रस्थिर, श्रशुभ, सुभग, सुम्बर, श्रादय, श्रयशःकीर्त, निर्माण, उद्यगित श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रवुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका श्रपेका श्रवृत्कृष्ट एक समय न्यृनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगित, देवगित, श्रीदारिक श्रीर, वैकियिक श्रीर, दो श्राङ्गोपङ्ग, वज्रपेभनाराच संहनन, दो श्रानुपूर्वी श्रीर तीर्थक्कर इनका कदाचित्

तित्थय० सिया० । तं तु० । एवमेदात्रो एकमेकस्स । तं तु० ।

२१०. मणुसायु० उ०द्दि०वं० पंचणा०-छदंसणा०-वारसक०--पुरिस०-भय-दु०-मणुसग०--पंचिद्दि०-त्रोरालि०-तेना०--क०-समचदु०--त्रोरालि०त्रंगो०--वज्जरि०--वणण्०४--मणुमाणु०--त्रगु०४--पसन्थ०--तस०४--सुभग--सुस्सर---त्रादे०---णिमि०--उच्चा०-पंचंत० णि० वं० संखेज्जगुणही० । सादासा०-हस्स-रदि-त्रारदि-सोग-थिरा-थिर-सुभासुभ-नस०-त्रजस०-तित्थय० सिया० संखेज्जदिगुणहीणं०। देवायु० त्रोघं।

यन्धक होता है श्रीर कदाचित् अयन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थिति का बन्धक होता है तो नियम से उत्कृष्ट की अपेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यात्वां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सिन्नकर्ष जानना चाहिए श्रीर तब ऐसी स्थितिमें यह उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यात्वां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है।

२०९. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक जीव हास्य, रित, स्थिर, शुभ श्रोर यशःकीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रोर श्रवन्थ्य होता है। यदि श्रवन्थ्य होता है। यदि श्रवन्थ्य स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रवन्थ्य स्थितिका वन्धक होता है। व्यवस्थ न्यूनसं लेकर पत्थका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। श्रारित, श्रोक, श्राक्ष्यर, श्रश्यम, अयशःकीर्ति, देवगित, दो श्रारीर, दो श्राङ्गोपाङ्ग, वज्यर्भ नाराच संहनन, दे। आनुपूर्वी श्रोर तोर्थद्वर इनका कदाचित् वन्धक होता है जो नियमसं श्रवन्थ्यत गुण्हीन स्थितिका वन्धक होता है। श्रेप प्रकृतियोंका नियमसं श्रवन्थ्यत गुण्हीन स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार होता है जो नियमसे श्रवन्थ्यत गुण्हीन स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार हास्य, रित, स्थिर, श्रम श्रोर यशःकीर्तिको मुख्यता से सिन्नकर्प जानना चाहिए।

२१०. मनुष्यायुकी उत्ऋष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, छः दर्शनावरण, बारह कपाय, पुरुषवेद, भय, जुगुष्सा, मनुष्यगित, पञ्चित्दिय जाित, श्रीदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्जर्षभनाराच संहनन, वर्णचनुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, असचतुष्क, सुभग, सुस्तर, श्रादेय, निर्माण, उच्चगोत्र श्रोर पाँच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्टसंख्यात गुणहोन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रसाता वेदनीय, हास्य, रित, श्ररित, श्रोक, स्थर, अस्थिर, श्रभ, श्रगुम, यशःकीर्ति, श्रयशःकीर्ति श्रोर तीर्थद्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहोन स्थितिका वन्धक होता है। देवायुकी श्रपेचा सन्निकर्प श्रोप्रके

आहार०-आहार०श्रंगो० श्रोघं।

२११. मणपज्जव०--संजद०-सामाइ०-छंदो०-परिहार० आहारकायजोगि--भंगो । एवरि सादावे० उ०िंद्ध०वं० अरिद्-सोग-अथिर-असुभ-अजस०-तित्थय० सिया० संखेज्जदिगुणहीणं । धुविगात्रो णि० वं० संखेज्जगुणहीणं । एवं सादभंगो हस्स-रिद् थिर-सुभ-जसगित्ति-देवायु० । एवरि देवायु० असादावे०-अथिर-असुभ-अजस० वज्ज । सेसाणं णाणावरणादीणं तित्थयरं णाइस्सदि ति णाद्व्वं ।

२१२. सुहुमसंपराइ० त्राभिणिबो० उ०िंदि०बं० चदुणा०चदुदंसणा०-सादा०-जस०-उचा०-पंचंत० णि० बं० णि० उकस्सा । एवमेदात्रो एकमेक्केण उकस्सा ।

२१३. संजदासंजदा० परिहार०भंगो । श्रसंजद०-चक्खुदं०-श्रचक्खुदं० श्रोघं। श्रोधिदं० श्रोधिणाणिभंगो । किएणले० णवुंसगभंगो । णवरि देवायु० उ०हि०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-सादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगुं० देव-गदि-पसत्थद्वावीस-उच्चा०-पंचंत० णि० वं० संखेजजगुणहीणं०।

समान है। त्राहारक शरीर त्रोर त्राहारक त्राङ्गोपाङ्गकी मुख्यतासे सन्निकर्प त्रोघके समान है।

२११. मनःपर्ययक्षानवाले, संयत, सामायिक संयत, छेदोपस्थापना संयत और परिहारविशुद्धि संयत जीवों में अपनी अपनी प्रकृतियों की अपेता सिन्नकर्प आहारक काययोगी
जीवों के समान है। इतनी विदोषता है कि साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव
अपति, शोक, अस्थिर, अशुभ, अयशःकोर्ति और तीर्थक्कर इनका कदाचित् बन्धक होता है
और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहोन स्थितिका बन्धक होता है। ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो
नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितका बन्धक होता है। इसी प्रकार साता प्रकृतिके
समान हास्य, रित, स्थिर, शुभ, यशःकीर्ति और देवायुकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना
चाहिए। इतनी विशेषता है कि देवायुकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष कहते समय असाता वेदनीय,
अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनकी छोड़कर सिन्नकर्ष कहते समय असाता वेदनीय,
श्रिक्षर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनको छोड़कर सिन्नकर्ष कहना चाहिए। शेष क्षानावरणादिकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक जीव तीर्थक्कर प्रकृतिको नहीं बाँधेगा ऐसा जानना चाहिए।

२१२. स्क्ष्मसाम्परायिक शुद्धिसंयत जीवोंमें श्राभिनिबोधिक झानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार झान।वरण, चार दर्शनावरण, साता वेदनीय, यशः-कीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच श्रन्तरायका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार ये प्रकृतियां एक दूसरेकी श्रणेका परस्पर उत्कृष्ट स्थितिबन्धको लिये हुए सिन्नकर्षको प्राप्त होती हैं।

२१३. संयत(संयतोंका भक्क परिहारिवशुद्धि संयत जीवोंके समान है। श्रसंयत, च कुदर्शनवाद्धे श्रौर श्रचकुदर्शनवाद्धे जीवोंका भक्क श्रोधके समान है। श्रवधिदर्शनवाद्धे जीवोंका भक्क श्रवधिक्षानियोंके समान है। रुप्णलेश्यावाद्धे जीवोंका भक्क नपुंसक वेदवाद्धे जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि देवायुकी उत्रुष्ट स्थितिका वन्ध करनेवात्ता जीव पाँच क्षानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, पुरुषवेद, हास्य, रित, भय, जुगुष्सा, देवगित श्रादि प्रशस्त श्रद्धाईस प्रकृतियां, उच्च गोग्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यात गुण्हीन स्थितका बन्धक होता है।

२१४. णील-काऊणं आभिणियो॰ उ०िढ॰वं॰ चदुणा०-णवदंसणा॰असादा॰-मिच्छ०-सोलसक॰-णवुंस०-अरिद-सोग-भय-दुगुं०--तिरिक्खगिद-पंचिदि०आरोति०-तेजा०-क०-हुंडसं०--आरोति०अंगो॰--असंपत्त०--वएण०४--तिरिक्खाणु०आगु०४-अप्पत्थ॰-तस०४-अथिरादिछ०--णिम०-णीचा०-पंचंत० णि वं०।
तंतु०। एवमेदाओ एक्कमेकस्स। तंतु०। सादा०-इत्थि०-पुरिस०-इस्स-रदि-मणुसग०पंचसंठा०-पंचसंघ०-मणुसाणु०-पसत्थ०-थिगदिछ०-उच्चा० तित्थयरं च णिरयमंगो।

२१५. णिग्यायु॰ उ०िह०वं॰ पंचणा०-णवदंसणा॰-असादा॰-भिच्छ०-सोल-सक०-णवुंस०-अरिद-सोग-भय-दुगुं॰-पंचिदि॰--तेजा॰--क॰-हुंड॰-वएण०४-अगु०४-अप्पसत्थ॰--तस०४-अथिरादिछ०--णिमि॰--णीचा०-पंचंत० णि० वं॰ संखेजज-गुणही॰। णिरयग॰-वेउिव०-वेउिव॰अंगो०-णिरयाणु॰ णिय॰ वं०। तंतु॰ उक्क० अणु० विद्वाणपदिदं वंथदि, असंखेजभागहीणं वा संखेजनिद्भागहीणं वा वंथदि। तिरिण-आयुगाणं श्रोघं।

रश्यः नील और कापोन लेश्यावाले जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक जीव चार ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यान्व, सोलह कषाय, नपुं सकवेद, अरित, शोक, भय, जुगुष्सा, तिर्यञ्चगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्रामासृपादिका संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्वञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगिति, अस्व चतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो उत्कृष्टको अपेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका एक दूसरेको अपेचा सन्निकर्य जानना चाहिए और तब यह जीव उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो उत्कृष्टकृष्ट स्थितिका मी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय, स्त्रीवेद, पुरुपवेद, हास्य, रित, मनुष्यगित, पाँच संस्थान, पाँच संद्रनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगित, स्थिर आदि छह, उच्चगात्र और तोर्धङ्कर इनका भङ्ग नारकियोंके समान है।

२१४. नरकायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौदर्शनावरण, ग्रामा वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, ग्रामित, शोक, भय, जुगुप्ता, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, वर्णचतुष्क, ग्रागुक्त सघुचतुष्क, ग्राप्रश्चित्र, विहायोगित, त्रस चतुष्क, ग्रास्थिर ग्रादि छह, निर्माण, नीचगोत्र ग्रीर पाँच ग्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे ग्रानुत्कृष्ट संख्यात गुणहोन स्थितिका बन्धक होता है। नरकगित, वैकिथिक शरीर, वैकिथिक ग्राङ्गोपाङ्ग ग्रीर नरकगित्यानुपूर्वी इनका नियमसे वन्धक होता है। या तो असंख्यात भागहीन स्थितिका वन्धक होता है। या तो असंख्यात भागहीन स्थितिका वन्धक होता है। तोन ग्रायुग्नोकी मुख्यतासे सन्निकर्प ग्रोधके समान है।

- २१६. णिरयग० उ०िह०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-श्रसादा०-भिच्छ०-सोल-सक०-णवुंस०-त्ररिद-सोग-भय-दुगुं०-पंचिदि०-तेजा०-क०-हुंढ०-वण्ण० ४-त्रराठ ४-पसत्थ०-तस० ४-त्र्राथरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णिय० वं० संखेजजगुणही०। णिरयायु० सिया०। यदि० णियमा उक्कस्सा। त्रावाधा पुण भयणिज्जा। वेउिव्व०-वेउिव्व० ग्रंगो०-णिरयाणु० णि० वं०। तं तु०। एवं वेउिव्व-वेउिव्व० ग्रंगो०-णिरयाणु०।
- २१७. देवगदि० उ०द्वि०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०--वएण०४--ऋगु०४--पसत्थवि०--तस०४--सुभग-सुस्सर-त्रादे०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि०वं० णि० त्रणु० संखेज्जगुणही० । सादा-साद०--हस्स--रदि--ऋरदि--सोग--इत्थि०--पुरिस०-थिराथिर-सुभासुभ--जस०--ऋजस० सिया०संखेजजगुणही० । वेजव्वि०-वेजव्वि० श्रंगो० णि०वं० णि० संखेजजगुणही०। देवाणु० णि० वं । तं तु० । एवं देवाणु० ।
- २१६. नरकगितको उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच शानावरण, नौ दर्शनावरण, स्रासाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वंद, अरित, शोक, भय, जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, स्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, असचतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। नरकायुका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। परन्तु आबाधा भजनीय है। वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसं लेकर प्रत्यका असंख्यातचां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और नरकगत्यानुपूर्वीको मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।
- २१७. देवगितकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरक संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, ब्रादेय, निर्माण, उच्चगात्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहोन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता वेदनीय, हास्य, रित, अरित, शोक, स्त्रीवद, पुरुषवेद, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशकीर्ति और अयशकीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहोन स्थितिका वन्धक होता है। वेकियिक शरीर और वैकियिक आक्रोपाङ्ग इनका नियमसे वन्धक होता है। वेकियक शरीर और वैकियक आक्रोपाङ्ग इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहोन स्थितिका वन्धक होता है। वेकियक होता गुणहोन स्थितिका वन्धक होता और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है तो

२१८. एइंदि॰ उक्क०िंद्वि॰ पंचणा॰-णवदंसणा०-मिच्छ॰-सोलसक॰-णवुंस०-भय॰-दु०--तिरिक्खगिद-त्रोरालिय॰-तेजा०-क॰--हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-त्रगु०-उप०-दूभग-त्रणादे॰-णिमि॰-णीचा॰-पंचंत० णि० वं० संखेजजगुणही॰। सादासा०-हस्स-रिद-त्ररिद-सोग-पर०-उस्सा०-उज्जो०--वादर--पज्जत्त--पत्तेय॰-थिरा-थिर-सुभासुभ-जस०-त्रज्जस० सिया॰ संखेजजगुणहीणं०। त्रादाव-सुहुम-त्रपज्जत्त-साधार० सिया०। तं तु०। थावर० णि० वं०। तं तु०। एवं त्रादाव-थावर०।

२१६. बीइंदि॰ उ०द्वि०वं॰ हेट्ठा उवरि एइंदियभंगो । णामाणं सत्थाणभंगो । एवं तीइंदि-चदुरिंदि० । सुहुम-साधारणं एइंदियभंगो । एवरि आदाउज्जोवं वज्ज । अपज्जत्त उ०द्वि०वं० हेट्ठा उवरि एइंदियभंगो । णामाणं सत्थाणभंगो ।

उत्कृष्टकी अपेक्षा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार देवगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

२१८. एकेन्द्रिय जातिको उत्क्रप्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शना-वरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुल्सा, तिर्यञ्चगति, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर कार्मण शरीर, हुगड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वा, अगुरुलघु, उपघात, दुर्भग, अनादेय, निर्माण, नीचगात्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुन्कृष्ट संख्यात गुणुहीन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रसाता वेदनोय, हास्य, रति, श्ररति, शोक, परघात, उच्छास, उद्योत, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, त्रस्थिर, ग्रुभ, त्रग्रुभ, यशःकोति और त्रप्रशःकोति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचिन् अयन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुन्कृष्ट संख्यात गुणहोन स्थितिका बन्धक होता है। त्रातप, मुक्ष्म, त्रपर्याप्त श्रोर साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है त्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उन्क्रप्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्क्रप्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेदा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लंकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। स्थावर प्रकृतिका नियमसे वन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्ट की अपेत्रा अनुत्कृष्ट एक समय न्यनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार त्रातप त्रोर स्थावरकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

२१९. द्वीन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवके नीचे श्रौर ऊपरकी प्रकृतियां-का भक्न एकेन्द्रिय जातिके समान है। तथा नाम कर्मकी प्रकृतियांका भक्न स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार त्रोन्द्रिय जाति श्रौर चतुरिन्द्रिय जातिकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए। तथा सूदम श्रौर साधारण प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष एकेन्द्रिय जातिके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रातप श्रौर उद्योतको छोड़कर सिन्नकर्ष कहना चाहिए। श्रपर्याप्त प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवके नीचे श्रौर ऊपरकी प्रकृतियोंका भक्न एकेन्द्रिय जातिके समान है। तथा नामकर्मकी प्रकृतियोंका भक्न स्वस्थानके समान है।

- २२०. तेऊए देवगदि० उ०द्वि०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-भिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वएण०४--अगु०४--पसत्थ०-तस०४--सुभग-सुस्सर-आदे०-िणिमि०-उच्चा०-पंचंत०िण्० वं० संखेज्जगुणही० । सादासाद०-इत्थि०-पुरिस०-इस्स-रदि-अरदि-सोग-थिराथिर-सुभासुभ--जस०-अजस० सिया० संखेज्जगु-णही०। वेउव्वि०-वेउव्वि० अंगो०-देवाणु०िण० वं०। तंतु०। एवं वेउव्वि०-वेउव्वि० अंगो०-देवाणु०। तिरिक्ख-मणुसायुगं देवोघं।
- २२१. देवायु० उ०िह०वं० पंचणा०-छदंसणा०-सादा०-चदुसंज०-पुरिस०-हस्स-रिद-भय-दुगुं०-देवगिद-पसत्थद्वावीस-उच्चा०-पंचंत० णिय० वं० संखेज्जगुणहीणं० । थीणिगिद्धितिय-भिच्छ०-वारसक०-तित्थय० सिया० संखेज्जगुणही० । सेसास्रो पगदीश्रो सोधम्मभंगो । णवरि त्राहारदुगं त्रोघं । एवं पम्माए वि । णवरि सहस्सारभंगो काद्व्यो ।
- २२०. पीत लेश्यावाले जीवोंमें देवगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच क्षाना-वरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्न संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, त्रादेय, निर्माण, उच्च गोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्रुष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता वेदनीय, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रित, श्ररित, शोक, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशकीर्ति और अयशकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्रुष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है। यदि अनुत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्रुष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्रुष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वी की मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्निकर्प सामान्य देवोंके समान है।
- २२१. देवायुकी उत्छए स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनीय, चार संज्वलन, पुरुषचंद, हास्य, रित, भय, जुगुप्सा, देवगित श्रादि प्रशस्त श्रद्धाईस प्रकृतियाँ, उच्च गोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रमुत्कृष्ट संख्यात गुणहोन स्थितिका बन्धक होता है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, बारह कषाय, श्रीर तीर्थक्कर इनका कदाचित् बन्धक होता है। स्थितका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहोन स्थितिका बन्धक होता है। तथा शेप प्रकृतियोंका भक्क सौधम कल्पके समान है। इतनी विशेषता है कि श्राहारकि कका भक्क श्रोधके समान है। इसी प्रकार एवा लेश्याम भी जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसमें सहस्रार कल्पके समान कथन करना चाहिए।

२२२. सुक्काए आणद्भंगो । एवरि देवायु॰ ओघं । देवगदि॰ उ०िह०वं॰ पंचणा॰-एवदंसणा॰-भिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं॰-पंचिद्यि०-तेजा०-क०-समचदु॰-वएए।०४-अगु॰४-पत्थ॰-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-िएभि॰-उच्चा०-पंचेत॰ िएय० वं० संखेज्जदिभागू॰ । सादासाद०-इत्थि०-पुरिस०-हस्स-रिद-अरिद-सोग-थिरादि-तिएएपुगलं सिया० संखेज्जदिभागू० । वंउिच्व०-वंउिच्व०-यंजिव० आंगो०-देवाणु० िएयमा वंधगो । तं तु० । एवं वेउिच्व०-वेउिच्व० आंगो०-देवाणु० । आहारद्गं आघं ।

२२३. भवसिद्धिया० अब्भवसिद्धिया० ओघं । सम्मादिष्टि-खइगसम्मादि० वेदगस०-उत्तसमसम्मा० ओघिभंगो । एविर उत्तसमे तित्थयरस्स संजदभंगो । सेसाएां सम्मादिद्दीएां तित्थय० उ०द्वि०वं० देवगदि-वेउब्वि०-वेउब्वि०अंगो०-देवागु० णि०वं०। तंतु० । एविर खइगे मणुसगदि-देवगदिसंजुत्ताओ सत्थाणे काद्व्वाओ ।

२२२. शुक्ल लेश्यामें श्रानत कल्पके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि देवायुकी मुख्यतासं सिन्नकर्प श्रीघके समान है। तथा देवगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पांच बानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चिन्द्रिय जाति, तेजस शरीर, कामेण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, त्रादेय, निर्माण, उच्चगोत्र श्रार पांच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता वेदनीय, स्रीवेद. पुरुष्यंद, हास्य, रित, श्ररति, श्रोक श्रीर स्थिर श्रादि तीन युग उ इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। विक्रियक शरीर, वैक्रियक श्राङ्गोणाङ्ग श्रीर देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रवन्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका स्थानका वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका स्री वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपंत्ता श्रान्तकृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार वैक्रियक शरीर, वैक्रियिक श्राङ्गोणाङ्ग श्रीर देवगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। तथा आहारक द्विककी मुख्यतासे सन्निकर्प श्रीघके समान है।

२२३. भन्य श्रोर श्रभन्य जीवों में श्रपनी श्रपनी प्रकृतियों का सिन्तकर्प श्रीघके समान है। सम्यन्दि, लायिक सम्यन्दिए, वेदक सम्यन्दिए श्रोर उपश्रम सम्यन्दिए जोवों में श्रपनी श्रवतियों का भङ्ग श्रवधिक्षानी जीवों के समान है। इतनी विशेषता है कि उपश्रम सम्यन्द्वमें तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग संयत जीवों के समान है। रोप सम्यन्दिए जीवों में तीर्थङ्कर प्रकृतिको उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव देवगति, वैकियिक श्रिर, वैकियिक श्राङ्गीपाङ्ग श्रीर देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका चन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टिकी श्रपेत्ता श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इतनो विशेषता है कि ज्ञायिक सम्यक्त्वमें मनुष्यगति श्रीर देवगति संयुक्त प्रकृतियों को स्वस्थानमें करना चाहिए।

२२४. सासणे' आभिणिबोधि॰ उक्क॰ द्वि०बं॰ चदुणा०-णवदंसणा॰-असादा॰-सोलसक०-इत्थि०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खगदि-पंचिदि॰-ओरालि०-तेजा०-क०-वामणसंठा॰--ओरालि०अंगो०-खीलियसंघ०--वग्ण०४--तिरिक्खाणु०--अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत०णि०वं० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

२२५. सादा॰ उ०द्वि०वं० पंचणा॰-णवदंसणा०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिदि०-तेजा॰-क॰-वएण०४-अगु॰४-तस०४-णिमि॰-पंचंत०णि॰ वं० संखेज्जिदिभा-गूणं वं० । इत्थि॰-अरदि-सोग-तिरिक्खगदि-मणुसगदि-श्रोरालि०-चदुसंठा॰-श्रोरालि० श्रंगो॰-चदुसंघ०--दोश्राणु०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-श्रथिरादिछ०--णीचा० सिया० संखे-ज्जदिभागू० । पुरिस०-देवगदि-वेउिव०-समचदु०-वेउिव०श्रंगो०-वज्जरि०-देवाणु०-

२२४. सासादन सम्यक्त्वमें श्रामिनिवोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव चार क्षानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, सोलह कपाय, स्रोवेद, श्ररित, शोक, भय, जुगुष्सा, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वामन संस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, कीलक संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघ चतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह, निर्माण, नीचगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृप्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेदा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् ग्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उन्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भो बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टको अपेचा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए श्रीर तब यह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेजा श्रमुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर प**ल्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तक स्थि**तिका बन्धक होता है।

२२४. साता वेदनीयको उत्कृष्ट स्थितिका वन्धक जोव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, सोलह कपाय, भय, जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रुतन्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। स्थोचेद, श्ररित, शोक, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, श्रौदारिक शरीर, चार संस्थान, श्रौदारिक श्राक्षोपाङ्ग, चार संहनन, दो श्रानुपूर्वां, उद्योत, श्रप्रशस्त विहायोगित, श्रस्थिर श्रादि छह और नोच गोत्र इनका कदाचित् वन्धक होता है । यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भागहोन स्थितिका वन्धक होता है। पुरुषचेद, देवगित, वैक्रियिक शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ज्ञाभ

१ मूलप्रतौ सासणे उक्क॰ट्टि॰बं॰ म्राभिणिबोधि॰ चेदुग्रा॰ इति पाठः।

पसत्थ०-थिरादिछ०-उचा० सिया० वं० | तं तु० | एवं सादभंगो पुरिस०-हस्स-रिट्-समचदु०-वज्जरिस०-पसत्थ०-थिरादिछ०-उचा० | तिरिएणत्रायुगाणं त्रोघं |

२२६. मणुसग० उ०िह०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-श्रसादा०-मिच्छ०- सोल-सक०-इत्थिवे०-त्र्रारदि-सीग-भय-दुगुं०--णाम सत्थाणभंगो णीचा०-पंचंत० णि० वं० संखेज्जदिभागू०। इत्थि० णि० वं० संखेजदिभागू०। मणुसाणु० णि० वं०। तं तु०। एवं मणुसाणु०।

२२७. देवगदि॰ उ॰िह०वं० पंचणा०--एवदंसणा०--सोलसक०--भय-दुगुं०-उच्चा॰-पंचंत॰-णि० वं॰ संखेडजिद्भागूणं० । सादा०-पुरिस०-हस्स--रिद सिया॰ । तंतु०। असादा०-इत्थिवे०-अरिद-सोग० सिया॰ संखेडजिद्मागू०। णामाणं सत्थाण-

नाराच संहनन, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगित, स्थिर आदि छह श्रीर उचगित्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेद्मा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्थका असंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार सातावेदनीय प्रकृतिके समान पुरुपवेद, हास्य, रित, समवनुरुस्च संस्थान, वज्यभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, स्थिर आदि छह और उच्च गोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। तोन आयुर्थोकी मुख्यतासे सन्निकर्प श्रीष्टक समान है।

२२६. मनुष्यगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रमाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, स्त्रीवेद, श्ररित, शोक, भय, जुगुष्सा, स्वस्थान भक्क समान नाम कर्मकी प्रकृतियाँ, नोचगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रोवेदका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी श्रपेत्ता श्रनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२२७. देवगतिकी उत्रुष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिश्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुःसा, उच्चगोत्र श्रोर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्रुष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, पुरुपवेद, हास्य श्रोर रित इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्रुष्ट स्थितिका भो बन्धक होता है श्रीर श्रनुत्रुष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रनुत्रुष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्रुष्टिकी श्रपेचा श्रनुत्रुष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। श्रसाता वेदनीय, स्त्रीवेद, श्ररित श्रीर शोक इनका कदाचित बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्रुष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। श्रसाता वेदनीय, स्त्रीवेद, श्ररित श्रीर शोक इनका कदाचित बन्धक होता है जो नियमसे श्रनुत्रुष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक

भंगो । एवं वेउव्वि ॰-वेउव्वि ॰ ऋंगो ॰-देवाणु ० । तिष्णिसंठा ०--तिष्णिसंघ० ऋोघं । २२८. सम्माभि० वेदग०भंगो । मिच्छादिहि त्ति मदि ॰ भंगो । सिष्णि ॰ ऋोघं । असण्णीसु ऋाभिणिवोधि ॰ उ ॰ हि ॰ वं ॰ यथा तिरिक्खोघं पढमदंडस्रो तथा णेदव्वा । सादावे ०-इत्थिवे ०-हस्स-रिध-ऋरदि ॰ पंचिदियतिरिक्खऋपज्जत्तभंगो ।

२२६. पुरिस० उ०िह० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भयदुगुं०--पंचिदि०--तेजा०--क०--वर्गण०४--अगु०४--तस४--णिमि०--पंचंत० णि० बं०
संखेजजिद्भागू० । सादासाद०-हस्स-रिद-अरिद-सोग-दोगिद--ओरालि०--पंचसंठा०ओरालि० अंगो०-पंचसंघ०--दोत्राणु०-उज्जो०--अप्पसत्थ०-थिराथिर--सुभासुम-जस०अजस०-णीचा० सिया० संखेजजिद्भागू० । देवगिद-समचदु०-वज्जिरिस०-देवाणु०पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदे०-उच्चा० सिया० । तं तु० । वेउिव्व०-[वेउिव्व०]अंगे।०
सिया० संखेजजिद्भागू०। एवं पुरिसभंगो समचदु०-वज्जिरसभ०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सरहोता है । नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है । इसी प्रकार वैकियिक शरीर,
वैकियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सिन्नकर्प जानना चाहिए । तीन
संस्थान और तीन संहननकी मुख्यतासे सिन्नकर्प श्रोघके समान है ।

२२८. सम्यग्मिण्यादिष्ट जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भक्क वेदक सम्यग्दिष्टियोंके समान है। मिण्यादिष्ट जीवोंमें मत्यक्वानियोंके समान है संक्षी जीवोंमें श्रोधके समान है। असंक्षी जीवोंमें श्रामिनिवोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवके जिस प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंके प्रथम दण्डक कहा है उस प्रकार जानना चाहिए। साता वेदनीय, स्त्रीवेद, हास्य, रित श्रोर अरितकी मुख्यतासे सन्निकर्य पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान जानना चाहिए।

२२६. पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच श्वानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोल्ह कपाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रसचतुष्क, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता वेदनीय, हास्य, रित, अरित, शोक, दो गति, औदारिक शरीर, पाँच संस्थान, ग्रीदारिक ग्राङ्गोपाङ्ग, पाँच संहतन, दो त्रानुपूर्वी, उद्योत, ग्राप्रशस्त विहायोगित, स्थिर, श्रस्थिर, श्रम, श्रशम, यशकीर्ति, श्रयशकीर्ति श्रौर नीचगोत्र इनका कदाचित बन्धक होता है श्रीर कदाचित अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अनु त्क्रप्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका वन्धक होता है। देवगति, सभचतुरस्र संस्थान, वज्रर्पभनाराच संहनन, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रीर उच्चगोत्र इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवा भाग न्यून तक स्थितिका वन्धक होता है। वैकियिक शरीर त्रीर वैकियिक त्राङ्गोपाङ्गका कदाचित् बन्धक होता है त्रीर कदाचित ग्रबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रवुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार पुरुपवेदके समान समजतरम्य संस्थान, वज्रर्पभ

श्रादे०-उच्चा० । एविर उच्चागोटे तिरिक्खगदितिर्गं वज्ज ।

- २३०. दोग्हं आयुगाणं तिरिक्खगदीए । ण्विर संखेडजिद्भागू० । णिरयायु-ग० उ०िह॰वं॰ यात्रो पगदीत्रो वंधिद तात्रो पगदीत्रो तं तु विद्वाणपिददं बंधिद, असंखेडजिद्भागहीणं वा संखेडजिद्भागहीणं वा । देवायु० उ०िह०वं॰ यथा ति-रिक्खगदीए । ण्विर पंचणा०-ण्वदंसणा०-सादाव०-मिच्छ०-सोलसक०-पुरिस०-इस्स-रिद-भय-दु०-देवगदि-पसन्थद्वावीस-उच्चा०-पंचंत० णि० वं० संखेडजिद्भागू०।
- २३१. तिरिक्खगदि० उ०िह०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-भिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरिद-सोग-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-हुंडसं०-वण्ण०४-अगु०-उप०-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० वं० संखेज्जिदिभागू०। एइंदि०-ओरालि०-तिरिक्खाणु०-थावर-सुहुम-अपज्जत्त-साधार०णि० वं०। तं तु०। एदासिं तं तु० पदिदाणं सरिसो भंगो काद्व्वो। मणुसगदिदुगं यथा अपज्जत्तभंगो।

नाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रकी मुख्यतासे समभना चाहिए। इतनो विशेषता है कि उच्चगोत्रमें तिर्यश्चगितित्रिकको छोड़कर सन्निकर्प कहना चाहिए।

- २३०. दो श्रायुश्रोंकी मुख्यतासे सिन्नकर्प तिर्यञ्चगितके साथ कहना चाहिए। इतनी विशेषता है कि संख्यातवां भाग न्यून कहना चाहिए। नरकायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव जिन प्रकृतियोंको वाँधता है उन प्रकृतियोंको वह दो स्थान पितत वाँधता है। या तो श्रसंख्यातवां भाग होन वाँधता है। या संख्यातवां भाग होन वाँधता है। देवायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव तिर्यञ्चगितमं कहे गये सिन्नकर्पके समान सिन्नकर्पको प्राप्त होता है। इतनी विशेषता है कि पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, पुरुपवेद, हास्य, रित, भय, जुगुप्सा, देवगित प्रभृति श्रद्धाईस प्रशस्त प्रकृतियां, उद्यगीत श्रीर पाँच श्रन्तराय हनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रमुत्रष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।
- २३१. तिर्यञ्चगितकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नो दर्शना वरण, ग्रसाता वेदनीय, मिध्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसकवेद, ग्ररित, शोक, भय, जुगुप्सा, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु, उपघात, श्रस्थिर ग्रादि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र ग्रीर पाँच ग्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे ग्रानुत्कृष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर, सूदम, ग्रपर्यात श्रीर साधारण इनका नियमसे वन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रानुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रानुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी ग्रपेचा श्रानुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। यहाँ इन 'तं तु' पतित प्रकृतियोंका एक समान भङ्ग करना चाहिए। तथा मनुष्यगित द्विककी मुख्यतासे सन्निकर्ष श्रपयिक समान है।

१--मूलप्रती तिगं च दोग्रहं इति पाढः।

२३२. देवगदि० उ०द्वि०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-भिच्छ०-सोलसक०-भयदुगुं०-पंचिदि० याव णिमिण ति पंचंत० णि० वं० संखेजनिदभागू०। सादासाद०इत्थिवं०-इस्स-रिद-अरिद-सोग-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० संखेजनिदभागू०। पुरिस० सिया०। तं तु०। समचदु०-देवाणु०-पसत्थिव०-सुमग-सुस्सरआदेजन-उच्चा० णि० वं०।तं० तु०। [वंउव्वि०] वेउव्विश्चंगो० णि० वं० संखेजनिदभागू०। एवं देवाणु०। ओरालि०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त० अपज्जत्तभंगो।
आदाउज्जो०-थिर-सुभ-जस० अपज्जत्तभंगो।

२३३. त्राहार० मूलोघं । त्र्रणाहार० कम्मइगभंगो । एवं उकस्सपरत्थाणसण्णियासो समत्तो ।

२३४. जहएएए पगदं । एत्तो जहएएएपदसिएएयाससाधएार्ड अद्दर्भद्--समासलक्ष्यणं वत्तडम्सामा । तं जहा-पंचिदियाणं सएएरीएां भिच्छादिद्दीणं अन्मव--

२३२. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जातिसे लेकर निर्माण तक श्रीर पाँच त्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यन स्थितिका बन्धक होता है। साता चेदनीय, ग्रसाता चेदनीय, स्त्रीवेद, हास्य, रित, ग्ररित, शोक, स्थिर, ग्रस्थिर, ग्रुभ, ग्रग्रुभ, यशःकोर्ति श्रौर त्र्रयशःकोर्तिका कदाचित वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका वन्धक होता है। पुरुषवेदका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुन्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यह अनुन्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्क्रप्रकी श्रपंत्ता श्रनुत्क्रप्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। समचतुरस्र संस्थान, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रौर उच्चगोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्क्रप्ट स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रमुत्कृष्ट स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेत्ता अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग न्यून तकस्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर श्रीर वैक्रियिक त्राङ्गोपाङ्गका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे त्रनुकृष्ट संख्यातवां भागहीन स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार देवगत्यानुपूर्वाकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। श्रौदारिक शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रौर श्रसम्प्राप्तासृपाटिका संहननकी मुख्यतासे सन्नि-कर्प अपर्यात्तके समान है। तथा आतप, अद्योत, स्थिर, श्रभ और यशःकर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्प श्रपर्याप्तके समान है।

२३३. श्राहारक जीवोंमें श्रपनी प्रकृतियोंका सन्निकर्प मूलोधके समान है श्रीर श्रनाहारक जीवोंमें कार्मण काययोगी जीवोंके समान है।

इस प्रकार उत्कृष्ट परस्थान सन्निकर्प समाप्त हुन्ना ।

२३४. जघन्य सन्निकर्षका प्रकरण है, इस कारण जघन्य पद सन्निकर्पकी सिद्धि करनेके लिये श्रर्थपदभूत समास लच्चण कहते हैं। यथा—पञ्चेन्द्रिय संज्ञी मिध्यादिष्ट जीवोंमें सिद्धिया० पात्रोग्गं अंतोकोडाकोडिव्यत्तं वंधमाणस्स णित्थ हिद्विंचवोच्छेदो । श्रंतोसागरोवमकोडाकोडीए श्रद्धिद्विंपद्वायं वंपमाणो पि ए वंपदि। तदो सागरोवमसद्पुधत्तं त्रोसरिदृश शिरयायुवंधो त्र्योच्छिज्जदि । तदो सागरोवम० श्रोसिक विरिक्खायुवंधवोच्छेटो । तदो सागरोवम श्रीसिक मणुसायु० वंध-श्रोसिक् ि शारयगदि-शारयाणुपु एदाश्रो द्वं पगदीश्रो एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरोवम० त्रोसिक मुहुम-ऋपज्जत्त-साधारण० संजुत्ताऋो एदाऋो तिएए पग-दीत्रो एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० त्रोसिक सुदूप-त्र्यपज्जत्त-पत्तेय । संजुत्ता-त्रो तिरिए पगदीत्रा एकदो वंधवोच्छंदो । तदो सागरो० त्रोसिक वादर-त्रपज्जत्त-साधारणं संजुत्तात्रो एदात्रो तिरिण पगदीत्रो एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० **ब्रोसिक बाँदर-अपज्जत्त-पत्तेय० संजुत्ताओ ए**दाओ तिरिएए पगदीओ एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० श्रोसिक् वीइंदि०-श्रपज्ञत्त एदाश्रो द्वे पगदीश्रो एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० श्रोसिक् तीइंदि०-श्रपज्जत्त० एदाश्रो द्वे पग-दीत्रो एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० त्रोसिक्क० चदुरिंदि०-ऋपज्जत्त० एदात्रो दवे पगदीत्रो एकदो बंधवोच्छेदो । तदो सागरी० त्रोसिक० पंचिदियत्रसिएण-त्रपज्जत्त० एदात्रो द्वे पगदीत्रो एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० त्रोसिक० पंचि-श्रभव्योंके योग्य श्रन्तःकोड़ाकोड़ी पृथक्त्व प्रमाण स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवके स्थितिकी बन्ध ब्युच्छित्ति नहीं होती। अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरके आर्ध स्थिति बन्ध स्थानका बन्ध करनेवाला भी नहीं बाँधता । पुनः इससे सौ सागर पृथक्तवका अपसरण होनेपर नरकायुकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होने पर तिर्यञ्चायुकी वन्ध व्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तवका ग्रपसरण होनेपर मनुष्यायुकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्वका ग्रपसरण होकर देवायुकी बन्धव्युव्छित्ति होर्ता है । **इ**ससे सौ सागर पृथवत्वका श्रपसरण होकर *नरक*् गति श्रीर नरकगत्यानुपूर्वी इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छिति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तवका अपसरण होकर सुदम, अपर्याप्त और साधारण संयुक्त इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धन्युच्छित्ति होती है। इससे सो सागर पृथक्तवका ग्रपसरण होकर सृक्ष्म, श्रपर्याप्त श्रीर प्रत्येक संयुक्त इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ वन्धन्युचिछत्ति होती है। इससे सौ सागर प्रथक्तवका अपसरण होकर बादर, अपर्याप्त और साधारण संयुक्त इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छिति होती है । इससे सौ सागर पृथक्तवका श्रवसरण होकर बादर अपर्याप्त और प्रत्येक संयुक्त इन तीन प्रकृतियोंको एक साथ बन्धब्युच्छिति होती है। इससे सौ सागर प्रथक्त्वका अपसरण होकर द्वीन्द्रिय जाति ब्रोर अपर्याप्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सी सागर प्रथक्त्वका अपसरण होकर त्रोन्द्रिय जाति श्रोर श्रपर्याप्त इन दो प्रकृतियोंको एक साथ वन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्वका ऋपसरण होकर चतुरिन्द्रिय जाति और ऋपर्याप्त इन दो प्रकृतियों-की एक साथ बन्धव्युच्छिति होती है। इससे सौ सागर प्रथक्तका श्रपसरण होकर पञ्चेन्द्रिय श्रसंभी श्रौर श्रपर्याप इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धन्यिन्त्रित्त होती है। इससे सौ दियसिएए-अपज्जत्त एदाओ दुवे पगदीओ एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरो अोसिक असुम-पज्जत्त-साधाराए० एदाओ तिएएए पगदीओ एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० ओसिक सहुम-पज्जत्त-पत्तेय० संजुत्ताओ एदाओ तिएएए पगदीओ एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० ओसिक वादर-पज्जत्त-साधारएए-संजुत्ताओ एदाओ तिएएए पगदीओ एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० ओसिक वादरएइंदि०-आदाव-थावर-पज्जत्त-पत्तेय० संजुत्ताओ एदाओ पंच पगदीओ एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० ओसिक वीइंदिय-पज्जत्त० संजुत्ताओ एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० ओसिक तीइंदिय-पज्जत्त० संजुत्ताओ एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० ओसिक तीइंदिय-पज्जत्त० संजुत्ताओ एदाओ दुवे पगदीओ० वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० ओसिक चुर्रिंदिय-पज्जत्त० संजुत्ताओ एदाओ दुवे पगदीओ० वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० ओसिक चुर्रिंदिय-पज्जत्त० संजुत्ताओ एदाओ दुवे पगदीओ० वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० ओसिक प्रविच्यासिक तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०उज्जो० संजुत्ताओ एदाओ तिरिएए पगदीओ एकदो वंधवोच्छेदो । तदो सागरो० ओसिक असिक अप्पत्त्यल दुस्सर-अए।दे० एदाओ चुप्पदीओ एकदो सागरो० ओसिक अप्पत्त्य०-दूभग-दुस्सर-अए।दे० एदाओ चुप्पदीओ एकदो

सागर पृथक्तवका अपसरण होकर पञ्चेन्द्रिय संज्ञी श्रीर श्रपर्याप्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्ध व्युच्छित्ति होती है । इससे सौ सागर पृथक्त्वका श्रपसरण होकर सूदम, पर्याप्त श्रीर साधारण इन तीन प्रकृतियोंको एक साथ वन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका ग्रपसरण होकर सूक्ष्म, पर्याप्त श्रीर प्रत्येक संयुक्त इन तीन प्रकृतियोंकी एक . साथ बन्धव्युचिछुत्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका श्रपसरण होकर बादर, पर्याप्त ग्रौर साधारण संयुक्त इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छिति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तवका अपसरण होकर बादर एकेन्द्रिय, ब्राउप, स्थावर, पर्याप्त श्रीर प्रत्येक संयुक्त इन पाँच प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तवका अपसरण होकर होन्द्रिय जाति श्रौर पर्याप्त संयुक्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्यच्छिति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका श्रपसरण होकर त्रीन्द्रिय जाति श्रीर पर्याप्त संयुक्त इन दो प्रकृतियोंकी एस साथ बन्धन्युचिछत्ति होती है। इससे सौ सागर पुथक्तवका ऋपसरण होकर चतुरिन्द्रिय जाति और पर्याप्त संयुक्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागरपृथक्तवका त्रपसरण होकर पञ्चेन्द्रिय त्रसंबी श्रीर पर्याप्त संयुक्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छिति होती है। इससे सौ सागर प्रथक्तवका अपसरण होकर तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योत संयुक्त इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छिति होती है। इससे सौ सागर पृथत्वका ग्रपसरण होकर नीचगोत्रकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तवका श्रपसरण होकर अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर श्रीर श्रनादेय इन चार प्रकृतियोंकी एक साथ

१. मृलप्रती सुहुम श्रपजन्त इति पाठः।

२. मूलप्रतो बादर श्रपजत्त इति पाठः।

३. मूलप्रतो एदास्रो दो पगर्दास्रो इति पाटः।

वंथवोच्छेदो । तदो सागरो० श्रोसिक हुं इसं०-श्रसंवत्त० एदाश्रो दुवे पगदीश्रो एकदो वंथवोच्छेदो । तदो सागरो० श्रोसिक एदाश्रो दुवे पगदीश्रो एकदो वंथवोच्छेदो । तदो सागरो० श्रोसिक वामणसं०-सीलियसं० एदाश्रो दुवे पगदीश्रो एकदो वंथवोच्छेदो । तदो सागरो० श्रोसिक खुज्जसं०-श्रद्धणारा० एदाश्रो दुवे पगदीश्रो एकदो वंथवोच्छेदो । तदो सागरो० श्रोसिक विविव संविव वंथवोच्छेदो । तदो सागरो० श्रोसिक सादिय०-णाराय० एदाश्रो दुवे पगदीश्रो एकदो वंथवोच्छेदो । तदो सागरो० श्रोसिक पागोद०-वज्जणारा० एदाश्रो दुवे पगदीश्रो एकदो वंथवोच्छेदो । तदो सागरो० श्रोसिक पागोद०-त्रज्ञारालि०-श्रोरालि०-श्रोरालि० श्रंगो०-वज्जिरस०-मणुसाणु० एदाश्रो पंच पगदीश्रो एकदो वंथवोच्छेदो । तदो सागरो० श्रोसिक श्रसादा०-श्ररदि-सोग-श्रीय-श्रसुभ-श्रजस० एदाश्रो ह्र पगदीश्रो एकदो वंथवोच्छेदो । एतो पाए सेसाणि सव्वकस्माणि सव्वविसुद्धो वंथिद । एदेण श्रहपदेण समासभूदलक्खणेण साथणेण।

२३५. जहरणसिएणयासो दुवियो-सत्थाणसिएणयासो चेव परत्थाण-सिएणयासो चेव । सत्थाणसिएणयासे पगदं । दुविधो णिदेसो--श्रोघे० झादे० । स्रोघे० स्राभिणिवोधि० जहरणाद्विदिवंधगाणो चदुरणं णाणावर० णियमा बंधगो । णियमा जहरणा । एवमेक्समेकस्स जहरणा ।

बन्धव्युचित्रति होती है। इससे सौ सागर पृथवत्वका त्रपसरण होकर हुण्ड संस्थान श्रीर श्रसम्प्राप्तास्पाटिका संहनन इन दो प्रशृतियोंकी एक साथ वन्धव्युच्छिति होती है । इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर नपुसकवेदकी वन्धब्युच्छिति होती है । इससे सौ सागर पृथक्त्वका अवसरण होकर वामन संस्थान और कीलक संहतन इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ वन्धव्यविञ्चत्ति होती है। इससे सौ सागर प्रथक्त्वका अपसरण होकर कुब्जक संस्थान श्रौर श्रर्धनाराच संहतन इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धब्युच्छित्ति होती हैं । इससे सी सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर स्त्रोवेदकी वन्धव्युछत्ति होती है । इससे सी सागर पृथक्त्वका श्रापसरण होकर स्वाति संस्थान श्रौर नाराच संहनन इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर प्रथक्त्वका ग्रपसरण होकर न्यग्रोध परिमण्डल संस्थान श्रौर वज्रनाराच सहनन इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धन्युन्छिति होती है। इससे सौ सागर पृथक्तवका श्रपसरण होकर मनुष्यगति. श्रीदारिक शरीर, श्रीदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्पभनाराच संहनन श्रीर मनुष्यगत्यानुपूर्वा इन पाँच प्रकृतियोंकी एक साथ वन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर प्रथक्त्वका श्रपसरण होकर श्रसातावेदनीय, श्ररति, शोक, श्रस्थिर, श्रशुभ श्रीर श्रयशःकीर्ति इन छह प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युव्छित्ति होती है। इससे त्रागे प्रायः शेप सब कमाँको सर्वविशुद्ध जीव बाँघता है। इस अर्थपद रूप समासभूत लज्ञ्ण साधनके अनुसार—

२३४. जघन्य सिन्तकर्प दो प्रकारका है—स्वस्थान सिन्तकर्प और परस्थान सिन्तकर्ष । स्वस्थान सिन्तकर्षका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—स्रोध श्रीर श्रादेश। श्रीघसे श्राभिनिवोधिक झानावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार झानावरणका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार परस्पर जघन्य स्थितिक बन्धक होते हैं।

२३६. णिद्दाणिदाए जहण्णिट्टिदिबंधतो पचलापचला थीणिगिद्धी णिद्दा पचला य णिय॰ वंध० । तं तु जहण्णा वा अजहण्णा वा । जहण्णादो अज-हण्णा समजुत्तरमादिं कादृण याव पिलदोवमस्स असंसेज्जदिभागन्भिहयं वंधिद । चदुदंसणा० णि० वं० णि० अजह० असंसेज्जगुणन्मिहयं वंधिद । एवं णिद्दिणिद-भंगो चदुदंसणा० । चक्खुदं० जह०डि०वं० तिरिणदंसणा० णि० वं० णि० जहण्णा० । एवमेक्कमेक्कस्स । तं तु जहण्णा० ।

२३७. साद॰ ज॰िंट०वं० ग्रसाद॰ ग्रवंधगो । ग्रसाद० जह०िंठ०वं० साद० ग्रवंधगो ।

२३८. मिच्छत्त० जह० डि०वं० वारसक०-हस्स-रिद-भय-दुगुं० णि० वं० । तं तु जह० अनहएणा वा । जह० अनह० समजत्तरमादि कादृण याव पितदोव-मस्स असंखेळिदिभागव्भिहयं वंथिद । चहुसंज०-पुरिस० णि० वं० णि० अन० असंखेळिगुणव्भिहयं वं० । एवं भिच्छत्तभंगो वारसक०-हस्स-रिद-भय-दुगुं० ।

२३६. कोधसंजल जह०िं वं० तिरिणसंजलणं णि० वं० संखेज्जगुण-

२३६. निद्रानिद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि, निद्रा ग्रीर प्रचला इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि ग्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि ग्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो जघन्यकी ग्रिपंचा ग्रजघन्य एक समय ग्रिधिकसे लेकर पत्यका ग्रसंख्यातवां भाग ग्रिधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। चार दर्शनावरण्का नियमसे बन्धक होता है। इसी प्रकार निद्रानिद्राके समान चार दर्शनावरण्का सन्निकर्प जानना चाहिए। चक्षुदर्शनावरण्की जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन दर्शनावरण्का नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्प होता है। किन्तु तव वह जघन्य स्थितिका बन्धक होता है।

२३७. साता प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव श्रसाता प्रकृतिका श्रबन्धक होता है। श्रसाता प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव साता प्रकृतिका श्रवन्धक होता है।

२३८. मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव बारह कपाय, हास्य, रित, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भो बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका भो बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। चार संज्वलन और पुरुषवेदका नियमसे बन्धक होता है। चार संज्वलन और पुरुषवेदका नियमसे बन्धक होता है। चार संज्वलन और पुरुषवेदका नियमसे बन्धक होता है। इसी प्रकार मिथ्यात्वके समान बारह कपाय, हास्य, रित, भय और जुगुप्साकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

२३९. क्रोध संज्वलनकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव तीन संज्वलनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणा अधिक स्थितका बन्धक होता है। मान

१ मूलप्रती णि॰ श्रसंज॰ श्रसांखे॰ इति पाटः।

ब्महियं बं० । माणसंज्ञ जह०द्विदिवं० दोएहं संजल० णि॰ वं। णि॰ अज० संखेजजगुणब्महियं वं० । मायासंज्ञ जह०द्वि०वं० लोभसंज० णि॰ वं० संखेज्ज-गुणब्महियं वं० ।

२४७. इत्थिवे० जह०द्वि०वं० मिच्छ०-वारसक०-भय-दुगुं० [ णि० वं० ] ऋसंखेज्जभागव्भिहियं वं० | चदुसंज० णि० वं० णि० अज० असंखेज्जगुणव्भिहियं वं० | हस्स-रिद्-अरिद्-सोग० सिया० असंखेज्जभागव्भिहियं वं० | एवं एगुंस० |

२४१. पुरिस॰ जह०हि॰वं० चदुसंज० णि० वं॰ संखेजागुण्यभिह्यं वं॰ ।

२४२. अरदि॰ जह०द्वि०वं॰ मिच्छत्त-वारसक॰-भय-दुगुं० णि॰ वं॰ णि० अज॰ असंखेजभागब्भिहयं वं० | चदुसंज० णि॰ वं० णि॰ अज० असंखे-जागुणुब्भिहयं वं० | सोग॰ णि॰ वं० | तं तु० | एवं सोग॰ |

संज्वलनको जघन्य स्थितिका बन्धक जीव दो संज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणा अधिक स्थितिका बन्धक होता है। माया संज्वलनको जघन्य स्थितिका बन्धक जीव लोभ संज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणा अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

२४०. स्रोवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मिश्यात्व, बारह कपाय, भय और जुगुष्साका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातवां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। चार संज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यात गुणा अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, अरित और शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसक वेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४१. पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार संज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे त्रजघन्य संख्यात गुणा त्रधिक स्थितिका वन्धक होता है।

२४२. ग्ररंतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, वारह कपाय, भय ग्रौर जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे ग्रजघन्य ग्रसंख्यातवां भाग ग्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। चार संज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे ग्रजघन्य ग्रसंख्यात गुणा अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शोकका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है ग्रौर ग्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि ग्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको ग्रपंता ग्रजघन्य एक समय ग्रधिकसे लेकर पत्यका ग्रसंख्यातवां भाग ग्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

२४३. नरकायुकी जधन्य स्थितिका बन्धक जीव शेष आयुओंका अवन्धक होता है। इसी प्रकार परस्पर एक आयुका बन्ध करनेवाला अन्य आयुओंका अवन्धक होता है। २४४. णिरयगदि॰ ज॰डि०वं॰ पंचिदि॰-तेजा०-क०-हुंड०-वएए।०४-त्रागु० ४-त्रप्रसत्यवि०-तस॰४-त्र्रथिरादिछ॰-ए।० ए।० वं० संखेजजगुणुब्भिहयं वं० | वेउब्वि॰-वेउब्वि०त्रांगो० ए।० वं० संखेजजभागब्भिह्यं | णिरयाणु॰ णि० वं० | तं तु० | एवं णिरयाणु० |

२४५. तिरिक्खग० ज॰ द्वि०वं० पंचिदि०-श्रोरालिय०-तेजा०-क०-समचदु०-श्रोरालि०श्रंगो०-वज्ज रि०-वएण०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०४-पसत्थवि०-तस०४-थिरा--दिपंच-णिमि० णि० वं० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । जसगि० णि० वं० श्रसंखेज्जगुण्याक्महियं० । एवं तिरिक्खाणु०-उज्जो० ।

२४६. मणुसग० ज०िह०वं० पंचिंदि०-त्रोरालि०--तेजा०--क०--समचदु०-त्रोरालि०त्रंगो०-वज्जरि०-वएण०४-मणुसाणु०--त्रगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिपंच-

२४४. नरकगितकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगिति, अस चतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यात गुणा अधिक स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिक आक्षोपाङ्कका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगत्यानुपूर्वोका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेका अजघन्य एक समय अधिक लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वोकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४४. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान. श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्रकंभ नाराच संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, श्रसचतुष्क, स्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रणेचा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसं छेकर पत्थका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रणेचा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यश-किर्तिका नियमसे बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य श्रसंख्यातगुणा श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। यश-किर्तिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य श्रसंख्यातगुणा श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य श्रसंख्यातगुणा श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रौर उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्य जानना चाहिए।

२४६. मनुष्य गतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्न संस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्रर्पभ नाराच संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस णिमि० णि० वं० । तं तु० । जसगि० णि० वं० ऋसंखेज्जदिगुण्य्भिहियं वं० । एवं मणुसाणु० ।

२४७. देवगदि॰ जि॰ इ॰ पंचिदि॰ तेजा॰ क॰ समचदु॰ विगणि॰ ४ अगु०४-पसत्थ० तस॰ ४-थिरादिपंच-णिमि० णि० वं॰ संखेजजगुणब्भिहयं वं० । वेउन्वि-वेउन्वि-वेउन्वि० ग्रंगो०-देवाणु० णि॰ वं० । तं तु० । जसिग० सिया० असंखेजज-गुणब्भिहयं वं० । एवं वेउन्वि० श्रंगो०-देवाणु॰ ।

२४८. एइंदि॰ ज॰िड॰वं० तिरिक्खग॰-श्रोरात्ति०-तेजा॰-क॰-हुंड०-वराण०४-तिरिक्खाणु०-त्रगु०४--वादर-पज्जत्त-पत्ते॰-दूभग-त्रणादे०--णिपि० णि० असंखेजिदिभागब्भिहियं०। श्रादावं सिया०। तं तु०। उज्जो॰--थिराथिर-सुभासुभ-

चतुष्क, स्थिर ग्रादि पांच, और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थिति का भी बन्धक होता है ग्रीर ग्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि ग्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि ग्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। तो नियमसे जघन्यकी ग्रपंचा ग्रजघन्य एक समय ग्रधिकसे लेकर पत्यका ग्रसंख्यातवां भाग ग्रधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। यशःकीर्तिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे ग्रजघन्य ग्रसंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीको मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

२४७. देवगतिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र सस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्तविहायोगिति, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि पांच और निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आक्रोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेचा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पर्वका असंख्यातवां भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसो प्रकार वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आक्रोपाङ्ग और देवगन्यानुपूर्वीको मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४ ... एकेन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव तिर्यश्चगति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यश्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, दुर्भग, श्रनादंय श्रंर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रातपका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भो बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भो बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रणेचा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योत, स्थिर, श्रस्थिर, श्रुभ, श्रशुभ श्रौर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातवां भाग

अजस॰ सिया॰ असंखेज्जदिभागब्भिह्यं॰ । थावर० णि० वं॰ । तं तु० । जसिग० सिया॰ असंखेज्जदिगुणब्भिह्यं० । एवं आदाव-थावर० ।

२४६. बीइंदि० जह०ष्ठि०वं० तिरिक्खगदि-स्रोरालिय०-तेजा०-क०-हुंड०-स्रोरालि०स्रंगो०-स्रसंपत्त०-वएए०४-तिरिक्खाणु०-स्रगु०४-स्रप्पसत्थ-तस०४-दूभग-दुस्सर-स्रणादे०-िएमि० एि० वं० स्रसंखेज्जदिभागव्भिह्यं०। उज्जो० सिया०। थिरा-थिर-स्रभास्रभ-स्रजस० सिया० स्रसंखेज्जदिभागव्भिहयं०। जस० सिया० स्रसंखे-जनदिगु०। एवं तीइंदि०-चदुरिंदि०।

२५०. पंचिंदि० ज॰िंट०वं० त्रोरालि०-तेजा०--क०--समचदु०--स्रोरालि० स्रंगो०-वज्जरिस०-वएए।०४-स्रगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिपंच-णिमि० णि० वं० ।

श्रिषिक स्थितिका बन्धक होता है। स्थावरका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रोर श्रज्जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेज्ञा श्रज्जघन्य एक समय श्रिधिकसे लेकर पल्यका श्रक्षंख्यातवां भाग श्रिधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रक्षघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रातप श्रौर स्थावर प्रकृतियों की मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४९. द्वीन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तिर्यञ्चगित, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तासृपादिका संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, दुर्भग, दुःस्वर, श्रनादेय श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर, श्रस्थर, श्रुभ, श्रग्रभ श्रौर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। यश्रकोतिका कदाचित् वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। वियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार श्रीन्द्रिय जाति श्रौर चतुरिन्द्रय जातिकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

२४०. पञ्चेन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्न संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्रर्थभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, श्रगुरु लघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि पांच श्रौर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियम से जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय श्रिधकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगित, मनुष्यगित, दो श्रानुपूर्वी श्रौर उद्योत इनका

तं तु॰ । तिरिक्खगिद्-मणुसगिद्-दोत्राणु॰-उज्जो० सिया० । तं तु० । जस० णि॰ वं० असंखेजागु॰ । एवं पंचिद्यभंगो ओरालिय-तेजा०-क॰-समचदु०-ओरालि॰ अंगो०-वज्जरिस०-वएणु०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिपंच-णिमिण ति ।

२५१. ब्राहार० जह ॰ हि०वं ॰ देवगदि-पंचिदि०-वेउन्वि०तेजा ॰ -क०-सम-चदु०--वेउन्वि ॰ ग्रंगो०--वएए।०४--देवाणु०--त्रगु०४--पसत्थ ॰ -तस ॰ ४-थिरादिपंच--णिमि० एि।० वं ॰ संखे जगुए ब्मिहियं ०। श्राहार० श्रंगो० एि।० वं ०। तं तु०। जस ॰ एि।० वं० एि।० असंखे जगुए ब्मिहियं ०। तित्थय ॰ सिया।। तं तु०। एवं आहारअंगो ॰ -तित्थयरं।

२५२. एागोद्० जह०द्वि०वं० पंचिद्दि०-त्रोरालि०-तेजा०-क०-त्रोरालि०-

कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो ज्ञाचन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रज्ञाचन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अज्ञाचन्य स्थितिका वन्धक होता है। यदि अज्ञाचन्य स्थितिका वन्धक होता है। यशः श्रीधिकसे छंकर प्रत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रीधक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशः कीर्तिका नियमसे बन्धक होता है। यशः कीर्तिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञाचन्य श्रसंख्यातगुणो श्रीधक स्थितिका वन्धक होता है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान श्रोदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, श्रौदारिक शाङ्गोपङ्ग, वर्ज्ञप्रमनाराच संहनन, वर्णचतुरक, श्रगुरुलघुचतुरक, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुरुक, स्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण इनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४१. श्राहारक शरीरकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव देवगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, चैकियिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैकियिक श्राह्मोणाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, स्थिर श्रादि पांच श्रीर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका वन्धक होता है। श्राहारक श्राङ्गोणाङ्गका नियमसे वन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रणेचा श्रजधन्य एक समय श्रिधकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रिधकतक स्थितिका बन्धक होता है। यशः कोर्तिका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य श्रसंख्यातगुणी श्रिषक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे जधन्य होता है। यदि श्रजधन्य एक समय श्रिकते वन्धक होता है तो नियमसे जधन्यको श्रणेचा श्रजधन्य एक समय श्रधिक ते लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रिकत तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्राहारक श्राङ्गोणाङ्ग श्रौर तीर्थङ्कर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४२. न्ययोध परिमण्डल संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रोर निर्माण श्रंगो०--वर्षण ०४-श्रगु०४--पसत्थ०--तस०४--सुभग--सुस्सर श्रादे०-िणिमि०िष्ण० बं० श्रसंखेज्जभागब्भहियं० । तिरिक्ख०-मणुसगिद-वर्ज्जरि०-दोश्राणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-श्रजस० सिया० श्रसंखेज्जदिभा० । वज्जणारा० सिया० । तं तु० । जस० सिया० श्रसंखेज्जरुण० । एवं वज्जणारा० ।

२५३. सादिय० जह०द्वि०वं० णग्गोदभंगो । एवरि णाराय० सिया० । तं तु० । दोसंघ० सिया० असंखेज्जदिभा० । एवं णारायण० ।

२५४. खुज्ज॰ जह०द्वि॰बं॰ पंचिंदि०-स्रोरालि॰-तेजा॰-क०-स्रोरालि॰स्रंगो॰-वएए।०४-स्रगु०४-पसत्थ॰-तस०४-सुभग-सुस्सर-स्रादे०-एिमि० एि० बं० स्रसं-खेज्जदिभा०। तिरिक्ख॰-मणुसगदि-तिरिएएसंघ०-दोस्नाणु॰--उज्जो॰-थिराथिर-सुभा-

इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज घन्य श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगित, मनुष्यगित, वज्जर्षभनाराच संहनन, दो श्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, श्रस्थर, श्रभ, श्रशुभ श्रीर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज घन्य श्रसंख्यातवां भाग श्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। वज्जनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रज श्रवन्थ स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज घन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा श्रज घन्य एक समय श्रिधकसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग श्रिधक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज घन्य श्रसंख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वज्रनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

२४३. स्वाति संस्थानकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवकी श्रेपेत्ता सिन्नकर्प न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानके समान है। इतनी विशेषता है कि यह नाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रोर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका श्रव्यातवां श्राग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। दो संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४४. कुब्जक संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, श्रगुरुक्षघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रोर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगित, मनुष्यगित, तीन संहनन, दो श्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, श्रस्थिर, श्रम, श्रशुभ श्रोर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातवां

सुभ-त्रजस० सिया॰ त्रसंखेज्जिद्भा० । जस० सिया॰ त्रसंखेज्जिद्दिगु॰ । त्रादु-णारा॰ सिया॰ । तंतु॰ । एवं त्राद्धणारा॰ । एवं चेव वामणसंटा॰ । एवरि खीलिय० सिया० । तंतु॰ । एवं खीलिय० ।

२५५. हुंड० जह०द्वि०वं० पंचिदि०--श्रोरात्ति०-तेजा०--क०-श्रोरात्ति०श्रंगो०-वण्ण्०४-श्रगु०४--पसत्थ०--तस०४-सुभग--सुस्सर--श्रादे०-णिमि० णि० वं० | णि० श्रसंखेज्जदिभा० | दोगदि-पंचसंघ०--दोश्राणु०-उज्जो०--थिराथिर-सुभासुभ-श्रजस० सिया० श्रसंखेज्जदिभा० | श्रसंपत्त० सिया० | तं तु० | जस० सिया० श्रसंखेज्ज-दिगु० | एवं श्रसंपत्त० |

भाग अधिक स्थितिका वन्धक होता है। यशःकीर्तका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। अर्धनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार अर्धनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार वामन संस्थानकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार वामन संस्थानकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह कीलक संहननका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेका अजधन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्थका असंख्यातचां भाग अधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार कीलक संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४४. हुण्ड संस्थानकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शारीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य असंख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। दो गित, पाँच संहनन, दो श्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, श्रस्थिर, श्रभ, श्रशुभ श्रौर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकि श्रोदेशा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेक्षा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य असंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रसम्प्रातास्रपाटिका संहननकी मुख्यतासे सिक्षकर्ष जानना चाहिए।

२५६. ऋष्पसत्थ० ज॰ हि॰ वं॰ पंचिदि०--श्रोरात्ति०--तेजा०--क०--श्रोरात्ति०-श्रंगो॰--वएण०४--त्रगु०४--तस०४--िएमि॰ एि० वं॰ असंखेज्जदिभा० । दोगदि-इस्संटाण--इस्संघ०--दोश्राणु०--उज्जो०--थिराथिर--सुभासुभ--सुभग--सुस्सर--श्रादे०--श्रजस० सिया॰ असंखेज्जदिभा० । दुभग--दुस्सर--श्रणादे० सिया॰ । तं तु० । जसगि० सिया० असंखेज्जदिगु० । एवं दृभग-दुस्सर-श्रणादे० ।

२५७. सुहुमस्स ज०िंदिवं तिरिक्खगिद--एइंदि०--स्रोरालि०--तेजा०--क०--हुंडसं०--वर्गण्०४--तिरिक्खाणु०--स्रगु०४---थावर---पज्जत्त--पत्ते०---दूभग--स्रगादे०-स्रजस०--गिमि० णि० वं० स्रसंखेज्जिदिभा०। थिराथिर-सुभासुभ० सिया० स्रसंखेज्जिदिभा०।

२५८. ऋपज्ज॰ ज०िड॰बं॰ पंचिंदि०-ऋोरालि॰-तेजा०-क॰-हुंड०-ऋोरालि०-ऋंगो०-ऋसंपत्त०-वएण०४-ऋगु॰--उप॰-तस-बादर-पत्ते०--ऋथिरादिपंच-णिमि० णि॰

२५६. श्रप्रशस्त विद्वायोगितको जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोणङ्ग, वर्ण चतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क और निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। दो गित, छह संस्थान, छह संहनन, दो श्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, श्रस्थर, श्रुभ, श्रग्धभ, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रौर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातवां भाग श्रिष्ठक स्थितिका बन्धक होता है। दुर्भग, दुःस्वर श्रोर श्रनादेय इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपंत्रा श्रजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रिष्ठक तक स्थितिका वन्धक होता है। यश्रकोर्तिका कदाचित् वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रेपत्रा श्रजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रिष्ठक तक स्थितिका वन्धक होता है। यश्रकोर्तिका कदाचित् वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रिष्ठक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार दुर्भग, दुःस्वर श्रीर श्रनादेयकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२५७. सूक्ष्म प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तिर्यञ्चगित, एकेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, स्थावर, पर्याप्त, प्रत्येक, दुर्भग, श्रनादेय, श्रयशःकीर्ति श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर, श्रस्थिर द्युभ श्रौर श्रग्रुभ इनका कदाचित् वन्धक होता है। श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है।

२४८. श्रपर्याप्तको जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएड संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, श्रसम्प्राप्तास्पाटिका संहनन, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, प्रत्येक, श्रस्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातवां भाग श्रिधिक वं॰ असंखेजनिद्भा॰ । दोगदि-दोत्राणुपु॰ सिया॰ असंखेजनिद्भा० ।

२५६. ऋथिर० ज॰ हि॰वं० पंचिदि॰--श्रोरात्ति०-तेजा०--क॰-समचदु०-श्रोरात्ति०श्रंगो०--वज्जरिस०--वएण०४--ऋगु०४--पसत्थवि०--तस०४--सुभग-सुस्सर-श्रादे॰--िएमि० एि० वं० असंखेज्जदिभा० । दोगदि--दोश्राणु०--उज्जो०-सुभग० सिया० असंखेज्जदिभा० । असुभ-अजस० सिया० । तं तु० । जसगि० सिया० असंखेजगुण्० । एवं असुभ-अजस० ।

२६०. गोदं० वेदणीयभंगो अंतराइगं णाणावरणभंगो ।

२६१. त्रादेसेण ऐरइगेसु पंचणा०-णवदंसणा० उक्कस्सभंगो । एवरि णियमा बं॰ । तं तु० समजुत्तरमादिं कादृण याव पितदोवमस्स त्रसंखेज्जदिभागब्भिहयं० । वेदणीयस्स उक्कस्सभंगो ।

२६२. मिच्छ० ज०िट० सोलसक०-पुरिस०--हस्स-रिद--भय-दुगुं० णि० बं०। स्थितिका वन्धक होता है। दो गित और दो आनुपूर्वीका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

२५९. श्रस्थिरकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरम्न संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोणङ्ग, वर्ज्यभेमनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिषक स्थितिका बन्धक होता है। दो गित, दो श्रानुपूर्वी, उद्योत श्रौर सुभग इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातवां भाग श्रिषक स्थितिका बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि श्रवन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य श्रसंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। इसी प्रकार श्रगुभ श्रीर अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सिन्नकर्य जानना चाहिए।

२६०. गोत्रकर्मका सङ्ग वेदनीयके समान है और अन्तराय कर्मका सङ्ग ज्ञानावरणके समान है।

२६१. श्रादेशसे नारिकयोंमें पाँच श्वानावरण श्रीर नौ दर्शनावरणका भक्न उत्कृष्टके समान है। इतनी विशेषता है कि नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रिधकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिधक तक स्थितिका बन्धक होता है। वेदनीयको मुख्यतासे सिन्नकर्ष उत्कृष्टके समान है।

२६२. मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव सीलह कपाय, पुरुषवेद, हास्य,

तं तु॰ जह० अज० समजुत्तरमादिं कादृण पितदोवमस्स असंखेजाभागव्भिह्यं वं०। एवमेदात्रो एकमेकस्स । तं तु॰।

२६३. इत्थि० जह०द्वि०वंधंतो भिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं० णिय० वं० तं तु संखेजजदिभागब्भिह्यं० । हस्स-रदि-स्रारदि-सोग० सिया० संखेजदिभागव्भ-हियं० । एवं णुवुंस० ।

२६४. ऋरिद जह • हि॰ बं० मिच्छ०--सोलसक०--पुरिसवे॰-भय-दुगुं० णि० वं० संखेजनिद्यागब्महियं । सोग० णि० बं॰ । तं तु॰ । एवं सोग० । ऋायुगाणं उक्कस्सभंगो ।

२६५. तिरिक्खगदि० ज॰िंढ०वं० पंचिदि०-त्रोरालि०-तेजा०-क०-त्रोरालि०-त्रंगो०-वराण०४-त्रगु०४-तस०४-िणिमि० णि० वं० संखेज्जदिभागब्भिहयं० । बस्सं-

रित, भय और जुगुष्सा इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका असंख्यातवां भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सिन्नकर्प जानना चाहिए। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेद्या अजघन्य एक समय अधिकसे छेकर प्रत्यका असंख्यातवां भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

२६३. स्त्रीवंदकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय श्रीर जुगुष्सा इनका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह ग्रजधन्य संख्यातवां भाग ग्रिधिक स्थितिका वन्धक होता है। हास्य, रित, श्ररित श्रीर शोक इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातवां भाग श्रिधक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

२६४. श्ररतिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुष वेद, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवां भाग श्रिधिक स्थितिका वन्धक होता है। शोकका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है शौर श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रिकसे लेकर प्रत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रिधक तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार शोकको मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। श्रायुश्रोंकी अपन्ना भन्न उत्कष्टके समान है।

२६५. तियेश्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पश्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, त्रम चतुष्क, श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातवां भाग श्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगित, श्रौर स्थिर श्रीद छह युगल इनका कदाचित् बन्धक होता है।

ठाणं छस्संघडणं दोविहा॰ थिरादिखयुगलं सिया॰ संखेज्जदिभागब्भ॰। तिरि-क्खाणु० णि॰वं०। तं तु०। उज्जो॰ सिया॰। तं तु०। एवं तिरिक्खाणु॰--उज्जो०।

२६६. मणुसगिद् ज०िंडवं पंचिद्ि -श्रोरालि - तेजा - क० - समचदु - श्रोरालि ० श्रंगो ० - वज्जिरस० - वण्ण ०४ - मणुसाणु ० - श्रगु ०४ - पसत्थ ० - तस ०४ - थिरा-दिख - णिवि णि वं । तं तु ० । एवमेदाश्रो एक्सेक्स्स । तं तु ० ।

२६७. पंचसंठा०-पंचसंघ०-ऋप्पसत्थ०ऋोघं । एवरि णियमा मणुसगदिसंजु-त्तास्रो कादव्वास्रो । तासु संसास्रो संखेज्जदिभागब्भहि० ।

२६८. तित्थय० ज०द्वि०वं० मणुसगदि-पंचिंदि०-त्रोरालि०--तेजा०-क०- सम-

यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य संख्यातवां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वोका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जधन्य स्थितिका भो बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका भो बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपंत्ता अजधन्य एक समय अधिकसे लेकर पख्यका असंख्यातवां भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर अजधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यको अपंत्रा अजधन्य एक समय अधिकसे लेकर पख्यका असंख्यातवां भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योतकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

२६६. मनुष्यगितकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीच पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक श्रारीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्रपंभ नाराच संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विद्वायोगित, असचतुष्क, स्थिर श्रादि छह श्रौर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय श्रिष्ठकसे लेकर पर्व्यका श्रसंख्यातथां भाग श्रिष्ठक तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्प जानना चाहिए। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय श्रिष्ठकसे लेकर पर्व्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रिष्ठक तक स्थितिका बन्धक होता है।

२६७. पाँच संस्थान, पाँच संहनन श्रीर श्रवशस्त विहायोगित इनकी मुख्यतासे सिन्नकर्प श्रीघके समान है। इतनी विशेषता है कि इनको नियमसे मनुष्यगित संयुक्त करना चाहिए। तथा इनमें दोव प्रकृतियोंका श्रज्ञघन्य स्थितिवन्ध होता है जो संख्यातवां भाग श्रिधिक होता है।

२६८. तीर्थङ्कर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्रर्पमनाराच संद्दनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, चदु०-त्र्योरालि॰ त्रंगो०-वज्जरिस॰-वएए०४-मणुसाणु०--त्र्रगु०४-पसत्थ०--तस०४-थिरादिञ्च०-िएमि॰ एि। वं संखेज्जगुण्०।

२६६. गोदं वेदणीयभंगो । त्रंतराइगाणं णाणावरणीयभंगो । एवं पढम-पुढवीए ।

२७॰. विदियाए णाणावरणी०-वेदणी०-त्र्रायु-गोद०-त्र्रंतराइगाणं णिरयोघं। णिदाणिद्दाए ज०िंद्रवं० पचलापचला-श्रीणगिद्धि० णि० वं०। तं तु०। छदंस० णि० वं० संखेज्जगु०। एवं पचलापचला-श्रीणगिद्धि०।

२७१. णिदा० जह०िट०वं० पंचदंस० णि० वं० । तं तु० । एवमेदास्रो एक-मेकस्स । तं तु० ।

२७२. मिच्छ० जह० हि०वं० ऋणंताणुवंधि०४ णि० वं०। तंतु०। बारस क०-

प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, स्थिर श्रादि छह श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो निममसे श्रजधन्य संख्यातगुणा अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

२६९. गोत्रकर्मका भङ्ग वेदनीयके समान है और ऋन्तरायकी प्रकृतियोंका भङ्ग झानावरणके समान है। इसी प्रकार प्रथम पृथिवीमें जानना चाहिए।

२७०. दूसरी पृथिवीमें ज्ञानावरण, वेदनीय, ग्रायु, गोत्र श्रौर श्रन्तराय कर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य नारिकयोंके समान है। निद्रानिद्राकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव प्रचलाप्रचला श्रौर स्त्यानगृद्धि इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भो बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भो बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है। छह दर्शनावरणका लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। छह दर्शनावरणका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार प्रचलाप्रचला श्रौर स्त्यानगृद्धिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२०१. निद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पांच दर्शनावरणका नियमसे बन्धक होता है। िकन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो निमयसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सिन्नकर्प जानमा चाहिए। िकन्तु वह जघन्य स्थितिका भो बन्धक होता है और श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो वह नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

२७२. मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव श्रमन्तानुबन्धी चारका नियमसे बन्धक होता है। िकन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रज्जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रज्जघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थिति का बन्धक होता है। बारह कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रित, भय श्रीर जुगुष्सा इनका

पुरिस०-हस्स-रिद-भय-द्गुं० ग्लि॰वं॰ संखेज्जगु० । एवं ऋणंताणुवंथि०४ ।

२७३. त्रपच्चक्खाएकोघ० ज०हि०वं० एकारसकसा०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगुं० एए० वं० । तंतु० । एवमेदात्रो० तंतु० पदिदात्रो एकमेकस्स । तंतु० ।

२७४. इत्थिवे॰ ज॰हि॰वं० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु० णि॰ वं० संखेजागु०। इस्स-रदि-ऋरदि-सोग० सिया॰ संखेज्जगु॰। एवं णवुंस०।

२७५. ऋरदि० ज०हि०वं० वारसक०-पुरिस०-भय-दुगुं० णि० वं० संखेज्ज-भाग० । सोग० णि० वं० । तं तु० । एवं सोग० ।

२७६. तिरिक्खगदि॰ जह०िंदिबं॰ पंचिदि॰-स्रोरालि०-तेजा०-क॰-स्रोरा-लि०स्रंगो॰-वएए।०४-स्रगु०४-तस०४-एि।एि।।बं०संखेजजगु॰।समचदु०-वज्जरि०-

नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे ग्रजधन्य संख्यातगुणी ग्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार ग्रनन्तानुबन्धी चतुष्ककी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

२७३. श्रप्रत्याक्यानावरण क्रोधकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव ग्यारह कषाय, पुरुष्वेद, हास्य, रित, भय श्रीर जुगुष्सा इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रिधकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार 'तं तु' रूपसे प्राप्त इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सिचकर्ष होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रिधकसे स्थितका बन्धक होता है।

२,9%. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय श्रौर जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, श्ररित श्रौर शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सिन्नकर्य जानना चाहिए।

२७४. अरितकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव वारह कपाय, पुरुषवेद, भय श्रौर जुगुष्सा इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवां भाग श्रिधक स्थितिका वन्धक होता है। शोकका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है शौर अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेज्ञा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्य का असंख्यातवां भाग अधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यता से सन्निकर्प जानना चाहिए।

२७६. तिर्यञ्चगितकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चे निद्रय जाति, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, त्रस-चतुष्क श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। समचतुरस्र संस्थान, वज्रवभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, स्थिर श्रादि तीन युगल, सुभग, सुस्वर श्रौर श्रादेय इनका कदाचित् बन्धक होता है पसत्थ०-थिरादितििएणयुग०-सुभग-सुस्सर-त्र्रादे० सिया० संखेज्जगु०। पंचसंठा०-पंचसंघ०-त्र्रप्यसत्थ०-दूभग-दुस्सर-त्र्रणादे० सिया० संखेज्जदिभा०। तिरिक्स्वाणु० णि० बं०। तं तु०। उज्जो० सिया०। तं तु०। एवं तिरिक्स्वाणु०-उज्जो०।

२७७. मणुसग० ज॰ द्वि०वं॰ पंचिदि०-स्रोरालि॰-तेजा॰-क०-समचदु०-स्रोरालि०स्रंगो०-वज्जरि०--वएण० ४-मणुसाणु०-स्रगु०--पसत्थ०-तस०४--थिरादिद्य०-णि० [णि०]वं० | तं तु० | तित्थ० सिया० | तं तु० | एवं एदास्रो एक्कमेक्कस्स | तं तु० | २७८. णग्गोद० ज० द्वि०वं० मगुसग०-पंचिदि०-स्रोरालि०-तेजा०-क०-स्रोरा-

श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच सस्थान, पाँच संहनन, श्रप्रशस्त
विहायोगित, दुर्भग, दुःस्वर श्रीर श्रनादेय इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित्
श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातवां भाग श्रिधक
स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य
स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रज्जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्जघन्य
स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको श्रपेचा श्रज्जघन्य एक समय श्रिधकसे लेकर
पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक
होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका भी
यन्धक होता है श्रीर श्रज्जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका
बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको श्रपेचा श्रज्जघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका
श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी
श्रीर उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२७७. मनुष्यगितकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, श्रौदारिक आङ्गोणाङ्क, वज्रषम नाराचसंहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क श्रौर स्थिर श्रादि छह इनका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रोर अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको अपेता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातचाँ भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रश्चिक होता है। यदि वन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको श्रपेत्वा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसो प्रकार इनका परस्पर सञ्चिक्षण जानना चाहिए। किन्तु तब वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रोर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेता श्रजघन्य एक समय श्रिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है।

२७८. न्यग्रोध परिमग्डल संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मनुष्यगित, पञ्चेद्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण-

लि॰ श्रंगो॰ – वएए।०४--मणुसाणु॰ – श्रगु०४ – पसत्थ॰ --तस०४ - सुभग - सुस्सर -- श्रादे० – णिमि॰ एि। वं० संखेज्जदिगुए। वज्जरि० - थिराथिर - सुभासुभ - जस० सिया॰ संखेज्जदिगुए। वज्जरारा० सिया॰ । तं तु॰ । एवं वज्जरारायएं।

२७६. चदुसंठा०-चदुसंघ० ज०हि०वं० धुविगात्रो मणुसगदीए सह राग्गोद-भंगो । यात्रो सम्मादिहिस्स जहिएणगात्रो तात्रो सिया० राग्गोदभंगो । यात्रो मिच्छादिहिस्स जह०पात्रोग्गात्रो तात्रो सिया० संखेजनभागव्भहियं० । एवं अप्पसत्थ०-दुभग-दुस्सर-अर्णादे० ।

२८०. त्रिथर० जह०िह०वं० मणुसणिदि सह गदात्रो णियमा वं० संखेज्ज-भागब्भिहियं० | सुभ-जसिगत्ति-तित्थय० सिया० संखेज्जभागब्भिहियं० | त्र्रासुभ-त्राजस० सिया० | तं तु० | एवं त्रासुभ-त्राजसिगति० | एवं याव छिह त्ति |

चतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, अदिय और निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यात-गुणो अधिक स्थितिका वन्धक होता है। वज्रपंभनाराच संहनन, स्थिर, श्रस्थिर, श्रभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अश्यःकोर्ति इनका कदाचित् चन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। वज्रनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है। किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है यदि अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेद्या अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वज्रनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२७९. चार संस्थान श्रौर चार संहननकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके ध्रुवबन्ध-वाली प्रकृतियोंका भक्त मनुष्यगितके साथ न्यशोध परिमएडल संस्थानके समान है। जो प्रकृतियां सम्यग्दिष्टके जघन्य स्थितिबन्धवाली हैं वे कदाचित् बन्धवाली हैं। तथा इनका भक्त न्यशोध परिमएडल संस्थानके समान है श्रौर जो मिथ्यादिष्टके जघन्य स्थिति बन्धके योग्य हैं उनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार श्रवशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुस्वर श्रौर श्रनादेयकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

२८०. ग्रस्थिर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मनुष्यगितके साथ बन्धको प्राप्त होनेवाली प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे ग्रजघन्य संख्यातवां भाग ग्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। ग्रुम, यशःकीर्ति ग्रौर तीर्थं द्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है ग्रौर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे ग्रज्ञ-घन्य संख्यातवां भाग ग्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। ग्रिग्रुम ग्रौर ग्रयशःकीर्तिका कदा-चित् बन्धक होता है ग्रौर कदाचित् ग्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है ग्रौर ग्रज्जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि ग्रज्जघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी ग्रिपेचा ग्रजघन्य एक समय ग्रिधकसे

२८१. सत्तमाए छपगदीत्रो विदियपुढविभंगो ।

२८२. तिरिक्खग० ज॰िड०वं० पंचिंदि०-श्रोरालि०--तेजा०-क०-समचरु०-त्र्यारालि०श्रंगो०-वज्जरिस०-वएए०४--श्रगु०४--पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि० ए० वं० संखेज्जगु०। तिरिक्खागु० एा० वं०। तं तु०। उज्जो० सिया०। तं तु०। एवं तिरिक्खाणु०-उज्जो०। मणुसगदिश्रादि० ज०िड०वं० सम्मादिदिपाश्रोग्गाश्रो विदियपुढिविभंगो।

२८३. णग्गोद० ज०हि०बं० तिरिक्खगदि-पंचिदि०-स्रोरालि०-तेजा०-क०-स्रोरालि०स्रंगो०-वर्णण०४--तिरिक्खाणु०-स्रगु०४-पसत्थ०-तस०४--सुभग-सुस्सर-स्रादे०-णिभि० णि० बं० संखेज्जगु०। वज्जरिस०-उज्जो०-थिराथिर-सुमासुभ-जस० स्रजस० सिया० संखेजजदिगु०। पंचसंठा०-पंचसंघ०-स्रप्यसत्थ०-दृभग-दुस्सर-

लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रशुभ श्रौर श्रयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इसी प्रकार छठीं पृथिवी तक जानना चाहिए।

२८१. सातवीं पृथिवीमें छह प्रकृतियोंका भङ्ग दूसरी पृथिवीके समान है।

२६२. तिर्यञ्च गितको जघन्य स्थितिका यन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शारीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्जर्षभ नाराच संहनन, वर्ण चतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, स्थिर श्रादि छह श्रौर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यागुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। यि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपंका श्रजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग अधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि चन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपंक्षा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपंक्षा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगन्यानुपूर्वी श्रौर उद्योतकी ग्रख्यता से सन्निकर्ष जानना चाहिए। मनुष्यगति श्रादिकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवके सम्यग्दिए प्रायोग्य प्रकृतियोंका भङ्ग दृसरी पृथिवोकं समान है।

२८३. न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तिर्यञ्च गित, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यात-गुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। वज्जर्षभनाराच संहनन, उद्योत, स्थिर, श्रस्थिर, श्रुभ, श्रशुभ, यशःकीर्ति श्रौर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रयन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका वन्धक

अर्णादेज्जाणं एदेणेव विधिणा विदियपुढविभंगो ।

२८४. तिरिक्खेसु पंचणा०--एावदंसणा०--दोवेदणी०--चदुत्रायु०--दोगोद०--पंचंत० णिरयोघं । मिच्छत्त० ज०द्वि०वं० सोलसक०-पुरिसवेद-हस्स-रदि-भय-दुगुं० णि० वं० । तं तु० । एवमेदात्रो एकमेकस्स । तं तु० ।

२८५. इत्थि॰ ज०द्वि०वं मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुर्गु ० णि० वं० असंखेज्ज-दिभा० । हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया० असंखेज्जदिभा० । एवं णवुंस० ।

२८६. ऋरदि० ज०िंदिवं० मिच्छत्त-सोलसक०-पुरिस०-भय-दुगुं० णि० वं॰ ऋसंखेज्जदिभा०। सोग॰ णि० वं०। तं तु॰ ऋसंखेज्जदिभागब्महियं वं०। एवं सोग०।

होता है। पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुःस्वर और अनादेय इनका इसी विधिसे दुसरी पृथिचीके समान भङ्ग है।

२८४. तिर्यञ्चोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, दो वेदनीय, चार श्रायु, दो गोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका भङ्ग सामान्य नारिकयांके समान है। मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव सोलह कपाय, पुरुषवेद, हास्य, रित, भय श्रीर जुगुण्सा इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इस प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्प जानना चाहिए। किन्तु ऐसी श्रवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। वियमसे जघन्यका श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय श्रिकको लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रिधकतक स्थितिका बन्धक होता है।

२८४. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, श्रीर जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अज्ञघन्य श्रसंख्यातवां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, श्ररित श्रीर शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है। श्रद बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य श्रसंख्यातवां भाग श्रिष्ठक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य श्रसंख्यातवां भाग श्रिष्ठक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसक बंदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२८६. ग्ररितकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कपाय, पुरुषवेद, भय और जुगुष्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे ग्रजघन्य असंख्यातवा भाग ग्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। शोकका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह ग्रजघन्य ग्रसंख्यातवां भाग ग्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यतः से सिक्षकर्ष जानना चाहिए।

२८७. नरकगितकी जधन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति तेजस, शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलधुचतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस- त्रपसत्थ०-तस०४-त्रथिरादिञ्ञ०-िषामि० णि० वं० संखेजागु० । वेउव्वि०-वेउव्वि० ग्रंगो० णि० वं० संखेज्जदिभागब्भिह्यं० । णिरयाणु०णि० वं० । तं तु० । एवं णिरयाणु० ।

२८८. सेसात्रो पगदीत्रो मूलोघं । एवरि जासि पगदीर्र्णं त्रासंखेज्जगुण्डभ-हियं तासि पगदीर्णं थिरभंगो कादव्वो । देवगदिचदुकं [संखेज्ज] गुण्डभहियं । जसक ज०िंड वंड पंचिदियभंगो ।

२८६. पंचिदियतिरिक्खेसु३ सत्ताएणं कम्माणं िएरयोघं। िएरयगदि० ज॰िह०-वं० पंचिदियजा०-वेडिव्वि०--तेजा०-क०--हुंड०-वेडिव्वि० ऋंगो०-वएण्०४--ऋगु०४-ऋप्पसत्थ०-तस०४-ऋथिरादिञ्च०-िएमि० एि० वं० संखेज्जिदभागब्भिह्यं०। णिरयाणु० णि० वं०। तं तु०। एवं िएरयाणु०।

चतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे श्रज्ञ-घन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिक आङ्गो-पाङ्गका नियमसे वन्धक होता है। जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातयां भाग श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे वन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है और श्रज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेत्ता श्रज्ञघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातयां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२८८. शेप प्रकृतियोंका भङ्ग मूलोघके समान है। इतनी विशेषता है कि जिन प्रकृतियोंका श्रसंख्यातगुणा श्रधिक स्थितिबन्ध है उन प्रकृतियोंका स्थिर प्रकृतिके समान भङ्ग जानना चाहिए। देवगितचतुष्कका भङ्ग संख्यातगुणा श्रधिक कहना चाहिए। यशःकीर्तिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय जातिके समान है।

२८९. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रकमं सात कमोंका भङ्ग सामान्य नारिकयोंके समान है। नरकगितकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीय पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वैकियिक श्राङ्गापाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, श्रसचतुष्क, श्रस्थिर श्रादि छह श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीको मुख्यता से सन्निकर्य जानना चाहिए।

भूबप्रती पगदीणं जमिगित्ति श्रासि श्रसंखे—इति पाठः ।

- २६०. तिरिक्खग॰ ज०ढि०बं० पंचिंदि०-श्रोरालि॰-तेजा०-क०-श्रोरालि॰ श्रंगो०-वएएए०४-त्रगु०४-तस०-िएमि० एए० वं० संसेज्जभागन्भ०। इस्संटा०-इस्संघ०-दोविहा॰-थिरादिइयु० सिया० संखेज्जभागन्भ०। तिरिक्खाणु० एए० वं०। तं तु०। एवं तिरिक्खाणु०। [उज्जोव० सिया०। तं तु०। एवं ] उज्जो०।
- २६१. मणुसग० ज॰ द्वि०वं॰ स्रोरालि॰ -स्रोरालि॰ ऋंगो० -वज्जरिस० -मणु-साणु० णि॰ वं० । तं तु० । सेसास्रो पंचिदियास्रो पसत्थास्रो णियमा वंधदि संखेज्जदिभा० । थिरादितिणिणुयुग० सिया० संखेज्जभागब्भ० । एवं मणुसगदि० । २६२. देवगदि० जह०द्वि०वं० पंचिदि० -वेउव्वि० -तेजा० -क० -पसत्थद्वावीसं
- २९०. तिर्यञ्चगितकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोणङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क त्रसचतुष्क श्रौर निर्माण इनका नियमसे चन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातयां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। छह सस्थान, छह संहनन, दो विहायोगित, स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातयां भाग श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रज्जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रोपक्षा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातयां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीको मुख्यता से सिन्तकर्प जानना चाहिए। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको श्रपेका श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातयां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।
- २९१. मनुष्यगितकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव श्रौदारिक शरीर, श्रौदारिक श्राक्षोपाङ्ग, वर्ज्रपंभनारावसंहनन श्रौर मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका नियमसं बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भो बन्धक होता है श्रौर श्रज्जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको श्रेपेचा श्रज्जघन्य एक समय श्रिधिक से लेकर पर्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। शेष पञ्चेन्द्रियजाति श्रादि प्रशस्त प्रकृतियोंको नियमसं बांधता है जो नियमसं श्रज्जघन्य संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर श्रादि तीन श्रुगलका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसं श्रज्जघन्य संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।
- र्९२. देवगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर श्रीर प्रशस्त श्रद्धाईस प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु बह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रज्जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। बिद श्रज्जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। बिद श्रज्जघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेन्ना श्रज्जघन्य एक समय

णि० वं० । तं तु० । एवं एदात्रो एकमेकस्स । तं तु० । चदुजादि० त्रोघं । एविर यात्रो णि० वं० संखे० .... णिय० वं० तं तु । यात्रो सिया वं० तं तु० तात्रो तथा चे० कादव्वा । पंचसंठा०-पंचसंघ०-त्रणसत्थ०-दूभग-दुस्सर-त्रणादे० णिरयोघं ।

२६४, मणुस०३ सत्त्तगणं कम्माणं मूलोघं। णवरि मोह-इत्थि०-णुवुंस०-अरदि-सोगाणं यात्रो असंखेजनदिभागब्भिहयात्रो तात्रो संखेजनभागब्भिहयात्रो। णिरयगदि-णिरयाणु० त्रोघं।तिरिक्ख०-मणुसगदि-स्रोरालिय०-तेजा०-क०-पंचसंठा०-

श्रिविकसे लेकर पर्व्यका असंख्यातवां भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सिन्नकर्ष जानना चाहिए। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रिधकसे लेकर पर्व्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रिधक तक स्थितिका वन्धक होता है। चार जातिकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि जिनका नियमसे वन्धक होता है उनका संख्यातवां भाग श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। तथा जिनका कदाचित् 'तं तु' रूपसे बन्धक होता है उनका उसी प्रकार बन्धक होता है। पांच संस्थान, पांच संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुःस्वर श्रीर श्रनादेय इनकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष सामान्य नारिकर्योंके समान है।

२६३. श्रस्थिर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैकियिक श्राङ्गोणाङ्ग, वर्ण्चतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, श्रगुष्कषुचनुष्क, प्रशस्त विद्वायोगित, श्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवां भाग श्रिधक स्थितिका वन्धक होता है। श्रग्रुभ श्रौर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा अजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। सुभग श्रौर यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवां भाग श्रधिकति स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका भी बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रशुभ श्रौर श्रयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय श्रौर विकलेन्द्रिय सहित इनका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चके समान है।

२९४. मनुष्यत्रिकमें सात कर्मोंका भक्त मूलोघके समान है। इतनी विशेषता है कि मोहनीयके स्त्रीवेद, नपु सकवेद, ऋरति श्रीर शोक इनमेंसे जो प्रकृतियां श्रसंख्यातवां भाग श्रिधक कही हैं उन्हें संख्यातवां भाग श्रिधक जानना चाहिए। नरकगित श्रीर नरकगत्यानुपूर्वीका भक्त श्रीघके समान है। तिर्यञ्चगित, मनुष्यगित, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण

श्रोराति॰ श्रंगो०-छस्संघ०-वएए०४-दोश्राणु०-श्रगु०४--श्रादाउज्जो०--दोविहा०-तस थावरादिएवयुगत्त-श्रजस०-णिमि० एदाएं णिरयोघं। एवरि जस० श्रोधभंगो काद्व्वो। सव्वासिं देवगदि० ज०द्वि०वं० पंचिदि० पसत्थाएं एि० वं० संखेज्ज-गुण्डभिह्यं०। एवरि वेउव्वि०-वेउव्वि०श्रंगो०-देवाणु० एि० वं०। तं तु०। श्राहार०-श्राहार०श्रंगो०-तित्थय० सिया वं०। तं तु०। एवं वेउव्वि०-श्राहार०-दोश्रंगो०-देवाणु०-तित्थयरं च। मणुसश्रपज्जत्त० तिरिक्तश्रपज्जत्तभंगो।

२६५ देवेसु एइंदिय-त्रादाव-थावर० पंचिंदियतिरिक्खत्रपञ्जत्तभंगो । एवं भवणवासि-वाणवेंतर० । जोदिसिय याव एवगेवज्जा ति विदियपुढविभंगो । एवरि जोदिसिय याव सोधम्मीसाण ति एइंदिय-त्रादाव-थावर देवोघं । सणक्कुमार याव सहस्सार ति तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु० उज्जो० । उवरि मणुसगदि० श्राणद याव एवगेवज्जा ति । श्रणुदिस याव सव्वद्दा ति मणुसग० ज०दि०वं० एवगेवज्ज

शरीर, पांच संस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, वर्णचतुष्क, दो श्रानुपूर्वी, श्रगुरु-लघुचतुष्क, त्रातप, उद्योत, दो विहायोगति, त्रस-स्थावर त्रादि नौ युगल, श्रयशःकीर्ति श्रीर निर्माण इनका सन्निकर्ष सामान्य नार्राक्योंके समान है। इतनी विशेषता है कि यशः-कीर्तिका भङ्ग श्रोघके समान करना चाहिए। उक्त सब मनुष्योंमें देवगतिकी जघन्य स्थिति का वन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति ग्रादि प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इतनी विशेषता है कि वैकियिक शरीर, वैकियिक आङ्गोपाङ्ग श्रीर देवगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है किन्त वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे सेकर पत्यका श्रसंस्थातचां भाग अधिक तक स्थितिका चन्धक होता है। श्राहा-रक शरीर, त्राहारक आङ्गोपाङ्ग त्रौर तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है त्रौर कदाचित प्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और ग्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि ग्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रवेत्वा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वैकियिक शरीर, श्राहारक शरीर, दो श्राङ्गोपाङ्ग, देवगत्यानुपूर्वी और तीर्थंङ्कर प्रकृतिकी मुख्यतास सन्निकर्ष जानना चाहिए। मनुष्य अपर्याप्तकोंका भङ्ग तिर्यञ्ज अपर्याप्तकोंके समान है।

२९४. देवों में एकेन्द्रिय जाति, श्रातप श्रीर स्थावर इनका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्यातकों के समान है। तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पहली पृथ्वीके समान है। इसी प्रकार भवनवासो श्रीर व्यन्तर देवों के जानना चाहिए। ज्योतिषियों से लेकर नौ श्रे वेयक तकके देवोंका भङ्ग दूसरी पृथ्वों के समान है। इतनी विशेषता है कि ज्योतिषियों से लेकर सौधर्म श्रीर ऐशान कल्पतकके देवों में एकेन्द्रिय जाति, श्रातप श्रीर स्थावर इन तीन प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य देवों के समान है। सानकुतमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्प तक तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रीर उद्योतका सन्निकर्ष जानना चाहिए। श्रानेत कल्पसे लेकर नव श्रवेयक तक मनुष्यगतिकी श्रपेता सन्निकर्ष जानना चाहिए। श्रनदिशसे लेकर

पदमदंडत्रो, त्रिथरादि विदियदंडत्रो य।

२६६ सन्वएइंदियाणं तिरिक्खोघं । सन्विवगिलिदियाणं पंचिदियतिरिक्ख-ऋपज्जत्तभंगो । पंचिदिय पंचिदियपज्जत्त० सत्तराणं कम्माणं मणुसोघं । णामपग-दीणं पंचिदियतिरिक्खभंगो । ऋाहार०-ऋाहार०ऋंगो०-जस०-तित्थय० मृत्तोघं ।

२६७ पुढवि॰-त्राउ०-वणप्पदिपत्तेय॰ पज्जत्तापज्जता णियोदजीवा बादर-सुहुम-पज्जत्तापज्जत्ता मणुसत्रपञ्जत्तभंगो काद्व्वो । एवरि त्रसंखेज्जदिभागब्भ-हियं॰ । तेउ॰-वाड०-वादरसुहुम-पज्जत्तापज्जत्त० सो चेव भंगो । एवरि सव्वाएां तिरिक्खधुविगाएां काद्व्वं ।

२६८ तस-तसपज्जत्ता सत्तएएं कम्माणं मणुसोघं । णामस्स वेउव्वियञ्च०-त्राहारदुग-जसगि०-तित्थय० मृलोघं । सेसाणं वेइंदियपज्जत्तभंगो ।

२६६. पंचमण॰-तिषिणवचि॰ णाणावर० वेदणी॰ आयु० गोद॰ श्रंतराइगं च ओयं। णिदाणिदाए ज॰ष्टि०यं॰ पचलापचला-थिणगिद्धि० णि० वं०। तं तु०।

सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके नौ प्रैवेयकका प्रथम दण्डक श्रौर श्रस्थिर श्रादिका दूसरा दण्डक जानना चाहिए।

२९६. सव एकेन्द्रिय जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भक्त जानना चाहिए। सब विकलेन्द्रियोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान भक्त जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय श्रौर पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंमें सात कर्मोंका भक्त सामान्य मनुष्योंके समान है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भक्त पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। आहारक शरीर, श्राहारक शाङ्गोपाङ्ग, यशःकीर्ति श्रौर तीर्थञ्चर प्रकृतिका भक्त मूलोघके समान है।

२९७. पृथ्वीकायिक, जलकायिक श्रौर वनस्पतिकायिक प्रत्येक तथा इनके पर्याप्त श्रौर श्रपर्याप्त तथा निगोद जीव श्रौर इनके वादर श्रौर सूक्ष्म तथा पर्याप्त श्रौर श्रपर्याप्त जीवोंका भन्न मनुष्य श्रपर्याप्तकोंके समान करना चाहिए। इतनो विशेषता है कि श्रसंख्यानवां भाग श्रिधक जानना चाहिए। श्रिग्निकायिक श्रौर वायुकायिक तथा वादर श्रौर सूक्ष्म तथा इनके पर्याप्त श्रौर अपर्याप्त जीवोंके वही भन्न कहना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सबके तिर्यञ्च ध्रववन्धवाली प्रकृतियोंका कहना चाहिए।

२६८. त्रस श्रीर त्रस पर्याप्त जीवोंमं सात कमेंका भङ्ग सामान्य मनुष्यांके समान है। नामकर्मको वैकियिक छह, श्राहारकद्विक, यशःकीर्ति श्रीर तीर्थङ्कर प्रस्तियांका भङ्ग मूलोवके समान है। तथा शेप प्रकृतियांका भङ्ग द्वीन्द्रिय पर्याप्त जीवांके समान है।

२९९. पांच मनोयोगी श्रोर तीन वचनयोगी जीवोंमें झानावरण, वेदनीय, श्रायु, गोत्र श्रोर अन्तरायकी प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोघके समान है। निद्रा निद्राकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव प्रचलाप्रचला श्रोर स्त्यानगृद्धिका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। तियमसे जघन्यकी अपेता श्रजघन्य एक समय श्रिधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रिधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। निद्रा श्रोर प्रचलाका नियमसे वन्धक होता है। निद्रा श्रोर

णिदा-पचला॰ णिय॰ वं० संग्वेज्जगुण० । चदुदंस० णि० वं० असंत्वेज्जगु॰ । एवं थीणगिद्धि॰३ ।

३०० शिहाए ज॰हि॰वं० पचला शिय० वं० । तं तु० । चदुदंस० शि० वं॰ असंखेज्जगु० । एवं पचला॰ । चदुदंस० श्रोघं ।

३०१. मिच्छ० न०िड•वं० ऋणंताणुवंधि०४ णि॰ वं॰ । तं तु०। ऋहकसा०-इस्स॰-रिद-भय-दुगुं० णि० वं० संखेजनगु०। चदुसंन॰-पुरिस० णि० वं० ऋसंखे-जनगु०। एवं ऋणंताणुवंधि०४।

३०२. ऋषच्चक्खाणकोध॰ ज॰िंढ०वं० तिषिणकसा॰ णि० वं० । तं तु० । पच्चक्खाणा॰४-हस्स-रदि-भय-दुगुं० णि० वं० संखेज्जगु॰ । चदुसंज०-पुरिस॰ णि० वं॰ ऋसंखेज्जगु० । एवं तिषिणक० ।

बन्धक होता है। चार दर्शनावरणका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य स्रसंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार स्त्यानगृद्धि तीनकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

३००. निद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव प्रचलाका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेत्ता अजघन्य एक समय अधिक से लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। चार दर्शनावरणका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार प्रचला प्रकृतिकी मुख्यता से सन्निकर्ष जानना चाहिए। चार दर्शनावरणकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है।

३०१. मिथ्यात्वकी जधन्य स्थितिका वन्धक जीव अनन्तानुबन्धी चतुष्कका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेद्धा अजधन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। आठ कषाय, हास्य, रित, भय और जुगुष्साका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। चार संज्वलन और पुरुषवेदका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी-चारकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३०२. श्रप्रत्याख्यानावरण कोघकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन कपायका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता अजघन्य एक समय श्रधिकते हैकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। प्रत्याख्यानावरण चार, हास्य, रित, भय श्रीर जुगुण्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। चार संज्वलन श्रीर पुरुषवेदका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तीन कपायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३०३. पच्चक्लाणा ०कोध ० ज ० हि० वं० तिरिएकसा० ए ० वं० । तं तु० । चदुसंज ० - पुरिस ० ए ० वं० असंखेज्ज गु० । हस्स-रदि-भय-दुगुं० ए ए वं० संखेज्ज गु० । एवं तिरिएकसा० । चदुसंज ल ० - पुरिस ० ओघं।

३०४, इत्थिवे० ज०िंड वं० मिच्छ०-बारसक०-भय-दुगुं० ग्णि० वं० संखे-इज्ञगु० । हस्स-रिद-अरिद-सोग० सिया० संखेज्जगु० । चदुसंज० ग्णि०वं० असं-खेज्ज० । एवं ग्णवुंस० ।

३०५, हस्स० ज०िंडवं० चरुसंन०-पुरिस० णि० वं० असंखेजनगु० । रिद-भय-दुगुं० णि० वं० । तं तु० । एवं रिद-भय-दुगुं० ।

३०६ त्रारदि० ज॰ द्वि०वं० चदुसंज ०-पुरिस० णि०वं० त्रासंखेजनगु०। भय-दुगुं० णि० वं० संखेजनगु०। सोग० णि०। तं तु०। एवं सोग०।

३०३. प्रत्याख्यानावरण कोधकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन कषायका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे छेकर पद्यका श्रसंख्यातयाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। चार संज्वलन श्रौर पुरुपवेदका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, भय श्रौर जुगुष्साका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तीन कषायोंको मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। चार संज्वलन श्रौर पुरुषवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष श्रोघके समान है।

३०४. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, बारह-कपाय, भय श्रीर जुगुप्साका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, श्ररित श्रीर शोकका कदाचित् बन्धक होता है। सि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। जो नियमसे श्रजधन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसो प्रकार नपुंसक वेदकी मुख्यतासे सन्तिकर्ष जानना चाहिए।

३०४. हास्यकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव चार संज्वलन श्रौर पुरुषवेदका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। रित, भय श्रौर जुगुण्साका नियमसे वन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको श्रपेजा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका वन्धक होता है।

३०६. श्ररतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार संज्वलन श्रौर पुरुषवेदका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। भय श्रौर जुगुण्साका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। शोकका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य

३०७. णिरयग० ज॰ द्वि०बं० पंचिदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-वेउव्वि० श्रंगो०-वरण ०४--श्रगु०४-तस०४--श्रथर-श्रमुभ-श्रजस०--णिमि० णि० यं० संखेज्जगुण-ब्भहि० । हुंड०-श्रसंपत्त०-दूभग-दुस्सर-श्रणादे०-णिमि० णि० संखेजजभागब्भ० । णिरयाणु० णि० वं० । तं तु० । एवं णिरयाणु० ।

३०८. तिरिक्खगदि० ज०द्वि०वं० पंचिदि०-त्रोरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-त्रोरालि०त्रंगो०-वज्जरिस०-वएण० ४--त्रगु०४-प्सत्थ०--तस०४-थिरादिपंच-णिमि० णि०वं० संखेज्जगु० । तिरिक्खाणु० णि०वं०। तंतु०। उज्जो० सिया०। तं० तु०। जस० णि० वं० त्रसंखेजगु०। एवं तिरिक्खाणु० । एवं तिरिक्खायं उज्जो०।

स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपंत्ता श्रजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार शोक की मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

३०% नरकगितकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वेकियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वैकियिक श्राङ्गोणङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क, अस्थिर, श्रगुम, श्रयशःकीर्तिश्रौर निर्माण इनका नियमसं बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। हुण्डसंस्थान, श्रसंप्राप्तास्पाटिका संहनन, दुर्भग, दुस्वर श्रौर श्रनादेय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगत्यानुपूर्वोका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यका श्रपंता अजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पर्यका श्रसंख्यातचां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

३०८. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गाणङ्ग, वर्ज्यपनाराच-संहनन, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, स्थिर श्रादि पांच श्रीर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वाका नियमसे बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है और श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियम से जघन्यकी श्रपंता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। उद्योतका कदा-चित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि श्रजचन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपंता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका भी वन्धक होता है। यशःकीर्तिका नियमसे जघन्यकी श्रपंता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका नियमसे जघन्यकी श्रपंता श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। दसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चके समान उद्योतको मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१. मूलप्रतौ तिरिक्खागु॰ शियमा उज्जो सिया एवं इति पाठः ।

- ३०६. मणुसग० ज०द्वि०वं० त्रोरालि॰-त्रोरालि॰ग्रंगो॰--वज्जिर०-मणु-साणु० णि० वं० | तं तु० | सेसात्रो पसत्थात्रो णि० वं० संखेज्जगु० | जमगि० णि० वं० त्रसंखेज्जगु० | तित्थय० सिया० संखेज्जगु० | एवं त्रोरालि०-त्रोरालि० ग्रंगो०-वज्जिर०-मणुसाणु० |
- ३१०. देवगदि० ज॰िह०वं पंचिदि०पसत्थपगदीत्रो िए० वं। तं तु०। त्राहारदुग-तित्थय० सिया०। तं तु०। जसगि०-िए।० वं० त्रसंखेजजगुण्ब्भ०। एवभेदात्रो एकभेकस्स। तं तु०।
- ३११. एइंदि० ज॰हि०वं० तिरिक्खगदि--श्रोरालि०--तेजा०-क०-वराएा०४-तिरिक्खाणु०-त्रगु०४-बाद्र--पज्जत्त-पत्ते०--िएमि० एि० वं० संखेजजगु०। हुंड०-
- ३०६. मनुष्यगितकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव श्रौदारिक शरीर, श्रौदारिक श्राक्षोपाङ्ग, वर्श्रपमनाराचसंहनन श्रौर मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे वन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रज्जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। ग्रोप श्रधकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। श्रेप प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। वर्धिक होता है। त्रीर्थद्वर प्रकृतिका कर्दाचित् बन्धक होता है। त्रीर्थद्वर प्रकृतिका कर्दाचित् बन्धक होता है। त्रीर्थद्वर प्रकृतिका कर्दाचित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रौदारिक श्ररीर, श्रौदारिक श्राक्षेत्र अङ्गेपकार चाहिए।
- ३१०. देवगतिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पञ्चोन्द्रय जाति श्राद् प्रशस्त प्रश्नित्योंका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है और श्रज्ज्ञ्चन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रज्ज्ञघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेक्षा श्रज्ज्ञघन्य एक समय श्रिधिकसे लेकर प्रत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रिधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। श्राहारकद्रिक श्रौर तीर्थंकरका कदाचित् वन्धक होता है। श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रज्ज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रज्ज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यद्द श्रज्ज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे अज्ञघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रिष्ठक स्थितिका वन्धक होता है। इसो प्रकार इन सबका परस्पर सन्निकर्ष होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रज्ज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रज्ज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियम से जघन्यकी श्रपेक्षा श्रज्ज्ञघन्य एक समय श्रिष्ठकसे लेकर पर्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रिष्ठक तक स्थितिका बन्धक होता है।
- ३११. एकेन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव तिर्यञ्चगति श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, वाढर, पर्याप्त

दूभग-ञ्चणादे ि वं वं संखेजनभागव्भ० । त्रादाव० सिया०। तं तु० । उज्जो०-थिराथिर-सुहासुह-ञ्चनस० सिया० संखेजनगु० । जस० सिया० ञ्चसंखेजनगु० । थावर० णि० वं० । तं तु० । एवं ज्ञादाव-थावरं ।

३१२. बीइंदि० ज॰ हि॰ वं॰ तिरिक्खग॰-श्रोरालि०--तेजा०-क॰-श्रोरालि० श्रंगो॰-वएण्०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०४-तस०४--णिमि० णि० वं॰ संखेज्जगु०। हुंडसं॰-श्रसंपत्त०--श्रणसत्थ०--दृभग--दुम्सर-श्रणादे० णि० वं॰ संखेज्जदिभाग०। उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-श्रजस० सिया॰ संखेज्जगु०। जस० सिया० श्रसंखेज्जगु०। एवं तीइंदि०-चतुरिं०।

प्रत्येक और निर्माण इनका नियमसं बन्धक होता है। जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। हुएड संस्थान, दुर्भग श्रौर श्रनादेयका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। आतपका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योत. स्थिर, ग्रस्थिर, ग्रुम, ग्रुगुम ग्रीर ग्रुयशःकोर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है ग्रीर कदा-चित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक हाता है। यशःकीर्तिका कदाचित बन्धक होता है श्रीर कदाचित श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य श्रसंख्यातगणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। स्थावरका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जधन्य स्थिति का भी बन्धक होता है त्रौर त्रज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि त्रज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपंता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसं लेकर पर्यका श्रसंख्यातवां भाग अधिक तक स्थितिका वन्धक होता है । इसीप्रकार श्रातप श्रीर स्थावर प्रकृतियोंको मुख्यतासं सन्निकर्षं जानना चाहिए।

३१२. द्वीन्द्रियजातिको जधन्य स्थितिका बन्धक जीव तिर्यञ्चगति, श्रौदारिक श्ररीर, तैजस श्ररीर, कार्मणश्ररीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु-चतुष्क, त्रसचतुष्क और निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। हुण्ड संस्थान, श्रसम्प्राप्तासुपाटिका संइनन, श्रप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुःस्वर श्रौर श्रनादेय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातवाँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योत, स्थिर, श्रस्थिर, श्रभ, श्रशुभ श्रोर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रीन्द्रिय श्रोर चतुरिन्द्रिय जातिकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

३१३. णग्गोद०ज०डि॰बं॰ पंचिदि०-त्रोरालि॰-तेजा॰-क॰-त्रोरालि॰त्रंगो०-वण्ण॰४-त्रगु॰४-पसत्थ॰-तस॰४-सुभग-सुस्सर-त्रादे०-णिभि॰ णि॰ बं॰ संखज्ज-गुणब्भहियं। तिरिक्लगदि-मणुसगदि-वज्जिरस०-दोत्राणु०-उज्जो०थिराथिर-सुभा-सुभ-त्रजस॰ सिया॰ संखेज्जगु०। जस० सिया० त्रसंखेज्जगु०। वज्जणारा० सिया॰ तंतु०। एवं वज्जणारायणं। एवं चेव सादिय०। णवरि णारायण० सिया॰ तंतु०। वज्जणारा॰ सिया॰ संखेज्जभाग०। एवं णारा०।

३१४. खुज्जसं० ज०डि०वं० एग्गोद०भंगो। एवरि वज्जणारा० संखेज्जभाग०। अद्धणारा० सिया०। तं तु०। एवं अद्धणारा०। एवं चेव

३१३. न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थानको जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरु**लघु** चतुष्क, प्रशस्त विद्यायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्ज-गति, मनुष्यगति, वजर्षभनाराच संहनन, दो त्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, त्रस्थिर, ग्रम, त्रश्म श्रीर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे ऋजघन्य संख्यात्गुणी ऋधिक स्थितिका बन्धक होता है । यशः-कीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। वजुनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर प्रत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वज्रनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार स्वाति संस्थानको मुख्यतासे भी सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि नाराच संहननका कदाचित बन्धक होता है श्रीर कदाचित श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिकाभी बन्धक होता यदि श्रजधन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रपेचा श्रजधन्य एक समय अधिकसे छेकर प्रत्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। वजुनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार अर्द्धनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

३१४. कुन्जक संस्थानकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवका भङ्ग न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानके समान है। इतनी विशेषता है कि वज्रनाराच संहननका कदाचित् वृग्धक होता है ग्रीर कदाचित् ग्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातवाँ भाग श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। श्रिधनागच संहननका कदा-चित् वन्धक होता है ग्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपंता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रधनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार वामन

वामणसंटा० । णविर वज्जणारा॰-णाराय०-ऋद्धणाराय० सिया० वं॰ संखेज्ज-भाग० । खीलिय० सिया० वं० । तं तु० । एवं खीलिय० । हुंड० ज॰हि०वं० णग्गोदभंगो । णविर चदुसंघ० सिया० वं० संखेज्जभाग० । असंपत्त० सिया० । तं तु० । जस० सिया० असंखेज्जगु० । एवं असंपत्त० ।

३१५. ऋष्पसत्थ० ज०िड वं पंचिद् ०-त्रोरात्ति०-तेजा०--क०--त्रोरात्ति० श्रंगो०-वण्ण०४-ऋगु०४-तस०४-िण्मि० णि० वं० संखेज्जगु०। तिरिक्खगदि-मणुसगदि०-समचदु०-वज्जरिस०-दोत्राणु०-उज्जो०-थिरादि०४-सुभग-सुस्सर--श्रादे० श्रजस० सिया० संखेज्जगु०। पंचसंठा०-पंचसंघ० सिया० संखेजजभा०। दुभग-

संस्थानकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि वजनाराच संहनन, नारांच संहनन और अर्ध नाराच संहननका कदाचित वन्धक होता है और कदा-चित् ग्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे ग्रजधन्य संख्यातवाँ भाग ग्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। कीलक संहननका कदाचित वन्धक होता है श्रीर कदाचित ग्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है ग्रौर श्रजधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर प्रत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिधिक तक स्थितिका चन्धक होता है। इसी प्रकार कीलकसंहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । हण्ड संस्थानकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवका सन्निकर्प न्यग्रोध एरिमण्डल संस्थानके समान है। इतनी विशेषता है कि चार संहननका कदाचित बन्धक होता है श्रौर कदाचित श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवाँ भाग ग्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। ग्रसम्प्राप्तासुपाटिका संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि ग्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी ग्रपेना ग्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका ग्रसंख्यातवाँ भाग ग्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशः-कीर्तिका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे त्रज्ञघन्य त्रसंख्यातगुणी त्र्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रसम्प्राप्तासृपाटिका संहननको मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३१५. श्रप्रशस्त विहायोगितकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगित, मनुष्यगित, समचतुरक्र संस्थान, वजूर्षभनाराच संहनन, दो श्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर श्रादि चार, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रौर श्रयशक्षीति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। पांच संस्थान श्रौर पांच संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। दुर्भग, दुःस्वर श्रौर श्रनादेय इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित्

दुस्सर-श्रणादे० सिया० । तं तु० । जस० सिया० श्रसंखेज्जगु० । एवं दूभग-दुस्सर-श्रणादे० ।

३१६. सुहुम॰ ज॰डि०बं० तिरिक्खगदि-स्रोरालि०-तेजा॰-क॰-वएण०४-तिरिक्खाणु०-स्रगु०४-पज्जत्त-पत्ते॰-स्रजस०-िण्मि०िण् बं० संखेज्जगु०। एइंदि०-हुंड०-थावर-दूभग-स्रणादे॰ णि० वं० संखेज्जभा०। थिराथिर-सुभासुभ० सिया॰ संखेज्जगु०। एवं साधारणं।

३१७. ऋपज्जत्त० ज०िह०वं० पंचिदि०'--श्रोरात्ति०--तेजा०-क०--श्रोरात्ति० श्रंगो०-वएण०४-ऋगु०-उप०-तस-वादर-पत्ते०-ऋथिर-ऋसुभ-ऋजस०-िएमि० णि० बं० संखेज्जगु० | दोगदि-दोश्राग्रु० सिया० संखेज्जगु० | हुंड०-ऋसंपत्त०-दूभग-ऋणादे० णि० वं० संखेज्जदिभाग० |

श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रज्जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रज्जघन्य एक समय श्रिधिकसे लेकर प्रत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रिधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रज्जघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रिधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार दुर्भग, दुःस्वर श्रीर श्रनादेयकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

३१६. स्इमकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव तिर्यञ्चगति, श्रौदारिक, शरीर, तेजस शरीर, कार्मणशरीर. वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रयशःकीर्ति श्रौर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यात-गुणी श्रिधक स्थितिका वन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति, हुग्ड संस्थान, स्थावर, दुर्भग श्रौर श्रनादेय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवां भाग श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर, अस्थिर, श्रुभ श्रौर श्रगुभ इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार साधारण प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

३१७. अपर्याप्तकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पञ्चेन्द्रियजाति श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुत्वतु, उपघात, त्रम, वाद्र, प्रत्येक, श्रस्थिर, श्रशुभ, अयशःकीर्ति श्रोर निर्माण इनका नियममं वन्धक होता है। जो नियम से अजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। दोगिति श्रीर दो श्रानुपूर्वीका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। हुग्डसंस्थान, श्रसम्प्राप्तास्पाटिका संहनन, दुर्भग श्रीर अनादेय इनका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अजघन्य संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है।

१. मूलप्रतौ पंचिदि तेजाक० श्रोरालि० इति पाठः ।

- ३१८. अथिर० ज०िड०वं० देवगिद-पंचिदि०-वेउव्वि०-तेजा०--क०-समचदु०-वेउव्वि० ग्रंगो०-वएण्०४-देवाणु०-अगु०४--पसत्थिवि०--तस०४-सुभग--सुस्सर-त्रादे०-णिमि० णि० वं० संखेळा० । सुभ-तित्थय० सिया० संखेळागु० । असुभ-अजस० सिया० । तं तु० । जस० सिया० असंखेळागु० । एसि जसिगत्ती भणिदा तेसि असंखेजनगुणं कादव्वं । एवं असुभ-अजसिगत्ती ।
- ३१६. विचेनोगि-असच्चमोसविचनोगीमु तसप्डनत्तभंगो । कायनोगि-ओरालि यकायनोगी॰ ओघं । ओरालियमिस्से एइंदियभंगो । एवरि देवगदि न०डि॰बं॰ पंचिंदि॰-तेना०-क०--समचदु॰-वएए।०४--अगु०४-पसत्थवि॰--तस०४--थिरादिछ॰-िएमि॰ एि। संखेडनगुण् । वेउव्वि॰-वेउव्वि॰अंगो०-देवाणु॰ एिय॰ बं० । तं तु॰ । तित्थय॰ सिया० । तं तु० । एवं वेउव्वि॰-वेउव्वि॰अंगो०देवाणु॰-तित्थय०।

३१८ श्रस्थिरकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव देवगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, बैिकियिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्न संस्थान, वैकियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, सुभग, मुस्वर, श्रादेय श्रोर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। शुभ श्रोर तोर्थंकर प्रस्तिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पख्यका असंख्यातचां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यश्रकोर्तिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। जनके यशःकीर्ति श्रकृति कही है उनके श्रसंख्यातगुणी करना चाहिए। इसी प्रकार श्रगुभ श्रीर श्रयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३१९. वचनयोगी श्रीर श्रस्त्यमृपावचनयोगी जीवोंमं त्रसपर्याप्त जीवोंके समान भक्त है। काययोगी श्रीर श्रोदारिक काययोगी जीवोंका भक्त श्रोधके समान है। श्रोदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंका भक्त एकेन्द्रियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि देवगतिकी जधन्य स्थितिका वन्धक जीव पञ्चेन्द्रियजाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलधुचतुष्क, प्रशस्तविद्दायोगित, त्रसचतुष्क, स्थिर श्रादि छह श्रीर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। वैकियिक शरीर, वैकियिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है। वैकियिक शरीर, वैकियिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह अधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रपेत्ता श्रजधन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थिति का बन्धक होता है। तीर्थंकरका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। तीर्थंकरका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता

- ३२० वेडिव्यकायजोगी० सत्ताएएं कम्माएं सोधम्मभंगो । तिरिक्लगदि० ज०िंढि वं॰ पंचिंदि०-त्रोरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-त्रोरालि०त्रंगो०--वज्जिरि०-वएए।०४--त्रा०४--पसत्थ०--तस०४-थिरादिछ०-एिमि० एि० वं॰ संखंजजगु०। तिरिक्खाणु० एि॰ वं॰। तं तु०। उज्जो० सिया०। तं तु०। एवं तिरिक्खाणु०-उज्जो०। मणुसगदी० सोधम्मभंगो। एइंदिय-त्रादाव-थावर० सोधम्मभंगो।
- ३२१. राग्गोद० ज०हि०बं० पंचिंदि०--ग्रोरालि०--तेजा०--क०-न्त्रोरालि० श्रंगो०-वरार्ण०४-त्रारा०४-पसथ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-त्रादे०-शिमि० शि० बं० संखेजनरा० । दोगदि-वजरि०-दोत्रार्ण०-उज्जो०--थिराथिर-सुभासुभ-जस०-त्रजस०

है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार वैकियिक शरीर, वैकियिक श्राङ्गोपाङ्ग, देवगत्यानुपूर्वी श्रीर तीर्थंकर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

- ३२०. वैक्रियिक काययोगी जीवोंमें सात कर्मोंका भक्न सौधर्म कल्पके समान है। तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, श्रीदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्पभनाराचसंहनन, वर्णचतुष्क, त्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर त्रादि छह त्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी ऋधिक स्थिति का बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी ऋषक्षा अजधन्य एक समय ऋधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित ग्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और ग्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि त्रज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी ऋषेत्रा श्रजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पर्यका असंख्यातयाँ भाग अधिक तक स्थितिका वन्धक हाता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रौर उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। मनुष्य गतिका भङ्ग सौधर्म करुपके समान है। एकेन्द्रिय जाति, श्रातप श्रौर स्थावर इनकी श्रपेता सन्निकर्ष सौधर्म कल्पके समान है।
- ३२१. न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रोदारिक श्राह्मेणाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रोर निर्माण इनका नियम-से बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। दोगित, वज्रर्थमनाराचसंहनन, दो श्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, श्रांस्थर, श्रम, श्रश्म, यशःकीर्ति श्रीर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अज्ञधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। वज्रनाराचसंहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक

सिया० संखेडजगु० | वज्जणारा० सिया० | तं तु० | [ एवं ] वज्जणा० | एवं चेव सादिय० | एवरि णारायण० सिया० | तं तु० | वज्जणारा० सिया० संखेज्ज-भागव्भ० | एवं णारा० | खुज्ज० ज० द्वि०वं० णग्गोदभंगो | एवरि वज्जणारा० सिया० संखेज्जभागव्भ० | अद्धणारा० सिया० | तं तु० | एवं अद्धणारा० | वामण० ज० द्वि०वं० एग्गोदभंगो | एवरि खीलिय० सिया० | तं तु० | एवं खीलिय० | सेसाणं सोधम्मभंगो | एवं वेउ व्वियमिस्से | एवरि तिरिक्लगदि-तिरिक्लाणु०-उज्जोव० सिया० संखेज्जभाग० |

होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमको जधन्यकी अपेना अजधन्य एक समय श्रिधिकसे लेकर पत्यका ग्रसंख्यातवाँ भाग त्रिधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वज्रनाराचसंहननकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार स्वाति संस्थानकी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि नाराचसंहननका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेना अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। वजनाराच संहननका कदाचित् वन्धक होता है त्रोर कदाचित श्रवन्धक होता है यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातचां भाग अधिक स्थितिक। बन्ध होता है। इसीप्रकार नाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। कुब्जकसंस्थानकी जवन्य स्थितिके वन्धक जीवकी मुख्यतासे सन्निकर्प न्ययोधपरिमगृडल संस्थानके समान है। इतनी विशेषता है कि वज्रनाराचसंहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित श्रवन्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। अर्धनाराच संहननका कदाचित वन्धक होता है और कटाचित अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियम से जघन्यकी त्रपंचा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे छेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार श्रर्धनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए । वामन संस्थानकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवकी मुख्यतासे सन्निकर्ष न्ययोध परिमण्डलसंस्थानके समान है। इतनी विशेषता है कि कीलक संहननका कटाचित वन्धक होता है और कदाचित अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जचन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेक्ता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार कीलक संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। शेष कमौंका भक्न सौधर्म कल्पके समान है। इसो प्रकार वैक्रियिक मिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रीर उद्योत इनका कदाचित बन्धक होता है श्रीर कदाचित श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है।

- ३२२. त्राहार०-त्र्याहारिमस्स॰ सन्वद्वभंगो एगम वज्ज । एवरि देवगदि॰ जि॰ वि॰ पंचिदि॰-वेउन्वि॰-तेजा॰-क॰-समचदु०-वेउन्वि०त्र्यंगो॰-वएए। ४-देवाणु०-त्रगु०४-पसत्थ॰-तस०४-थिरादिञ्ञ०-िएमि० एि० वं० । तंतु॰ । तित्थय॰ सिया० । तंतु॰ । एवमेदात्रो एकमेकस्स । तंतु० ।
- ३२३. अथिर॰ जिंदि०वं० सुभ-जसगित्ति-तित्थय० सिया॰ संखेज्जभा-गब्भ॰। असुभ-अजस० सिया॰ वं॰। तं तु०। सेसं णि॰ वं॰ संखेज्जभागब्भ-हियं०। एवं असुभ-अजस०।
  - ३२४. कम्मइगका॰ श्रोरालियमिस्सभंगो । एवरि तित्थय॰ ज०डि॰वं० मसु-
- ३२०. ब्राहारक काययोगी ब्रौर ब्राहारकमिश्रकाययोगी जीवोंका भन्न सर्वार्थसिद्धि के समान है । किन्तु नामकर्मकी प्रकृतियोंको छोड़कर यह कथन करना चाहिए । इतनी विशेपत। है कि देवगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चे न्द्रिय जाति, वेकियिक शरीर तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरम्न संस्थान, वैकियिक त्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देव-गत्यानुपूर्वी, त्र्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर त्रादि छह त्रीर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेचा श्रजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग श्रिधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको अपेचा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पर्यका असंख्यातवां भाग श्रिधिकतक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्प जानना चाहिए । किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक दोता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसं जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।
- ३२३. श्रस्थिर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव शुम, यशःकीर्ति श्रीर तीर्थंकर इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। श्रशुभ श्रीर श्रयशःकीर्तिका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रधिक से लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। श्रेष प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। श्रेष प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार श्रशुभ और श्रयशःकीर्ति की मुख्यता से सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३२४ कार्मण काययोगी जीवोंमें भङ्ग श्रौदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मनुष्य गतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो सगदि॰ सिया॰ संखेजागु॰ । देवगदि॰ ४ सिया० । तं तु॰ ।

३२५. इत्थिवे०-पुरिसवेदेसु सत्तराणं कम्माणं पंचिदियभंगो । एवरि कोध-संज॰ ज॰डि०बं॰ तिरिणसंज॰ णि० बं० णि॰ जहराणा॰ । एवं तिरिणसंजल-णाणं ।

३२६. एवुंसगे मोहणी० इत्थिवेदभंगो। सेसं ख्रोघं। अवगद्वेदे ख्रोघं। कोधादि०४ ख्रोघं। एवरि विसेसो, कोधे कोधसंज० [ज०द्वि०वं०] तिरिण्संज० णि० वं० णि० जहएणा०। एवं तिरिण्संजलणाणं। माणे माण्संज० ज०द्वि०वं० दोएणं संजल० णि० वं० णि० जहएणा०। एवं दोएणं संजलणाणं। मायाए माया-संज० ज०द्वि०वं लोभसंज० णि० वं० णि० वं० णि० जहएणा०। एवं लोभसंजल०। लोभे ख्रोघं चेव।

३२७. मदि०-सुद० तिरिक्लोघं। विभंगे सत्तरणं कम्माणं णिरयोघं। णिरयग० ज॰हि०बं० पंचिंदि०-वेउच्वि०-तेजा०-क०-वेउच्वि० ग्रंगो०-वरण्०४-त्रगु०४-तस०४-

नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। देवगित चतुष्कका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रज्ञघन्य एक समय श्रिधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रिधकतक स्थितिका बन्धक होता है।

३२४. स्त्रीवेदी श्रौर पुरुषवेदी जीवोंमें सात कमोंका भक्त पञ्चे न्द्रियोंके समान है। इतनी विशोषता है कि कोध संज्वलनकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव तीन संज्वलनोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे जघन्य स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार तीन संज्वलनोंकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

३२६. नपुंसकवेदी जीवोंमें मोहनीयका भक्त स्त्रीवेदके समान है। तथा शेष कर्मोंका भक्त श्रोघके समान है। श्रपगतवेदी जीवोंमें श्रोघके समान है। क्रोधादि चार कषायवाले जीवोंमें श्रोघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि क्रोधकपायवाले जीवोंमें क्रोध संज्वलनको जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तोन संज्वलनोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तीन संज्वलनोंकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए। मानकपायवाले जीवोंमें मान संज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव दो सञ्जवलनोंका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार दो संज्वलनोंकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए। माया कषायवाले जीवोंमें माया संज्वलनको जघन्य स्थितिका बन्धक जीव लोभ संज्वलनका नियमसे बन्धक होता है। इसीप्रकार लोभ संज्वलनकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए। लोभकषायवाले जीवोंमें सिन्नकर्ष श्रोघके समान ही है।

३२% मत्यक्कांनी और श्रुताक्कांनी जीवोंमें सिन्नकर्ष सामान्य तिर्यञ्जोंके समान है। विभक्कक्कानमें सात कमींका भक्क सामान्य नारिकयोंके समान है। नरकगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रियजाति, वैक्रियिकशरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर बैक्रियिकश्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रुगुरुलघुचतुष्क, जसचतुष्क श्रौर निर्माण इनका

णिमि० णि॰ बं॰ संखेजनगु० । हुंड०-अप्पसत्थ०-अथिरादिञ्च० णि० बं॰ संखेजन-भाग॰ । णिरयाणु० णि॰ बं० । तं तु० । एवं णिरयाणु० । तिरिक्खगदि० ज॰ दि०बं० पंचिंदि०-तेजा०-क॰-समचदु०-वएण०४-अगु०४-पसत्थवि०--तस०४--थिरा-दिञ्च०-णिमि० णि॰ संखेजजगु० । अोरालि॰अंगो०-वज्जरि०-तिरिक्खाणु० णि०वं० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवं तिरिक्खाणु०-उज्जो० ।

३२८. मणुसग॰ ज०द्वि०वं० श्रोरालि०--श्रोरालि॰श्रंगो०--वज्जरि०-मणुसाणु॰ णि॰ वं॰ । तं तु॰ । सेसं तिरिक्खगदिभंगो । एवं श्रोरालि०-श्रोरालि०श्रंगो०-वज्जरि॰-

नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। द्वग्डसंस्थान, अपशस्त्रविहायोगित और अस्थिर आदि छह इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है । नरकगत्यानपूर्वीका नियमसे वन्धक होता है । किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेत्रा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर प्रस्का श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। इसीप्रकार नरकगत्यानपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । तिर्यञ्जगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चे-न्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, श्रग्रहलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर ब्रादि छह श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अज्ञघन्य संख्यातगुणो अधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रौदारिक आङ्कोपाङ, वज्रर्षभनाराच संहतन और तिर्यञ्जगत्यानपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है किन्त वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है और श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेना अजधन्य एक समय ग्रधिकसे लेकर पल्यका ग्रसंख्यातवां भाग ग्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेका श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रौर उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

३२८. मनुष्यगितकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव श्रौदारिक शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्जर्षभनाराच संहनन श्रौर मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रोर श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यका श्रपेक्षा श्रजघन्य एक समय श्रिधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातचां भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है। इसीप्रकार श्रौदारिक शरीर, श्रौदारिक शाङ्गोपाङ्ग, वज्जर्षभनाराचसंहनन श्रौर मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रौदारिक शरीर, श्रौदारिक शाङ्गोपाङ्ग, वज्जर्षभनाराच संहनन, दो गित, दो श्रानुपूर्वी श्रौर उद्योतका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित्

३२६. देवगदि॰ ज॰िट॰वं॰ पंचिंदि॰-सादि-पसत्थद्वावीसं णिय०। तं तु०। एवमेदात्रो एकमेकस्स। तं तु॰। चदुजादि--पंचसंठा॰--पंचसंघ॰--ऋप्प-सत्थ०-दृभग-दुस्सर-ऋणादे० मणजोगिभंगो। णवरि जसगि॰ ज० संखेज्जगुणुब्भ०।

३३०. त्राभिणि०-सुद०-त्रोधि० मण०भंगो । एविर मिच्छत्तपगिदं वज्ज । मणु-सगिद्दि० ज०हि०वं० पंचिद्दि०--तेजा०-क०--समचदु०--वएण०४--त्रगु०४--पसत्थ०-तस०४-थिरादिपंच-णिमि० णि० वं० संखेज्जगुणब्भ० । त्रोरालि०-त्रोरालि०ग्रंगो०-वज्जरि०-मणुसाणु० णि० वं० । तं तु० । जस० णि० वं० ग्रसंखेज्जगु० । तित्थय०

श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रिधिक तक स्थितिका वन्धक होता है।

३२६. देवगितकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, स्वातिसंस्थान प्रशस्त श्रद्धाईस प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका वन्ध होता है । इसीप्रकार इन सब प्रकृतियोंका प्रस्पर सन्निकर्प जानना चाहिए । किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । चार जाति, पांच संस्थान, पांच संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुःस्वर श्रौर अनादेय इनका भन्न मनोयोगी जीवोंके समान है । इतनी विशेषता है कि यशकोर्तिका नियमसे बन्धक होता है जो श्रजघन्य संख्यात-गुणी श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है ।

३३०. आभिनिबोधिक ज्ञानी, श्रुतज्ञानी श्रौर श्रविध्वानी जीवोंका भक्क मनः पर्ययञ्चानी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि भिथ्यात्य प्रकृतिको छोड़ कर सिन्नकर्ष कहना चाहिए। मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पश्चेन्द्रिय जाति, तेजस शरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तिवहायोगिति, त्रसचतुष्क, स्थिर श्रादि पाँच श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यात गुणी श्रिष्क स्थितिका बन्धक होता है। औदारिक शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्जूषभ नाराचसंहनन श्रौर मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपंचा श्रजघन्य एक समय श्रिष्कसे छेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रिष्क तक स्थितिका बन्धक होता है। यशान्कितिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रिष्क स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक बन्धक होता है। तीर्थकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक

सिया० संखेजागु॰ । एवं मणुसगदिपंचगस्स ।

३३१. देवगदि॰ ज॰िंड॰वं॰ पंचिंदि०-पसत्थद्वावीसं णि० वं॰ । तं तु॰ । णवरि जस० णि॰ वं॰ असंखेज्जगु॰ । आहार०-आहार॰अंगो०-तित्थय॰ सिया० । तं तु० । एवमेदाओ एकमेकस्स । तं तु० ।

३३२. श्रथिर० ज०िड०वं० देवगिद-पंचिदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि॰ श्रंगो०-वएए०४-देवाणु०-श्रगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-श्रादे०-िए० णि० वं० संखेज्जगु० । सुभ०-तित्थय० सिया० संखे०गु० । जस० सिया० श्रसंखे-ज्जगु० । श्रसुभ-श्रजस० सिया० । तं तु० । एवं श्रसुभ-श्रजस० ।

होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है । इसी प्रकार मनुष्यगति पञ्चकको मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए ।

३३१. देवगतिकी जघःय स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति प्रशस्त अद्वारंस प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि ग्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि ग्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि ग्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। तो नियमसे जघन्यकी ग्रपेचा ग्रजघन्य एक समय ग्रधिकमें लेकर पल्यक ग्रसंख्यातवाँ भाग ग्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इतनी विशेषता है कि यशा-कीर्तिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे ग्रजघन्य ग्रसंख्यातगुणी ग्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। ग्राहारक श्ररीर, ग्राहारक आङ्गोपङ्ग ग्रौर तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् वन्धक होता है। ग्राहारक श्रोर ग्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि ग्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि ग्रजघन्य एक समय ग्रधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग ग्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी ग्रवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यक होता है। यदि ग्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यक होता है। यदि ग्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी ग्रपेचा ग्रजघन्य एक समय ग्रधिकसे लेकर पल्यका होता है तो नियमसे जघन्यकी ग्रपेचा ग्रजघन्य एक समय ग्रधिकसे लेकर पल्यका ग्रसंख्यातवां भाग ग्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है।

३३२. श्रस्थिरकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव देवगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग. वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विद्वायोगिति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रोर निर्माण इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रिषक स्थितिका बन्धक होता है। श्रम श्रीर तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रिषक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रिषक स्थितिका बन्धक होता है। श्रगुभ और श्रयशःकीर्तिका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपंचा श्रजघन्य एक समय श्रिषक से लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां तो नियमसे जघन्यकी श्रपंचा श्रजघन्य एक समय श्रिष्ठक से लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां

३३३. मणपज्जव०-संजद-सामाइ०-छेदो॰ श्रोधिभंगो। एवरि श्रसंजद-संजदा-संजदपगदीश्रो वज्ज। परिहार॰ श्राहारकायजोगिभंगो। एवरि श्ररदि० ज०द्दि०वं० सोग॰ एि० वं०। तं तु॰। सेसं संखेजगु॰। एवं सोग॰।

३३४. श्रथिर॰ ज०६०वं० देवगदि-पंचिदि०-वंउव्वि०-तेजा०-क॰-समचढु०-वंउव्वि०त्रंगो॰--वएए।०४--देवागु०-त्रगु०४-पसत्थ०--तस०-४-सुभग--सुस्सर--आदे०-णिमि० संखेजागु॰ । सुभ--जस०--तित्थय॰ सिया० संखेजागु॰ । श्रसुभ-श्रजस॰ सिया० । तं तु० । एवं श्रसुभ-श्रजस॰ ।

३३५. सुहुमसंप॰ श्रोघं | संजदासंजदे परिहारभंगो | एवरि मोह० श्रष्टकसा०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगुं० एदाश्रो एकमेकस्स | तं तु० | श्ररदि० ज० टि०वं० श्रष्ट-भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार श्रशुभ श्रौर श्रयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३३३. मनःपर्ययक्षानी, संयत, सामायिक संयत और छेदोपस्थापना संयत जीवोंका भक्त श्रविधिक्षानी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रसंयत श्रीर संयतासंयतकी प्रकृतियोंको छोड़कर जानना चाहिए। परिहारविशुद्धि संयतोंका भक्त श्राहारककाययोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि श्ररितको जघन्य स्थितिका बन्धक जीव शोकका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेक्ता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शोकको मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३३४. श्रस्थिरकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव देवगित, पञ्चेन्दिय जाति, वैक्रियिक श्रारीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। शुभ, यशःकीर्ति श्रीर तीर्थंकर इनका कदाचित् बन्धक होता है। श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि वन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार श्रग्रभ श्रीर श्रयशः-कीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३३४. स्ट्मसाम्परायिक संयत जीवोंका भक्त श्रोघसे समान है। संयतासंमत जीवों का भक्त परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि मोहनीयकी आठ कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रित, भय और जुगुष्सा इनका परस्पर सिनकर्ष होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। श्रोर अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है। श्रिक्ति जघन्यको श्रेपेका श्रजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग श्रिधक तक स्थितिका बन्धक होता है। श्ररिक्ती

कसा०-पुरिस०--भय-दुगुं० णि० संखेज्जगु०। सोग० णियमा वं०।तं तु०। एवं सोग०।

३३६. त्र्रसंजद० तिरिक्खोघं । एवरि तित्थय० त्र्रोघं । एवरि जस० एा वं० संखेज्जगु० ।

३३७. चक्खुदंस० तसपज्जत्तभंगो । अचक्खुदं० मृलोघं । ओधिदंस० ओधि-णाणिभंगो ।

३३८. किएण-णील-काऊणं असंजदभंगो । एवरि किएण-णीलाएं तित्थयरं देवगदिसह कादव्वो । काउए पढमपुढिवभंगो । तेऊए छएएं कम्माएं सोधम्मभंगो । मिच्छ० ज०िं वं० अर्णताणु-वंधि०४ णि० वं० । तं तु० । वारसकसा०-पुरिस०- इस्स-रदि-भय-दुगुं० णि० वं० संखेज्जगु० । एवं अर्णताणुवंधि०४ ।

३३६. अपचक्खासकोध० ज०द्वि०वं० तिस्सिकसा० सि वं। तं तु०।

जधन्य स्थितिका बन्धक जीव श्राठ कषाय, पुरुषवेद, भय श्रोर जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। शोक का नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रजधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रपेत्ता श्रजधन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

३३६. त्रसंयत जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्जोंके समान जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग श्रोघके समान है। इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिका नियम से बन्धक होता है जो नियमसे ब्रज्जघन्य संख्यातगुणी ब्रधिक स्थितिका वन्धक होता है।

३३७. चक्षुदर्शनवाले जीवोंका भङ्ग त्रसपर्याम जीवोंके समान है। श्रचक्षुदर्शनवाले जीवोंका भङ्ग मृलोघके समान है। श्रवधिदर्शनवाले जीवोंका भङ्ग श्रवधिक्षानी जीवोंके समान है।

३३८. कृष्ण, नील, श्रीर कापोत लेश्यावाले जीवोंका भङ्ग श्रसंयत जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि कृष्ण श्रीर नील लेश्यावाले जीवोंके तीर्थंकर प्रकृति देवगित सिहत करनी चाहिए। कापोत लेश्यामें तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग पहली पृथ्वीके समान है। पीत लेश्यामें छह कमोंका भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है। मिथ्यात्वको जघन्य स्थितिका वन्धक जीव श्रनन्तानुबन्धी चारका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। वारह कपाय, पुरुपवेद, हास्य, रित, भय श्रीर जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्रनन्तानुवन्धी चारकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

३३९. श्रप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव तीन कषायका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रोर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे श्रहक०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगुं० णि० वं० संखेज्जगु० । एवं तिरिणकसा० ।

३४०. पचक्लाणकोध० ज०ड्ठि०बं० तिरिएएक० एए० वं० । तं तु० । चदु-संज०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगुं० एि।० वं० संखेज्जगु० । एवं तिरिएएकसा० ।

३४१. कोथसंज० ज०द्वि०वं० तिरिणसंज०--पुरिस०--हस्स--रदि--भय--दुगुं० णि० वं०। तं तु० । एवमेदात्रो एकमेकस्स । तं तु० ।

३४२. इत्थि० ज०हि०वं० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं० णि० वं० संखेज्ज-गुणब्भिह्यं० । हस्स-रदि-त्रारदि-सोग० सिया० संखेज्जगु० । एवं णवुंस० ।

३४३ अरदि० ज०द्वि०वं० चदुसंज०--पुरिस०-भय--दुगुं० णि० वं० संखे-

जधन्यकी श्रेपेत्ता अजधन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पर्वयका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। श्राठ कपाय, पुरुषवेद, हास्य, रित, भय श्रोर जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार तीन कपायोंको मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३४०. प्रत्याख्यानावरण कोधकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन कपायोंका नियमसे वन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है जो नियमसे स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका चन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असख्यातवां भाग अधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। चार सञ्ज्वलन, पुरुपवेद, हास्य, रित, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे संख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसीप्रकार तीन कपायोंकी मुख्यतोसे सन्निकर्प जानना चाहिए।

३४१. क्रोध सञ्ज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन सञ्ज्वलन, पुरुपवेद, हास्य, रित, भय श्रोर जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका श्रसंख्यातवां भाग श्रिधकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्प जानना चाहिए। किन्तु ऐसी श्रवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है।

३४२. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय श्रौर जुगुष्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। हास्य, रित, श्ररित श्रौर शोक इनका कदाचित बन्धक होता है श्रौर कदान्वित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

३४३. श्ररतिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव धार संज्वलन, पुरुषवेद भय श्रीर जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी ज्जगु० । सोग० णि० वं० । तं तु० । एवं सोग० ।

३४४. तिरिक्खगदि--एइंदि०--पंचसंठा०-पंचसंघ०-तिरिक्खाणु०-त्रादाउज्जो०-त्रप्पसत्थ०-थावर-दूभग-दुस्सर-त्र्रणादे० सोधम्ममंगो। मणुसगदि० ज०ि६०वं० पंचिदि०--तेजा०-क०--समचदु०--वएण्०४--त्र्रगु०४--पसत्थवि०--तस४-थिरादि छ०-णिमि० णि० वं० सखेज्जगुण्डभिहयं०। स्रोरालि०-स्रोरालि०ग्रंगो०-वज्जिरि०-मणुसाणु० णि० वं०। तं तु०। तित्थय० सिया० संखेज्जगु०। एवं स्रोरालि०-स्रोरालि०स्रंगो०-वज्जिरि०-मणुसाणु०।

३४५. देवगदि० ज०िंठवं० परिहार-पढमदंडस्रो काद्व्वो । स्रथिरं पि तस्सेव विदिय-दंडस्रो । एवं पम्माए ।

३४६. सुकाए सत्त्तग्णं कम्माणं मणजोगिभंगो । मणुसगदि-त्र्योरालि०-त्र्योरालि०त्रंगो०-वज्जरि०-मजुसाणु० पम्माए भंगो । स्वरि जस० स्थि० वं०

श्रिधिक स्थितिका वन्धक होता है। शोकका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर अजधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रिपेचा श्रजधन्य एक समय श्रिधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रिधिकतक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

३४४. तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, पांच संस्थान, पांच संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, ग्रातप, उद्योत, ग्रप्रशस्त विहायोगित, स्थावर, दुर्भग, दुस्वर ग्रौर ग्रनादेय इनका भक्त सौधर्म कल्पके समान है। मनुष्यगितकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रियजाति, तैजस शरीर, कार्मण्शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुत्तघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे ग्रजघन्य संख्यातगुणी ग्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रौदारिक शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ज्ञपंभनाराचसंहनन श्रौर मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है ग्रोर ग्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि ग्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी ग्रपेचा ग्रजघन्य एक समय ग्रधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातयां भाग ग्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है ग्रीर कटाचित् ग्रबन्धक होता है यदि बन्धक होता है तो नियमसे ग्रजघन्य संख्यातयां भाग ग्रधिक स्थितिका बन्धक होता है यदि बन्धक होता है तो नियमसे ग्रजघन्य संख्यातगुणी ग्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार ग्रौदारिक ग्ररीर, ग्रौदारिक ग्राङ्गोपाङ्ग, वर्ज्ञपंभनाराचसंहनन ग्रौर मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

३४४. देवगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके परिहारिवशुद्धिसंयतका प्रथम दण्डक करना चाहिए श्रीर श्रस्थिर प्रकृति भी कहनी चाहिए । तथा उसीके दूसरा दण्डक कहना चाहिए । इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए ।

३४६. शुक्ललेश्यामें सात कर्मोंका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है। मनुष्यगित, श्रौदारिक शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्रर्पभनाराच संहनन श्रोर मनुष्यगत्यानुपूर्वीका भङ्ग पद्मलेश्याके समान है। इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिका नियमसे बन्धक होता है त्रसंखेजनगुरु । पंचसंठा०-पंचसंघ०-त्रप्रसत्थ०-दूभग-दुस्सर-त्रणादे० त्राणदभंगो । वज्जरि०-जसरु सिया बं० संखेजनगुरु । सेसं पम्माए भंगो । गावरि जसगित्तिरु त्रसंखेजनगुरु ।

३४७. भवसिद्धिया० श्रोघं । श्रव्भवसिद्धिया० मिट्भंगो । सम्मादि०-खइग-सम्मादि० प्रमाभंगो । एवरि मिच्छ०पगदीश्रो वज्ज । सासर्ण सत्तरणं कम्माणं णिरयोघं । एवरि मिच्छत्त-एवुं सग० वज्ज । तिरिक्ख-गदि० ज०दि०वं० पंचिदि०-श्रोरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-श्रोरालि०श्रंगो०-वज्जरि०-वएए०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि० णि०वं० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवं तिरिक्खाणु०-उज्जो० ।

३४८. मणुसगदि॰ ज०डि॰वं॰ तिरिक्खगदिभंगो । एवरि [मिच्छत्त-एवुं

जो नियमसे ग्रजघन्य ग्रसंख्यातगुणी ग्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। पांच संस्थान, पांच संहनन, ग्रप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुस्वर ग्रौर ग्रनादेय इनका भङ्ग ग्रानत कल्पके समान है। वज्रपीमनाराच संहनन ग्रौर यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है ग्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे ग्रजघन्य संख्यातगुणी ग्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। इंग्रिप प्रकृतियोंका भङ्ग पद्मलेश्याके समान है। इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिकी ग्रसंख्यातगुणी ग्रिधिक स्थितिका वन्धक होता है।

३४७. भव्य जीवोंका भङ्ग ग्रोघके समान है। ग्रभव्य जीवोंका भङ्ग मत्यज्ञानियोंके समान है। सम्यग्दिए और जायिक सम्यग्दिए जीवोंका भङ्ग श्रवधिवानी जीवोंके समान है। वेदक सम्यग्दप्र जीवोंका भङ्ग पद्मलेश्यावाले जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व सम्बन्धी प्रकृतियोंको छोड्कर कहना चाहिए। सासादन सम्यक्त्वमें सात कर्मोका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान् है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व श्रौर नपुंसक वंदको छोड़कर कहना चाहिए। तिर्यञ्जगतिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्रर्पभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, जस चतुष्क, स्थिर ग्रादि छह श्रौर निर्माण इनका नियमसं बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्वा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसं लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेक्षा श्रज्ञघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी ग्रोर उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

३४८. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व श्रीर नपुंसकवंदको छोड़कर कहना चाहिए। देव-गतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव प्रशस्त श्रद्वाईस प्रश्तियोंका नियमसे बन्धक होता स०] वज्ज । देवगदि० ज०हि०वं० पसत्थहावीसं खिय० । तं तु० ।

३४६. पंचिदि० ज०िड०वं० तेजा०-क०-समचदु०-वएएए०४-अगु०४-पसत्थ०तस०४-थिरादिछ०-िएमि० एि० वं० | तं तु० | तिएएगिदि-दोसरीर-दोश्रंगो०वज्जरि०-तिएएग्राणु०-उज्जो० सिया० | तं तु० | एवं तेजा०-क०-समचदु०वएएए०४--अगु०४--पसत्थिव०--तस०४--थिरादिछ०--एिमिएं | एवं त्रोरालि०त्रोरालि०त्रंगो०-वज्जरि० | एवरि दोगिदि-दोश्राणु०-उज्जो० सिया० | तं तु० |
सेसं पसत्थ [प-]गदीश्रो एि० वं० | तं तु० | चदुसंठा०--चदुसंघ०--श्रपसत्थ०दूमग-दुस्सर-श्रणादे० मएजोगिभंगो | एवरि थिराथिर-सुभासुभ-जस०-श्रजस०

है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है ग्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर प्रत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है।

३४९. पञ्चेन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचत्रसस्थान, वर्णचतुष्क त्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर श्रादि छह श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेचा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका त्रसंख्यातयाँ भाग त्राधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। तीन गति, दो शरीर, दो ब्राङ्गोपाङ्ग, वज्रर्पभनाराच संहनन, तीन ब्रानुपूर्वी श्रौर उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है! यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेत्ता अजधन्य एक समय अधिकसे लेकर प्रत्यका त्रसंख्यातवाँ भाग त्रधिकतक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर त्रादि छह श्रौर निर्माणुकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार श्रौदारिक शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रौर वज्रर्पभनाराचसंहननकी मुख्यतासे सन्निकर्पं जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि दो गति, दो त्रानुपूर्वी त्रौर उद्योत इनका कटाचित बन्धक होता है श्रीर कटाचित श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेद्धा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। चार संस्थान, चार संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर श्रौर श्रनादेय इनका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है । इतनी विशेषता है कि स्थिर-अस्थिर, शुभ-श्रशुभ श्रीर यशःकीर्ति-श्रयशःकीर्ति इन तीन युगलीका कदाचिन् बन्धक

तिरिए वि सिया॰ संखेजनिद्भा०।

३५०. सम्मामिच्छ० वेदगभंगो । मिच्छादिद्वी० मिद्भंगो । सिएए० मणुस-भंगो । असिएए० तिरिक्खोर्घ । आहार० ओघं । अणाहार० कम्मइगभंगो ।

३५१. जहरणपरत्थाण-सिएएयासो दुवि०—श्रोघे० श्रादे० । श्रोघे० श्राभिणिबो०णाणावरणीयस्स जहएएयं द्विदं वंधंतो चदुणाणा०-चदुदंसणा०-सादा०-जस०-उच्चा०-पंचंतरा० णिय० वं० । णिय० जहएणा० । एत्रमेदाश्रो एक-मेकस्स । तं तु० जहएणा० ।

३५२. णिदाणिदाए ज०द्वि०वं० पंचणा०-चदुदंसणा०-सादा०-चदुसंज०-पुरिस०-जस०-पंचंतरा० णि०वं० । णि० अजह० असंखेजजगु०। चदुदंस०-भिच्छ०-बारसक०-हस्स-रिद-भय-दुगुं०-पंचिदि०--ओरालि०-तेजा०-क०--समचदु०-ओरालि० अंगो०-वज्जरि०-वण्ण०४--अगु०४--पसत्थ०--तस०४--थिरादिपंच-णिमि० णि०वं०। तं तु०। दोगदि-दोआणु०-उज्जो०-णीचा० सिया०। तं तु०। उच्चा० सिया०

होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातयाँ भाग श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है।

३४०. सम्यग्मिथ्यादिष्ट जीवोंका भङ्ग वेदकसम्यग्दिष्ट्योंके समान है और मिथ्या-दिष्ट जीवोंका भङ्ग मत्यक्षानी जीवोंके समान है। संज्ञी जीवोंका भङ्ग मनुष्योंके समान है और श्रसंज्ञी जीवोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। श्राहारक जीवोंका भङ्ग श्रोघके समान है। तथा अनाहारक जोवोंका भङ्ग कार्मणकाययोगी जीवोंके समान है।

## इस प्रकार जघन्य स्वस्थानसन्निकर्ष समाप्त हुत्रा।

३४१. जघन्य परस्थानसन्निकर्ष दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर श्रादेश। श्रोघसे श्रामिनिबोधिक ज्ञानावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, यशःकीर्ति, उद्यगोत्र श्रीर पांच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु वह जघन्य स्थितिका ही वन्धक होता है।

३४२. निद्रानिद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पांच झानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार सञ्ज्वलन, पुरुषंवद, यशःकीर्ति और पाँच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अज्ञघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। चार दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, हास्य, रित, भय, जुगुण्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रपंभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, अगुरुखघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगिति, अस चतुष्क, स्थिर आदि पाँच और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। दो गित, दो आनुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। यो जाति, दो आनुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो ज्ञघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है और कदाचित्

असंखेजनगु०। एवं णिदाणिदाए भंगो चदुदंस०-मिच्छ०-बारसक०-हस्स-रिद-भय-दुगुं०--तिरिक्खगदि--मणुसगदि-पंचिदि०-त्रोरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-श्रोरालि०-ग्रंगो०-वज्नरि०-वएण०४-दोत्राणु०-अगु०४--उज्जो०-पसत्थवि०-तस०४-थिरादिपंच-णिमि०-णीचागोद ति ।

३५३. असादा० ज०िड वंधंतो खवगपगदीओ णिहाणिहाए भंगो। पंचदंसणा०-मिच्छ०-वारसक०-भय-दुगुं०--पंचिदि०-ओरालि०--तेजा०--क०--समचदु०ओरालि० अंगो०--वज्जिरि०-वएण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४--सुभग--सुस्सर-आदे०णिमि० णि०वं०संखेज्जभाग०। हस्स-रदि-तिरिक्खगिद-मणुसगिद-दोआणु०-उज्जो०थिर-सुभ-णीचा० सिया० असंखेज्जभाग०। अरदि-सोग-अथिर-असुभ-अजस०
सिया०। तं तु०। जस०--उच्चा० सिया० असंखेज्जगु०। एवं अरदि--सोग--अथिरअसुभ-अजस०।

श्रज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रज्ञघन्य एक समय श्रिधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रिधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्यगोत्रका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार निद्रानिद्राके समान चार दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कथाय, हास्य, रित, भय, जुगुष्सा, तिर्यञ्चगित, मनुष्यगित, पञ्चिन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्रपंभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, दो श्रानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, उद्योत, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, स्थिर श्रादि पांच, निर्माण श्रीर नोचगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३५३ श्रसाता वेदनीयकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके चपक प्रकृतियोंका भक्न निद्रानिद्राके समान है। पांच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त-विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। हास्य, रित, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, दो ब्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, शुभ ब्रौर नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञधन्य श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। श्ररित, शोक, श्रस्थिर, त्र्रशुभ त्रौर त्र्रयशःकीर्ति **इन**का कदाचित् वन्धक होता है त्रौर कदाचित् त्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भो बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे छेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्ति ग्रीर उचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य श्रसंख्यात-गुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार श्ररति, शोक, श्रस्थिर, श्रशुभ श्रौर श्रयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

३५४. कोधसंज्ञ जब्हिब्बंब् पंचणाब्यद्वंसणाब्यसदावेब्यतिण्णसंज्ञव्य जसव्यच्चाव्यपंचंतव्यायव्यवं संखेज्जगुब्धः। एवं तिष्णिसंज्ञ्यपुरिसव्या णविर माणे दोसंजलणं मायाए लोभसंज्ञ पुरिसव्य चदुसंजलण् ति भाणिद्व्यं। लोभे णित्थ संजलव्युरिसव्या

३५५. इत्थि० ज०िह०वं० खवगपगदीश्रो णिहाणिहाए भंगो। पंचदंस० मिच्छ०--वारसक०--भय--दुगुं०--पंचिदि०--श्रोरालि०-तेजा०--क०--श्रोरालि०श्रंगो०-वरण०-४ श्रगु०-४ पसत्थ०-तस०-४ सुभग-सुस्सर-श्रादे०--णिमि० णि० वं० श्रसं-खेज्जभाग०। सादा०-जस०-उच्चा० सिया० श्रसंखेज्जगु०। श्रसादा०-श्ररदि-सोग-तिरिक्ख०-मणुसग०-तिणिणसंदा०-तिणिणसंदा०-दोश्राणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-श्रजस०-णीचा०-सिया० श्रसंखेज्जभाग०। एवं णवुंस०। णविर पंचसंदा०-पंचसंघ०-णिरयाणु० ज०िह०वं० पंचणा०-चदुदंसणा०--चदुसंज०--पंचंत० णि० वं० श्रसंखेज्जगु०। पंचदंसणा०-श्रसादा०-मिच्छ०-वारसक०-णवुंस०-श्ररदि-सोग-भय-दुगुं०-चदुवीसणामपगदीश्रो--णीचा० णि० वं० संखेज्जगु०। णिरयग०-वेडिव०-

३४४. कोघ सञ्ज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सात।वेदनीय, तीन सञ्ज्वलन, यशःकीर्ति, उच्चगात्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार तीन सञ्ज्वलन श्रीर पुरुपवेदकी मुख्यतास सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मानमें दो सञ्ज्वलन, मायामें लोभ सञ्ज्वलन श्रीर पुरुपवेदमें चार सञ्ज्वलन कहना चाहिए। लोभमें सञ्ज्वलन श्रीर पुरुपवेदका सन्निकर्प नहीं होता।

२४४. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवके चएक प्रस्तियोंका भङ्ग निदानिदाके समान है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कपाय,भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, ग्रौदा-रिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रमुरुलघ चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क,सुभग, सुस्वर, त्रादेय श्रीर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे ग्रसंख्यातवाँ भाग ग्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय. यशःकोति श्रौर उच्चगोत्र इनका कदाचित बन्धक होता है श्रौर कदाचित श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका चन्धक होता है। श्रसातावेदनीय, श्ररति, शोक, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, तीन संस्थान, तीन संहनन, दो त्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, ग्रस्थिर, ग्रुम, त्राग्रम त्रायशःकार्ति ग्रीर नीच गोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसक चेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पांच संस्थान, पाँच संहनन और नरकगत्यानुपूर्वीकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ब्रानावरण, चार दर्शनावरण, चार सञ्ज्वलन श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, श्रसातावेदनीय, मिध्यात्व, बारह कषाय, नपुंसकवेद, न्नरित, शोक, भय, जुगुष्सा, चौबीस नामकर्मकी प्रकृतियाँ श्रौर नीचगोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है।

वेउब्वि०्यंगो०-िणरयाणु० णि० वं० णि० अज० । जह० अज० विद्वाणपदिदाणं वंधदि संखेजजभाग० संखेजगु० ।

३५६. तिरिक्खायु० ज०िंद्रवं खवगपगदीश्रो णि० वं श्रसंखेजगु०। पंचदंस०-भिच्छ०-बारसक०--णवुंस०-भय--दुगुं०--तिरिक्खगदि० श्रपज्ञत्तसंजुत्ताश्रो पगदीश्रो णीचा० णि० वं०। णि० श्रज्ञ०। जह० श्रज्ञ० विद्वाणपदिदं श्रसंखेज्ञ-भाग० संखेजगु०। सादावे० सिया० श्रसंखेजगु०। श्रसादा०-हस्स-रिद-श्ररिद-सोग--पंचजादि-श्रोरालि०श्रंगो०--श्रसंपत्त०--तस-थावर--बादर-सुहुम--पत्तेय-साधार० सिया०। यदि० वं० णि० श्रज्ञ० विद्वाणपदिदं श्रसंखेज्ञभा० संखेजगु०। एवं मणुसायु०। णवरि एइंदियसंजुत्ताश्रो वज्ञ।

३५७. देवायु० ज०द्वि॰वं० खवगपगदीश्रो िषा० वं० श्रसंखेज्जगु० । पंच-दंस०--मिच्छ०-वारसक०--हस्स-रिद्--भय--दुगुं०-पसत्थणामाश्रो चदुवीसं िष्ण० वं० संखेज्जगु० । इत्थि० सिया० संखेज्जगु० । पुरिस० सिया० श्रसंखेज्जगु० । देवगदि-नरकगति, वैकियिक शरीर, वैकियिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रोर नरकगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे वन्धक होता है जो जधन्यको श्रपेता श्रज्जधन्य नियमसे दो स्थान पतित स्थितियोंका बन्धक होता है । या तो संख्यातयाँ भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है या संख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है ।

३५६. तिर्यञ्चायुकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव चपक प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कपाय, नपुंसकवद, अय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगित, अपर्याप्तसंयुक्त प्रकृतियाँ और नीचगोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्यकी अपंचा अजघन्य दो स्थान पतित स्थितिका वन्धक होता है, या तो असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका वन्धक होता है या संख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। सातावदनीयका कदाचित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। असातावदनीय, हास्य, रित, अरित, शोक, पाँच जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तास्प्राटिका संहनन, त्रस, स्थावर, बाहर, सङ्म, प्रत्येक और साधारण इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य दो स्थानपितत स्थितिका बन्धक होता है। या तो असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका वन्धक होता है या संख्यातगुणी अधिक स्थितका बन्धक होता है या संख्यातगुणी अधिक स्थितका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यायुको मुख्यतास सन्तिकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति संयुक्त प्रकृतियांको छोड़कर जानना चाहिए।

३५७. देवायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव त्तपक प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, प्रिथ्यात्व, बारह कषाय, हास्य, रित, भय, जुगुष्सा श्रीर नामकर्मकी चौबीस प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका वन्धक होता है। श्री

१. मूलप्रती यदि० णि० बं० णि० इति पाठः।

वेउन्वि॰-वेउन्वि॰श्रंगो०-देवाणु॰ णि॰ वं॰, णि० श्रज० विद्वाणपदिदं संखेज्जभा॰ संखेज्जगु०।

३५६. तिरिक्खग॰ ज॰िइ॰बं॰ खवगपगदीत्रो असंखेज्जगु॰। पंचदंस॰-मिच्छ॰-बारसक॰--हस्स--रिद-भय-दुगुं०-णाम० सत्थाणभंगो णीचा॰ णि॰ वं॰। तं तु॰। एवं तिरिक्खाणु॰--उज्जो॰। मणुसगदि० तिरिक्खगदिभंगो। णविरि उच्चा० णि० वं० असंखेज्जगु॰।

है। पुरुषवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य असंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। देवगित, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य दो स्थानपितत स्थितिका बन्धक होता है। या तो संख्यातवाँ भाग श्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है।

३४८. नरकगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चपक प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, श्रसातावेदनीय, मिथ्यात्व, बारह कपाय, नपुंसकवेद, श्ररित, शोक, भय, जुगुप्सा, स्वस्थान भंगके समान नामकर्मकी प्रकृतियाँ श्रीर नीचगोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। वियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३४९. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव चपकप्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, हास्य, रित, भय, जुगुण्सा, स्वस्थान भङ्गके समान नामकर्मकी प्रकृतियाँ और नीच गोत्र इनका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्च- गत्यानुपूर्वी और उद्योतको मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। मनुष्यगतिका भङ्ग तिर्यञ्च- गतिक समान है। इतनी विशेषता है कि उच्च गोत्रका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है।

मूलप्रतौ बं असंखेज इति पाटः । २. मृलप्रतौ श्चसंखेजगु देवगदि श्चसखेजगु देवगदि श्चसखेजगु देवगदि ।

३६०. देवगदि० ज॰ष्टि०वं॰ खवगपगदीऋो [ णि० वं० ] ऋसंखेजगु॰ । पंचदंस॰-मिच्छ०-वारसक०-चदुणोक० णिय० संखेजगु॰ । णाम सत्थाणभंगो ।

३६१. एइंदि॰-ज॰िंदि॰ खव॰पगदीश्रो णि॰ बं० श्रसंखेज्जगु॰। पंचदंस॰-मिन्छ०--बारसक०-णवुंस॰-भय-दुगुं॰--णीचा॰ णि० वं॰ श्रसंखेज्जभा॰। सादा॰ सिया॰ श्रसंखेज्जगु०। श्रसादा०-हस्स-रिंद-श्ररिंद-सोग० सिया० श्रसंखेज्जभा०। णाम॰ सत्थाणभंगो। एवं श्रादाव-थावर०। एवं वीइंदि॰-तीइं॰-चदुरि०।

३६२. त्राहार० ज०द्वि०वं० खवगपगदीणं णि० वं० त्रसंखेजगु० । हस्स-रिद-भय-दुगुं० णि० वं० संखेज्जगु० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं त्राहार०श्रंगो० तित्थय० ।

३६३. राग्गोद० ज॰िड॰वं० खवगपगदीत्रो र्षि॰ वं॰ त्रसंखेज्जगु० । पंच-दंस॰--मिच्छ०--वारसक०--भय--दुगुं० र्षि० वं० त्रसंखेज्जभा० । सादा० सिया०

३६०. देवगतिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव चपक प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पांच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कपाय और चार नोकपाय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भंग स्वस्थानके समान है।

३६१. एकेन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव चापक प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अज्ञघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कपाय, नपुंसकवेद, भय, जुगुप्सा और नीच गोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातवां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीयका कदाचित् वन्धक होता है ग्रीर कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। असातावेदनीय, हास्य, रित, अरित और शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है। असातावेदनीय, हास्य, रित, अरित और शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नामकर्यकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार आतप और स्थावर प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्य जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार झीन्द्रियजाति, जीन्द्रिय जाति और चतुरिन्द्रिय जातिकी मुख्यतासे सन्निकर्य जानना चाहिए।

३६२. श्राहारक शरीरकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चपक प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, भय श्रीर जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भंग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार श्राहारक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर तीर्थंकर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३६३. न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चपक प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे ग्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, मिध्यात्व, वारह कपाय, भय श्रीर जुगुप्सा असंखेजागु० । हस्स-रिद--ग्राह--सोग-णीचा॰ सिया॰ असंखेजाभा० । णाम॰ सत्थाणभंगो । एवं चदुदंस०-पंचसंघ०-ग्रप्यसत्थ०-दूभग-दुस्सर-त्र्यणादे॰ णग्गोदभंगो । णवरि खुज्ज०-वामण०-अद्धणारा॰-खीलिय०-इत्थिवे० सिया॰ असंखेज्जभा० । पुरिस० सिया॰ असंखेजागु॰ ।

३६४. हुंड॰-असंपत्त॰ ज॰ष्टि०बं॰ इत्थि॰-णवुंस० सिया॰ असंखेज्जगु० । एवं अप्पसत्थ०-दृभग-दुस्सर-अणादे०--तिरिणवेदाणि भाणिद्व्वाणि । सुहुम-साधा-रण॰ एइंदियभंगो । णवरि सगपगदीओ जाणिद्व्वाओ । एवं सव्वेसिं णामाणं । णवरि अप्पप्णो सत्थाणं काद्व्वं ।

३६५. ञ्रादेसेण णेरइएसु ञ्राभिणिवोधि० ज०द्वि०वं० चदुणा०-णवदंसणा०-सादा०--मिच्ब०--सोलसक०--पुरिस०--हस्स--रदि--भय-दुगुं०--मणुसग०--पंचिदि०--त्र्योरालि०--समचदु०--ञ्रोरालि०श्रंगो०--वज्जरि०--वएण० ४--मणुसाणु०--त्रगु० ४--

इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य श्रसंख्यातयां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीयका कदाचित् बन्धक होता है। साता वेदनीयका कदाचित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, श्ररित, शोक श्रीर नीचगोत्र इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य श्रसंख्यातयां भाग श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भक्त स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार न्यश्रोध परिमण्डल संस्थानके समान चार दर्शनावरण पाँच संहनन, श्रप्रशस्तिवहायोगित, दुर्भग, दुस्वर श्रीर श्रनादेयकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कुष्डकसंस्थान, वामन संस्थान, श्रधंनाराच संहनन, कीलक संहनन श्रीर स्त्रीवेद इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातयां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषचेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है।

३६४. हुएडसंस्थान और श्रसम्प्राप्तास्पाटिका संहननकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव स्त्रीवेद श्रीर नपुंसकवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इस प्रकार श्रप्रशस्त विहायोगिति, दुर्भग, दुस्वर, श्रनादेय श्रीर तीन वेदोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। सूदम श्रीर साधारण प्रकृतियोंका भङ्ग एकेन्द्रिय जातिके समान है। इतनो विशेषता है कि श्रपनो श्रपनी प्रकृतियाँ जाननी चाहिए। इसी प्रकार सब नामकर्मकी प्रकृतियोंका जानना चाहिए। इतनो विशेषता है कि श्रपना श्रपना स्वस्थान करना चाहिए।

३६४. त्रादेशसे नारिकयोंमं त्राभिनिवोधिक ज्ञानावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, मिध्यात्व, सोलह कपाय, पुरुषवेद, हास्य,रित, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगित, पञ्चेन्द्रियजाित, श्रोदािरिक शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, श्रोदािरिक शाङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क,

पसत्थ०-तस०४-थिरादिछक-णिमि०-उचा०-पंचंत० णि० बं०। तं तु०। एवमेदात्रो एकमेकस्स । तं तु०।

३६६. असादा० ज०िड०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-भिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-मणुसग०-पंचिदि०-श्रोरालिय०-तेजा०-क०-समचदु० श्रोरालि०श्रंगो०-वज्जरि०-वण्ण०४-मणुसाणु०--त्रगु०४-पसत्थवि०--तस०४--सुभग--सुस्सर--श्रादे०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० वं० संखेज्जभा० । इस्स-रिद-थिर-सुभ-जसगि० सिया० संखे-जजभा० । अरिद-सोग-श्रथिर--श्रसुभ-श्रजस० सिया० । तं तु० । एवं श्रथिर--श्रसुभ-श्रजस० ।

३६७. इत्थिवे० ज॰डि०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-मणुस०--पंचिदि०--स्रोरालि०-तेना०-क०-स्रोरालि०स्रंगो०-वरण्०४-मणुसाणु०-

प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, स्थिर त्रादि छह, निर्माण, उच्चगोत्र त्रौर पांच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है त्रौर श्रजधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी अपेचा श्रजधन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सिनकर्ष जानना चाहिए। किन्तु तब वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रपेचा श्रजधन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है।

३६६. श्रसाता वेदनीयकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पांच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्रपंभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगिति, श्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, निर्माण, उच्चगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवांभाग श्रिष्ठिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, स्थिर, श्रुभ श्रौर यशकोर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है। श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवांभाग श्रिष्ठक स्थितिका वन्धक होता है। श्ररित, शोक, श्रस्थिर, श्रशुभ श्रौर श्रयशकोर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है। श्ररित, शोक, श्रस्थर, श्रशुभ श्रौर श्रयशकोर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है। श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रिष्ठक्ते लेकर पत्यका श्रसंख्यातवांभाग श्रिष्ठक्तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार श्रस्थर, श्रशुभ श्रौर श्रयदाःकीर्तिकी मुख्यतासे सिश्वकर्ष जानना चाहिए।

३६७. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, स्रोलह कषाय, भय, जुगुष्सा, मनुष्यगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचनुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चनुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचनुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, निर्माण, उद्यगोत्र श्रौर

अगु०४- पसत्थवि०--तस०४- सुभग-सुस्सर-त्रादे०--णिमि०उच्चा०-पंचंत० णि० बं० संखेज्जभागब्भहियं० । सादासाद०--हस्स-रदि--त्रारदि--सोग--तिषिणसंठा०--तिषणि-संघ०--थिराथिर--सुभासुभ--जस०--त्रजस० सिया० संखेज्जभा० । एवं णवुं स० । एवं णवुं स० । एवं पंचसंठा०-पंचसंघ० ।

३६८. तिरिक्खायु॰ ज०िट०वं॰ पंचणाणावरणादिधुविगाणं णि॰ वं० संखेज्जगु०। सेसास्रो परियत्तमाणियास्रो सब्वास्रो सिया० संखेज्जगु०। एवं मणु-सायु०। **ण**वरि णीचुच्चा० सिया० संखेज्जगु०।

३६६. तिरिक्खग० ज०िड वं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-णीचा०-पंचंत० णि० वं० संखेज्जभा० । सादासाद०-तिरिणवे०-हस्स-रिद-अरिद-सोग० सिया० संखेजजभाग० । णाम० सत्थाणभंगो । पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्राथ-दूभग-दुस्सर-अणादे० श्रोघं । सगपगदीश्रो संखेजजभाग० । णविर उच्चा० धुविगाणं काद्व्वं । णावस्स अप्राप्णो सत्थाणभंगो ।

पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातवां भाग श्रिधिक स्थितिका वन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रसाता वेदनीय, हास्य, रित, श्ररित, श्रोक, तीन संस्थान, तीन संहनन, स्थिर, अस्थिर, श्रुभ, श्रश्लभ, यशःकीर्ति श्रीर अयशः कीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् ग्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातवाँ भाग श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पाँच संस्थान श्रीर पाँच संहननका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है।

३६८. तिर्यञ्चायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण श्रादि ध्रुवबन्ध-वाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। शेष परावर्तमान सब प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यात-गुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि नीचगोत्र श्रौर उद्यगोत्रका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यात-गुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है।

३६९. तिर्यञ्चगितकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुष्सा, नीच गोत्र ग्रौर पाँच ग्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे ग्रजघन्य संख्यातवाँ भाग श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय, श्रसातावेदनीय, तीन वेद, हास्य, रित, ग्ररित ग्रौर शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् ग्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे ग्रजघन्य संख्यातवाँ भाग श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। नामकर्मका भङ्ग खस्थानके समान है। पाँच संस्थान, पाँच संहनन, श्रप्रशस्त विद्यायोगित, दुर्भग, दुखर ग्रौर ग्रनादेय इनकी मुख्यतासे सिन्नकर्प श्रोधके समान है। किन्तु श्रपनी प्रकृतियोंको स्थितिको संख्यातवां भाग श्रिषक करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उद्यगोत्रको भ्रवबन्धवाली प्रकृतियोंक साथ करना चाहिए। तथा नामकर्मकी श्रपनी श्रपनी प्रकृतियोंका भङ्ग सस्थानके समान है।

३७० तित्थय० ज०िंठवं० पंचणा०-छदंसणा०-सादावे०--बारसक०-पुरिस०-इस्स--रिद--भय-दुगुं०--उच्चागो०-पंचंत० णि० वं० संखेडजगु०। णाम सत्थाणभंगो। एवं पढमाए पुढवीए।

३७१. विदियाए पुढवीए आभिणिबो॰ ज०हि०बं॰ चदुणा०-छदंसणा०-सादावे॰-वारसक॰-पुरिस०-इस्स-रिद-भय-द्वु०-मणुसगिदयाओ णिरयोवं पढमदंडओ उच्चा॰-पंचंत० णि० बं० । तं तु० । तित्थय० सिया० । तं तु० । एवमदाओ एक-मेकस्स । तं तु० ।

३७२ णिहाणिहाए ज॰हि०वं॰ पंचणा०-पहमदंडस्रो णि॰ वं॰ संखेज्जगु० । पचलापचला--थीणगिद्धि--मिच्छत्त-स्रणंताणुवंधि०४ णि॰ वं॰ । तं तु० । एवं थीण-गिद्धितिय-मिच्छ०-स्रणंताणुवंधि०४ ।

३७०. तीर्थंकर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव, पाँच श्वानावरण, छह दर्शना-वरण, सातावेदनीय, बारह कपाय, पुरुष वेद, हास्य, रित, भय, जुगुष्सा, उच्चगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग खस्थानके समान है। इसी प्रकार पहिली पृथ्वीमें जानना चाहिए।

३७१. दुसरी पृथ्वीमें श्राभिनिबोधिक शानावरणको जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके चार ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, बारह कपाय, पुरुप वेद, हास्य, रित. भय. जुगुल्सा श्रौर मनुष्यगति श्रादि प्रकृतियाँ सामान्य नारिकयोंके समान प्रथम दराइकमें कही गई प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता हैं। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है ग्रौर ग्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है नो नियमसे जघन्यकी श्रवेत्ता श्रज्ञघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी ऋषेत्रा अजघन्य एक समय ऋधिकसे छेकर पत्यका ऋसंख्यातवाँ भाग ऋधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सिन्नकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर अज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेत्रा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग ग्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

३७२. निद्रानिद्राकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण श्रादि प्रथम द्राइकमें कही गई प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यात गुणी श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। प्रचला-प्रचला, स्त्यानगृद्धि, मिथ्यात्व श्रीर श्रनन्ता जुबन्धी चार इनका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेता श्रजघन्य एक समय श्रिधकसे लंकर प्रख्यका श्रसंख्यातवां

३७३ त्रसादा० ज०हि०वं० पंचणाणा० मणुसगदिसंजुत्तात्रो िणरयोघं। णवरि सम्मादिहिपगदीत्रो वंधदि। एवं त्ररदि-सो०-त्रथिर-त्रसुभ-त्रजस०।

३७४, इत्थिवे० ज॰ हि॰ बं॰ पंचणा॰--णवदंसणा०--मिच्छ०-सोलसक॰--भयदृ॰-णाम मणुसगिदसंजुत्तात्रो उच्चा०-पंचंत० णि० वं० संखेज्जगु० । सादासाद॰चदुणोक॰-समचदु॰-वज्जिरस०-थिरादितिणिणुयुगलं सिया॰ संखेजजगु॰ । दोसंठा०दोसंघ० सिया॰ संखेजजभा० । एवं णवुंस॰ । णविर चदुसंठा०-चदुसंघ० सिया०
संखेजजभा० । श्रायु० णिरयोघभंगो ।

३७५ तिरिक्खग॰ ज॰िंदि॰ हेट्टा उविर एावुंसगभंगो । सामसत्थाणभंगो । एवं पंचसंठा॰--पंचसंघ॰--अप्पसत्थवि॰--दूभग--दुस्सर--अस्पादे० हेट्टा उविर । सामं अप्पप्पणो सत्थासभंगो । एवं चदुसु पुढवीसु । सत्तमाए पुढवीए एसो चेव भंगो । स्विर सिद्धासिद्धाए ज॰िंदि॰वं॰ पचलापचला-थीसिगिद्धि-मिच्छ०-असंतासुवंधि०४-

भाग श्रधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व श्रौर श्रनन्तानुबन्धी चारकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३७३. ग्रसातावेदनीयकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके पाँच ज्ञानावरण श्रादि मनुष्यगति संयुक्त प्रकृतियोंका भक्न सामान्य नारिकयोंके समान है। इतनी विशेषता है कि यह सम्यग्दिए सम्बन्धी प्रकृतियोंको वाँधता है। इसी प्रकार ग्ररित, शोक, अस्थिर, ग्रग्रभ ग्रीर ग्रयशकीर्तिकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

३७४. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पाँच ज्ञानाचरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, नामकर्मकी मनुष्यगित संयुक्त प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र श्रीर पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय, श्रसातावेदनीय, चार नोकषाय, समचतुरस्रसंस्थान, वज्जर्षभनाराचसंहनन, स्थिर श्रादि तीन युगल इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका वन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका वन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवां भाग श्रिधक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि चार संस्थान श्रीर चार संहननका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवां भाग श्रिधक स्थितिका वन्धक होता है। श्री श्रवमक्र होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवां भाग श्रिधक स्थितिका वन्धक होता है। श्रायुकर्मकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य नारिकयोंके समान है।

३७४. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवके नीचे ऊपरकी प्रकृतियोंका भक्त नपुंसकवेदके समान है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भक्त स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार पाँच संस्थान, पाँच संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुस्वर श्रौर श्रनादेयकी मुख्यतासे नीचे ऊपरकी श्रपनी-श्रपनी प्रकृतियोंका सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा नामकर्मकी श्रपनी श्रपनी प्रकृतियोंका मंग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार तीसरी आदि चार पृथिवियोंमें जानना चाहिए। सातवीं पृथ्वीमें यही मंग है। इतनी विशोषता है कि निद्रानिद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव प्रचला-प्रचला, स्त्यानगृद्धि, मिथ्यात्व,

तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-णीचा० णि० बं० | तं तु० | उज्जो० सिया० | तं तु० | एवमेदाञ्रो एकमेकस्स | तं तु० | पंचसंठा०-पंचसंघ०-ग्रप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-त्रणादे० तिरिक्खगदिसंजुत्ताञ्रो कादव्वाञ्रो |

३७६. तिरिक्खेसु मूलोघं। एवरि खवगपगदीएां शिहाणिहाए भंगो। पंचिदियतिरिक्ख०३ त्राभिणिबो॰ ज॰िड०वं० चहुणा॰--एवदंसणा॰-सादा०-भिच्छ०-सोलसक०-पुरिस०-हस्स-रिह-भय-दु०-देवगिद-पंचिदि०--वेडिव०-तेजा०-क०-समचदु०वेउिव० त्रांगो॰--वएण०४--देवाण०--त्रा०४--पसत्थ०-तस०४-थिरादिञ्च०-िएभि०उच्चागो०--पंचेत० णि० वं०। तं तु०। एवभेदात्रो एक्कमेक्स्स। तं तु०।
त्रसादा० ज०िड०वं० शिरयोघं। एवरि देवगिदसंजुत्तं।

श्रनन्तानुबन्धी चार, तिर्यञ्चगित, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रौर नीचगोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय श्रिष्ठकसे छेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रिष्ठक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यका श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय श्रिष्ठकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिष्ठकतक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इह प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्प होता है। किन्तु ऐसी श्रवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय श्रिष्ठकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिष्ठक तक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच संस्थान, पाँच संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगिति, दुर्भग, दुस्वर श्रौर श्रनादेय इनको तिर्यञ्चगित सिहत करना चाहिए।

३७६. तिर्यञ्जोंमें मुलोघके समान भङ्ग जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि चपक प्रकृतियोंका भङ्ग निद्रानिद्राके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्जिकमें ग्राभिनियोधिक क्षानावरणकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव चार क्षानावरण, नौ दर्शनावरण, साता**-**वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुपवेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, दंबगति, पञ्चेन्द्रिय जाति. वैकियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैकियिक श्राङ्गोपांग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वा, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर श्रादि छह, निर्माण, उच्चगोत्र श्रीर पांच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्प जानना चाहिए । किन्तु ऐसी त्रवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेना अजघन्य एक समय ग्रधिकसे लेकर पल्यका ग्रसंख्यातयां भाग ग्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता हैं । श्रसाता वेदनीयकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवका भङ्ग सामान्य नारिकर्योके समान है । इतनी विशेषता है कि देवगति संयुक्त करना चाहिए ।

३७७, मणुसगदि० ज०ि वं॰ श्रोरालि॰-श्रोरालि॰ श्रंगो०-वज्ञ॰-मणुसाणु० णि० वं॰ । तं तु० । पुरिस० उच्चा॰ णि॰ वं० संखेज्जभा० । एवं सन्वाणं धुवि-गाणं । सादासाद० चदुणांक० थिरादितिणिणुगुगलं सिया० संखेजभाग॰ । एवं तं तु पिद्दाणं । इत्थिवे०--णवुंस॰--तिरिक्खग॰--पंचसंठा०--पंचसंघ॰-श्रप्पसत्थ॰-दूभग-दुस्सर-श्रणादे० हेद्दा उविरं भणुसगदिभंगो । णविर वेद्विसेसा जाणिद्वा । णाम० सत्थाणभंगो । णविर इत्थिवे॰ मणुसगदि--देवगदिसंजुत्तं काद्वां । चदुश्रायु० श्रोघं । णविर धुवियाश्रो ताश्रो णि० वं॰ वेद्दाणपदिदं वंधिद संखेज्जभा॰ संखेज्ञगु० । पिरयत्तमाणियाश्रो सिया॰ विद्वाणपदिदं वंधिद संखेज्जभा॰ संखेज्जगु० । णिरयत्तमाणियाश्रो सिया॰ विद्वाणपदिदं वंधिद संखेज्जभा॰ संखेजगु० । णिरयत्ति-चित्रवाणु॰-श्रादाव-थावरादि०४ तिरिक्खोघं । णविर संखेज्जभा० । पंचिदियतिरिक्खश्रपज्जता० णिरयोघं । णविर दोश्रायु॰ जोणिणिभंगो ।

३७७. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव श्रौदारिक शरीर, श्रौदारिक श्रांगोपांग, वज्रर्पभनाराचसंहनन श्रौर मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका नियमसं वन्यक होता है जो जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है यदि श्रज्ञघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपंचा श्रजघन्य एक समय श्रिधिकसे लेकर परुपका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेद ग्रौर उद्यगोत्रका नियमसं वन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य संख्यातवां भाग अधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार सब धवबन्धवाली प्रकृतियोंका जानना चाहिए। सातावेदनीय, ग्रसातावेदनीय, चार नोक्षाय और स्थिर ग्रादि तीन युगल इनका कदाचित बन्धक होता है ग्रीर कदाचित ग्रबन्धक यदि वन्धक होता है तो नियमसे अज्ञघन्य संख्यातवां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार "तं तु" रूपसे पठित प्रकृतियोंको मुख्यतासे सन्नि-कर्ष जानना चाहिए। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, श्रप्रशस्तविहायोगति, दुर्भग, दुस्वर श्रौर श्रनादेय इनका नीचे ऊपर मनुष्यगतिके समान भक्त है। इतनी विशेषता है कि वेद विशेष जानना चाहिए। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भक्त खस्थानके समान है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेदको मनुष्यगति और देवगति सहित करना चाहिए। चार श्रायुक्षींका भङ्ग श्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि जो ध्रवबन्ध-वाली प्रकृतियाँ हैं उनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य दो स्थान पतित स्थितिका बन्धक होता है या तो संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है या संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। परावर्तमान प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य दो स्थान पतित स्थितिका बन्धक होता है। या तो संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है या संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगति, चार जाति, नरक-गत्यानुपूर्वी, त्रातप त्रीर स्थावर त्रादि चार इनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य तिर्यञ्जीके समान जानना चाहिए। इतनो विशेषता है कि संख्यातवां भाग श्रधिक करना चाहिए। पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च त्रपर्याप्तकोंका भङ्ग सामान्य नारिकयोंके समान है। इतनी विशेषता है कि दो त्रायुक्षांका भङ्ग योनिमती तिर्यञ्जोंके समान है।

- ३७८. मणुस०३ खवगपगदी० श्रोघं । देवगदि०४ श्राहार०भंगो० । णिरय-गदि-िणरयाणु० श्रोघं । सेसं पढमपुढविभंगो । मणुसत्रपज्जत्तेसु पंचिदियतिरिक्ख-त्रपञ्जत्तभंगो ।
- ३७६. देवेसु णिरयोघं । एवरि एइंदिय-आदाव-थावरं णादव्वं । एवं भवण०-वाणवेंत० । जोदिसि०-सोधम्मीसा० विदियपुढविभंगो । एवरि एइंदिय-आदाव-थावर० भाणिदव्वा । सणकुमार याव सहस्सार त्ति विढियपुढविभंगो । एवं चेव आणद याव एवगेवज्जा त्ति । एवरि तिरिक्खगदिचदुकं वज्ज । अणुदिस याव सव्वद्टा त्ति पढम-दंडओ विदियपुढविभंगो । एवं विदियदंडओ वि । असादा०-मणुसायु० णि० ।
- ३८०. सन्त्रएइंदिएसु तिरिक्खोघं । विगलिदियपज्जत्तापज्जत्त-पंचिदिय-तस-त्रपञ्जत्त० पंचिदियतिरिक्खत्रपञ्जतभंगो । पंचिदिय-पंचिदियपज्जत्त० खवगपगदीएां श्रोघं । सेसाएं पंचिदियतिरिक्खभंगो ।
- ३८१. पंचकायाणं तिरिक्खोघं । एविर तेउ०-वाउ० तिरिक्खगिद्०--तिरि-क्खाणु०--णीचा० पुव्वं काद्व्यं । तस-तसपज्जत्ता खवगपगदीणं मूलोघं । सेसाणं मणुसोघं । एविर वेउव्वियञ्जकं स्रोघं ।
- ३७८. मनुष्यत्रिकमें चपक प्रकृतियोंका भङ्ग ग्रोघके समान है। देवगतिचतुष्कका भङ्ग ग्राहारक शरीरके समान है। नरकगति ग्रोर नरकगत्यानुपूर्वाका भङ्ग ग्राघके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पहली पृथिवीके समान है। मनुष्य ग्रपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च ग्रपर्याप्तकोंके समान है।
- ३७९. देवों में सामान्य नारिकयों के समान भक्त है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति, श्रातप और स्थावर प्रकृतियाँ जाननी चाहिए। इसी प्रकार भवनवासी और व्यन्तर देवों के जानना चाहिए। ज्योतिष्क, सौधर्म और ऐशान कल्पके देवों में दृसरी पृथिवीं के समान भक्त है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति, आतण और स्थावर प्रकृतियाँ कहनी चाहिए। सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवों में दृसरी पृथ्वीं के समान भक्त है। तथा इसी प्रकार श्रानत कल्पसे लेकर नौ ग्रेवेयक तकके देवों के जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगति चतुष्कको छोड़कर सिन्नकर्प जानना चाहिए। श्रनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवों में प्रथम दगडकका भक्त दुसरी पृथिवीं के समान है। इसी प्रकार दृसरा दगडक भी जानना चाहिए। तथा श्रसाता वेदनीय और मनुष्यायुका नियमसे वन्धक होता है।
- २८०. सब एकेन्द्रियोंमें सामान्य तिर्यञ्जोंके समान मंग है। विकलेन्द्रिय पर्याप्त, विकलेन्द्रिय त्रपर्याप्त, पञ्जेन्द्रिय त्रपर्याप्त त्रोर त्रस त्रपर्याप्त जीवोंका भङ्ग पञ्जेन्द्रिय तिर्यञ्ज त्रपर्याप्तकोंके समान है। पञ्जेन्द्रिय त्रौर पञ्जेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंमें चपक प्रकृतियोंका भङ्ग त्रोधके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्जेन्द्रिय तिर्यञ्जोंके समान है।
- ३८१. पांच स्थावर कायिक जीवोंका भक्त सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि अग्निकायिक और वायुकायिक जीवोंमें तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्र इनको पहिले कहना चाहिए। त्रस और त्रस पर्यात जीवोंमें चपक प्रकृतियोंका भक्त मूलोधके समान है। शेष प्रकृतियोंका भक्त सामान्य मनुष्योंके समान है। इतनी विशेषता है कि वैक्षियक छः ओधके समान है।

३८२, पंचमण् - तिरिण्वचि० श्राभिशिवोधि०श्रादि श्रोघं । शिहाण्हिए ज०िह वं० पंचणा॰ --चदुदंस॰ --सादाव० --चदुसंज०-पुरिस० -जस॰ --उच्चा॰ --पंचंत० शि० वं० श्रसंखेज्जगु॰ । पचलापचला -थीणगिद्धि-मिच्छत्त-श्रणंताणुवंधि० -४ णिय० वं० । तं० तु० । शिहा-पचला -श्रहकसा० - हस्स-रिह --भय-दुगुं० -देवगिद-वेडिवय० - तेजा० -क० -समचदु० -वेउिव० श्रंगो० -वरण० ४ --देवाणु० -श्रगु०४ --पसत्थिव० -तस०४ - थिरादिपंच -शिमि० शि० वं० संखेजजगु० । एवं थीणगिद्धि०३ - मिच्छ० -श्रणंताणु-वंधि०४ ।

३८३. शिहाए ज०िंद्वं० खवगपगदीशं शिहाशिहाए भंगो । पचला शि० बं० । तं तु॰ । इस्स-रिद-भय-दु॰--देवगिद--पसत्थसत्तावीसं शि॰ वं॰ संखेज्जगु० । श्राहारदुगं तित्थयरं सिया॰ संखेजगु॰ । एवं पचला० ।

३८४. ऋसादा॰ ज॰िंड॰वं॰ खवगपगदीर्एा खिद्दाए भंगो । खिद्दा-पचला-भय

३८२. पांच मनोयोगी और तीन वचनयोगी जीवोंमें श्राभिनिवोधिक श्वानावरण् श्रादिका भङ्ग श्रोधके समान है। निद्रानिद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक पाँच श्वानावरण्, चार दर्शनावरण्, सातावेदनीय, चार सञ्ज्वलन, पुरुपवेद, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रिष्ठक स्थितिका बन्धक होता है। प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि, मिथ्यात्व श्रौर श्रनन्तानुवन्धी चार इनका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रज्जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रज्जघन्य एक समय श्रिष्ठकसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग श्रिष्ठक तक स्थितिका बन्धक होता है। निद्रा, प्रचला, श्राट कपाय, हास्य, रित, भय, जुगुप्सा, देवगित, वैकियिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मण्शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैकियिक श्रागोपांग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, श्रसचतुष्क, स्थिर श्रादि पांच श्रौर निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रिष्ठक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व श्रौर श्रनन्तानुबन्धी चारको मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

३८३. निद्राकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके सब प्रकृतियोंका भङ्ग निद्रानिद्राके समान है। प्रचलाका नियमसे बन्धक होता है। जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि ग्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि ग्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है । यदि ग्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है । यदि ग्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, भय, जुगुष्सा, देवगित ग्रादि प्रशस्त सत्ताईस प्रकृतियाँ इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे ग्रजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। ग्राहारक द्विक ग्रीर तीर्थंकर इनका कदाचित् बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे ग्रजघन्य संख्यातगुणी ग्रिधक स्थातगुणी ग्रिधक स्थितिका वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे ग्रजघन्य संख्यातगुणी ग्रिधक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार प्रचला प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३८४. श्रसाता वेदनीयकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवके चपक प्रकृतियोंका भङ्ग निद्राके समान है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुण्सा, देवगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक दुगुं ०--देवगदि--पंचिदि०--वेउव्वि०--तेजा०--क०-समचदु०--वेउव्वि० त्रंगो०-वएए०४-देवाणु०-त्रगु०४--पसत्थ०--तस०४--सुभग--सुस्सर--त्रादे०--िएमि० एि० बं० संखे-जगु० । हस्स-रदि-थिर-सुभ० सिया० संखेज्जगु० । जस० सिया० त्रसंखेज्जगु० । त्ररिया० त्रसंखेज्जगु० । त्रसंखेज्जगु० । त्ररिया० त्रसंखेज्जगु० । त्रसंखेजन्यसंखेषर--त्रसंखेण-त

३८५. ऋष्पच्चक्खाणकोध॰ ज॰िंडि॰वं॰ खवगपगदीणं िणहाए भंगो। तिषिणक॰ णि॰वं॰। तं तु॰। सेसाणं िणहाए भंगो। एवं तिषिणकसा०।

३८६. पच्चक्लाणकोध० ज०िह०वं० खवगपगदीणं णिदाए भंगो। सेसाओ हेटा उवरिं संखेजनगु॰। तिणिणक० णि० वं०। तं० तु०। एवं तिणिणक०।

शरीर, तेजश शरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैकियिक आक्नोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वा, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तिविहायोगित, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, स्थिर और शुभ इनका कदावित् बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। यशक्कीतिंका कदाचित् बन्धक होता है। अरि कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यथा अर्थाक्कितिं इनका कदाचित् वन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अरित, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशकोरिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३८४. श्रप्रत्याख्यानावरण कोधकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके चपक प्रकृतियोंका भक्त निद्राके समान है। तीन कषायोंका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थिति का भी बन्धक होता है शौर श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थिति का बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रिधकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवाँ भाग श्रिधक तक स्थितिका बन्धक होता है। शेप प्रकृतियोंका भक्त निद्राके समान है। इसी प्रकार तीन कषायोंकी मुख्यतासे सिश्वकर्ष जानना चाहिए।

३८६. प्रत्याख्यानावरण क्रोधकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके चएक प्रकृतियोंका भक्त निद्राके समान है। शेष प्रकृतियोंका नीचे ऊपर नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तीन कपायोंका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेद्धा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातयाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तीन कपायोंकी मुख्यतासे सिक्षकर्ष जानना चाहिए।

३८७. इत्थिवे० ज०द्वि०वं० पंचणा०--चदुदंस०--चदुसंज०--पंचंत० णि० वं० असंखेजजगु० । पंचदंस०--मिच्छ०--वारसक०--भय--दुगुं०--पंचिदि०--तेजा०--क०--वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर--आदे०--णिमि० णि० वं० संखेज्जगु० । सादा०-जस०-उचा० सिया० संखेजजगु० । असादा०--चदुणोक०--तिण्णि-गदि-दोसरीर--समचदु०-दोअंगो०-वज्जरि०-तिण्णिआणु०--उज्जो०--थिराथिर--सुमा-सुभ-अजस०-णीचा० सिया० संखेजजगु० । णग्गोद०-सादि०-वज्जणारा०-णाराय सिया० संखेजजगु० । ण्गोद०-सादि०-वज्जणारा०-णाराय सिया० संखेजजभा । एवं णवुंस० । णवरि दोगदि-समचदु०-वज्जरिस०-दोआणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-अज०-णीचा० सिया० संखेजजगु० । चदुसंठा०-चदुसंघ० सिया० संखेजजभा०।

३८८. त्रायुगाणं चदुग्णं पि खवगपगदीणं त्रसंखेजनगुरु । सेसाणं मणुसभंगो । ३८६. णिरयगदिरु जरुद्धिरुवंरु खवगपगदीणं त्रोघं । पंचदंरु--त्रसादारु-

३८७. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार सञ्ज्वलन श्रौर पांच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्जधन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। पांच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, वारह कपाय, भय, जुगुप्सा, पञ्जेद्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, श्रगुरु-लघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुखर, ग्रादेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। साता वेदनीय, यशकार्ति श्रोर उच्चगोत्रका कदाचित बन्धक होता है श्रीर कदाचित अवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसं अजधन्य संख्यातगृणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रसाता चेदनीय, चार नोकषाय, तीन गति, दो शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, दो श्राङ्गोपाङ्ग, वज्जर्षभनाराचसंहनन, तीन श्रातुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, श्रस्थिर, शुभ, श्रशुभ, श्रयशःकीर्ति श्रीर नीचगीत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है ग्रोर कदाचित श्रवस्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणा त्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। न्यत्रोधसंस्थान, खातिसंस्थान, वज्रनाराच संहतन और नाराच संहतन इनका कदाचित बन्धक होता है और कदाचित श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि दोगति, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रपंभनाराचसंहनन, दो श्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, श्रस्थिर, ग्रुभ, श्रग्रुभ, अयशःकीर्ति श्रीर नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुर्गा त्र्रधिक स्थितिका बन्धक होता है । चार संस्थान त्र्रौर चार संहनन इनका कदाचित वन्धक होता है श्रौर कदाचित श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवां भाग अधिक स्थितिका वन्धक होता है।

३८८. चार श्रायुश्रोंकी भी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चपक प्रकृतियोंका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्योंके समान है।

३८९. नरकगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके चपक प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधके

भिच्छ०--वारसक०--अरदि-सोग--भय-दृ०--पंचिदि०-वेउव्व०--तेजा०-क०-वेर्जव्व०-श्रंगो०--वएण०४-अगु०-तस०४-अथिर-असुभ-अजस०--िएभि०-एीचा० एि० वं० संखेजजाु०। एवं स०--हुं इसं०--अप्पसत्थ०--दृभग--दुस्सर--अणादे० ए वं० संखे-जजभा०। एिरयाणु० एि० वं०। तं तु०। एवं एिरयाणु०।

३६०. तिरिक्खगदि० ज०िड०वं० खवगाणं णिरयगिदभंगो । पंचदंस०-मिच्छ०--बारसक०--हस्स--रिद-भय-दु०-पंचिदि०-त्रोरात्ति०--तेजा०--क०-समचदु०-स्रोरात्ति०त्र्यंगो०--वज्जरि०--वरण्०४-त्रगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिपंच णि० वं० संखेज्जगु० । तिरिक्खाणु०--णीचा० णि० वं० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवं तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचागो० ।

३६१. मणुसग० ज०ड्ठि०वं० त्रोरालि०--त्रोरालि०त्रंगो०--वज्जरि०--मणुसमान है। पांच दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, बारहकपाय, अरित, शोक, भय,
जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैकियिक आङ्गोणङ्ग.
वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, त्रसचतुष्क, अस्थिर, अशुभ, अयशःकीर्ति, निर्माण और नीचगोत्र
इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अज्ञचन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका
बन्धक होता है। नपुंसकवेद, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुस्वर और
अनादेय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अज्ञचन्य संख्यातवांभाग अधिक
स्थितिका बन्धक होता है। नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जचन्य
स्थितिका भी बन्धक होता है। शौर अज्ञचन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि
अज्ञचन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको अपेता अज्ञचन्य एक समय
अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवांभाग अधिकतक स्थितिका वन्धक होता है। इसी
प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३९०. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके चपक प्रकृतियोंका भक्ष तरकगतिके समान है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, वारहकपाय, हास्य, रित, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, श्रोदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचनुरम्भसंस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ज्ञपेभनाराच संहनन, वर्णचनुष्क, श्रगुरुलघुचनुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचनुष्क श्रोर स्थिर आदि पाँच इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रिधिक स्थितिका वन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रोर नीचगोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपंचा श्रजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातचां भाग श्रिधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपंचा श्रजघन्य एक समय श्रिषको स्थितका वन्धक होता है। दि श्रजघन्य स्थितिका स्थितका श्रसंख्यातचां भाग श्रधिकतक स्थितिका वन्धक होता है। इसीप्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत श्रोर नीचगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३९१. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव औदारिक शरीर, श्रीदारिक श्रांगोपांग, वज्रर्थमनाराच संहनन श्रीर मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे वन्धक होता साणु० णि॰ वं॰ । तं तु॰ । सेसाणं तिरिक्खगदिभंगो । णवरि तित्थय०सिया० संखेजजगु॰ । एवं मणुसगदिपंचगस्स ।

३६२. देवगदि० ज०हि०वं० पंचणा०--चदुदंस०--सादा०--चदुसंज०--पुरिस०-जस०--उच्चा०--पंचंत० णि० वं० असंखेज्जगु० | इस्स--रदि-भय--दु० णि० वं० संखेज्जगु० । पंचिदियादिपसत्थसत्तावीसं णि० वं० | तं तु० | तित्थय० सिया० | तं तु० | एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स | तं तु० |

३६३. एइंदि० ज०ड्ठि०वं खिवगाणं त्रोघं । पंचदं०-मिच्छ०--बारसकसा०-भय--दु०--णाम सत्थाणभंगो णीचा० णि० वं० संखेजागु०। सादा०--जस० सिया०

है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। श्रेप प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है। इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुर्णो श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसोप्रकार मनुष्यगतिपञ्चककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३९२. देवगतिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार सञ्ज्वलन, पुरुषवेद, यशकीर्ति, उच्चगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति श्रादि प्रशस्त सत्ताईस प्रकृतियोका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और ब्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि ब्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका त्रसंख्यातवां भाग त्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेत्वा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सिक्नकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है और अजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा श्रजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिकतक स्थितिका वन्धक होता है।

३९३. एकेन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिके वन्धक जोवके खपक प्रकृतियोंका भक्त श्रोधके समान है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, वारह कपाय, भय, जुगुप्सा, नाम कर्मकी स्वस्थान भक्तवाली प्रकृतियाँ श्रीर नीचगोत्रका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय श्रीर यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है।

त्रसंखेज्जगु० । त्रसादा०--चदुणोक०-थिराथिर-सुभासुभ--त्रज०-उज्जो० सिया० संखेज्जगु० । णवुंस०-हुंड०--दूभग-त्रणादे० णि० वं० संखेज्जभा० । एवं त्रीइं०-तीइं०-चदुरिं० हेटा उवरिं एइंदियभंगो । णाम० सत्थाणभंगो ।

३६४. एग्गोद० ज०िंठवं० खिवगाणं ऋषिं। सेसाणं इत्थिवेदभंगो । एपाम० सत्थाणभंगो । सन्वाणं संघड०--ऋप्पसत्थ०--दूभग--दुस्सर-ऋणादेजाणं हेट्टा उविरं इत्थिवेदभंगो । एविर किं चि विसेसो जािणदिन्वो । वेदेसु एपाम ऋपुपुणो सत्थाणभंगो ।

३६५. विचिजोगि--श्रसचमोसविचिजोगि॰ तसपज्जत्तभंगो । कायजोगि-श्रोरा-लियकायजोगि० श्रोघं । श्रोरालियमिस्से तिरिक्खोघं । एविर देवगदि॰ ज०द्वि॰वं॰ पंचणा॰--झदंसणा॰--सादावे॰-बारसक॰-पंचणोक॰--पंचिदि॰-तेजा॰-क॰-समचदु०-वएण०४--श्रगु०४-पसत्थ०--तस०४-थिरादिछ०--णिमि०--उचा०-पंचंत० णि० वं॰ संखेज्जगु० । वेउव्वि॰-वेउव्वि०श्रंगो०--देवाणु० णि० वं० । तं तु० । तित्थय०

यदि बन्धंक होता है तो नियमसे अज्ञघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। असाता वेदनीय, चार नोकषाय, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, अयशक्तितिं और उद्योत इनका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अज्ञघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। नपुंसकवेद, हुण्डसंस्थान, दुर्भग और अनादेय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अज्ञघन्य संख्यातवांभाग अधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसीप्रकार द्वीन्द्रिय जाति, त्रीन्द्रियजाति और चतुरिन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवकें नीचे ऊपरकी प्रकृतियोंका भक्न एकेन्द्रिय जातिके समान है। तथा नामकर्मकी प्रकृतियोंका भक्न स्वस्थानके समान है।

३९४. न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके स्नपक प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोघके समान है। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। सब संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुस्वर श्रीर श्रनादेय इनकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवके नीचे ऊपरकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। इतनी विशेषता है कि कुछ विशेष जानना चाहिए। तीन वेदोंमें नामकर्मकी श्रपनी श्रपनी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है।

३९४. वचनयोगी श्रीर श्रसत्यमृपावचनयोगी जीवोंमें सब प्रकृतियोंका भङ्ग त्रस पर्याप्तकोंके समान है। काययोगी श्रीर औदारिक काययोगी जीवोंमें श्रीघके समान है। श्रीदारिक मिश्र काययोगमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि देवगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, बारह कपाय, पांच नोकषाय, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरम्य संस्थान, वर्णचतुरक, श्रगुरुलघुचतुरक, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुरक, स्थिर श्रादि छह, निर्माण, उच्चगोत्र श्रीर पांच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। वैकियिक शरीर, वैकियिक श्राङ्गेपाङ्ग श्रीर देवगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे अघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रिष्ठकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातयाँ तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रिष्ठकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातयाँ

सिया । तं तु ० । एवमेदात्रो एकमेकस्स । तं तु ० ।

३६६. वेउव्वियका॰ आभिणिदंडओ जोदिसियपहमदंडओ व्व असाद॰ विदिय-दंडय० । णिदाणिदाए ज॰ टि॰ बं॰ पचलापचलादीणं भिच्छ०--अर्णताणुवंधि०४ णियमा वं॰ । तं तु० । तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-उज्जो० सिया० । तं तु॰ । मणु-सग०--मणुसाणु०--उच्चा० सिया॰ संखेजजगु॰ । धुविगाणं णि० वं० संखेजगु० । एवं थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अर्णताणुवधि०४ ।

३६७. इत्थिवे॰ ज॰िंडि॰वं॰ पंचणा०--एवदंसणा०--मिच्छ॰--सोलसक०-भय-दु०-पंचिदि॰--स्रोरालि०--तेजा०--क॰--स्रोरालि०स्रंगो॰--वएण०४--स्रगु०४-पसत्थ०-

भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् ग्रबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। वियमसे जघन्यकी श्रपं श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे छेकर प्रत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिकतक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका सिन्नकर्प जानना चाहिए। किन्तु ऐसी श्रवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपं श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर प्रव्यका श्रसंख्यातवां भाग अधिकतक स्थितिका वन्धक होता है।

३९६. वैक्रियिक काययोगमें श्राभिनिवोधिक प्रथमदराडक ज्योतिपी देवोंके प्रथम दराडकके समान है। तथा श्रसाता वेदनीय दूसरा दराडक भी इसीप्रकार है। निद्रानिद्राकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव प्रचलाप्रचला ग्रादि, मिथ्यात्व ग्रौर ग्रनन्तानुबन्धी चारका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है और श्रजधन्य स्थितिका भी चन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी ऋषेता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्जगित, तिर्यञ्जगत्यातुपूर्वी ग्रीर उद्योत इनका कदाचित बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेद्या श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लंकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिकतक स्थितिका वन्धक होता है। मनुष्य गति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी ग्रौर उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है ग्रौर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य संख्यातगृशी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। ध्रुवबन्धवाली प्रशृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे ग्रजघन्य संख्यातगुणी ग्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व श्रोर श्रनन्तानुबन्धी चारकी मुख्यतासे जानना चाहिए।

३६७. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनोवरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति,

तस०४-सुभग-सुस्सर--त्रादे०-णिमि०--पंचंत० णि० वं० संखेज्जगु०। सादासाद०-चढुणोक०--दोगदि--समचढु०--वज्जिर०--दोत्राणु०-उज्जो०-थिराथिर--सुभासुभ-जस०-त्रजस०--दोगोदं सिया० संखेज्ज०। दोसंठा०--दोसंघ० सिया० संखेज्जभा०। एवं णवुंस०। णवरि पंचसंठा०-पंचसंघ०-दोत्रायु० देवोघं।

३६८. णगोद० ज॰द्दि०वं० पंचणा॰--एवदंसणा०--मिच्छ०--सोलसक०पुरिस०--भय--दु०--पंचिदि॰---श्रोरालि०--तेजा॰--क०--श्रोरालि०श्रंगो०--वएण०४-श्रगु०४--पसत्थ०--तस०४--सुभग--सुस्सर--श्रादे०--णिमि०--पंचंत० णि० वं० संखेजगु०। सादासाद०-चदुणोक०-दोगदि-वज्जरि०-दोश्राणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-श्रजस०-णीचुचा० सिया० संखेज्जगु०। वज्जणारा० [सिया०]। तंतु०।
एवं वज्जणारा०। चदुसंठा०-चदुसंघ०--श्रप्यसत्थ०-दूभग-दुस्सर-श्रणादे० णगोद-

त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, निर्माण श्रौर पाँच अन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका वन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रसाता वेदनीय, चार नोकपाय, दोगित, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रपंभनाराच-संहनन, दो श्रानुपूर्वो, उद्योत, स्थिर, श्रस्थर, श्रुभ, श्रशुभ, यशःकीर्ति, श्रयशःकीर्ति श्रौर दो गोत्र इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे संख्यातयां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। दो संस्थान श्रीर दो संहनन इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष ज्ञानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पाँच संस्थान, पाँच संहनन श्रीर दो श्रायुका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है।

३९८. न्यग्रोधपरिमण्डलसंस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुपवेद, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, त्रादेय, निर्माण श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रसाता वेदनीय, चार नोकपाय, दो गति, वजूर्षभनाराच संहनन, दो त्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, त्रस्थिर, शुभ, त्रशुभ, यशःकीर्ति, श्रयशःकीर्ति, नीचगोत्र श्रौर उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् त्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे त्रज्ञघन्य संख्यातगु**णी** त्रधिक स्थितिका बन्धक होता है । वजुनाराचसंहननका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको त्रपेत्ना त्रजघन्य एक समय त्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रिधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वजूनाराचसंहननकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। चार संस्थान, चार संहनन, अप्रशस्तविहायोगति, दुर्भग्, दुस्वर श्रीर श्रनादेय इनकी मुख्यतासे सन्निकर्प न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थानके समान है। इतनी विशेषता है कि कुब्जक संस्थान, वामन संस्थान, अर्द्धनाराच संहनन और कीलक

भंगो। एवरि खुड्नसंठा०-वामणसंठा०-श्रद्धणारा०-त्वीत्तिय० इत्थि० सिया० संखेज्ज-भाग०। पुरिस० सिया० संखेड्नगु०। हुंड०-श्रसंपत्त०-श्रप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-श्रणादे० पुरिस० सिया० संखेडनगु०। इत्थिव०-एावुंस० सिया० संखेडनभा०।

३६६. एइंदि० ज॰ द्वि० वं पंचणा॰-णवदंसणा०--भिच्छ०--सोलसक०--भय-दु०--तिरिक्खग०--स्रोरालि॰--तेजा॰--क०-वएण०४-तिरिक्खाणु०--स्रगु॰ ४--वादर--पज्जत्त-पत्ते०--िएमि॰--णीचा०--पंचंत० णि० वं० संखेज्जगु॰ । सादासादा०-चदु-णोक०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-स्रजस० सिया॰ संखेज्जगु॰ । णवुंस०-हुंडसं०-दुभग--स्रणादे० णि० वं० संखेजजभाग० । स्रादाव० सिया० । तं तु० । थावरं णि॰ वं० । तं तु० । एवं स्रादाव-थावर० । एवं वेउव्वियमिस्स० । णवरि मिच्छत्त-

संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव स्त्रींचंदका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषचेदका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हुएडसंस्थान, असम्प्राप्तास्प्राटिका संहनन, अप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुस्वर और अनादेय इनकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पुरुषचेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। स्रीचेद और नपुंसकचंदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगं भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

३९९. एकेन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पाँच क्वानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलहकषाय, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रमु रुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण, नीच गोत्र ग्रौर पाँच ग्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। साता वेदनीय, श्रसाता वेदनीय, चार नोकपाय, उद्योत, स्थिर, श्रस्थिर, शुभ, श्रशुभ श्रौर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्थक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका चन्धक होता है। नपुंसकवेद, हुएडसंस्थान, दुर्भग श्रौर श्रनादेय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। ग्रातपका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेत्ता अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। स्थावरका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी न्त्रपेत्ता श्चज्ञघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार त्रातप त्रीर स्थावरकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

पगदी यम्हि संखेज्जगुणब्भिहयं तम्हि संखेजजभागब्भिहयं काद्व्वं । सम्मत्तपगदीत्रो संखेजजगुणब्भिहयात्रो ।

४००. त्राहार०--त्राहारिमस्स० त्राभिणिवोधि० ज०िट०वं० चदुणा०-ब्रदं--सणा०-सादा०-चदुसंज०-पंचणोक०-देवगिद-पसत्थटावीस-उचा०-पंचंत० णि० वं० । तं तु० । तित्थय० सिया० । तं तु० । एवमेदात्रो एक्कमेक्कस्स । [तं तु० ] ।

४०१. असादा० ज०िड०वं० पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-पुरिसं०-भय-दु० देवगिद-पसत्थपणुवीस-उच्चा०-पंचंत० णि० संखेज्जभाग० । इस्स-रिद-थिर-सुभ-जस०-तित्थय० सिया० संखेजजभाग० । अरिद-सोग--अथिर--असुभ-अजस० सिया० । तं तु० । एवं अरिद-सोग-अथिर-असुभ-अजस० ।

इसी प्रकार वैकियिक मिश्रकाययोगमें अपनी प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व सम्बन्धी प्रकृतियाँ जहाँपर संख्यातगुणी श्रधिक कही हैं वहाँ पर संख्यातवां भाग अधिक करनी चाहिए और सम्यक्त्व सम्बन्धी प्रकृतियाँ संख्यातगुणी अधिक करनी चाहिए।

४००. श्राहारककाययोग श्रोर श्राहारक मिश्रकाययोगमें श्राभिनिवोधिक श्वानावरण की जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार श्वानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनीय, चार सञ्ज्वलन, पांच नोकपाय, देवगित श्रादि प्रशस्त श्रद्धाईस प्रकृतियाँ, उद्यगित्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी यन्धक होता है और श्रज्जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रज्जघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रज्जघन्य एक समय श्रधिकते लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सिन्तकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी श्रवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है स्थितिका सिचन्धक होता है। यदि श्रज्जघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको श्रपेत्ता श्रज्जघन्य एक समय श्रधिकते लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां है तो नियमसे जघन्यको श्रपेत्ता श्रज्जघन्य एक समय श्रधिकते लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

४०१. श्रसातावेदनीयकी जयन्य स्थितिका यन्धक जीव पाँच झानावरण, छह दर्शनावरण, चार सक्कवलन, पुरुपवेद, भय, जुगुप्सा, देवगित श्रादि पचीस प्रशस्त प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ज्ञ्ञ्चन्य संख्यातवां भाग श्रिधक स्थितिका वन्धक होता है। हास्य, रित, स्थिर, श्रुभ, यशःकीर्ति और तीर्थंकर इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ज्ञ्चन्य संख्यातवां भाग श्रिष्ठक स्थितिका बन्धक होता है। श्रर्रात, शोक, श्रस्थिर, श्रश्रभ श्रीर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो ज्ञचन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रज्ज्ञ्चन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रज्ज्ञचन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे ज्ञचन्यको श्रपेता अज्ञचन्य एक समय श्रिष्ठकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग अधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार श्ररित, शोक, श्रस्थिर, श्रिभुभ और श्रयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्य ज्ञानना चाहिए।

- ४०२. देवायु॰ ज०द्वि०वं० पंचणा॰-चदुदंस॰-सादावे०-चदुसंज॰-पंचणोक०-देवगदि--पसत्थद्वावीस--उच्चा०--पंचंत० णि० वं० संखेज्जगु०। तित्थय॰ सिया० संखेजजगु॰।
- ४०३. कम्मइग० स्रोरालियमिससभंगो। एविरि तित्थय० ज०**द्वि०वं मणुसगिद-**पंचगस्स सिया० संखेजजगु०। देवगिद०४ सिया०। तं तु० पलिदोवमस्स स्रसंखेजजिदभा०।
- ४०४. इत्थि०-पुरिस० अभिणियोधि० ज०६०वं० चदुणा०-चदुदंस०-सादावे०-चदुसंज०-पुरिस०-जस०-उचा०-पंचंत० णि० वं० जहराणा० । एवमराण-मराणाणं जहराणा० । सेसाओ पगदीओ पंचिदियभंगो ।
  - ४०५. खबुंसमे खिवगात्रो इत्थिवेदभंगो । सेसा पगदी मूलोघं ।
- ४०२. देवायुकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण, साता वेदनीय, चार सङ्ज्वलन, पाँच नोकपाय, देवगित श्रादि प्रशस्त श्रद्धाईस प्रकृतियाँ, उद्यगीत श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञधन्य संख्यातगुणी श्रिष्ठक स्थितिका वन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कराचित् बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञधन्य संख्यातगुणी श्रिष्ठक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञधन्य संख्यातगुणी श्रिष्ठक स्थितिका बन्धक होता है।
- ४०३. कार्मण काययोगी जीवोंका भङ्ग श्रीदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव मनुष्यगित पञ्चकका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका वन्धक होता है। देवगित चतुष्कका कदाचित् वन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो वह नियमसे श्रजधन्य पल्यका श्रसंख्यातयां भाग अधिक स्थितिका वन्धक होता है।
- ४०४. स्त्रीवेद श्रौर पुरुपवेदवाले जीवोंमें श्राभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव चार ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, साता वेदनीय, चार सञ्ज्वलन, पुरुपवेद, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार इन सवका परस्पर सन्निकर्ष ज्ञानना चाहिए। किन्तु ऐसी श्रवस्थामें वह नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। श्रेप प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रियोंके समान है।
- ४०४. नपुंसकवेदवाले जीवोंमं चपक प्रकृतियोंका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मूलोघके समान है ।
- ४०६. श्रवगतवेदवाले जीवोंमें श्राभिनिवोधिक झानावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार झानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, यशःकीति, उद्यगीत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी

४०७ कोध-माण-माया० श्रोघं। एवरि खबगपगदीएं इत्थिवेदभंगो। मोह० विसेसा०। [कोहे] कोधसंज० [ज०िह०वं०] तिरिष्णसंज० णि०वं०िष्ण जहराणा०। पुरिस० श्रोघं। माणे माणसंज० ज०िह०वं० दोरएं संज०िष्ण वं०िष्ण जहराणा०। मायाए मायसंज० ज०िह०वं० लोभसंज० णि० वं०िष्ण जहराणा०। [लोभे लोभसंज०] मृलोघं।

४०८ मदि०-सुद० तिरिक्खोघं । विभंगे आभिणिबोधि० ज०िंड वं० चदुणा०-णवदंसणा०--सादा०--भिच्छ०-सोलसक०--पंचणोक०--देवगदिपसत्थद्वावीस--उच्चा०-पंचंत० णि० वं० । तं तु० । एवमेदाश्रो एक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

त्रवस्थामें वह नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। चार सञ्ज्वलनका भक्क मूलोघके समान है।

४०% कोध, मान श्रीर माया कपायवाले जीवोंमें श्रोघके समान भक्क है। इतनी विशेषता है कि चपक प्रश्नित्योंका भक्क स्त्रीवेदके समान है। मोहनीयकी कुछ विशेषता है। कोधकपायमें कोध सञ्ज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन सञ्ज्वलनोंका नियमसे बन्धक होता हैं। जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। पुरुपवेदका भक्क श्रोघके समान है। मान कपायमें मान सञ्ज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव दो सञ्ज्वलनों का नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। माया कषायमें माया सञ्ज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। माया कषायमें माया सञ्ज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव लोभ सञ्ज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। लोभ कपायमें लोभ सञ्ज्वलनका भक्क मुलोघके समान है।

४० द्र. मत्यक्षानी श्रोर श्रुताक्षानी जीवों में श्रपनी सब प्रकृतियों का भक्क सामान्य तिर्यञ्चों के समान है। विभक्क क्षानी जीवों में श्राभिनिवोधिक क्षानावरण्की जघन्य स्थितिका वन्धक जीव चार क्षानावरण्, नौ दर्शनावरण्, साता वेदनीय, मिध्यात्व, सोलह कपाय, पांच नोकषाय, देवगित श्रादि प्रशस्त श्रद्धाईस प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र श्रोर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सिनिकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी श्रवस्थामं वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका चन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रिधकतक स्थितिका वन्धक होता है।

४०९. श्रसातावेदनीयकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पांच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय जुगुण्सा, पुरुषवेद, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, निर्माण श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे

सुस्सर-ग्रादे०-णिमि०पंचंतरा० णि० वं० संखेज्जगु०। हस्स-रिद-तिरिणगिदि-श्रोरात्ति०-वेडिव०सरीर-दोश्रंगो०-वज्जरि०-तिरिणग्राणु०-उज्जो०-थिर-सुभ-जस०-दोगोद० सिया० संखेज्जगु०। श्ररिद-सोग-श्रथर-श्रसुभ-श्रजस० सिया०। तं तु०। एवं श्ररिद-सोग-श्रथर-श्रसुभ-श्रजस०।

४१०. इत्थिवं ज०हि०वं पंचणा - णवदंसणा ० मिच्छत्त - सोलसक ० भय-दु॰ - पंचिदि = तेजा ॰ - क० व्याण ० ४ - अगु० पसत्थ ० - तस० ४ - सुभग - सुस्सर - आदे० -णिमि० - पंचंत ० णि० वं० संखे ज्ञगु० । सादा० - हस्स - रिद - तिणिण गदि - दोसरीर - सम-चदु० - दो अंगो० - व ज्ञरि० - तिणिण आणु० - उ ज्ञो० - थिरादितिणिण - दोगोद० - सिया - संखे -ज्ञगु० । असादा० - अरिद - सोग दोसंठा० - दोसंघ० - अथिरादितिणिण ० सिया० संखे -ज्ञभा० । एवं णवुंस० । णवरि चदुसंठा० - चदुसंघ० सिया० संखे ज्ञभा० ।

बन्धक होता है जो नियमसे अज्ञधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, तीन गित, श्रौदारिक शरीर, वैकियिक शरीर, दो श्राङ्गोपाङ्ग, वर्जूषभनाराच-संहनन, तीन श्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, श्रभ, यशःकीर्ति श्रौर दो गोत्र इनका कदाचित् वन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रयन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्ररित, शोक, श्रस्थिर, श्रशुभ श्रौर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है। श्ररित, शोक, श्रस्थिर, श्रशुभ श्रौर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। यदि वन्धक होता है। यदि श्रज्ञधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है श्रौर श्रज्ञधन्य स्थितिका भी वन्धक होता है तो नियमसे जधन्यकी श्रोचा श्रज्ञधन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पख्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्ररित, शोक, अस्थिर, श्रशुभ और अयशः-कीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

४१०. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, मिध्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, प्रशस्तिविद्योगिति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, त्रादेय, निर्माण क्रीर पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय, हास्य, रित, तीन गित, दो शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, वर्ज्ञपंभनाराच संहनन, तीन आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर आदि तीन और दो गोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि वन्धक होता है । यदि वन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि चार संस्थान और चार संहनन इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवां भाग अधिक स्थितिका है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवां भाग अधिक स्थितका वन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

- ४११. णिरयायु० ज॰द्वि॰वं० पंचणा०--णवदंसणा॰--मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-पंचिंदि०-वेउव्वि॰-तेजा०-क॰-वेउव्वि०श्रंगो०--वरण०४--श्रगु०४-तस०४-णिमि॰--णीचा०--पंचंत० णि॰ वं॰ संखेज्जगु० । श्रसाद०--णवुंस०--श्ररदि--सोग-णिरयगदि-हुंड०-णिरयाणु०-श्रपसत्थ०-श्रथिरादिछ० णि० वं० संखेज्जभाग०।
- ४१२. तिरिक्खायु॰ ज०हि०वं० तिरिक्खगदि याव मण्०भंगो । मणुसायु० ज०हि०वं० तिरिक्खायुभंगो ।
- ४१३. देवायु० ज०िंड०वं० पंचणा०-णवदंसणा०-सादावे०-मिच्छ०-सोल-सक०-हस्स-रिद-भय--दु०-देवगिद-पसत्थद्वात्रीस--उच्चा०--पंचंत०णि० वं० संखेजागु०। इत्थिवे० सिया० संखेजभा०। पुरिस० सिया० संखेजागु०।
  - ४१४. णिरय॰ ज॰डि॰वं॰ हंडा उवरिं णिरयायुभंगो । णाम॰ सत्थाणभंगो ।
- ४१५. तिरिक्खग॰ ज॰िंड०वं॰ पंचणा०-णवदंसणा० सादा०-मिच्छ॰-सोल-सक०-पंचणोक०-णाम सत्थाणभंगो पंचंत० णि० वं॰ संखेळागु॰। तिरिक्खायु०
- ४११. नरकायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुष्सा, पञ्चेन्द्रिय ज्ञाति, वैक्षियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वैक्षियिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे वन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रसाता वेदनीय, नपुंसकवेद, श्ररित, शोक, नरकगित, हुएडसंस्थान, नरकगत्यानुपूर्वी, श्रश्रशस्त विहायोगित श्रीर श्रस्थिर श्रादि छह इनका नियमसे वन्धक होता है। जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवां भाग श्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है।
- ४१२. तिर्यञ्चायुकी जधन्य स्थितिके वन्धक जीवके तिर्यञ्चगित ग्रादि प्रकृतियोंका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है। मनुष्यायुकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवका भङ्ग तिर्यञ्च श्रायुके समान है।
- ४१३. देवायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पांच शानावरण, नौ दर्शनावरण, साता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, हास्य, रित, भय, जुगुप्सा, देवगित श्रादि प्रशस्त श्रद्धाईस प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र श्रोर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसं बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्जघन्य संख्यातगुणी श्रिष्ठक स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्जघन्य संख्यातवां भाग श्रिष्ठक स्थितिका बन्धक होता है। पुरुपवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। पुरुपवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है।

४१४. नरकगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके नीचे उपरकी प्रकृतियोंका भक्त नरकायुके समान है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भक्त स्वस्थानके समान है।

४१४. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शन(वरण, साता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय स्वस्थानके समान नामकर्मकी प्रकृतियाँ श्रौर पांच श्रन्तरायका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्र

णीचागो॰ णि॰ । तं तु॰ । उज्जो॰ सिया॰ । तं॰ तु॰ । एवं तिरिक्खाणु॰-उज्जो॰-

४१६. मणुसग० ज०डि०वं० हेडा उवरिं तिरिक्खगदिभंगो । णाम० सत्थाणभंगो ।

४१७. एग्गोद् ज०िंदिवं पंचणाः - एवदंसणाः - मिच्छ० - सोलसक०- पुरिस०-भय-दु० - एाम सत्थाएभंगो पंचंतः णिः वं संखेज्जगु० । सादावे०-इस्स-रिद-एीचुच्चागो० सियाः संखेज्जगु० । असादा० - अरिद-सोग - अधिर-असुभ - अजः सियाः संखेज्जित्। तिरिक्ख-मणुसगदि-वर्ज्जार०-दोत्राणुः - थिर-सुभ-जसिग० सियाः संखेज्जगुः । वज्जणाराः सियाः । तं तु० । एवं वज्जणारायणः ।

इनका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय श्रिधकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातयां भाग श्रिधक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेक्षा श्रजघन्य एक समय श्रिधकसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग श्रिधकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्जगत्यानुपूर्वा, उद्योत श्रीर नीचगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष कहना चाहिए।

४१६. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके नीचे ऊपरकी प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यञ्जगतिके समान है। नाम कर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है।

४१७. न्यत्रोधपरिमण्डल संस्थानको जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलहकषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, स्वस्थान भङ्ग रूपसे कही गई नांमकर्मकी प्रकृतियाँ श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो निययसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, हास्य, रति, नीचगोत्र श्रीर उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रसातावेदनीय, श्ररति, शोक, श्रस्थिर, श्रश्म श्रौर श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। तिर्यञ्जगति. मनुष्यगति, वज्रर्पभनाराच संहनन, दो अनुपूर्वी, स्थिर, शुभ और यशःकीर्ति इनका कदाचित बन्धक होता है श्रीर कदाचित श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। बज्जनाराचसहननका कदाचित बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर अजघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है। यदि अज्ञघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी ऋपेन्ना श्रजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग अधिकतक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार बज्जनाराचसंहननकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए।

- ४१८. चदुसंठा०-चदुसंघ० हेट्टा उविरं खग्गोदभंगो। साम श्रापपासी सत्थास-भंगो। सविरे विसेसी कादन्वो। श्रापसत्थिविहा०-दूभग-दुस्सर-श्रासिक सम्बोधिक स्वापने
- ४१६. श्राभिणि०-सुद ७-श्रोधि० श्राभिणिबोधि० ज०िड० वं चदुणाणावर-णादिखिवगाणं श्रोघं। णिहाए ज०िड बं॰ पंचणा० मणजोगिभंगो। एवं पचला०। श्रसादा० ज०िड० वं॰ मणजोगिभंगो।
- ४२०. मणुसायु० ज०हि०बं० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पुरिस०-उच्चा०-पंचंत० णि० वं० असंखेळागु० । णिद्दा-पचला०-अहक०-भय-दु०-मणु-सगिद्वपंच०-पंचिदि०-तेजा०--क०-समचदु०--वएण्०-४ अगु०-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर--आदे०--णिमि० णि० वं० संखेज्जगु० । साद्दा०-जस० सिया० असंखेळागु० । असादा०-अरदि--सोग-अथिर-असुभ-अजस० सिया० संखेळागु० । इस्स-रदि-थिर-सुभ-तित्थय० सिया० संखेळागु० ।
- ४१८. चार संस्थान श्रोर चार संहननकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवके नीने ऊपरकी प्रकृतियोंका भक्त न्यश्रोधपरिमगडल संस्थानके समान है। नामकर्मकी श्रपनी श्रपनी प्रकृतियोंका भक्त स्वस्थानके समान है। किन्तु यहाँ जो विशेषता हो उसे जानकर कहनी चाहिए। श्रप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुस्वर श्रोर अनादेय इनकी मुख्यतासे सिन्निकर्ष न्यश्रोधपरिमगडल संस्थानके समान है। किन्तु यहाँ जो विशेषता है उसे जानकर कहनी चाहिए।
- ४१९. श्राभिनिबोधिक श्रानी, श्रुतक्षानी श्रीर श्रविश्वानी जीवोंमें श्राभिनिबोधिक श्रानावरणकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके चार क्षानावरण श्रादि चपक प्रकृतियोंका भक्त श्रोधके समान है। निद्राकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवके पाँच श्रानावरण श्रादिका भक्त मनोयोगी जीवोंके समान है। इसी प्रकार प्रचलाकी मुख्यतासे सन्निकर्प जानना चाहिए। श्रुसाता वेदनीयको जघन्य स्थितिके वन्धक जीवका भक्त मनोयोगी जीवोंके समान है।
- ४२०. मनुष्य आयुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानायरण, चार दर्शनावरण, चार सञ्ज्वलन, पुरुषवेद, उच्चगोत्र और पाँच ऋन्तराय इनका नियमसे बन्धक
  होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। निद्रा,
  प्रचला, आठ कषाय, भय, जुगुष्सा, मनुष्यगतिपञ्चक, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजसशरीर,
  कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, प्रशस्त विहायोगित, त्रस
  चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे
  अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय और यशः
  कीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक
  होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। असातावेदनीय, अरित, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता
  है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यात
  गुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, स्थिर, शुभ और तीर्थंकर प्रकृति

४२१. देवायु० ज॰हि०बं० पंचणा०--चदुदंस०--सादा०-चदुसंज०-पुरिस०-जसगि०-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० संखेज्जगु० । शिद्दा-पचला-श्रद्धकसा०-हस्स-रदि-भय-दुर्गुं ७-देवगदिपसत्थद्वावीसं शि० बं० संखेज्जगु० । तित्थय० सिया० संखेज्जगु० ।

४२२. मणुसग० ज॰ द्वि० वं॰ पंचणा॰-चदुदंसणा॰-सादा॰-चदुसंज॰-पुरिस॰-जस०-डच्चा॰-पंचंत॰ णि॰ वं० श्रसंखेज्जगु॰ । णिद्दा--पचला--श्रद्दक०--हस्स-रदि-भय-दुगुं० णि० वं॰ संखेजजगु॰ । णाम० सत्थाणभंगो ।

४२३. देवगदि ॰ ज॰िंड॰ खिवगात्रो त्रोघं । णाम० सत्थाणभंगो । हस्स-रदि-भय-दु० णि॰ बं० संखेजागु० ।

४२४. मण्पज्जव-संजद-सामाइय-छेदो०-परिहार० श्रोधिभंगो। सुहुमसांपराइ० श्रोघं। संजदासंजद० श्राभिणिबो० ज०िंद्विं० चदुणा०-छदंसणा०-सादावे०-श्रद्ध-कसा०--पुरिस०-हस्स-रिद-भय-दु०-देवगिदपसत्थद्वावीस-उच्चा०-पंचंत० णि० बं०।

इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है।

४२१. देवायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव, पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार सञ्ज्वलन, पुरुषवेद, यशकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। निद्रा, प्रचला, श्राठ कषाय, हास्य, रित, भय, जुगुण्सा और देवगित आदि प्रशस्त अद्वाईस प्रकृतियाँ इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका वन्धक होता है। तीर्थद्वर प्रकृतिका कदाचित् वन्धक होता है और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

४२२. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच झानावरण, चार दर्शना वरण. सातावेदनीय, चार सञ्ज्वलन, पुरुषवेद, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञचन्य श्रसंख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। निद्रा, प्रचला, श्राठ कपाय, हास्य, रित, भय श्रौर जुगुष्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भन्न स्वस्थानके समान है।

४२३. देवगतिकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवके चपक प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधके समान है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। हास्य, रित, भय श्रौर जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है।

४२४. मनःपर्ययक्षानी, संयत, सामायिक संयत, छेदोपस्थापनासंयत श्रौर परिहार-विशुद्धिसंयत इनका भक्न श्रवधिक्षानी जीवोंके समान है। सूच्म साम्पराय संयत जीवोंका भक्न श्रोधके समान है। संयतासंयत जीवोंमें श्रमिनिबोधिक ब्रानावरणकी जधन्य स्थितिका बन्धक जीव चार ब्रानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनीय, श्राठ कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रित, भय, जुगुप्सा, देवगित श्रादि प्रशस्त श्रद्धाइस प्रकृतियाँ, उचगोत्र श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह श्रधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर तं तु० । तित्थय० सिया० । तं तु० । एवमेदात्रो एक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

४२५. ऋसादा० ज०डि०बं० हस्स-रिद-थिर-सुभ-जस० सिया० संखेळागु०। एवं तित्थय०। ऋरिद-सोग--ऋथिर--ऋसुभ--ऋजस० सिया०। तं तु०। धुविगाएं णि० बं० संखेळागु०। एवं ऋरिद-सोग-ऋथिर-ऋसुभ-ऋजस०।

४२६. असंजद० तिरिक्खोघं। एवरि तित्थय० ज०हि०बं० धुवपगदीओ देव-गदिसंजुत्ताओ पसत्थणामपगदीओ यदि बं० संखेज्जगु०। चक्खुदं० तसपज्जत्तभंगो। अचक्खुदं ओघं। ओधिदं० ओधिणाणिभंगो। किएएए-णील-काऊ० तिरिक्खोघभंगो। एवरि तित्थय० असंजदस्स० संजदाभिम्रहस्स देवगदिसंजुत्ताओ पसत्थाओ एए०

श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थं इर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे छेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी श्रवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेचा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

४२४. श्रसाता चेदनीयकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव हास्य, रित, स्थिर, श्रभ श्रीर यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तीर्थंकर प्रकृतिकी मुख्यतासे सिन्नकर्ण जानना च।हिए। श्ररित, शोक, श्रस्थिर, श्रशुभ और श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पत्यका श्रसंख्यातयां भाग श्रधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। ध्रवबन्धवाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार श्ररित, श्रोक, श्रस्थिर, श्रशुभ और श्रयशः कीर्तिकी मुख्यतासे सिन्नकर्ष जानना चाहिए।

४२६. श्रसंयत जीवोंमें अपनो सब प्रकृतियोंका भक्त सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिको जघन्य स्थितिका बन्धक जीव ध्रुव प्रकृतियोंको देवगितसंयुक्त बाँधता है। तथा नामकर्मकी प्रसस्त प्रकृतियोंको यदि बाँधता है तो संख्यात-गुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। चक्षुदर्शनवाले जीवोंमें त्रसपर्याप्त जीवोंके समान भक्त है। श्रवधिदर्शनवाले जीवोंमें श्रवधिक्तानी जीवोंके समान भक्त है। श्रवधिदर्शनवाले जीवोंमें श्रवधिक्तानी जीवोंके समान भक्त है। कृष्ण, नील श्रीर कापोत लेक्यावाले जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भक्त है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्तवके श्रीमुख हुए श्रसंयत जीवके तीर्थंकर

संखेज्जगु० । किराण ॰ - गाति ० मणुसो सत्थाणे विम्रुज्भमाणो तित्थयरस्स असंजद-सामित्रेण असंजदभंगो । काऊए तित्थय ० णिरयोघं ।

४२७. तेऊए आभिणिबो० ज०िड बं० चढुणा०-छदंसणा०-सादा०-चढु-संज०-पंचणोक०--देवगदि--पसत्थद्वावीस--उच्चा०-पंचंत णि० । तं तु० । आहारदुर्ग तित्थयरं सिया० । तं तु० । एवमेदाओ एकमेकस्स । तं० तु० ।

४२८. दंसण्तिय-श्रसादा०-मिच्छ०-बारसक०-श्ररित-सोग० मणजोगिभंगो । इत्थिबे० ज॰ हि०बं० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-पंचिदि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-श्रगु०४ पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर-श्रादे०-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० संखेज्जगु० । दोगदि-दोसरीर--दोश्रंगी०-दोश्राणु० सिया० संखेज्जगु० । सादा-

प्रकृतिका जघन्य स्थितिबन्ध होता है। तथा देवगित संयुक्त प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। कृष्ण और नील लेश्यामें मनुष्य स्वस्थानमें विग्रुद्धिको प्राप्त होता हुन्ना तीर्थंकर प्रकृतिका बन्धक होता है। जिसके असंयत स्वामित्वकी अपेक्षा असंयतके समान भक्न है। कापोत लेश्यामें तीर्थंकर प्रकृतिका भक्न सामान्य नारिकयोंके समान है।

४२७. पीतलेश्यावाले जीवों में श्रीमिनबोधिक ज्ञानावरण्की जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण्, छह दर्शनावरण्, सातावेदनीय, चार संज्वलन, पांच नोकपाय, देवगित श्रादि प्रशस्त श्रष्टाईस प्रष्टितयाँ, उचगोत्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है। 'किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका वन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है । श्राहारकद्विक श्रीर तीर्थङ्कर इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्थक होता है । यदि वन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रपेत्ता श्रजघन्य एक समय श्रधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सिन्नकर्ष जानना चाहिए । किन्तु ऐसी श्रवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका क्रयक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका क्रयक होता है श्रीर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है । । स्थितक तक स्थितिका वन्धक होता है ।

४२८. तीन दर्शनावरण, श्रसाताचेदनीय, मिश्यात्व, बारह कषाय, श्ररति श्रीर शोक इनकी मुख्यतासे सिनकर्ष मनोयोगी जीबोंके समान है। स्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिश्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, श्रस चतुष्क, सुमग, सुस्वर, श्रादेय, उच्चगोत्र श्रीर पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुक्षी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। वो गित, दो शरीर, दो श्राङ्गोपाङ्क श्रीर हो श्रानुपूर्वी इनका कहाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो विद्यमसे

साद ॰ - हस्स-रिद- ऋरिद--सोग-समचदु ० - वज्जिरि ॰ - थिराथिर - सुभासुभ - जस० - अजस ॰ सिया ० संखेज्जगु ० । एग्गोद ॰ - सादि ० - वज्जिर ० - एगारा ० सिया ॰ संखेज्जमा ० । एवं एवं से व चुसंठा ० - चुसंघ [सिया ० संखेज्जभा ० ।]

४२६. तिरिक्त-मणुसायु॰ देवभंगो। देवायु॰ ज॰ हि॰ बं॰ पंचणा॰ छदंसणा॰-सादावे॰-बारसक॰ हस्स-रिद-भय-दु०-देवगिद्पसत्थद्वावीस-उच्चा०-पंचंत॰ णि॰ बं॰ संखेज्जगु॰। थीणिगिद्धि॰ ३-भिच्छ ॰-ग्रणंताणुवंधि॰ ४-पुरिस० सिया॰ संखेज्जगु॰। इत्थिवे० सिया॰ संखेजजगु॰। तित्थय॰ सिया॰ संखेजजगु॰।

४३०. मणुस० ज०ड्डि०वं० पंचणा०-छदंसणा०-सादा०-वारसक०-पंचणोक०-णामसत्थाणभंगो उच्चा०-पंचंत०-णि० वं० संखेज्जगु० । तित्थय० सिया० संखे-ज्जगु० । एवं स्रोरालि०--स्रोरालि०स्रंगो०--वज्जरि०--मणुसाणु० । तिरिक्खग०--

श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय, श्रसातावेदनीय, हास्य, रित, श्ररित, श्रोक, समचतुरस्र संस्थान, वर्ज्ञपंभनाराच संहनन, स्थिर, श्रस्थिर, श्रम, श्रश्नम, यशःकीर्ति और श्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञचन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। न्यश्रोधपरिमण्डल संस्थान, स्वातिसंस्थान, वर्ज्ञपंभनाराच संहनन श्रोर नाराचसंहनन इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि चार संस्थान श्रोर चार संहनन इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रोर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है।

४२६. तिर्यञ्च श्रायु श्रीर मनुष्य श्रायुका भक्क देवोंके समान है। देवायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, बारह कपाय, हास्य, रित, भय, जुगुप्सा, देवगित श्रादि प्रशस्त श्रद्धाईस प्रकृतियाँ, उच्चगित्र श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, श्रन्तनानुबन्धी चार श्रीर पुरुषवेद इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेदका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थं हर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रज्ञघन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है।

४३०. मनुष्यगितको जघन्य स्थितिका वन्धक जीव पाँच शानावरण, छह दर्शना-वरण, सातावेदनीय, बारह कषाय, पाँच नोकषाय, नामकर्मको स्वस्थानके समान प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे घन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार औदारिक शरीर, औदारिक एइंदि०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-तिरिक्खाणु०-श्रादाउज्जो०-श्रप्पसत्थवि०-थावरं सोधम्म-भंगो । एवं पम्माए वि ।

४३१ सुकाए मणजोगिभंगो । एवि इत्थि॰-एवुंस०-मणुसगिद-श्रोरालि०-पंचसंठा०-श्रोरालि॰श्रंगो॰-छस्संघ०-मणुसाणु॰-श्रप्पसत्थिवि॰-दूभग-दुस्सर-श्रणादे॰ जहएणुसिएएयासे संजम०-सम्मत्त०-भिच्छ०पाश्रोग्गाश्रो पगदीश्रो ए।दूण सिएए-यासेदब्वं।

४३२. भवसिद्धि॰ त्रोघं । त्रब्भवसिद्धिया॰ मदिभंगो । सम्मादि॰-खइग०-वेदग०-उवसम॰ त्रोधिभंगो । एवरि वेदगसं॰ जहिएएगाएए पमत्ता ऋप्यमत्ता करेंति।

४३३. मणुसग० ज०हि०बं० पंचणा०-छदंसणा० वेदगे करेदि । तएणादृण सिएणयासेदव्वं तेउभंगो ।

४३४ [ सासणे त्राभिणिबो ज०द्वि०वं० ] चदुणा०--णवदंसणा०--सादा०--सोलसक०--पंचणोक०--पंचिदि०-तेजा०--क०--समचदु०--वएण०४-त्रगु०४--पसत्थ०-तस०४-थिरादिञ्च०-णिमि०-पंचंत० णि० वं० । तं तु० । तिरिणगदि-दोसरीर-

श्राङ्गोपाङ्ग, वञ्चर्षभनाराच संहनन श्रौर मनुष्यगत्यानुपूर्वाकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रातप, उद्योत, श्रप्रशस्त विहायोगति श्रौर स्थावर इनका भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है। इसीप्रकार पद्मतेश्यामें भी जानना चाहिए।

४३१. शुक्ल लेश्यामें मनोयोगी जीवोंके समान भक्न है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, मनुष्यगित, श्रीदारिक शरीर, पांच संस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छुद्द संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुःस्वर और श्रनादेय तथा जघन्य सिन्नकर्षमें संयम, सम्यक्त्व श्रीर मिथ्यात्वके योग्य प्रकृतियोंको जानकर सिन्नकर्ष कहना चाहिए।

४३२. भव्य जीवोंका भङ्ग श्रोघके समान है। श्रभव्य जीवोंका भङ्ग मत्यश्वानियोंके समान है। सम्यग्दिष्, जायिकसम्यग्दिष्, वेदकसम्यग्दिष्ट श्रीर उपशमसम्यग्दिष्ठ जीवोंका भङ्ग श्रविधिश्वानी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि वेदक सम्यक्त्वमें प्रमत्त श्रीर श्रप्रमत्त जीव जघन्य सन्निकर्ष करते हैं।

४३३. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच झानावरण श्रीर छुट्ट दर्शनावरणको वेदक सम्यक्त्वमें करता है। उसे जानकर पीतलेश्याके समान सन्निकर्ष साध लेना चाहिए।

४३४. सासादन सम्यक्त्वमें श्राभिनिबोधिक श्वानाघरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार श्वानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, पञ्चेन्द्रिय जाति, तेजस शरोर, कार्मण शरीर, समचतुरस्न संस्थान, वर्णचतुरक, श्रगुरुलघु-चतुरक, प्रशस्तविहायोगित, अस चतुरक, स्थिर श्रादि छह, निर्माण श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रौर श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका चन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेचा श्रजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। तोन गित, दो श्रीरा, दो श्राङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभ-

दोश्चंगो०-वज्जरि०-तिषिणश्चाणु०-उज्जो०-णीचुच्चागो० सिया० । तं तु० । एव-मेदाश्चो एकमेकस्स । तं तु० ।

४३५. असादा० ज०डि०वं० धुविगाओ णि० वं० संखेज्जभाग० । अरिद-सोग-अथिर असुभ-अजस० सिया० । तं तु० । हस्स--रिद--तिण्णिगदि-दोसरीर-दो-श्रंगो०--वज्जरिस०--तिण्णिआणु०--जज्जो०--थिर--सुभ---जस०---णीचुच्चा० सिया० संखेज्जभा० ।

४३६. इत्थिवे० त्रसादभंगो । एवरि तिएिएसंठा०--तिएिएसंघ० सिया० संखेज्जदिभा० । एवुंसगे इत्थिभंगो । एवरि तिरिक्तव-मणुसगदि-पंचसंठा०-पंचसंघ०-दोत्राणु० सिया० संखेज्जदिभा० । सेसात्रो परावत्तमाणियात्रो सिया०

नारोचसंहनन, तीन श्रानुपूर्वी, उद्योत, नीचगोत्र श्रीर उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यको श्रपेद्या श्रजधन्य एक समय श्रधिक थे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवां भाग श्रधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसो प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी श्रवस्थामें वह जधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है श्रीर श्रजधन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजधन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जधन्यको श्रपेद्या श्रजधन्य एक समय श्रिधकसे लेकर पत्थका श्रसंख्यातवां भाग श्रिधक तक स्थितिका बन्धक होता है।

४३४. श्रसातावेदनीयकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव ध्रुवप्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवां भाग श्रिधिक स्थितिका वन्धक होता है। श्ररित, शोक, श्रस्थिर, श्रश्म श्रौर श्रयशःकीर्त इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि श्रजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी श्रेपेचा श्रजघन्य एक समय श्रिधकसे लेकर पल्यका श्रसंख्यातवां भाग श्रिधक तक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, तीन गित, दो श्रीर, दो श्राङ्गोपाङ्ग, वर्ज्यभननाराचसंहनन, तीन श्रानुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, श्रुभ, यशःकीर्ति, नोचगोत्र श्रौर उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है। श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवां भाग श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है।

४३६. स्त्रीवेदका भङ्ग असातावेदनीयके समान है। इतनो विशेषता है कि तीन संस्थान श्रीर तीन संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातवां भाग श्रिधिक स्थितिका बन्धक होता है। नपुंसकवेदका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। इतनो विशेषता है कि तिर्यञ्चगित, मनुष्यगित, पांच संस्थान, पांच संहनन श्रीर दो श्रानुपूर्वीका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे संख्यातवां भाग श्रिधक स्थितिका बन्धक होता है। शेष परावर्तमान प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है श्रीर कदाचित् श्रवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी अधिक स्थिति-

संखेज्जगु॰ । एवं मणुस्सायु॰ । देवायु० ज०द्वि०बं० गागावरणादि॰ णि॰ श्रज॰ संखेज्जगु॰ ।

४३७. तिरिक्खायु॰ ज॰ड्डि०बं॰ धुविगात्रो णि॰ बं० संखेज्जगु० । सेसात्रो परियत्तमाणियात्रो सिया॰ संखेज्जगु॰ । एवं मणुसायुगं पि । देवायु० ज०ड्डि॰बं० णाणावरणादि० णि० बं० संखेजजगु॰ ।

४३८. णगोद॰ ज॰ हि॰ बं॰ पंचणा०--णवदंसणा०--सोलसक०--भय-दु०-पंचिदि०--तेजा०-क० णि० वं॰ संखेज्जभा० । त्रासादा०-हस्स--रदि-त्रप्रदि-सोग-णीचुच्चा० सिया० संखेज्जभा० । पुरिस० णियमा संखेज्जभा० । णाम० सत्थाण-भंगो। एवं णगोदभंगो तिण्णिसंठा०-चदुसंघ०-ऋप्पसत्थवि०-दूभग-दुस्सर ऋणादे०।

४३६. सम्मामिच्छ० त्राभिणिबोधि० ज०द्वि०वं० चदुणा०-छदंसणा०-सादा०-वारसक०-पंचणोक०-पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वरणा०४-त्रगु०४-

का बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। देवायु-की जघन्य स्थितिका बन्धक जीव ज्ञानावरणादिका नियमसे श्रजधन्य संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है।

४३७. तिर्यञ्च आयुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शेष परावर्तमान प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। देवायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव शानावरण आदिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितका बन्धक होता है।

४३८. न्यग्रोधपरिमण्डलसंस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पांच झानावरण, नौ दर्शनावरण, सोलहकपाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, श्रौर कार्मण् शरीर इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। श्रसातावेदनीय, हास्य, रित, श्रारत, श्रोक, नीचगोत्र श्रौर उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है श्रौर कदाचित् श्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेदका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे श्रजघन्य संख्यातवां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नामकर्मकी प्ररुतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थानके समान तीन संस्थान, चार संहनन, श्रप्रशक्त विहायोगित, दुर्भग, दुःस्वर श्रीर श्रनादेयकी मुख्यतासे सन्निकर्य जानना चाहिए।

४३९. सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें श्राभिनिबोधिक श्रानावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार श्रानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, बारह कषाय, पांच नोकषाय, पञ्चेन्द्रियजाति, तेजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु-चतुष्क, प्रशस्तविहायोगित, त्रस चतुष्क, स्थिर श्रादि छह, निर्माण उच्चगोत्र श्रोर पांच श्रन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और श्रज्ञघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि श्रज्ञघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो

पसत्थ०-तस०४-थिरादिञ्ञ०-िणमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० । तं तु० । दोगदि-दोसरीर-दोश्रंगो०--वज्जरि०--दोश्राणु० सिया० । तं तु० । एवमेदाश्रो एकमेकस्स । तं तु० ।

४४०. श्रसादा० ज०डि०वं० धुविगाणं णि० वं० संखेज्जगु० । हस्स-रिद् दोगदि--दोसरीर--दोश्रंगो०--वज्जरि०--दोश्राणु०--थिर--सुभ-जस० सिया० वं० संखेज्जगु० । श्ररदि-सोग-श्रथिर-श्रजस० सिया० । तं० तु० ।

४४१. मिच्छादिद्दी० मदि०भंगो । सिएए० मणुसभंगो । असिएए० तिरिक्खोघं। एवरि एिरयायु० ज०द्वि०वं० एिरयगदि--वेउन्वि०--वेउन्वि०अंगो०--णिरयाणु० एि। वं० संखेज्जभा० । सेसाएां संखेज्जगु० । एवं देवायु० । आहार० ओघं।

नियमसे जघन्यकी अपेचा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग अधिक तक स्थितिका वन्धक होता है। दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्जर्षभनाराच संहनन और दो आनुपूर्वी इनका कदाचित् वन्धक होता हे और कदाचित् अवन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थिति का भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेचा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका सिन्नकर्प जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेचा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पत्यका असंख्यातवां भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

४४०. ग्रसातावेदनीयकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे ग्रजघन्य संख्यातगुणी ग्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रित, दो गित, दो शरीर, दो ग्राङ्गोपाङ्ग, वज्रपंभनाराच संहनन, दो ग्राजुपूर्वी, स्थिर, शुभ ग्रीर यशःकीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है ग्रीर कदाचित् ग्रबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे संख्यातगुणी ग्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। ग्रारित, शोक, ग्रस्थिर ग्रीर ग्रयशःकीर्ति इनका कदाचित् वन्धक होता है ग्रीर कदाचित् ग्रबन्धक होता है तो वह जघन्य स्थितिका भी वन्धक होता है और ग्रजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी ग्रपेता ग्रजघन्य एक समय ग्रधिकसे लेकर पत्यका ग्रसंख्यातवां भाग ग्रधिक तक स्थितिका वन्धक होता है।

४४१. भिथ्यादृष्टि जीवोंका भङ्ग मत्यञ्चानी जीवोंके समान है। संज्ञी जीवोंका भङ्ग मनुष्योंके समान है। श्रसंज्ञी जीवोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि नरकायुकी जघन्य स्थितिका वन्धक जीव नरकगित, वैकियिक शरीर, वैकियिक श्राज्ञिषाङ्ग श्रीर नरकगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवां भाग श्रधिक स्थितिका बन्धक होता है। तथा शेष प्रकृतियोंकी संख्यातगुणी श्रधिक स्थितिका वन्धक होता है। इसी प्रकार देवायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

अणाहार० कम्भइ० भंगो ।

# एवं जहरणसरिणयासी समत्ती। एवं सरिणयासी समत्ती।

४४२. णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमेण दुवि०-जह० उक्क०। उक्कस्सए पगदं। तं तत्थ इमं अद्वपदं मृलपगिद्भंगो कादच्वो। एदेण अद्वपदेण दुवि०-ओघे० आदे०। योघे० णिरय--मणुस--देवायूणं उक्कस्सा० अणुक्कस्सा० अद्वभंगो। सेसाणं पगदीणं उक्कस्स० अणुक्कस्सा० तिरिण्यभंगो। एवं ओघभंगो तिरिक्खोधं पुढवि०--आउ०-तेउ०-वाउ० तेसं च वादर०-वादरवणप्किद्पत्तेय०-कायजोगि--ओरालि०-ओरालियमि०-कम्मइ०--णवुंस०--कोधादि०४--मिद्०--सुद्०--असंज०--अचक्खु०--किएण० णील०-काउ०-भवस०-अवभविस०-मिच्छा०-असिएण०-आहार०-अणाहारगे ति।

४४३. एइंदिय--वाद्रपुढवि०--आड०--तेउ०-वाउ०--वाद्रवण्फद्पित्तेय०अप--ज्ञत्त--सव्वसुहुम-वर्णफदि--णियोद० आयूणि दोणिण ओघं। सेसाणं उक्क० अणुक्क० वंधगा य अवंधगा य।

४४४. पणुसञ्चपज्जत्त०--ग्रोरालियमि०---कम्मइग०--ग्रणाहार० देवगदि०४--तित्थय० वेर्डाव्वयमि०-ग्राहार०-ग्राहारमि०-ग्रवगद०-सुहुमसंप०-उवसम०-सासण०-ग्राहारक जीवोंका भङ्ग ग्रोधके समान है तथा श्रनाहारक जीवोंका भङ्ग कार्मणकाययोगी जीवोंके समान है।

#### इस प्रकार जघन्य सन्निकर्प समाप्त हुन्ना। इस प्रकार सन्निकर्प समाप्त हुन्ना।

४४२. नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचयानुगम दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। उसके विषयमें यह अर्थपद मूल प्रकृतिवन्धके समान करना चाहिए। इस अर्थपदके अनुसार निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे नरकायु, मनुष्यायु ओर देवायुके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धकके आठ भङ्ग होते हैं। शेप प्रकृतियोंक उत्कृष्ट आर अनुत्कृष्ट स्थितिवन्धके तीन भङ्ग होते हैं। इस प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यञ्च पृथ्वोकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और इनके वादर, वादरवनस्पतिकायिकप्रत्येक, काययोगी, औदारिक काययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुं सकवेदी, कोधादि चार कपायवाले, मत्यक्षानी, अनुताक्षानी. असंयत, अचनुदर्शनी, कृष्णलेश्यावाले, नीललंश्यावाले, कापोतलंश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादिष्ट, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए।

४४३. एकेन्द्रिय अपर्याप्त, वादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, वादरजलकायिक अपर्याप्त, वादर अग्निकायिकअपर्याप्त, वादरवायुकायिकअपर्याप्त, वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर अपर्याप्त, सव सूदम, वनस्पतिकायिक और निगोद जीवोंके दो आयु ओघके समान हैं। शेप प्रकृतियोंके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव होते हैं और अवन्धक जीव होते हैं।

४८४. मनुष्य ग्रपर्याप्त, छोदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी श्रीर श्रनाहारक जीवोंमें देवगतिचतुष्क श्रीर तीर्थंकर प्रकृतिके तथा वैकियिक मिश्रकाययोगी, श्राहारक काययोगी, श्राहारक मिश्रकाययोगी, श्रपगतवेदी, सूदमसाम्परायिक सयत, उपशमसम्यग्दिष्ट, सम्मानिच्छादिहि त्ति सव्वपगदीणं उक्कम्सा॰ अणुक्कस्सा० अहभंगा ।

४४५. वादरपुढवि०-त्राउ०-तेउ०-वाउ०-वादरवण्फदिपत्तेय०पज्ञता० देवगदि भंगो | त्रायु० णिरयायुभंगो | सेसाएांणिरयात्रो याव सिएए ति त्रोवं | एवमुकस्सं समत्तं

४४६. जहएएए पगदं । तत्थ इमं अद्वपदं मृलपगदिभंगो । एदेए अद्वपदेश दुवि -- स्त्रोघे० स्त्रादे० । स्रोघे० खवगपगदीएां तिएएएस्रायु-- वे उन्वियद्धक-तिरिक्ख-गदि ०४-स्त्राहारदुग-तित्थय० जह० स्रजह० उक्षस्सभंगो । सेसाएां पगदीएां जह० स्रज्ञ० स्रिक्ष वंधगा य स्रवंधगा य । एवं स्रोधभंगो कायजीगि-- स्रोरालियका०-- एवुं स०-कोधादि ०४-स्रचक्ख०-भवसि ०-स्राहारए ति ।

४४७. तिरिक्खगदीए तिरिण्यायु॰-वेउव्वियत्त०-तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जो॰-णीचा॰ उक्तसभंगो। सेसाणं जह॰ अन० अत्थि वंधगा य अवंधगा य । एवं तिरिक्खोयं त्रोरालियमि॰-कम्मइ॰-मदि०-मुद०-असंजद०-किएण०-णील०-काउले॰-अब्भवसि॰--मिच्छादि॰--असिएण०--अणाहारग चि। एविरि खोरालियमिस्स-कम्मइ-अणाहारगे देवगदिपंचगं उक्तस्सभंगो।

सासादन सम्यग्हिए ग्रोर सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट ग्रोर श्रनुत्कृष्ट स्थितिवन्धके त्राठ भङ्ग होते हैं।

४४४. बादर पृथ्वीकायिक पर्याप्त, वादर जलकायिकपर्याप्त, वादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंके देवगतिके समान भङ्ग है। तथा आयुका नरकायुके समान भङ्ग है। शेप नरकगतिसे लेकर संज्ञी तक सब मार्गणाओं में श्रोघके समान भङ्ग है।

# इस प्रकार उत्कृष्ट भङ्गविचयानुगम समाप्त हुआ।

४४६. जघन्यका प्रकरण है। उस विषयमें यह अर्थपद मूलप्रकृतिस्थित वन्यके समान है। इस अर्थपदके अनुसार निर्देश दो प्रकारका है— ग्रोघ और आदेश। श्रोधकी अपेक्षा क्षपक प्रकृतियाँ, तीन आयु, वैक्रियिक छह, तिर्यक्षगित चार, आहारक हिक और तीर्थंकरको जघन्य और अजघन्य स्थितिक वन्धक जीवोंका भन्न उत्कृषके समान है। शेप प्रकृतियोंके जघन्य और अजघन्य स्थितिवन्धके वन्धक जीव होते हैं और अवन्धक जीव होते हैं। इस प्रकार औद्यके समान काययोगी, औद्यारिक काययोगी, नपुंसकवेदी, कोधादि चार कपायवाले, अचनुदर्शनी, भन्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

४४७. तिर्यञ्चगितमें तीन त्रायु, वैकियिक छह, तिर्यञ्चगित, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वा, उद्योत त्रीर सीचगोत्रका भङ्ग उत्रुष्टक समान है। शेष प्रकृतियों के ज्ञान्य त्रीर त्राज्ञान्य स्थितिवन्धके वन्धक जीव होते हैं त्रीर त्रावन्धक जीव होते हैं। इस प्रकार सामान्य स्थितिवन्धके वन्धक जीव होते हैं त्रीर त्रावन्धक जीव होते हैं। इस प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंके समान त्रीदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, त्रासंयत, कृष्णलेश्यावाले, नीललेश्यावाले, कापोतलेश्यावाले, त्राभन्य, मिथ्यादिष्ट, ग्रसंकी त्राप्रेयत, कृष्णलेश्यावाले, नीललेश्यावाले, कापोतलेश्यावाले, त्रामन्य, मिथ्यादिष्ट, ग्रसंकी त्रीर त्रानाहारक जीवोंके जानना चाहिष् । इतनी विशेषता है कि औदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी ग्रीर श्रनाहारक जीवोंके देवगित पञ्चकका भङ्ग उत्कृष्टके समान है।

४४८. एइंदिएसु [मणुसग०-] मणुसाणु०-तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा० त्रोघो । सेसं उक्कस्सभंगो । पुढिति०-त्राउ०-तेउ०-वाउ०-वादरपुढिति०-त्राउ०-तेउ०-वाउ० तिरिक्खायु० त्रोघं । सेसं उक्कस्सभंगो । वादरपुढिति०-त्राउ०-तेउ०-वाउ०-बादरवणप्फिदिपत्तेय०त्रप्रज्जत्त-सन्वसुहुम-वणप्फिदि-णियोदे० मणुसायु०त्रोघं । सेसाणं त्रित्थ बंधगा य त्रवंधगा य । सेसाणं णिरयादि याव सिएए त्रि उक्कस्सभंगो ।

## एवं जहएएएयं समत्तं।

४४६. भागाभागं दुविधं-जहरण्यं उक्कस्सयं च । उक्कस्सए पगदं । दुवि०त्रोधे० त्रादे० । त्रोधेण तिरिण्त्र्यायु०-वेउव्वियद्ध०-तित्थय० उक्क०हि०वंधगा
सव्वजीवाणं केविडयो भागो ? असंखेज्जिदिभागो । अणु०हि०वंधगा सव्वजी० के० ?
असंखेज्जा भागा । आहार०--आहार०अंगो० उ०िठवं० सव्वजी० के० ? संखेज्जदिभा० । अणु०हि०वं० के० 'संखेज्जा भा० । ससाणं पगदीणं उ०िह०वं० सव्वजी०
के० ? अणंतत्रो भागो । अणु०हि०वं० सव्व० के० ? अणंता भागा । एवं ओघभंगो
तिरिक्खोधं कायजोगि०-ओरालि०--अोरालियिम०-कम्मइ०--णवुंस०-कोधादि०४मिद०-सुद०-असंजद०-अचक्खुदं०-तिरिण्लो०--भवसिद्धि०--अब्भवसि०--भिच्छादि०-

४४८. एकेन्द्रियों में मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, तिर्यञ्चगित, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत श्रीर नीचगोत्रका भक्ष श्रोघके समान है तथा शेष प्रकृतियोंका भक्ष उत्कृष्टके समान है। पृथ्वीकायिक, जलकायिक, श्राग्नकायिक, वायुकायिक, बादर पृथ्वीकायिक, बादर जलकायिक, बादर श्राग्नकायिक श्रीर बादर वायुकायिक जीवोंमें तिर्यञ्चायुका भक्ष श्रोघके समान है। तथा शेष प्रकृतियोंका भक्ष उत्कृष्टके समान है। बादर पृथिवीकायिक श्रपर्याप्त वादर जलकायिक श्रपर्याप्त, बादर श्राप्तकायिक श्रपर्याप्त, बादर वायुकायिक श्रपर्याप्त, बादर वायुकायिक श्रपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर श्रपर्याप्त, सब सूक्त, वनस्पति कायिक श्रीर निगोद जोवोंमें मनुष्यायुका भक्ष श्रोघके समान है। शेष प्रकृतियोंके बन्धक जीव होते हैं और श्रवन्धक जीव होते हैं। नरकगितसे लेकर संश्रो मार्गणा तक शेष सब मार्गणाश्रोंका भक्ष उत्कृष्टके समान है।

#### इस प्रकार जघन्य भङ्गविचयानुगम समाप्त हुत्रा।

४४९. भागाभाग दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृप्ट । उत्कृप्टका प्रकरण है । इसकी अपेद्या निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे तीन आयु, वैकियिक छह और तीर्थं प्रकृतिके उत्कृप्ट स्थितिके वन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंस्थातवें भाग प्रमाण हैं । अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंस्थात बहुभाग प्रमाण हैं । आहारक शरीर और आहारक आङ्गोपाङ्कके उत्कृप्ट स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संस्थातवें भाग प्रमाण हैं । अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संस्थात बहुभाग प्रमाण हैं । श्रेष्ठ स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संस्थात बहुभाग प्रमाण हैं । श्रेष्ठ स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? अनन्तवें भाग प्रमाण हैं । अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? अनन्तवें भाग प्रमाण हैं । अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? अनन्तवें भाग प्रमाण हैं । इसी प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यञ्च, काययोगी, श्रीदारिककाययोगी, औदारिकमिश्रकाययोगी, काम्यकाययोगी, नपुं सकवेदी, कोधादि चार कषायवाले, मत्यहानो, श्रीदाश्चिती, श्रसंयत, अचक्षुदर्शनी, तीन लेश्यावाले,

१ मृत्वपुतौ संखेजदिभागं ० इति पाठः । २ मृत्वपुतौ श्रखंता भागा इति पाठः ।

त्राहार०-त्र्रणाहारग ति । एवरि त्रोरालियमि०-कम्मइ०-त्र्रणाहार० देवगदिपंचगस्स त्राहारसरीरभंगो । सेसाएं णिरयादि याव सिएए ति ए त्रसंखेजजीविगा तेसि तित्थयरभंगो । एवं ए संखेजजीविगा तेसि त्राहारसरीरभंगो । एइंदिय-वर्णप्कदि-िएयो-दाएं तिरिक्खायु० त्रोघं । सेसाएं पगदीएं मणुसत्रपज्जत्तभंगो ।

#### एवं उकस्सभागाभागं समत्तं।

४५०. जहराणए पगदं। दुवि०--श्रोघे० आदे०। श्रोघे० खवगपगदीणं'
तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा० ज०िड०वं० सव्व० केव? अणंतश्रो भागो।
अज०िड०वं० सव्व० केव० ? अणंता भा०। आहार०--श्राहार०श्रंगो उक्कस्सभंगो।सेसाणं पगदीणं ज०िड०वं० सव्व० केव० ? असंखेजनिद्भागो। अज०िड०वं०
सव्व० केव० ? असंखेजना भागा। एवं श्रोधभंगो कायनोग०--श्रोगलियका०-एावुंस०-कोधादि०४-अचक्खुदं०-भवसिद्धि०-आहारग ति।

४५१. तिरिक्लेसु तिरिक्लगदि-तिरिक्लाणु॰--उज्जो०-णीचा० श्रोघं। संसाणं पगदीणं देवगदिभंगो। एवं तिरिक्लोघभंगो एइंदि॰--श्रोरालियमि०--कम्मइ०-मदि०

भन्य, अभन्य, मिथ्यादृष्टि, श्राद्वारक श्रौर श्रनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रौदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी। श्रौर श्रनाहारक जीवोंमं देवगित पञ्चकका भङ्ग श्राहारक शरीरके समान है। शेष नरकगितसे लेकर संज्ञी मार्गणा तक जिन मार्गणाश्रोंमं जो श्रसंख्यात जीव राशियाँ हैं उनका भङ्ग तोर्थङ्कर प्रकृतिके समान है। तथा इसी प्रकार जो संख्यात जीव-राशियाँ हैं उनका भङ्ग श्राहारक शरीरके समान है। एकेन्द्रिय, वनस्पतिकायिक श्रौर निगोद जीवोंके तिर्यश्रायुक्षा भङ्ग श्रोधके समान है। तथा श्रेष प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्य श्रपर्यातकोंकं समान है।

## इस प्रकार उत्कृष्ट भागाभाग समाप्त हुन्ना।

४४०. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रौर श्रादेश। श्रोघसे चपक प्रकृतियाँ, तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत श्रोर नीचगोत्रके जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं। श्राहारक शरीर श्रौर श्राहारक शाहोपाङ्गका भङ्ग उत्कृष्टके समान हैं। दोप प्रकृतियोंके जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं। श्रसंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। इस प्रकार श्रोधके समान काययोगी, श्रौदारिक काययोगी, नपुंसकवेदी, कोधादि चार कपायवाले, श्रचक्षदर्शनी, भव्य श्रौर श्राहारक जीवोंके जानना चाहिए।

४४१. तिर्यञ्जोंमें तिर्यञ्जगति, तिर्यञ्जगत्यानुपूर्वी, उद्योत श्रीर नीचगोत्रका भंग श्रोघके समान है। शेष प्रकृतियोंका भंग देवगतिके समान है। इस प्रकार सामान्य

१. मृत्तपुतौ –गदीणं तिरिक्खगदीणं तिरिक्ख-इति पाठः । २. मृत्तप्रतौ श्राणंतभा० इति पाठः ।

सुद् ॰ - - असंज ० - तिरिणले ॰ - अवभविस् ० - मिच्छा ॰ - असरिएण ० - अणाहारग ति । स्वारं अरिलियमि ॰ -- कम्मइ० - अणाहार ॰ देवर्गाद् ० ४ - तित्थय० आहारसरीरभंगो । सेसाएं स्पिर्याद याव सरिएण ति ए संखेज जजीविगा ए अ असंखेज जजीविगा तेसि जह० अज ॰ उक्कस्सभंगो ।

## एवं भागाभागं समत्तं।

तिर्यञ्चिकि समान एकेन्द्रिय, श्रौदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी, मत्यश्वानी, श्रुताश्वानी, श्रुसंयत, तीन लेश्यावाले, श्रभव्य, मिश्यादिष्ट, श्रसंदी श्रौर श्रनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रौदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी श्रौर श्रनाहारक जीवोंमें देवगतिचतुष्क श्रीर तीर्थंकर प्रकृतिका मंग श्राहारक श्ररीरके समान है। शेष नरकगतिसे लेकर संजीतक जितनी मार्गणाएँ हैं इनमें जो संख्यात जीव-राशियाँ हैं श्रोर जा श्रसंख्यात जीव-राशियाँ हैं उन सबमें जघन्य श्रोर श्रजघन्यका मंग उत्कृष्ठके समान है।

#### इस प्रकार जघन्य भागाभाग समाप्त हुत्रा । इस प्रकार भागाभाग समाप्त हुत्रा ।

४५२. परिणाम दो प्रकारका है — जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेद्या निर्देश दो प्रकारका है — ओघ और आदेश । ओघ से नरकायु और वैकियिक इहकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । तिर्थक्षायुकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ? अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं । मनुष्यायु, देवायु और तीर्थक्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । यमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । यमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । श्रेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । श्रेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं ? यमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं ? यमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं ? यमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं ? यमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं ? यमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं । इस प्रकार योधके समान सामान्य तिर्यक्च, काययोगी, योदारिक काययोगी, आदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी, नपुंसकचेदी, कोधादि चार कपायवाले, मत्य-दानो, श्रुताक्चाती, असंयत, अचक्षुदर्शनी, तीन लेख्यावाले, भव्य, यभव्य, मिथ्यादिष्ट, याहारक य्रोर अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि कृष्ण और नीललेक्श्यामें

१. मृतपुतौ गोता श्रोरातिय तित्थय १ इति पाठः।

संखेजा। श्रोरालियमि०--कम्मइ०--श्रणाहोर० देवगदि०४--तित्थय० उक्क० श्रणु० हि०बं० केत्ति० ? संखेजा।

४५२. णिरएसु मणसायु० उ० ऋणु० हि०वं० संखेजा । सेसाणं उक्क० ऋणु० के० ? ऋसंखेजा । एवं सन्विणिरय-सन्वदेव० । णविर सन्वद्दसि० सन्वपगदीणं उ० ऋणु० हि०वं० केचि० ? संखेजा ।

४५४. पंचिदियतिरिक्ख०३तिरिण्यायु० उ० द्वि० वं० के त्ति०? संखेजा । त्रणु०- द्वि० वं० के ति० ? असंखेजा । सेसाणं पगदीणं उ० अणु० द्वि० वं० के तिया ? असंखेजा । पंचिदियतिरिक्खअपज्ञत्त० मणुसायु० उ० द्वि० वं० के ति० ? संखेजा । अणु०- द्वि० वं० के ति० ? असंखेजा । सेसाणं उ० अणु० द्वि० वं० के ति० ? असंखेजा । एवं मणुसअपज्ञत्त-सन्वविगतिंदिय० चदुग्हं कायाणं वाद्रवण्ष्किद्पत्तेय० ।

४५५. मणुसेसु दोत्रायु०-वेडव्वियञ्च०-त्राहार ०२-तित्थय० उ० त्रणु० हि०बं० के० ? संखेजा । सेसाणं उ०हि०वं० के०? संखेजा। त्रणु०हि०वं० केत्तिया ? त्रसं-खेजा। भणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु सन्वाणं प्रादीणं दो पदा संखेजा।

४५६. एइंदिय--वराष्फिदि--िर्ग्यादेमु तिरिक्खायु॰ उक्क॰ असंखेजा । अणु०

तीर्थंकर प्रकृतिकी उत्कृष्ट और श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव संख्यात हैं। श्रीदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मणुकाययोगी श्रीर श्रमाहारक जीवोंमें देवगित चतुष्क श्रीर तीर्थंकर प्रकृतिकी उत्कृष्ट श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? संख्यात हैं!

४४३. नारिकयोंमें मनुष्यायुकी उत्कृष्ट श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेप प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? श्रमंख्यात हैं। इसी प्रकार सब नारकी और सब देवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सर्वार्थ- सिद्धिमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं! संख्यात हैं।

४४४. पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चित्रकमं तीन श्रायुश्नोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हें ? संख्यात हैं । श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हें ? श्रसंख्यात हैं । श्रेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्लीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हें ? श्रसंख्यात हैं । पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च श्लपर्याप्त जीयोंमें मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हें ? श्रसंख्यात हैं । श्रेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्लीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हें ? श्रसंख्यात हैं । श्रेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्लीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हें ? श्रसंख्यात हैं । इसी प्रकार मनुष्य श्रपर्याप्त, सब विकलेन्द्रिय, चार स्थावर काय श्लीर वादर वनस्पित कायिक प्रत्येक शरीर जीवोंके जानना चाहिए।

४४४. मनुष्योंमें दो त्रायु, वैक्षियिक छह, त्राहारक द्विक त्रौर तीर्थक्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। त्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं? त्रसंख्यात हैं। त्रमुत्कृष्ट स्थितिके दो पदवाले जीव संख्यात हैं।

४४६. एकेन्द्रिय, वनस्पतिकायिक श्रीर निगोद जीवोंमें तिर्यञ्चायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव स्रसंख्यात हैं। क्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव स्रनन्त हैं। मनुष्यायुकी त्र्राणंता । मणुसायु॰ उक्क॰ त्र्राणु॰ त्र्रोघं । सेसाणं उक्क॰ त्र्राणु॰ त्र्राणंता ।

४५७. पंचिदिय--तसपज्जता०२ तिषिण त्रायु० तित्थय० उ० हि०वं० संखेजा। त्रणु० त्रसंखेजा। त्राहार०२ उक्क० त्रणु० संखेजा। सेसाणं उक्क० त्रणु० त्रसंखेजा। एवं पंचमण०-पंचवचि०-इत्थि०-पुरिस०-चक्खु०-सिषण ति। पंचिदि०-तसत्रपज्जत्त० तिरिक्खभंगो।

४५८. वेउव्वि०-तेउव्वि० [मिस्स०] देवाघं । एवरि मिस्से तिन्थय० दो वि पदा संखेजना । आहार०--आहारमिस्स--अवगदवे०--मएापज्जव०--संजद--सामाइय--छेदोव०-परिहार०-सुहमसं० सब्वपगदीएां उक्क० ऋणु० हि०बं० के० १ संखेजना ।

४५६. विभंगे तिरिएश्यायु० उ० हि॰ बं० के० ? संखेजना । त्रापु० के० ? असंखेजना । सेसाएं उक्क॰ अणु॰ हि० बं० केति० ? असंखेजना । आभि०-सुद०-ओधि० मणुसायु०-आहार०२ दो वि पदा संखेजना । देनायु०--तित्थय० उ० हि० बं केति० ? संखेजना । अणु० असंखेजना । सेसाएं उ० अणु० हि० बं० के० ? असंखेजना । एवं ओधिदं०-सम्मादि०-नेदगसम्मा०-[ उनसमसम्मा० । ] एवरि उनसमस० आहार०२-तित्थय० दो वि पदा संखेजना । संनदासंनदेसु देनायु० उ० हि० बं० संखेजना । अणु० उत्कृष्ट और अनुन्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुन्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव अनन्त हैं।

४४७. पञ्चेन्द्रिय, पञ्चेन्द्रियपर्याप्त, त्रस और त्रसपर्याप्त जीवोंमें तीन आयु और तीर्थद्धर प्रकृतिकी उन्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यात हैं। अनुन्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव असंख्यात हैं। आहारक द्विककी उन्कृष्ट और अनुन्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी उन्कृष्ट और अनुन्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव असंख्यात हैं। इसी प्रकार पांच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी चनुदर्शनी और संबी जीवोंके जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त और त्रस अपर्याप्त जीवोंमें तिर्यञ्चोंके समान भक्त है।

8५८. वैक्रियिक काययोगी और वैक्रियिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य देवोंके समान भक्त है। इतनी विशेषता है कि वैक्रियिक मिश्रकामयोगमें तीर्थंकर प्रकृतिके दोनों ही पदवाले जीव संख्यात हैं। श्राहारक काययोगी, श्राहारक मिश्रकाययोगी, श्रापतवेदो, मनःपर्ययञ्चानी, संयत, सामियक संयत, छेदोपस्थापना संयत, परिहारविशुद्धि संयत श्रीर सूक्ष्मसाम्पराय संयत जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? संख्यात हैं।

४४९ विभन्न ज्ञानी जीवोंमें तीन श्रायुश्रोंकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं। संख्यात हैं। श्रनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं। श्रसंख्यात हैं। श्रेष प्रकृतियों को उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव कितने हैं। श्रसंख्यात हैं। श्राभिनिवोधिक ज्ञानो, श्रुतज्ञानो श्रीर अवधिज्ञानो जीवोंमें मनुष्यायु श्रीर श्राहारक द्विकके दोनों ही पदवाले जोव संख्यात हैं। देवायु श्रीर तोर्थंकर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। श्रेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर श्रुनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। श्रेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर श्रुनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। इसी प्रकार श्रवधिदर्शनी, सम्यग्- हिए, वेदक सम्यग्हिष्ट श्रीर उपशमसम्यग्हिष्ट जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उपशम सम्यग्हिष्ट जीवोंमें श्राहारक द्विक श्रीर तोर्थंक्कर प्रकृतिके दोनों ही पदवाले जीव संख्यात हैं। स्यतासंयत जीवोंमें देवायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। श्रुनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यात हैं। श्रुनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यात हैं। श्रुनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यात हैं। श्रुनुत्कृष्ट प्र

श्रमंखेजा। तित्थय० दो वि पदा संखेजा। सेसाग्रं उक्त० श्रग्रु ० हि० व० श्रमंखेजा।

४६० तेउ-पम्मासु मगुसायु० देवोघं। देवायु० उ०डि०व० संखेजा। अगु० असंखेजा। सेसाणं उ० अगु०डि०वं० के० ? असंखेजा। सुझाए खहगे दोआयु०-आहार०२ दो पदा संखेजा। सेसाणं उक० अगु० असंखेजा। सासणे तिरिक्त-देवायु० उक० संखेजा। अगु०डि०वं० असंखेजा। मगुसायु० दो विपदा संखेजा। सेसाणं उक्क० अगु० असंखेजा। सम्मामिच्छा० सम्वाणं उक्क० आगु० असंखेजा। असण्णीसु णिरय—देवायु० उक० अगु० असंखेजा। आगु० असंखेजा। सिमाणं अणेता। सेसाणं श्रोघं।

## एवं उक्तस्सपरिमाणं समत्तं।

४६१ जहण्णए पगदं । दुवि०-स्रोघे० श्रादे० । श्रोघे० पंचणा०-चदुदंसणा०-सादा०-चदुसंज०-पुरिस०-जस०-उचा०-पंचंत० जह०ट्टि०वंधगा केत्तिया ? संखेजा। श्रज० केत्ति०? श्रणंता० । तिण्णि श्रायु०-वेउ व्वियञ्च० जह० श्रज० ससंखेजा । श्राहार० २ उक्तस्सभंगो । तित्थय० ज०द्वि० संखेजा । श्रज० श्रसंखेजा । तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उजो०-णीचा० जह० श्रसंखेजा । अज० श्रणंता। सेसाणं जह० श्रज०

स्थितिके बंधक जीव श्रसंख्यात हैं। तीर्थङ्कर प्रकृतिके दोनों ही पदवाले जीव संख्यात हैं। शेप प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट ख्रोर श्रमुदकृष्ट स्थितिके बंधक जीव श्रसंख्यात है।

४६०. पीत और पद्म लेश्या में मनुष्यायुका भंग सामान्य देवोंके समान है। देवायुकी उत्कृष्ट श्वितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। अनुत्कृष्ट श्वितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट श्वितिके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। शुक्त लेश्या और ज्ञायिक सम्यग्दिष्ट जीवोंमें दो आयु और आहारक द्विक्के दोनों ही पदवाले जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट श्विति के बन्धक जीव असंख्यात हैं। सासादन सम्यक्त्वमें तियञ्चायु और देवायुकी उत्कृष्ट श्वितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। मनुष्यायुके दोनों ही पदवाले जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट श्वितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। सम्यग्मिथ्यादृष्ट जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट श्वितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। सम्यग्मिथ्यादृष्ट जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट श्वितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। तियंवचायुकी उत्कृष्ट श्वितिके बंधक जीव असंख्यात हैं। तियंवचायुकी उत्कृष्ट श्वितिके बंधक जीव असंख्यात हैं। आनुकृष्ट श्वितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। श्विप्वचित्रं सिव्विके बंधक जीव असंख्यात हैं। आनुकृष्ट श्वितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। श्विप्वच्चायुकी उत्कृष्ट श्वितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं।

#### इस प्रकार उत्कृष्ट परिमाण समाप्त हुआ।

४६१. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—स्रोघ स्रोर स्रादेश। स्रोघसे पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, साता वेदनीय, चार सङ्ज्वलन, पुरुपवेद, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र स्रोर पांच अन्तरायकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। स्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? अन्तरत हैं। तीन स्रायु स्रोर वैक्रियिक छहकी जघन्य स्थित अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव स्रसंख्यात हैं। स्राहारक द्विकका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। तीर्थ हुर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। स्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीव स्रसंख्यात हैं। त्रयञ्चगित, तिर्यक्ष्यात्यानुपूर्वी, उद्योत स्रोर नीचगोत्रकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव स्रसंख्यात हैं। स्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीव स्रसंख्यात हैं। स्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीव स्थननत है। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थित के बन्धक जीव वन्धक जीव

अर्णता । एवं ओघभंगो कायजोगि-श्रोरालि०-एवंस०-कोघादि०४-अवस्तु०-अवसि०-आहारगे ति । सवरि ओरालि० वित्यस्० उकस्सभंगो ।

४६२ शिरएसु उक्कस्सभंगो । तिरिक्खेसु तिण्णिश्चायु ०-वेउन्वियछ०-तिरिक्खगदि ४ भोषं । सेसाणं जह० श्रज० श्रणंता । सन्वपंचिदियतिरिक्खेसु सन्वपगदीणं जह० श्रज० श्रमंखेजा । एवं पंचिदिय०तिरिक्खभंगो सन्वश्रपज्जत्त-विगलिदि० चदुण्णं कायाणं बादरवर्गण्कदिपत्ते० ।

४६३ मणुसेसु खिविगाणं जह० संखेजा। श्रज० श्रसंखेजा। दो श्रायु-वेउव्वियछ०-श्राहार०२-तित्थय० दो पदा संखेजा। सेसाणं दो वि पदा श्रसंखेजा। मणुसपज्जत्त --मणुसिग्णीसु उक्कस्सभंगो।

४६४ एइंदि० तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु-उज्जो०-ग्गीचा० श्रोघं । सेसाणं जह० अज० अयांता । एवं सन्ववगण्फदि-णियोदाणं । गावरि तिरिक्खगदि०४ जह० श्रज० अगंता ।

४६५ पंचिदिय-तस०२ खिनगाणं तित्थय० जह० संखेजा । अज० असंखेजा। भाहार०२ त्रोघं । सेसाणं जह० अज० असंखेजा।

४६६ पंचमण-तिण्णिवचि० पंचणा०-- णवदंसणा०--सादासाद०--चदुवीसमोह०-

म्रानन्त हैं। इसीप्रकार श्रोधके समान काययोगी, श्रोदारिककाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, श्रचजुदर्शनी, भन्य श्रीर श्राहारक जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रोदारिक काययोगमें तीर्थङ्कर प्रकृतिका भन्न उत्कृष्टके समान है।

ध६२. नारिकयोंमें उत्कृष्टके समान भक्क है। तिर्यक्कों में तीन श्रायु, वैक्रियिक छह, तिर्यव्चगति चारका भंग श्रोघके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जवन्य श्रौर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीव श्रमन्त हैं। सब पब्चेन्द्रिय तिर्यव्चोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य श्रौर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीव श्रमंख्यात हैं। इसी प्रकार पब्चेन्द्रिय तिर्यक्कि समान सब अपर्याप्त, विकत्नेन्द्रिय, चारकायवाले श्रौर बादर वनस्पितिकायिक प्रत्येक शरीर जीवोंके जानना चाहिए।

४६३. मनुष्योंमें त्तपक प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। दो आयु, वैक्रियिक छह, आहारकद्विक और तीथक्कर प्रकृतिके दो पदवाले जीव संख्यात हैं। तथ। शेष प्रकृतियोंके दोनों ही पदवाले जीव असंख्यात हैं। समुख्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भक्क उत्कृष्टके समान है।

४६४ एकेंद्रियोंमें तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत श्रौर नीचगोत्रका भक्क श्रोघके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य श्रौर श्रजघन्य स्थितिके बंधक जीव श्रमंत हैं। इसी प्रकार सब वनस्पतिकायिक श्रौर निगोद जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगति चतुष्ककी जघन्य श्रौर श्रजघन्य स्थितिके बंधक जीव श्रमंत हैं।

४६४ पंचेंद्रिय, पंचेंद्रियपर्याप्त, त्रस श्रौर त्रसपर्याप्त जीवोंमें चपक प्रकृतियों श्रौर तीर्थक्टर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यात हैं। श्राहारद्विकका भंग श्रोघके समान है। तथा शेप प्रकृतियों की जघन्य श्रौर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यात है।

४६६. पांच मनोयोगी श्रोर तीन वचनयोगी जीवोंमें पांच झानावरण, नौ दर्शनावरण.

देवगदि--पंचिदिय०--वेउव्विय--तेजा०--क०--समचदु०-- वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-दे-वाणु०--अगु०४--पसत्थ-०तस०४--थिराथिर-सुभासुभ-सुभग - सुस्सर - धादेज्ज-जस०-भजस०--णिमि०--तित्थय०--उच्चा०--पंचंत० जह० संखेज्जा। भज० असंखेज्जा। आहारदुगं श्रोघं।सेसाणं दो वि पदा असंखेज्जा। विचजो०-असचमो०-इत्थि०-पुरिस० पंचिदियभंगो । णवरि इत्थि० तित्थय० जह० अज०संखेज्जा।

४६७ श्रोरालियमि०-क्रम्मइ०-श्रणाहार० तिरिक्लोघं। णवरि देवगदि०४तित्थय० उक्कस्सभंगो । वेउव्वि०-वेउव्वियमि०-आहार०-श्राहारमि०-श्रवगद०-मणपज्ञव०-संजद-सामाइ०-छेदोव०-परिहार०-सुहुमसंप० उक्कस्सभंगो। मदि-सुद०-श्रसंज०तिणिणले०-श्रब्भवसि०-मिच्छादि०-श्रसणिण० तिरिक्लोघं। णवरि श्रसंजद० तित्थय०
जह० संखेजा। श्रज० श्रसंखेजा। किण्ण०-णील० तित्थय० जह० संखेजा। काऊए
तित्थय० दो वि पदा श्रसंखेजा।

४६८. विभंगे पंचणा०-णवदंसणा०-सादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-देवगदि--पसत्थष्ठावीस-उचा०-पंचंत० जह० संखेजा। अज० असंखेजा। सेसाएां जह०

सातावेदनीय, श्रसातावेदनीय, चोवीस मोहनीय, देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैकियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्न संस्थान, वैकियिक श्रांगांपांग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलयु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रमचतुष्क, स्थिर, श्रस्थिर शुभ, श्रश्चभ, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, यशःकीति, त्रथशःकीर्ति, निर्माण, तीर्थकर, उच्चगति श्रोर पाँच अन्तराय इनकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीव संख्यात है। तथा अजवन्य स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यात है। श्राहारक द्विकका भंग श्रोवके समान है। तथा शेप प्रकृतियोंके दोनों ही पदवाले जीव श्रमंख्यात हैं। वचनयोगी, श्रात्यस्यावचनयोगी, स्त्रीवेदी श्रोर प्रकृतियों जीवों में भंग पञ्चेन्द्रयों के समान है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेदियोंमें तीर्थक्कर प्रकृतिकी जधन्य श्रोर श्रजवन्य स्थितिके बन्धक जीव सख्यात है।

४६७ श्रोदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी श्रोर अनाहारक जीवोंका भंग सामान्य तिर्यवचोंके समान है। इतनी विशेषता है कि दंवगित चतुष्क श्रोर तीर्थकर प्रकृति का भंग उत्कृष्टके समान है। वैक्रियिक काययोगी, वेक्रियिक मिश्रकाययोगी, श्राहारक काययोगी, श्राहारक काययोगी, श्राहारक काययोगी, श्राहारक मिश्रकाययोगी। श्राप्तावेदी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिक संयत, छेदोप थापनासंयत, परिहार्रावशुद्धिसंयत श्रोर सूक्ष्मसाम्पराय संयत जीवोंमें श्रापनी सब प्रकृतियोंका भंग उत्कृष्टके समान है। मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, श्रुसंयत, तीन तेश्यावाले, श्रुमच्य मिथ्याद्यां श्रु श्रुमंत्री जीवों में श्रुपनी सब प्रकृतियोंका भंग सामान्य तिर्यवक्षेत्र समान है। इतनी विशेषता है कि असंयतोंमें तीथङ्कर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीव संस्थात है। तथा श्रु जघन्य स्थितिके वन्धक जीव संस्थात है। तथा श्रु जघन्य श्रुपतिके वन्धक जीव श्रुसंस्थात है। कापात है। कापात लेश्यामें तीथङ्कर प्रकृतिकी जघन्य श्रार श्रुजवन्य स्थितिके वंधक जीव संस्थात है। कापात लेश्यामें तीथङ्कर प्रकृतिके दोनों ही परवाले जीव श्रुसंस्थात है।

४६८ विभंगज्ञानी जीवोंमें पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, पांच नोकषाय, देवगति त्र्यादि प्रशस्त त्र्यट्टाईस प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र ऋार पाच अन्तराय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। तथा श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीव श्रजि श्रसंखेजा। श्रामि-०सुद०-श्रोधि०-मणुसायु०-ग्राहारदुगं उक्कस्सभंगो। मणुसग-दिपंचगं देवायु० ज० श्रज० श्रसंखेजा। सेसाणं ज० संखेजा। अज० [श्रसंखेजा]। एवं भोधिदंस०-सम्मादि०-खइग०-वेदग०-उवसम०। ग्रविर खइगे दो श्रायु० उवसमे यथासंखाए तित्थय० उक्कस्सभंगो। चक्खुदं० तसपजत्रभंगो।

४६९. तेऊए इत्थि०-णवुंस०-तिरिक्ख-देवायु--तिरिक्खगदि०४--मणुसगदिपंचग-एइंदि०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-त्रादाव०-अप्पसत्थ०-थावर-दृभग-दुस्सर-श्रणादे० ज० श्रज० श्रसंखेजा । सेसाणं ज० संखेजा । श्रज० श्रसंखेजा । मणुसायु-श्राहारदुगं दो वि पदा संखेजा । एवं पम्माए वि । ग्यविर एइंदियतिगं वज । सुक्काए इत्थि०-ग्युंस०-मणुसगदिपंचग-पंचसंठा०- पंचसंघ०- श्रप्पसत्थ०- दृभग - दुस्सर -- श्रणादे० ग्रीचा० ज० श्रज० श्रसंखेजा । दोश्रायु-श्राहारदुगं उक्कस्सभंगो । सेसाणं जह० संखेजा । श्रज० श्रसंखेजा ।

४७०. सासग् ०-सम्मामि० पसत्थाणं ज० अज० असंखेजा। मगुसायु० उकस्सभंगो। सण्णीसु खनिगाणं देनगदि०४-तित्थय० जह० संखेजा। अज०

श्रसंख्यात हैं। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्रजगन्य स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यात हैं। श्रामिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी श्रीर श्रवधिज्ञानी जीवोंमें मनुष्यायु श्रीर श्राहारकद्विकका भंग उत्कृष्टके समान है। मनुष्यगित पञ्चक श्रीर देवायुकी जघन्य श्रीर श्रजधन्य स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यात हैं। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीव संख्यात हैं। श्रीर श्रजधन्य स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यात हैं। इसी प्रकार श्रवधिद्शनी, सम्यग्दृष्टि, ज्ञायिकसम्यग्दृष्टि, वेदक सम्यग्दृष्टि श्रीर उपशामसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि ज्ञायिक सम्यग्दृष्टि जीवोंमें दो श्रायु श्रीर उपशाम सम्यग्दृष्टि जीवोंमें कमसे तीर्थकर प्रकृतिका भंग उत्कृष्टके समान है। चुद्धदर्शनवाले जीवोंका भंग त्रस पर्याप्तकोंके समान है।

४६६. पीतलेश्यावाले जीवोंमें स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, तिर्यव्चायु, देवायु, तिर्यव्चार्ता चतुष्क, मनुष्यगतिपंचक, एकेन्द्रिय जाति, पांच संस्थान, पांच संहनन, श्रातप, श्रप्रशास्त विहायोगिति, स्थावर, दुमंग, दुस्वर, श्रनादेय प्रकृतियोंकी जघन्य श्रोर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं और श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यात हैं। मनुष्यायु श्रोर श्राहारकद्विकके दोनों ही पदवाले जीव संख्यात हैं। इसी पद्मलेश्यावाले जीवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है एकेन्द्रियत्रिकको छोड़कर कहना चाहिए। श्रुक्तलेश्यावाले जीवोंमें स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, मनुष्यगतिपञ्चक, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगित, दुभंग, दुःस्वर, श्रनादेय श्रोर नीचगोत्रकी जघन्य श्रोर श्रजघन्य स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यात हैं। दो श्रायु श्रोर श्राहारकद्विकका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यात हैं।

४७०. सासादनसम्यग्हिष्ट श्रीर सम्यग्निध्याहिष्ट जीवोंमें प्रशस्त प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके बन्ध क जीव श्रसंख्यात हैं। मनुष्यायुका भङ्ग चत्कृष्टके समान है। संज्ञी जीवोंमें ज्ञपक प्रकृतियाँ, देवगति चार श्रीर तीथंड्कर प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। श्राहारकदिकका भङ्ग श्रोधके समान है। शेष असंखेडना । आहारदुगं ओघं। सेसाएां जह० अज० असंखेजा । एवं पित्माएां समत्तं । स्वेत्तपरूपा

४७१. खेत्तं दुवि०-जह० उक्क० ! उक्कस्सए पगदं । दुवि०-श्रोघे० श्रादे० । श्रोघेण तिष्णि श्रायुगाणं वेर्जाव्यछ०-ग्राहारदुग-तित्थय० उक्क० श्रणु० हि० केर्नाड खेत्ते ? लोगस्स श्रसंखेजिदिमागे । सेसाणं उक्क० लोगस्स श्रसंखेजिदिमागे । श्रणु० सव्वलोगे । एवं श्रोघभंगो तिरिक्खोघो कायजोगि-श्रोरालि०-श्रोरालियमि०-कम्मह०-ण्युंस० - कोषादि०४-मदि०-सुद०-श्रसंज० - श्रचक्खु०- तिष्णिले०-भवस०-श्रव्यक्सि०-मिच्छादि०-श्रस्णिण०-श्राहार०-श्रणाहारग ति । ण्यिर किण्ण०-णील०-काउ० तित्थय० उक्क० श्रणुक्क० लोगस्स श्रसंखेजिदिमागे ।

४७२ एइंदिएसु पंचणा०-णवदंस०-सादासाद०-मोहणीय०२४-तिरिक्खगदि-एइंदि०-त्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०-वरण०४- तिरिक्खाणु०-त्रगु०४-थावर-सुहुम-पज्जतापज्जत्त-पत्ते०- साधार०-थिराथिर - सुभासुभ-दूभग-त्रणादे०-त्रज०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० उक्क० त्रणु० सव्वलोगे। इत्थि०-पुरिस०-चदुजादि-पंचसंठा०-त्रोरालि०त्रंगो०-छ्रसंघ०-त्रादाउज्जो०-दोविहा०-तस-बादर- सुभग-सुस्सर-दुस्सर-त्रादेज ०-जस० उक्क० लोग० संखेज०। श्रणु० सव्वलोगे। तिरिक्ख-

प्रकृतियोंकी जघन्य और श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। परिमाण समाप्त हुआ।
चेत्रप्रस्पणा

४७१. चेत्र दो प्रकारका है—जघन्य श्रोर उत्कृष्ट । उत्कृष्ट का प्रकरण है । उसकी श्रपेचा निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रोर श्रादेश । श्रोघसे तीन श्रायु, वैक्रियिक छह, श्राहारकिंद्रक श्रोर तीर्थकरकी उत्कृष्ट श्रोर श्रनुत्कृष्ट न्थितिके बन्धक जीवोंका कितना चेत्र है ? लोकका श्रसंख्यानवाँ भाग चेत्र है । शेप प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र सब लोक है । इस प्रकार श्रोघके समान सामान्य तियश्च, काययोगी, श्रोदारिक काययोगी, श्रोदारिक मिश्र काययोगी, कामणकाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रताज्ञानी, श्रसंयत, श्रचज्जदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, श्रभव्य, मिथ्यादृष्टि, श्रसंज्ञी, श्राहारक श्रोर श्रनाहारक जीवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि कृष्ण, नील श्रोर कापात लेश्यामें तीथङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट श्रोर श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है ।

४७२. एकेन्द्रियोंमें पाँच ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, सातावेदनीय, श्रसातावेदनीय, चौवीस मोहनीय, तिर्यञ्च गति, एकेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कामण शरीर, हुएडसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, स्थावर, सूहम, पर्याप्त, श्रपयाप्त, प्रत्येक, साधारण, स्थिर, श्रस्थर, श्रुम, श्रशुम, दुर्मग, श्रनादेय, श्रयशाकीति, निर्माण, नीचगोत्र श्रौर पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट श्रोर श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र सव लोक है। स्त्रीवेद, पुरुपवेद, चार जाति, पाँच संस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गापङ्ग, छह सहनत, श्रातप, उद्योत, दो विहायोगिति, त्रस, बादर, सुमग, सुम्बर, दुम्बर, श्रादेय श्रोर यशःकीति इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण है। तथा श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक

मणुसायु॰--मणुसगदि-मणुसाणु॰--उचा॰ श्रोघं । बादरएइंदियवज्जतायज्जत॰ थावरपगदीणं उक्क॰ श्रणु॰ सन्वलो॰ । मणुसायु॰-मणुसगदि-मणुसाणु॰--उचा॰ उक्क॰ श्रणु॰ लोग॰ श्रसंखेज्ज॰ । तिरिक्खायु॰ उक्क॰ लोग॰ श्रसंखेज्ज॰ । श्रणु॰ लोग॰ संखेजिदि॰ । सेसाणं उक्कः श्रणु॰ लोग॰ संखेजिदि॰ । सेसाणं उक्कः श्रणु॰ लोग॰ संखेजिदि॰ । सेसाणं उक्कः श्रणु॰ लोग॰ संखेजिदि॰ । सुहुमएइंदिय-पज्जता-पज्जत्त । तिरिक्ख-मणुसायु श्रोघं । सेसाणं सन्वपगदीणं उक्क॰ श्रणु॰ सन्वलोगे । एवं सन्वसुदुमाणं ।

४७३ पुढिवि०-श्राउ०-तेउ०-वाउ० सन्त्राणं श्रोघं। बादरपुढिविका०-श्राउ०तेउ०-वाउ०-वादरवणप्किदिपत्ते० थावरपगदीणं उक्क० लो० श्रसंखेज्ज०।
श्रणु० सन्वलो०। तिरिक्खायु०-तसपगदीणं उक्क० श्रणु० लो० श्रसंखेज०।
बादरपुढिवि-०श्राउ०-तेउ-वाउ०-वादरवणप्किदिपत्ते०पन्जत्ता० विगलिदियभंगो।
बादरपुढिवि०-श्राउ०-तेउ०-वाउ०-वादरवणप्किदिपत्ते०श्रपन्जत्ता० थावरपगदीणं उक्क० श्रणु० सन्वलो०। मणुसायु० श्रोघं। तिरिक्खायु० तसपगदीणं च

जीवोंका चेन्न सब लोक है। तिर्यञ्चायु, मनुष्यायु, मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रोर उच्चगोत्रका भंग श्रोघके समान है। बादर एकेन्द्रिय श्रोर इनके पर्याप्त श्रोर श्रपर्याप्त जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रोर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र सब लोक है। मनुष्यायु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रोर उच्चगोत्रकी उत्कृष्ट श्रार श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। तियञ्चायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके संख्यातवें भागप्रमाण है। रोप प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रोर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके संख्यात बहुभाग प्रमाण है। सूदम एकेन्द्रिय श्रोर इनके पर्याप्त श्रोर श्रपर्याप्त जीवोंका चेत्र लोकके संख्यात बहुभाग प्रमाण है। सूदम एकेन्द्रिय श्रोर इनके पर्याप्त श्रोर श्रमुत्कृष्ट स्थितिसे बन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। इसी प्रकार सब सूदम जीवोंके जानना चाहिए।

४७३. पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अप्रिकायिक, और वायुकायिक जीवोंमें सब प्रकृतितियों का भङ्ग आंघके समान है। वादर पृथ्वीकायिक, वादर जलकायिक, वादर अप्रिकायिक,
वादर वायुकायिक आर वादर वनिस्पितिकायिक प्रत्येक शरीर जीवों में स्थावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट
स्थितिके बन्धक जीवों का क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अनुःकृष्ट स्थितिके वन्धक
जीवों का क्षेत्र सब लोक है। तियञ्चायु और त्रसप्रकृतियों की उत्कृष्ट अोर अनुःकृष्ट स्थितिके
बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। वादर पृथ्वीकायिक पर्याप्त, वादर
जलकायिक पर्याप्त, वादर अप्रिकायिक पर्याप्त, वादर वायुकायिक पर्याप्त और वादर वनस्पितकायिक
प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंका भङ्ग विकतेन्द्रिय जीवोंके समान है। वादर पृथ्वीकायिक
अपर्याप्त, वादर जलकायिक अपर्याप्त, वादर अप्रिकायिक
अपर्याप्त, बादर जलकायिक अपर्याप्त, वादर अप्रिकायिक
अपर्याप्त, और वादर वनस्पितकायिक प्रत्येकशरीर अपर्याप्त, वादर वायुकायिक
अपर्याप्त, और वादर वनस्पितकायिक प्रत्येकशरीर अपर्याप्त जीवोंमें स्थावर
प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका सेत्र सब लोक है। मनुष्यायुका
भङ्ग ओघके समान है। तियञ्चायु और त्रस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके
बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोक के असंख्यातवें भाग प्रमाण है। इतनी विशेषता है कि बादर वायु-

संखेज । सेसाणं यम्हि लोगस्स असंखेज ० तम्हि लोगस्स संखेज ० काद्वो । वणप्किदि-णियोद ० थावरपगदीणं उक्त ॰ श्रणु ० सव्वलो ० । मणुसायु ० श्रोघो । तिरिक्खायु ० - तसपगदीणं लोग ० श्रसंखेज ० । श्रणु ० सव्वलोगे । बादरवणप्किदि-णियोद ० पज्जतापज्जतगाणं च बादरपुढवि०श्रपज्जतभंगो । सेसाणं णिरयादि याव सिंग्णि ति संखेजासंखेजरासीणं उक्त ० श्रणु ० लोग ० श्रसंखेजदिभागे ।

# एवं उकस्सं समत्तं

४७४ जहरूणए पगदं । दुवि०-श्रोघे॰ श्रादे० । श्रोघे० पंचणा०--चदुदंसणा०--सादा०-चदुसंज०-पुरिस०-मणुसगदि-मणुसाणु०-जस०-उच्चा०-पंचंत० जह० लो० श्रसंखेज्ज० । श्रज० सव्वलोगे । तिरिणश्रायु०-वेउव्वियछ०-श्राहारदुग-तित्थय० जह० श्रज० उक्कस्सभंगो । तिरिक्खायु०--सुहुमणाम० ज० श्रज० सव्वलो० । सेसाणं ज० लो० संखेज्ज० । श्रज० सव्वलो० । एवं श्रोघमंगो कायजोगि-श्रोरालि०-णावुंस० कोधादि०४--श्रवक्खु०--भवसि०--श्राहारग ति ।

8७५ तिरिक्खेसु वेउन्वियञ्च०-तिरिग्ण्यायु०-मणुस०-मणुस।णु०--उचा० योघं। तिरिक्खायु०--सुहुभणामाणं जह० अज० सव्वलो०। सेसाणं योघं। एवं एइंदि०-कायिक जीवों में आयुकी अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण है। शेष प्रकृतियोंके बन्धक जीवोंका जहाँ लोकका असंख्यातवां भाग चेत्र कहा है वहाँ वह लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण जानना चाहिए। वनस्पितकायिक और निगोद जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंको उत्कृष्ट और अनुकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र सब लोक है। मनुष्यायुका भंग श्रोषके समान है। तिर्यञ्चायु और त्रस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवों चेत्र सब लोक है। बादर वनस्पितकायिक और निगोद जीव तथा इनके पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंका भंग बादर पृथ्वीकायिक अपर्याप्त जीवोंके समान है। शेप नरकर्गातसे लेकर संज्ञी मार्गणा तक संख्यात और असंख्यात राशिवाले जीवोंमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके असंख्यात वे भाग प्रमाण है। इस प्रकार उत्कृष्ट चेत्र समाप्त हुआ।

४०४. जघन्यका प्रकरण है। उसको अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ और आदेश। श्रोघसे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार सक्जवलन, पुरुषवेद, मनुष्यागित, मनुष्यगत्यानुपूर्जी, यशःकीर्ति, उद्यगीत्र और पाँच अन्तराय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका त्रेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका त्रेत्र सब लोक है। तीन आयु, विक्रियिक छह, आहारकिष्ठक और तीर्थक्कर इनकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका त्रेत्र उत्कृष्टके समान है। तिर्थक्कायु और सूदम इनकी जघन्य आर अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका त्रेत्र सब लोक है। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका त्रेत्र सब लोक है। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका बन्धक जीवोंका त्रेत्र स्थातके संख्यातवें भागका प्रमाण है और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका त्रेत्र सब लोक है। इसी प्रकार आघके समान काययोगी, औदिरिक काययोगी, नपुंसकवेदी, कोधादि चार कपायवाले, अचन्नुदर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

नगवाद पार प्रधानपाल, जनखुरस्या, सन्ध्याति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रोर उच्चगोत्रका भङ्ग ४७४. तियञ्जोमें वैक्रियिक छह, तीन श्रायु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रोर उच्चगोत्रका भङ्ग सोषके समान है। तिर्यञ्जायु श्रोर सूद्मकी जघन्य श्रोर श्रजघन्य स्थितिके बंधक जीवाँका चेत्र सब बादरएइंदि०-पड्जत्तापड्जत्त०। थावरपगदीग्यं च एवं चेव । तिरिक्खायु०-तसपगदीग्यं च ज॰ श्रज॰ लोग० संखेडज०। मणुसायु-मणुसगदिदुग० दो पदा लोग० श्रसंखेजज०। सञ्बसुणुपाग्यं मणुसायु० श्रोघं। सेसाग्यं सञ्चपगदीग्यं ज० श्रज० सञ्बलो०।

४७६ पुढवि०--म्राउ०-तेउ०--वाउ० तिरिक्ख-मणुसायु० श्रोघं।सेसाणं ज० लो० श्रसं०। श्रज० सन्वलो०। बादरपुढवि०-श्राउ०-तेउ०-वाउ० थावरपगदीणं ज० लो० श्रसंखे०। श्रज० सन्वलो०। सेसाणं ज० श्रज० लोग० श्रसंखे०। बादरपुढवि०--श्राउ०--तेउ०--वाउ०पञ्जत्त० विगलिदियभंगो। बादरपुढवि०--श्राउ०--तेउ०--वाउ०-श्रपजत्त० थावरपगदीणं जह० लोग० श्रसंखे०। श्रज० सन्वलो०। दोश्रायु०-तसपगदीणं जह० श्रज० लोग० श्रसंखे०। सुहुमं दो वि सन्वलोगे। णविर वाऊणं सन्वत्थ जह० लो० श्रसंखे० तिम्ह लोगस्स संखेजिदिमागं कादन्वं। वणप्किदिण्योदाणं दोश्रायु०--सुहुमणाम० श्रोघं। सेसाणं ज० लो० श्रसंखेज०। श्रज०

लोक है। शेष प्रकृतियोंका भक्क श्रोघके समान है। इसीप्रकार एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय श्रौर इनके पर्याप्त अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए। स्थावर प्रकृतियोंका च्रत्र इसी प्रकार है। तिर्यव्चायु श्रौर त्रस प्रकृतियों की जपन्य श्रौर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका च्रेत्र लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण है। मनुष्यायु श्रौर मनुष्यगतिद्विक इनके दोनों ही पदोंका च्रेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। सब सूद्म जीवोंके मनुष्यायुका भंग श्रोघके समान है। शेष सब प्रकृतियोंकी जघन्य श्रौर श्रजघन्य स्थितिक बन्धक जीवोंका च्रेत्र सब लोक है।

४७६. पृथ्वीकायिक, जलकायिक, श्रिग्निकायिक श्रीर वायुकायिक जीवोंमें तियेश्वाय श्रीर मनुष्याय का भंग श्रोधक समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य श्थितिके बन्धक जीवोंका ज्ञेत्र लोकके ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण है और अजघन्य स्थित के वन्धक जीवों का चेत्र सब लोक है। बादर प्रथिवीकायिक, बादर जलकायिक, बादर अग्निकायिक और बादरवायकायिक जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके असंख्यातवे भाग प्रमाण है श्रीर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र सब लोक है। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका चेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। बादर पृथ्वीकायिक पर्याप्त. बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त श्रीर बादर वायुकायिक पर्याप्त जीवोंमें श्रपनी सब प्रकृतियोंका भन्न विकलेन्द्रियोंके समान है। बार्र पृथ्वीकायिक अपर्याप्त, बार्र जलकायिक अपर्याप्त. बादर आंग्नकायिक अपर्याप्त और वादर वायुकायिक अपर्याप्त जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके असंस्थातवें भाग प्रमाण है और अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र सब लोक है। दो स्रायु स्रोर त्रस प्रकृतियोंकी जघन्य स्रोर स्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। सूदमके दोनों ही पदवाल जीवोंका चेत्र सब लोक है। इतनी विशेषता है कि वायुकायिक जीवोके सर्वत्र जहाँ लोकका असंख्यातवां भाग चेत्र कहा है वहाँ लोकका संख्यातवां भाग चेत्र करना चाहिए। वनस्पतिकायिक और निगोद जीवोंमें दो त्राय त्रौर सदमनामकी त्रपेचा चेत्र त्रोघके समान है। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंको नेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है और अजधन्य स्थितिके बन्धक

सन्बलो० । बादरवराष्फिदि-शियोदार्गं पञ्जत्तापञ्जत्ता० थावरपगदीर्गं ज० लो० असंखेज्ज०। अज० सम्बलो०। सेसार्गं पगदीर्गं ज० अज० लोग० असंखेज्ज०। सुदुम० दो वि पदा सन्बलो०। बादरवराष्फिदिपत्ते० बादरपुढविभंगो।

४७७. श्रोरालियमि० तिरिक्ख-मणुसायु-मणुसगदि-मणुसाणु-देवगदि०४-तित्थ-य०--उच्चा० श्रोघं। सेसागं तिरिक्खोघं। एवं कम्मइ०-प्रगाहारग ति।मदि०-सुद०-श्रसंजतिष्णि०-श्रब्भवसि०-मिच्छादि०-श्रस्यिण् विरिक्खोघं। सेसागं गिरयादि याव स्याग् संवेजजासंखेजजरासीगं जह० श्रज्ज० लो० श्रसंखेजज०। एवं खेतं समतं

# **फोसगापरूवगाा**

४७८. फोसणं दुवि०-जह० उक्क० । उक्कस्सए पयदं । दुवि०-भोषे० आदे० । आघे० पंचणा--णवदंसणा-असादावे०-मिच्छ०-सोलसक.०--णवुंस०--अरदि--सोग- भय-दुगुं०-तिरिक्खर०-ओरालि०--तेजा०--इ०-हुंड०--वण्ण०४--तिरिक्खरण०-अगु० ४--उन्जो०-चादर-पजत-पत्ते०--प्रथिर-असुभ-दूभग-दुसर--अणादे०-जस०--अजस०-- णिमि०-णीचा०-पंचंद० उक्कस्सिट्टिदिवंधगेहि केविडयं खेतं फोसिदं १ लोगस्स असंखेज्ज० अहु-तेरसचोद्दसभागा वा देस्णा। अणु० सञ्बलो०। सादा०-हस्स जीवोंका चेत्र सब लोक है। बादर वनस्पतिकायिक और निगोद तथा इनके पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है और अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र सब लोक है। स्वन्य और अजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र सब लोक है। स्वन्य जीवोंका चेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है प्रविक्ति बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। स्वन्यक दोनों ही पर्दोका चेत्र सब लोक है। बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर जीवोंका भक्क बादर पृथिवीकायिक जीवोंके समान है।

४७० श्रौदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें तिर्यक्चायु, मनुष्यायु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानु-पूर्वी, देवगित चतुष्क, तीर्यक्कर श्रौर उच्चगोत्र इनका भक्क श्रोघके समान है। शेष प्रकृतियोंका भक्क सामान्य तिर्यव्चोंके समान है। इसी प्रकार काम्णकाययोगी श्रौर श्रमाहारक जीवोंके जानना चाहिए। मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, श्रसंयत, तीन लेश्यावाले, श्रभव्य, मिथ्यादृष्टि श्रौर श्रसंज्ञी जीवोंके श्रपनी सब प्रकृतियोंका भक्क सामान्य तिर्यव्चोंके समान है। शेष नरक गितसे लेकर संज्ञीतक संख्यात श्रोर श्रसंख्यात राशिवाली सब मार्गणात्रोंमें जघन्य श्रौर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका चेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। इस प्रकार चेत्र समाप्त हुत्रा।

## स्पर्शन प्ररूपणा

१७८. स्पर्शन दो प्रकारका है—जघन्य श्रौर उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है —श्रोध श्रौर श्रादेश । श्रोधसे पांच झानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रसातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसकवेद, श्रर्रात, शोक, भय, जुगुप्सा, तियं व्याति श्रौदारिकरारीर, तैजसरारीर, कार्मणशारीर, हुण्डसस्थान, वर्णचतुष्क, तियं व्यात्यसुपूर्वी, श्रगुक्त लघुचतुष्क, उद्योत, बादर, वर्याप्त, प्रत्येक शरीर, श्रिस्थर, श्रशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, श्रनादेय, यशः कीर्ति, श्रयशःकीर्ति, निर्माण, नीचगोत्र श्रोर पांच श्रन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके श्रसंख्यातवें भाग, कुछ कम श्राठवटे चौदहराजु श्रोर कुछ कम तेरह वटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है । श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब

रिद-िथर-सुभ० उक्क० ली० असंखेज्जिदिमागी अह—चोहसमागा वा देख्ला। अणु० सन्वलो०। सादा०-हस्स-गिद-िथर-सुभ० उक्क० लो० असंखेजिबिमागो अह—चोहसमागा वा देख्णा सञ्वलोगो वा। अणु० सन्वलो०। हिथ्०-पुरिस०-पंचिदि०-पंचसंठा०-ओर।लि०अंगो०-छस्संघ०-दोविहा०-तस-सुभग-दोस२०-आदे० उक्क० लोगस्स असंखे० अह—बारह०। अणु० सन्वलो०। णिरय-देवायु०-आहारदुगं खेत्तमंगो। एवं सन्वतथ। तिरिक्खायु-तिष्णिजादि० उक्क० खेत्त०। अणुक० सन्वलो०। मणुसायु० उक्क० खेत्त०। अणु० अहचोहस० सन्वलोगो। शिरयग०-शिरयाणु० उक्क० खेत्त०। अणु० अहचोहस० सन्वलोगो। शिरयग०-शिरयाणु० उक्क० खोगस्स असंखे० अबोहस०। मणुसग०-मणुसाणु०-आदाव०- उच्चा० उक्क० लोगस्स असंखे० अहचोहस०। अणु० सन्वलो०। वेउन्वि०- वेउन्वि०अंगो० उक्क० लो० असंखे० अधोहस०। अणु० वारहचोहम०। देवग०- देवाणु० उक्क० लो० असंखे० अथवा दिवङ्गचोहस०। अणु० छचोहस०। एहंदि०-थावर० उक्क० लो० असंखे० अथवा दिवङ्गचोहस०। अणु० छचोहस०। एहंदि०-थावर० उक्क० अटुः-णवचोहस०। अणु० सन्वलो०। सुहुम-अपजत-

लोक त्त्रेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीय, द्वास्य, रति, स्थिर, श्रौर शुभ प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंस्थातवें भाग और कुछ कम आठ वटे चौदह राजु क्रेंत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीय, हास्य, रित, स्थिर श्रीर श्रमकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग, कुछ कम श्राठवटे चौदह राज़ श्रीर सब लोक चेत्रका स्परान किया है। श्चनत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, पब्चेन्द्रिय जाति, पांच संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो विहायो-गति, त्रस, सुभग, दो स्वर श्रौर श्रादेय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रसंस्यातवें भाग, कुछ कम श्राठ वटे चौदह राजु श्रीर कुछ कम बारह वटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। नरकाय, देवाय और श्राहारकद्विकका भङ्ग चैत्रके समान है। इसी प्रकार इन तीन प्रकृतियोंके त्राश्रयसे सर्वत्र स्पर्शन जानना चाहिए। तिर्युक्काय श्रीर तीन जातिकी उत्क्रप्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सब लोक है। मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन च्रेत्रके समान है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबटे चौदह राजु श्रीर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। नरकगति श्रीर नरकगत्यानुपूर्वीकी उत्कृष्ट और अनुदृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और कुछ कम छह बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, त्रातप त्रौर उच्चगोत्रकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण आरे कुछ कम श्राठबटे चौदह राज चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रानुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्रेत्रका स्पर्शन किया है। वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिक आङ्गोपाद्मकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रसंस्यातवें भाग प्रमाण श्रीर कुछ कम छह बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारह बटे चौदह राज चेत्रका स्पर्शन किया है। देवगति श्रीर देवगत्यानुपूर्वीकी एत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवेंभाग प्रमाण त्रथवा कुम कम डेढ़ बटे चौदह राजु त्रेत्र का स्पर्शन किया है। त्रानुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रिय जाति और स्थावर इनकी उत्कृष्ट स्थिति के बन्धक जीवोंने ने कुछ कम आठबटे चौदह राज और कुछ कम नौ

साधारशः उक्तः लो० श्रसंखे० सव्यत्नो० । श्रणु० सव्वत्नो० । तित्यय० उक्तः खेतमंगो । श्रणु० श्रद्धवोद्दस० ।

४७६. त्रादेसेण गे(इएस दोम्रायु-प्रणुप्तग०-मणुप्ताणु०-तित्वय०-उचा० उक० त्रणु० खेत्तं । सेसं उक्क० मणु० छचोद्दस० । पढमाए पुढवीए खेत्तभंगो । विदियादि याव सत्तम ति दोम्रायु-प्रणुप्तगदिदुग-तित्थय०-उचा० उक्क० मणु० खेत्तभंगो । सेसाणं उक्क० बे-तिण्णि-वत्तारि-पंच-छचोद्दस० ।

४८० तिरिक्षेसु पंचणा०-णवदंस०-असादा०-मिन्छ०-प्रोत्तसक०-णवुंस०-अर्शद-सोग-भय-दुगुं०-पंविदि-न्तेजा०-क०-हुंड०-वएण०४-अगु०४-अप्पसत्य०-तस०४-अथिरादिञ्च०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० उक्क० छचोइस०। अणु० सन्वलो०। सादा०-इस्स-रिद-तिरिक्खगदि -- एइंदि०-- ओरालि०-तिरिक्खाणु०-थावरादि०४--थिर-सुम० उक्क० लो० असं० सन्वलो०। अणु० सन्वलो०। इत्थि०--तिरिक्खायु०-मणुसगदि--तिरिण्जादि-वदुसंठा०-ओरालि०अंगो०-अस्संप०-आदाव० खेन्।मंगो।

बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थिति के बन्धक जीवोंने सब लोक चेनका स्पर्शन किया है। सूदम, अपर्याप्त और साधारण इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोक के असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। तीर्थक्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। ओर अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया हैं।

४७६. त्रादेशसे नारिकयों में दो त्रायु, मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, तीर्थक्कर श्रोर उन्नगात्र इनकी उत्कृष्ट श्रोर त्रानुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन तेत्र के समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रोर त्रानुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह वटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्धन किया है। पहिली में सब प्रकृतियोंके स्पर्शनका भक्क नेत्रके समान है। दूसरी पृथ्वीसे लेकर सातवीं तक दो त्रायु, मनुष्यगितिद्विक, तीथक्कर त्रोर उच्च गोत्रकी उत्कृष्ट श्रोर श्रमुख्यसि लेकर बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कमसे कुछ कम एक बटे चौदह राजु, कुछ कम दो वटे चौदह राजु, कुछ कम नार वटे चौदह राजु श्रोर कुछ कम चार वटे चौदह राजु श्रोर कुछ कम पांच बटे चौकह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है।

४८०. तिर्यक्रों में पाँच ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, श्रसातावेदनीय, मिथ्यात्व सोलह कषाय, नपुंसक वेद, श्ररित, शांक, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुएडसंस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, श्रप्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, श्रास्थर श्रादि छह, निर्माण, नीचगात्र श्रोर पांच श्रन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने छछ कम छह वटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। सानावदनीय हास्य, रित, तिर्यक्रगित, एकेन्द्रियजाति, श्रोदारिकशरीर, तिर्यक्रगत्यानुपूर्वी, स्थायर श्रादि चार, स्थिर श्रोर श्रम इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवेंभाग प्रमाण श्रोर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रानुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रानुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रानुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रानुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रानुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रानुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। स्थानुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन

पुरिस०-समचदु०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-भादे०-उच्चा०उक्क० दिवड्ढवीइस० । श्रग्रु० सव्वलो० । वेउव्वियञ्ज० श्रोघं । उज्जो०-जसगि० उक्क० सन्स-चोइस० । श्रग्रु० सब्बलो० । मणुसायु० श्रोघं । गावरि वज्जे गातिथ ।

४८१ पंचिदियतिरिक्खितिष्णि० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ-प्रसादा० सोलसक०-णवुंस०-प्ररदि-सोग-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-प्रगु०४ पज्जत-पने०-प्रिथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० उक्क० लो० प्रसंखे० छच्चोइस०। अणु० सव्वलो०। सादावे०-हस्स-एदि-तिरिक्खगदि-एइंदि०-ग्रोरालि०-तिरिक्खाणु०-थावरादि०४-थिर-प्रम० उक्क० श्रणु० लोग० श्रसंखे० सव्वलो०। इत्थि० उक्क० खेतं। श्रणु० दिवङ्कृचोइस०। पुरिस०-देवगदि-समचदु०-देवाणु०-पसत्थ-प्रमग-सुस्सर-श्रादे०-उचा० उक्क० खेत्रभेगो। किं णिमित्तं भवणवासीए उप्पक्षिद सोधम्मीसाणे ण उपज्जिद त्ति उक्कस्सिट्टिद्वांधंतो तेण खेत्तं, इदरत्थ दिवङ्घ-चोइस०। श्रणु० छचोइस०। णिरयग०-णिरयाणु० उक्क० श्रणु० छचोइम०। पंचिदि०-वेउव्व०-वेउव्व० श्रंगो०-त्रस० उक्क० छचोइस०। श्रणु० बारह०।

संहनन श्रौर श्रातप इनकी मुख्यतासे स्पर्शन चेत्रके समान है। पुरुपवेद, समचतुरस्न संस्थान, प्रशस्त विहायोगित, सुभग सुम्वर, श्रादेय श्रौर उच्चगोत्र इनकी उरक्वष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़ बटे चौदह राजु चेत्र का स्पर्शन किया है। श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। वैक्रियिक छहकी मुख्यतासे स्पर्शन श्रोधके समान है। उद्योत श्रौर यशःकीर्तिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे श्रौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है।

४८१. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक में पाँच ज्ञानावरण, नौदर्शनावरण, मिथ्यात्व, श्रसाता वेदनीय, सोलहकषाय, नपुंसकवेद, श्ररति, शोक, भय, जुगुन्सा, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हण्डनंस्थान, वराचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, अस्थिर आदि पांच, निर्माण, नीचगोत्र श्रीर पांच श्रन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवों ने लोकके श्रमंख्यातवें भाग प्रमाण श्रीर कुछ कम छह वटे चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है। श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीय, हास्य, रति, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, श्रोदारिक शरीर, तियश्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर श्रादि चार, स्थिर श्रोर शुभ इनकी उत्कृष्ट श्रोर श्चनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके श्वसंख्यातवें भाग श्रौर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्री वेदकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़ बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। पुरुपवेद, देवगति, समचतुरस्न-संस्थान, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विद्वायोगति, सुभग, सुस्वर, त्रादेय श्रीर उच्चगोत्र इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। क्योंकि यह जीव भवनवासियोंमें उत्पन्न होता है सौधर्म श्रौर ऐशान कल्पमें नहीं उत्पन्न होता, इसलिए उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवका स्पर्शन चेत्रके समान कहा है। श्रान्यत्र कुछ कम डेढ़ वटे चौदह राजु स्पर्शन है। श्रानुत्कृत्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह वटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। नरकगित श्रीर नरगत्यानुपूर्वीकी उत्कृष्ट श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिके धन्धक जीवोंने कुछ कम छह वटे चौदह राजु नेत्रका स्पर्शन किया है। पठचेन्द्रिय जाति, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिक आंगोपांग और त्रस इनकी उत्कारट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह वटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है श्रीर अनु-

श्रप्पसत्थ०-दुस्सरं गिरयगदिभंगो । उजो०-जस० उक्क० श्रग्णु० सत्तचोद्दस०। बादर० उक्क० खच्चोद्दस०। श्रग्णु० तेरहचोद्दस०। सेसाणं उक्क० श्रग्णु० खेत्तभंगो ।

४८२. पंचिदियतिरिक्खश्रपञ्ज० पंचणा०-णवदंसणा०-सादासाद०-मिच्छ०-सोलसक० -णवुंस० हस्स-रिद-श्ररदि-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खगदि-एइंदि०-श्रोशालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-श्रगु०४-थावर-सुहुम-पञ्जतापञ्जत-पत्ते० साधार०-श्रिराधिर-सुभासुभ-दूमग-श्रणादे०-प्रजस०-णिमि०-णीचा-पचंत० उक्क० अणु० लो० श्रसंखे० सब्बलो० । उञ्जो०-बादर-जसगि० उक्क० अणु० सत्त चोइस०। सेसाणं उक्क० अणु० लो० श्रसंखे० । एवं मणुसश्रपञ्जत-प्रव्यविगलिंदि०-पंचिदि०-तसश्रपञ्जत। बादर-बादरपुढवि०-श्राउ० तेउ०-बादरवणएफदिवन्शेय०पञ्जता०।

४८३ मणुस मणु गपञ्जत्त-मणुसिणीसु पंचणा० णवदंसणा०-प्रसादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवंस०-ग्ररदि-सोग-प्रय-दुगुं०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण० ४-अगु० ४

त्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारह वटे चौदह राजु त्तेत्रका स्पर्शन किया है। श्रप्रशासनिवहायोगित श्रीर दुःस्वर इनकी मुख्यतासे स्पर्शन नरकगितके समान है। उद्योत श्रीर यशःकीर्तिकी उत्कृष्ट श्रीर श्रमुकुष्ट स्थिति के बन्धक जीवोंने कुछ कम सातवटे चौदह राजु हेत्रका स्पर्शन किया है। बादर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छद बटे चौदह राजु त्तेत्रका स्पर्शन किया है श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम तेरह वटे चौदह राजु त्तेत्रका स्पर्शन किया है। श्रेप प्रकृतियोंको उत्कृष्ट श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन केत्रके समान है।

४८२. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तिकोंमें पांच ज्ञानवरण, नो दर्शनावरण, सान वेदनीय, असता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसकवेद, हास्य, रित, अरित, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगित, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, स्थावर, सूद्रम, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुर्भग, अनादेय, अशयःकीर्ति, निर्माण, नीचगात्र और पांच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंस्थातवंभाग प्रमाण और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत, बादर और यशःकीर्तिः इनकी उत्कृष्ट आर अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंस्थातवंभाग प्रमाण और प्रश्वितके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात वटे चौदह राजु लेत्रका स्पर्शन किया है। शेप प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थिति के बन्धक जीवोंने लोकके असंस्थातवेभाग प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, सब विकलेन्द्रिय, पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त, तस अपर्याप्त, बादर प्रथ्वी- कायिक पर्याप्त बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अस्मिकायिक पर्याप्त बादर वायुकायिक पर्याप्त और बादरवनस्पति कायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए।

४८३. मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त श्रोर मनुष्यिनी जीवों में पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण श्रासातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, श्रार्टात, शोक, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मणुशरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, श्रागुरुलघुचतुष्क, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, श्रस्थिर श्रादि पञ्जना-पन्ते ० — अधिरादिपंच-णिमि० — णी वा० — पंचंत ० उक्क० खेनं। अणु ० ला० असंखे० सन्त्र लो०। सादा० — इस्त-रिद-तिरिक्खगदि-एइं दि० — झोरालि० — तिरिक्खाणु ० — धानरादि०४ — धिर-सुम० उक्क० अणु ० लो० असंखेजिदि० सन्त्र लो०। उज्जो० — जसिंग ७ क्क० अणु ० लोग० झसंखे० सत्त नो०। बादर० उक्क० खेनां। अणु ० समाने०। सेसाणं खेनां।

४८४ देवेषु इत्थि०-पुरिस०-दोश्रायु०-मणुमग०-पंचिदि०-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-ऋस्संघड०-मणुसाणु०-अदाव-दोविहो०-तस-सुभग-दुस्सर-आदेञ्ज०-तित्थय०-उच्चा० उक्क० अणु० अट्टवोट्दस०। सेसाणं उक्क० अणु० अट्ट-णवचोट्द-स०। एवं सच्चदेवाणं श्चरपरपणो फोसणं कादव्वं।

४८५. एइंदिएसु थावरपगदीणं उक्क० अखु० सन्त्रलो० । दोत्रायु० तिरिक्खोघं । उज्जो० बादर०-जस० उक्क० सत्त्रचोद्दस० । अखु० सन्त्रलो० । सेसाणं पगदीणं उक्क० खेरां । अखु० सन्त्रलो०। बादरएइंदि०पञ्जराापञ्चर्त्त० थावरपगदीखं उक्क०

पांच, निर्माण, नीचगांत्र श्रोर पांच श्रन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थित के बन्धक जीवांका स्पर्शन तेत्र के समान है श्रोर श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण श्रोर सब लोक च त्रका स्पर्शन किया है। साता वेदनीय, हास्य, रित, तियञ्चगित, एकेन्द्रिय जाति, श्रोदारिकशरीर, तियश्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर श्रादि चार, स्थिर श्रोर शुभ इनकी उत्कृष्ट श्रोर श्रनुत्कृष्ट स्थिति के बन्धक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण श्रोर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत श्रीर यशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट श्रोर श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें-भाग प्रमाण श्रोर कुछ कम सात वटे चोदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। बादर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने स्पर्शन चेत्रके समान है। तथा श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने एएरीन चेत्रके समान है। श्रेप प्रकृतियोंकी मुख्यतासे स्पर्शन चेत्रके समान है। श्रेप प्रकृतियोंकी मुख्यतासे स्पर्शन चेत्रके समान है।

४८४. देवोंमें स्त्रीवेद, पुरुषवेद, दो आयु, मनुष्यगति, पञ्चेिद्रय जाति, पांच संस्थान, आँदारिक आंगोपांग, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप, दो विहायोगित, अस, सुभग, दु स्वर, आदेय, तीर्थक्कर और उच्चगोत्र इनकी उन्छन्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछकम आठ वटे चौदह राजु तेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंकी उन्छन्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वटे चौदह राजु और कुछ कम नौ वटे चौदह राजु तेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार सब देवोंके अपना-अपना स्पर्शन करना चाहिए।

४८४. एकेन्द्रियोंमें स्थावर प्रकृतियोंको उत्कृष्ट श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक नेत्रका स्पर्शन किया है। दो श्रायुत्रोंका भङ्ग सामान्य तिर्यक्कोंके समान है। उद्यात, बादर श्रीर यशःकीति इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातवटे चौदह राजु नेत्रका स्पर्शन किया है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक नेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन ने त्रके समान है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक नेत्रका स्पर्शन किया है। बादर एकेन्द्रिय श्रीर इनके पर्याप्त श्रीर श्रम्याप्त जीवोंने स्थावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातवटे

अ**खु० स<del>रा</del>चो०। म**णुसायु०—मणुसगदि—म<mark>णुसाखु०—</mark>उचा० उक्क० अखु० स्रोग० असंसेज०।

४८६ पुढवि०—आउ०—तेउ०—वाउ० थावरपगदीणं उक्क लोग० असंखेज० सन्वलो०। ऋग्रु० सन्वलो०। तिरिक्ख-मग्रुसायु० तिरिक्खोधं। उज्जो०—वादर०— जस० उक्क० सत्ताचो०। अग्रु० सन्वलो०। तसपगदीणं भादोव उक्क लोग० भ्रसंखेजा०। अग्रु० सन्वलो०।

४८७, बादरपुढवि०-म्राउ०-तेउ०-वाउ०-धावरपगदीणं उक्क० लोग० मसं-खेज्ज० सन्वलो० । त्रग्रु० सन्वलो० । दोम्रायु० खेत्तभंगो । चजो०-बादर०-जस० उक्क० म्रग्रु० लोग० मसंखेज० सत्ताचीइस । सेसाणं उक्क० म्रग्रु० लोग० म्रसंखेज० ।

४८८. बादरपुढवि०-श्राउ०-तेउ०-वाउ० श्रवज्ञताणं थावरपगदीणं उक्क० त्राणु० सञ्चलो० । उज्जो०-वादर०-जसगि० उक्क० श्राणु० सराचोदस० । सेसाणं एक्क० श्राणु० लोग० श्रसंखे० । गाविर वाऊर्ण यम्हि लोगस्स श्रांखेज० तम्हि लोगस्स संखेज० कादन्वो ।

चौदह राजु चेत्रका ।पर्शन किया है। मनुष्यायु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी ऋौर उच्चगोद्दकी उत्कृष्ट ऋौर ऋनुत्कृष्ट श्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रंसख्यातवेंभाग प्रमाण चेत्रका ।पर्शन किया है।

४६६. पृथ्वीकायिक, जलकायिक, श्रानिकायिक श्रीर वायुकायिक जीवोंने श्रावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण श्रीर सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तथा श्रानुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक च त्रका स्पर्शन किया है। तियञ्चायु श्रीर मनुष्यायुका भक्त सामान्य तियञ्चोंके समान है। उद्योत, बादर श्रीर यशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात्वटे चौदह राजु च त्रका स्पर्शन किया है। तथा श्रानुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक च त्रका स्पर्शन किया है। तथा श्रानुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक च त्रका स्पर्शन किया है। तथा श्रानुकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक च त्रका स्पर्शन किया है।

४८७. बादर पृथ्वीकायिक, बादर जलकायिक, बादर अग्निकायिक और बादर वायुकायिक जीवोंमें श्यावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक त्रेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। त्रे आयुका भक्क त्रेत्रके समान है। उद्यांत, बादर और यशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभाग प्रमाण और कुछ कम सातवटे चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभाग प्रमाण केत्रका स्पर्शन किया है।

४८८. बादर पुथ्वीकायिक अपर्याप्त, बादर जलकायिक अपर्याप्त, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त और बादर वायुकायिक अपर्याप्त जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी उरक्षप्ट और अनुत्कृष्ट स्थिति- के बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योग, बादर और यशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात वटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। तथा शेप प्रकृतियोंकी उरकृष्ट और अनुकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके अनंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि जहाँ पर लोकका असंख्यातवां भाग प्रमाण स्पर्शन कहा है वहाँ पर वायुकायिक जीवोंके लोकके संख्यातवाँभाग प्रमाण स्पर्शन कहना चाहिए।

४८९. सन्वसुहुमाणं सन्वपगदीणं उक्क० श्रग्नु० खेरां। स्वविर तिरिक्खायु० उक्क० लोग० श्रशंखे० सन्वलो०। श्रग्नु० सन्वलो०। मणुसायु० उक्क० श्रग्नु० लोग० श्रशंखेज० सन्वलो०। वस्रप्फिदि-णियोदाणं एइंदियमंगो। ग्वविर तसपगदीग्रां लोग० श्रशंखेज कादन्वो। उज्जो०-बादर०-जसिग० उक्क० सत्तवोहस०। अणु० सन्वलो०। बादरवणप्फिदि-सियोदाणं पज्जत्ता५ बादरपुढविअपजत्तर्मंगो। बादरवणप्फिदिपत्तो० बादरपुढविभंगो।

४६०. पंचिदिय-तस०२ पंचणा०-णवदंसणा०-असादावे०-मिच्छ०-सोल-सक् ०-णवुंस०-अरिद-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खग०-ओराल्चि०-तेज०-क० हुंड०-वण्ण० ४-तिरिक्खाणु० -अगु०४ - पज्ज्ञ-परोय० - अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा० - पंचंत० उक्क० अहु-तेरहचो० । अणु० अहुचोद्दस० सन्वलो० । सादावे०-हस्स-रिद-थिर-सुभ० उक्क० अणु० अहुचो० सन्वलो० । इत्थि०-पुरिस०-पंचिदि०-ओराल्चि०-इंगो०-पंचसंठा०-इस्संघ०-दोविहा०-तस-सुभग-सुस्सर-आदे० उक्क० अणु० अहु-

४९०० पब्चेन्द्रिय, पब्चेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस स्रोर त्रस पर्याप्त जीवोंमें पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रसातावेदनीय, मिश्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, श्ररति, शोक, भय, ज्रुप्सा, तिर्यव्चगित श्रौदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यव्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलधुचतुष्क, पर्याप्त, प्रत्येक, श्रास्थर श्रादि पांच, निर्माण, नोचगोत्र श्रौर पांच श्रन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम स्राठ वट चौदह राजु श्रौर कुछ कम तरह वट चौदह राजु त्रौर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। तथा श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ वट चौदह राजु श्रौर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीय, हास्य, रित, स्थिर, श्रौर श्रुभ प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रोर श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ वट चौदह राजु श्रौर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। स्रोवेद, पुरुषवेद, पब्चेन्द्रिय जाति, श्रौदारिक आङ्गोपाङ्ग, पांच संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगित, त्रस, सुभग, सुस्वर श्रौर श्रादेय इनकी उत्कृष्ट श्रौर श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ वटे चौदह राजु श्रौर कुछ कम

४८६. सब सूरम जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन स्त्रके समान है। इतनो विशेषता है कि तिर्यव्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने छोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सबलोक स्त्रका स्पर्शन किया है और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक स्त्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यायुकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब छोक सेत्रका स्पर्शन किया है। वनस्पति कायिक और निगोद जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग एकेन्द्रियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि त्रस प्रकृतियोंका स्पर्शन छोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण करना चाहिए। उद्योत, बादर और यशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात वटे चौदह राजु सेत्रका स्पर्शन किया है। बादर वनस्पतिकायिक, बादर निगोद और इनके पर्याप्त अपर्याप्त जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग बादर पृथ्वीकायिक अपर्याप्त जीवोंके समान है। बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर जीवोंके समान है। बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर जीवोंके समान है। बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर जीवोंके अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग बादर पृथ्वीकायिक जीवोंके समान है।

बारह० । णिरय-देवायु०-तिणिणजादि०-आहारदुगं उक्त० अणु० खेतं । तिरिक्तः मणुमायु०-तित्थय० उक्त० खेतं । अणु० अद्व वोद्दम० । णिरयगदि-णिरयाणुप० उक्त० अणु० अच्चोद्दम० देवगदि-देवाणु० उक्त० अणु० ओघं । मणुसग०--मणुमाणु०-अग्द।ष०-उच्चा० उक्त० अणु० अद्व वोद्दम० । एइंदि०-यावर० उक्त० अट्ट-णवची० । अणु० अट्ट वो० सन्त्रलो० । वे उन्ति०-त्रे उन्ति० अंगो० उक्त० छच्चोद्दम० । अणु० बारहचो० । उज्जे०-नादर०-जसिग० उक्त० अणु० अट्ट-तेरह० । सुहुम-अपजन्ता-साधार० उक्त० अणु० लोग०असंखे० सन्व जो० । एवं पंचमण०-पंचविच०-चक्खुदंसणि ति ।

४९१. काय जोगि० ओघं। ओरालिय० तिरिक्खोघं। णत्ररि आहारदुग-तित्थय० मणु सभंगो। ओरालियमि० दोअ।य०-सुहुमपगदीणं सत्थाणं उक्क० लो० असंखेज ० सन्वलो०। अणु० सन्वलो०। णवरि मणुमायु० अणु० लो० असंखेज ०

बारह वटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। नरकाय, देवाय, तीन जाति और आहारक हिक इनकी उक्तप्ट ऋोर ऋनुकुष्ट स्थिति हे बन्धक जीवोंका म्परीन चेत्रके समान है। तिर्यञ्चाय, मनुष्याय त्रोर तीथ द्वर प्रकृतिकी उरकृष्ट स्थितिके बन्धक जावांका स्परीन चेत्रके समान है। तथा त्रानुरकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम त्राठ बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है । नरक-गति ऋोर नरकगत्यानुपूर्वीकी उत्कृष्ट ऋोर ऋतत्कृष्ट स्थितिके वत्थक जीवाने कुछ कम छह बटे चोदह राजु चेत्रका स्परीन किया है। देवगति और देवगत्यानुपूर्वीकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका भ्परीन ऋोधके समान है । मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रातप ऋौर उच्चगीत्र इनकी उत्कृत स्त्रीर स्त्रनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम स्नाठ बडे चीदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रिय ख्रोर स्थावर इनकी उत्कृष्ट थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चोदह राजु और कुब्र कम नोवटे चोदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। तथा अपुत्कृट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चोदह राजु और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। वैक्रियिक शरीर ऋोर वैक्रियिकआंगोपांग इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजु चेत्रका स्परीन किया है अगेर अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ का बारह बटे चादह राजु न्नेजका स्पर्शन किया है। उद्योत, बादर खोर यश कीर्तिकी उक्कष्ट खोर खनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वटे चौदह राजु और कुछ कम तेरह वटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। सूद्दम, अपर्याप्त अरेर साधारण इनकी उत्क्रष्ट अरेर अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार पांच मनोयोगी. पांच वचनयोगी ऋौर चक्षदर्शनी जीवोंके जानना चाहिए।

४६१ काययोगी जीवोंमें ख्रपनी सब प्रकृतियोंका भंग ख्रोघके समान है। ख्रोदारिक काययोगी जीवोंमें सामान्य तिर्यख्रोंके समान है। इतनी विशेषता है कि ख्राहाकद्विक ख्रोर तीर्थं कर प्रकृतिका भङ्ग मनुव्योंके समान है। ख्रोदारिकिमश्रकाययोगी जीवोंमें दो ख्रायु ख्रोर सूद्म प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके ख्रसंख्यातवें भाग प्रभाए ख्रोर सब लोक न्नेत्रका स्पर्शन किया है। तथा ख्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक न्नेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यायुकी ख्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके

सन्बर्ला० । अथवा सरीरपञ्जतीए पञ्जती पञ्जतगदस्स खेत्तभंगो । उञ्जो०-बादर०-जसगि० उक्कः सत्तचो० । अग्रु० सन्बत्तो० । अग्गत्थ खेत्तं । देवगदि०४ तित्थय० उक्क० अग्रु० खेतं । सेमाणं उभयथा उक्क० लो० त्र्रसंखेञ्ज० । अग्रु० सन्बलो० ।

४६२. वेउव्वियका० पंचणा०-णवदंसणा०-तादासाद०-मिन्छ०-सोलसक०-सत्तणोक०-तिरिक्खगदि-प्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-त्रण्ण०४-तिरिक्खाणु०-प्रगु०४-उन्नो०-प्रादर-पञ्जत्त-पत्तेप-थिराथिर-सुभासुम-रूमग-प्रणादे०-जस० - अजस०-शिमि०-णीचा०-पंचंत० उक्क० अणु० अट्ठ०-तेरह०। इत्थि०-पुरिस०-पंचिदि०-पंचसंठा०-ओरालि० ग्रंगो०-छ्रस्संघ०-दोविहा०-तस-तुभग-दोसर०-प्रादे० उक्क० अणु० अट्ठ-बारह०। दोआयु०-मणुनगदि-एइंदि०-प्रणुमाणु०-आदाव-पावर-तित्थय०-उच्चा० देवोघं। वेउव्वियमि०-आहार०-आहारम० खेत्रमंगो।

४९३, कम्मइग० पंचण(०-णवदंसणा०-तादासाद०-मिच्छ०-तोत्तसक०-णवणोक०-तिरिक्खगदि-पंचिदि०-ओराज्ञि०-तेजा०-कम्म०-छस्संठ।०-ओरालि०-

स्रसंख्यातवें भाग प्रमाण स्रोर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। स्रथवा शरीर पर्याप्तिसे पर्याप्त हुए जीवोंकी स्रपेचा स्परान चेत्रके समान है। उद्यात, बादर स्रोर यशःकीर्तिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। स्रनुरकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। स्रन्य स्पर्शन चेत्रके समान है। देवगितचतुष्क स्रोर तीर्थक्कर इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। समान है। शेप प्रकृतियोंकी दोनों प्रकारसे उन्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्परान लोकके स्रसंख्यात्वें भाग प्रमाण है। तथा स्रजुत्कृष्ट श्वितिके ब धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है।

४९२. वैक्रियिककाययोगी जीवोंमं पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, सात नोकपाय, तिथ्वच्चगति, अोदारिक शरीर, तंजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तियंद्धगत्यानुपूर्वी अगुम्रलघु चतुष्क, उद्योत, बाद्र, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, अस्थर, शुभ, अशुभ, दुभग, अनादेय, यशःकीर्ति, अयशःकीर्ति, निर्माण, नीचगोत्र श्रोर पाँच अन्तराय इनकी उद्धुष्ट श्रोर अनुत्कृष्ट श्रितिके बन्धक जीवोंनं कुछ कम आठ बटे चौदह राजु और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। स्निवेद, पुरुपवेद, पव्चेन्द्रियजाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो विहायोगित, त्रस, सुभग, दो स्वर और आदंय इनकी उद्धुष्ट श्रोर अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु और कुछ कम बारह बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। दो आयु, मनुष्यगति, एकेद्रिय जाति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप, स्थावर, तीर्थङ्कर और उच्चगेत्र इनका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियों की मुख्यतासे स्पर्शन चेत्रके समान है।

४९३ कार्मणकाययोगी जीवोंमें पांच ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नो नोकपाय, तियञ्चर्णात, पञ्चेन्द्रिय जाति, ऋौदारिक शारीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, छह संस्थान, श्रोदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, वण्चतुष्क,

अंगो०-छस्संघ०-वरण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-उउजो०-दोविहा०-तस०४-थिरा दिल्लयुग०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० उक्त० बारहचो०। अणु० सञ्वलो०। मणुसगदि-तिरिणजादि-मणुसाणु० उक्त० अणु० खेत्तं। सुहुम-अपन्जत्त-साधार० उक्त० लो० असंखे०। अणु० सञ्जलो०। देवगदि०४-तित्थय० उक्त० अणु० खेत्तं। एइंदि०-आदाव-थावर० उक्त० दिवहूचोइस०। अणु० सञ्बलो०।

४९४. इत्थिवे० पंचणा०-णवर्दसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०तेजा०-क०-हुंडसं०-वण्ण०४-अगुरू०-पज्जत्त-परोग०-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०पंचंत० उक्क० अट्ट-तेरहचो० । अणु० अट्टचो० मव्वलो० । सादा०-हस्स-रदि-थिरसुभ० उक्क० अणु० अट्टचोदस० सव्वलो० । इत्थिवे०-पुरिस०-मणुसग०-पंचसठा०ओराल्०अंगो०-अस्संघ०-मणुस्राणु०-आदाव०-पसत्थवि० - सुभग-सुस्सर-आदे० उच्चा० उक्क० अणु० अट्टचोद्दस० । णिरय-देवायु०-तिण्णिजादि-धाहार०२-तित्थय०
छक्क० अणु० खेत्तमंगो । तिरिक्ल-मणुसायु० उक्क० खेत्तं । अणु० अट्टचोट्दस० ।

तिर्यक्चगत्यानुपूर्वी, त्र्रगुरुलघुचतुष्क, उद्योत, दो विहायोगित, त्रसचतुष्क, स्थिर त्रादि छह रूगत, निर्माण, नीचगोत्र त्रोर पांच त्रन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम बारह बटे चौदह राजु चेत्रका स्परान किया है। त्रानुष्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्परान किया है। मनुष्यगित, तीन जाित त्रोर मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनकी उत्कृष्ट त्रोर त्रानुष्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। सूद्म, श्रपर्याप्त श्रोर साधारण इनकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातव भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रानुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। देवगित चतुष्क श्रोर तीर्थङ्कर इनकी उत्कृष्ट श्रोर श्रानुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने स्थक जीवोंने स्थक जीवोंने कुछ कम डेड्बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रानुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने सथ लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। त्रानुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने सथ लोक चेत्रका स्पर्शन किया है।

४९४ स्त्रीवेदवाले जीवोंमं पांच ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, असाना वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, पाँच नोकपाय, तेजम शरीर, कार्रण शरीर, हुण्ड संभ्यान, वणचतुष्क, अगुरुलघु, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पांच, निर्माण, नीचगांत्र और पांच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चोदह राजु और कुछ कम आठ बटे चोदह राजु कोर सव लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चोदह राजु और सव लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। माता वेदनीय, हास्य, र्रात, स्थिर और शुभ इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चोदह राजु और सव लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुपवेद, मनुष्यपति, पांच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छहं संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप, प्रशान विहायोगित, सुभग, सुन्वर, आदेय और उच्चगोत्र इनकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वटे राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। तर्मकायु, देवायु, तीन जाति, आहारकद्विक और तीथेङ्कर इनकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। तर्मकायु और मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। तर्मकायु और सनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। अनुन्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वटे चोदह जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। विद्वायु और सनुष्क्र कम आठ वटे चोदह जीवोंका स्पर्शन किया है। वैक्रियिक छहकी मुख्यतासे स्पर्शन ओघके समान है। तियंक्र्यर्गत, राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। विद्वायु के स्थान से स्थान है। तियंक्र्यर्गत,

वेउन्वियद्य श्रोघं । तिरिक्खगदि-एइंदि०-प्रोरासि०-तिरिक्खाणु०-थावर ० उक्क० अष्ट-णवचो० । अणु० अट्टचो० सन्वलो० । पंचिदि०-प्रप्पसत्थ०-तस-दुस्सर० एक्क० छच्चोद्दस० । अणु० अट्ट-बारह० । उण्जो०-जस० उक्क० अणु० अट्ट-णवचोद्दस० । बादर० उक्क० अणु० अट्ट-तेरहचोद्दस । सुहुम-अपज्जत्त-साधारण० उक्क० अणु० लोग० असंखे० सन्वलो० । पुरिसेसु इत्थिभंगो । णवरि पंचिदि०-अप्पसत्थ०-तस-दुस्सर० एक्क० अणु० अट्ट-बारहचोद्दस० । तित्थय० अधेषं ।

४६५. णवुंस० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छत्त-सोलसक०-इत्थि०पुरिस०-णवुंस०-अरिद-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खग०-पंचिदि०-अोरालि०-तेजा०-क०छसंठा०-भोरालि०अंगो०-छसंघ०-वण्ण०४--तिरिक्खाणु०-अगु०-दोविहा०-उज्जो०तस०४-अथिर-असुभ-सुभग-दूभग-सुस्सर--दुस्सर-आदे०-अणादे०-अजस०-णिमि०ग्रीचा०-पंचेत० उक्क० छच्चोद्दस० । श्रणु० सन्वलो० । सादावे०-हस्स-रदि-एइंदि०थावरादि ४--थिर-सुभ० उक्क० लो० असंखे० सन्वलो० । अणु० सन्वलो० ।

एकेन्द्रिय जाति, ख्रौदारिक शरीर, तिर्ध्छागत्यानुपूर्वी ख्रौर व्यावर इनकी उत्कृष्ट व्यितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु श्रौर कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु लेह का व्याविक किया है। श्रमुकुष्ट व्यितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु श्रौर सब लोक त्रेत्रका व्याविक वन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजु त्रोत त्रिया है। तथा अनुत्कृष्ट व्यितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजु त्रोत स्पर्शन किया है। तथा अनुत्कृष्ट व्याविक बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु त्रोत श्रुत्कृष्ट व्याविक बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु त्रोत श्रुत्कृष्ट व्याविक बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु श्रोर श्रुत्कृष्ट व्याविक बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु श्रोर श्रुत्कृष्ट व्याविक बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु श्रोर श्रुत्कृष्ट व्याविक बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु श्रोर श्रुत्कृष्ट व्याविक बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु श्रोर श्रुत्कृष्ट व्याविक बन्धक जीवोंने लोवोंके समान प्रमाण श्रोर सब लोक नेत्रका व्याविक क्या है। पुरुपवेदी जीवोंके समान मंग है। इतनी विशेपता है कि पञ्चित्रिय जावोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु श्रोर श्रुत्कृष्ट व्याविक बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु श्रोर हुछ कम बारह बटे चौदह राजु श्रीर श्रुत्कृष्ट व्याविक वन्धक जीवोंने श्रीवेदी जीवोंके समान मंग है। इतनी विशेपता है कि पञ्चित्रक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु श्रीर हुछ कम बारह बटे चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है। तीर्थङ्कर प्रश्नितका भंग श्रोघक समान है।

४९४. नपुंसकवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, ऋसातावेदनीय, मिथ्यात्व; सोलह कपाय, स्त्रीवेद, पुरुपवेद, नपुंसकवेद, ऋरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तियब्चगित, पञ्चेन्द्रिय जाति, ऋौदारिक शरीर, तेजस शरीर, कामण शरीर, छह संस्थान, ऋौदारिक ऋङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, वर्णचतुष्क, तियञ्चगत्यानुपूर्वी, ऋगुरुलघु, दो विहायोगित, उद्योत, त्रस चतुष्क, ऋस्थिर, ऋगुभ, सुभग, दुभग, सुस्वर, दुःस्वर, ऋगदेय, ऋनादेय, ऋयश कीर्ति, निर्माण, नीचगोत्र ऋौर पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीय, हास्य, रित, एकेन्द्रियजाति, स्थावर ऋगदि चार, स्थिर ऋौर शुभ इनकी उत्कृष्ट स्थितिके

दोश्रायु०-श्रहारदुग-तित्थय०, ६क० अणु० खेत्तमंगो । तिरिक्स्नायु-मणुसगद्दि-तिण्णि-जादि-मणुसाणु०-श्रादार-उचागो० उक० लो० श्रसंखेजदि०। अणु० सव्वलो०। मणुसायु० २क० खे०। अणु० लो० असंखे० स्वत्वलो०। वेउव्वियद्द० श्रोघो। उन्जो०-जस० उक० तेरहचोद्दस०। श्रणुक० सव्वलो०। श्रवगदवेदे खे०भंगो कोधादि०४ श्रोघं।

४९६, मदि०-सुद० श्रोघं । ग्रविर देवगदि-देवागु० उक्क० खे० । अगु० पंच-चोद्द० । वेउव्व०-वेउव्व०अंगो० उक्क० अचोद्दस० । अगु० एकारसचोद्दस० । विभंगे पंचणा०-णवदंसणा०-श्रसादावे०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-तेजा०-क०-हुंडसं०-विग्ण०४-श्रगु०४--पऽजत्त-पत्तेय०-श्राथिरादिपंच--णिमि०-णीचा० - पंचंत० उक्क० अट्ठ-तेरह० । अगु० अट्ठ-तेरह० सन्वलो० । सादावे०-हस्स-रदि-थिर-सुभ० उक्क० अगु० श्रद्धचो० सन्वलो० । इत्थि०-पुरिस०-पंचिदि०-पंचसंठा०-ओरालि •-

बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक चंद्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चंद्रका स्पर्शन किया है। दो आयु, आहारकिंद्रक और तीर्थं इर इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चंद्रके समान है। तियं आ आयु, मनुष्यगति, तीन जाति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप और उच्चगोत्र इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चंद्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेद्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंना भाग प्रमाण और सब लोक चंद्रका स्पर्शन किया है। वैकियिक छहकी अपेचा स्पर्शन ओघके समान है। उद्योन और यशःकीर्तिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेद्रका स्पर्शन औघके समान है। उद्योन और यशःकीर्तिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेद्रका स्पर्शन किया है। अप्रगतवेदी जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंकी अपेचा स्पर्शन चंद्रके समान है। तथा कोधादि चार कपायवाले जीवोंमें आपके समान है।

४६६. मत्यज्ञानी त्रोर श्रुवाज्ञानी जीवोंमें त्रोघके समान है। इतनी विशेषता है कि देवगति त्रोर देवगत्यानुपूर्वीकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँच बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। विक्रियिक शरीर त्रोर वैक्रियिक त्राङ्गोपाङ्गकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम ग्यारह बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। विभंगज्ञानी जीवोंमें पांच ज्ञानावरएए, नो दर्शनावरएए, त्रमताविदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, पांच नोकपाय, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डमस्थान, वर्ण चतुष्क, अगुरुत्वचु चतुष्क पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीय, हात्य, रित, स्थिर और शुभ इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु कुछ कम तेरह बटे चौदह राजु और सब लोक चेत्रका स्परान किया है। सातावेदनीय, हात्य, रित, स्थिर और शुभ इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु और सब लोक चेत्रका स्परान किया है। स्रावेदन, पुरुपवेद,

अंगो०-छस्संघ०-दोविहा०-तसःसमग-दोसर-आदे० उक्क० अणु० अट्ट-बारहचोद्दस०। णिरय-देवायु०-तिणिजादि० उक्क० अणु० खेत्रभंगो । तिरिक्ख-मणुसायु० उक्क० खेत्रभंगो । अणु० अट्ट-चोद्द० । वेच व्वियञ्च० मिद्रभंगो । तिरिक्खग०--ओरालि०--तिरिक्खाणु० उक्क० अट्ट-तेरहचो०। अणु० अट्ट-तेरहचो० सन्वलो०। मणुसग०--मणुसाणु०--आदाव०--उच्चा० उक्क० अणु० अट्टचो०। एइंदि०--थावर० उक्क० अट्ट-णवचो। अणु० अट्ट०सन्वलो०। उज्जो०--बादर०--जसिग० उक्क० अणु० अट्ट-तेरह०। सुहुम-अपज्जत-साधार० उक्क० अणु० लो० असंखे० सन्वलो०।

४६७, अभिणि०-सुद्०-ओधिणा० देवायु०--आहारदुगं उक्क० अणु० श्रोघं। देवगद्वि०४ उक्क० श्रोघं०। अणु० छचोद्दम०।तित्थय० ओघं।सेसाणं उक्क० अणु०

पञ्चेन्द्रियजाति, पाँच संस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दोविहायोगित, त्रस, सुभग, दो स्वर और आदेय इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम बारह बटे चौदह राजु होइका स्पर्शन किया है। नरकायु, देवायु और तीन जाति इनकी उत्कृष्ट ऋौर अनत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन स्रेत्रके समान है। तिर्यक्रायु श्रीर मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। श्रनुःकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु दोइका स्पर्शन किया है। वैक्रियक छहकी मुख्यतासे स्पर्शन मत्यज्ञानियोंके समान है। तिर्यञ्चगति स्रोदारिकशरीर स्रोर तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीकी उत्क्रप्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजु दोत्रका स्परीन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवाने बुद्ध वम आठ बटे चौद्ह राजु, कुछ कम तेरह बटे चौदह राजु श्रोर सब लोक दोत्रका म्पर्धन किया है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्या-तुपूर्वी, त्रातप त्रौर उचगोत्र इनकी उत्कृष्ट त्रौर अनुत्कृष्ट रिथितके वन्धक जीवोंने इछ कम त्राठ बटे चौदह राजु दोक्रका स्पर्गन किया है। एकेन्द्रियजाति और स्थावर इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम त्राठ बटे चीदह राजु त्रीर कुछ कम नी बटे चौदह राजु चेत्रका एर्शन किया है। अनुतकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने इन्छ कम आठ बटे चोट्ह राज और सब लोक न्नेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत, वादर ऋौर यशःकीति इनकी उत्कृष्ट ऋौर ऋनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने बुछ कम त्राठ बटे चौदह राजु ह्याँर बुछ कम तेरह बटे चौदह राजु दोइका स्पर्शन किया है। सुदम, अपर्याप्त और साधारण इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृत्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने लोकके ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण ऋर सब लोक दोवका स्पर्शन किया है।

४६७ आर्मिनवोधिक ज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अविध्वानी जीवोंमें देवायु और श्राहारक द्विककी उत्कृष्ट और श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्गन श्रोधके समान है। देवगित चतुष्ककी उत्कृष्ट श्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्गन श्रोधके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुब कम बह बटे चौदह राजु होत्रका स्पर्शन किया है। तीर्थं इर प्रकृतिका भङ्ग श्रोधके समान है। रोप प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रोर श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुब कम आठ बटे चौदह राजु होत्रका स्पर्गन किया है। इसी प्रकार श्रवधिदर्शनी, सम्यग्हिष्ट, ज्ञायिकसम्यग्हिष्ट,

अड्डचे।द्दस० । एवं श्रोधिदंस०--सम्मादिष्टि-खइग०--चेद्ग०--उवसमस० । णविर खइगे देवगदि०४ खेत्तं । तित्थय० उक्त० श्रणु० श्रष्टचा० ।

४९८. मणपज्ज०--संजद-सामाइ०--छेदेा०--परिहार० --सुहुमसं० खेतं । संजदा-संजदे सादावे०--हस्स-रदि-थिर-सुम-जस० उक्क० श्रणु० छचोद्दस०। देवायु--तित्थय० उक्क० श्रणु० खेतं । सेसागं उक्क० खेतं । श्रणु० छच्चेाद्दस०। असंजद०--श्रचक्खुदं श्रोघं ।

४६६. किण्णले० णवंसगभंगो । णगरि णिरयगदि-वेउव्वि०--वेउव्वि० छंगे।० - णिरयाणु० उक्क० श्रणु० छन्वे।द्दस० । देवगदि-देवाणु०--तित्थय० उक्क० श्रणु० खेत्तमंगो । णील-काऊए पढमदंडओ णवंसगभंगे। । णगरि चत्तारि बंच बोइस० । सादा-इस्स-रदि-थिर-सुभ-जस० एदाओ पढमदंड श्रो भाणिद्वाओ। णिरयग०-वेउव्वि०- वेउव्वि० झंगो०-णिरयाणु० उक्क० श्रणु० चत्तारि-वे चोइस० । देवगदि०-देवाणु० किण्ण- भंगो । सेस।णं णवुंसगभंगो ।

वेदक प्रम्यग्रहिष्ट ऋरि उपशामसम्यग्रहिष्ट जीवोंके जानना चाहिए। इननी विशेषता है कि चार्षिक सम्यग्रहिष्ट जीवोंमें देवगति चतुकका भङ्ग दोत्रके समान है। तथा तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट ऋरि ऋतुत्कृष्ट थितिके बन्यक जीवोंने कुछ कम ऋष्ट बटे चौदह राजु चेत्रका स्परीन किया है।

४६८. मन पर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोप थापनासंयत, परिहारिवशृद्धि संयत और सूद्दमसाम्पराय तंत्रत जीवोंमे अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग दोश्के समान है। संयता-संयत जीवोंमें सातावेदनीय, हास्य, रित, स्थिर, शुभ और यशाकीर्ति इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम छह वहे चौदह राजु दोशका स्पर्शन किया है। देवायु और तीथंड्कर इनकी उत्कृष्ट आर अनुत्कृष्ट रिश्तिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन देशके समान है। रोप प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन देशके समान है। रोप प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन देशके समान है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन किया है। असंयत और अवश्वदर्शनी जीवोंका भंग आघके समान है।

४६६. कृष्णते त्यावाले जीवोका भन्न न ग्रंसकवेदी जीवोके समान है। इतनी विशेषना है कि नरकर्गात, वैकियिकशरीर, वैकियिकझं गोषान्न और नरकर्गन्यानुपूर्वी इनकी उत्कृष्ट ख्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम छह वटे चौदह राजु चोत्रका ग्परीन किया है। देवगति, देवगत्यानु पूर्वी ख्रीर तीर्थक्का इनकी उन्कृष्ट ख्रीर अनुत्कृष्ट निथानके वन्धक जीवोंका स्परीन चोत्रके समान है। नील और कापोत लेखावाले जीवोंमें प्रथम दण्डकका मंग न गुंसकपेदी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि इनकी उन्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंने कमसे कुछ कम चार बटे चौदह राजु और कुछ कम दो बटे चौदह राजु चोत्रका ग्परीन किया है। सातावेदनीय, हास्य, रित, स्थिर, शुभ ख्रीर यशाकीत इनकी मुख्यतासे स्परीन प्रथम दण्डकके समान कहना चाहिए। नरकगित, वैकियिकशारीर, वैकियिकश्चाङ्गोषाङ्ग और नरकगत्यानु पूर्वी इनकी उन्कृष्ट ख्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कासे कुछ कप चार बटे चौदह राजु खीर कुछ कम दो बटे चौदह राजु चेत्रका स्परीन किया है। देवगित ख्रीर देवगन्यानु पूर्वीकी मुख्यतासे स्परीन कृत्रण लेखावाले जीवोंके समान है। तथा शेष प्रकृतियोकी मुख्यतासे स्परीन न गुंसकवेदी जीवोंके समान है।

५०० तेऊए देवायु-म्राहारदुगं० खे०। देवगदि०४ उक्क० खेनं। अणु० दिवहुचोद्द०। इत्थि०-पुरिस० मणुमग०-पंचिदि० पंचसंठा० श्रोरालि० अंगो० - छस्संघ० आदाव--दोविहा०--तस-दुमग-दोसर-आदेय० - तित्थय - - उच्चा० -- तिरिक्ख० - मणुसायु०
उक्क० अणु० अहु नो०। सेसाणं उक्क० अणु० अहु-णव०। पम्माए देवायु - आहारदुगं खेनं। देवगदि०४ उक्क० खेनं। अणु० पंचचो०। सेसाणं उक्क० अणु० अहु--णवचो०। सुक्काए देवायुआहारदुगं स्रोधं। देवगदि०४ उक्क० खेनं। अणु० अचोद्दम०। सेसाणं उक्क० अणु० छच्चोद्द०।
५०१ भवसिद्धिया० श्रोधं। श्रवमविद० मिणुसगदि-मणुमाणु-- उच्चा० उक्क० श्रणु० अहु नो०। देवगदि०४ उक्क० खेनं। श्रणु० पंचचोद्दम०। सेसाणं उक्क० श्रणु० श्रहुबारह०। सम्मामि० देवगदि०४ उक्क० श्रणु० खेनं। सेसाणं उक्क० श्रणु० श्रहुबारह०। सम्मामि० देवगदि०४ उक्क० श्रणु० खेनं। सेसाणं उक्क० श्रणु० श्रहु-

४००. पीत लेश्यावाले जीवोंमें देवाय त्र्योर त्र्याहारकाद्विकका भङ्ग चेत्रके समान है। देवगति चतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवांका स्पर्शन नेत्रके समान है। ऋनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़ बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुपवेद, मनुष्य-गति, पञ्चेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, ऋौदारिक ऋांगे।पंग, छह संहनन, ऋातपः दो विहायोगिति, त्रस, सुभग, दो स्वर, त्रादिय, तीर्थङ्कर, उच्चगात्र, तिर्यञ्चायु त्र्योर मनुष्यायु इनकी उत्क्रष्ट त्र्योर श्रमुतकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ वटे चौदह राजु चेत्रका स्परान किया है। शेप प्रकृतियोंकी उक्कष्ट त्योर त्यनु कुष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम त्र्याठ बटे चीद्द राजु त्र्योर कुछ कम नो बटे चोदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है । पद्मलेखावाले जीवोंमें देवायु श्रीर श्राहा-रकद्विकका भंग चेत्रके समान है। देवगति चतु ककी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवांका स्पर्शन चेत्रके समान है। अनुतकुष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम पांच बटे चौदह राज चेत्रका स्पर्शन किया है । शेप प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट त्र्योर त्र्यनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंन कुछ कम त्र्याठ वर्ड चोदह राज् श्रीर कुछ कम नौ बड़े चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। शुक्ल ले यावाले जीवांमें देवाय श्रीर त्र्याहारकद्विकका भंग त्र्योघके समान है । देवगति चतुष्ककी उत्क्रष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है । अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंन कुछ कम छह वडे चोदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। शेप प्रकृतियोकी उत्कृष्ट ऋौर ऋनुकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बढे चोदह राज, चेत्रका स्परीन किया है।

४०१ भन्य जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियांका भङ्ग श्रांघके समान है। श्रभन्य जीवोंमें मत्यज्ञानी जीवोंके समान है। सासादनसम्यग्दिष्ट जीवोंमें देवायुका भङ्ग श्रोघके समान है। वित्रवचायु श्रोर मनुष्यायुकी उक्तष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। श्रमुख्टष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुद्र कम श्राठ वटे चौदह राजु प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रोर उच्चगोत्रकी उद्गृष्ट श्रोर श्रमुख्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुद्र कम श्राठ वटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। देवगितचतुष्ककी उद्गृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। श्रमुख्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुद्र कम श्राठ वटे चौदह राजु श्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। रोप प्रकृतियोंकी उद्गृष्ट श्रीर श्रमुख्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुद्र कम श्राठ वटे चौदह राजु श्रीर कुद्र कम बारह बटे चौदहराजु प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यिम्थ्यादृष्टि जीवोंमें देवगितचतुष्ककी उद्गृह श्रीर श्रमुख्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुद्र कम स्थाठ बटे चौदह राजु प्रमाण चेत्रका स्पर्शन चेत्रके समान है। रोप प्रकृतियोंकी उद्गृह श्रीर श्रमुख्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुद्र कम श्राठ बटे चौदह राजु प्रमाण चेत्रका स्पर्शन चेत्रके समान है। रोप प्रकृतियोंकी उद्गृह श्रीर श्रमुख्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुद्र कम श्राठ बटे चौदह राजु प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है।

५०२. असण्णीसु पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-सत्त-णोक०-तिरिक्लायु-मणुसगदि-चदुजादि-[ओरालि०]-तेजा०-क०-छस्संठा०-ओरालि०-अंगो०-छस्संघ०-वर्षण०४-मणुसाणु०-अगु०-४-आदाव-दोविहा०-तस०४ -अधि-रादिछ०-सुभग-सुरसर-आदे०-णिपि०-णीचुचा०-पंचंत०-उक्क० खेतं। अणु०सव्वलो०। सादावे०-हस्स रदि-तिरिक्लगदि-एइंदि०-ओरालि०-तिरिक्लाणु०-थावरादि०४-थिर-सुभ० उक्क० लो०असंखेज० सव्वलो०। अणु० सव्वलो०। णिरय-देवायु-वेउव्वियछ०-खेत्रभंगो। मणुसायु० एइंदियभंगो। उज्ञो०-जसगि० उक्क० सत्त्त्वोद्दस०। अणु० सव्वलो०। आहार० ओघं। अणाहार० कम्मइगभंगो। एवं उक्कस्सफोसणं समत्तं।

५०३. जहण्णए पगदं । दुवि०-श्रोघे० श्रादे० । श्रोघे० खविगाणं मणुसग०-मणुसाणु० जहण्णहिदिबंधगेहिं केविडयं खेतं फोसिदं? लोगस्स श्रसंखेजिदिभागो । श्रज० सन्वलो० । पंचदंस०-श्रसादा०-मिच्छ०-बारसक०-श्रहणोक०-तिरिक्खगिदि-चदुजादि-श्रोरालि०-तेजा०-क०-छस्संठा०-श्रोरालि०अंगो०-छस्संघ०-वर्ण०४--तिरिक्खाणु०-श्रगु०४-श्रादाउजो०-दोविहा०-तस-बादर-पजत्त-श्रवजत-पनेय०-साधार०-थिरादिपंचयुगल-श्रजस०-णिमि०-णीचा० जहएण० श्रजहरूण० खेतं। णिरय-

४०२. असंज्ञी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्याख, सोलह कपाय, सात नोकपाय, तियं चायु, मनुष्यगित, चार जाति, औदारिकशरीर, तेजसशरीर कामणशरीर, छह संस्थान, अोदारिक आंगोपांग, छह संहनन, वणचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुत्तघुचतुष्क, आतप, दो विहायोगिति, असचतुष्क, अस्थिर आदि छह, सुभग, सुखर, आदेय, निर्माण, नीचगोत्र, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरीय इनकी उन्छष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन त्तेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सब लंक है। सातावेदनीय, हास्य, रित, तियं चगित, एकेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तियं अगत्यानुपूर्वी, स्थावर आदि चार, स्थिर और शुभकी उन्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सब लोक है। नरकायु, देवायु ओर वैकियिक छहका मङ्ग त्रेत्रके समान है। मनुष्यायुका मङ्ग एकेन्द्रियोंके समान है। उद्योत और यशःकीर्तिकी उन्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन कुछ कम सात बटे चोदह राजु है और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन जीवोंका भङ्ग आपके समान है। अनाहारक जीवोंका स्पर्शन सब लोक है। इस प्रकार उन्कृष्ट स्थान समान हुआ।

५०३ जघन्यका प्रकरण है। उसकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ ओर आदेश। श्रोघसे त्तपक प्रकृतियाँ, मनुष्यगित और मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंने कितने त्तेत्रका स्पर्शन किया है? लोकके असंख्यातवें भाग त्तेत्रका स्पर्शन किया है! अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक त्तेत्रका स्पर्शन किया है। पांच दर्शनावरण, अमातावेदनीय, मिथ्यात्व, बारह कपाय, आठ नोकपाय, तियञ्चगित, चार जाति, औदारिकशरीर, तंजसशरीर, कार्मणशरीर, छह संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, वर्णचतुष्क, तियञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, आतप, उद्योत, दो विहायोगित, त्रस, बादर, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येकशरीर, साधारण, स्थिर आदि पांच युगल, अयशाकीर्ति, निर्माण और नीचगांत्र इनकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन त्तेत्रके समान है। नरकायु, देवायु और आहारकदिकका

देवायु०-ग्राहारदुगं उक्कस्सभंगो । एवं सन्वत्थ । तिरिक्खायु-सुहुम० जह० श्रज० सन्वलो० । मणुसायु० जह० [अज०] लोग० श्रसंखेज ० सन्वलोगो वा । णिरय-देव-गदि-णिरय-देवाणु० जह० खेतां । श्रज० छन्चोद्द० । एइंदि०-थावर० जह० सत्ता-चोद० । श्रज० सन्वलो० । वेउन्वि०-वेउन्विश्रंगो० जह० खेतां । श्रजह० बारहचो० । तित्थय० जह० खेतां । श्रजह० श्रहचो० ।

५०४. णिरएसु दोत्रायु--मणुसग०--मणुसाणु०--तित्थय०--उच्चा० उक्कस्सभंगो । सेसाणं जह० खेत्तभंगो । अज० छन्चोद्दस० । पढमाए खेतं । विदियादि याव छिष्ठि ति तिरिक्खायु-मणुसगदि०४-तित्थय० खेतं । सेसाणं जह० खेतं । अज० एक्क-दो-तिण्णि--चत्तारि-पंचचोद्दस० । ग्रवरि तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०--उज्जो० जह० अज० एक--वे-तिरिग्ण--चत्तारि-पंचचोद्दस० । सत्तमाए इत्थि-णवंस०--पंचसंठा०-पंचसंघ०--अप्यसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अगादे० जह० अज० छन्चोद्दस० । तिरि-

भक्क उत्कृष्टके समान है। इसी प्रकार इन चार प्रकृतियोंकी मुख्यतासे स्पशन सबत्र जानना चाहिए। तिर्यव्चायु श्रीर सूदम इनके जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक त्रेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यायुकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातव भाग प्रमाण श्रीर सब लोक त्रेत्रका स्पर्शन किया है। नरकगित, देवगित, नरकगत्यानुपूर्वी, श्रीर देवगत्यानुपूर्वी इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन त्रेत्रके समान है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रिय जाति श्रीर स्थावर इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक त्रेत्रका स्पर्शन किया है। विक्रियकशारीर श्रीर वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्गकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सन्य लोक त्रेत्रका स्पर्शन त्रेत्रके समान है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारह वटे चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है। त्रीर्थङ्कर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन त्रेत्रका स्पर्शन किया है। त्रीर्थङ्कर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन त्रेत्रका स्पर्शन के बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ वटे चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन के बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ वटे चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन हि। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ वटे चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है।

४०४ नारिकयों में दो श्रायु, मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, तीर्थद्वर श्रोर उच्चगोत्रका भद्ग उत्कृष्टिके समान है। श्रेप प्रकृतियों की जघन्य स्थितिके वन्धक जीवों का स्पर्शन किया है। पहिली पृथ्वी में स्पर्शन क्षेत्रके समान है। श्रूप हिंदि राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पहिली पृथ्वी में स्पर्शन क्षेत्रके समान है। दूसरोसे लेकर छटवीं तक पांच पृथिवियों में तिर्यव्चायु, मनुष्यगित चार श्रोर तीर्थकर प्रकृतिका भद्ग क्षेत्रके समान है। श्रेप प्रकृतियों की जघन्य स्थितिके वन्धक जीवों का स्पर्शन क्षेत्रके समान है। श्राज्यन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने क्रमसे कुछ कम एक बटे चौदह राजु, कुछ कम दो बटे चौदह राजु, कुछ कम पांच बटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि तिर्यव्चगिति, तियवच्चगत्यानुपूर्वी श्रोर उद्योतकी जघन्य श्रोर श्राज्यन्य स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवों ने क्रमसे कुछ कम एक बटे चौदह राजु, कुछ कम दो बटे चौदह राजु, कुछ कम पांच बटे चौदह राजु क्षेत्र का स्परान किया है। सातवीं पृथिवीमें स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पांच संहनन, श्रप्रशत विहायोगिति, दुर्भग, दुःखर श्रीर श्रनादेय इनकी जघन्य श्रीर श्रजधन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजु क्षेत्रका सङ्ग के समान है। शेष

क्खायु-मणुसगदितिगं खेतं । सेसागं जह०खेनं । अज० छच्चोद्दस० ।

४०५. तिरिक्खेसु पंचणा०-णवदंसणा०--दोवेदणीय--मिच्छ०--सोलस ०णवणोक०--दोगदि--चदुजादि-श्रोरालि०--तेजा०-क०-छस्संठा०--श्रोरालि०अंगो०-छस्संघ०-वएण०४-दोश्राणु०-श्रगु०४-श्रादाउजो०--दोविहा०-तस-बादर -पजतश्रपजत-पत्ते०-साधार०-थिरादिञ्चयुग०-णिमि०-णीचुच्चा०-पंचंत० जह० खेतं।
श्रज० सब्बलो०। तिरिक्खायु--सुहुमणा० जह० श्रज० सव्वलो०। मणुसायु० जह० अज० लोग० श्रसंखेज० सव्वलो०। एइंदि०--थावर--वेउव्वियछ० श्रोघं। एवं तिरिक्खोधं मदि०--सुद०--श्रसंज०--श्रब्भवसि०--मिच्छादिष्टि ति। णवरि एदेसिं देवगदि--देवाणु० श्रज० पंचचोद्दस०। श्रवरिथय० अज० श्रद्धचोद्दस०।

५०६. पंचिदियतिरिक्ख०३ पंचणा०-- एवदंसणा०-- सादासाद०-- मोहणीय० ६४-तिरिक्खगदि-एइंदि०-- श्रोरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-झगुरु०४-थावर- पज्जत- अपज्जत-पत्तेय०-साधार०-धिराधिर-सुभासुभ-इभग-अ-प्रकृतियों की जघन्य रिथित के बन्धक जीवों का स्पर्शन चेत्र के समान है। अजघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने कुछ कम छह वडे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है।

४०४. तिर्यञ्चोंमें पांच ज्ञानावरण, नी दर्शनावरण, दो वेदनीय, मिथ्यात्व, सीलह कपाय, नो नोकपाय, दो गति, चार जाति, ख्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, छह संस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, वर्णचतुष्क, दो श्रानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, श्रानप, उद्योत, दो विहायोगित, त्रस, वादुर, पर्याप्त, ऋपर्याप्त, प्रत्येकशरीर, साधारणशरीर, स्थिर ऋर्याद छह युगल, निर्माण, नीचगात्र, उच्चगात्र श्रीर पांच अन्तराय इनकी जवन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका स्परान चेत्रके समान है। अजवन्य म्थितिके वन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। तिर्यक्काय अोर सृदमकी जघन्य अोर अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक त्तेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यायुकी जघन्य त्र्योर त्र्यजघन्य स्थितिके वन्धक जीवीने लीकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण त्रोर सर्व लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रिय जाति, स्थावर त्रीर वैकियिक छहका भङ्ग त्रांघके समान है। इसी प्रकार सामान्य तियन्त्रोंके समान मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, त्र्यसंयत, त्र्यभव्य त्र्योर मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इन जीवोंके देवगति स्रोर देवगत्यानुपर्वीकी स्रजधन्य म्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम पांच बट चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि असंयत जीवोंमे वैकियिक शरीर श्रीर वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्गकी श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवाने बुछ कम ग्यारह बट चौदह राज चेत्रका स्परीन किया है। तथा इन्हीं असंयत जीवोंमें तीर्थङ्कर प्रकृतिकी अजघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम त्राठ वटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है।

४०६. पञ्चेन्द्रिय तिर्यव्चित्रिकमें पांच ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, सातावेदनीय, श्रसाता-वेदनीय, मोहनीय चौवीस, तिर्यञ्चगित, एकेन्द्रिय जाति, श्रोदारिक शरीर, तेजस शरीर, कःमण शरीर, हुरुढसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलवु चतुष्क, स्थावर, पर्याप्त, श्रपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, स्थिर, श्रस्थिर, शुभ, श्रशुभ, दुर्भग, श्रनाद्य, श्रयशःकीर्ति, निर्माण, नीचगोत्र श्रीर पांच श्रन्तराय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोन लोकके श्रसंख्यातवे भाग प्रमाण णादे०-अजस०-णिमि०-णीचा०-पंचंतराइगं० जह० लो० असंखेज । अज० लो० असखेज एक्षेत्र । प्रवित्त एक्ष्मं दि०-थावर० जह० सत्तचोद्दस० । उजो०-जसिग० जह० खेतं । अज० सत्तचोद्दस० । सहुम० दो वि पदा लोग० असंखेज्ज० सव्वलो० । सेसाणं जह० खेतं । अज० अपपपणो [फोसणं कादव्वं । ]

४०७. पंचिदियतिरिक्खअपन्जत्ता० पंचणा०-णवदंसणा०-दोवेदणी०-मोह-णीय०२४-तिरिक्खगदि-एइं दिय०-श्रोरालि०-तेजा०-क०-हुं ७०-वएण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-थावरणा०-पज्जत्त-अपन्जत्ता-पन्ने०-साधार०-थिराथिर-सुभो-सुभ-दुभग-अणादे०-अजस०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० जह० खेनं। अज०हि० लोग० असंखेन्ज० सन्वलो०।णवरि एइं दि०-थावर० जह० सन्ताचोद्द०। उन्जो०-बादर०-जसगि० जह० खेतं। अज्ज० सन्ताचेह्स०। सेसाणं जह० अज० खेत्तभंगो। खबरि सुहुम० जह० अज० लोग० असंखेज० सन्वलो०। एवं पंचिदिय-तस-अपजन्म गाणं सन्वविगलिदिय-बादरपुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-बादरवणफदिपनेय०पज्जन्माणं च।

त्रेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक दोत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति और स्थावरकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत और यशःकीर्तिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन तेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है। बाद्रकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम तेरह बटे चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन त्रेत्रके समान है। अजघन्य म्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम तेरह बटे चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है। सूत्त्मके दोनों ही पद्वाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग-प्रमाण और सब लोक त्रेत्रका स्पर्शन किया है। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका

४०७. पञ्च न्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त जीवोंमें पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, दो वेदनीय, चौवीस मोहनीय, तियञ्चगित, एकेन्द्रिय जाति, ओदारिकशरीर, तैजसशरीर, कामणशरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तियञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुललवु चतुष्क, स्थावर, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुर्भग, अनादेय, अयशःकीर्ति, निर्माण, नीचगोत्र और पांच अन्तराय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंना स्पर्शन चेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंस्थातवें भागप्रमाण और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति और स्थावर इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियों की जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके समान है। इतनी विशेषता है कि सूदमकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार, पद्चेन्द्रिय अपर्याप्त और त्रस अपर्याप्त जीवोंके तथा सब विकलेन्द्रिय, बादर प्रथ्वी-इसी प्रकार, पद्चेन्द्रिय अपर्याप्त और त्रस अपर्याप्त जीवोंके तथा सब विकलेन्द्रिय, बादर प्रथ्वी-

५०८. मणुसगदीएसु३ सच्वपगदीणं जह० खेरां। श्रज्ञ० ऋष्पष्पणो फोसणं कादव्वं। एवं मणुसञ्चपद्जना०।

५०९. देवेसु थावरपगदीणं जह० खेत्तां । झज्ज० अट्ट-णवचो० । तसपगदीणं जह० खेत्ताभंगो । अज० अट्टचो० । गावरि दोझायु०-तित्थय० जह० अज० अट्ट-चोद्द० । एवं सव्वदेवागां अप्यप्यगो फोसणं गाद्ग गोदव्वं ।

५१०. एइंदिए तिरिक्खोघं । बादरएइंदिय-पज्जत्त-अपज्जत्ता० सन्ववगदीगां जह० लोग० संखेज्ज०। अज० सन्वलो०। ग्यविर मगुसायु०-मगुसगदि-मगु सागु०-उन्चा० जह० अज० लोग० असंखेज्ज०। एइंदि०-धावर० जह० सत्तचो०। अज० सन्वलो०। उज्जो०-बादर०-जसिग० जह० खेत्तं। अज० सत्तचोद्द०। तिरिक्खायु०-आदाव०-सुहुम०-तसपगदीगां च खेतं।

४११. पुढवि०-आउ०-तेउ०-बाउ० तिरिक्खायु०-पुहुम० जह० अज० सच्व-लो० । सेसाणं जह० लोग० असंखेज्ज० । अज० सच्वलो० । स्वार एइंदिय-थावर० कायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, वादर वायुकायिक पर्याप्त और बादर वनस्पत्तिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए ।

४०८. मनुष्यत्रिकमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके सम न है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका अपना अपना स्पर्शन करना चाहिए। इसी प्रकार मनुष्य अपर्यात जीवोंके जानना चाहिए।

४०६. देवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी जवन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन त्रेत्रके समान है। अजचन्य स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वटे चौदह राजु और कुछ कम नो वटे चौदह राजु खेत्रका स्पर्शन किया है। त्रस प्रकृतियोंकी जवन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन त्रेत्रके समान है। अजवन्य स्थितिके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वटे चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि दो आयु और तीर्थकर प्रकृतिकी जघन्य झोर अजवन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वटे चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार सब देवोंके अपना अपना स्पर्शन जानकर ले अ ना चाहिए।

४१०. एकेन्द्रियों में सामान्य तियं क्वों के समान भक्क है। बादर एकेन्द्रिय थार उनके पर्याप्त अपर्याप्त जीवों में सब प्रकृतियों को जबन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके संख्यातवें भागप्रमाण त्रेत्रका स्पर्शन किया है। अजबन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक त्रेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यायु, मनुष्यगित, मनुष्यगित्यानुपूर्वी और उच्चगात्रकी जबन्य और अजबन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण त्रेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रिय जाति और स्थावरकी जबन्य स्थितके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है। अजबन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक त्रेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत, बादर और यशःकीर्ति इनकी जबन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने स्थ लोक त्रेत्रके समान है। अजबन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजु त्रेत्र का स्पर्शन किया है। तियंकवायु, आत्राप, सूत्तम और त्रस प्रकृतियोंका भक्क त्रेत्रके समान है।

४११. पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक और वायुकायिक जीवोंमें तिर्यक्कायु और सूद्रम इनकी जवन्य और अजघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने सब लोक देत्र का स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंकी जबन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण देत्र का स्पर्शन

जह सत्तचो० | अज० सव्वलो० | उडजो०-बादर-जसगि० जह० अज० खेनं | बादर-पुढिवि०-आउ०-तेउ०-बाउ० थावरपगदीगां जह० लोग० असंखेडज० | अज० सव्व-लो० | एइंदिय०-थावर० पुढिविभंगो | उडजो०-बादर-जसगि० तिरिक्ख०अप-ज्जत्तभंगो | सेसाग्रं जह० अज० खेत्तभंगो | बादरपुढिवि०-आउ०-तेउ०-बाउ०अपज्जत० थावरपगदीणं जह० अज० खेनं | एइंदि०-उडजो०-थावर०-बादर०-जसगि० बादर-पुढिविभंगो | सुहुम० जह० अज० खेनं | सेसाग्रं पि खेन्तभंगो |

५१२. वर्णफिदि-णियोदेसु तिरिक्लायु-सुहुम० जह० अज० सव्वलो०। एइंदि०-उन्जो०-थावर-बादर-जसिग० पुढिविभंगो। सेसाणं खेत्तभंगो। णविर मणुसायु० तिरि-क्खोषं । बादरवणफिदि-णियोद-पन्जना-अपन्जना० बादरपुढिविअपन्जतभंगो। बादरवणफिदिपत्ते० बादरपुढिविभंगो। सव्वसुहुमाणं खेत्तं। खविर मणुसायु० एइंदिय-भंगो। खविर वाऊणं जिम्ह लोग० असंखे० तिम्ह लोगस्स संखेन्जिदिभागं कादव्वं। ५१३. पंनिदिय-तस०२ एइंदिय-थावरणा० जह० सत्त्वो०। अज० अद्रवोह०

किया है। तथा अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति और स्थावर इनकी जघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत, बादर और यशःकीर्ति इनकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। वादर पृथ्वीकायिक, बादर जलकायिक, बादर अग्निकायिक और बादर वायुकायिक जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्र का स्पर्शन किया है। एकेन्द्रिय जाति और स्थावर इनका भङ्ग पृथ्वीकायिक जीवोंके समान है। उद्योत, बादर और यशःकीर्ति इनका भङ्ग तियंबच अपर्याप्तकों के समान है। शेष प्रकृतियों की जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। बादर पृथ्वीकायिक अपर्याप्त, वादर जलकायिक अपर्याप्त, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त जीवोंमें स्थावर प्रकृतियों की जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। एकेन्द्रिय जाति, उद्योत, स्थावर, बादर, और यशःकीर्ति इनका भङ्ग बादर पृथ्वीकायिक जीवोंके समान है। एकेन्द्रिय जाति, उद्योत, स्थावर, बादर, और यशःकीर्ति इनका भङ्ग बादर पृथ्वीकायिक जीवोंके समान है। एकेन्द्रिय जाति, उद्योत, स्थावर, बादर, और यशःकीर्ति इनका भङ्ग बादर पृथ्वीकायिक जीवोंके समान है। शेप प्रकृतियोंका भी स्पर्शन चेत्रके समान है।

५१२. वनस्पतिकायिक त्रोर निगोद जीवोंमें नियंकचायु त्रोर सृद्धम इनकी जघन्य त्रोर श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रियजाति, उद्योत, स्थावर, बादर त्रौर यशःकीर्तिका भङ्ग पृथ्वीकायिक जीवोंके समान है। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग चेत्र के समान है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यायुका भङ्ग समान्य तियंकचों के समान है। बादर वनस्पतिकायिक त्रौर निगोद तथा इनके पर्याप्त श्रीर त्र्यपर्याप्त जीवोंमें बादर पृथ्वीकायिक श्रप्याप्त जीवोंके समान भङ्ग है। बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर जीवोंमें बादर पृथ्वीकायिक जीवोंके समान भङ्ग है। सब सूच्मोंका भङ्ग चेत्र के समान है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यायुका भङ्ग एकेन्द्रियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि ननुष्यायुका भङ्ग एकेन्द्रियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि वायुकायिक जीवोंका जहाँपर लोकका श्रसंख्यात्वां भाग प्रमाण स्पर्शन करना चाहिए। ५१३. पकचेन्द्रियद्विक त्रौर त्रसद्विक जीवोंमें एकेन्द्रिय त्रौर स्थावर इनकी जघन्य स्थिति

सञ्चली । सेसाणं जह ० खेतं । श्रज ० श्रणुकस्समंगो ।

५१४. पंचमण०-तिण्यिवचि० इत्यि०-सवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-श्रप्प-सत्थ०-दूभग-दुस्सर-श्रणादे० जह० श्रद्ध-बारह०। श्रज० श्रणुकस्समंगो। एइंदि०-थावर० जह० श्रद्ध-सवचो०। श्रज० श्रणुकस्समंगो। मस्समिद०४ जह० श्रज० श्रद्धचोद्दस०। एवं श्रादावं पि। सेसासं पि जह० खेरां। श्रज० श्रणुकस्सफोसण-भंगो। सविर सुहुम० जह० लो० श्रसंखेज्ज० सन्वलो०। विचिजोगि०-श्रसचमोस० तसपडजत्तमंगो।

४१५.कायजोगि०-त्रोरालिय० त्रोघं। णवरि त्रोरालियका० मणुसायु-तित्थयराणं चरजु णित्थ । श्रोरालियमि० देवगदि०४-तित्थय० उक्तस्समंगो। सेसाणं तिरिक्लोघं। णवरि एइंदि०-थावर०-सुहुम० जह० श्रज० खेत्तं। वेउन्वियका० थीणगिद्धि०३-मिन्द्य०-ग्रणंताणुवंघि०४ जह० अहुचो०। श्रज० श्रणुक्तस्समंगो। तिरिक्लगदि०४ जह० खेत्तं। श्रज० श्रणुक्कस्समंगो। इत्थि०-णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-श्रप्य-

के बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजु दोत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु और सब लोक दोत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंको जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन दोत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन अनुकृष्टके समान है।

प्रेष्ठ, पांच मनोयोगी श्रौर तीन वचनयोगी जीवोंमें स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पांच संस्थान, पांच संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुस्वर श्रौर श्रनादेय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ वटं चौदह राजु श्रौर कुछ कम बारह बटे चौदह राजु नेत्रका स्पर्शन किया है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंना भङ्ग श्रनुत्कृष्टके समान है। एकेन्द्रय जाति श्रौर स्थावरकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ वटं चौदह राजु श्रौर कुछ कम नौ बटे चौदह राजु श्रौर कुछ कम नौ बटे चौदह राजु होत्रका स्पर्शन किया है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंना स्पर्शन श्रनुत्कृष्टके समान है। मनुष्यगति चार की जघन्य श्रोर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु नेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार श्रातपकी श्रपेत्ता भी स्पर्शन जानना चाहिए। श्रेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन नेत्रके समान है श्रौर श्रनुकृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन श्रमुत्कृष्टके समान है। इतनी विशेषता है कि सूद्मकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण श्रौर सव लोक नेत्रका स्पर्शन किया है। वचनयोगी श्रीवोंका भङ्ग त्रसपर्याप्त जीवोंके समान है।

४१४. काययोगी स्रोर स्रोदारिककाययोगी जीवोंका भङ्ग स्रोधके समान है। इतनी विशेषता है कि स्रोदारिककाययोगी जीवोंमें मनुष्यायु स्रोर तीथकर प्रकृतियोंका राजुप्रमाण स्पर्शन नहीं है। स्रोदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें देवगित चतुष्क स्रोर तीथक्कर प्रकृतियोंका भङ्ग खरकुष्टके समान है तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्यव्चोंके समान है। इतनी विशेषता खरकुष्टके समान है तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्यवचोंके समान है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति, स्थावर स्रोर सूद्म इनकी जधन्य स्रोर स्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। वैक्रियककाययोगी जीवोंमें स्त्यातगृद्धि तीन, मिथ्यात्य स्रोर स्वनन्तानुस्पर्शन चेत्रके समान है। वैक्रियककाययोगी जीवोंमें स्त्यातगृद्धि तीन, मिथ्यात्य स्रोर स्वनत्तानुक्यी चारकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका भङ्ग स्राहकुष्टके समान है। तियञ्चर्गात चारकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका

सत्थ०-द्भग-दुस्सर-ग्रणादे० जह० श्रद्ध-बारह० । श्रज्ज० श्रणुकस्सभंगो । दोश्रायु-मणुसग०-मणुसाणु०-द्यादाब-तित्थय०-उच्चागो० जह० श्रज्ज० श्रद्धचो० । एइंदि०-थावर० जह० श्रज्ज० श्रद्ध-णवचोद० । सेसाणं जह० श्रद्धचो० । श्रज्ज० श्रणुकस्स-भंगो । वेउन्वियमि०-श्राहार०-आहारमि० खेत्तभंगो । कम्महग० खेत्तभंगो । एवं श्रिणाहार० ।

५१६. इत्थि-पुरिसेस एइं दिय-थावर० जह० सत्तचो०। अज० अणुकस्सभंगो। सुहुम० जह० अज० लोग० असंखेज० सव्वलो०। इत्थीए तित्थय० जह० अज० खेतं। सेसाणं जह० खेतं। अज० अणुकस्सभंगो। गावुंसगे कोधादि०४-अचक्खुदं०-भवसि०-आहारग ति श्रोघं। गावुंस०-मणुसायु०-तित्थय० श्रोरालियकायजोगिर्मगो। गावरि गावुंसगे तित्थय० खेतं। अवगदवेदे खेतं।

प्रश. विभंगे श्रसादा०-अरिद-सोग-श्रिश्र-श्रसुभ-श्रजस० जह० श्रदुबाहरचोद्दस० | श्रज० श्रणुक्तस्सभंगो | इत्थि०-णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-श्रप्यस्पश्चन श्रवुत्कष्टके समान है । स्त्रीवद, नपुसंकवेद, पांच सस्थान, पांच संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग दुःस्वर श्रोर श्रनादेय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु श्रोर कुछ कम बारह बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है, तथा श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका भङ्ग श्रवुत्कृष्टके समान है । दोश्रायु, मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रातप, तीर्थक्क्र्र श्रोर उच गोत्र इनकी जघन्य श्रोर श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है । एकेन्दिय जाति श्रोर स्थावर इनकी जघन्य श्रोर श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है । श्रेप प्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदद राजु चेत्रका स्पर्शन किया है । तथा श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदद राजु चेत्रका स्पर्शन किया है । तथा श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदद राजु चेत्रका स्पर्शन किया है । तथा श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने एश्रिन श्रनुत्कृष्टके समान है । वेकियक मिश्रकाययोगी, श्राहारक काययोगी श्रीर श्राहारक मिश्रकाययोगी जीवोंमें श्रपनी सब प्रकृतियोंका मङ्ग चेत्रके समान है । इसी प्रकार श्रनाहारक जीवोंके जाननाचाहिए।

४१६. स्त्रीवेदी और पुरुषवेदी जीवोंमें एकेन्द्रिय जाति और स्थावर इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात वटे चोंदह राजु त्रेत्र का स्पर्शन किया है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका भङ्ग अनुत्कृष्टके समान है। सूद्मकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक त्रेत्रका स्पर्शन किया है। स्निवेदी जीवोंमें तीर्थङ्कर प्रकृतिकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन त्रेत्रके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन त्रेत्रके समान है। तथा अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवों का स्पर्शन अनुत्कृष्ट के समान है। नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कपायवाले, अच्छ द्रश्नी, भव्य और आहारक जीवोंका भङ्ग आघके समान है। किन्तु नपुंसकवेद, मनुष्यायु और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग औदारिक काययोगी जीवों के समान है। इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेदमें तीथङ्कर प्रकृतिका भङ्ग त्रेत्रके समान है। अवगतवेदमें अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग त्रेत्रके समान है।

४१७. विभङ्ग ज्ञानी जीवोंमें ऋसाता वदनीय, ऋरति, शोक, ऋस्थिर, ऋग्रुम ऋौर ऋयशः कीर्ति इनकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम ऋाठ बटे चौदह राजु ऋौर सत्थ०--द्भग-दुस्सर-भयादे० जह० अहु-नारहचो०। अज० अणुकस्समंगो। मश्च-समिद्यंचग० जह० अज० अहु वोद०। सेसाणं जह० खेतं। अज० अणुकस्समंगो। जबरि एइंदि०-थावर जह० अहु-सवचोद०। अज० अणुकस्समंगो। सुहुम० जह० अज० हो० असंखे० सव्वलो ०।

५१८. आमिणि०-सुद०-भोधि० मणुसायु०-मणुसगदिपंचग० जह० अज० श्रद्ध चोद्दस० । देवायु०-श्राहारदुगं खेत्तं । देवगदि०४ उक्तरसभंगो । सेसाणं जह० खेत्तं । श्रत्र० श्रणुक्तस्सभंगो । मणपज्ज०-संजद-सामाइ०-छेदो०-परिहार०-सुहुमसं० खेत्तं ।

४१६, संजदासंजद० असादा०-अरिद्—सोग—अथिर—असुभ—अजस० जह० अज० छचोट्द० । देवायु०—तित्थय० जह० अज० खेतां । सेसाणं जह० खेतां । अज० छचोट्द० । ओधिदं०—सम्मादि०—खइग०—वेदग०—उवसम०—आमिणि०भंगो । स्वरि

कुछ कम बारह वटे चौदह राजु तेत्र का स्पर्शन किया है। अध्ययन्य स्थिति के बन्धक जीवोंका स्पर्शन अनुत्कृष्टके समान है। स्त्रीवंद, नपुं सकवंद, पांच संस्थान, पांच संहनन, अप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुस्वर और अनादेय इनकी जबन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु और कुछ कम बारह बटे चौदह राजु तेत्र का स्पर्शन किया है। तथा अजयन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन अनुत्कृष्टके समान है। मनुष्यगतिपद्भक्कि जयन्य और अज्याद्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु नेत्रका स्पर्शन किया है। रोष प्रकृतियों की जयन्य स्थिति के बन्धक जीवोंका स्पर्शन है। इतनी बिरोषता है। तथा अजयन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन अनुत्कृष्ट के समान है। इतनी बिरोषता है कि एकेन्द्रिय जाति और स्थावर इनकी जयन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने कुछकम आठ बटे चौदह राजु और कुछ कम नौ बटे चौदह राजु नेत्रका स्पर्शन किया है। तथा अजयन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन अनुतकृष्टके समान है। सूद्मकी जयन्य और अजयन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंस्थातवें भाग प्रमाण और सब लोक नेत्रका स्पर्शन किया है।

५१८. श्रामिनिवोधिकज्ञानी, श्रु तज्ञानी श्रीर श्रविश्वानी जीवोंमें मनुष्यायु श्रीर मनुष्य-गति पञ्चककी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। देवायु श्रीर श्राहारकद्विकका भङ्ग चेत्रके समान है। देवगतिचतुष्कका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। तथा श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन श्रनुत्कृष्टके समान है। मनःपर्ययङ्गानी, संयत, सामायिक संयत, छेदोपस्थापना संयत, परिहारविशुद्धि संयत श्रीर सूच्मसाम्पराय संयत जीवोंका भङ्ग चेत्रके समान है।

४१६. संयतासंयत जीवोंमें श्रासाता, श्रास्त, शोक, श्रास्थर, श्राञ्चभ श्रीर श्रयशःकीर्ति इनकी जघन्य श्रीर श्रज्ञचन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। देवायु श्रीर तीर्थंकर इनकी जघन्य श्रीर श्रज्जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। तथा श्रज्जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजु चेत्रका स्परान किया है। श्रविधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, चायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि श्रीर उपशामसम्यग्दृष्टि

खइगे देवगदि०४ खेर्ता । उवसमे तित्थय० खेर्ता । चक्ख्दं० तसपञ्जतभंगो ।

५२०. किण्ण०-णील०-काउ० असंजदभंगो । णवरि देवगदि०३-तित्थय० खेनं ।
मणुसायु०तिरिक्लभंगो । तेऊए० पंचणा०-णवदंसणा०-सादासाद०-मोह०२४पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-चण्ण०४-अगु०४-गसत्थिवि०-तस०४-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० जह० खेतं । अज० अणुक्तस्सभंगो । देवगदि०४ जह० खेतं । अज० दिवडुचो० । सेसाणं सोधम्मभंगो । एवं पम्माए सहस्सारभंगो काद्व्यो । देवगदि०४ जह० खेतं । अज० पंच्चो० । सुक्काए मणुसगदिपंचग०
जह० अज० छच्चोद्द० । सेसाणं जह० खेतं । अज० छच्चो० । णवरि इत्थि०-ण्युंस०पंचसंठा०-पंचसंघ०-अपसत्थ०-द्भग-दुस्सर-अणादे० जह० अज० छच्चोद्द० ।

४२१. सास**णे इ**त्थि०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-ग्रप्पसत्थ०-तस०४ जह० अज० श्रद्ध-एकारस० । मणुसगदिपंचग० जह० अज० श्रद्धचो० । देवगदि०४ जह० अज०

जीवों का भङ्ग त्राभिनिवोधिकज्ञानी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि चायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंमें देवगतिचतुष्कका भङ्ग चेत्रके समान है। तथा उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंमें तीथङ्कर प्रकृतिका भङ्ग चेत्रके समान है। चक्षदुर्शनवाले जीवोंका भङ्ग त्रसपर्याप्त जीवोंके समान है।

४२०. कृष्ण, नील खाँर कापीत लेश्यावाले जीवोंका भक्क श्रसंयत जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि देवगति त्रिक श्रीर तीर्थ हुर प्रकृतिका भङ्ग चेत्रके समान है। तथा मनब्यायका भक्क तिर्यष्टचों के समान है। पीतलेश्यावाले जीवोंमें पांच ज्ञानावरण, नौ दुर्शना-बर्गा, साता वेदनीय, श्रासाता वेदनीय, चौबीस मोहनीय, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, ऋगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रस चतुष्क, स्थिर, श्रास्थिर, श्रुभ, श्रशुभ, यशःकीर्ति, श्रियशःकीर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र श्रौर पांच श्रान्तराय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन त्रेत्रके समान है। तथा श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन श्रनुत्कृष्टके समान है। देवगति चतुष्ककी जघन्य श्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन न्नेत्रके समान है। तथा श्रजयन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ बटे चौदह राजु त्तेत्रका स्परीन किया है। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है। इसी प्रकार पद्मलेश्या-वाले जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सहस्त्रार कल्पके समान भक्क करना चाहिए। तथा देवगति चतुष्ककी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्परीन चेत्रके समान है। स्रौर श्चाजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने इद्ध कम पांच बटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शुक्ल लेश्यावाले जीवोंमें मनुष्यगतिपञ्चककी जघन्य श्रौर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजु चेत्रका स्परान किया है। तथा शेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है श्रीर श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौद्ह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पांच संस्थान, पांच संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुःवर श्रोर अनाद्य इनकी जवन्य श्रोर श्रजवन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह वटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है।

४२१ सासादन सम्यग्दृष्टि जीवोंमें स्नीवेद, पांच संस्थान, पांच संहनन, अप्रशस्त विहायो-गित और त्रस चतुष्ककी जवन्य और अजघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंन कुछ कम आठ बटे चौदह राजु और कुछ कम ग्यारह बटे चोदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यगितपञ्चककी पंचची । सेसाणं जह अहची । अज अणुक्तस्सभंगो । सम्मामिच्छे सव्वपग-दीण जह अज अहची । एवरि देवगदि ०४ जह खेतं । सिएण ० पंचिदियमंगो । असिएण ० तिरिक्लोयं । एवरि आयु ० —वे उन्वियञ्च ० जह ० अज ० खेत्रमंगो । एवं जहएएएयं समत्तं । एवं फोसणं समत्तं ।

### कालपरूवणा

५२२. कालो दुवि०-जह० उक्तस्मयं च। उक्तस्सए पगदं। दुवि०-ग्रोघे० श्रादे०। त्रोघे० श्रिप्यायु० उक्त०द्विदिबंधया केविचरं कालादो होदि ? जहण्णेण एगसमयं, उक्तस्सेण श्रावित्याए श्रसंखेजिदिमागो। अणु० जह० श्रंतो०, उक्त० पित्रविमस्स श्रसंखेजिदि•। तिरिक्खायु० उक्त० जह० एग०, उक्त० संखेज्जसमया। अणु० सन्बद्धा। मणुस-देवायु० उक्त० जह० एग०, उक्त० संखेज्जसम०। श्रणु० जह० श्रंतो०, उक्त० पित्रविमस्स श्रसंखेजिदिमा०। श्राहार०-श्राहार०अंगो०-तित्थय० उक्त० जहण्णु० अंतो०, श्रणु० सन्बद्धा। सेस।णं उक्त० जह० एग०, उक्त० पित्रवे० श्रसंखे०।

जयन्य और अजयन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। देवगतिचतुष्ककी जयन्य और अजयन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम पांच बो चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। शेप प्रकृतियोंकी जयन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है और अजयन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन अनुत्कृष्टके समान है। सम्यिग्ध्यादृष्टि जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी जयन्य और अजयन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि देव-गित चतुष्ककी जयन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। संज्ञी जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चिन्द्रयों समान है। असंज्ञी जीवोंमें समान्य तिर्थक्कोंके समान है। इतनी विशेषता है कि जायु और वैकियिक छह इनकी जयन्य और अजयन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। इस प्रकार जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। इस प्रकार जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। इस प्रकार जयन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। इस प्रकार जयन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। इस प्रकार जयन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। इस प्रकार जयन्य स्थित समाप्त हुआ।

#### कालप्ररूपणा

४२०. काल दां प्रकारका है-जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेना निर्देश दो प्रकारका है-ओप और आदेश । ओपसे नरकायुकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाले जीवोंका कितना काल है ? जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आविलके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मु हूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । तियञ्चायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्यकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल है । शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल एक समय है आर अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल एक समय है आर उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । अनुत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल है । इसी प्रकार आंघके समान सामान्य तिर्यक्न, काययोगी, आंदारिक काययोगी, नपुंसकवेदी,

अग्रु० सन्बद्धा । एवं श्रोघमंगो तिरिक्खोघं कायजोगि-ओराज्ञि०-णवुंस०-कोश्राद्दि०-४-मदि-सुद०-श्रसंज०-अवक्खुदं०-तिण्णिले०-भवसिद्धि-श्रव्भवसिद्धि०-मिच्छादि०-अन्न-पिण-श्राहारग ति ।

भर३. णिरयेसु तिरिक्छ।यु० उक्क० जह० एग०, उक्क० आविल० भसंखे०। श्रणु० जह० श्रंतो०, उक्क० पितदो० असंखेज०। मणुसायु० उक्क० जह० एग०, उक्क० संखेज्जसम०। श्रणु० जहण्णु० श्रंतो०। सेसाणं उक्क० जह० एग,० उक्क० पितदो० भसंखेज०। श्रणु० सन्बद्धा। एवं सन्वणिरयाणं सन्वदेवाणं च। स्वतिर सत्तमाए मणुसग०—मणुसाणु०—उच्चा० उक्क० जह० श्रंतो०, उक्क० पितदो० भसंखे०। अणु० सन्बद्धा।

कोधादिचार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, श्रुसंयत, श्रचश्रु दर्शनी, तीन लेश्यावाले, भन्य, अभन्य, सिथ्यादृष्टि, असंज्ञी और श्राहारक जीवोंके जानना चाहिए।

४२३ नारकी जीवोंमें तिर्यक्कायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवित्व असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल अन्तम हूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्टकाल संख्यात समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तम हूर्त है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल है। इसी प्रकार सब नारकी और सब देवों के जानना चाहिए। इतनी विशेषता है की सातवीं पृथ्वीमें मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल अन्तम हूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल अन्तम हूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल है।

४२४. पञ्चेन्द्रितर्यञ्चित्रकमें तियञ्चायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धं करनेवाले जीवोंका काल श्रोधके समान है। श्रानुत्कृष्ट स्थितिका बन्धं करनेवाले जीवोंका जधन्य काल श्रान्तर्मु हूर्त है और उत्कृष्ट काल पत्यके श्रसंख्यात वें भाग प्रमाण है। रोप प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधके समान है। पञ्चेन्द्रिय तियञ्च श्रपयीप्तकोंमें तिर्यञ्चायुका भङ्ग नारिकयोंके समान है। तथा श्रेष प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधके समान है। इसी प्रकार सब श्रपयीप्त, श्रस, सब विकलेन्द्रिय, बादर पृथ्वी-कायिक, पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर आग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरोर पर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्य श्रपयीप्तकों में श्रायुश्चोंको छोड़कर सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धं करनेवाले जीवोंका जवन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल पत्यके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है।

४२४. मणुसेसु णिरय-देवायु० उक्क० जह० एग०, उक्क० संखेज्जसम०। अणु० जह० उक्क० अंतो०। तिरिक्ख-मणुसायु० उक्क० ओघं। अणु० जह० अंतो०, उक्क० पितदो० असंखेज्ज०। सेसाणं उक्क० जह० एग०, [उक्क०] अंतो०। अणु० सम्बद्धा। आहारदुगं तित्थय० ओघं। मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु चदुआयु० उक्क० जह० एग०, उक्क० संखेज्जसम०। अणु० जहण्यु० अंतो०। सेसाणं उक्क० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अणु० सन्बद्धा। आहारदुगं तित्थय० ओघं।

४२६. सन्बद्घे सन्वपगदीएां उक्क० जह० एग०, उक्क० श्रंतो०। त्राणु० सन्बद्धा। त्रायु० णिरयभंगो।

४२७. सन्वएइंदिएस्र तिरिक्त-मणुसायु० पंचिदियतिरिक्त्वत्रपज्जत्तभंगो । ण्विरि तिरिक्त्वायु० त्रणु० सन्वद्धाः । सेसाएं उक्क० त्रणु० सन्वद्धाः । एस भंगो सन्वस्रुहुमाणं बादरपुढवि०--त्राउ०--तेउ०--वाउ०त्रपज्जत्त०---वणप्पदि--णियोद्० बादरपज्जत्त-स्वपज्जत्ता० बादरवर्णप्पदिपत्तेय०त्रपज्जत्तगाणं च ।

५२८. पुढवि०--त्राउ०-तेउ०-वाउ०-वादरपुढवि०-त्राउ०--तेउ०--वाउ०-वादर-

४२४. मनुष्योमें नरकायु श्रीर देवायुकी उत्छष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्छष्ट काल संख्यात समय है। श्रनुत्छष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य श्रीर उत्छष्ट काल श्रन्तमुंद्वर्त है। तिर्यश्चायु श्रीर मनुष्यायुकी उत्छष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल श्रन्तमुंद्वर्त है श्रीर उत्छष्ट काल पल्यके श्रसंख्यालवें भाग प्रमाण है। शेष प्रकृतियोंकी उत्छष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल श्रन्तमुंद्वर्त है। श्रनुत्छष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्छष्ट काल श्रन्तमुंद्वर्त है। श्रनुत्छष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल है। श्राहारकद्विक श्रीर तीर्थं इर प्रकृतिका भन्न श्रोधके समान है। मनुष्यपर्याप्त श्रीर मनुष्यिनी जीवोंमें चार श्रायुश्रोंकी उत्छष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्छष्ट काल स्थात समय है। श्रनुत्छष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्छष्ट काल श्रन्तमुंद्वर्त है। श्रेष प्रकृतियोंकी उत्छष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्छष्ट काल श्रन्तमुंद्वर्त है। श्रमुत्छष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्छष्ट काल श्रन्तमुंद्वर्त है। श्रमुत्छष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्छष्ट काल श्रन्तमुंद्वर्त है। श्रमुत्छष्ट स्थितिका सम्ध करनेवाले जीवोंका सब काल है। श्राहारकद्विक श्रीर तीर्थं इरका भन्न श्रोधके समान है।

५२६. सर्वार्थिसिद्धिके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल है। आयुका भक्त नारिकयोंके समान है।

४२७. सब एकेन्द्रियों में तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुका भन्न पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्या-सकोंके समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चायुकी श्रवुत्स्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका काल सर्वदा है। श्रेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर श्रवुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका काल सर्वदा है। यह भन्न सब सूक्ष्म, बादर पृथ्वीकायिक श्रपर्याम, बादर जल-कायिक श्रपर्याम, बादर श्रीग्नकायिक श्रपर्याम, बादर वायुकायिक श्रपर्याम, वनस्पति-कायिक, निगोद श्रीर इन दोनोंके बादर श्रीर पर्याम श्रपर्याम तथा बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर श्रपर्याम जीवोंके जानना चाहिए।

४२८. पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, बादर पृथ्वीकायिक,

वर्णप्फदिपत्तेय० दोत्रायु० एइंदियभंगो । पज्जत्तगे दोत्रायु० पंचिंदियतिरिक्ख-त्र्यपज्जत्तभंगो । सेसार्णं पगदीर्णं उक्क० जह० एग०, उक्क० पत्तिदो० असंखे० । त्र्रणु० सन्वद्धा ।

५२६. पंचिदिय--तस०२ तिषिणुश्रायु० उक्क० जह० एग०, उक्क० संखेजनसम०। श्रणु० जह० श्रंतो०, उक्क० पितदो० श्रसंखे०। सेसाणं श्रोघं। एवं पंच-मण्०-पंचवचि०-वेउव्वियका०-इत्थि०-पुरिस०--विभंग०-चक्खुदं०--तेउले०-पम्मले०- सुक्कले०--सिण्ण ति। एवरि पंचमण्०--पंचवचि०--वेउव्वि० श्रायु० श्रणु० जह० एग०, उक्क० पितदो० श्रसंखेजन०। तेउ-पम्पाए तिरिक्ख-मणुसायु० देवोघं। सुकाए दो वि श्रायु० मणुसि०भंगो।

५३०. त्रोरालियमिस्से दोत्रायु० एइंदियभंगो । देवगदि०४-तित्थय० सत्थाणे उक्क० जह० एग०, उक्क० त्रंतो० । त्र्रथवा सरीर-पज्जत्तीए दिज्जदि त्ति तदो उक्क० जहण्णु० श्रंतो० । त्र्रणु० जह० उक्क० त्रंतो० । सेसाणं उक्क० जह० एग०, उक्क० पितदो० त्र्रसंखेज्ज० । त्र्रणु० सन्बद्धा त्र्रथा-

बादर जलकायिक, बादर ऋग्निकायिक, बादर वायुकियक ऋौर बादर वनस्पितकायिक प्रत्येक शरीर जीवोंमें दो ऋग्युऋोंका भक्क एकेन्द्रियोंके समान है। इनके पर्याप्तकोंमें दो ऋग्युऋोंका भक्क पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च ऋपर्याप्तकोंके समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके ऋसंख्यात्वें भाग प्रमाण है। ऋनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका काल सर्वदा है।

४२६. पञ्चेन्द्रियद्विक श्रौर त्रसिद्वक जीवोंमें तीन श्रायुश्रोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रौर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है श्रौर उत्कृष्ट काल पत्यके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधके समान है। इसी प्रकार पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, वैकियिक काययोगी, स्थोवेदी, पुरुषवेदी, विभङ्गश्रानी, चतुदर्शनी, पीतलेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले, सुक्ललेश्यावाले श्रौर संश्री जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी श्रौर वैकियिककाययोगी जीवोंमें श्रायुके श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रौर उत्कृष्ट काल पत्यके श्रसंख्यावें भाग प्रमाण है। पीत श्रौर पद्मलेश्यावाले जीवोंमें तिर्यञ्चायु श्रौर ममुष्यायुका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। श्रम्ललेश्यावाले जीवोंमें दोनों हो श्रायुश्रोंका भङ्ग ममुष्यिनयोंके समान है।

४३०. औदारिकमिश्रकाययोगी जोवोंमें दो आयुओंका भक्क एकेन्द्रियोंके समान है। देवगति चतुष्क श्रीर तीर्थक्कर इनकी स्वस्थानमें उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तमुंहूर्त है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तमुंहूर्त है। श्रथवा शरीर पर्याप्तिमें श्रगर यह काल प्राप्त किया जाता है तो उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तमुंहूर्त है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तमुंहूर्त है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल पल्यके श्रसंख्यावें भाग प्रमाण है। श्रमुत्कृष्ट

पवत्तस्स । अथवा सरीरपज्जतीए दिज्जिद त्ति तदो धुविगाणं उक्क० जह० अंतो०, उक्क० पत्तिदो० असंखेज्ज० । एवं वेउव्वियमि०-आहारमि० । एवरि वेउव्वियमि० अणु० जह० श्रंतो०, उक्क० पत्तिदो० असंखेज्ज० । श्राहारमिस्से चत्तारि श्रंतो० ।

५३१. त्राहारकायजोगि॰ सन्वपगदीणं उक्क॰ त्रणु॰ जह॰ एग॰, उक्क॰ श्रंतो०। एवरि देवायु॰ उक्क॰ जह॰ एग॰, उक्क॰ संखेज्जसम०। त्रणु॰ जह॰ एग॰, उक्क० श्रंतो०। एवं त्राहारभिस्से देवायु॰।

५३२. कम्मइगे देवगदि०४-तित्थय० उक्क० ऋणु० जह० एग०, उक्क० संखेज्जसम०। सेसाएां उक्क० जह० एग०, उक्क० ऋावितयाए ऋसंखेज्ज०। ऋणु० सञ्बद्धा।

५३३. अवगदवेदे सन्वाएां उकः अणु॰ जह० एग०, उक्क० अंतो॰। एवं सुहुमसंप०।

५३४. त्राभि॰-सुद०-स्रोधि० सादावे॰-हस्स-रिद-त्राहारदुग-थिर-सुभ-जसिग०-तित्थय॰ त्रोघं । मणुसायु॰ देवोघं । देवायु० श्रोघं । सेसाएां सन्वाएां उक्क० जह०

स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका काल श्रधः प्रवृत्तके सर्वदा है। श्रथवा शरीरपर्याप्तिमें यह काल दिया जाता है तो ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जधन्य काल श्रन्तर्भुहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट काल पत्यके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। इसी प्रकार वैकियिकमिश्रकाययोगी श्रीर श्राहारकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि वैकियिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें श्रमुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जोवोंका जधन्य काल श्रन्तर्भुहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट काल पत्यके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। तथा श्राहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें चारों हो काल श्रन्तर्भुहूर्त हैं।

४३१. श्रहारककाययोगी जीवोंमें सब प्रकृतियोंका उत्कृष्ट श्रीर श्रनुःकृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहूर्त है। इनकी विशेषता है कि देवायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। श्रनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तम् हूर्त है। इसी प्रकार श्राहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें देवायुकी मुख्यतासे काल जानना चाहिए।

४३२. कार्मणकाययोगी जोवोंमें देवगतिचतुष्क श्रीर तीर्थद्वर प्रकृतिकी उत्कृष्ट और श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्राविलके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है।

४३३. श्रपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जधन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार सूक्ष्म-स्रांपरायिक संयत जीवोंके जानना चाहिए।

४३४. श्राभिनिबोधिकज्ञानी, श्रृतज्ञानी श्रोर श्रवधिज्ञानी जीवोंमें साता वेदनीय, हास्य, रति, श्राहारकद्विक, स्थिर, शुभ, यशःकीर्ति श्रोर तीर्थङ्कर इनका भक्न श्रोघके सामन है। मनुष्यायुका भक्न सामान्य देवोंके समान है। देवायुका भक्न श्रोघके समान है। शेष सव श्रंतो॰, उक्क॰ पलिदो॰ श्रसंखे॰ । श्रणु॰ सन्बद्धा । एवं संजदासंजदे श्रोधिदं०-सम्मादि०-वेदग० ।

४३५. मण्पज्जव॰ सादावे॰-हस्स-रिद--श्राहारदुग-थिर-सुभ-जसगि० उक्क० जह॰ एग०, उक्क० श्रंतो॰ । श्रणु० सन्बद्धा । सेसाणं उक्क० जह० उक्क० श्रंतो॰ । श्रणु॰ सन्बद्धा । एवं संजद-सामाइ॰-छेदो०- परिहार॰ ।

५३६. उवसम० पंचणा०-छदंसणा०--वारसक०-पुरिस०-भय-दुगुं-मणुसगदि-पंचिदि०-च्रोरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-च्रोरालि०च्रंगो०-वज्जरि०-वण्ण०४-मणु-साणु०-त्रगु०४-पसत्थवि०--तस०४--सुभग-सुस्सर-त्रादेज्ज०--णिमि०-णीचा०-पंचंत० उक्क० त्रणु० जह० द्रंतो०, उक्क० पलिदो० त्रसंखेज्ज०। सादावे०-हस्स-रदि-थिर-सुभ--जसगि० उक्क० श्रणु० जह० एग०, उक्क० पलिदो० त्रसंखेज्जदिभा०। त्रसादा०-त्ररदि-सोग-त्रथिर--त्रसुभ-त्रजस०-देवगदि०४ उक्क० जह० द्रंतो०, उक्क० पलिदो० त्रसंखे०। त्रणु० जह० एग०, उक्क० पलिदो० त्रसंखे०। त्राहारदुगं उक्क० त्रणु० जह० एग०, उक्क द्रंतो०। तित्थय० उक्क० जह० एग०, उक्क० त्रंतो०।

प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका सब काल है। इसी प्रकार संयतासंयत, अवधिदर्शनी, सम्यग्दिष्ट और वेदकसम्यग्दिष्ट जीवोंके जानना चाहिए।

४३४. मनःपर्ययञ्चानी जीवोंमें सातावेदनीय, हास्य, रित, श्राहारकद्विक, स्थिर, शुभ और यशःकीति इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जधन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहर्त है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जधन्य श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहर्त है। तथा श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। इसी प्रकार संयत, सामायिकसंयत छेदीपस्थापनासंयत श्रीर परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके जानना चाहिए।

५३६. उपशमसम्यग्दि जीवोंमें पाँच झानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कषाय, पुरुप्वेद, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगित, पञ्चेन्द्रियजाति, श्रौदारिकशरीर, तैजसशरीर, कर्मणशरीर समचतुरस्रसंस्थान, श्रौदारिकश्राङ्गोपाङ्ग, वर्ज्ञर्थमनाराचसंहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, श्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, निर्माण, नीचगोत्र श्रोर पाँच श्रन्तराय इनकी उत्कृष्ट श्रोर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल श्रन्तमुंहूर्त है श्रोर उत्कृष्ट काल पल्यके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। सातावेद्रनीय, हास्य,रित, स्थिर, श्रुभ श्रोर यशकीर्ति इनकी उत्कृष्ट श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल पल्यके श्रसंख्यतवें भाग प्रमाण है। श्रमातावेदनीय, श्ररित, श्रोक, श्रस्थर, श्रग्रुभ, श्रयशकोर्ति श्रोर देवगितचार, इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल श्रम्तमुंहूर्त है श्रोर उत्कृष्ट काल एल्यके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रीर श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल श्रन्तमुंहूर्त है। तोर्थेङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल श्रन्तमुंहूर्त है। तोर्थेङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल श्रन्तमुंहूर्त है। तोर्थेङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तम् है।

अणु० जह० उक्क० श्रंतो० । एवं सम्मामि० । एवरि देवगदि०४ धुविगाण भंगो । सासर्णे दोरिए आयु० उक्क० जह० एग०, उक्क० संखेज्ज० । अणु० जह० एग०, उक्क० पित्तदो० असंखेज्ज० । अणाहार० कम्मइगभंगो ।

### एवं उक्कस्सकालं समत्तं

५३७. जहएएए पगदं। दुवि०-ऋषि० आदे०। आषि० खवगपगदीएां आहारदुगं तित्थय॰ जह० द्विदंबंघ० केविचरं० ? जह० उक्क० अंतो॰। अज॰ सव्बद्धा।
तिरिक्खग०--तिरिक्खाणु॰--उज्जो०--णीचा० जह० जह० एग॰, उक्क॰ पिलदो०
असंखेज्ज०। अज॰ सव्बद्धा। तिरिण्यायायु॰ जह० जह० एग०, उक्क॰ आवित०
असंखेज्ज०। अज० जह० अंतो०, उक्क॰ पिलदो० असंखेज्ज॰। वेउव्वियद्ध०
उक्करसभंगो। सेसाणं जह० अज० सव्बद्धा। एवं ओघभंगो कायजोगि--ओरालियका॰-एवंस०-कोधादि०४-अचक्खुदं०-भवसि०-आहारगे ति। एवरि खवगपगदीणं कायजोगि--ओरालियका० जह० जह० एग०। एवरि जोग-कसाएसु आयुगस्स
अज० जह० एगस०।

मुंहर्त है। अनुत्रुष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्मुंहर्त है। इसो प्रकार सम्यग्मिध्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि देवगति चतुष्कका भक्त ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमं दो आयुओंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अनुत्रुष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका जन्ध्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अनुत्रुष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका जन्ध्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पत्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अनाहारक जीवोंका भक्त कार्मणकाययोगी जीवोंके समान है।

#### इस प्रकार उत्कृष्ट काल समाप्त हुआ।

४३७. जघन्यका प्रकरण है। उसकी ऋषेत्रा निर्देश दो प्रकारका है—ऋषि और आदेश । श्रोघसे चापक प्रकृतियाँ, श्राहारकद्विक श्रौर तीर्थद्वर इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका कितना काल है? जघन्य और उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहर्त है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका सव काल है। तिर्यञ्चगित, तिर्यञ्चगत्य। नुपूर्वा, उद्योत श्रौर नीचगोत्र इनकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्यकाल एक समय है क्राँर उत्कृष्ट काल पत्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। तीन त्रायुश्रोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल त्राविलके त्रसंख्यातवं भाग प्रमाण है। त्रज्ञघन्य स्थितिके वन्धक जीवींका जघन्य काल ब्रन्तर्मुहूर्त है ब्रीर उत्कृप्ट काल पत्यके ब्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है । वैक्रियिक छहका भङ्ग उत्कृएके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य श्रोर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जोवांका काल सर्वदा है। इसी प्रकार ओघके समान काययोगो, त्र्रोदारिक काययोगी, नपुंसकवेदी, कोघादि चार कपायवाले, अचलुदर्शनी, भव्य श्रौर श्राहारक जीवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि चपक प्रकृतियोंकी काययोगी श्रोर श्रादारिक काययोगी जीवोंमें जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है। इतनी विशेषता है कि योग त्रौर कपायवाले जोवोंमें त्रायुकी श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है।

५३८. णिरएसु दोश्रायु० उक्कस्सभंगो । संसाणं जह० [ जह० ] एग, उक्क० स्त्रावित्व असंखेळा० । अज० सन्बद्धा । तित्थय० उक्कस्सभंगो । एवं पढमपुढवीए । विदियादि याव सत्तमा ति उक्कस्सभंगो । एवरि थीणगिद्धि३-मिच्छत्त-अणंताणु-वंधि०४ जह० जह० अंतो०, उक्क० पित्वो० असंखे० । सत्तमाए तिरिक्खगदि—तिरिक्खाणु०-णीचा० थीणगिद्धि०भंगो ।

५३६. तिरिक्षेसु णिरय-मणुस-देवायु०-वेउव्विद्य०-तिरिक्खगदि०४ श्रोघं। सेसाणं जह० श्रज० सन्बद्धा। एवं तिरिक्खाघं मदि०-सुद्०--श्रसंज०-तिणिणले०-श्रब्भवसि०--मिच्छादि०-श्रसणिण ति। सन्वपंचिदियतिरिक्खाणं उक्कस्सभंगो। णविर चदुश्रायु० णिरयायुभंगो। पंचिदियतिरिक्खश्रपज्जत्त० दोश्रायु० तिरिक्खायु-भंगो। एवं सन्बन्नपज्जत्ताणं तसाणं सन्विवगलिदियाणं वाद्रपुढिवकाइय-श्राड०-तेउ०-वाउ०-वाद्रवणप्फदिपत्तेयपज्जत्ताणं च।

४४०. मणुसेसु खवगपगदीएां देवगदि०४ जह० जह० उद्ग० अंतो० । अज० श्रोघं । दोत्रायु० पंचिदियतिरिक्खभंगो । दोत्रायु० जह० जह० एग०, उक्न० संखेजनसम्। अज० जहएणु० अंतो० । णिरयगदि-णिरयाणु० जह० जह० एग०,

४३८. नारिकयों में दो श्रायुश्रोंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल श्राविलके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्पदा है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग उत्कृष्टके समान हैं। इसी प्रकार पहली पृथ्वीमें जानना चाहिए। दूसरी पृथ्वीसे लेकर सातवों तक भङ्ग उत्कृष्टके समान है। इतनी विशेषता है कि स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व श्रीर श्रनन्तानुबन्धी चार इनकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य काल श्रन्तर्मुहर्त है श्रीर उत्कृष्ट काल प्रव्यक्ते श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। सातवीं पृथ्वीमें तिर्यञ्चगित, तिर्यञ्चगत्त्रानुपूर्वी श्रीर नीचगोत्रका भङ्ग स्त्यानगृद्धि तीनके समान है।

४३६. तिर्यञ्चोंमें नरकायु, मनुष्यायु, देवायु, वैकियिक छह ग्रीर तिर्यञ्चगित चतुष्कका भक्त श्रोघके समान है। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य ग्रीर श्रज्ञघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंके समान मत्यञ्चानी, श्रृताञ्चानी, श्रसंयत, तीन छेश्यावाछे, श्रभन्य, मिथ्यादृष्टि ग्रीर श्रसंशो जीवोंके जानना चाहिए। सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। इतनी विशेषता है कि चार श्रायुत्रोंका भङ्ग नरकायुके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रृपयिक्ष श्रृपयिक्ष ग्र्याप्तकोंमें दो श्रायुत्रोंका भङ्ग तिर्यञ्चायुके समान है। इसी प्रकार सब श्रुर्थात त्रस, सब विकछेन्द्रिय, वादर पृथ्वीकायिक पर्याप्त, वादर जलकायिक पर्याप्त, बादर श्रीर वादर-वनस्पति कायिक प्रत्येक श्रीर पर्याप्त जोवोंके जानना चाहिए।

४४०. मनुष्यों मं च्रपक प्रकृतियाँ और देवगतिचतुष्ककी जधन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका जधन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहूर्त है। श्रज्ञघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका काल श्रोघके समान है। दो आयुश्रोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। दो श्रायुश्रोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। श्रज्ञघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य श्रौर उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहूर्त है। नरकगति श्रौर नरकगत्यानुपूर्वोंकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य काळ एक

उक्त॰ श्रंतो॰ । श्रज॰ सन्बद्धा । सेमाएां जह॰ जह॰ एग॰, उक्त॰ श्रावलि॰ श्रसंखे॰ । श्रज॰ सन्बद्धा ।

५४१. मणुसपज्जत्त--मणुसिणीसु सो चेव भंगो । णवरि यम्हि त्रावित्या० त्रसंखे॰ तम्हि संखेज्जसम् । मणुसत्रपज्जत्त० सन्वपगदीणं जह० जह० एग०, उक्क॰ त्रावित्वि त्रसंखे० । त्राव० जह० खुद्दाभव० विसमयूणं, उक्क० पित्विते० त्रसंखे० । एवरि सन्वद्व पिरयत्तीणं त्रायुगाणं च त्राव० पगदिकालो कादन्वो । देवाणं णिरयभंगो । एवरि एइंदि०-त्रादाव-थावर० सत्थाणभंगो ।

४४२. एइंदिएस मणुसायु०--तिरिक्खगदि---तिरिक्खाणु०---उज्जोब--णीचा० श्रोघं । संसाणं जहव श्रजव सन्बद्धा । पुढवि०--श्राउ०-तेउ०-वाउ०-वादरपुढवि०-श्राउ०-तेउ०-वाउ०-वादर-वणप्पदिपचेय० दोश्रायु० श्रोघं । संसाणं जह० जह० एग०, उक्क० पितदो० असंखेज्ज० । श्रजव सन्बद्धा । वादरपुढवि०-वाउ०-तेउ०-वाउ०-श्रपज्जत्ता० मणुसायु० श्रोघं । संसाणं जह० श्रज० सन्बद्धा । एवं वणप्पदि-णियोद-वादरवणप्पदि-णियोद-पज्जत्त-श्रपज्जत्त० वादरवणप्पदिपत्तेय०श्रपज्जताणं

समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहर्त है। श्रज्ञघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके चन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रावितके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। श्रज्ञघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है।

१४१. मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियों में वही भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि जहाँ पर आविलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण काल कहा है वहाँ पर संख्यात समय काल कहना चाहिए। मनुष्य अपर्याप्तकों से सब प्रकृतियों की जघन्य स्थितिके बन्धक जीवों का जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आविलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवों का जघन्य काल दो समय कम क्षुल्लक भव ब्रह्मण प्रमाण है और उत्कृष्ट काल पत्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। इतनी विशेषता है कि सर्वत्र परिवर्तमान प्रकृतियों की और आयुआं की अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवों का काल प्रकृतिबन्धके कालके समान कहना चाहिए। देवों में नारिकयों के समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय, आतप और स्थावर इनका भङ्ग स्वस्थानके समान है।

४४२. एकेन्द्रियों में मनुष्यायुं, तिर्यञ्चगित, तिर्यञ्चगित्यानुपूर्वी, उद्योत ग्रौर नीचगोत्रका भक्त ग्रोघके समान है। ग्रेप प्रकृतियोंकी जघन्य ग्रौर अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। पृथ्वीकायिक, जलकायिक, ग्राग्निकायिक, वायुर प्रश्वीकायिक, बादर प्रश्वीकायिक, बादर जलकायिक,बादर ग्राग्निकायिक, वादर वायुकायिक और वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर जीवोंमें दो ग्रायुग्रोंका भक्त ग्रोघके समान है। ग्रेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है ग्रीर उत्कृष्ट काल पर्यके ग्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। ग्रजघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। वादर पृथ्वीकायिक ग्रपर्याप्त, वादर जलकायिक ग्रपर्याप्त, वादर जलकायिक ग्रपर्याप्त, वादर जलकायिक ग्रपर्याप्त, वादर ग्राप्त ग्रीनकायिक ग्रपर्याप्त ग्रोर वादर वायुकायिक ग्रपर्याप्त जीवोंमें मनुष्यायुका भक्त ग्रोघके समान है। ग्रेघ प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर ग्रजघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका

सव्वसुहुमार्गं च ।

४४३. पंचिदिय-तस॰२ खवगपगदीणं स्रोघं। सेसाणं पंचिदियतिरिक्ख-स्रपज्जत्तभंगो। एवं इत्थि०-पुरिस०। एविर इत्थिवे॰ तित्थय० जह० जह० एग०, उक्क० स्रंतो॰।

४४४. पंचमण०-तिरिणवचि० पंचणा०-णवदंसणा-सादासाद०-मोह०२४-देवगदि०४-पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वरण०४-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-थिरा-थिर-सुमासुभ-सुभग-सुस्सर--आदे०--जस०--आजस०--णिमि०-तित्थय०-उच्चागो० पंचंत० जह० जह० एग०, उक्क० अंतो० । आज० सव्बद्धा । इत्थिवे०--णवुंस०-तिरिणगदि-चदुजादि-ओरालि०पंचसंठा०--ओरालि०श्रंगो०-ऋस्संघ०-तिरिणआण०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-थावरादि०४--दूभग--दुस्सर--आणादे०-णीचा० जह० जह० एग०, उक्क० पलिदो असंखे० । अज० सव्बद्धा । चदुआयु० पंचिदियतिरिक्ख-भंगो । एवरि अज० जह० एग० । दोवचि० खवगपगदीएं जह० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अज० सव्वद्धा । चदुआयु० पराजोगिभंगो । सेसाएं तसभंगो ।

काल सर्वदा है। इसी प्रकार वनस्पतिकायिक, निगोद, वादर वनस्पतिकायिक, बादर निगोद श्रीर इनके पर्याप्त श्रपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर श्रपर्याप्त श्रीर सब सूदम जीवोंके जानना चाहिए।

रे ४४३. पञ्चेन्द्रियद्विक श्रीर त्रसद्विक जोवों में क्षपक प्रकृतियों का भङ्ग श्रोधके समान है। शेष प्रकृतियों का भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्ष अपर्याप्तकों के समान है। इसी प्रकार स्त्रीवेदी श्रीर पुरुषवेदी जीवों के जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेदी जीवों में तीर्थे द्वर प्रकृतिकी जधन्य स्थितिके बन्धक जीवों का जधन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृप काल श्रन्तर्मुहर्त है।

४४४. पाँच मनोयोगी श्रीर तोन वचनयोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शना-वरण, सातावंदनीय, श्रसातावंदनीय, चौवीस मोहनीय, देवगतिचार, पञ्जेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्ण चतुरक, त्रगुरुलघु चतुरक, प्रशस्त-विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर, त्रस्थिर, श्रम, त्रश्मम, सुभग, सुस्वर, त्रादेय, यशकीर्त, श्रयशःकीर्ति, निर्माण, तीर्थद्वर, उच्चगोत्र और पाँच श्रन्तराय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्महर्त है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवांका काल सर्वदा है। स्त्रीवेद, नपूसंकवेद, तीन गति, चारजाति, श्रीदारिक शरीर, पाँच संस्थान, औदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, तीन श्रानुपूर्वी, श्रातप, उद्योत, श्राप्रशस्त विहायोगात, स्थावर श्रादि चार, दुर्भग, दुःस्वर, श्रानादेय श्रीर नीचनीत्र इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृप्ट काल पत्यके असं-ख्यातवें भाग प्रमाण है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। चार श्रायश्रोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है। दो वचनयागवाले जीवोंमें चपकप्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्महर्त है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। चार श्रायुश्रोंका भक्न मनोयोगी जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग त्रस जीवोंके समान है।

४४४. श्रोरालियमि० तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा०-देवगदि०४-तित्थयरं० उक्कस्सभंगो । मणुसायु० श्रोघं । सेसाणं जह० श्रज० सन्बद्धा । वेउन्वि०-वेउन्वियमि०-श्राहार०-श्राहारमि० उक्कस्सभंगो । कम्मइगे तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा० जह० जह० एग०, उक्क० श्रावित्त० श्रसंखे०, । श्रज० सन्बद्धा । देवगदि०४-तित्थय० उक्कस्सभंगो । सेसाणं जह० श्रज० सन्बद्धा ।

४४६. अवगदे सन्वाएां जह० जह० उक्क० अंतो०। अज० जह० एग०, उक्क० अंतो०। एवं सुहुमसंप०।

५४७. विभंगे पंचणा०-णवदंसणा०-सादावे॰-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-देवगिद--पंचिदि॰-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु॰-वेउव्वि०ग्रंगो०-वएण०४-देवाणु०अगु०४--पसन्थ०-तस०४--थिरादिछ०-िएमि०-उच्चा०-पंचंत० जह० जह० उक्क०
अंतो०। अज० सव्वद्धा। असादा०-इत्थि०-णवुंस०-अरिद-सोग-िएरयगिद-चदुजादि-पंचसंठा०-पंचसंघ०-िएरयाणु०-अप्पसत्थ०--आदाव-थावरादि०४-दूभग-दुस्सरअर्णादे० जह० जह० एग०, उक्क० पित्ति असंखे०। अज० सव्वद्धा। चदुआयु०

४४४. श्रौदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, उद्योत, नीचगोत्र, देवगतिचतुष्क श्रौर तीर्थङ्कर इनका भङ्ग उत्रुष्टके समान है। मनुष्यायुका भङ्ग श्रोघके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य श्रौर श्रजघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। वैक्रियिककाययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, श्राहारककाययोगी, श्रौर श्राहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत श्रौर नीच-गोत्रकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रौर उत्कृष्ट काल श्रावलिके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। देवगति चतुष्क श्रौर तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। श्रेष प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है।

४४६. श्रवगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मु हुर्त है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहुर्त है। इसी प्रकार सूच्मसाम्परायिक जीवोंके जानना चाहिए।

४७७. विभंगज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, पाँच नोकषाय, देवगित, पञ्चेन्द्रियज्ञाति, वैक्रियिकशरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक ब्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, ब्रगु-रुलखुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगिति, त्रसचतुष्क, स्थिर ब्रादि छह, निर्माण, उच्चगोत्र ब्रीर पाँच ब्रन्तराय इनकी जन्चय स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य ख्रीर उत्कृष्ट काल अन्तर्मु हुर्त है। ब्राज्ञचन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। ब्राच्यात वेदनीय, स्त्रीवद, नपुंसकवेद, ब्रास्त, श्रोक, नरकगित, चार जाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, नरकगत्यानुपूर्वी, ब्राप्त श्रास्त विहायोगिति, ब्रात्तप, स्थावर ब्रादि बार, दुर्भग, दुःस्वर ब्रीर ब्रन्तिय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है ब्रीर उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातयं भाग प्रमाण है। ब्राज्ञचन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। चार ब्रायुका भक्त

पंचिंदियभंगो । तिरिक्ख-मणुसग०-त्रोरालि॰-त्रोरालि॰त्रांगो०-वज्जरि॰-दोत्राणु॰-उज्जो॰-णीचा॰ जह॰ जह॰ त्रंतो० । त्रज० एग०, उक्क० पलिदो० त्रसंखेज्ज० । त्रज० सन्बद्धा ।

५४८. श्राभि०-सुद०-श्रोधि० श्रसादा०--श्ररि--सोग-श्रथिर--श्रसुभ-श्रजस० जह० जह० एग०, उक्क० श्रंतो० | श्रज० सव्बद्धा | सेसाएं जह० जह० उक्क० श्रंतो० | श्रज० सव्बद्धा | एविर मणुसगद्पंचग० जह० जह० एग०, उक्क० पिलदो० श्रसंखेळा० | एवं श्रोधिदं०-सम्मादि०-खइग०-वेद्ग० | एविर दोश्रायु देव-भंगो | खइगे दोश्रायु० मणुसि०भंगो |

५४६. मणपज्ज॰-संजद्-सामाइय-छेदो० खवगपदीणं श्रोघं। श्रसादावे०-श्ररदि-सोग-श्रथिर--श्रसुभ-श्रजस० जह० जह० एग०, उक्क० श्रंतो०। सेसाणं जह० जहएणु०श्रंतो०।सच्चपगदीणं श्रज० सच्चद्धा।श्रायु० मणुसि०भंगो।एवं परिहार०।

५५०. संजदासंजदे असादा०-अरदि-सोग-अथिर-असुभ-अजस० जह० जह० एग०, उक० पिलदो० असंखे०। अज० सव्बद्धा! सेसाएां जह० जह० उक० पञ्चेन्द्रियोंके समान है। तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, श्रीदारिक शरीर, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वज्जपेभनाराच संहनन, दो श्रानुपूर्वी, उद्यात श्रीर नीचगोत्र इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहर्त है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल पत्यके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है।

४४८. श्रामिनिवोधिक श्वानी, श्रुत श्वानी श्रीर श्रविधिश्वानी जीवों में श्रसाता वेदनीय, श्रान्ति, श्रोक, श्रस्थिर श्रश्यम श्रीर श्रयशाकीर्ति इनकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहर्न है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। श्रेप प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहर्त है। श्रजघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगित पञ्चककी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल पत्यके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। इसी प्रकार श्रवधिदर्शनी, सम्यग्दिष्ट, ज्ञायिकसम्यग्दिष्ट श्रीर वदकसम्यग्दिष्ट जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि दो श्रायुश्रोंका भङ्ग दवांके समान है। ज्ञायिक सम्यग्दिष्ट जीवोंमें दो श्रायुश्रोंका भङ्ग मनुष्यिनियोंके समान है।

४४९. मनःपर्ययञ्चानी, संयत, सामायिकसंयत श्रौर छेदोपस्थापना संयत जीवोंमें चपक प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोघके समान है। असातावेदनीय, श्ररति, शोक, श्रस्थिर, अश्रभ श्रीर श्रयशःकीर्ति इनकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहर्त है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्तर्मुहर्त है। सब प्रकृतियोंकी श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। श्रायुका भङ्ग मनुष्यिनयोंके समान है। इसी प्रकार परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके जानना चाहिए।

४५०. संयतासंयत जीवोंमें श्रसातावेदनीय, श्ररित, शोक, श्रस्थिर, श्रशुभ श्रौर अयशःकीर्ति इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रौर उत्कृष्ट काल प्रत्यके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। श्रजघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य श्रौर उत्कृष्ट श्रंती । अज । सन्बद्धा । देवायु । श्रोघं । चक्खुदं । तसभंगो ।

४५१. तेऊए इत्थि०-णवुंस०-दोगदि-एइंदि०--श्रोरालि०-पंचसंठा०--श्रसंघ०दोश्राणु०--श्रादाउज्जो०-अप्पसत्थ० थावर-दूभग-दुस्सर-श्रणादे०-णीचा० जह० जह०
एग०, उक्क० पिलदो० श्रसंखेज्ज०। श्रज० सन्बद्धा। श्रसादा०-श्ररदि-सोग-श्रिथरश्रसभ-श्रजस० जह० जह० एगसमयं, उक्क० श्रंतो०। सेसाएां जह० जह० उक्क०
श्रंतो०। श्रज० सन्बद्धा। एवं पम्माए। तेऊए एसि श्रप्पमत्तो करेंति तेसि दुविधो
कालो। यदि श्रधापवत्तसंजदो जहएणिहिदिवंधकालो जह० जह० एग०, उक्क श्रंतो०।
श्रथवा दंसणपोहस्ववगस्स कीरदि तदो जहएणु० श्रंतो०। एवं परिहारे। पम्माए
देवगदिश्रादि श्रधापवतस्स दिज्जदि। एवं सुक्काए वि।

५५२. उवसम॰ पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-पुरिस०--भय--दुगुं०-पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वएण०४-ऋगु०४-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर-ऋादे०-णिमि० उच्चा०-पंचंत० जह० जह एग०, उक्क० श्रंतो० । ऋज० जह० श्रंतो०, उक्क० पलिदो० ऋसंखेज्ज० । सादासाद०-हस्स--रिद--ऋरदि-सोग-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-ऋजस०-देवगदि०४ जह० जह० एग०, उक्क० श्रंतो० । ऋज० जह० एग०, उक्क० पलिदो०

काल श्रन्तर्मुहर्त है । अजघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका काल सर्वदा है । देवायुका भङ्ग श्रोघके समान है । चजुदर्शनवाल जीवोंका भङ्ग त्रस जीवोंक समान है ।

४४१. पीतलेश्यावाले जीवोंमें स्त्रीवेद, नपुंसकवेद दो गित, एकेन्द्रिय जाति, स्त्रीदारिक शरीर, पाँच संस्थान, छह संहनन, दो त्रानुपूर्वा, त्रातप, उद्योत, त्रप्रदासत विहायोगित, स्थावर, दुर्भग, दुःस्वर, स्रनादेय और नीचगोत्र इनकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्रुष्ट काल पत्यके असंख्यातयें भाग प्रमाण है। स्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। स्रसाता वंदनीय, स्ररित, शोक, अस्थिर, स्रशुभ और अयशःकीर्ति इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय हे और उत्रुष्ट काल स्नत्मीहर्त है। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए। पीतलेश्यामें जिनको स्रप्रमत्त करते हैं उनका दो प्रकारका काल है। यदि स्थाय प्रत्रुष्ट काल स्थाय है तो उसके जघन्य स्थितिके बन्धकका जघन्य काल एक समय है और उत्रुष्ट काल स्थाय है तो उसके जघन्य स्थितिके बन्धकका जघन्य काल एक समय है और उत्रुष्ट काल स्थाय है। इसो प्रकार परिहारिवशुद्धि संयत जीवोंके जानना चाहिए। पद्मलेश्यावाले जीवोंके देवगित स्रादि स्थात जीवोंके जानना चाहिए। पद्मलेश्यावाले जीवोंके भी जानना चाहिए।

४४२. उपशमसम्यग्दि जीवोंमं पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, भय, जगुष्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तंजस शरीर, कामेण शरीर, समचतुरस्य सम्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुछघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगित, त्रसचतुष्क, सुभग सुस्वर, आदय, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी जघन्य स्थितिक वन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मृहर्त है। अजघन्य स्थितिक वन्धक जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मृहर्त है। अजघन्य स्थितिक वन्धक जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मृहर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, इस्ति, अरित, शोक, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशकीर्ति, अयशकीर्ति और देवगित चतुष्ककी जघन्य स्थितिक वन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट

असंखेजन । अहक ० जह० जह० उक्क० अंतो । अन० जह० अंतो ०, उक्क० पिलादो ० असंखेजन । मणुसगदिपंचग० जह० अन० जह० एग० अंतो ०। उक्क० पिलादो ० असंखेजन ०। आहारदुगं जह० अन० जह० एग०, उक्क० अंतो ०। तित्थय ० जह० जह० एग०, उक्क० अंतो ०।

४५३. सासणे सम्मामि० उक्कस्सभंगो । एवरि सासणे तिरिक्ख-देवायु० जह० जह० एग०, उक्क० त्रावित्वि त्रसंखेण्ज० । त्राज० जह० त्रंतो०, उक्क० पितदो० त्रसंखे० । मणुसायु० देवभंगो ।

४५४. सएणीसु खवगपगदीणं देवगदि०४--श्राहारदुग-तित्थय॰ मणुसभंगो । चदुश्रायु॰ पंचिदियभंगो । सेसाणं जह० जह० एग॰, उक्क॰ श्रावलि॰ श्रसंखेडज०। श्रज॰ सन्बद्धा । एवं जहएएायं समत्तं ।

## एवं कालं समत्तं अंतरपरूवणा

४४३. सासादनसम्यग्दिए श्रीर सम्यग्मिथ्यादिए जीवोंमें उत्कृष्टके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि सासादनमें तिर्यञ्चायु श्रीर देवायुकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्रावितके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। श्रज्ञघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल श्रन्तर्मुहर्त हैं श्रीर उत्कृष्ट काल पत्यके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। मनुष्यायुका भङ्ग देवोंके समान है।

एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्महर्त है।

४४४. संश्री जीवोंमें जपक प्रकृतियाँ, देवगित चतुष्क, ग्राहारकद्विक श्रीर तीर्थंद्वर प्रकृतिका भक्त मनुष्यांके समान है। चार श्रायुश्रोंका भक्त पञ्चेन्दियोंके समान है। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल श्राविलके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। इस प्रकार जघन्य काल समात हुआ।

इस प्रकार काल समाप्त हुआ।

### **अन्तरप्ररूप**गा

४४४. अन्तर दो प्रकारका है-जघन्य श्रीर उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। उसकी अपेत्रा

श्रादे । श्रोघेण णिरय-मणुस-देवायूणं उक्कस्सिट्टिदंधगंतरं केविचरं ? जह ० एग ०, उक्क ० श्रंसुलस्स श्रसंखे ० श्रसं ० श्रोसिषणि-उस्सिषणीश्रो । श्रणु ० जह ० एग ०, उक्क ० श्रंसुलस्स श्रसं ० एग ०, उक्क ० श्रंसुलस्स श्रसं ० श्रासंखे ० श्रोसिषणि । श्रणु ० णित्थ श्रंतरं । एवं श्रोधभंगो तिरिक्खोधं कायजोगि-श्रोरालि ०-श्रोरालि यिम०-कम्मइ०-एवं स०-कोधादि०४-मिद०-सुद०-श्रसं ज०-[ चक्खुदं ] श्रचक्खुदं ०--तिणिणले ०--भविस०-श्रव्भविस०-मिच्छादि०-श्रसं ज०-[ चक्खुदं ] श्रचक्खुदं ०--तिणिणले ०--भविस०-श्रव्भविस०-क्रम्मइ०-श्रणाहारगं देवगदि०४-तित्थय० उक्क० श्रोधं । श्रणु० जह ० एग ०, उक्क० मासपुधत्तं । तित्थय० वासपुधतं ।

५५६. सव्वएइंदियाणं दोत्र्यायु० त्रोघं । सेसाणं उक्क० त्र्रणु० एत्थि त्र्यंतरं । एवं वर्णप्फदि-िणयोदाणं ।

५५७. पुढवि०-त्राउ०-तेउ०-वाउ०-वाद्रपुढवि०--त्राउ०-तेउ०-वाउ० तेसिं चेव पज्जत्ता० त्रोघं । एवरि पज्जत्तेसु तिरिक्खायु० त्राणु० जह० एग०, उक्क० त्रांतो० ।

निर्देश दो प्रकारका है--श्रोध श्रौर श्रादेश। श्रोधसे, नरकाय, मनुष्याय श्रौर देवाय इनका उत्क्रप्र स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल कितना है ? जधन्य अन्तर काल एक समय है श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर काल श्रंगुलके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है । जो कि श्रसंख्यातासंख्यात उत्सर्पिणो श्रीर श्रवसर्पिणो कालके बरावर है। श्रवत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य श्रन्तर काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर काल चौबीस मुहर्न है। शेप प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर काल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर काल **श्रङ्ग लुके श्रसंख्यातवें भाग प्रमा**ण है जो कि श्रसंख्यातासंख्यात उत्सर्पिणी और श्रवसर्पिणी कालके बराबर है। अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका अन्तर काल नहीं है। इसी प्रकार श्रोघके समान सामान्य तिर्यञ्च, काययोगी, श्रौदारिककाययोगी, श्रौदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कपायवाले, मत्यशानी, श्रुताश्वानी, श्रसंयत, चत्तुदर्शनी, श्रचक्षदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भन्य, अभन्य, मिथ्यादप्टि, ग्रसंबी, ग्राहारक श्रीर श्रनाहारक जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि श्रीदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मेशकाययोगी श्रौर श्रनाहारक जीवोंमें देवगतिचतुष्क श्रीर तीर्थद्वर इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जोवोंका अन्तरकाल ओघके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है स्रोर उत्कृष्ट स्रन्तर मासपृथक्तव है। तीर्थंद्वर प्रकृतिका उत्कृष्ट ग्रन्तर वर्षप्रथक्तव है।

४४६. सब एकेन्द्रिय जीवोंमें दो श्रायुश्रोंका भङ्ग श्रोघके समान है। शेप प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका श्रन्तर काल नहीं है। इसी प्रकार वनस्पितिकायिक श्रीर निगोद जीवोंके जानना चाहिए।

४५७. पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, वाद्र पृथ्वीकायिक, बाद्र जलकयिक, बाद्र अग्निकायिक और वाद्र वायुकायिक तथा इन्होंके पर्याप्त जीवोंका मङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें तिर्यञ्चायुकी अनुत्रुष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहुर्त है। तथा तजस

४४८. अवगद्वेदे सन्वपगदीणं उक्क० जह० एग०, उक्क० वासपुथत्तं । अणु० जह० एग०, उक्क० अम्मासं० । एवं सुहुमसं० । वेउन्वियमि०-आहार०-आहारिम० तित्थय० उक्क० ओघं । अणु० जह० एग०, उक्क० वासपुधत्तं० । सेसाणं उक्क० ओघं । अणु० जह० एग०, उक्क० वासपुधत्तं० ।

५५६. मणुसञ्चपज्ज - सासण् - सम्मामि उक्क श्रीघं। श्रणु जह एग - , उक्क पित्ति श्र असंखे । सेसाणं णिरयादि याव सिएण ति उक्क जह एग - , उक्क श्रंगुल असंखे । श्रणु पगिदिश्रंतरं। श्रायुगाणि एसि श्रित्थ तेसि उक्क जह एग - , उक्क श्रंगुल असंखे । श्रणु श्रप्पणो पगिदिश्रंतरं काद वं।

## एवं उक्तरसंतरं समत्तं

शरीर और कार्मणशरीरका चौबोस मुहूर्त है। बादर पृथ्वीकायिक अपर्याप्त, बादर जल-कायिक अपर्याप्त, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त और बादर वायुकायिक अपर्याप्त जीवोंका भङ्ग एकेन्द्रियोंके समान है। सब सुदमोंका भङ्ग एकेन्द्रियोंके समान है। बादर वनस्पति-कायिक प्रत्येकशरीर जीवोंका भङ्ग बादर पृथ्वीकायिक जीवोंके समान है।

४४८. श्रपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर वर्षपृथक्त्व है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर छह महिना है। इसी प्रकार सहमसाम्पराय संयत जीवोंके जानना चाहिए। वैकियिकिमिश्रकाययोगी, श्राहारककाययोगी श्रीर श्राहारकिमिश्रकाययोगी जीवोंमें तीर्थक्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका श्रन्तर काल श्रोघके समान है। श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर वर्षपृथक्त्व है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्टि स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रीघके समान है। तथा श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रपने श्रपने श्रम्त वन्धके समान है।

४४९. मनुष्यश्रपर्यात, सासादनसम्यग्दिष्ट श्रीर सम्यग्मिण्यादिष्ट जीवोंमें श्रपनी सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीवोंका श्रम्तर काल श्रोधके समान है। तथा श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य श्रम्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रम्तर पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। नरकगितसे लंकर संज्ञी तक शेष सव मार्गणाश्रोंमें श्रपनी श्रपनी प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य श्रम्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रम्तर श्रङ्ग लुके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है जो श्रसंख्यातासंख्यात श्रम्वसिपणी श्रीर उत्कृष्ट श्रम्तर कालके समान है। तथा श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका श्रम्तर काल प्रकृतिबन्धके श्रम्तर काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रम्तर काल श्रंगुलके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है जो कि श्रसंख्यातासंख्यात श्रम्वसिपणी श्रीर उत्सिपणियोंके बरावर है। तथा श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल श्रमुत्कृष्य स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल श्रमुत्व स्थावांका स्थाव

- ४६०. जहरूणए पगदं । दुवि०-श्रोघे० श्रादे० । श्रोघे० खवगपगदीएां जह० जह० एग०, उक्क० छम्मासं० । श्रज० सिथ श्रंतरं । तिरिस्पाश्रायु०--वेउन्वियछ०-तिरिक्खग०-श्राहारदुग-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-तित्थय०-सीचा० उक्कस्सभंगो । सेसासं जह० श्रज० सिथ श्रंतरं । एवं श्रोघभंगो कायजोगि--श्रोरालियका०--सवुंस०--कोधादि०४-श्रचक्ख०-भवसि०-श्राहारगे ति ।
- ५६१. तिरिक्खेसु तिणिणत्रायु०--वंउव्वियञ्च०---तिरिक्खगद्दि०४ जह॰ अज० उक्कस्सभंगो । सेसाणं जह॰ अज० णित्थ अंतरं । एवं तिरिक्खोयं ओरालियमि० [ कम्मइ०- ] मदि०--सुद०--असंज०--तिणिणले०--अब्भवसि०-भिच्छादि०--असणिण- अणाहारे ति । एवरि ओरालियमि०-कम्मइ०-अणाहारगेसु देवगदि०४--तित्थय० जह० अज० उक्कस्सभंगो ।
- ४६२. मणुस०३ खवगपगदीएां श्रोघो । सेसाएां उक्कस्सभंगो । एवरि मणुसि० खवगपगदीएां वासपुधत्तं ।
- ५६३. एइंदिय-वादरेइंदिय-पज्जत्ता अपज्जत्ता मणुसायु० तिरिक्लगदि०४ उकस्सभंगो । सेसाएां जह० अज० एत्थि अंतरं । सन्वसुहुमाएां मणुसायु० ओवं ।
- ४६०. जघन्यका प्रकरण है। उसकी श्रिपेद्धा निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर श्रादेश। श्रोघसे द्यपक प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर छह महिना है। श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका श्रन्तर काल नहीं है। तीन श्रायु, वैकियिक छह, तिर्यञ्चगति, श्राहारकिहक, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत, तीर्थङ्कर श्रीर नीचगोत्र इनका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका श्रन्तर काल नहीं है। इसी प्रकार श्रोघके समान काययोगी, श्रीदारिककाययोगी,नपुंसकचेदी, कोधादि चार कपायवाले, श्रचक्षुदर्शनी, भव्य श्रीर श्राहारक जीवोंके जानना चाहिए।
- ४६१. तिर्यञ्चोंमें तीन श्रायु, वैक्रियिक छह और तिर्यञ्चगित चतुष्ककी जघन्य श्रीर श्रज्ञघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्रज्जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका श्रन्तर काल नहीं है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंके समान श्रीदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मण्काययोगी, मत्यक्षानी, श्रुताक्षानी, श्रसंयत, तीन छेश्यावाले, श्रभव्य, मिथ्यादृष्टि, श्रसंबी श्रीर श्रनाहारक जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि श्रीदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मण्काययोगी श्रीर श्रनाहारक जीवोंमें तीर्थक्कर प्रकृतिकी जघन्य श्रीर श्रज्ञघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका श्रन्तर काल उत्कृष्टके समान है।
- ४६२. मनुष्यत्रिकमें च्रापक प्रकृतियोंका भङ्ग ग्रोघके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें च्रापक प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका उत्कृष्ट ग्रन्तर काल वर्षपृथक्त्य है।
- ४६३. एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय ग्रौर इनके पर्यात अपर्यात जीवोंमें मनुष्यायु ग्रौर तिर्यञ्चगतिचतुष्कका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। होष प्रकृतियोंकी जघन्य ग्रौर अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका ग्रन्तर काल नहीं है। सब सुदम जीवोंमें मनुष्यायुका भङ्ग श्रोधके

संसाणं जह॰ अज॰ णित्थ अंतरं । पुढिवि०--आड॰-तेउ॰-वाउ॰ तिरिक्खायु॰ जह॰ अज॰ णित्थ अंतरं । सेसाणं जह॰ जह॰ एग॰, उक्क॰ अंगुलस्स असंखे॰ । अज॰ णित्थ अंतरं । मणुसायु॰ ओघं । वादरपुढिवि॰ अपज्जत्ता मणुसायु॰ ओघं । सेसाणं जह॰ अज॰ णित्थ अंतरं । एवं वादरआउ०-तेउ॰-वाउ०अपज्जत्ता । वणण्फिदि-णियोद--सव्ववादरवणण्फिद--णियोद-वादरवणण्फिदिपत्तेय॰ तस्सेव अपज्जता॰ मणुसायु॰ ओघं । सेसाणं जह॰ अज॰ णित्थ अंतरं ।

४६४. पंचिदि॰-तस०--पंचमण०--पंचवचि॰--इत्थि॰--पुरिस॰--आभि०-सुद॰-श्रोधि॰--मणपज्जव०--संजद-सामाइ०--छेदो०---पिरहार०--संजदासजद---चक्खुदं॰--श्रोधिदं॰-सुक्कले०-सम्मादि॰-खइग०-सिएण ति एदेसिं मणुसभंगो। णविर खवग-पगदीणं सेढिविसेसो णाद्व्वो। श्रवगद्वे० सव्वपगदीणं जह० श्रज० जह० एग०, उक्क० छम्मासं०। एवं सुहुमसंप०। सेसाणं णिरयादि याव सम्मामिच्छादिहि ति सव्वपगदीणं श्रष्पपणो उक्कस्सभंगो।

### एवं अंतरं समतं

समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य श्रोर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवांका श्रन्तर काल नहीं है। एथ्वीकायिक, जलकायिक, श्रिनकायिक श्रोर वायुकायिक जीवोंमें तिर्यञ्चायुकी जघन्य श्रोर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका श्रन्तर काल नहीं है। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रोर उत्कृप श्रन्तर श्रंगुलके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। जो श्रसंख्यातासंख्यात श्रवसपिंणियों श्रोर उत्सिपिंणियोंके वरावर है। श्रजघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका श्रन्तर काल नहीं है। मनुष्यायुका भक्त श्रोघके समान है। वादर पृथ्वीकायिक श्रपर्यात जीवोंमें मनुष्यायुका भक्त श्रोघके समान है। श्रेष प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका श्रन्तर काल नहीं है। इसी प्रकार वादर जलकायिक श्रपर्यात, वादर श्रिनकायिक श्रपर्यात श्रीर वादर वायुकायिक श्रपर्यात जीवोंके जानना चाहिए। वनस्पतिकायिक, निगोद जीव, सब बादर वनस्पतिकायिक, सब बादर निगोद जोव, वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक श्ररीर श्रीर उनके श्रपर्यात जीवोंके जानना को श्रेष समान है। श्रेष प्रकृतियोंकी जघन्य श्रीर श्रजघन्य स्थितिके वन्धक जीवोंका श्रन्तर काल नहीं है।

५६४. पञ्चेन्द्रिय, त्रसकायिक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, स्रोवेदी, पुरुषवेदी, त्रामिनिवोधिकज्ञानी, श्रुतक्ञानी, त्राविधिक्ञानी, श्रुतक्षानी, त्राविधिक्ञानी, श्रुतक्षानी, त्राविध्यानी, मनःपर्ययक्षानी, संयत, सामायिकसंयत, स्रेदोपस्थापनासंयत, परिहारिवशुद्धिसंयत, संयतासंयत, चश्चदर्शनी, श्रवधिदर्शनी, श्रुक लेश्यावाले, सम्यग्दिष्ट, लायिकसम्यग्दिष्ट श्रीर संक्षी इनका भक्न मनुष्योंके समान है। इतनी विशेषता है कि चपक प्रकृतियोंकी श्रेणीविशेष जाननी चाहिए। श्रुपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी जधन्य श्रीर श्रजधन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जधन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर छह महिना है। इसी प्रकार सूदमसाम्परायसंयत जीवोंके जानना चाहिए। श्रेप नरकगतिसे लेकर सम्यग्मध्यादिष्ट जीवों तक शेष सब मार्गणाश्रोंमें सब प्रकृतियोंका मङ्ग श्रुपने श्रुपने उत्कृष्टके समान जानना चाहिए।

### भावपरूवगा

४६५. भावं दुविधं-जहएणयं उकस्सयं च । उकस्सए पगदं । दुवि०-- ख्रोघे० ब्रादे० । ब्रोघे० सन्वपगदीएां उक्क० ब्रग्ण० वंधगा त्ति को भावो १ ब्रोदइगो भावो । एवं ब्राणाहारग त्ति ऐदिव्यं ।

५६६. जहराणए पगदं । दुवि०-स्रोघे॰ ब्रादे॰। [ब्रोघे०] सव्वपगदीएं जह० अज० को भावो ? स्रोदइगो भावो । एवं याव ऋणाहारग त्ति सेदव्वं । एवं भावं समत्तं

## ऋप्पाबहुगपरूवगा

४६७. अप्पाबहुगं दुविधं-जीवअप्पाबहुगं चेव द्विदियपावहुगं चेव । जीवअपा-बहुगं तिविधं--जहरूरणयं उक्कस्सयं अजहरूरणअणुक्कस्सयं चेव । उक्कस्सर्ए पगदं । दुवि०-अोघे० आदे० । ओघे० तिरिण्यायुगाणं वेउव्वियञ्च०-तित्थय० सव्वत्थोवा उक्कस्सिद्दिवंधगा जीवा । अणुक्कस्सिद्धिवंधगा जीवा असंखेज्जगुणा । आहारदुगं सव्वत्थोवा उक्क० जीवा । अणु० जीवा संखेज्जगुणा । सेसाणं सव्वत्थोवा उक्क० जीवा।अणु० जीवा अर्णतगु० । एवं ओघभंगो तिरिक्खोधं कायजोगि-ओरालियका०-ओरालियमि०-कम्मइ०--णवुंस०--कोधादि०४-मदि०-सुद०--असंज०--अचक्खुदं०-

### भावप्ररूपणा

४६४. भाव दो प्रकारका है—जघन्य श्रोर उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी श्रपेचा निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रोर श्रादेश । श्रोघसे सव प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट श्रीर श्रानुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका कौन भाव है । श्रोदयिक भाव है । इसी प्रकार श्राना-हारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

४६६. जघन्यका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रौर श्रादेश। श्रोघसे सब प्रकृतियोंकी जघन्य श्रोर अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका कौन भाव है? श्रौदयिक भाव है। इसो प्रकार अनाहारक मार्गणतक जानना चाहिए।

इस प्रकार भाव समाप्त हुन्ना।

# ऋल्पबहुत्वप्ररूपणा

४६७. श्रहणबहुत्व दो प्रकारका है—जीव श्रहणबहुत्व श्रीर स्थिति श्रहणबहुत्व। जीव श्रहणबहुत्व तीन प्रकारका है—जघन्य, उत्हृण् श्रीर जघन्य उत्हृण् । उत्हृणका प्रकरण है । उसकी श्रणे निर्देश दो प्रकारका है—श्रोघ श्रीर श्रादेश। श्रोघसे तीन श्रायु, वैकियिक छह श्रीर तीर्थङ्कर इनकी उत्हृण् स्थितिके बन्धक जीव सबसे श्रहण है । इनने श्रनुत्हृण् स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं । श्राहारकद्विककी उत्हृण् स्थितिके बन्धक जीव सबसे श्रहण हैं । श्रेप प्रकृतियोंकी उत्हृण् स्थितिके बन्धक जीव सबसे अहण हैं । इनसे श्रनुत्हृण् स्थितिके बन्धक जीव उत्हृण् स्थितिके बन्धक जीव सबसे अहण हैं । इनसे श्रनुत्हृण् स्थितिके बन्धक जीव सबसे अहण हैं । इनसे श्रनुत्हृण् स्थितिके बन्धक जीव श्रवन्तगुणे हैं । इसी प्रकार श्रोघके समान सामान्य तिर्यञ्च, काययोगी, श्रीदारिककाययोगी, श्रीदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुसकवेदी, कोधादि चार कपायवाले, मत्यक्षानी, श्रुताक्षानो, श्रसंयत, श्रचश्चदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, श्रभव्य, मिध्यादिण,

तिरिणले॰-भवसि॰-अब्भवसि॰-मिच्छादि०-असिएण॰-आहार०-अणाहारगे ति । एवरि ओरालियमि०-कम्मइ०-अणाहार० देवगदि०४-तित्थय॰ सन्व० उक्क॰ जीवा। अणु॰ जीवा संखेज्जगु॰। एवरि ओरालियका० तित्थय० अणु० द्विदि० संखेज्जगु॰। सेसाणं एिरयादि याव सिएण ति एसु असंखेज्जाणंतरासीणं तेसि सन्वत्थोवा उक्क॰ जीवा। अणु॰ जीवा असंखेजा०। एसु संखेज्जरासि तेसि सन्वत्थोवा उक्क॰ जीवा। अणु॰ जीवा संखेज्जगु०। एवरि एइंदि०-वणप्पदि-णियोदेसु तिरिक्खायु॰ ओघं। एवं उक्कस्सं समत्तं

५६८. जहएएए पगदं। दुवि०--श्रोघे० श्रादे०। श्रोघे० खनगपगदीएां तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०--उज्जो०-एीचा० सव्वत्थोवा जह०। श्रज० श्रएांतगु०। सेसाएां जह० सव्वत्थोवा जीवा। श्रज० श्रसंखेज्ज०। एवरि श्राहारदुगं तित्थयरं च उक्कस्सभंगो। एवं श्रोघभंगो कायजोगि--श्रोरात्तियका०--एवुंस०--कोधादि०४--श्रचक्खु०-भवसि०-श्राहारगे ति।

५६६. तिरिक्षेसु तिरिक्षगदि-तिरिक्षाणु०--उज्जो०--णीचा० सव्वत्थोवा जह० । अज० अणंतगु० । सेसाणं सव्वपगदीणं सव्वत्थोवा जह० जीवा । अज०

श्रसंक्षी, श्राहारक और श्रनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रीदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी श्रीर श्रनाहारक जीवोंमें देवगति चतुष्क श्रीर तीर्श्वहर इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि श्रीदारिककाययोगी जीवोंमें तीर्थंद्वर प्रकृतिकी श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। नरकगितसे लेकर संज्ञी तक शेष सब मार्गणाश्रोंमें को श्रसंख्यात श्रीर अनन्त राशिवाली मार्गणायें हैं उनमें उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। दथा इनमें जो संख्यात राशिवाली मार्गणायें हैं उनमें उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इतनो विशेषता है कि एकेन्द्रिय, बन्स्पित श्रीर निगोद जीवोंमें तिर्यञ्चायुका भक्ष श्रीथके समान है।

### इस प्रकार उत्कृष्ट श्रत्वबहुत्व समाप्त हुशा।

४६८. जघन्यका प्रकरण है। उसकी अपेता निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। श्रोघसे त्रपक प्रकृतियाँ, तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वा, उद्योत और नीचगोत्र इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीव श्रनन्तगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि श्राहारकद्विक श्रीर तीर्थेंद्वर प्रकृतिका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। इसी प्रकार श्रोघके समान काययोगी, श्रीदारिककाययोगी, नपुंसकवेदी, कोधादि चार कषायवाले, श्रचचुदर्शनो, भव्य श्रीर श्राहारक जीवोंके जानना चाहिए।

४६९. तिर्यञ्चोमें तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत श्रौर नीचगोत्र इनकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तीक हैं। इनसे श्रजघन्य स्थितिके बन्धक जीव श्रनन्त-गुणे हैं। शेष सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक है। इनसे जीवा असंखे० । [ एवं ] श्रोरालियमि०-कम्मइ०-मिद्०-सुद्०--श्रसंज०-तिषिणले०-श्रव्भवसि०-मिच्छादि०-श्रसिष्ण-श्रणाहारगे ति । एवि श्रोरालियमि०-कम्मइ०-श्रणाहार० देवगदि०४--तित्थयरं उक्कम्सभंगो । सेसाएं शिरयादि याव सिष्ण ति श्रसंखेज्ज-संखज्ज-श्रणंतरासीएं उक्कस्सभंगो । एविर एइंदिय-वर्णप्कदि--णियोदेसु तिरिक्खायु० श्रोघं ।

५७०, अनहराणमणुक्तस्सर पगदं | दुवि०-श्रोघे० श्रादे० | श्रोघे० खवगपगदीर्गं सन्वत्थोवा जह० जीवा | उक्क० असंखेळा० | अनहराणमणुक्क० अर्गंतगु० | श्राहार-दुगं सन्वत्थोवा जह० दिदि० | उक्क० दिदि० संखेळागु० | अन०श्रणु० संखेळा० | तिरिण्आयु०--वेउन्वियछ० सन्वत्थोवा उक्क० | जह० असंखेळा० | अन०श्रणु० असंखेळा० | तिरिक्खगदि—तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा० सन्वत्थोवा उक्क० | जह० असंखेळा० | अन०श्रणु० अर्गंतगु० | तित्थय० सन्वत्थोवा उक्क० | जह० संखेळा० | अन०श्रणु० अर्गंतगु० | तित्थय० सन्वत्थोवा उक्क० | जह० संखेळा० | अन०श्रणु० असंखेळा० | सेसाणं पंचदंसणावरणादीणं सन्वत्थोवा उक्क० | जह० अर्णंतगु० | श्रा०श्रणु० असंखेळागु० |

श्रज्ञघन्य स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार श्रौदारिकिमश्रकाययोगी, कार्मण्काययोगी, मत्यक्कानी, श्रुताक्षानी, श्रसंयत, तीन लेश्यावाले, श्रभव्य, मिथ्यादृष्टि, श्रसंबी श्रौर श्रनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रौदारिकिमश्रकाययोगी, कार्मण्काययोगी श्रौर श्रनाहारक जीवोंमें देवगित चतुष्क श्रौर तीर्थद्भरका भक्न उत्रुप्के समान है। नरकगितसे लेकर सबी तक शेष जितनी मागणायें हैं उनमें श्रसंख्यात, संख्यात और श्रनन्त राशिवाली मार्गणाश्रोंमें उत्रुपके समान भक्न है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय, वनस्पित श्रौर निगोद जीवोंमें तिर्यञ्चायुका शक्न श्रोधके समान है।

रे७०. जघन्य उत्कृष्ट अल्पवहुत्वका प्रकरण है। उसकी अपेना निर्देश दो प्रकारका है— ओघ और आदेश। ओघसे त्तपक प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्यअनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव अनन्तगुणे हें। आहारकि इककी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हें। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हें। तोन आयु और वैकियिक छहकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक है। इनसे जघन्य स्थितिके वन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव अनन्तगुणे हैं। तीर्थक्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव अनन्तगुणे हैं। हो तीर्थक्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष पाँच दर्शनावरण आदि प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष पाँच दर्शनावरण आदि प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं।

५७१. त्रादेसेण ऐरइएसु दोएणं त्रायु०सव्वत्थोवा उक्क०। जह० त्रसंखेजज०। त्राज०मणुक्क० त्रसंखेजागु०। एविर मणुसायु० संखेजागुणं कादव्वं। सेसाणं सव्वपगदीणं सव्वत्थोवा जह०। उक्क० त्रसंखे०। त्राज०मणुक्कस्स० त्रसंखेजा०। एवं सव्विण्याणं। एविर विदियादि याव छि ति इत्थि०-एवं स०-तिरिक्खगदि-तिग-पंचसंठा०-पंचसंघ०-त्रप्यसत्थ०-दूभग-दुस्सर-न्त्रणादे०--णीचागो० सव्वत्थोवा जह०। उक्क० संखेजागु०। त्राज०त्रणु० छिदि० त्रसंखेजा०। एविर सत्तमाए तिरिक्खगदि०४ एएरयोघं। मणुसग०--मणुसाणु०--उच्चा० तिरिक्खायुभंगो। एवं सव्वदेवाणं। एविर त्राणद-पाणद० इत्थि०-एवं स०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-त्रप्यसत्थ०-दूभग-दुस्सर-त्रणादे०--णीचा० सव्वत्थोवा जह०। उक्क० संखेजागु०। त्राज०त्रणु० त्रसंखेजा०। सेसाणं सव्वत्थोवा उक्क०। जह० संखेजा०। त्राज०त्रणु० त्रसंखेजा०। एवं उविरिमगेवजा ति। त्राणुदिस-त्रणुत्तर-सव्वहे मणुसायु० देवोघं। सेसाणं सव्वत्थोवा जह०। उक्क० संखेजा०। सेसाणं सव्वत्थोवा जह०। उक्क० संखेजा०। त्राज०त्रणु०।

५७१. श्रादेशसे नारिकयोंमें दो श्रायुश्रोंकी उत्कृप्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके वन्धक जीव ग्रसंख्यातगुरो हैं। इनसे ग्रजधन्य ग्रनत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुरो हैं। इतनी विशेषता है कि मनुष्यायुकी संख्यातगुरा। करना चाहिए। शेष सब प्रकृतियोंकी जबन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव ग्रसंख्यातगुरो हैं। इनसे ग्रजधन्य ग्रनत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव ग्रसंख्यातगुणे हैं । इसी प्रकार सर्व नारिकयोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि दूसरी पृथ्वीसे लेकर छटी पृथ्वी तकके नारकियोंमें स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, तिर्यञ्च-गतित्रिक. पाँच संस्थानः पाँच संहननः श्रव्रशस्त विद्यागिति, दुर्भगः, दुःस्वरः,श्रनादेय श्रीर नीचगोत्र इनको जघन्य स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । इनके अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । इतनी विशेषता है कि सातवीं पृथ्वोमें तिर्यञ्चगतिचतुष्कका भक्न सामान्य नारिकर्योंके समान है। तथा मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उचगोत्रका भङ्ग तिर्यञ्जायके समान है। इसी प्रकार सब देवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रानत और प्राणत कल्प वासी देवोंमें स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, श्रप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर, त्रमाद्य और नीचगीत्र इनकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीव सवसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुर्णे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुरो हैं। शेप प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुरो हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव त्रसंख्यातगुर्णे हैं इसी प्रकार उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंके जानना चाहिए। श्रनुदिश, श्रनुत्तर श्रौर सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें मनुष्यायुका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है । शेष सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुरो हैं। इनसे अज्ञघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुरो हैं । इतनो विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिम संख्यातगुरो करने चाहिए ।

५७२. तिरिक्षेसु चदुश्रायु--वेउव्वियद्य०-तिरिक्खग०--निरिक्खाणु०--उज्जो०णीचा० श्रोघं । सेसाणं सन्वत्थोवा उक्क० । जह० श्रणंतग्र० । श्रज०श्रणु० श्रसंखेज्ज० । पंचिदियतिरिक्ख०३ सन्वपगदीणं सन्वत्थोवा उक्क० । जह० श्रसंखेज्ज० ।
श्रज०श्रणु० श्रसंखेज्ज० । पंचिदियतिरिक्खश्रपज्जत०सन्वपगदीणं सन्वत्थोवा उक्क० ।
जह० श्रसंखेज्ज० । श्रज०श्रणु० श्रसंखेज्ज० ।

५७३. मणुसेसु खवगपगदीणं सन्वत्थोवा जह । उक्क संखेडज । अज असु असंखेडज । ियारय-देवायु ०-तित्थय ० थोवा उक्क ० । जह ० संखेडज ० । श्रज ० अणु ० संखेडज ० । वेउन्वियछ ० सन्वत्थोवा जह ० । उक्क ० संखेडज ० । अज ० अणु ० संखेडज ० । वेउन्वियछ ० सन्वत्थोवा जह ० । उक्क ० संखेडज ० । अज ० अणु ० संखेडज ० । आहारदुगं ओघं । सेसाणं सन्वत्थोवा उक्क ० । जह ० असंखेडज ० । अज ० अणु ० असंखेडज ० । मणुसपडजत-मणुसिणीसु असिण्णपगदीणं खवगपगदीणं च ओघं । णुवरि संखेडज गुणं कादन्वं । मणुस अपडज तेसु णिरयोघं ।

५७४. एइंदिएसु दोत्रायु॰ त्रोघं। तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा०

५७२. तिर्यञ्चोंमें चार श्रायु, वैकियिक छह, तिर्यञ्चगित, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वा, उद्योत और नीचगोत्रका भक्त श्रोघके समान है। श्रेप प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जावन्य स्थितिके वन्धक जीव श्रनन्तगुणे हैं। इनसे श्रजघन्य श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चित्रकमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे श्रजघन्य श्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्यातकोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे जावन्य स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे जावन्य श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं।

४७३. मनुष्योंमें चपक प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव असंख्यातगुर्णे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव असंख्यातगुर्णे हैं। इनसे अधन्य स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जधन्य स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुर्णे हैं। इनसे अधन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुर्णे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुर्णे हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुर्णे हैं। इनके अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुर्णे हैं। इनके अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुर्णे हैं। इनसे जघन्य समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके वन्धक जीव असंख्यातजुर्णे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव असंख्यातगुर्णे हैं। मनुष्यवर्णात और मनुष्यिनियोंमें असंबी सम्बन्धी प्रकृतियों और चपक प्रकृतियोंका भक्त ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि संख्यातगुर्ण करना चाहिए। भनुष्य अपर्यातकोंमें सामान्य नारिकयोंके समान भक्त है।

४७४. एकेन्द्रियोंमें दो श्रायुश्रोंको भङ्ग श्रोघके समान है। तिर्यश्चगति, तिर्यश्चगत्यासुपूर्वी उद्योत श्रोर नीचगोत्र इनकी जघन्य स्थितिके यन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे

सन्वत्थोवा जह० | उक्क० त्रणंतगु० | त्रजह० त्रसंखेज्जगु० | सेसाणं सन्वत्थोवा जह० | उक्क० संखेजागु० | त्रज०त्रणु० त्रसंखेज्ज० | एवं सन्वविगत्तिदिय-सन्व-पंचकायाणं | पंचिदिय-तसत्रप्रज्ज० पंचिदियतिरिक्खत्रप्रजन्तभंगो |

५७५. पंचिदिय-तस०२ खवगपगदीणं सव्वत्थोवा जह० । उक्क० असंखे० । अज०अण० असंखे० । पंचदंस०-असादा०-मिच्छ०-वारसक०--अहणोक०-तिरिक्ख-गिद-मणुसगिद-एइंदि०-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-छ्रसंठा०--ओरालि०अंगो०-छ्रसंघ०--वण्ण०४-दोआणु०--अगु०४--आदाउज्जो०---दोविहा०-तस०४-थावरादि-पंचयुगल-अजस०-णिमि०-णीचा० सव्वत्थोवा उक्क० । जह० असंखेज्ज० । अज०-अणु० असंखेज्ज० । णविर संसो णाद्व्वो । चदुआयु०-वेउव्वियछ० थोवा उक्क० । जह० असंखेज्ज० । अज०अणु० असंखेज्ज० । तिण्णिजादि-सुहुमणामाणं अपज्ज०-साधार० देवगदिभंगो । आहारदुगं तित्थय० ओघं ।

५७६ पंचमण् ०-तिरिणवचि ॰ चदुत्र्यायु ० सन्वत्थोवा उक्क ० । जह० त्र्यसंखे ० ।

उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रमन्तगुणे हैं। इनसे श्रज्ञधन्य श्रमृत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिके वन्धक जीव सवसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अजधन्य श्रमुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार सव विकलिन्द्रिय श्रीर सव पाँच स्थावरकाथिक जीवोंके जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय श्रपर्यात श्रीर त्रस श्रपर्यात जीवोंका भन्न पञ्चेन्द्रिय त्रपर्यात श्रीर त्रस श्रपर्यात जीवोंका भन्न पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्यात्तोंके समान है।

प्रश्र. पञ्चेन्द्रियद्विक और त्रसद्विक जीवोंमें स्तपक प्रकृतियोंकी जयन्य स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे अजयन्य अनुत्कृष्टस्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। पाँच दर्शनावरण, श्रसाता-वदनीय, मिध्यात्व, वारह कपाय, श्राट नोकपाय, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगित, पकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रियजाति, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, छह संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, वर्णचतुष्क, दो श्रानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, श्रातप, उद्योत, दो विहायोगिति, त्रसचतुष्क, स्थावर श्रादि पाँच युगल, अयशकार्ति, निर्माण श्रीर नीचगोत्र इनकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जयन्य स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हें। इनसे श्रजयन्य श्रात्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हें। इनने विशेषता है कि शेष श्रल्पवहुत्व जानना चाहिए। चार श्रायु श्रौर वेकियिक छहकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जयन्य स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हें। इनसे श्रजयन्य श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जोव असंख्यातगुणे हें। इनसे श्रजयन्य श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जोव असंख्यातगुणे हें। इनसे श्रजयन्य श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जोव असंख्यातगुणे हें। तीन जाति, स्दम, श्रपर्यात श्रौर साधारण इनका भङ्ग देवगितिके समान है। श्राहारकिष्ठक श्रौर तीर्थङ्कर इनका मङ्ग श्रोघके समान है।

४७६. पाँच मनोयोगी श्रौर तीन वचनयोगी जीवोंमें चार श्रायुश्रोंकी उत्कृष्ट स्थितिके घन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे अजि० अणु० श्रसंखेजज० । आहारदुगं तित्थय० त्रोघं । इत्थि०-णवुंस०-णिरयगिद्-चदुजादि--पंचसंदा०-पंचसंघ०--णिरयाणु०--अप्पसत्थ०--थावरादि०४-दूभग--दुस्सर० सव्वत्थोवा जह० । उक्क० संखेजज० । अज०अणु० असंखेजज० । सेसाणं सव्वत्थोवा जह० । उक्क० असंखे० । अज०अणु० असंखे० । दोवचि० तसपज्जत्तभंगो । काय-जोगि-त्रोरालियका० अोघं ।

५७७. त्रोरालियमि॰ देवगदि०४--तित्थय० सन्वत्थोवा उक्क०। जह० संखेज्जन०। त्रज्ञन० संखेजन०। सेसाणं त्रोघं। एवं कम्मइग०--त्रणाहार०। वेउन्वियका० सन्वपगदीणं सन्वत्थोवा जह०। उक्क० त्रसंखेजन०। त्रज्जजणु० त्रसंखेजन०। एवरि इत्थिवेदादीणं विसेसाण। दोत्रायु० देवोघं। एवं वेउन्वियमि०। एवरि त्रायु० एत्थि। त्राहार० त्राहारिमस्से सन्वपगदीणं सन्वत्थोवा जह०। उक्क० संखेजन०। त्रज्ञज्ञणु० संखेजन०। देवायु० मणुसिभंगो।

५७८. इत्थि०-पुरिस० खवगपगदीएां सव्वत्थोवा जह० । उक्क० ऋसंखेडज० ।

अजघन्य अनुत्रुष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। आहारकद्विक और तीर्थद्वर प्रश्नुतिका भङ्ग श्रोधके समान है। स्रीवेद, नपुंसकवेद, नरकगित, चार जाित, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, नरकगत्यानुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगित, स्थावर आदि चार, दुर्भग और दुःस्वर इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्रुष्ट स्थितिके वन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष प्रश्नुतियोंकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्रुष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्रुष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। दो वचनयोगी जीवोंका भङ्ग श्रोधके समान है। काययोगी और औदारिक काययोगी जीवोंका भङ्ग श्रोधके समान है।

४७७. श्रोदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें देवगित चतुष्क श्रोर तीर्थद्वर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात-गुणे हैं। इनसे श्रजधन्य श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। शेप प्रकृतियोंका मङ्ग श्रोधके समान है। इसी प्रकार कार्मणकाययोगी श्रोर श्रनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। वैकियिक काययोगी जीवोंमें सय प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके चन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे श्रजधन्य श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद श्रादि प्रकृतियोंकी विशेषता जाननी चाहिए। दो श्रायुश्रोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। इसी प्रकार वैकियिक मिश्रकाययोगी जीवोंके जानना माहिए। इतनी विशेषता है कि इनके श्रायुक्त बन्ध नहीं होता। श्राहारककाययोगी श्रोर श्राहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सय प्रकृतियोंकी जधन्य स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव सख्यातगुणे हैं। इनसे श्रजधन्य श्रनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। देवायुका भङ्ग मनुष्यिनयोंके समान है।

४७८ स्त्रीवेदवाले श्रीर पुरुपवेदवाले जीवोंमें चपक प्रश्नतियोंकी जवन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुण हैं।

ञ्चज॰ञ्चणु॰ श्रसंखेज्ज० | एावुंस॰-कोधादि०४-श्रचक्खुदं०-भवसि॰-श्राहार॰ मूलोधं | श्रवगदवे॰ सव्वपगदीएां सव्वत्थोवा उक्क० | जह॰ संखेज्ज० | श्रज०ञ्चणु० संखेज्ज० | एवं सुहुमसंप० |

५७६. मदि०-सुद्०-असंज०-तिणिएलं०-अब्भवसि०--मिन्छादि०-असिण्णि ति तिरिक्लोघं । विभंगे चदुआयु० मणजोगिभंगो । संसाणं सन्वत्थोवा जह० । उक्क० असंखेज्ज० । अज०अणु० असंखेज्ज० । णवि सत्थाणपगदिविसेसी णादन्वो । आभि०-सुद०-ओधि० देवायु०--आहारदुग--तित्थय० ओघं । असादा०--अरदि-सोग-अथिर--असुभ--अजस० सन्वत्थोवा जह० । उक्क० असंखेज० । अज०अणु० असंखेज्ज० । मणुसायु० देवोघं । सेसाणं सन्वपगदीणं सन्वत्थोवा जह० । उक्क० असंखेज्ज० । अज०अणु० असंखेज्ज० । मणपज्ज० असादावं०--अरदि--सोग--अथिर--असुभ--अजस० सन्वत्थोवा जह० । उक्क० संखेज्ज० । अज०अणु० संखेज्ज० । सेसाणं [ सन्वत्थोवा जह० । उक्क० संखेज्ज० । अजह०अणु० संखेज्ज० । सेसाणं [ सन्वत्थोवा ] जह० । उक्क० संखेज्ज० । अजह०अणु० संखेज्ज० । एविर आयु० मणुसि०भंगो । एवं संजद-सामाइ०-छेदो०-परिहार० ।

इनसे अजघन्य श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कपायवाले, श्रचजुदर्शनो, भन्य, श्रौर श्राहारक जीवोंका भङ्ग मूलोघके समान है। श्रपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सवसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य-स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे श्रजधन्य श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार सूक्ष्मसाम्परायिक संयत जीवोंके जानना चाहिए।

४७९. मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, श्रसंयत, तीन लेश्यावाले, अभव्य, मिथ्यादृष्टि श्रीर त्रसंज्ञी जीवोंमें त्रपनी त्रपनी सव प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्जोंके समान है। विभङ्ग ज्ञानी जीवोंमें चार श्रायश्रोंका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुरो हैं। इनसे श्रजघन्य श्रनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुर्णे हैं। इतनी विशेषता है कि स्वस्थान प्रकृतिगत विशेषता जाननी चाहिए। श्रभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी श्रौर अवधिज्ञानी जीवोंमें देवाय, आहारकद्विक और तीर्थद्वर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है। श्रसातावेदनीय, श्ररति, शोक, श्रस्थिर, श्रश्चम श्रीर श्रयशःकीर्ति इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक है। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव ग्रसंख्यातगुरो हैं। इनसे त्रजघन्य त्रमुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव त्रसंख्यातगुरो हैं। मनुष्यायुका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। शेप सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव ग्रसंख्यातगुण हैं। इनसे ग्रजधन्य श्रवत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातग्रेले हैं । मनःपर्ययक्षानी जीवोंमें श्रसातावेदनीय. त्रारति, शोक, त्रस्थिर, त्रश्म श्रीर त्रयशःकीर्ति इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुरो हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुर्ण हैं। इनसे अज्ञघन्य त्रानुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणु हैं। **इतनी विशेपता है कि** त्रायुका भङ्ग मनुष्यिनयोंके समान हैं। इसो प्रकार संयत, सामायिक संयत, छेदोपस्थापना संयत श्रौर परिहारविशुद्धि संयत जीवोंके जानना चाहिए।

४८० संजदासंजदे श्रसादावे०-श्ररिद-सोग-श्रथिर-श्रमुभ-श्रजस० सन्वत्थोवा उक्क० | जह० संखेजज० | श्रज०श्रणु० श्रसंखेजज० | सेसाणं सन्वत्थोवा जह० | उक्क० श्रसंखे० | श्रज०श्रणु० श्रसंखेजज० | णविर तित्थय० सखेजज० | श्रायु० णारगभंगो | श्रोधिदंस०-सम्मादि०-वेदगस०-उवसमसम्मा० श्रोधिणाणिभंगो | चक्खुदं० तसपज्जत्तभंगो |

प्रदश्य तेऊए मणुसगदिपंचगं सन्वत्थोवा जह०। उक्क० असंखेजज०। अज० अणु० असंखेजज०। सेसाणं सन्वत्थोवा जह०। उक्क० असंखेजज०। अज०अणु० असंखेजज०। णवरि इत्थिवदादिसत्थाणपगदिविसेसो णाद्व्वो। एवं पम्माए। [सुक्काए वि एवं चेव।] णवरि सुक्काए मणुसगदिपंचगं सन्वत्थोवा उक्क०हिद्वं०। जह०हिद्द०संखेजज०। अज०अणु० असंखेजज०।

४८२. खइगसं० सव्वपगदीणं सव्वत्थोवा जह०। उक्क० असंखेजा०। अज० अणु० असंखेज्ज०। एविरि दोख्रायु० सव्वद्द०भंगो। एविरि मणुसगदिपंचगं सव्वत्थोवा जह०। उक्क० संखेज्ज०। अज०अणु० असंखेज्ज०। सासणे सव्वपगदीणं सव्व-

४८०. संयतासंयत जीवोंमं ग्रसातावेदनीय, ग्ररित, ग्रोक, ग्रस्थिर, श्रग्रम ग्रीर ग्रयशःकीर्त इनकी उत्रुष्ट स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे ग्रजघन्य ग्रमुत्रुष्ट स्थितिके वन्धक जीव ग्रसंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्रुष्ट स्थितिके वन्धक जीव ग्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे ग्रजघन्य ग्रमुत्रुष्ट स्थितिके वन्धक जीव ग्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे ग्रजघन्य ग्रमुत्रुष्ट स्थितिके वन्धक जीव ग्रसंख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिकी ग्रपेक्ता संख्यातगुणे कहने चाहिए। ग्रायु कर्मका भक्त नारिकयोंके समान है। ग्रविध्वानी जीवोंके समान है। चन्नुदर्शनी जीवोंका भक्त त्रसपर्यात जीवोंके समान है।

५८१. पीतलेश्यावाले जीवोंमें मनुष्यगित पश्चककी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे श्रजघन्य श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। शेप प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे श्रजघन्य श्रनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि श्रीवेद आदि स्वस्थान प्रकृतिगत विशेषताको जानना चाहिए। इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंमें जानना चाहिए। इसी प्रकार श्रुप्तलेश्यावाले जीवोंमें भी जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रुक्ललेश्यावाले जीवोंमें मनुष्यगित पञ्चककी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके वन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे श्रजघन्य श्रनुत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं।

५८२ . ज्ञायिक सम्यग्दिष्ट जीवोंमें सव प्रकृतियांकी जवन्य स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक है। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजधन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि दो आयुओंका भक्क सर्वार्थसिद्धिके समान है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगित पञ्चककी जवन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे त्थोवा उक्तः । जहः असंखेः । अजः अणुः असंखेः । सम्मामिः ओधिभंगो । सएणीसु चदुत्रायुः पंचिदियभंगो । सेसाएं मणुसोयं । एवं जीवअप्पावहुगं समत्तं

# **द्विदिऋप्पाबहुगपरूव**णा

- ४८३, द्विदिश्रपावहुगं तिविधं---जहरूणयं उक्कस्सयं जहरूणुक्कस्सयं च । उक्कस्सए पगदं। दुवि०-श्रोधे० श्रादे० । श्रोधेण सन्वपगदीणं सन्वत्थोवा उक्कस्सश्रो द्विदिबंधो । यदिदिबंधो विसेसाधिश्रो । एवं यात्र श्रणाहारग त्ति ऐ।दन्त्रं ।
- ४८४. जहराराए पगदं । दुवि०--श्रोघे० श्रादे० । श्रोघे० सन्वपगदीरां सन्व-त्थोवा जह० द्विदि० । यद्विदि० विसेसा० । एवं याव श्राराहारग त्ति रोदन्वं ।
- ४८४. जहरणुक्कस्सए पगदं | दुविधं--श्रोघे० श्रादे० | श्रोघे० खवगपगदीएं चदुश्रायुगाणं सन्वत्थोवा जहरण्यो हिदिबंधो | यद्विदिवंधो विसेसा० | उक्कसिहिदि-वंधो श्रसंखेजजणुणो | यहिदि० विसेसा० | सेसाएं सन्वत्थोवा जह० | यहिदि० विसेसा० | उक्क०हिदि० संखेजज० | यहिदि० विसेसा० | एवं श्रोघभंगो मणुस०३-पंचिदि०--तस०२-पंचमण०--पंचवचि०--कायजोगि--श्रोरालियका०--इत्थि०-णवुंस०-कोथादि०४-चक्खुदं०-श्रचक्खुदं०-भवसि०-सिएण्-श्रणाहारण् त्ति ।

श्रज्ञघन्य अनुत्रुष्ट स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। सासादनसम्यद्दष्टि जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे ज्ञघन्य स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे श्रज्ञघन्य श्रनुत्कृष्ट । स्थितिके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। सम्यग्मिश्यादृष्टि जीवोंका भङ्ग श्रवधिक्वानी जीवोंके समान हैं। संबी जीवोंमें चार श्रायुश्रोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रियोंके समान हैं। तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य मनुष्योंके समान हैं। इस प्रकार जीव श्रष्णवहुत्व समाप्त हुआ।

## स्थिति अल्पबहुत्वप्ररूपणा

४८३. स्थिति श्रव्यबहुत्व तीन प्रकारका है—जघन्य, उत्कृष्ट श्रौर जघन्योत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। उसकी श्रपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है-श्रोघ श्रोर श्रादेश। श्रोघसे सब प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सवसे स्तोक है। इससे यत्स्थित बन्ध विशेष श्रिधक है। इसी प्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक कथन करना चाहिए।

४८४. जघन्यका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है-- ओघ श्रोर श्रादेश। ओघसे सब प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थिति-वन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार श्रनाहारक मार्गणा तक कथन करना चाहिए।

४८४. जघन्योत्हण्टका प्रकरण है। उसकी श्रपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—शोघ श्रौर आदेश। श्रोघसे चपक प्रकृतियों श्रौर चार श्रायुश्रोंका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थित वन्ध विशेष श्रधिक है। इससे उत्कृष्ट स्थितिवन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। शेष प्रकृतियोंका जघन्य स्थितवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे उत्कृष्ट स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे उत्कृष्ट स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इसो प्रकार श्रोघके समान मनुष्यत्रिक पञ्चेन्द्रिय-द्विक, त्रसिद्धक, पाँच मनोयोगी, पांच वचनयोगी, काययोगी, श्रौदारिक काययोगी, स्रीवेदी, नपुंसकवेदी, कोधादि चार कपायवाले, चजुदर्शनी, श्रचजुदर्शनी, भन्य, संज्ञी श्रौर श्रना-हारक जीवोंके जानना चाहिए।

४८७. तिरिक्षेसु चदुत्रायु॰ सन्वत्थोवा जह॰ हिदि०। यहिदि० विसे०। उक्क० असंखेळा०। यहिदि० विसे०। सेसाणं सन्वकम्पाणं सन्वत्थोवा जह०हिदि०। यहिदि० विसे०। उक्क०हिदि०। यहिदि० विसे०। एवं तिरिक्खोगं पंचिदियतिरिक्ख०३-मिद०-सुद०-असंज०-तिरिणले०-अन्भवसि०-मिन्छादिहि चि। पंचिदियतिरिक्खत्रपळ्चत० शिर्यभंगो। एवं मणुसञ्चपळ्चत-पंचिदि०-तसञ्चपळ्ळ०!

४८८. एइंदिएसु दोत्रायु० णिरयोघं । संसाणं सव्वत्थोवा जह०द्विदि० । यद्विदि० विसे० । उक्क०द्विदि० विसे० । यद्विदि० विसे० । एस भंगो सव्वएइंदियाणं सव्वविगलिदियाणं पंचकायाणं च ।

४८६. त्रवगदवे॰ सादा०-जस॰-उचा० सन्वत्थोवा जह॰हिदि॰ । यहिदि॰ विसे० । उक्त॰हिदि॰ त्रसंखेज्ञ० । यहिदि॰ विसे० । सेसाएां सन्वत्थोवा जह०

५८६. नारिकयों में सब प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे उत्कृष्ट स्थितिबन्ध श्रिसंख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। यह भङ्ग सब नारकी, सब देव, श्रीदारिकमिश्रकाययोगी, वैकियिककाययोगी, वैकियिकमिश्रकाययोगी, श्राहारककाययोगी, श्राहारकमिश्रकाययोगी, कार्यणकाययोगी, परिहारिबशुद्धिसंयत, संयतासंयत, वेदकरान्यदिष्ट श्रीर सम्यग्मिथ्या- दिष्ट जीवोंके जानना चाहिए।

४८७. तिर्यञ्जोंमें चार श्रायुश्रोंका जघन्य स्थितिबन्ध सवसे स्तोक है। इससे यितस्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे उत्हृष्ट स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यितस्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। शेप सब कमोंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यितस्थितिविशेष श्रधिक है। इससे उत्हृष्ट स्थितिबन्ध सख्यातगुणा है। इससे यितस्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे उत्हृष्ट स्थितिबन्ध सख्यातगुणा है। इससे यितस्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्जोंके समान पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्जविक, मत्यश्रानी, श्रुताश्रानी, श्रसंयत, तीन छेश्यावाछे, श्रभव्य श्रीर मिथ्यादिष्ट जीवोंकं जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्ज श्रपर्याप्तकोंमें नारिकयोंकं समान भक्ष है। इसी प्रकार मनुष्य श्रपर्याप्त, पञ्चेन्द्रिय श्रपर्याप्त श्रीर वस श्रपर्याप्त जीवोंकं जानना चाहिए।

४८८. एकेन्द्रियोंमें दो श्रायुश्रोंका भङ्ग नारिकयोंके समान है। शेप प्रकृतियोंका जधन्य स्थितिवन्ध सवसे स्तोक है। इससे यित्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे उत्हण्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। यह भङ्ग सव एकेन्द्रिय, सब विकलेन्द्रिय और पांच स्थावरकायिक जीवांके जानना चाहिए।

४८९. श्रपगतवेदी जीवोंमें सातावेदनीय, यशःकीर्ति श्रोर उच्चगोत्र इनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेप श्रधिक है। इससे उत्रुप्ट स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेप श्रधिक है। शेप प्रकृतियोंका हिदि॰ । यहिदि॰ विसे॰ । उक्क॰ संखेज्ज॰ । यहिदि॰ विसे॰ । एवं सुहुमसंप॰ । णवरि सन्वार्ण संखेज्जगुणं कादन्वं ।

५६०. त्राभि०-सुद०-श्रोधि० खवगपगदीएां श्रोघं । सेसाएां देवोघं । एस भंगो मणपज्जव-संजद-सामाइय-छंदो०-श्रोधिदं०-सुक्कले०-सम्मादि०-खइग०-उवसम० ।

५६१. तेउ-पम्माए देवगदिभंगो । सासणे तिरिक्खोघं । असिएण॰ णिरय-देवायूणं सन्वत्थावा जह॰ द्विदि० । यद्विदि० विसे० । उक्क० द्विदि० असंखेजन० । यद्विदि० विसे० । सेसाणं तिरिक्खोघं । एविर तिरिक्ख-मणुसायु० मणुसअपज्जत्त-भंगो । वेउन्वियद्यकं सन्वत्थोवा जह० द्विदि० । यद्विदि० विसे० । उक्क० द्विदि० विसे० । यद्विद० विसे० । एवं द्विदिअप्पावहृगं समत्तं ।

# भृयो द्विदिऋप्पाबहुगपरूवगा

५६२. भूयो द्वित्रिष्णावहुगं दुविधं--सत्थाणिद्वित्रिष्णावहुगं चेव परत्थाणिद्विदि-अप्पावहुगं चेव । सत्थाणिद्वित्रिष्णावहुगं दुविधं--जहरूणयं उक्कस्सयं च । उक्कस्सए पगदं । दुवि०--आंघे० श्रादे० । ओघे० पंचणा०-णवदंसणा०-वरूण्४-अगु० ४-तस-थावर-आदाउडजो०-णिभि०-तित्थय०--पंचंत० सन्वत्थोवा उक्क०द्विदि० । यद्विदि०

जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे थित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इसी प्रकार सृष्ट्मसाम्यरायिक संयत जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सब प्रकृतियोंका संख्यातगुणा करना चाहिए।

४९०. श्रामिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी श्रौर श्रवधिज्ञानी जीवोंमें त्तपक प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोघके समान है। यह भङ्ग मनः-पर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, अवधिदर्शनी, शुक्ललेश्यावाले, सम्यग्दिष्ट, त्वायिकसम्यग्दिष्ट श्रौर उपशमसम्यग्दिष्ट जीवोंके जानना चाहिए।

५६१. पीत श्रौर पद्मलेश्यावाले जीवांमं देवगतिके समान मङ्ग है। सासादन सम्यग्दिए जीवोंमं सामान्य तिर्वञ्चांके समान भङ्ग है। श्रसंज्ञी जीवोंमं नरकायु श्रौर देवायुका जधन्य स्थितिवन्ध सवसं स्तोक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे उत्रुष्ट स्थितवन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्वञ्चांकं समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्वञ्चायु श्रौर मनुष्यायुका भङ्ग मनुष्य श्रप्यात्तकोंकं समान है। वैकियिक छहका जधन्य स्थितवन्ध सबसे स्ताक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक

# भूयः स्थिति ऋल्पवहुत्वप्ररूपणा

४९२. भृयः स्थितित्रल्पबहुत्व दो प्रकारका है—स्वस्थान स्थितित्रल्पबहुत्व श्रौर परस्थान स्थितित्रल्पबहुत्व । स्वस्थान स्थितित्रल्पबहुत्व दो प्रकारका है—ज्ञघन्य श्रौर उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसको ग्रपेन्ना निर्देश दो प्रकारका है—ग्रोघ श्रौर श्रादेश । श्रोघसे पांच श्रानावरण, नो दर्शनावरण, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क, त्रस, स्थावर, श्रातप, उद्योत, निर्माण, तीर्थद्वर श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका उत्कृष्ट स्थिति-बन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रिधक है । सातावेदनीयका उत्कृष्ट

विसे०। सादावे० सन्वत्थोवा उक्क० दिदि०। यद्विदि० विसे०। असादावे० उक्क० दिदि० विसे०। यद्विदि० विसे०। सन्वत्थोवा पुरिस०--हस्स-रदीणं उक्क० दिदि०। यद्विदि० विसे०। इत्थि० उक्क० दिदि० विसे०। यद्विदि० विसे०। एपुं स०-अरदि-सोग-भय-दुगुं० उक्क० दिदि० विसे०। यद्विदि० विसे०। सोलसक० उक्क० दिदि० विसे०। यद्विदि० विसे०। यद्विदि० विसे०। यद्विदि० विसे०।

५६३. सन्वत्थोवा तिरिक्ल-मणुसायु० उक्क०द्विदि०। यद्विदि० विसे०। णिरय-देवायु० उक्क०द्विदि० संखेज्जगु०। यद्विदि० विसे०।

५६४. सन्वत्थोवा देवगदि० उक्क॰ द्विदि० । यद्विदि० विसे० । मणुसग० उक्क॰ द्विदि० विसे० । यद्विदि० विसे० । णिरय--तिरिक्लगदि० उक्क॰ द्विदि० [ विसे० ] यद्विदि० विसे० । सन्वत्थोवा तिण्णिजादीणं उक्क॰ द्विदि० । यद्विदि० विसे० । एइंदि०-पंचिदि० उक्क० द्विदि० विसे० । यद्विदि० विसे० । सन्वत्थोवा आहार० उक्क॰ द्विदि० । यद्विदि० विसे० । चदुण्णं सरीराणं उक्क॰ द्विदि० संखेजज० । यद्विदि० विसे० । सन्वत्थोवा समचदुर० उक्क० द्विदि० । यद्विदि० विसे० । णुगोद० उक्क॰ द्विदि० । यद्विदि० विसे० । णुगोद० उक्क० विसे० । सन्वत्थोवा समचदुर० उक्क० द्विदि० । यद्विदि० विसे० । णुगोद० उक्क०

स्थितवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे असाता-वेदनीयका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। पुरुषवेद, हास्य श्रीर रित इनका उत्कृष्ट स्थितवन्ध सबसे स्तोक है इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे स्त्रोवेदका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे नपुंसकवेद, श्ररित, शाक, भय श्रीर जुगुन्सा इनका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे सोलह कपार्योका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष विशेष श्रधिक है।

५६३. तिर्यञ्चायु श्रोर मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससं यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे नरकायु श्रोर देवायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यात.
गुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है।

५९४. देवगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक हैं। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यगितका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। तीन जातियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पक्तिवन्ध जाति और पञ्चेन्प्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थिति बन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। आहारक शरीरका स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे चार शरीरोंका उत्कृष्ट स्थिति बन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे चार शरीरोंका उत्कृष्ट स्थिति बन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे चार शरीरोंका उत्कृष्ट स्थिति बन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है।

डिदि॰ विसे॰। यिहिदि॰ विसे॰। सादि॰ उक्क०हिदि॰ विसे॰। यहिदि॰ विसे॰। खुज्ज॰ उ॰िहि॰ विसे॰। यिहिदि॰ विसे॰। वामण॰ उक्क॰िहि॰ विसे॰। यिहिदि॰ विसे॰। वामण॰ उक्क॰िहि॰ विसे॰। यिहिदि॰ विसे॰। सन्वत्थोवा आहार॰ अंगो॰ उक्क॰िहि॰। यिहिदि॰ विसे॰। दोएएं अंगो॰ उक्क॰िहिदे॰ संखेजज॰। यिहिदि॰ विसे॰।

५६५. यथा संठाणाणं तथा संघडणाणं। यथा गदीणं तथा आणुप्विणं। सन्वत्थोवा पसत्थ उक्क छिद् । यहिद् विसे । अप्पसत्थ उक्क छिद् । यहिद् विसे । यहिद् विसे । सन्वत्थोवा सुहुम-अपज्ञत्त-साधारणाणं उक्क छिद् । यहिद् विसे । वादर-पज्जत्त-पत्तेय । उक्क छिद् । यहिद् । विसे । यहिद् । विसे । सन्वत्थोवा थिराद् छ । उक्क छिद् । यहिद् । विसे । यहिद् । विसे । अथिराद् छ । सन्वत्थोवा थिराद् छ । उक्क छिद् । यहिद् । विसे । यहिद् । अथिराद् छ । सन्वत्थोवा थिराद् छ । विसे । यहिद् । यहिद् । विसे । एवं ओघभंगो पंचिद्य-त्स २-पंचमण्ठ-पंचवि । काय जोगि-पुरिसवे । कोघदि । सन्वत्थ । सन्वत्य । सन्वत्थ । सन्वत्य । सन्वत्य । सन्वत्थ । सन्वत्य ।

४६६. त्रादेसेण ऐरइएसु पंचणा॰-एवदंसणा॰-दोत्रायु॰-पंचिदि०-त्रोरात्ति०-तेजा०-फ॰-त्रोरात्ति०त्रंगो॰--वएण्०४--त्रागु०४-उज्जो०--तस०४-एिमि०--तित्थय०-

इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिधिक हैं। इससे स्वातिसंस्थानका उन्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यस्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यस्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे वामन संस्थानका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे वामन संस्थानका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे द्वापिक है। इससे हुण्ड संस्थानका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिधिक है। श्राहारक श्राङ्गोषाङ्गका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सवसे स्ताक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिधिक है। श्रीक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिधिक है।

प्रश्र. पहले जिस प्रकार संस्थानोंका अल्पवहुत्व कह आए हैं उसी प्रकार संहननोंका कहना चाहिए। तथा जिस प्रकार गतियोंका कह आये हैं उसी प्रकार आनुपूर्वियोंका कहना चाहिए। प्रशस्त विहायोगितका उन्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक हैं। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक हैं। इससे अप्रशस्त विहायोगितिका उन्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष अधिक हैं। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक हैं। स्क्ष्म, अपर्याप्त और साधारण्का उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे वादर, पर्याप्त और प्रत्येकका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। स्थिरादि इह और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थिवन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार ओधिक समान पञ्चित्रियदिक, असिदिक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, काययोगी, पुरुषवेदी, कोधिद चार कपायवाले, चजुदर्शनी, अचजुदर्शनी, भव्य, संक्षी और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

४९६. स्रादेशसे नारिकयोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, दो स्रायु, पञ्चेन्द्रिय जाति, स्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, स्रोदारिक स्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, पंचंत० सन्वत्थोवा उक्क०द्विदि० । यद्विदि० विसे० । सेसाएां श्रोघं । एवं सन्व-णिरयाएां । एवरि सत्तमाए सन्वत्थोवा मणुसग०-मणुसाणु०-उन्जो० उक्क०द्विदि० । यद्विदि० विसे० । तिरिक्लगदि-तिरिक्लाणु०--णीचा० उक्क० संखेज्ज० । यद्विदि० विसे० ।

४६७. तिरिक्खेसु श्रोघं । एवरि सन्वत्थोवा तिरिक्ख--मणुसायु॰ उक्क॰ हिदि॰ । यहिदि॰ विसे॰ । देवायु॰ उक्क॰ हिदि॰ संखेजन॰ । यहिदि॰ विसे॰ । िएरयायु॰ उक्क॰ हिदि॰ विसे॰ । यहिदि॰ विसे॰ । सन्वत्थोवा देवगदि॰ उक्क॰ हिदि॰ । यहिदि॰ विसे॰ । मणुसगदि॰ उक्क॰ हिदि॰ विसे॰ । तिरिक्खगदि॰ उक्क॰ हिदि॰ विसे॰ । यहिदि॰ विसे॰ ।

५६८. सन्वत्थोवा चदुएएएां जादीएां उद्ग० हिदि०। यहिदि० विसे०। पंचिदि० उक्ग०हिदि० विसे०। यहिदि० विसे०। सन्वत्थोवा त्र्योरालिय० उक्न०हिदि०। यहिदि० विसे०। तिएिए सरीराएां उक्न०हिदि० विसे०। यहिदि० विसे०।

५६६. संठाएां त्रोघं । सन्वत्थोवा त्रोरालि॰त्रंगो० उक्क ६ दि० । यहिदि०

अगुरुलघु चतुष्क, उद्योत, त्रस चतुष्क, निर्माण, तीर्थङ्कर श्रीर पाँच श्रन्तराय इनका उत्हृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधके समान है। इसी प्रकार सब नारिकयोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सातवी पृथ्वीमें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उद्योतका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे विरिश्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रीर नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सिख्यात्मुणा है। इससे विरिश्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रीर नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध संख्यात्मुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिषक है।

४९.5. तिर्यञ्चोंमें श्रोघके समान भक्क हैं। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुका उत्कृप्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक हैं। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक हैं। इससे देवायुका उत्कृप्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है।

४९८. चार जातियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक हैं। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे पञ्चेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। श्रीदारिक श्रिशेरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे तीन श्रीगंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे तीन श्रीगंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है।

४९९. संस्थानोंका भङ्ग श्रोधके समान है। श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्गका उन्हाप्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यन्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधक है। इससे वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्गका विसे० | वेउव्विय॰ ग्रंगो॰ उक्क०हिदि० विसे० | यद्विदि० विसे० | सन्बत्थोवा वज्जिरिस० उक्क०हिदि० | यद्विदि० विसे० | वज्जिणा० उक्क०हिदि० विसे० | यहिदि० विसे० | णारायण० उक्क०हिदि० विसे० | यहिदि० विसे० | ऋदुणा० उ०हि० विसे० | यहिदि० विसे० | खीलिय०-ग्रसंपत्त० उक्क०हि० विसे० | यहिदि० विसे० | यथा गदि० तथा श्राणुपुन्वि० |

६००. सन्वत्थोवा थावरादि०४ उक्क०हिदि० । यहिदि० विसे० । तण्डि-पक्खाणं उक्क०हिदि० विसे० । यहिदि० विसे० । एवं पंचिदिय-तिरिक्ख०३ । पंचिदियतिरिक्खअपज्ञत्तगेसु पंचणा०-णवदंसणा०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि० अंगो०-वण्ण०४-अगु०४--आदाउज्जो०--णिमि०--पंचंत० सन्वत्थोवा उक्क०हिदि० । यहिदि० विसे० । इत्थि० यहिदि० विसे० । इत्थि० उक्क०हिदि० । यहिदि० विसे० । यहिद० विसे० । यहिदि० विसे० । यहिद० विष० । यहिद० विसे० । यहिद० विसे० । यहिद० विसे० । यहिद० विसे० । यहिद

उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। वज्रष्मे नाराचसंहननका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे वज्रनाराच संहननका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे नाराचसंहननका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे श्रिक्षेत्राराच संहननका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे कीलकसंहनन श्रीर श्रिमम्प्राप्तास्पृप्तिका संहननका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रिधक है। इससे यात्स्थितबन्ध विशेष श्रिधक है। इससे यात्स्थितवन्ध विशेष श्रिधक है। इससे यात्स्थिक है। इससे यात्स्थितवन्ध विशेष श्रिधक है। इससे यात्स्थितवन्ध विशेष श्रिधक है। इससे यात्स्थितवन्ध विशेष श्रिधक है। इससे यात्स्थिक है। इससे यात्स्थितवन्ध विशेष श्रिधक है। इससे यात्स्थिक है। इससे यात्स्थक है। इससे यात्स्थिक है। इससे यात्स्थक है। इससे यात्स्थक

६००. स्थावर ब्रादि चारका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे इनकी प्रतिपत्त प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रकार पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च त्रिकके जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्यातकोंमें पांच ब्रानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रौदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोणङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, श्रातप, उद्योत, निर्माण श्रौर पाँच श्रन्तराय इनका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। पुरुषचेदका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे स्रोवेदका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे व्यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे हास्य श्रौर रितका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे वित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे वित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मिण्यात्वका उत्कृष्ट स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे प्रतिस्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मिण्यात्वका उत्कृष्ट स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे प्रतिस्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। दो श्रायुश्रोंका भङ्ग नारिकयोंके समान है।

- ६०१. सन्वत्थोवा मणुसग० उक्क०हिदि०। यहिदि० विसे०। तिरिक्खग० उक्क०हिदि० विसे०। यहिदि० विसे०। एवं आणुपु०। सन्वत्थोवा पंचिदि० उक्क० हिदि०। यहिदि० विसे०। चदुरिं० उक्क०हिदि० विसे०। यहिदि० विसे०। तीइंदि० उक्क०हिदि० विसे०। यहिदि० विसे०। यहिद० विसे०। यहिद० विसे०। यहिद० विसे०। यहिद० विसे०।
- ६०२. सन्वत्थोवा तस०४ उक्त०द्विदि० । यद्वि० विसे० । तप्पडिपक्लाएां उ०द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० । सेसाएां णिरयभंगो ।
- ६०३. मणुसेसु णिरयभंगो । एवरि आयु॰ ओघं । सन्वत्थोवा आहार० उ० हि० । यहि॰ विसे० । ओरालि० उ० हि० संखेज्ञ० । यहि॰ विसे० । वेउन्वि०-तेजा०-क० उ० हि० विसे० । यहि० विसे० । सन्वत्थोवा आहार०अंगो० उ० हि० । यहि॰ विसे० । यहि० विसे० । यहि० विसे० । वेउन्वि॰ अंगो० उ० हि० विसे० । वेउन्वि॰ अंगो० उ० हि० विसे० । यहि० विसे० । मणुसअपज्जत्त० पंचिदियांतरिक्षअपज्जत्त-भंगो ।
- ६०१. मनुष्यगितका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इसमें यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्जगितका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार आनुपूर्वियोंकी मुख्यतासे अल्पबहुन्व जानना चाहिए। पञ्जेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे चतुरिन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रकेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रकेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रकेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है।
- ६०२. त्रसचतुष्कका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे इनको प्रतिपद्य प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है। शेष प्रकृतियोंका भक्त नार्राकयोंके समान है।
- ६०३. मनुष्यों में नारिकयों के समान भड़ है। इतनी विशेषता है कि आयुआँका भड़ आघके समान है। आहारकद्विकका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्ताक है। इससे यित्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे औदारिक शरीरका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध संख्यतागुणा है। इससे यित्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे वैकिषिक शरीर, तैजस शरीर और कार्मण शरीरका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे औदारिक आङ्गोणाङ्गका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे वैकिषक आङ्गोणाङ्गका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे वैकिषक आङ्गोणाङ्गका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे वैकिषक आङ्गोणाङ्गका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है। मनुष्य अपर्याप्तकोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्थञ्च अपर्याप्तकोंके समान है।

६०४. देवाणं णिरयभंगो । णवरि भवण् वाणवेंत०--जोदिसिय०-सोधम्मीसाणं सन्वत्थोवा पंचिदि० उ०िह० । यिह० विसे० । एइंदि० उ०िह० विसे० ।
यिह० विसे० । एवं तस-थावर० । संघडणाणं तिरिक्खोधं । आणद याव णवगेवज्ञा
त्ति सन्वत्थोवा पुरिस०-हस्स-रिद० उ०िह० । यिह० विसे० । इत्थि० उ०िह० विसे० ।
यिह० विसे० । एवुंस०-अरिद-सोग-भय-दुगुं० उ०िह० विसे० । यिह० विसे० ।
सोलसक० उ०िह० विसे० । यिह० विसे० । मिच्छ० उ०िह० विसे० । [यिह० विशे० । अणुदिस याव सन्वहा ति सन्वत्थोवा हस्स--रिद० उक्क०ि । यिह० विसे० । पुरिस०-अरिद-सोग-भय-दुगुं० उ०िह० विसे० । यिह० विसे० । विह० विसे० । यिह० विसे० ।

६०५. एइंदि०--विगलिंदि०--पंचिदिय--तसत्रपज्ज०---पंचकायाणं च पंचिदिय-तिरिक्खऋपज्जत्तभंगो । श्रोरालियका० मणुसभंगो । श्रोरालियमि० सन्वत्थोवा देव-गदि० उ०द्वि० । यद्वि० विसे० । मणुसग० उक्क०द्वि० संखेजा० । यद्वि० विसे० ।

६०४, देवोंका भक्न नारकियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि भवनवासी. व्यन्तर, ज्योतिषी श्रीर सौधर्म ऐशान कल्पवासी देवोंमें पञ्चेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थिति-वन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे एकेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्म्थित विशेष अधिक है। इसी प्रकार त्रस श्रीर स्थावर प्रकृतियोंका जानना चाहिए। संहननोंका मङ्ग सामान्य तिर्वञ्जोंके समान है। श्रानत कल्पसे लेकर नवग्रैवेयक तकके देवोंमें पुरुषवेद, हास्य श्रौर रतिका उत्रुष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्ताक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्त्रीवेदका उत्कृष्ट स्थिति-बन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यह्म्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे नपुंसकवेद, श्ररति-शाक, भय श्रीर जुगुप्साका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे सांलह कपायका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। श्रमुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें हास्य श्रीर रतिका उत्क्रप्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुपवेद, ग्रारित, शोक, भय श्रीर जुगुल्साका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्य विशेष अधिक है। इससे वारह कपायका उत्कृष्ट स्थितवन्य विशेष श्रधिक है । इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है ।

६०५. एकेन्द्रिय. विकलेन्द्रिय, पञ्चेन्द्रिय ग्राप्याप्त, त्रसग्रप्याप्त ग्रोर पाँच स्थावर कायिक जीवोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च ग्रप्याप्तकोंके समान है। ग्रोदारिककाययोगी जीवोंका भङ्ग मनुष्योंके समान है। ग्रादारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके देवगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे मनुष्यगितका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे तिर्यञ्चगितका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे विशेष ग्रधिक

तिरिक्खग ० उक्क ० दि० विसे ० । यदि ० विसे ० । सेसाएां अपज्जत्तभंगो । वेउन्वियका ० देवोघं । एवं वेउन्वियमि ० ।

६०६. ब्राहार०-स्राहारिक सञ्वत्थोवा पंचणोक उ०िट । यहि० विसं । चदुसंज उ०िट विसं । चित्र विसं । सञ्बत्थोवा थिर-सुभ-जसिक उ०िट । यिट विसं । विसं । विसं । विसं । विसं । विसं ।

६०७. कम्मइग० पंचणा०--णवदंसणा०--वर्णण०४-अगु०४-आदाउज्जो०--तस-थावरादिश्रयुगल-णिमि०--तित्थय०--पंचंत० सन्वत्थोवा उ०द्वि०। यद्वि० विसे०। सन्वत्थोवा चदुरिं० उ०द्वि०। यद्वि० विसे०। तीइंदि० उ०द्वि० विसे०। यद्वि० विसे०। बेइंदि० उ०द्वि० विसे०। यद्वि० विसे०। एइंदि०--पंचिदि० उ०द्वि० विसे०। यद्वि० विसे०। सेसाणं ओवं। णवरि गदी औरालियमिस्सभंगो।

६०८. इत्थिवेदे देवोघं। एकिर आहार॰ उ॰िह० थोवा। यिह० विसे०। चदुएएां सरीराएां उ०िह० संखेजागु०। यिह० विसे०। सन्वत्थोवा आहार० अंगो॰ उ॰िह०। यिह० विसे०। ओरालि० अंगो० उ॰िह० संखेजा०। यिह० विसे०।

है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग श्रपर्याप्तकोंके समान है । वैकियिककाययोगी जीवोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है । इसी प्रकार वैकियिकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए ।

६०६. ग्राहारककाययोगी श्रीर श्राहारकिमश्रकाययोगी जीवोंमें पाँच नोकपायोंका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे चार सञ्ज्वलनोंका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे इनकी प्रतिषद्ध प्रश्रिक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रिधक है।

६०७. कार्मणकाययोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, वर्णचनुष्क, अगुरुक्तधुचनुष्क, आतप, उद्योत, त्रस और स्थावर आदि चार युगल, निर्माण, तीर्थंद्वर और पाँच अन्तराय इनका उत्कृष्ट स्थितवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। चतुरिन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे वीन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे विशेष अधिक है। इससे विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे विशेष अधिक है। इससे एकेन्द्रिय और पञ्चेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। शेष प्रकृतिकृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओधिक समान है। इतनी विशेषता है कि गितयोंका भङ्ग औदारिकिमिध-काययोगी जीवोंके समान है।

६०८. स्त्रीवेदो जीवोंमें सामान्य देवोंके समान भड़ है। इतनी विशेषता है कि श्राहा-रक शरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्धितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे चार शरीरोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। श्राहारक श्राङ्गोपाङ्गका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्गका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे वेउव्वि०श्रंगो॰ उ०द्वि॰ विसे०। यद्वि० विसे०। संघडणं देवोघं। णवरि स्वीलिय॰-श्रसंपत्त० दोएणं उ०द्वि॰ विसे०।

६०६. एावुंसगे स्रोवं। एाविर सञ्बन्धोवा चदुस्रायु-जादी उ०िट । यिह० विसे०। पंचिदि० उक्क०िट० विसे०। यिह० विसे०। सञ्बन्धोवा थावरादि०४-उ०िट०। यिह० विसे०। तस०४ उ०िह० विसे०। यिह० विसे०। स्रवगद्वेदे सञ्बाएां सञ्बन्धोवा उ०िह०। यिह० विसे०।

६१०. मदि - सुद्द - विभंग = श्रांघं | श्राभि - सुद्द - श्रांधि = सव्तर्थोवा सादा | उ०िह | यिह | विसे | श्रमादा | उ०िह | संखे ज्ञगु | यिह | विसे | एवं पिरयत्तमाणीणं | सेसाणं सन्वत्थोवा उ०िह | यिह | विसे | एवरियत्तमाणीणं | सेसाणं सन्वत्थोवा उ०िह | यिह | विसे | पंचणोक = उ०िह | विसे | यिह | विसे | व

यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे वैकियिक श्राङ्गोषाङ्गका उत्कृष्ट स्थितबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रिधिक है। संहननोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि कीलक संहनन श्रीर श्रसम्प्राप्तास्प्रपाटिका संहनन इन दोनोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

६०९. नपुंसकवंदी जीवोंमें श्रोघकं समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि चार श्रायुश्रों श्रोर चार जातियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक हैं। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक हैं। इससे पञ्चेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक हैं। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक हैं। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक हैं। स्थावर श्रादि चारका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे त्रस चतुष्कका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रिधक है। श्रिपतवन्ध विशेष श्रिधक है। श्रिपतवन्ध सबसे स्तोक है इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रिधक है।

६१०. मत्यज्ञानी, श्रुताङ्गानी श्रीर विभक्तज्ञानी जीवोंमं श्रोघकं समान भक्त है। श्राभिनिविधिकङ्गानी, श्रुतज्ञानी, श्रीर श्रवधिक्षानी जीवोंमें साता प्रकृतिका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यिस्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रसाता वेदनीयका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यिस्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इसो प्रकार परावर्तमान प्रकृतियोंका जानना चाहिए। श्रेष प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितवन्ध सबसे स्तोक है। इससे पित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पत्थितवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे वार्ष कथायोंका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे वार्ष कथायोंका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे विशेष विशेष विशेष श्रधिक है। इससे विशेष विश

सम्मादि०-खइग०-चेदग०-उनसम०-सासण०-सम्मामि० त्राभिणिबोधि०भंगो । णनिर एदेसिं मग्गणाणं अपपपणो पगदीत्रो णादृण अप्पाबहुगं साधेदन्वात्रो ।

- ६११. सासणे सब्बत्थोवा तिरिक्ख--मणुसायुक उव्हिव् । यद्विव विसेव् । देवायुव उव्हिव् संखेज्जव । यद्विक विसेव् । असंज्ञव--श्रब्भवसिव--भिच्छादिक मदिव्भंगो ।
- ६१२. किएणले॰ णवुंसगभंगो०। णील-काऊणं सन्वत्थोवा देवगदि० ७० हि॰। यहि॰ विसे॰। णिरयग० उ०िह॰ विसे॰। यहि० विसे॰। मणुसग॰ उ०िह० संखेज्ज०। यहि॰ विसे॰। तिरिक्खग० उ०िह० विसे॰। यहि॰ विसे॰। सन्वत्थोवा चदुजादि॰ उ०िह०। यहि० विसे०। पंचिंदि॰ उ०िह० संखेज्जगु०। [यहि॰ विसे०।] सेसाणं त्रोघं।
- ६१३. तेउ० सोधम्मभंगो । एविर सन्वत्थोवा आहार० उ०िह० । यिह० विसे० । वेउन्वि० उ०िह० संखेज्जगु० । यिह० विसे० । ओरालि०-तेजा०-क० उक्क०िह० संखेज्जगु० । यिह० विसे० । सन्वत्थोवा देवगिद० उ०िह० । यिह०

श्रधिक है। मनःपर्यवज्ञानी, मंयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंग्रत, परिहार विद्युद्धि संयत, संयतासंयत, श्रवधिदर्शनी, शृक्षलेश्यावाले, सम्यग्दिष्टि, चायिकसम्यग्दिष्टि, वेद्कसम्यग्दिष्टि, उपशमसम्यग्दिष्टि, सासादनसम्यग्दिष्टि श्रीर सम्यग्मिथ्यादिष्टे जीवोंमें श्राभिनिबोधिकञ्चानी जीवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि इन मार्गणाश्रोंमें श्रपनी श्रपनी श्रकृतियोंको जानकर श्रल्पबहुत्व साध लेना चाहिष्ट।

६११. सासादनसम्यग्दिए जीवोंमें तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुका उन्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक हैं। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिषक हैं। इससे दवायुका उरकृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिषक हैं। श्रसंयतसम्यग्दिए, श्रभव्य श्रीर मिथ्यादिए जीवोंका भक्न मत्यक्षानी जीवोंके समान है।

६१२. कृष्णलेश्यावाले जीवोंमं नपुंसकवेदी जीवोंके समान भक्क है। नील श्रौर कापीत लेश्यावाले जीवोंमं देवगितका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सवसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे नरकगितका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यगितका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यगितका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध संख्यात-गुणा है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पिश्चित्वन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पश्चित्वन्ध स्थितिवन्ध सिख्यातिगुणा है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पश्चित्वन्ध सिख्यातिगुणा है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। श्रेष प्रकृतियोंका भक्क श्रोधके समान है।

६१३. पीतलेश्यावाले जोवोंमें सौधर्म कल्पके समान भक्त है। इतनी विशेषता है। कि ब्राहारक श्ररीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सवसं स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे वैकियिक श्ररीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे ब्रौदारिक श्ररीर, तैजस श्ररीर श्रीर कार्मण श्ररीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे ब्रिट्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। देवगितका उत्कृष्ट

विसे०। मणुसगदि० उ०द्वि० संखेज्ज०। यद्वि० विसे०। तिरिक्खग० उ०द्वि० विसे०। यद्वि० विसे०। एवं तिष्णिश्राणु०। एवं पम्माणु वि । स्विर सहस्सारभंगो ।

६१४. असएणीमु सन्वत्थोवा तिरिक्ख--मणुसायु॰ उ०हि०। यहि० विसे०। देवायु॰ उ०हि॰ असंखे॰। यहि० विसे०। णिरयायु० उ०हि० असंखे॰। [यहि० विसे०।] सन्वत्थोवा देवगदि॰ उ०हि०। यहि० विसे०। मणुसग० उ॰ हि॰ विसे॰। यहिए विसे०। तिरिक्खग॰ उ०हि० विसे॰। यहि० विसे०। यिह० विसे०। यिह० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। वीइंदि० उ०हि०। यहि० विसे०। तीइंदि० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। वीइंदि० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। पंचिदि० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। पंचिदि० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। ससा० अपज्ञत्तभंगो। अणाहार॰ कम्मइगमंगो।

## एवं उक्कस्सं समत्तं

स्थितवन्ध सवसं स्तोक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे ममुष्यगितका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे वित्यञ्चगितका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे वित्यञ्चगितका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इसी प्रकार तीन श्रानुपूर्वियोंको मुख्यतासे श्रत्यवहुत्व जानना चाहिए। इसी प्रकार पद्मतेश्यावाले जीवोंके भी जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके सहस्रार कल्पके समान भन्न जानना चाहिए।

६१४. ग्रसंज्ञी जीवोंमें तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितवन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिवन्ध विशेप अधिक है । इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध ग्रमंख्यात-गुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकायका उन्कृष्ट स्थितवन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। देवगतिका उत्क्रष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यदिस्थतिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यगतिका उत्क्रप् स्थितवन्ध विशेष अधिक है । इससे यहिस्थितबन्ध विशेष अधिक है । इससे तिर्यञ्जगतिका उत्क्रप्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नरकः गतिका उत्क्रप्ट स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। चतुरिन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सवसं स्तोक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक हैं। इससे त्रीन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक हैं। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे द्वीन्द्रिय जातिका उत्क्रष्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थिति-वन्ध विशेष श्रधिक है। इससे एकेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे पञ्चेन्ट्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। चार ग्रानुपूर्वियोंका भङ्ग चार गतियोंके समान है। स्थावर ग्रादि चारका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे त्रस चतुष्कका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष त्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग अपर्याप्तकोंके समान है। तथा अनाहारक जीवोंका भङ्ग कार्मणकाय- योगी जीवोंके समान है।

इस प्रकार उत्रुप्ट ग्रल्पबहुत्व समाप्त हुन्ना ।

६१५. जहएएए पगदं । दुवि०--श्राये॰ श्रादे॰ । श्रोये॰ पंचएा०--वएए०४श्रगु०४--श्रादाउज्जो॰--णिम०--तित्थय०--पंचंत॰ सन्वत्थोवा जह॰ हिदि॰ । यहि०
विसे॰ । सन्वत्थोवा चदुदंस॰ ज०हि॰ । यहि० विसे॰ । पंचदंस॰ ज०हि॰ श्रसंखं॰ ।
यहि॰ विसे॰ । सन्वत्थोवा सादावे॰ ज०हि॰ । यहि॰ विसे॰ । श्रसादावे॰ ज०हि॰
श्रसंखंजा० । यहि॰ विसे॰ । सन्वत्थोवा लोभसंज० ज॰हि॰ । यहि॰ विसे॰ ।
मायासंज० ज०हि॰ संखंजा० । यहि० विसे॰ । माएासंज० ज०हि० विसे॰ । यहि०
विसे॰ । कोधसंज० ज॰हि० विसे॰ । यहि० विसे० । पुरिस० ज॰हि० संखंजा० ।
यहि० विसे॰ । हस्स-रिद-भय-दुगुं० ज॰हि० श्रसंखंजा॰ । यहि॰ विसे॰ । श्ररिद-सोग० ज०हि० विसे॰ । यहि० विसे॰ । एगुंस॰ ज॰हि० विसे॰ । यहि॰ विसे॰ ।
वारसक॰ ज०हि० विसे॰ । यहि० विसे॰ । मिच्छ० ज॰हि० विसे॰ । यहि॰ विसे॰ ।
६१६. सन्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० ज०हि० । यहि० विसे॰ । एएरय-

६१६. सव्वत्थोवा तिरिक्ख-मगुसायु० ज०द्वि० | यद्वि० विसे० | गिरय-देवायु० ज०द्वि० संग्वेज्ज० | यद्वि० विसे० | [ सव्वत्थोवा ] तिरिक्ख-मगुसग०

६१४. जघन्यका प्रकरण है उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है--श्रोघ श्रीर श्रादेश। श्रोघसे पाँच झानावरण, वर्ष चतुष्क, श्रगुम्लघुचतुष्क, श्रातप, उद्योत, निर्माण, तीर्थक्कर श्रोर पाँच श्रन्तराय इनका जघन्य स्थितिवन्ध सर्वसे स्तोक हैं । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। चार दर्शनावरणका जघन्य स्थितिवन्ध सवसे स्तेक है। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच दर्शनावरणका जधन्य स्थितिवन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यतिस्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। साता वेदनीयका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्ताक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे ग्रसाताबेदनीयका जयन्य स्थितिबन्ध ग्रसं-ख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिवन्ध चिशेष श्रधिक है। लोभ मंज्वलनका जधन्य स्थिति-बन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे माया संज्वलनका जघन्य स्थितिवन्घ संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे मान-संज्वलनका जधन्य स्थितियन्ध विशेष श्रधिक हैं। इसमे यन्ध्यितयन्थ विशेष श्रधिक है। इससे कोधसञ्चलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यतिस्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुपवेदका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्म्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे हास्य, रति, भय ग्रीर जुगुप्साका जघन्य स्थितिवन्ध ग्रसंख्यात-गुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे अर्गत और शांकका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे नपुसक्वेद्दका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यतिश्वतिवन्त्र विशेष अधिक है। इससे वारह कपायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष शिधक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य म्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इसमे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है।

६१६. तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे नग्कायु श्रीर देवायुका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। तिर्यञ्चगित श्रीर मनुष्यगितका जघन्य
स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रिधक है। इससे देवगितका

ज॰िड॰ । यिहि॰ विसे० । देवग० ज०िड० संखेज्ज० । यिहि० विसे० । णिरयग० ज०िड० विसे० । यिह० विसे० । सन्वत्थोवा पंचिदि० ज०िड० । यिह० विसे० । चहुरिं० ज०िड० विसे० । यिह०विसे० । तीइंदि० ज०िड० विसे० । यिह० विसे० । बीइंदि॰ ज०िड० विसे० । यिह० विसे० । एइंदि० ज०िड० विसे० । यिह० विसे० ।

६१७. सन्वत्थोवा त्रोरालि०-तेजा०-क० ज०िछ । यदि विसे०। वेउन्वि० ज॰िठ संखेजा० । यदि० विसे० । त्राहार ज०िठ संखेजा० । यदि० विसे० । सन्वत्थोवा त्रोरालि०त्रंगो० ज०िड० । यदि० विसे० । वेउन्वि०त्रंगो० ज०िठ० संखेजा० । यदि० विसे० । संखेजा० । यदि० विसे० । संठाण-संघडणं उक्कस्सभंगो ।

६१८. सव्वत्थोवा पसत्थ०---तस०४-थिरादिपंच ज०६०। यहि० विसे०। तप्पडिपक्लाएां ज०६० विसे०।यहि० विसे०। सच्वत्थोवा जस०--उच्चा० ज०६०। यहि० विसे०। अजस०-एीचा० ज०६० असंखेज्ज०।यहि० विसे०। एवं ओघ-भंगो कायजोगि-ओरालि०-एाबुंस०-कोधादि०४-अचक्लु०-भवसि०-आहारए ति।

जधन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे नरकगितका जधन्य स्थितिवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष ग्रधिक है।
पञ्चेन्द्रिय जातिका जधन्य स्थितिवन्ध सबसे न्त्रोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष
ग्रधिक है। इससे चतुरिन्द्रिय जातिका जधन्य स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे
यत्स्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे जीन्द्रिय जातिका जधन्य स्थितिवन्ध विशेष
ग्रधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे द्वीन्द्रिय जातिका जधन्य स्थितिवन्ध विशेष
ग्रधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है।

६१% श्रौदारिकशरीर, नैजसशरीर श्रौर कार्मणशरीरका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे वैक्षियिकशरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्राहारकशरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्गका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे विक्रियक श्राङ्गोपाङ्गका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितबन्ध विशेष श्रीक है। इससे यित्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितबन्ध विशेष श्रिक है। संस्थान श्रोर संहननोंका भङ्ग उत्कृष्क समान है।

६१८. प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क ग्रौर स्थिर ग्रादि पाँचका जघन्य स्थितवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे इनकी प्रतिपत्त प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। यशःकीर्ति श्रोर उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे ग्रयशःकीर्ति श्रोर नीचगोत्रका जघन्य स्थितवन्ध ग्रसंख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे प्रकार ग्रोधके समान काययोगी, ग्रौदारिककाययोगी, नपुंसकवेदी, कोधादि चार कषायवाले, ग्रचश्चदर्शनी, भव्य ग्रौर ग्राहारक जीवोंके जानना चाहिए।

६१६. णिरएस उक्कस्सभंगो । एवरि पुरिस०-हस्स-रिद-भय-दुगुं० जिहि० थोवा । यिष्ठ० विसे० । अरिद-सोग० जिहि० विसे० । यिष्ठ० विसे० । इत्थि० जिहि० विसे० । यिष्ठ० विसे० । सोल-सक् जिहि० विसे० । यिष्ठ० विसे० । सोल-सक जिहि० विसे० । यिष्ठ० विसे० । मिच्छ० जिहि० विसे० । यिष्ठ० विसे० । यिष्ठ० विसे० । एवं पढमाए ।

६२०. विदियादि याव छिट ति सन्वत्थोवा छदंस॰ ज०हि०। यहि० विसे॰। थीएगिद्धि॰ ३ ज॰िट॰ संखेजा०। यहि॰ विसे॰। सन्वत्थोवा पुरिस०- इस्स--रिद-भय-दुगुं० ज०िट०। यहि॰ विसे॰। अरिद-सोग० ज॰िट० विसे॰। यहि॰ विसे॰। यहि॰ विसे॰। आएंताणुवंधि०४ ज॰िट संखेजा०। यहि० विसे॰। मिन्छ० ज॰िट० विसे॰। यहि॰ विसे॰। यहि॰ विसे॰। रिथ० ज॰िट० संखेजा०। यहि॰ विसे॰। एवं स० ज॰िट० विसे॰। यहि० विसे॰।

६२१. सव्वत्थोवा मणुसग० ज०डि०वं०।यडि विसे०। तिरिक्खग० ज०डि० संखेज्ज०। यडि० विसे०। एवं आणुपु०। सव्वत्थोवा समचद्० ज०डि०।

६१९. नारिकयोंमें उत्कृष्टके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेद, हास्य, रित, भय और जुगुष्सा इनका जघन्य स्थितवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे खितवन्ध विशेष अधिक है। इससे खितवन्ध विशेष अधिक है। इससे खितवन्ध विशेष अधिक है। इससे विशेष विशेष अधिक है। इससे प्रत्यान क्यायका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रत्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रकार पहली पृथिवीमें जानना चाहिए।

६२०. दूसरीसे लेकर छुटी तक पृथिवीमें छह दर्शनावरणका जघन्य स्थितियन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितिवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे स्त्यानगृद्धि तीनका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितिवन्ध विशेष ग्रधिक है। पृरुपवेद, हास्य, रित, भय ग्रीर जुगुष्साका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितिवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यात्स्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे वारह कपायका जघन्य स्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे वारह कपायका जघन्य स्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे ग्रास्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे ग्रास्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे ग्रास्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे प्रिथातवन्ध क्षिणे ग्रधिक है। इससे प्रिथातवन्ध स्थितवन्ध सिथातवन्ध सिथातवन्य सिथातवन्ध सिथातवन्ध सिथातवन्ध सिथातवन्ध सिथातवन्ध सिथातवन्ध सिथातवन्ध सिथातवन्य सिथातवन्ध सिथातवन्य सिथातवन्य सिथातवन्ध सिथातवन्य सि

६२१. मनुष्यगतिका जघन्य स्थितियन्ध सबसं स्तोक है। इससं यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्चगतिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार अनुपूर्वियोकी मुख्यतासे अल्पबहुत्व जानना यिं विसे॰ । एग्गोद्० ज॰िंट० संखेजा० । यिंट० विसे॰ । सेसाएां उक्कस्सभंगो । एवं संघड० ।

६२२. सन्वत्थोवा पसन्थ०-सुभग-सुस्सर-त्रादे०-उच्चा० ज०डि०। यडि० विसे०। तप्पडिपक्खाणं ज०डि० संखेज्ज०। यडि० विसे०। थिर-सुभ-जसगि० ज०डि० थोवा०। यडि० विसे०। तप्पडिपक्खाणं ज०डि० विसे०। यडि० विसे०। एवं सत्तमाए।

६२३. तिरिक्खेसु छएएं कम्माएं िएरयोघं । ख्रायु०४ मृलोघं । ए।मा० छोघं । एवरि सव्वत्थोवा जस० ज०द्वि० । यद्वि० विसे० । ख्रजस० ज०द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० । एवं पंचिद्यितिरिक्ख०३ । पंचिद्यितिरिक्ख ख्रपज्जत्तएसु िएरयोघं ।

६२४. मणुसेसु मूलोघं । एावरि सव्वत्थोवा मणुसग॰ ज०िट०। यिट० विसे०। तिरिक्खग० ज०िट० विसे०। यिट० विसे०। देवगदि० ज०िट० संखेज्ज०। यिट्ठ० विसे०। णिरयग० ज०िट० संखेज्ज०। यिट० विसे०। जादी स्रोघं। सब्वत्थोवा तिरिएसरीराएं ज०िट०। यिट्ठ० विसे०। वेउब्वि०-स्राहार० ज०िट०

चाहिए। समचतुरस्रसंस्थानका जघन्य स्थितिवन्ध सवसे स्तोक है। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे न्यग्रोध परिमंडल संस्थानका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यिस्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। श्रेष संस्थानोंकी मुख्यतासे श्रव्यबहुत्व उत्कृष्टके समान है। तथा इसी प्रकार सहननोंकी मुख्यतासे श्रव्यवहुत्व जानना चाहिए।

६२२. प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, श्रादेय श्रीर उच्चगोत्रका जघन्य स्थिति-वन्ध सबसे स्तोक है। इससे यिन्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे इनकी प्रतिपत्तभृत प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। स्थिर, शुभ श्रीर यशःकीर्ति इनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे इनकी प्रतिपत्त प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए।

६२३. तिर्यञ्चोंमें छह कमींकी मुख्यतासे अल्पवहुत्व सामान्य नारिकयोंके समान है। चार आयुओंकी मुख्यतासे अल्पबहुत्व मृलोधके समान है। तथा नामकर्मकी प्रकृतियोंकी मुख्यतासे अल्पबहुत्व ओधके समान है। इतनी विशेपता है कि यशःकीर्तिका जधन्य स्थिति-बन्ध सबसे स्ताक है। इससे यित्थितिवन्ध विशेप अधिक है। इससे अयशःकीर्तिका जधन्य स्थितिवन्ध स्थितिवन्ध विशेप अधिक है। इससे अपशःकीर्तिका जधन्य स्थितिवन्ध विशेप अधिक है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्जिकमें जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्ज अपर्याप्तकोंमें सामान्य नारिक्योंके समान जानना चाहिए।

६२४. मनुष्योमं मूलोघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगितका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्धितिवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे तिर्यञ्चगितका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यित्धितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे देवगितका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे नरकगितका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष ग्रधिक है। पाँच जातियोंकी मुख्यतासे ग्रल्पवहुत्व श्रोधके समान है। तीन शरीरोंका जघन्य संखेज्ज० । यद्वि० विसे० । श्रोरालि०श्रंगो० ज०ड्वि० थोवा । यद्वि० विसे० । वेउन्वि०-श्राहार०श्रंगो० ज०द्वि० संखेज्ज० । यद्वि० विसे० । संसाणं श्लोघं । सन्वश्रपज्जत्त-सन्वविगलिंदिय-पंचकायाएं पंचिंदियतिरिक्खश्रपज्जत्तभंगो ।

६२५. देवाणं णिरयभंगो । एविर थोवा पंचिंदि०-तस० ज०हि॰ । यहि॰ विसे॰ । एइंदि०-थावर॰ ज०हि० विसे० । यहि० विसे॰ ।

६२६. एइंदिएसु तिरिक्खोघं । एवरि गदीएां एित्थ अप्पाबहुगं । पंचिद्य-पंचिदियपज्जत्ता॰ सत्तरएां कम्माएं ओघं । सन्वत्थोवा देवगदि० ज॰हि॰ । यहि॰ विसे० । मणुसग॰ ज॰हि॰ विसे० । यहि० विसे० । तिरिक्खग० ज॰हि॰ विसे० । यहि० विसे० । एवं आणुपु० । सेसं ओघं । एवं तस-तसपज्जत्ता । एवरि विसेश । सन्वत्थोवा मणुसग० ज॰हि॰ । यहि॰ विसे० । तिरिक्खगदि० ज॰हि॰ विसे० । यहि० विसे० । देवगदि ज॰हि॰ संखेजा० । यहि॰ विसे० । एएरयग॰ ज०हि० विसे० । यहि॰ विसे० ।

स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे वैकिषिक श्रीर श्राहारक शरीरका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्थितिवन्ध विशेष श्रिकि है। इससे यित्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे येतिश्यितबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे वैकिषिक श्रीर श्राहारक श्राङ्गापाङ्गका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रिधिक है। तथा शेष प्रकृतियोंकी मुख्यतासे श्रव्यव्यक्तिव श्रीधक समान है। सब अपर्याप्त, सब विकलेन्द्रिय श्रीर पाँच स्थावर कायिक जीवोंका भङ्ग पञ्जेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्याप्तकोंके समान है।

६२४. देवोंका भङ्ग नारिकयोंके समान है। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय जाति ग्रौर त्रसका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे एकेन्द्रिय जाति ग्रौर स्थावरका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है।

६२६. एकेन्द्रियों में सामान्य तिर्यञ्चीके समान अल्पयहुन्य है । इतनी विशेषता है कि इनमें गितयोंका अल्पयहुत्व नहीं है । पञ्चेन्द्रिय और पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तकों में सात कमींका अल्पबहुत्व ग्रोघके समान है । देवगितका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्ताक है । इससे यित्थितिवन्ध विशेष अधिक है । इससे यित्थितिवन्ध विशेष अधिक है । इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है । इससे विर्यञ्चगितका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष अधिक है । इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है । इससे वरकगितका जघन्य स्थितवन्ध विशेष अधिक है । इससे यित्थितवन्ध जानना चिहिए । शेष प्रकृतियोंके जघन्य स्थितवन्धका अल्पवहुत्व ओचके समान है । इससे प्रकार जसकायिक और असकायिक पर्याप्त जीवोंके जानना चिहिए । इतनी विशेषता है । इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है । इससे विशेष निर्योतवन्ध विशेष अधिक है । इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है । इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है । इससे विशेष निर्योतवन्ध विशेष विशेष विशेष अधिक है । इससे विशेष निर्योतवन्ध विशेष विशेष विशेष अधिक है ।

६२७. पंचमण०-तिण्णिविष् सन्वत्थोवा चदुदंस० ज॰हि॰। यहि० विसे०। णिदा-पचला॰ ज॰हि० असंखेजा॰। यहि॰ विसे०। थीणगिद्धि०३ ज०हि० संखेजा०। यहि० विसे॰। सन्वत्थोवा लोभसंज० ज०हि॰। यहि॰ विसे॰। मायासंज० ज॰हि॰ संखेजा०। यहि॰ विसे॰। माणमंज॰ ज॰हि॰ विसे॰। यहि० विसे०। कोधसंज० ज॰हि० विसे०। यहि॰ विसे॰। पुरिस॰ ज०हि० संखेजा०। यहि॰ विसे॰। पुरिस॰ ज०हि० संखेजा०। यहि॰ विसे॰। यहि॰ विसे॰। यहि॰ विसे॰। अपदि—सोग॰ ज०हि० संखेजा०। यहि० विसे०। पच्चक्खाणावर०४ ज॰हि० संखेजा०। यहि० विसे॰। अप्ताणुवंधि०४ ज०हि० संखेजा०। यहि० विसे॰। मिच्छ० ज०हि० विसे॰। यहि॰ विसे॰। इत्थि०-पुरिस० ज०हि० विसे॰। यहि॰ विसे॰। एवुंस० ज०हि० विसे॰। यहि॰ विसे॰। सन्वत्थोवा देवगदि॰ ज०हि॰। यहि० विसे॰। मणुसग० ज०हि॰ संखेजा०। यहि० विसे०। सन्वत्थोवा देवगदि॰ ज०हि॰। यहि० विसे०। सन्वत्थोवा देवगदि॰ ज०हि॰। सहि० विसे०। यहि० विसे०। पिर्वणा० ज०हि० संखेजा०। यहि० विसे०। सन्वत्थोवा देवगदि॰ ज०हि॰। सन्वत्थोवा पेटि॰ विसे०। सन्वत्थोवा देवगदि॰ ज०हि॰। सन्वत्थोवा पंचिहि० ज०हि०। यहि० विसे०। सन्वत्थोवा पेटि॰ विसे०। सन्वत्थोवा पेटि॰ विसे०। सन्वत्थोवा पेटि॰ विसे०। सन्वत्थोवा पंचिहि० ज०हि०। यहि०

६२७. पाँचों मनोयोगी ग्रीर तीन वचनयोगी जीवोंमें चार दर्शनावरणका जघन्य म्थितवन्य सबसे स्तोक है। इससे यतिथितवन्य विशेष अधिक है। इससे निन्दा और प्रचलाका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्त्यानगृद्धि तीनका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। लोभ संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्यितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मायासंज्वलनका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है । इससे मानसंज्वलनका जघन्य स्थितवन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक हैं । इससे क्रोधासंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेदका जधन्य म्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे हास्य, रित. भय ग्रौर जुगुप्साका जघन्य स्थितिबन्ध ग्रसंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे अर्रात और शोकका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ग्रिधिक है। इससे प्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससं यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे अप्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विद्योप ऋधिक है। इससे ग्रनन्तानुबन्धी चारका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक हैं। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यत्म्थितवन्ध विशेष अधिक है । इससे स्त्रीवेद और पुरुपवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससं यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससं नपु सकवेदका जघन्य स्थिति-बन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। देवगतिका जघन्य स्थिति-बन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मनुष्यगतिका जधन्य स्थितवन्ध संख्तगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्चगतिका ज्ञघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे नरक- विसे० | चदुरिंदि॰ ज॰हि० संसेज्जगु० | यहि० विसे॰ | उविर श्रोघं | सन्वत्थोवा चदुएएं सरीराएं ज०हि० | यहि॰ विसे॰ | श्रोरालिय॰ ज०हि० संसेज्ज॰ | यहि० विसे० | संठाएं संघडएं दोविहा० विदियपुढविभंगो | श्रंगोवंग॰ सरीरभंगो | सन्वत्थोवा तस०४ जिह० | यहि॰ विसे० | तप्पिडपक्खाएं ज०हि० संसेज्ज॰ | यहि० विसे॰ | सन्वत्थावा थिरादिपंच॰ ज०हि० | यहि० विसे॰ | तप्पिडपक्खाएं ज०हि॰ संसेज्ज॰ | यहि० विसे॰ | सन्वत्थोवा जसगि०-उचा० ज०हि० | यहि० विसे॰ | अजस०-एवि।० ज॰हि॰ संसेज्ज॰ | यहि० विसे० | सेसं पंचिदियभंगो | ६२८, विचोगि॰-असचमोस॰ तसपज्जत्तभंगो | श्रोरालियका० स्वनगपगदीएं

६२८. विचिजागि॰-असचमोस॰ तसपज्जत्तभगा। आरालियका० खवगपगदीएं ओषं। ससं तिरिक्खोषं। ओरालिमि॰ तिरिक्खोषं। वेउव्वियका॰ सोधम्मभंगा। एवं वेउव्वियमि०। आहार०--आहारमि॰ उक्कस्सभंगो। कम्मइ०-अणाहार० ओरा-लियभिस्सभंगो। इत्थिवेदेसु ओषं। संसाएां पंचिद्यभंगो। एवं पुरिसवे०। अवगदवेदे ओषं। कोधादि॰४ ओषं। एवरि मोह० विसेसो ए।द्व्यो। संजलणा०४

गतिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। पञ्चेन्द्रिय जातिका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे चतुरिन्द्रियजातिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्सिवित्व वन्ध विशेष अधिक है। इससे आगेका अल्पबहुत्व ओघके समान है। चार शरीरोंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे औदारिक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। संस्थान, संहनन और दो विहायोगित इनका भङ्ग दूसरी पृथिवीके समान है। आङ्गीर पाङ्गीका भङ्ग शरीरोंके समान है। असचतुष्कका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे उनकी प्रतिपत्त प्रकृतियोंका जघन्य स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे इनकी प्रतिपत्त प्रकृतियोंका जघन्य स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे दिश्यितबन्ध विशेष अधिक है। इससे उनकी प्रतिपत्त प्रकृतियोंका जघन्य स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे दिश्यितबन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रतिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रतिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे सिथितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। शेष मङ्ग पञ्चेन्द्रियांके समान है।

६२८. वचनयोगी और असत्यमृपायचनयोगी जीवोंमें त्रमपर्याप्त जीवोंकं समान भक्त है। औदारिककाययोगी जीवोंमें चपक प्रकृतियोंका भक्त श्रोधकं समान है। तथा शेप प्रकृतियोंका भक्त सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। वैक्षियिककाययोगी जीवोंमें सीधर्मकल्पके समान भक्त है। इसी प्रकार वैक्षियिकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए। आहारककाययोगी श्रीर आहारकिमिश्रकाययोगी जीवोंके उत्कृष्टके समान भक्त है। कार्मणकाययोगी श्रीर श्रनाहारक जीवोंमें श्रीदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान भक्त है। क्ष्रीवेदी जीवोंमें चपक प्रकृतियोंका भक्त श्रीधके समान है। श्रेप प्रकृतियोंका भक्त पश्चेन्द्रियोंके समान है। इसी प्रकार पुरुपवेदी जीवोंके जानना चाहिए। श्रपगतवेदी जीवोंमें ओधके समान भक्त है। क्षेपिद चार कपाय-

कोधे माणे०३ मायाए दोएिए लोभे एक०।

६२६. मदि - - सुद् - - - असं ज - - - अव्यव्भव - - - - मिच्छादि । तिरक्ष्योघं । विभंगे सन्वत्थाया देवग० ज ॰ हि० । यहि ॰ विसे ० । तिरक्ष्य - मणुमग० ज ॰ हि॰ संखे ज ० । यहि ॰ विसे ० । सिव्यत्थाया पंचिंदि ० ज ॰ हि॰ । यहि ॰ विसे ० । सिव्यत्थाया पंचिंदि ० ज ॰ हि॰ । यहि ॰ विसे ० । च दुर्गिद् ० ज ॰ हि० संखे ज ० । यहि ० विसे ० । ती इंदि ० ज ॰ हि० विसे ० । यहि ॰ विसे ० । ए इंदि ० ज ॰ हि० विसे ० । यहि ॰ विसे ० । स्वत्थाया वे उ व्या ० - ते जा ॰ - क ॰ ज ॰ हि० । यहि ॰ विसे ० । स्वत्थाया वे उ व्या ० । से सं मणु जोगि भंगो ।

६३०. त्राभि०-सुद्०-त्रोधि० सन्वत्थोवा मणुसायु० ज० हि० । यहि० विसे० । देवायु० ज० हि० त्रसंखेजा० । यहि० विसे० । सन्वत्थोवा देवग० ज० हि० । यहि० विसे० । सन्वत्थोवा देवग० ज० हि० । यहि० विसे० । संसाणं मणजोगिभंगो । एवं त्रोधिदंसणी-सम्मादि०-खइग०-वेदग०-उवसम० । एवरि वेदगे खवगपगदिभंगो एत्थि ।

वाले जीवोंमें श्रोघके समान भक्त हैं। इतनी विशेषता है कि मोहनीयकर्ममें विशेषता जाननी चाहिए। कोधमें चार संज्वलन, मानमें तीन, मायामें दो श्रोर लोभमें एक कहना चाहिए।

६२६. मन्यक्षानी, श्रुताक्षानी, श्रसंयत, श्रभव्य श्रोग मिथ्यादृष्टि जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्जोंके समान भक्त हैं। विभक्षक्षानमें देवगतिका जघन्य स्थितिवन्ध स्वयं स्तोक हैं। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक हैं। इससे तिर्यञ्जगित श्रोर मनुष्यगितका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक हैं। इससे नग्कगितका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्थितिवन्ध विशेष श्रधिक हैं। पञ्जेन्द्रिय जातिका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक हैं। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक हैं। इससे वर्त्रिय जातिका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थित बन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थित बन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थित बन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रीदिकशरीरका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रीद्रिकशरीरका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिषक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिषक है। श्रेष श्रक्तिवन्ध विशेष श्रिक समान है।

६३०. श्राभिनिबोधिकश्वानी, श्रुतशानी श्रौर श्रवधश्वानी जीवोंमें मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसं स्तोक है। इससं यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससं देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससं यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। देवागितका जघन्य स्थितिबन्ध सबसं स्तोक है। इससं यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मनुष्यगितका जघन्य स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससं यित्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। शेष प्रकृतियोंका भक्त मनोयोगी जीवोंके समान है। इसी प्रकार श्रवधिदर्शनी, सम्यग्दिष्ट ज्ञायिकसम्यग्दिष्ट, वेदकसम्यग्दिष्ट श्रीर उपसमसम्यग्दिष्ट जीवोंके जानना चाहिष्। इतनी विशेषता है कि वेदकसम्यग्दिष्ट जीवोंमें ज्ञपक प्रकृतियोंका भक्त नहीं है।

- ६३१. मण्पज्जव सन्वत्थावा सादा -- जसगि ज विह । यहि विसे । असादा ०- अजस ज ज विह असंखेळ । यहि विसे । मोहणीयं मणजोगिभंगो । एवं दंसणावरणीयं । सेसाणं सन्वत्थोवा ज विह । यहि विसे । एवं संजद सामाइ ०- छेदो ० परिहार ० -- संजदासंजदा चि । एवरि विसे सो णादन्यो । चक्खुदं ० तसपळ्च संगो ।
- ६३२. किएण्-गील-काऊएां सन्वत्थोवा दोत्रायु० ज०िट० । यिट० विसे० । देवायु० ज०िट० संखेजागु० । यिट० विसे० । गिरयायु० ज०िट० त्रसंखेज्ज० । यिट० विसे० । सेसं अपज्जत्तभंगो । गाविर काऊए गिरय-देवायुणं सह भागिदव्वं ।
- ६३३. तेऊए मोहणीय--णामं मणजोगिभंगो । णवरि संव्वत्थोवा पुरिस॰-हस्स-रिद-भय-दुगुं० ज॰हि॰ । यहि॰ विसे॰ । चदुसंज॰ ज०हि० विसे० । यहि॰
  विसे॰ । अर्राद--सोग॰ ज०हि॰ संखेज्ज० । यहि० विसे॰ । सेसं सोधम्मभंगो ।
  णवरि साद॰-जस०-उचा॰ सन्वत्थोवा ज॰हि॰ । यहि० विसे॰ । असाद॰-अजस०णीचा० ज०हि॰ संखेजा॰ । यहि विसे॰ । एवं पम्माण ।
- ६३१. मनःपर्ययक्षानी जीवोंमं सातावेदनीय श्रीर यशःकीर्तिका जघन्य स्थितिक प्रमुख्ये स्तोक है। इसमे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इसमे असातावेदनीय श्रीर श्रियशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध श्रुसंख्यातगुणा है। इसमे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। मोहनीयका भङ्ग मनोयागी जीवोंके समान है। इसी प्रकार दर्शनावरणीयका श्रुष्प बहुत्व जानना चाहिए। श्रेष प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इसमे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधक है। इसी प्रकार संयत, सामायिकसंयत, छुदोषस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत श्रीर संयतासंयत जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु जहाँ जो विशेषता हो उसे जान लेना चाहिए। चक्षदर्शनवाले जीवोंमें त्रसपर्याप्त जीवोंके समान भङ्ग है।

६३२. हृष्ण्, नील श्रीर कापोत लेश्यावाले जीवोंमें दे। श्रायुश्रींका जघन्य स्थितिवन्ध सबसं स्तोक हैं। इससं यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक हैं। इससं देवायुका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससं यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक हैं। इससे नरकायुका जघन्य स्थितिवन्ध स्थितिवन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक हैं। शेष प्रकृतियोंका भक्त श्रिपयित्रकोंके समान है। इतनी विशेषता है कि कापोत लेश्यावाले जीवोंमें नरकायु श्रीर देवायुको एक साथ कहना चाहिए।

६३३. पीतलेश्यावाले जीवोंमें मोहनीय और नामकर्मका भक्त मनायोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेद, हास्य, रात, भय और जुगुण्साका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तांक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे चार संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अर्गत और शोकका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे अर्गत और शोकका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। शोष प्रकृतियोंका भक्त सोधमें कल्पके समान है। इतनी विशेषता है कि सातावेदनीय, यशकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीय, अयशकीर्ति और नीचगोत्रका जघन्य स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंक जानना चाहिए।

६३४. सुकाए सञ्बत्थोवा मणुसायु० ज०द्वि० । यद्वि० विसे० । देवायु० ज०द्वि० त्रसंखेज्ञ० । यद्वि० विसे० । सञ्बत्थोवा देवग० ज०द्वि० । यद्वि० विसे० । मणुसग० ज०द्वि० संखेज्जगु० । यद्वि० विसे० । सेसं त्रोघं ।

६३५. सासणे सन्वत्थांवा सादावे० ज॰डि॰ । यहि॰ विसे० । ऋसादा० ज॰डि० विसे० । यहि॰ विसे० । सन्वत्थांवा तिरिणगदि० ज०डि० । यहि० विसे० । एवं धुविगाणं । संसाणं सादा॰भंगो ।

६३६. सम्माभि० सव्वत्थोवा सादा० ज०िह०। यहि० विसे०। असादा० ज०िह० संखेजा०। यहि० विसे०। एवं परियत्तमाणियाणं। सव्वत्थोवा पुरिस०- हम्स-रिद-भय-दुगुं० ज०िह०। यहि० विसे०। वारसक० ज०िह० विसे०। यहि० विसे०। अरिद-सोग० ज०िह० संखेजा०। यहि० विसे०। सेसाणं सव्वत्थोवा ज०िह०। यहि० विसे०।

६३७. सिएए मणुसभंगो । असिएए० तिरिक्खोघं । एवं जहएएयं समत्तं एवं सत्थाएद्विदिअप्पावहुगं समत्तं

६३४. शुल्कलेश्यावाले जीवोंमें मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। देवगितका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यागितका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधक है। शेष प्रकृतियोंका भक्न श्रोधक समान है।

६३४. सासादनसम्यग्दिष्ट जीवोंमं सातावेदनीयका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे श्रसातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। तीन गतियोंका जघन्य स्थिति-बन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इसी प्रकार ध्रुवबन्धवाली प्रकृतिकोंका जानना चाहिए। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सातावेदनीय के समान है।

६३६. सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमं सातावेदनीयका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध संख्या-तगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार परावर्तमान प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व जानना चाहिए। पुरुषवेद, हास्य, रित, भय और जुगुष्सा इनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे बारह कपायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरित और शोकका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। श्री श्री श्री श्री प्रकृतियोंका जघन्य स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। श्री प्रकृतियोंका जघन्य स्थितबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। श्री प्रकृतियोंका जघन्य स्थितबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है।

६३७. संक्षियोंमें मनुष्योंके समान भक्क है। तथा श्रसंक्षियोंमें सामान्य तिर्यञ्जीके समान भक्क है।

> इस प्रकार जघन्य श्रत्पबहुत्व समाप्त हुश्रा । इस प्रकार स्वस्थान स्थिति श्रत्पबहुत्व समाप्त हुश्रा ।

६३८. परत्थाणिहिदिश्रणावहुगं दुविधं-- नहराणायं उक्कस्सयं च । उक्कस्सए पगदं । दुवि०--श्रोघे० श्रादे० । श्रोघे० सन्वत्थावा तिरिक्य- मणुसायूणं उक्कस्सश्रो हिदिबंधो । यहिदिबंधो विसेसाधियो । णिरय-देवायूणं उक्कस्सिहि० संखेळा० । यहि० विसे० । श्राहार० उक्क०हि० संखेळा० । यहि० विसे० । पुरिस०-हस्स-रिद-देवगिद०- नस०--उच्चा० उक्क०हिदि० संखेळा० । यहि० विसे० । सादा०--इत्थि०--मणुसग० उ०िह० विसे० । यहि० विसे० । णवुंस० श्ररदि०--सोग--भय--दुगुं०--णिरयगिद्-- तिरिक्खगिद--चदुसरीर--श्रजस०---णोचा० उक्क०हि० विसे० । यहि० विसे० । पंचणा०-णवदंसणा०-श्रसादा०-पंचंत० उ०िह० विसे० । यहि० विसे० । सोलमक० उ०िह० विसे० । यहि० विसे० । मिच्छ० उ०िह० विसे० । यहि० विसे० ।

६३६. ऐरइएस सन्वत्थावा दोत्रायु० उ०िह० । यहि० विसे० । पुरिस०-हस्स--रिद--जस०--उच्चा० उ०िह० त्रसंखेज्ज० । यहि० विसे० । सादावे०--इत्थि०-मणुसगिद० उ०िह० विसे० । यहि० विसे० । एवुंस०--त्रप्रदि--सोग--भय--दुगुं०--तिरिक्खगिद-तिरिणसरीर-अजस०-णीचा० उ०िह० विसे० । यहि० विसे० । उविर स्रोघं । एवं याव इिह ति ।

दश्ट. परस्थान स्थिति ऋल्पबहुत्व दो प्रकार का है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेज्ञा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ ओर आदेश । ओघसे तिर्यश्चायु और मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है । इससे यिन्ध्यितिवन्ध विशेष अधिक है । इससे यिन्ध्यितवन्ध विशेष अधिक है । इससे आहारकद्विक्ता उत्कृष्ट स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है । इससे यिन्ध्यितवन्ध विशेष अधिक है । इससे आहारकद्विक्ता उत्कृष्ट स्थितवन्ध संख्यातगुणा है । इससे यिन्ध्यितवन्ध विशेष अधिक है । इससे पुरुपवेद, हास्य, रित, देवगित, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितवन्ध संख्यातगुणा है । इससे यिन्ध्यितवन्ध विशेष अधिक है । इससे नपुंसकवेद, अरित, शोक, भय, जुगुण्सा, नरकगित, तिर्यञ्चगित, चार शरीर, अयशःकीर्ति और नोचगात्रका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, असातावेदनीय और पाँच अन्तरायका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है । इससे यिन्ध्यितवन्ध विशेष अधिक है । इससे सोलह कपायका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है । इससे यिन्ध्यितवन्ध विशेष अधिक है । इससे सोलह कपायका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है । इससे सोलह कपायका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है । इससे यिन्ध्यितवन्ध विशेष अधिक है । इससे मोलह कपायका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है । इससे यिन्ध्यितवन्ध विशेष अधिक है । इससे मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है । इससे यिन्ध्यितवन्ध विशेष अधिक है । इससे मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष

६३६. नारिकयोंमें दो श्रायुश्रोंका उत्ह्रिष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्धितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पुरुषवेद, हास्य, रित, यशकीति श्रोर उच्चगोत्रका उत्ह्रिष्ट स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यित्धितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे साता वेदनीय, स्त्रोवेद श्रोर मनुष्यगितका उत्ह्रिष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्धितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्धितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे नपुंसकवेद, श्ररित, श्रोक, भय, जुगुण्सा, तिर्यवचगित, तीन श्ररीर, श्रयशःकीर्ति श्रोर नीचगोत्रका उत्ह्रिष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्धितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रागेका श्रव्यबहुत्व श्रोधक समान है। इसी प्रकार इर्घा प्रथिवी तक जानना चाहिए।

६४०. सत्तमीए सन्वत्योवा निरिक्ष्वायु० उ०हि०। यहि० विसे०। मगुमग०-उच्चा० उक्क०हि० असंखेळा०। यहि० विसे०। पुरिस०--हस्स--रिद्--जस०--उच्चा० उ०हि० संखेळा०। यहि० विसे०। सादा०-इत्थि० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। एवुंसगदिपंच-निरिक्ष्वगदि-निरिएसगीर-अजस०-ए।चा० उक्क०हि० विसे०। यहि० विसे०। उवरि श्रोघं।

६४१. तिरिक्षेमु सन्वत्थोवा तिरिक्य-मणुसायु० उ०हि० । यष्टि० विसे० । देवायु० उक्क०हि० संखेजा० । यहि० विसे० । शिर्यायु० उ०हि० विसे० । यष्टि० विसे० । शिर्यायु० उ०हि० विसे० । यष्टि० विसे० । पुरिस०-हम्म-रिद-देवगिद-जम०-उच्चा० उ०हि० संखेजा० । यिह० विसे० । साद्।०-इत्थि०-प्रणुमग० उ०हि० विसे० । यहि० विसे० । तिरिक्ष्यग०-द्यारालि० उ०हि० विसे० । यहि० विसे० । एवं सगादिपंच-शिर्यगिद-वेउन्वि०-तेजा०-क०-द्यजम०-शीचा० उ०हि० विसे० । यहि० विसे० । उविर स्रोघं । एवं पंचिदिय-तिरिक्ष्य०३ ।

६४२. पंचिदियतिरिक्खश्रपज्जत्तगेसु सव्वत्थोवा तिरिक्ख-सणुसायु० उ०िछ । यिह० विसे० । पुरिस०--उचा० उ०िह० श्रमंखेज्ञ० । यिह० विसे० । इत्थि०

६४०. सातर्या पृथिवीमें तिर्यञ्चायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्धितिबन्ध विशेष ग्रिधिक हैं। इससे मनुष्यगित ग्रीर उद्यगोत्रका उत्कृष्ट न्धितिबन्ध ग्रसंख्यातगुणा है। इससे यित्धितबन्ध विशेष ग्रिधिक है। इससे पुरुषवेद, हास्य, रित, यशःकीर्ति ग्रीर उद्यगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यानगुणा है। इससे यित्धितबन्ध विशेष ग्रिधिक है। इससे ग्रिस्थितबन्ध विशेष ग्रिधिक है। इससे यित्धितबन्ध विशेष ग्रिधिक है। इससे ग्रिस्थितबन्ध विशेष ग्रिधिक है।

६४१. तिर्यञ्चांमं तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्नोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पुरुषवंद, हास्य, रित, देवगित, यशः कीर्ति श्रीर उद्यगोत्रका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवंद, हास्य, रित, देवगित, यशः कीर्ति श्रीर उद्यगोत्रका उत्कृष्ट स्थितवन्ध सख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे सातावेदनीय, स्त्रीवेद श्रीर मनुष्यगितका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे विर्यञ्चगित श्रोर श्रीदारिक शरीरका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे विर्यञ्चगित श्रोर श्रीदारिक शरीरका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिक है। इससे विशेष श्रीक है। इससे व्याववन्ध विशेष श्रीक है। इससे व्याववन्ध विशेष श्रीक है। इससे श्रीका श्रीक श्रीक श्रीक है। इससे श्रीका श्रीक श्रीक श्रीक श्रीक श्रीक है। इससे श्रीका श्रीक श्रीक श्रीक स्त्रीव श्रीक है। इससे श्रीका श्रीका श्रीक श्रीक स्त्रीन है। इसी प्रकार पञ्चित्रिय तिर्यञ्चित्रकमं जानना चाहिए।

६४२. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें तिर्यञ्चायु श्रौर मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थिति बन्ध सवसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेद और उच- उ०िह० विसे० । यहि० विसे० । जसिग० उ०िह० विसे० । यहि० विसे० । मणुः सग० उ०िह० विसे० । यहि० विसे० । सादा०--हस्स--रिद० उक्क०िह० विसे० । यहि० विसे० । पंचणाक०--तिरिक्खगिद--तिण्णिमरीर--त्रजस०--णीचा० उक्क०िह० विसे० । यहि० विसे० । पंचणा०-णवदंसणा०--त्रसादा०-पंचंत० उ०िह० विसे० । यहि० विसे० । सोलसक० उ०िह० विसे० । यहि० विसे० । एवं सन्वत्रपत्तत्तनाणं सन्वएइंदिय--सन्वविगलिदिय--पंचकायाणं च । एविर सन्वण्इंदिय--विगलिदिय० एविचागोदादो सादावे० उ०िह० विसे० । यहि० विसे० । पच्छा णाणावरणीयं भाणिद्व्वं ।

६४३. मणुसंसु०३ श्रोघं । एवरि तिरिक्खगिद्--श्रोरालि० तिरिक्खभंगो । देवेसु याव सहस्सार त्ति एरइगभंगो । श्राएद याव एवगेवज्ञा ति सञ्बत्योवा मणुसायु० उ०द्वि० । यद्वि० विसे० । पुरिस०--हस्स--एद्--जमगि०--उच्चा० उ०द्वि० श्रसंखेज्ञ० । यद्वि० विसे० । सादावे०--इत्थि० उ०द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० । पंचणोक० मणुसग०-तिरिएसरीर-श्रजस०-णीचा० उ०द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० । उवरि एरइगभंगो ।

गोत्रका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकपाय, तिर्यञ्चाति, तीन शरीर, अयशक्तीर्ति और नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच आनावरण, नो दर्शनावरण, असातावेदनीय और पाँच अन्तरायका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यितस्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यितस्थितवन्ध विशेष अधिक है। तथा इसके वाद आनावग्णिदक कहने चाहिए।

६४३. मनुष्यित्रकमं श्रोधकं समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि तिर्यं ज्याति श्रोर श्रोद।रिक शरीरका भङ्ग तिर्यं ज्योंके समान है। देवोंमें महस्यार करणतक नारिक्योंके समान भङ्ग है। श्रानत करणसे लेकर नौ श्रेवेयक तकके देवोंमे मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थिति-बन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेद, हास्य, रित, यशःकीर्ति श्रोर उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध श्रमंख्यातगुणा है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रीवेदका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रीवेदका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रीवेक है। इससे सातावेदनीय श्रीर स्थीवेदका उत्कृष्ट स्थितबन्ध विशेष श्रीवेक है। इससे यित्थितबन्ध विशेष श्रीवेक है। इससे श्रीवेक है। इससे श्रीवेक है। इससे यित्थितबन्ध विशेष श्रीवेक है। इससे श्रीवेका अक्ष नारिक्थींके समान है।

६४४. ऋणुदिस याव सन्बद्ध ति सन्बत्थोवा मणुसायु० उ०६०। यहि० विसे०। इस्स--रिद्--जसिंग० उ०ि [য়-] संखेज्ज०। यहि० विसे०। सादा० उ०ि६० विसे०। पंचणोक०-मणुसग०-तिणिणसरीर--अजस०-उचा० उ०ि६० विसे०। यहि० विसे०। पंचणा०--छदंसणा०--असादा०--पंचंत० उ०ि६० विसे०। यहि० विसे०। वारसक० उ०िह० विसे०। यहि विसे०।

६४५. पंचिदिय-तसपज्जत्त ०-पंचमण०-पंचविच०-कायजोगि०-इत्थिवे०-पुरिस०-णवुंस०-कोधादि०४-चक्खुदं०--अचक्खुदं०-भवसि०--सिण्ण--आहारण् ति मूलोघं । ब्रोरालियकायजोगि० मणुसिणिभंगो ।

६४६. त्रोरात्तियमि० सन्वत्थोवा दोत्रायु० उ०६०। यदि० विसे०। देवगदि-वेउन्विय ॰ उ०६० त्रसंखेजा॰। यदि० विसे०। पुरिस०-उचा॰ उ॰६० संखेजा०। यद्वि० विसे०। इत्थि॰ उद्वि० विसे०। यद्वि० विसे०। [संसा०] त्रपज्यत्तभंगो। वेउन्वियका०-वेउन्वियमि० देवोघं।

६४७. त्राहार०--त्राहारमि० सन्वत्थोवा देवायु॰ उ०िह॰ । यद्दि० विसे० । हस्स--रदि--जसगि० उ०िह॰ संखेजा॰ । यद्दि० विसे० । सादा० उ०िह॰ विसे० ।

६४४. श्रमुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवांमें ममुख्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे थित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे हास्य, रित श्रीर यशः-कीर्तिका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकपाय, ममुख्यगित, तीन शरीर, श्रशयःकीर्ति श्रोर उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच कानवरण, छह दर्शनावरण, श्रसातावेदनीय श्रीर पाँच श्रन्तरायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है।

६४४. पञ्चेन्द्रिय, पञ्चेन्द्रियपर्याप्त, त्रस, त्रसपर्याप्त, पाँचों, मनोयोगी पाँचों वचनयोगी, काययोगी, स्त्रीवेदी, पुरुपवेदी, नपुसकवेदी, कोधादि चार कपायवाले, चचु-दर्शनी, श्रवचुदर्शनी, भव्य, संबी श्रीर श्राहारक जीवोंमें मृलोधके समान भङ्ग है। श्रीदारिक-काययोगी जीवोंमें मनुष्यिनियोंके समान भङ्ग है।

६४६. श्रौदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें दो श्रायुश्रोंका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे देवगित श्रौर वैकियिक शरीरका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पुरुष-वेद श्रोर उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिक है। श्रेष प्रकृतियोंका भङ्ग श्रपर्याप्तकोंके समान है। वैकियिककाययोगी श्रौर वैकियिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य देवोंके समान भङ्ग है।

६४७. ग्राहारक काययोगी ग्रोर ग्राहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें देवायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्घ सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेप ग्रिधिक है। इससे हास्य, रित ग्रीर यशस्कीर्तिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष ग्रिधिक यिह विसे । पंचणोक ॰ - देवगिद-तििएणसरीर-श्रजस ० - उचा ॰ उ० हि ० विसे ॰ । यिह ॰ विसे ॰ । पंचणा ० - छदंसणा ० -- श्रसादा ० -- पंचंत ० उ० हि ॰ विसे ० । यिह ० विसे ० । चदुसंज ० उ० हि ॰ विसे ॰ । यिह ॰ विसे ॰ ।

६४८. कम्पइ० सव्वत्थोवा देवगदि-वेउव्वि० उ०िट०। यहि० विसे०। पुरिस०हस्स-रिद-जसिग०-उचा० उ०िट० संखेजा०। यहि० विसे०। सादा०-इत्थिवे०मणुसग० उ०िट० विसे०। यिट० विसे०। पंचणोक०-तिरिक्खग०-तिरिणासरीरअजस०-णीचा० उ०िट० विसे०। यिट० विसे०। पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०पंचंत० उ०िट० विसे०। यिट० विसे०। सोलसक० उ०िट० विसे०। यिट०
विसे०। मिच्छ० उ०िट० विसे०। यिट० विसे०।

६४६. श्रवगद्वेदे सञ्बत्थोवा चदुसंजि उ०िह । यहि० विसे । पंचणा०-चदुदंस०--पंचंत० उ०िह अस्वेज्ज । यहि० विसे । जसगि०--उचा उ०िह । 'संखेज्ज । यहि० विसे । सादा० उ०िह विसे । यहि० विसे ।

है। इससे सातावेदनीयका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच नोकाषाय, देवगति, तीन शरीर, श्रयशःकार्ति श्रौर उच्च-गोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच श्रानावरण, छह दर्शनावरण, श्रसातावेदनीय श्रीर पाँच श्रन्तरायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे चार संज्वलनका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे चार संज्वलनका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है।

६७८. कार्मणकाययोगी जीवोंमें देवगित और वैकियिकश्रीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रिक है। इससे पुरुषवेद, हास्य, रित, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रिक है। इससे सातावेदनीय, स्त्रीवेद और मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितबन्ध विशेष श्रिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिक है। इससे पाँच नोकषाय, तिर्यञ्चगित, तीन श्रीर, श्रियशःकीर्ति श्रोर नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितबन्ध विशेष श्रिक है। इससे पाँच बानावरण, नौ दर्शनावरण, श्रमाता वेदनीय श्रीर पाँच श्रन्तरायका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिक है।

६४९. श्रवगतयेदी जीवोंमें चार संज्वलनोंका उत्कृष्ट स्थितियन्ध सवसं स्तोक हैं। इससे यित्स्थितियन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण श्रीर पाँच श्रन्तरायका उत्कृष्ट स्थितियन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितियन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यशःकीर्ति श्रीर उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितियन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितियन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे सातायेदनीयका उत्कृष्ट स्थितियन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे सातायेदनीयका उत्कृष्ट स्थितियन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितियन्ध विशेष श्रिधक है।

१ मूलप्रती उ०द्वी० ऋसंखेज ० इति पाटः ।

६५०. मदि०-सुद्० सन्वत्थोत्रा तिरिक्ख-मणुसायु० उ०डि०। यहि० विसे०। देवायु० उ०डि० संखेळा०। यहि० विसे०। णिर्यायु० उ०डि० विसे०। यहि० विसे०। प्रिस्तायु० उ०डि० विसे०। यहि० विसे०। पुरिस०-हम्स-रिद्-देवगदि-जमिण्-उचा० उ०हि० संखेळा०। यहि० विसे०। सादा०-इत्थि०--मणुस० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। उवरि खोघं। एस भंगो विभंगे असंज०--किएणले०--अव्भवसि०--मिच्छा०। एवरि किएणे णिरयायु० संखेजजगु०।

६५१. आभि०--सुद०--ओधिणा० सन्वत्थोवा मणुसायु॰ उ०हि०। यहि० विसं०। देवायु॰ उ॰हि॰ [अ-] संखेडन०। यहि० विसे०। आहार० उ०हि॰ संखेडन०। यहि॰ विसे०। सादावे० उ॰हि० विसे०। हस्स-रदि-नसिग० उ०हि० संखेडन०। यहि॰ विसे०। सादावे० उ॰हि० विसे०। यहि॰ विसे०। पंचणोक॰-दोगदि--चदुमरीर--अनस०-उच्चा० उ०हि० संखेडनगु०। यहि॰ विसे०। पंचणा०--छदंमणा०-असादा०-पंचंत० उ०हि० विसे०। यहि॰ विसे०। वाग्सक॰ उ॰हि० विसे०। यहि० विसे०। एवं एस भंगो आधिदंस०-सम्मादि०-खइग०--वेदगस०--उवसम०-सम्मामिच्छादिहि ति।

६४०. मत्यज्ञानी और श्रृताज्ञानी जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका उत्हर स्थितिन्य सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिन्य विशेष अधिक है। इससे देवायुका उत्हर स्थितिन्य संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिन्य विशेष अधिक है। इससे नरकायुका उत्हर स्थितिन्य विशेष अधिक है। इससे पुरुष-वेद, हास्य, रित, देवगित, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्हर स्थितिन्य संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितन्य विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीय, खीवेद और मनुष्यगितका उत्हर स्थितिन्य विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिन्य विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितन्य विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितन्य विशेष अधिक है। इससे आगेका अल्पबहुत्व औष्यके समान है। यही अल्पवहुत्व विभक्षज्ञानी, असंयत, इष्णलेश्यावाले, अभव्य और मिथ्यादिए जीवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कृष्णलेश्यावाले जीवोंमें नरकायुका उत्हर स्थितिन्य संख्यातगुणा है।

६४१. श्राभिनिवोधिकश्वानी, श्रुतश्वानी श्रोग श्रविधश्वानी जीवोंमें मनुष्यायुका उत्हृष्ट स्थितिवन्ध सबसं स्तोक है। इससं यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससं देवायुका उत्हृष्ट स्थितिवन्ध श्रमंख्यातगुणा है। इससं यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससं श्राहारक श्ररीरका उत्हृष्ट स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससं यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच नाकष्य, दो गित, चार श्ररीर, श्रयशःकीर्ति श्रीर उच्चगोत्रका उत्हृष्ट स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, श्रमातावेदनीय श्रीर पाँच श्रन्तरायका उत्हृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यितस्थितवन्ध विशेष

णवरि खड्गे पंचणोक०--दोगदि--चदुमरीर--श्रजमिगित--उच्चा० उ०६० विसे०। यहि० विसे०।

६५२. मण्पज्जव० सन्वत्थोवा देवायु० उ०ड्डि० । यहि० विसे० । स्राहार० उ०डि० संखेजन० । यहि० विसे० । हस्स-रिद-जसिंग० उ०डि० संखेजन० । यहि० विसे० । सादा० उ०डि० विसे० । यहि० विसे० । पंचणोक०-देवगदि-तिण्णिसरीर-स्राम०-उच्चा० उक्क०डि० विसे० । यहि० विसे० । स्रथवा एदास्रो संखेजनगुणास्रो । उविर स्रोधिभंगो । एवं संजद-सामाइ०-स्रेदो० परिहार०-संजदासंजदा० ।

६५३. णील-काऊए सन्वन्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० उ०हि०।यहि० विसे०। देवायु० उ०हि० संखेज्ज०। यहि० विसे०। णिरयायु० उ०हि० संखेज्ज०। यहि० विसे०। एरयायु० उ०हि० संखेज्ज०। यहि० विसे०। णिरयग०-वेजन्वि० उ०हि० तिसे०। यहि० विसे०। पहि० विसे०। पुरिस०-हम्स-रादे-जिसगि०-जन्मा० उ०हि० संखेज्ज०। यहि० विसे०। सादावे०-इत्थि०-मणुसग० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। पंच-णांक०-तिरिक्खग०-तिणिणसरीर-अजस०-णीचा० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। उवरिं ओघं।

पता है कि चायिकसम्यग्दष्टि जीवोंमें पाँच नोकपाय, दो गति, चार शरीर, श्रयशःकीर्ति श्रौर उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितियन्ध विशेष- अधिक हैं । इससे यत्स्थितियन्ध विशेष श्रधिक है ।

६४२. मनःपर्ययज्ञानी जीवोंमं देव।युका उन्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे आहारक श्रीरका उन्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे हास्य, रित और यशःकीर्तिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकषाय, देवगित, तोन शर्भर, अयशःकीर्ति और उच्चेगंशका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकषाय, देवगित, तोन शर्भर, अयशःकीर्ति और उच्चेगंशका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। अथवा इनका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे आगंका अल्पबहुत्व अवधिक्षानी जोवोंके समान है। इसी प्रकार संयत, सामायिक संयत, छेदोषस्थापनासंयत, परिहारिवशिक्षसंयत और संयतासंयत जीवोंके जानना चाहिए।

६भ३. नीललेश्या और कापोतलेश्याचाले जीवोंमें तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुका उत्हृष्ट स्थितवन्ध सवसे स्तोक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे देवायुका उत्हृष्ट स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे नरकायुका उत्हृष्ट स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे देवगितका उत्हृष्ट स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे सातावेदनीय, स्रविद श्रीर मनुष्यगितका उत्हृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यात्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे याँच नोकषाय, तिर्यञ्जगित, तीन शरीर, श्रयशक्ति श्रीर नीचगोत्रका उत्हृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे याँच नोकषाय, विर्यञ्जगित, तीन शरीर, श्रयशक्ति श्रीर नीचगोत्रका उत्हृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यांच नोकषाय, विशेष श्रीर विशेष श्रिष श्रीर श्रीर सिमान है।

६५४. तेऊए सन्वत्थांवा तिरिक्ख-मणुसायु० उ०हि०। यहि० विसे०। देवायु० उ०हि० असंखेजन०। यहि० विसे०। आहार० उ०हि० संखेजन०। यहि० विसे०। देवगदि०-वेउव्वि० उ०हि० संखेजन०। यहि० विसे०। पुरिस०--हस्स-रदि-जस०-उच्चा० उ०हि० संखेजन०। यहि० विसे०। सादावे०--हत्थि०--मणुस० उ०हि० विसे०। पंचणोक०--तिरिक्खग०--तिरिण्णसरीर--अनस०--णीचा० उ०हि० विसे०। यहि० विसे०। उवरिं ओयं। एवं पम्माए ति।

६५५. सुकाए सन्वत्थावा मणुसायु० उ०डि॰। यहि॰ विसं॰। देवायु० उ०डि॰ श्रसंखेळा॰। यहि० विसं०। श्राहार॰ उ॰हि० संखेळा०। यहि॰ विसं०। देवगदि-वेउन्वि० उ॰हि० संखेळा०। यहि॰ विसं०। पुरिस॰-हस्स-रिद्-जस॰-उचा॰ उ०डि० विसं०। यहि० विसं०। सादावे॰-इत्थि उ॰हि० विसं०। यहि० विसं०। पंचणोक॰-मणुसगदि-तििएणसरीर-अजस०-णीचा० उ॰हि० विसं०। यहि० विसं०। उविरे णवगेवळभंगो।

६५६. सासणे सन्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु॰ उ०दि०। यद्वि० विसे०।

६४४. पीतलेश्यावाले जीवोंमें तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थितवन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्राहारकश्ररीरका उत्कृष्ट स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे देवगित श्रीर वैकियिक श्ररीरका उत्कृष्ट स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिक है। इससे पुरुपवेद, हास्य, रित, यशःकीर्ति श्रीर उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिक है। इससे यित्स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिक है। इससे सातावेदनीय, श्रीवेद श्रीर मनुष्यगितका उत्कृष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिक है। इससे प्रतस्थितवन्ध विशेष श्रीक है। इससे प्रतस्थितवन्ध विशेष श्रीक है। इससे यात्स्थितवन्ध विशेष श्रीक है। इससे यात्स्थितवन्ध विशेष श्रीक है। इससे श्रीगंका श्रवण्यात्रक विशेष श्रीक है। इससे यात्स्थितवन्ध विशेष श्रीक है। इससे श्रीगंका श्रवण्यात्रक विशेष श्रीक समान है। इससे प्रकार पद्मलेश्यावालं जीवोंमं जानना चाहिए।

६४४. शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे आहारक शरीरका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे देवगित और वैकियिक-शरीरका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे पृक्ष्यवेद, हास्य, रित, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीय और स्त्रीवेदका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है।

६४६. सासादनसम्यग्दिए जीवोंमें तिर्यञ्चायु श्रौर मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थिति देवायु॰ उ०िंट० संखेजज॰। यिंट० विसे०। पुरिस० [-हस्स-रिद-] देवगिंद०-वेउिंव०-जसिंग०-उच्चागो॰ उ॰िंट॰ संखेजज०। यिंटि॰ विसे॰। सादावे॰-मणुमग०-उ०िंट० विसे॰। यिंट० विसे०। पंचणोक॰-तिरिक्खग०--तिरिणसर्गर-ग्रजस०-णीचा० उिंट० विसे॰। यिंट० विसे०। पंचणा०--णवदंसणा०--ग्रमादा०--पंचंत० उ०िंट० विसे॰। यिंट० विसे०। सोलसक० उ॰िंट० विसे॰। यिंटि॰ विसे॰।

६५७. यसएएरिस सन्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० उ०दि०। यदि० विसे०। देवायु॰ उ०द्दि० त्रसंखेज्ज० । यद्दि० विसे॰ । श्विरयायु० उ०द्दि० संखेज्ज० । यहि॰ विसे० । पुरिस०--देवगदि--उच्चागो० उ०हि० त्रसंखेजा० । यहि० विसे० । इत्थि॰ उ०हि० विसे० | यहि० विसे० | जसगि॰ उ०हि॰ विसे० | यदि० विसे० | मणुसग० उ०ड्रि० विसे० । यदि० विसे० । हस्स-रिंद उ०ड्रि० विसे० । यदि० विसे । तिरिक्खगदि-त्र्योरालि । उ०द्वि विसे । यदि विसे । पंचणोक -िणरय-गदि-तिष्णिसरीर-श्रजस-णीचा० उ०हि० विसे० | यहि० विसे० | मादा० उ०हि० विसे । यद्दि । विसे । पंचणा :-- एवदंस ए। :- असादा :- पंचंत : उ : दि । विसे :। वन्ध संख्यातगुर्णा है । इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ऋधिक है । इससे पुरुषवेद, हारू : रति, देवगति, वैक्रियिकशरीर, यशःकीर्ति श्रोर उच्चगात्रका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ऋधिक है । इससे सातावेदनीय श्रोर मनुष्यगतिका उत्ऋष्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यहिस्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच नोक पाय, तिर्यञ्चगति, तीन शरीर, ऋयशःकीर्ति ऋौर नीचगोत्रका उत्क्रष्ट्र स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, त्रसातावेदनीय श्रौर पाँच श्रन्तरायका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक हैं। इससे सोलह कपायका उत्क्रप्ट स्थितवन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है ।

६५७. श्रसंक्षी जीवोंमें तिर्यक्षायु श्रीर मनुष्यायुका उत्स्रष्ट स्थितिवन्ध सबसे म्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे द्वायुका उत्स्रष्ट स्थितिवन्ध श्रसंख्या तगुणा है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे निष्कायुका उत्स्रष्ट स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे प्रत्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे प्रत्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मनुष्यगितका उत्स्रष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे हिस्य श्रीर रितका उत्स्रष्ट स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे प्रत्यितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे प्रत्यिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे प्रत्यिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे प्रत्येतवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे प्रत्येतवन्ध विशेष श्रधिक है।

यहि॰ विसे०। सोलसक ७०६० विसे०। यहि॰ विसे०। मिच्छ० उ०हि० विसे०। यहि॰ विसे॰। ऋणाहार० कम्मइगभंगो।

एवं उक्कस्सपरत्थाणहिदिद्यप्पावद्गं समत्तं

६५८. जहराणाए पगदं । दुवि०--श्रांघे० श्रादे० । श्रांघे० सव्यत्थांवा तिरिक्ख-मणुमायूणं जहराणश्रो हिद्विंथो । यहि० विसे० । लोभसंज्ञ ज॰हि०वं० संखेज्जगु० । यहि० विसे० । पंचणा०--चदुदंसणा०--पंचंत० ज०हि० संखेज्ज० । यहि० विसे० । जस०-उच्चा० ज॰हि० संखेज्ज० । यहि० विसे० । सादा० ज॰हि० विसे० । यहि० विसे० । माणसंज्ञ० ज०हि० संखेज्ज० । यहि० विसे० । माणसंज्ञ० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । माणसंज्ञ० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । पुरिस० ज०हि० संखेज्ज० । यहि० विसे० । क्षिप्य-देवायु० ज०हि० संखेज्ज० । यहि० विसे० । हस्स-रहि-भय-दुगुं०--तिरिक्ख--मणुमगदि-श्रोरालि०-तेजा०-क०--णीचागो० ज०हि० श्रसंखेज्ज० । यहि० विसे० । श्रादे- सोग--श्रजग० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । इत्थि० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । पंचदंस०

इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे सोलह कपायका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। शनाहारक जीवोंमें कार्मणकाय-योगी जीवोंके समान भक्त है।

इस प्रकार उत्कृष्ट परस्थान स्थितिग्रव्यवद्दत्व समाप्त हुन्ना।

६४८. जघन्यका प्रकरण है। उसकी अपेका निर्देश दो प्रकारका है - ओघ और श्रादेश। श्रावसे निर्यञाय श्रीर मनुष्यायका जघन्य स्थितिवन्ध सवसे स्तोक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे लोभ संज्वलनका जधन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्म्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण श्रौर पाँच अन्तरायका जचन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है । इससे यन्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यहाःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितियन्ध संख्यातग्णा है। इससे यत्म्थितवन्ध विशेष अधिक है। इसमें सातावेडनीयका जधन्य स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे माया संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगणा है । इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक हैं । इससे मानसंख्वलनका जधन्य स्थितिवन्च विशेष ग्रधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे क्रोधसंज्व-लनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे पुरुषवेदका जबन्य स्थितियन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे नरकाय और देवायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यतिस्थिति-बन्ध विशेष अधिक है। इससे हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, औदा-रिक शरीर, तेज्ञात शरीर, कार्मण शरीर स्त्रीर नीचगात्रका जघन्य स्थितिबन्ध स्रामंख्यातगुणा हैं। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष अधिक हैं। इससे अर्रात, शोक और अयशकीर्तिका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे स्रीवेदका जयन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यस्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितियन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितियन्ध विशेष अधिक

ज॰हि॰ विसे॰। यद्वि० विसे०। श्रमादा० ज०हि० विसे०। यद्वि० विसे०। वारसक० ज०हि० विसे०। यद्वि० विसे०। पेच्छ० ज०हि० विसे०। यद्वि० विसे०। देवगदि-वेउन्वि० ज०हि० संखेज्ज०। यद्वि० विसे०। शिरयग० ज०हि० विसे०। यद्वि० विसे०। श्राहार० ज०हि० संखेज्ज०। यद्वि० विसे०।

६५६. णिरएसु सन्वत्थोवा दोएणं आयु॰ ज॰हि॰। यहि० विसे०। पंचणोक०मणुसग॰--तििएसरीर--जसि०--उच्चा॰ ज०हि॰ असंखेज्ज०। यहि॰ विसे०।
आरिद-सोग--अजस० ज॰हि॰ विसे०। यहि॰ विसे०। इत्थि॰ ज॰हि० विसे०।
यहि० विसे०। एवं स॰ ज॰हि॰ विसे०। यहि० विसे०। एचि॥० ज॰हि० विसे०।
यहि० विसे०। तिरिक्खग॰ ज०हि० विसे०। यहि॰ विसे०। पंचणा०-एवदंसणा॰सादावे०-पंचंत० ज॰हि० विसे॰। यहि॰ विसे०। असादा॰ ज०हि० विसे०। यहि॰
विसे०। सोलसक॰ ज०हि० विसे॰। यहि० विसे॰। मिच्छ० ज॰हि॰ विसे०।
यहि० विसे॰। एवं पढमाए।

है। इससे पाँच दर्शनावरणका जघन्य स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यारह कपायका जघन्य स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यारह कपायका जघन्य स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे देवगित और वैकियिक शरीरका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे अहारक शरीरका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है।

६४९. नारिकयों में दो श्रायुश्रोंका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इतसे यित्थितिवन्ध विशेष श्रिष्ठिक है। इससे पाँच नोकषाय, मनुष्याति, तीन शरीर, यशकीर्ति श्रीर उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिवन्ध श्रमंख्यातगुणा है। इससे यित्थितिवन्ध विशेष श्रिष्ठिक है। इससे श्रित्वन्ध विशेष श्रीय श्रीयक है। इससे यित्थितिवन्ध विशेष श्रीयक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रीयक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रीयक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रीयक है। इससे विशेष श्रीयक है। इससे विशेष श्रीयक है। इससे विशेष श्रीयक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रीयक है। इससे व्रात्थितवन्ध विशेष श्रीयक है। इससे व्रात्थितवन्ध विशेष श्रीयक है। इससे विशेष श्रीयक है। इससे व्रात्थितवन्ध विशेष श्रीयक है। इससे विशेष श्रीयक है। इससे व्रात्थितवन्ध विशेष श्रीयक है। इससे व्रात्थितवन्य व्रायक व्रायक्य व्रायक व्यावक्य है। इससे व्रायक्य व्यावक्य व्

६६०. विदियादि याव छि ति सन्त्रत्थोवा दोश्रायु० ज०हि०। यिह० विसे०। पंचणोक०-मणुसग०--तिणिणसरीर--जसगि०--उच्चा० ज०हि० श्रसंग्वेडज०। यहि० विसे०। श्रदि-सोग-श्रजम० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। पंचणा०-छदंसणा०-सादा० -पंचंत० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। श्रसादा० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। वारगक० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। प्रतिक्षाण ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। एवं पाव वारमकमा० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। सत्त्रमाण पुढवीए एसेव भंगो। एविर सन्वत्थोवा निरिक्षायु० ज०हि०। यहि० विसे०। एवं याव वारसकसा० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। एवं याव वारसकसा० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। एवं याव वारसकसा० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। एवं याव वारसकसा० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। श्रणंताणुवंवि०४ ज०हि० विसे०। थिणाणिदि०३ ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। श्रणंताणुवंवि०४ ज०हि० विसे०।

६६०. इसरीसे लेकर छटवीं तक दो ग्रायुत्रोंका जघन्य स्थितवन्ध सवसे स्तोक है। इससे यत्स्थितवन्य विशेष श्रधिक है। इससे पाँच नोकपाय, मनुष्यगति, तीन शरीर, यशःकार्ति ग्रोर उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिवन्ध ग्रसंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे ऋरति, शोक और ऋयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष अधिक हैं। इससे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शना-वरण, सातावेदनीय श्रोर पाँच श्रन्तरायका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यिन्ध्यतिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रसातावदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्म्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे बारह कपायका जघन्य स्थिति-वन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे स्त्यानगृद्धि तीनका जघन्य स्थितिवन्य संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्य विशेष त्रधिक है। इससे त्रन न्तानवन्धो चारका जवन्य स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे खोवेदका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थित-वन्ध विशेष अधिक हैं। इससे नपुंसकवदका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्म्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितवन्य विशेष अधिक है। इससे तिर्वञ्चगतिका जघन्य स्थितबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। सातवीं प्रथिवीमें यही भड़ है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्जायका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यितस्थितवन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार बारह कपाय तक जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यक्षगति श्रीर नीच-गोत्रका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष त्रधिक है। इससे स्त्यानगृद्धि तीनका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रनन्तानुबन्धी चारका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे मिध्यात्वका जघन्य स्थितवन्ध विशेष अधिक है। यिंड विसे । भिच्छ । ज विं विसे । यिंड विसे । इत्थि । ज विंड संखेजि । यिंड विसे । एवुं स० ज विंड विसे । यिंड विसे ।

६६१. तिरिक्षेसु सवत्थोवा दोश्रायु० ज॰हि॰ । यहि॰ विसे० । णिरय-देवायु० ज०हि॰ संखेज्ज० । यहि० विसे० । पंचणोक०--दोगदि--तिण्णिसरीर-जसिग०-णीचागो०-उच्चा० ज०हि० श्रसंखेज्ज० । यहि० विसे० । श्रादि--सोग-श्राम अजस॰ ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । इत्थि० ज०हि० विसे० । यहि॰ विसे० । पंचणा०-णवदंसणा०-सादा०-पंचंत० ज०हि॰ विसे० । यहि० विसे० । श्रामादा० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । सोलसक० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । मिच्छ० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । पहि० विसे० । पहि० विसे० । पहि० विसे० । यहि० विस

६६२. पंचिंदिय--तिरिक्ख०३ सन्वत्थोवा तिरिक्ख--मणुसायु॰ ज०ड्ठि॰। यिहि॰ विसे॰। दोत्रायु॰ ज०हि॰ संखेज्ज०। यिहि॰ विसे॰। पंचणोक॰-देवगिद-तिरिणसरीर--जस०--उच्चा॰ ज०हि॰ ग्रसंखेज्ज०। यहि० विसे०। त्रारिद-सोग-

इससे यित्स्थितवन्ध विशोप श्रिधिक है। इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशोप श्रिधिक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशोप श्रिधिक है।

६६१. तिर्यञ्चोंमें दो आयुत्रोंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यहिस्थ-तिवन्ध विशेष त्रिधिक है। इससे नरकायु त्रीर देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिषन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकपाय, दो गति, तोन शरीर, यशःकीर्ति, नोचगोत्र श्रीर उचगात्रका जघन्य स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थ-तिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरित, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थिति-बन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे पाँच क्षानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय श्रौर पाँच श्रन्तरायका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे असाता वेदनीयका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यहिस्थतिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे सोलह कपायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे देवगति और वैकियिक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थ-तिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकगतिका जग्नन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है।

६६२. पञ्चे न्द्रिय तिर्यञ्च तीनमं तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुका जधन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रीधक है। इससे दो श्रायुश्रांका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रीधक है। इससे पाँच नोकषाय, देवगित, तीन शरीर, यशःकीर्ति श्रीर उच्चगोत्रका जधन्य स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है।

अजस० ज०डि० विसे० । यद्दि० विसे० । मणुसग०-ओरालिय० ज०दि० विसे० । यद्दि० विसे० । एविं स० ज०दि० विसे० । यद्दि० विसे० । एविं स० ज०दि० विसे० । यद्दि० विसे० । एविं स० ज०दि० विसे० । यद्दि० विसे० । तिर्व्विग० ज०दि० विसे० । यद्दि० विसे० । तिर्विवा० ज०दि० विसे० । यद्दि० विसे० । पंचणा०- एवदंसणा०-सादा०-पंचंत० ज०दि० विसे० । यद्दि० विसे० । असादा० ज०दि० विसे० । यद्दि० विसे० । सोलसक० ज०दि० विसे० । यद्दि० विसे० । मिच्छ० ज०दि० विसे० । यद्दि० विसे० । यद्दि० विसे० । मिच्छ० ज०दि० विसे० । यद्दि० विसे० । यद्दि० विसे० ।

६६३. पंचिदियतिरिक्खञ्चपज्जत्तगेसु पढमपुढिविभंगो । एवं सव्वत्रप्यज्जत्तगाएां सव्वविगलिदिय--पुढवि०--त्राड०--वर्णप्पदि०--वाद्रवर्णप्पदिपत्तेय०-सव्विणियोदाएां पंचिदिय-तसत्रपञ्जत्ताएां च । एइंदिएसु तिरिक्खोघं ।

६६४. तेउ॰--वाउ० सन्वत्थोवा तिरिक्खायुः ज॰हि०। यहि० विसे०। पंचणोक०--तिरिक्खग॰--तिरिणसरीर--जस०-णीचा॰ ज०हि॰ असंखेज्ज॰। यहि॰ विसे॰। अरदि-सोग-अजस० ज॰हि॰ विसे०। यहि॰ विसे०। उवरि अपज्जनभंगो।

इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे अरित, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे मनुष्याति और औदारिक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक हैं। इससे तिर्यञ्चातिका जघन्य स्थितवन्ध विशेष अधिक हैं। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक हैं। इससे विशेष अधिक हैं। इससे विशेष अधिक हैं। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक हैं। इससे विशेष अधिक हैं। इससे विशेष अधिक हैं। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक हैं। इससे विशेष अधिक हैं। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक हैं। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक हैं। इससे विशेष अधिक हैं। इससे प्रतिवन्ध विशेष अधिक हैं। इससे विशेष अधिक हैं।

६६३. पचेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्याप्तकोंमें पहली पृथ्वीके समान भक्न है। इसी प्रकार सब श्रपर्याप्तक, सब विकलेन्द्रिय, पृथ्वीकायिक, जलकायिक, चनस्पतिकायिक, वादरवन-स्पतिकायिक, सब निगोद, पञ्चेन्द्रिय श्रपर्याप्त श्रीर त्रस श्रपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए। एकेन्द्रियोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भक्न है।

६६४. श्रश्निकायिक श्रौर वायुकायिक जीवों में तिर्यञ्चायुका जघन्य स्थितियन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकषाय, तिर्यञ्चगित, तीन शरीर, यशःकीर्ति श्रौर नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे श्ररित, शोक श्रौर श्रयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रिधक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष श्रिधक है। इससे उपर श्रपर्यानकोंके समान भक्क है।

६६४. मनुष्यत्रिकमें तिर्यञ्चायु श्रौर मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे लोभ संज्वलनका जधन्य स्थितिबन्ध मंख्यातगुण है। इससे यन्स्थितियन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण श्रोर पाँच श्रन्तरायका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थित-वन्ध विशेष अधिक है। इससे यशःकीर्ति श्रीर उद्यगोत्रका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे माया संज्वलनका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यतिस्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे मान संज्वलन-का जघन्य स्थितिवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे कोध संज्वलनका जधन्य स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे पुरुपवेदका जघन्य स्थितिबन्घ संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्घ विशेष श्रधिक है। इससे दो श्रायश्रोंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगित श्रौर तीन शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध ग्रसंख्यातगुणा है। इससे यतिस्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे अरित, शोक और अयशःकोर्तिका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेदका जधन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नीच गोत्रका जधन्य स्थितिवन्ध विशेष ग्रधिक हैं। इससं यतिस्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे तिर्यञ्चगतिका जधन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच-दर्शनावरणका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इसमे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे ग्रसातावेदनीयका जघन्य स्थितिवन्घ विशेष ग्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे बारह कपायका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष अधिक है।

५ मृलप्रतौ तिरिक्खेसु मणुमायु० इति पाटः ।

विसे० | यद्वि० विसे० | देवगदि-वेउव्वि०--त्राहार० ज०द्वि० संखेजा० | यद्वि० विसे० | णिरयग० ज०द्वि० संखेजा० | यद्वि० विसे० |

६६६. देवा भवण १ -- वाण्वेंत० ि एरयोघं । जोदिसिय यात्र सहस्सार ति विदियपुढिविभंगो । त्राणद यात्र एवगेवज्ञा ति सो चेव भंगो । एएवरि तिरिक्खायु०- तिरिक्खगदी एि । त्राण्डिस यात्र सन्वद्दा ति सन्वत्थोवा मणुसायु० ज० द्वि० । यि विसे० । पंचणोक १ - मणुसग० - तिरिएएसरीर - जस० - उच्चा० ज० द्वि० त्र संखेज्ञ० । यि विसे० । त्रार्थि -- सोग -- त्राप्य जस० ज० द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० । पंचणा० - त्रार्थ -- पंचंत० ज० द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० । त्रार्थ ज० द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० ।

६६७. पंचिदिय-पंचिदियपज्जत्ता० सन्वत्थोवा तिरिक्ख०-मणुसायुग० ज॰ द्वि० । यद्वि० विसे० । लोभसंज० ज० द्वि० संखेज्ज० । यद्वि० विसे० । पंचणा०-चदुदंसणा०-पंचत० ज० द्वि० संखेज्ज० । यद्वि० विसे० । जस०-उच्चा० ज० द्वि० संखेज्ज० । यद्वि० विसे० । सादा० ज० दि० विसे० । यद्वि० विसे० । मायासंज० ज० दि०

इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे देवगति, वैक्रियिक शरीर श्रीर श्राहारक शरीर-का जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यस्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे नरकगतिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है।

६६६. सामान्य देव, भवनवासी श्रोर व्यन्तर देवों में सामान्य नारिकयों के समान भङ्ग है। ज्योतिषियों से लेकर सहस्रार कल्प तकके देवों में दूसरी पृथिवी के समान भङ्ग है। श्रानतसे लेकर नो श्रेवेयक तक वही भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि यहां तिर्यञ्चायु श्रोर तिर्यञ्चाति नहीं है। श्रानुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवों में मनुष्यायुका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पांच नोकषाय, मनुष्यगति, तीन शरीर, यशःकीर्ति श्रोर उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पांच श्रानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनोय श्रीर पांच श्रन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे वारह कपायका जघन्य स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे वारह कपायका जघन्य स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे वारह कपायका जघन्य स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है।

६६७. पञ्चेन्द्रिय श्रीर पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवाँमें तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधक है। इससे लोभ संज्व लनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधक है। इससे पाँच श्वानावारण, चार दर्शनावरण श्रीर पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रिधक है। इससे यशःकीर्ति श्रीर उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रिधक है। इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितबन्ध विशेष श्रिधक है। इससे माया

संखेजा । यहि० विसे० । माणसंज ० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । कोधसं-ज ० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । पुरिस० ज०हि० संखेजा । यहि० विसे० । दो आयु० ज०हि० संखेजा । यहि० विसे० । चदुणोक ०-देवगदि-तिण्णिमरीर० ज०हि० संखेजा । यहि० विसे० । उवरि पंचिदियतिरिक्खभंगो ।

६६ = . तस-तसपज्जत्तगेसु सन्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० ज॰हि॰ । यहि०विसे० | उविद्यां याव यहि०विसे० | जोभसंज० ज॰हि॰ संखेज्ज० | यहि०विसे० | उविद्यां याव णिरय-देवायु० ज०हि० संखेज्ज० | यहि० विसे० | चढुणोक०-मणुसग०-तिण्णि-सरीर० ज॰हि॰ असंखेज्ज० | यहि० विसे० | अरिद-सोग-अजस० ज॰हि० विसे० | यहि० विसे० | गिवुंस० ज०हि० विसे० | यहि० विसे० | एणिचा० ज०हि० विसे० | यहि० विस

संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे दो श्रायुश्रोंका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रिधक है। इससे चार नोकपाय, देवगित श्रीर त्रीन शरीर का जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रिधक है। इससे श्रीर यत्स्थितवन्ध विशेष श्रीर त्री है। इससे श्रीर यत्स्थितवन्ध विशेष श्रीर है। इससे श्रीर यत्स्थितवन्ध विशेष श्रीर श्रीर है। इससे श्रीर यत्स्थितवन्ध विशेष श्रीर श्रीर श्रीर है। इससे श्रीर यत्स्थितवन्ध विशेष श्रीर श्रीर है। इससे श्रीर याद्य विशेष विशेष विशेष श्रीर श्रीर है। इससे श्रीर याद्य विशेष व

६६८. त्रस और त्रस पर्याप्त जीवों में तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक हैं। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे लोभ संज्ञ्ञलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा हैं। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे आग नरकायु और देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है इसके प्राप्त होने तक श्रोधक समान भक्त है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक हैं। इससे चार नोकपाय, मनुष्यगित और तीन शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे नियंस्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे नियंस्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे नियंश्व अधिक है। इससे पत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष

<sup>&</sup>lt;sup>१</sup> मूलप्रतौ ज० द्वि० विसे० । यद्वि० इति पाठः ।

विसे०। यद्वि० विसे०। देवगदि-वेउव्वि०--त्राहार० ज०द्वि० संखेज्ज०। यद्वि० विसे०। णिरयग० ज०द्वि० संखेज्ज०। यद्वि० विसे०।

६६६. देवा भवण -- वाण्वेंत ० णिरयोघं । जोदिसिय याव सहस्सार ति विदियपुढिविभंगो । त्राणद याव णवगेवज्ञा त्ति सो चेव भंगो । णविर तिरिक्खायु०- तिरिक्खगदी णित्थ । त्रणुदिस याव सव्वद्दा त्ति सव्वत्थोवा मणुसायु० जि हि० । यि विसे० । पंचणोक ०- मणुसग० - तिणिणसरीर - जस० - उच्चा० जि हि० त्रसंखेज ० । यि विसे० । त्रार्दि -- सोग -- त्रजस० जि हि० विसे० । यि विसे० । पंचणा० - द्रदंसणा० -- सादा० -- पंचंत० जि हि० विसे० । यि विसे० । त्रार्दि विसे० । वारसक० जि हि० विसे० । यि विसे० ।

६६७. पंचिदिय-पंचिदियपज्जत्ता० सन्वत्थोवा तिरिक्ख०-मणुसायुग० ज॰ द्वि०। यद्वि० विसे०। लोभसंज॰ ज० द्वि०संखेज्ज०। यद्वि० विसे०। पंचणा०-चदुदंसणा०-पंचंत० ज० द्वि० संखेज्ज०। यद्वि० विसे०। जस०-उच्चा० ज० द्वि० संखेज्ज०। यद्वि० विसे०। सादा० ज० दि० विसे०। मायासंज० ज० दि०

इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे देवगति, वैक्रियिक शरीर श्रीर श्राहारक शरीर-का जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यस्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे नरकगतिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है।

६६६. सामान्य देव, भवनवासी श्रौर व्यन्तर देवों में सामान्य नारिकयों के समान भङ्ग है। ज्योतिषियों से लेकर सहस्रार कल्प तकके देवों में दूसरी पृथिवीं के समान भङ्ग है। श्रानतसे लेकर नौ श्रैवेयक तक वही भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि यहां तिर्यञ्चायु श्रौर तिर्यञ्चगति नहीं है। श्रानुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवों में मनुष्यायुका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पांच नोकषाय, मनुष्यगति, तीन शरीर, यशःकीर्ति श्रौर उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पांच श्रानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनोय श्रौर पांच श्रन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे वारह कपायका जघन्य स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है।

६६७. पञ्चेन्द्रिय श्रीर पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवॉमें तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रीधक है। इससे लोभ संज्व लनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रीधक है। इससे पाँच श्वानावारण, चार दर्शनावरण श्रीर पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रीधक है। इससे यशःकीर्ति श्रीर उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रीधक है। इससे माया स्थितिबन्ध विशेष श्रीधक है। इससे माया

संखेजा० । यहि० विसे० । माणसंज० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । कोथसं-ज० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । पुरिस० ज०हि० संखेजा० । यहि० विसे० । दो त्रायु० ज०हि० संखेजा० । यहि० विसे० । चदुणोक०-देवगदि-तिणिणसरीर० ज०हि० संखेजा० । यहि० विसे० । उवरिं पंचिदियतिरिक्खभंगो ।

६६ द्र. तस-तसपज्जत्तगेसु सन्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० ज॰हि॰। यहि०विसे०। उवरिं श्रोघं याव यहि०विसे०। लोभसंज० ज॰हि॰ संखेज्ज०। यहि०विसे०। उवरिं श्रोघं याव णिरय-देवायु० ज०हि० संखेज्ज०। यहि० विसे०। चदुणोक०-मणुसग०-तिणिण-सरीर० ज०हि० असंखेज्ज०। यहि० विसे०। अरिद-सोग-अजस० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। णावुंस० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। एतिचा० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। तिरिक्खग० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। वारसक० ज०हि० विसे०।

संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यत्स्थितिन्ध श्रिधिक है। इससे यत्स्थितिन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यत्स्थितिन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे प्रत्यवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे दो श्रायुश्रोंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे चार नोकपाय, देवगित श्रीर तीन श्रीर का जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रिधक है। इससे श्रीर यत्स्थितबन्ध विशेष श्रिधक है। इससे श्रीर यत्स्थितबन्ध विशेष श्रिधक है। इससे श्रीर पञ्चेन्द्रिय तिर्यश्चोंके समान मङ्ग है।

६६८. त्रस और त्रस पर्याप्त जीवों में तिर्यञ्चायु श्रोर मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे लोभ संज्ञ्ञलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिक है। इससे श्राम त्रकायु श्रीर देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है इसके प्राप्त होने तक श्रोधके समान भक्त है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रीधक है। इससे चार नोकषाय, मनुष्यगित श्रीर तीन श्रीरका जघन्य स्थितिबन्ध श्रिसंख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रीधक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रीधक है। इससे निच्योत्रका जघन्य स्थितबन्ध विशेष श्रीधक है। इससे विशेष श्रीधक है। इससे विशेष श्रीधक है। इससे विशेष श्रीधक है। इससे विशेष श्रीक श्री इससे विशेष श्रीधक है। इससे विशेष श्रीधक है। इससे विशेष श्रीधक है। इससे विशेष श्रीधक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रीधक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष

<sup>&</sup>lt;sup>१</sup> मूलप्रतौ ज॰ द्वि॰ विसे॰ । यद्वि॰ इति पाठः ।

यिह० विसं०। मिच्छ० ज०िह० विसं०। यिह० विसं०। देवगिद्-वेउव्वि० ज०िह० संखेजज०। यिह० विसं०। शिरयग० ज०िह० विसं०। यिह० विसं०। आहार०-ज०िह० संखेजज०। यिह० विसं०।

६६६. पंचमणा॰-तिणिणविच् सञ्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० ज॰ हि० । यहि० विसे० । लोभसंज० ज॰ हि॰ संखेजा॰ । यहि० विसे० । पंचणा०-चदु-दंसणा॰-पंचंत० ज० हि० संखेजा॰ । यहि० विसे० । जस०-उच्चा॰ ज॰ हि० संखेजा० । यहि॰ विसे० । सादा॰ ज० हि॰ विसे० । यहि० विसे० । मायसंज० ज॰ हि० संखेजा० । यहि० विसे० । माणसंज० ज० हि० विसे० । यहि० विसे० । माणसंज० ज० हि० विसे० । यहि० विसे० । प्रिक्ति ज० हि॰ संखेजा० । यहि० विसे० । प्रिक्ति विसे० । हस्स-रिद-भय-दुगुं० ज० हि० असंखेजा० । यहि० विसे० । देवगदि-वेउ विव० - आहार० - तेजा०-क० ज० हि० संखेजा० । यहि० विसे० । देवगदि-वेउ विव० - आहार० - तेजा०-क० ज० हि० संखेजा० । यहि० विसे० । हस्स-रिद-भय-दुगुं० ज० हि० असंखेजा० । यहि० विसे० । हस्स-रिद-भय-दुगुं० ज० हि० असंखेजा० । यहि० विसे० । हस्स-रिद-भय-दुगुं० ज० हि० असंखेजा० । यहि० विसे० । हस्स-रिद-भय-दुगुं० विसे० । यहि० विसे० । हस्स-रिद-भय-दुगुं० विसे० । यहि० विसे० । हस्स-रिद-भय-दुगुं० विसे० । यहि० विसे० । हस्स-रिद-सोग-अजम० ज० हि० संखेजा० । यहि० विसे० । असिद-सोग-अजम० ज० हि० विसे० । विशेष विशेष अधिक है । इससे मिण्यात्वका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष अधिक है । इससे यिस्थितिवन्ध विशेष अधिक है । इससे आहारक शरीरका जघन्य स्थितवन्ध संख्यात्वन्ध संख्यात्वन्ध संख्यात्वन्ध विशेष अधिक है । इससे आहारक शरीरका जघन्य स्थितवन्ध संख्यात्वन्ध संख्यात्वन्ध संख्यात्वन्ध विशेष अधिक है । इससे आहारक शरीरका जघन्य स्थितवन्ध संख्यात्वन्ध संख्यात्वन्ध विशेष अधिक है ।

६६९. पाँच मनोयोगी श्रौर तीन वचनयोगी जीवोंमें तिर्यञ्जाय श्रौर मनुष्यायका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे लोभ संज्व लनका जघन्य स्थितियन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे **पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण श्रीर पाँच श्रन्तरायका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगरणा** है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यशःकीर्ति ग्रीर उच्चगोत्रका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे सातावेद-नीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे माया संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मानसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे युद्धियति-बन्ध विशोप ग्रधिक है। इससे कोधसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशोप अधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुपवेदका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है । इससे दो श्रायुश्रोंका जघन्य स्थितवन्ध संख्यात-गुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे हास्य, रति, भय श्रौर जुगुप्साका ज्ञवन्य स्थितिवन्ध ग्रसंख्यातगुणाः है । इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है । इससे देवगति, वैक्रियिक शरीर, श्राहारकशरीर,तेजसशरीर श्रोर कार्मणशरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यात-गणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे निद्रा और प्रचलाका जघन्य स्थितिबन्ध संख्तातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है । इससे श्ररति, शोक श्रीर श्रयशःकोर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रसानावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थिति- यहि० विसे० | पचन्रवाणा०४ ज०हि० संखेज्ज० | यहि० विसे० | अपचन्रवाणा०४ ज०हि० संखेज्ज० | यहि० विसे० | मणुसगिद-त्रोरालि० ज०हि०
संखेज्ज० ! यहि० विसे० | थीणगिद्धि०३ ज०हि० संखेज्ज० | यहि० विसे० |
अणंताणु०४ ज०हि० विसे० | यहि० विसे० | मिच्छ० ज०हि० विसे० | यहि०
विसे० | तिरिक्खगिद-णीचा० ज०हि० संखेज्ज० | यहि० विसे० | इत्थि०
ज०हि० संखेज्ज० | यहि० विसे० | एवंस० ज०हि० विसे० | यहि० विसे० |
णिर्यग० ज०हि० विसे० | यहि० विसे० |

६७०. विचनो०-असचमोस० तसपज्जत्तभंगो । कायजोगि०-ब्रोरालियका०-अचक्खुदं०-भवसि०-ब्राहारग त्ति त्रोघं । स्रोरालियभि० तिरिक्खोघं । देवगदि-वंउव्वि० ज०द्वि० संखेज्ज० । यद्वि० विसे० सव्वुवरिं । एवं कम्मइ०-ब्राणा हारग ति ।

६७१. वेउव्वियका० सन्वत्थोवा दो श्रायु॰ ज०िट०। यहि० विसे०। पंचणोक०-मणुसग०-तिरिणसरीर-जस॰-उच्चा॰ ज॰िट० श्रसंखेज्ज॰। यहि० विसे०। सेसं सत्तमाए पुढविभंगो। एवं वेउव्वियमि॰ श्रायु वज्ज०। एवर्रा तिरिन् .

बन्ध विशेष श्रधिक है। इससे प्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रप्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मनुष्यगित श्रीर श्रीदारिक शरीरका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे स्त्यानगृद्धि तीनका जघन्य स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रनन्तानुवन्धी चारका जघन्य स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पिथ्यातवका जघन्य स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पिथ्यातवका जघन्य स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे नपुं सक्वेदका जघन्य स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे विशेष श्रधिक है।

६७०. वचनयोगी और असत्यमृषावचनयोगी जीवोंमें त्रसपर्याप्तकींक समान मङ्ग है। काययोगी, श्रीदारिककाययोगी, श्रचनुदर्शनी, भव्य और श्राहारक जीवोंमें श्राप्तके समान भङ्ग है। श्रीदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्जीके समान भङ्ग है। देव गति श्रीर वैक्रियिकशरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। ऐसा सबके श्रन्तमें कहना चाहिए। इसी प्रकार कार्मण काययोगी श्रीर श्रनाहारक जीवोंके जानना चाहिए।

६७१. वैकियिक काययोगी जीवोंमें दो श्रायुश्रोंका जधन्य स्थितिवन्ध सबसं स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच नोकपाय, मनुष्यगित, तीन शरीर, यशःकीर्ति श्रीर उच्चगोत्रका जधन्य स्थितिवन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। शेष ऋषवद्वत्व सातवीं पृथिवीके समान है। इसी प्रकार श्रायुकर्मकी

वखग०-णीचा० ज०िंड संग्वेज्ज० । यिहेड विसे० । इत्थि० जडिंड विसे० । यिहेड विसे० । एवं स० जडिंड विसे० । यिहेड विसे० । थीएगिद्धि०३ जडिंड विसे० । यिहेड विसे० । अएंताणुवंधिड४ जडिंड विसे० । यहिड विसे० । मिच्छ० जडिंड विसे० । यिहेड विसे० ।

६७२. त्राहार०--त्राहारिमस्सका० सन्वत्थोवा देवायु० ज०हि०। यहि० विसे०। पंचणोक०-देवगदि-तिण्णिसरीर०--जस०--उच्चा० ज०हि संखेज्ञ०। यहि० विसे०। त्राहि० विसे०। त्राहि० विसे०। पंचणा०-ऋदंसणा०-सादा०-पंचंत० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। त्राहि० विसे०। यहि० विसे०। चदुसंज० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०।

६७३. इत्थिवे॰ सन्वत्थोवा तिरिक्ख--मणुसायु॰ ज०दि० । यदि॰ विसे० । दोत्रायु० ज०दि० संखेज्जगु॰ । यदि० विसे० । पुरिस॰ ज०दि० संखेज्ज० । यदि० विसे० । चदुसंज० ज०दि० विसे॰ । यदि॰ विसे० । पंचणा॰--चदुदंस॰--पंचंत०

छोड़ कर वैकियिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगित श्रीर नीचगोत्रका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है।

६७२. श्राहारक काययोगी श्रौर श्राहारक मिश्रकाययोगी जीवोंमं देवायुका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच नोकपाय देवगित, तीनशरीर, यशःकीर्ति श्रोर उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्ररित, शोक श्रौर श्रयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच क्षानावरण, श्रुह दर्शनावरण, सातावेदनीय श्रोर पाँच श्रन्तरायका जघन्य स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे चार संज्वलनका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है।

६७३. स्त्रीवेदी जीवोंमें तिर्यश्चायु श्रौर मनुष्यायुका जधन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे दो श्रायुश्रोंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पुरुपवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पांच श्रानावरण चार दर्शनावरण श्रौर पांच श्रन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यशकीर्त

ज०िंदि० संखेजज० । यष्टि० विसे० । जस०--उच्चा० ज्०िंदि० ऋसंखेजज० । यिंदि० विसे० । सादा० ज०िंदि० विसे० । यिंदि० विसे० । हस्स-रिद-भय-दुगुं० ज०िंद्ध० ऋसंखेजज० । यिंदि० विसे० । उविरं पंचिंदियभंगो ।

६७४. पुरिसंसु सन्वत्थावा तिरिक्य--मणुसायु॰ ज॰हि०। यहि० विसं०। पुरिस० ज०हि० संखेज्ज०। यहि० विसं०। चदुसंज० ज०हि॰ विसं०। यहि० विसं०। पंचणा०--चदुदंसणा०-पंचंत० ज॰हि संखेज्ज०। यहि० विसं०। पंचणा०--चदुदंसणा०-पंचंत० ज॰हि संखेज्ज०। यहि० विसं०। जस०--उच्चा० ज॰हि० संखेज्ज०। यहि० विसं०। सादा० ज॰हि० विसं०। यहि० विसं०। उविरं इत्थिभंगो।

६७५. णवुंस॰ सव्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० ज०हि॰। यद्वि० विसे०। णिरय-देवायु॰ ज०हि० संखेज्ञ०। यद्वि० विसे०। पुरिस॰ ज०हि० संखेज्ञ०। यद्वि॰ विसे०। पंचणा॰-चदुदंस०- पंचंत॰ ज०हि० संखेज्ञ०। यद्वि॰ विसे०। पंचणा॰-चदुदंस०- पंचंत॰ ज०हि० संखेज्ञ०। यद्वि॰ विसे०। सादा० ज०हि० विसे०। यद्वि० विसे०। उविरं श्रोधभंगो।

श्रीर उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिवन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे हास्य, रित, भय श्रीर जुगुष्साका जघन्य स्थितिवन्ध श्रसंख्यात-गुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रागे पञ्चेन्द्रियोंके समान भङ्ग है।

६७४. पुरुपवेदो जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक हैं। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक हैं। इससे पुरुपवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे चार संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे दो आयुओं का जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध सख्यातगुणा है। इससे प्रशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे अत्रिक्धितबन्ध विशेष अधिक है। इससे आगे स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे अत्रिक्धितबन्ध विशेष अधिक है। इससे अधिक विशेष अधिक विशेष अधिक है। इससे अधिक अधिक अधिक विशेष अध

६७४, नपुंसकवेदी जीवोंमें तिर्यञ्चायु ग्रीर मनुष्यायुका जयन्य स्थितवन्ध सवसं स्तोक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे नग्कायु ग्रीग देवायुका जयन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे पुरुपवेदका जयन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे चार संज्वलनका जयन्य स्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण ग्रीर पाँच ग्रन्तरायका जयन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यिश्यितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे ग्रामे ग्रामे ग्रीयक से । इससे श्रामे ग्रामे ग्रामे स्थातवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे ग्रामे ग्रामे स्थातवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे ग्रामे ग्रामे समान भक्त है।

६७६. अवगद्वे॰ सन्बत्थोवा लोभसंज॰ ज॰हि॰। यहि॰ विसे॰। पंचणा०-चदुदंस॰-पंचंत॰ ज०हि॰ संखेजज॰। यहि॰ विसे०। जस०-उच्चा॰ ज०हि॰ संखेजज०। यहि॰ विसे०। सादा० जहि॰ विसे०। यहि० विसे०। मायसंज० ज॰हि० संखेजज०। यहि॰ विसे०। माणसंज० ज०हि॰ विसे०। यहि॰ विसे॰। कोधसंज० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०।

६७७. कोधकसा॰ सन्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० ज०हि०। यहि॰ विसे॰। चहुसंज॰ ज०हि० संखेजज०। [यहि॰ विसे०।] पुरिस॰ ज॰हि॰ संखेजज०। यहि॰ विसे०।] पुरिस॰ ज॰हि॰ संखेजज०। यहि॰ विसे०। पंचणा०-चदुदंस०-पंचंत० ज॰हि० संखेजज०। यहि॰ विसे०। उच्चा० ज॰हि॰ संखेजज०। यहि॰ विसे॰। एवं जसगित्ति०। सादावे० ज०हि० विसे०। यहि॰ विसे॰। उविर श्रोघभंगो।

६७८. माणकसाइ० सञ्चत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० ज०िड०। यिह० विसे०। तिरिणसंज० ज०िड० संखेजज०। यिह० विसे०। कोधसंज० ज०िड० विसे०। यिह० विसे०। दोत्रायु० ज०िड०

६७६. श्रवगतवेदी जीवोंमें लोम संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण श्रीर पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यशःकीर्ति श्रीर उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे माया संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मान सज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे व्यविश्व श्रधिक है।

६७७. क्रोधकपायवाले जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका ज्ञघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे दो आयुआंका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच क्षानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे उद्यगात्रका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रकार यशःकीर्तिका अल्पबहुत्व है। इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे अगो ओघके समान भक्क है।

६७८. मानकपायवाले जीवोंमें तिर्यञ्चायु श्रीर मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे तीन संज्वलनोंका जघन्य स्थिति-बन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे क्रोधसंज्वलनका • जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पुरुष-वेदका जघन्य स्थितिबन्ध सख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे संखेजन । यहि० विसे । पंचणा - चदुदंस० - पंचंत । न विठ संखेजन । यहि० विसे । जस० - उच्चा० ज विठ संखेजन । यहि० विसे । सादा० ज०हि० विसे । यहि० विसे । उन्तरि श्रोधभंगो ।

६७६. मायाए सन्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० ज॰हि॰। यहि० विसे०। दोसंज० ज॰हि॰ संखेज्ज०। यहि० विसे०। माण्संज० ज॰हि० विसे०। यहि० विसे०। प्रिस० ज०हि० संखेज्ज०। यहि॰ विसे०। प्रिस० ज०हि० संखेज्ज०। यहि॰ विसे०। दोत्र्यायु० ज०हि॰ संखेज्ज०। यहि० विसे०। पंचणा०-चदुदंस०-पंचंत० ज॰हि॰ संखेज्ज०। यहि० विसे०। त्रस्य-उन्हि॰ संखेज्ज०। यहि० विसे०। सादा० ज॰हि० विसे०। यहि॰ विसे०। हस्स-उदि-भय-दुगुं०-तिरिक्ख-मणुसगदि-स्रोरालिय०-तेजा०-क०-णीचा० ज०हि० स्रसंखेज्ज०। यहि० विसे०। उत्ररं स्रोप्यभंगो। लोभे मुलोधं।

६=०. मदि०-सुद०-श्रसंज०-तिषिणले०-श्रब्भविस०-मिच्छादि०-श्रसिण ति तिरिक्खोषं । विभंगे सञ्बन्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० ज०हि०। यहि० विसे०।

दो श्रायुश्रोंका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच श्वानावरण, चार दर्शनावरण श्रीर पाँच श्वन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यशःकीर्ति श्रीर उद्यगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे साता-वंदनीयका जघन्य स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रागे श्रोष्ठक समान भक्न है।

६९९. माया कपायवाले जीवोंमें तिर्यश्चायु ग्रौर मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक हैं। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे दो संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे मानसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे दो ग्रायुग्रोंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरणा, चार दर्शनावरणा ग्रीर पाँच ग्रन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यात्स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे विश्वत्वन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे हिस्थितबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे व्यत्स्थितबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे हिस्थितबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे व्यत्स्थितबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे विशेष ग्रधिक है। होसे विशेष ग्रधिक समान भक्न है। लोभकषायवाल जीवोंमें ग्रोधक समान भक्न है।

६८०. मत्यशानी, श्रुताशानी, ग्रसंयत, तीन लेश्यावाले, ग्रभव्य, मिथ्यादृष्टि श्रौर श्रसंशी जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्जोंके समान भङ्ग है। विभङ्गशानी जीवोंमें तिर्यवायु श्रौर दोश्रायु० ज॰हि० संखेज्ञ० । यहि० विसे० । पंचणोक०--देवगिद--तिरिणसरीर--जस०-उचा० ज०हि० श्रसंखेज्ञ० । यहि० विसे० । पंचणा०--णवदंसणा०-सादा०-पंचंत० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । सोलसक० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । तिरिक्खगिद-मणुसगिद-श्रोरालि०-णीचा० ज०हि० संखेज्ज० । यहि० विसे० । श्ररदि-सोग श्रजस० ज०हि० संखेज्ज० । यहि० विसे० । श्ररदि-सोग श्रजस० ज०हि० संखेज्ज० । यहि० विसे० । श्रसदि-। श्रसदि विसे० । इत्थि० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । इत्थि० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । एवंस० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० ।

६८१. त्राभि॰-सुद्॰-स्रोधि॰ सन्वत्थोवा लोभसंज॰ ज॰हि॰। यहि० विसे०। पंचणा०--चदुदंसणा०--पंचंत० ज०हि० संखेज्ज॰। यहि० विसे०। जस॰-उच्चा० ज०हि० संखेज्ज॰। यहि० विसे०। सादा० ज०हि॰ विसे०। यहि० विसे०। मायसंज० ज॰हि० संखेज्ज॰। यहि॰ विसे०। माणसंज० ज०हि॰ विसे०। यहि॰

मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सवसे स्तोक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे दो श्रायुश्रोंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यागगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष क्रिधिक है । इससे पाँच नोकपाय, देवगति, तीन शरीर, यशःकीर्ति श्रीर उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच शाना-वरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय ओर पाँच ग्रन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सोलह कपायका जघन्य स्थिति-बन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यतिस्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्ज-गति, मनुष्यगति, श्रौदारिक शरीर श्रौर नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे श्ररति, शोक श्रौर श्रयशःकीर्तिका जधन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीय-का जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे स्रोवेदका जघन्य स्थितियन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितियन्ध विशेष अधिक है। इससे नएंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकगतिका जघन्य स्थितियन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्म्थितियन्ध विशेष अधिक है।

६८१. श्राभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी श्रीर श्रवधिज्ञानी जीवोंमें लोभसंज्वलनका जघन्य स्थितवन्ध सबसं स्तोक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे पाँच श्रानावरण, चार दर्शनावरण श्रीर पाँच श्रान्तरायका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यशःकीर्त और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे माया-संज्वलनका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिक है। इससे माया-संज्वलनका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष श्रिषक है। इससे यितस्थितवन्ध विशेष श्रिक है।

६८२. मणपज्जव० सन्वत्थोवा लोभसंज ज०हि०। यहि० विसे०। पंचणा०-चद्दंस॰-पंचंत० ज०हि॰ संखेज्ज०। यहि॰ विसे॰ । जस०-उचा० ज०हि॰ संखेज्ज०। यद्वि० विसे०। सादा० ज०द्वि० विसे०। यद्वि० विसे०। मायसंज्ञ ज०द्वि० संखेजा । यद्वि विसे । माणसंज ० ज०दि० विसे । यद्वि विसे । को धसंज ० श्रिधिक है। इससे क्रोधसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्यिति-वन्ध विशेष ऋधिक है। इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ग्रधिक है। इसमें मनुष्यायका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्म्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे देवायुका जधन्य स्थितवन्ध श्रसंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इसमे हास्य, रति, भय श्रीर जगुष्साका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे देवगति श्रौर चार शरीरका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थित-बन्ध विशेष ऋधिक है। इससे निद्रा श्रीर प्रचलाका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्य विशेष अधिक है। इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे ग्रसातावेदनीय-का जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे श्रप्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ग्रिधिक है। इससे मनुष्यगित ग्रीर ग्रीदारिक शरीरका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। यही भङ्ग अवधि-दर्शनी, सम्यग्हिष्ट, हायिकसम्यग्हिष्ट और उपशमसम्यग्हिष्ट जीवींके जानना चाहिए।

६८२. मनःपर्ययज्ञानो जीवों में लोभसंज्वलनका जघन्य स्थितिवन्ध सवसे स्तांक है। इससे पाँच क्षानावरण, चार दर्शनावरण श्रीर पाँच श्रन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मायासंज्वलनका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मायासंज्वलनका जघन्य स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे कोध-

ज॰हि० विसे० | यद्वि० विसे० | पुरिस० ज॰हि० संखेज्ज० | यहि० विसे० | देवायु० ज॰हि० असंखेज्ज० | यहि० विसे० | हस्स-रिद-भय-दुगुं० ज॰हि० संखेज्ज० | यहि० विसे० | देवगदि--चदुसरीर० ज०हि० संखेज्ज० | यहि० विसे० | णिदा-- पच्छाणं ज॰हि॰ संखेज्ज० | यहि० विसे० | अरदि-सोग-अजस० ज०हि० संखेज्ज० | यहि० विसे० | असादा० ज०हि० विसे० | यहि० विसे० | एवं संजदा० |

६=३. सामाइ०--छेदोव० सन्बत्थो० लांभसंज० ज०हि०। यष्टि० विसे०। पंचणा०--चदुदंस०-पंचंत० ज०हि० संखेज्ज०। यष्टि० विसे०। मायसंज० ज०हि० संखेज्ज०। यहि० विसे०। माणसंज० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। कोथसंज० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। कोथसंज० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। जस०--उच्चा० ज०हि० संखेज्ज०। यहि० विसे०। सादा० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। पुरिस० ज०हि० संखेज्ज०। यहि० विसे०। देवायु० ज०हि० असंखेज्ज०। यहि० विसे०। उवरिं मणवज्जवभंगो।

६=४. परिहार० सव्वत्थोवा देवायु० ज॰हि० विसे०। यहि० विसे०। पंच-

संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे हास्य, रित, भय और जुगुण्साका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरित, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिन्ध जघन्य स्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिन्ध ज्ञिष अधिक है। इसीप्रकार संयत जीवोंके जानना चाहिए।

६८३. सामायिकसंयत श्रीर छेदोपस्थापनासंयत जीवोंमें लोभसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रीधक है। इससे पाँच श्रानावरण, चार दर्शनावरण श्रीर पाँच श्रन्तराय कर्मका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रीधक है। इससे मायासंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रीधक है। इससे यानसंज्वलनका जघन्य स्थितबन्ध विशेष श्रीधक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रीधक है। इससे कोधसंज्वलनका जघन्य स्थितबन्ध विशेष श्रीधक है। इससे यश्रिकातबन्ध विशेष श्रीधक है। इससे यश्रिकाति श्रीर उद्यगोत्रका जघन्य स्थितबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितबन्ध विशेष श्रीधक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रीधक है। इससे यत्स्थित वन्ध विशेष श्रीधक विशेष श्रीधक है। इससे यत्स्थित वन्ध विशेष श्रीधक विशेष श्रीधक है। इससे यत्स्थित वन्ध विशेष श्रीधक विशेष श्रीधक है। इससे याद्य विशेष विशेष श्रीधक विशेष श्रीधक विशेष वाद्य विशेष वि

६८४. परिहारिबशुद्धिसंयत जीवोंमें देवायुका जधन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे पाँच नोकषाय, देवगति, चार शरीर, णोक०-देवगदि-चत्तारिसरीर०-जस०--उच्चा० ज०ड्ठि० संखेळा०। यहि० विसे०। पंचणा०--छदंसणा०--सादा०--पंचंत० ज०डि० विसे०। यहि० विसे०। चदुसंज० ज०ड्ठि० विसे०। यहि० विसे०। अरदि--सोग-अजस० ज०डि० संखेळा०। यहि० विसे०। असादा० ज०ड्ठि० विसे०। यहि० विसे०।

६८४. सुहुमसंपरा० सञ्बत्थोवा पंचणा०--चदुदंस०-पंचंत० ज०िह०। यिह० विसे०। जस०--उच्चा० ज०िह० संखेज्ज०। यिह० विसे०। सादा० ज०िह० [विसे०]।यिह० विसे०।

६८६. संजदासंज॰ सब्बत्थो० देवायु॰ ज॰डि॰। यहि० विसे॰। पंचणोक॰-देवगदि-तििएणसरीर॰-जस०-उच्चा० ज॰िंट० संखेज्ज॰। यहि॰ विसे०। पंचणा०-छदंस०--सादावे०--पंचंत० ज०िंद० विसे०। यहि० विसे॰। अहकसा० ज॰िंदि॰ विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। अरदि--सोग-अजस० ज०िंद० संखेज्ज॰। यहि० विसे०। असादा॰ ज॰िंद० संखेज्ज०। यहि० विसे०।

६८७. तेउले॰ सन्वत्थो॰ तिरिक्ख--मणुसायु० ज॰हि॰। यहि॰ विसे॰।

यशःकीर्ति और उद्यगोत्रका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय और पाँच श्रान्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे चार संज्यलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थिति वन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे श्ररित, शोक और श्रयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्या तगुणा है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे श्रितावन्ध विशेष अधिक है।

६८४. सूक्ष्मसाम्परायिक संयत जीवोंमें पाँच क्षानावरण, चार दर्शनावरण श्रीर पाँच श्रन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध सवसं स्तोक है। इससं यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससं यश्यातगुणा है। इससं यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससं यित्स्थितिबन्ध सिंधितवन्ध सिंधितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससं यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससं यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससं यित्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है।

६८६. संयतासंयत जीवों में द्वायुका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक हैं। इससे यित्धितिवन्ध विशेष अधिक हैं। इससे पाँच नोकपाय, द्वाति, तीन शरीर, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्ध्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय और पाँच ज्ञानरायका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्ध्यितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्ध्यितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्धितवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्धितवन्ध विशेष अधिक है। इससे अरित, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्धितिवन्ध विशेष अधिक है। इससे यित्धितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्धितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्धितिन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्धितिन्ध सम्धितवन्ध सिशेष अधिक है।

६८७. पीतलेश्यावाले जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यरिस्थतिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध देवायु० ज०हि॰ असंखेजि॰ । यहि० विसे॰ । पंचणांक०-देवगदि-चदुसरीर०-जस०-उच्चा० ज॰हि० संखेजि॰ । यहि० विसे॰ । पंचणा०-छदंसणा॰-सादा॰-पंचंतरा० ज॰हि० [ विसे॰ । यहि० विसे॰ । चदुसंज० ज॰हि० विसे० । यहि॰ विसे० । अरदि-साग-अजस० ज॰हि० संखेजि॰ । यहि० विसे० । असादा० ज०हि० विसे० । यहि० विसे० । पच्चक्खाणा॰ ४ ज०हि० संखेजि॰ । यहि० विसे० । अप्यच्चक्खाणा॰ ४ ज०हि० संखेजि॰ । यहि० विसे० । अप्यच्चक्खाणा॰ ४ ज०हि॰ संखेजि० । यहि० विसे० । यहि० विसे॰ । यहि० विसे॰

६८८. सुकाए सन्वत्थो० लोभसंज० ज०हि० । यद्दि० विसे० । सेसं त्र्योघं याव कोघसंज० ज०द्दि० [विसे० | ]यद्वि० विसे० । मणुसायु० ज०द्दि० संखेजज० ।

त्रसंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष त्रधिक है। इससे पाँच नोकपाय, देवगति, चार शरीर, यशःकीर्ति श्रौर उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्य-तिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय और पांच त्रन्तरायका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष त्रधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष त्रधिक हैं। इससे चार संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससं अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे श्रसातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे प्रत्याख्यानावर्ण चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे ऋप्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुग्ग है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे मनुष्यगति श्रोर श्रीदारिक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे स्त्यानगृद्धि तीनका जघन्य स्थितिबन्ध सख्यात-गुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे अनन्तानवन्धी चारका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष ग्रधिक है। इससे मिथ्यात्वका ज्ञाचन्य स्थितियन्ध विशेष ऋधिक हैं। इसमें यत्स्थितियन्ध विशेष ऋधिक है। इसमें स्त्री-वेदका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यन्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नीचगोत्रका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे तिर्यञ्जगतिका जधन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक हैं। इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए।

६६८. गुक्ललेश्यावाले जीवोंमें लोभ संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितबन्ध विशेष श्रधिक है। इसी प्रकार कोध संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध समान है। इससे मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितबन्ध

यद्वि० विसे० । पुग्सि० ज०द्वि० संखेज० । यद्वि० विसे० । देवायु० ज०द्वि० असंखेजज० । यद्वि० विसे० । हस्स-रिद-भय-दुगुं० ज०द्वि० संखेजज० । यद्वि० विसे० ।
देवगदि-चदुसरी० ज०द्वि० संखेजज० । यद्वि० विसे० । णिहा-पचला० ज०द्वि० संखेजज० । यद्वि० विसे० । अरदि-सोग-अजस० ज०द्वि० संखेजज० । यद्वि० विसे० । असादा० ज०द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० । पचक्खाणा०४ ज०द्वि० संखेजज० । यद्वि० विसे० । अपचक्खाणा०४ ज०द्वि० संखेजज० । यद्वि० विसे० । अपचक्खाणा०४ ज०द्वि० संखेजज० । यद्वि० विसे० । अणंताणुबंधि०४ ज०द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० । मण्डि० ज०द्वि० संखेजज० । यद्वि० विसे० । अणंताणुबंधि०४ ज०द्वि० संखेजज० । यद्वि० विसे० । पद्वि० विसे० ।

६८९. वेदगसम्मा० सञ्बत्थो० मणुसायु० ज०द्वि० । यद्वि० विसे० । देवायु० ज०द्वि० असंखेज्ज० । यद्वि० विसे० । पंचणोक०-देवगदि-चदुसरीर-जस०-उच्चा० ज०-द्वि० संखेज० । यद्वि० विसे० । पंचणा०-छदंसणा०-सादा०-पंचंत० ज०द्वि० [ विसे० ]

विशेष ऋधिक है। इससे पुरुषवेदका जवन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यतिस्थतिबन्ध विशेष अधिक है। इसमे देवायुका जघन्य स्थितिवन्ध असंख्यातगुणा है। इसमे यहिन्धातिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे हास्य, रति, भय और जुगुष्माका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इसमे यत्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे देवगति त्रौर चार शरीरका जघन्य स्थितिवन्ध मंख्यानगुणा है। इसमे यद्धियनिवन्ध विशेष अधिक है। इससे निद्रा श्रीर प्रचलाका जघन्य स्थिति-वन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे ऋरति, शांक ऋौर अयशः र्कार्तिका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यानगणा है। इसमें यत्स्थितवन्ध विशेष अजिक है। इससे असाता वेदनीयका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक हैं। इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक हैं। इससे प्रध्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिवन्य संख्यातगणा है । इसमे यरिस्थितवन्य विशेष श्रधिक है । इससे ऋप्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगणा है । इससे यहिन्थतिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यगति ऋोर औदारिक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यहिस्थितबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्त्यानगृद्धि तीनका जधन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुण। है । इससे यत्स्थितिवन्ध विशेष श्रधिक है । इससे अनन्तानुबन्धी चारका जधन्य स्थितिवन्ध विशेष ऋधिक है। इसमे युत्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे मिश्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अ।धक हैं। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष श्रिधिक हैं। इसमें स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यात-गुणा है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नीचगात्रका जवन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितवन्ध विशेष ऋधिक है।

६८. वंदकसम्यग्दिष्ट जीवोमं मनुष्यायुका जघन्य स्थितिवन्ध सबसे स्तोक है। इसमें यित्स्थितिवन्ध विशेष अधिक हैं। इससे देवायुका जघन्य स्थितिवन्ध ऋसंख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिवन्ध ऋसंख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष ऋधिक है। इससे पाँच नोकषाय, देवगित, चार रारीर, यशःकीित और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितिवन्ध विशेष ऋधिक हैं। इसमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनीय और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिवन्ध विशेष

यहि॰ विसे॰। चदुसंज॰ ज॰हि॰ विसे॰। यहि॰ विसे॰। अरदि-सोग-अजस॰ ज॰ि हि॰ संखेज॰। यहि॰ विसे॰। असादा॰ ज॰हि॰ घिसे॰। यहि॰ विसे॰। पच-क्खाणा॰४ ज॰हि॰ संखेजज॰। यहि॰ विसे॰। अपचक्खाणा॰४ ज॰हि॰ संखेजज॰। यहि॰ विसे॰। मणुसग॰-ओरालि॰ ज॰हि॰ संखेजज॰। यहि॰ विसे॰।

६९०. सासणे सन्वत्थो० तिरिक्ख०-मणुसायु० ज०हि०। यहि० विसे०। देवायुग० ज०हि० संखेज्ज०। यहि० विसे०। पंचणोक०-तिण्णिगदि-चदुसरीर-जस०-णीचा०-उचा० ज०हि० असंखेज्ज०। यहि० विसे०। अरदि-सोग-अजस० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। पंचणा०-णवदं-सणा०-सादा०-पंचंत० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। असादा० ज०हि० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०। यहि० विसे०।

६६१. सम्मामिच्छादिष्टि त्ति सन्वत्थोवा पंचणोक०-दोगदि-चर्ससीर-जसिगति-उचागो० जहण्णहिदिबंधो। यहिदिबंधो विसेसाधियो। पंचणाणावरणीयाणं छदंसणा-वरणीयाणं सादावेदणीयं पंचंतराइगं० ज०द्वि० विसे०। यद्वि० विसे०। बारसक० ज०-

श्रिषिक है। इससे यह्मिश्वितवन्ध विशेष अधिक है। इससे चार संज्वलनका जवन्य स्थितिवन्ध विशेष श्रिषिक है। इससे यह्मिश्वितवन्ध विशेष श्रिष्क है। इससे श्रिष्ठात्वन्ध विशेष श्रिष्ठ है। इससे श्रिष्ठात्वन्ध संख्यातगुणा है। इससे यह्मिश्वितवन्ध विशेष श्रिष्ठ है। इससे श्रिमातावेदनीय-का जघन्य स्थितवन्ध विशेष श्रिष्ठ है। इससे प्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यह्मिश्वितवन्ध विशेष श्रिष्ठ है। इससे श्रिष्ठातवन्ध विशेष श्रीष्ठ है। इससे यह्मिश्वितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यह्मिश्वितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यह्मिश्वितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यह्मिश्वितवन्ध विशेष श्रीष्ठ है। इससे यह्मिश्वितवन्ध विशेष श्रिष्ठ है।

६६०. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे पाँच नांकषाय, तीन गिन, चार शरीर, यशः कीर्ति, नीचगोत्र और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध ऋसंख्यातगुणा है। इससे यिस्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे अरति, शोक और ऋयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यिस्थितबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यिस्थितबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यिस्थितबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे पाँच झानावरण, नौ दर्शनावरण, साताबदनीय और पाँच ऋनतरायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे असाताबदनीयका जघन्य स्थितबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यिस्थितबन्ध विशेष ऋधिक है।

६६१. सम्यग्मिध्यादृष्टि जीवोंमं पाँच नोकषाय, दो गित, चार शरीर, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यित्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरणीय, छह दर्शनावरणीय, सातावदनीय और पाँच अन्तराय का जघन्य स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध विशेष ऋधिक है। इससे यित्स्थितिबन्ध

द्वि० विसे० । यद्वि० विसेसाधियो । अरति-सोग-अजसिगत्ति० ज०द्वि० संखेज्ज० । यद्वि० विसे०। असादा० ज०द्वि० विसे० । यद्वि० विसेसाधियो । एवं जहण्णयं परत्थाण-अप्याबहुगं समत्तं ।

## एवं अप्पाबहुगं समत्तं एवं चदुवीसमणियोगद्दाराणि समत्ताखि

विशेष अधिक है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इसमें अरित, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितवन्ध संख्यातगुणा है। इससे यित्स्थितवन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावदनीय का जघन्य स्थितवन्ध विशेष अधिक है।

इस प्रकार जघन्य परस्थान ऋरुपबहुत्व समाप्त हुआ।
इस प्रकार ऋरुपबहुत्व समाप्त हुआ।
इस प्रकार चौबीस ऋतुयोगद्वार समाप्त हुए।

 $\sim$ 

# भुजगारबंधो

६६२. एत्तो भुजगारबंघो ति । तत्थ इमं अट्ठपदं मूलपगदिद्विदिभंगो कादव्यो । एदेण अट्ठपदेण तत्थ इमाणि तेरस अणियोगदाराणि णादव्याणि भवंति । तं जहा— सम्रुक्तित्तणा याव अप्पाबहुगे ति [१३]।

# समुक्तित्तणाणुगमो

६६३. सम्रुक्तित्तणाए दुवि०-ओघे० आदे०। ओघेण पंचणाणावरणीयाणं ऋत्थि भुजगारबंधगा अप्पदरबंधगा अविद्विदंधगा अवत्तव्वबंधगा य । चदुण्णं आयुगाणं अत्थि अवत्तव्व० अप्पदर०। सेसाणं मिद्यावरणभंगो । एवं ओघभंगो मणुसा०३-पंचिदियन्तस०२-पंचमण०-पंचवचि०-कायजागि-ओरालिय०-चक्खुदं०-अचक्खुदं०-भवसिद्धि० सिण्ण-आहारग त्ति ।

६६४. णिरएसु पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०-भय-दु०-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि०-पंचंत० अत्थि सुज०-अप्पद०-अवद्वि० । सेसं ओ्यं । एवं सत्तसु पुढवीसु ।

६६५. तिरिक्खेसु पंचणा०-छदंसणा०-अड्डकसा०-भय-दुर्गु०-तेजा०-कम्म०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्टि०। सेसाणं ओघं। एवं

#### भुजगारबन्धप्ररूपणा

६८२. इसमे आग भुजगारवन्धका प्रकरण है। उसके विषयमे यह अर्थपर मूलप्रकृति स्थितिबन्धके समान करना चाहिए। इस अर्थपदके अनुसार यहाँ ये तेरह अनुयोगद्वार ज्ञातन्य है यथा —समुर्त्कार्तनासे लेकर अल्पबहुत्व तक १३।

#### सम्रुत्कीर्तनानुगम

६६३. समुत्कार्तनाका अपन्ना निर्देश दं प्रकारका हे—अंघ ओर आदेश। आंघसे पाच ज्ञानावरण प्रकृतियोंक भुजगारवन्धक जीव हैं, अरुपतर वन्धक जीव हैं, अवस्थित वन्धक जीव हैं और अवस्थित वन्धक जीव हैं और अवस्थित वन्धक जीव हैं और अरुपतर वन्धक जीव हैं। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग मितज्ञानावरणंक समान है। इसी प्रकार आंधक समान मनुष्यांत्रक, पञ्चिन्द्रियद्विक, असद्विक, पाँच मनायांगी, पाँच वचनयांगी, काययांगी. औदारिककाययांगी, चन्नु दर्शनी, अचनुदर्शनी, भव्य, संज्ञी और आहारक जीवोंक जानना चाहिए।

६६४. नारिकयोंमे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कपाय. भय, जुगुप्सा, पर्ळ्वान्द्रय-ज्ञानि, श्रीदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रीदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघु-चतुष्क, त्रसचतुष्क, निर्माण श्रीर पांच अन्तराय इनके भुजगारवन्थक जीव हैं, अस्पतरवन्थक जीव है श्रीर श्रवस्थितवन्थक जीव हैं। शेप प्रकृतियोका भङ्ग श्रोधके समान है। इसी एकार सातो प्रथिवियोंमें जानना चाहिए।

३८५. तियंख्रीमे पांच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, आठ कपाय, भय, जुगुप्सा, तेजसशरीर, कार्भणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपवाय, निर्माण ख्रीर पांच अन्तराय इनके भुजगारवन्धक जीव है. ख्रमपतरवन्त्रक जीव है। ख्रीर ख्रवस्थितवन्त्रक, जीव हैं। होप प्रकृतियोंका भङ्ग ख्रोघके समान पंचिदिय-तिरिक्ख ०३ । पंचिदियतिरिक्ख अपज्जत्ता० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ० सोल-सक०-भय-दुर्गु०-ओरालि० तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवद्वि० । सेस ओघं । एस भंगो सन्वअपज्जत्तगाणं एइंदिय विगलिदिय-पंचकायाणं च । णवरि तेउ०-वाउ० तिरिक्खगदितियस्स अवत्तन्त्वं णित्थ ।

६६६.देवेसु पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०-भय-दुगुं०-ओरालिय०-तेजा०-क०-वणा०४-अगु०४-बादर-पञ्जत-पत्तेग०-णिमि०-तित्थय० पंचंतरा० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवड्ठि०। सेसं ओघं। एवं भवणादि याव सोधम्मीसाण ति। सणकुमार याव सहस्सार ति णिरयोघो। आणद याव णवगेवज्ञा ति पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०-भय-दुगुं०-मणु-सग०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो-वण्ण०४-मणुसाणुपु०-अगु०४-तस०४-णिमि०-तित्थय०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवड्ठि०। सेसाणं ओघो। अणुदिस याव सवद्वा ति पंचणा०-छदंस०-बारसक०-पुरिसवे०-भय-दु०-मणुसग०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्ञरि०-मणुसाणु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-मणुसाणु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदंज्ञ०-णिमि०-तिथय०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवड्ठि०। सेसं ओघं।

है। इसी प्रकार पंचिन्द्रिय तियञ्जीव्रकके जानना चाहिए। पञ्जीन्द्रिय तियञ्ज अपयाप्तकामे पांच ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलहकपाय, भय, जुगुप्ता, औदारिकशरीर, तेजमशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपयान, निर्माण और पाँच अन्तराय इनके मुजगारवन्धक जीव है, अल्पतरवन्धक जीव हैं और अवस्थितवन्धक जीव है। शेप प्रकृतियोका भङ्ग ओघके समान है। यही भङ्ग सब अपयाप्त, एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और पांच स्थावरकायिक जीवोके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अग्निकायिक और वायुकायिक जीवोमे निर्यञ्जगिनिव्रकका अवक्तव्य भङ्ग नहीं है।

६६६. देवोंमं पांच झानावरण. छह दशनावरण, वारह कपाय, मय, जुगुप्सा, ब्रोहारिक-शरीर, तेजसशरीर, कार्मणशरीर, वणचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, वाहर, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण, नीयेंद्वर ब्रोर पांच ब्रन्तराय इनके भुजगारबन्धक जीव है, ब्रल्पतरबन्धक जीव हे और अवस्थितवन्धक जीव है। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग ख्रायक समान है। इसी प्रकार भवनवासी देवोंसे लेकर सीधर्म ख्रीर एशान कन्प नकके देवोंसे जानना चाहिए। सनत्कुमार कन्पमे लेकर सहस्रार कल्पनकके देवोंसे सामान्य नारिकयोंक समान भङ्ग है। आनत कन्पमे लेकर नीयेंवयक तकके देवोंसे पांच जानावरण, छह दर्शनावरण, वारह कपाय, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति, पख्रीन्द्रयज्ञाति, ब्रोहारिक अङ्गोपाङ्ग, चार वर्ण, मनुष्यगत्यानुपूर्वा, अगुम्लघु चार, त्रस चार, निर्माण, नीर्थङ्कर ब्रोर पांच ब्रन्तरायक भुजगारबन्धक जीव है, अल्पतरबन्धक जीव है और अवस्थितवन्धक जीव हैं। शेप प्रकृतियाका भङ्ग ओघक समान है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंसे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, वारह कपाय, पुरुपंत्रद, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति, पञ्जिन्द्रयज्ञाति, ख्रोदारिकशरीर, तेजसरारीर, कार्मणशरीर, समचनुरस्त्रसंस्थान, ख्रोदारिक खाङ्गोपाङ्ग, वज्जर्षभनाराचसंहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वा, वर्णचनुष्क, अगुम्लघुचनुष्क, प्रशस्त विहायोगित प्रसचनुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, नीर्थङ्कर और पाँच व्यन्तराय इनके भुजगारबन्धक जीव है, ख्रस्पतरबन्धक जीव है और ख्रवस्थितवन्धक जीव है । शेष प्रकृतियोंव। भङ्ग अंधक समान है।

६६७, ओरालियमिस्से पंचणा०-णवदंसणा०-सोलसक०-भय-दुगुं०-देवगदि-ओरालि०-वेउव्विय०—तेजा०-क० वेउव्वि०अंगो०-चण्ण०४—देवाणुपु०-अगु०—उप०-णिमि०-तित्थय० पंचंत० अत्थि भ्रज०-अप्पद०-अवद्वि० । सेसाणं ओघं । वेउव्विय० देवोघं । णवरि तित्थयरस्स अवत्तव्वं अत्थि । वेउव्वियमि० पंचणा०-णवदंसणा०-सोलसक०-भय-दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-वादर-पज्जत-पत्तेय० - णिमि० - तित्थय०-पंचंत० अत्थि भ्रज०-अप्पद०-अवद्वि० । सेसाणं ओघं । आहार०-आहारमिस्से धुविगाणं अत्थि भ्रज०-अप्पद० अवद्वि० । सेसं ओघं । कम्महगे० अणाहारगे० पंचणा०-णवदंसणा०-सोलसक०-भय-दुगुं०-देवगदि-ओरालि०-वेउव्विय०-तेजा०-क०-वेउव्वि० । सेसं ओघं । देवाणु०-अगु०-उप०-णिमि०-तित्थय०पंचंत० अत्थि भ्रज०-अप्पद०-अवद्वि० । सेसं ओघं ।

६६८. इत्थि-पुरिस० णवुंस० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवद्वि० । सेसं ओघं । अवगद० सन्वाणं अत्थि भुज०-अप्पद०-अवद्वि०-अन्व-त्तन्वं० । एवं सुहुमसंप० । णवरि अवत्तन्वं णत्थि ।

६८६. कोघे पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० अत्थि भ्रुज०-अप्पद०-अवद्वि०।

६६७. स्रोदारिकमिश्रकाययोगी जीवोमे पाँच ज्ञानावरण, नौ दशनावरण, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, देवगति, त्र्रोदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघान, निर्माण, नीर्थङ्कर और पाँच अन्तराय इन्छ्के भूजगारवन्धक जीव हैं, ऋल्पतरवन्धक जीव हैं ऋार अवस्थितवन्धक जीव हैं। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग स्त्रांघके समान है। वैक्रियिककायांगी जीवोंका भङ्ग सामान्य देवांके समान है। इतनी विशे-पता है कि इनमें तीर्थेंद्वर प्रकृतिका अवक्तव्य पद है। वैक्रियिकमिश्रकायगर्थागी जीवोंमें पाँच ज्ञाना-वरण, नौ दर्शनावरण, सोलहकपाय, भय, जुगुप्सा, श्रोदारिकशारीर, तैजसशारीर, कार्मणशरीर, चारवर्ण, अगुरलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण, तीर्थङ्कर और पाँच अन्तराय इनके भजगारबन्धक जीव है, अरुपतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव है। शेप प्रकृतियोंका मङ्ग श्रोघके ममान है। आहारककाययांगी और श्राहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रवबन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगरबन्धक जीव हैं, अन्पतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव है। शेप प्रकृतियोका भक्क त्रोघके समान है। कार्मणकाययोगी त्रौर अनाहारक जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावण, सालह कषाय, भय, जुगुप्सा, देवगति, श्रौदारिक शरीर, वैकियिकशरीर, तेजसशरीर, कार्मणशरीर, बैक्रियिक त्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण, तीर्थङ्कर और पॉच अन्तराय इनके मुजगारबन्धक जीव हैं, श्ररूपतरबन्धक जीव है और अवस्थित बन्धक जीव है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग स्रांघक समान है।

६८ च्र. स्त्रीवदी, पुरुषवदी और नपुंसकवदी जीवोंमे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संउवलन और पाँच अन्तरायके भुजगारवन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव हैं। शेप भङ्ग ओधके समान है। अपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंके भुजगार बन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं और अवक्तव्यबन्धक जीव हैं। इसी प्रकार सूद्रमसाँपरायसंयत जीवोंमें जानना चाहिये। इतनी विशेपता है कि इनमं अवक्तव्य पद नहीं है।

६६६. क्रोधकषायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दिशीनावरण, चार संज्वलन श्रौर

सेसं ओघं । माणे तं चेत्र । णवरि तिण्णि संज० । मायाए दोण्णि संज० । सेसं तं चेत्र । लोभे पंचणा०-चदुदंस०-पंचंत० अत्थि भ्रज०-अप्पद०-अवद्वि० । सेसं ओघं ।

७००. मदि०-सुद० पंचणा०-णवदंसणा० सोलसक० भय दुर्गु०-तेजा०-क०-वण्ण० ४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० अत्थि भ्रज०-अप्पद० अवडि० । सेसं ओघं । एस भंगो विभंगे । एवं चेव अब्भवसि०-मिच्छादि०-असण्णि ति । णवरि मिच्छत्त० अवत्तव्वं णित्थ ।

७०१. आभि०-सुद०-ओघि०--मणपज्जव०-संजद--ओघिदं०-सुक्कले०-सम्मादि० खइ-ग०-उवसम० ओघं। सामाइ०-छेदो० पंचणा०-चदुदंस०-लोभसंज०-उच्चा०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवद्वि०। सेसं ओघं। परिहार० आहारकायजोगिभंगो। संजदासंजद० पंचणा०-छदंसणा०-अद्वकसा०-पुरिसवे०-भय-दुर्गु०-देवगदि-पंचिदि०-तिण्णिसरीर-समच-दु०-वेउव्वियअंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग्-सुस्सर्-आदे-ज्ञ०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवद्वि०। सेसं ओघं।

७०२. असंजदे० पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०-भय-दुगुं० तेजा०-क०-वणा०४—अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० अस्थि भुज०-अपद०-अबिहि० । सेसं ओघं । तिण्णि हेस्साणं पांच अन्तरायक भुजगार बन्धक जीव है, अल्पतरबन्धक जीव है और अबिस्थतबन्धक जीव हैं। शेप भङ्ग आंघके समान है। मानकपायवाले जीवोंमें वही भङ्ग हैं। इतनी विशेपता नै कि पहां तीन संज्ञलन कहना चाहिये। मारामे दो संज्ञलन कहने चाहिये। शेप भङ्ग उमी प्रकार है। लोभकपायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायके भुजगार बन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव हैं। शेप भङ्ग आंघके समान है।

७००. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमे पाँच ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, मोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, श्रगुरलघु, उपवान, निर्माण श्रोर पाँच श्रान्तरायक मुजगार बन्धक जीव हैं, श्रन्तर बन्धक जीव है श्रोर श्रवस्थित बन्धक जीव हैं। श्रेप भङ्ग श्रोचक समान है। यही भङ्ग विभङ्गज्ञानी जीवोंमें जानना चाहिये। तथा इसी प्रकार श्रभव्य, मिथ्यादृष्ठि श्रोर श्रसंज्ञी जीवोंक जानना चाहिये। इतनी विशेपता है कि इनमें मिथ्यात्वका श्रवक्तव्य पद नहीं है।

पुर्वेद, स्राभिनिवाधिकज्ञानी, श्रुनज्ञानी, स्रविध्वानी मनःपर्ययज्ञानी, संयत, अविध्व दर्शनी, श्रुक्तलेश्यावाले, सम्यग्दृष्टि, क्षायिक संम्यग्दृष्टि स्रोर उपशम सम्यग्दृष्टि जीवोंमें आंपके समान भक्त हैं। सामायिक संयत और छेदापस्थापना संयत जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, लांभ संख्वलन, उच्च गोत्र स्रोर पाँच अन्तरायके भुजगारवन्थक जीव हैं, अन्पतरवन्थक जीव हैं और अवस्थितवन्थक जीव हैं। शोप भक्त आंपके समान है। परिहारिवशुद्धि संयत जीवोंमें आहारक काययोगी जीवोंके समान भक्त है। संयतासंयत जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनवरण, आठ कपाय, पुरुपवेद, भय, जुगुप्सा, देवगित, पस्त्रीन्द्रय जाति, तीनशरीर, समचतुरस्त्र संस्थान, विक्रिय आक्तांपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलचुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रम चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायके भुजगारबन्धक जीव हैं, अन्यतर वन्धक जीव हैं स्रार अवस्थितवन्धक जीव हैं। शेप भङ्ग स्रायक समान है।

७०२. असंयत जीवोंमे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण बारह कपाय, भय, जुगुप्सा, तंजस शरीर, कार्मणशरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु, उपघान, निर्माण और पाँच अन्तरायके भुजगारवन्धक जीव हैं. अन्यतर बन्धक जीव हैं और अवस्थित बन्धक जीव हैं। शेष भक्क आपके समान है। एवं चेव । णवरि किण्ण-णीलाणं तित्थय० अवत्तव्वं णित्थ ।

७०३. तेऊए पंचणा०-छदंस०-चदुसंज०-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु० ४-बादर पज्जत्त-पत्तेय०-णिमि०-पंचंत० अस्थि भुज०-अप्पद०-अवद्वि०। सेसं ओघं। एवं पम्माए वि। णवरि पंचिंदिय० तस० धुवं कादव्वं।

७०४. वेदगसम्मा० पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-पुरिस०-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-पंचिदि०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुम्सर-आदे०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्टि० । सेसं ओघं ।

७०५. मासणे पंचणा०-णवदंसणा०-सोलसक०-भय-दुर्गु०-पंचिदि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि०-पंचंत० अस्थि भुज०-अप्पद्०-अवद्धि० । सेसं ओघं ।

७०६, सम्मामि० दोवेदणीय-चदुणोक०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० अत्थि भुज०-अप्पद्०-अवद्धि०-अवत्तव्वं० । सेसाणं अत्थि भुज०-अप्पद्०-अवद्धि० ।

### एवं समुक्तिनणा समना सामिताणुगमो

७०७, सामित्ताणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे०। ओघेण पंचणा०-छदंसणा० चदु-तीनलेश्यावाले जीवाम इसी प्रकार जानना चाहिये। इतनी विशोपता है कि कृष्ण और नीललेश्या वाले जीवों में नीर्थद्वर प्रकृतिका अवक्तव्य पर नहीं है।

७०३. पितलेश्यावाले जीवों में पांच ज्ञानावरण, छह दर्शनावण, चार संज्वलच, भय, जुगुष्मा, तैजम शरीर. कार्मणशरीर, वर्ण चतुष्क. अगुरुलघु चतुष्क. वाद्र, पर्याप्त, प्रयेक, निर्माण स्रोर पांच स्रन्तरायके भुजगारवन्धक जीव हैं, स्रन्पतर वन्धक जीव हैं स्रोर स्रवन्धितवन्धक जीव हैं। शेप भङ्ग आघके समान है। इस प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंमें भी जानना चाहिये। इननी विशोपता है कि इनमें पद्मेन्द्रिय जाति स्रोर सम प्रकृतिका ध्रव कहना चाहिये।

७०४. वेदक सम्यग्हिष्ट जीवोंसे पाँच ज्ञानावरण, छहँ दर्शनावरण, चार संज्यलन, पुरुप वेद, भय, जुगुष्सा, तेजसरारीर, कार्मणशरीर, पञ्चेन्द्रिय ज्ञाति, समचतुरस्र संस्थान, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्तविहायोगिति, बस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, उच्चगांव और पाँच अन्तरायक भुजगार्वन्यक जीव हैं। श्रोप भद्ग आघके समान है।

७०५. मामादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, पख्रोन्द्रिय जाति, नेजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरूलघु चतुष्क, त्रम चतुष्क, निर्माण ख्रोर पाँच त्र्यन्तरायके भुजगारवन्धक जीव हैं, त्र्यन्पतरवन्धक जीव हैं ख्रीर अवस्थितवन्धक जीव हैं। शेष भङ्ग ख्रोघक समान है।

७०६. सम्यग्मिण्यादृष्टि जीवोमं दो वेदनीय, चार नोकपाय, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःक्षीति श्रोर अयशःक्षीतिक मुजगारवन्धक जीव है. अरूपतरवन्धक जीव हैं, अवस्थितवन्धक जीव हैं। श्रेप प्रकृतियोक मुजगारवन्धक जीव हैं, अरूपतरवन्धक जीव हैं। श्रेप प्रकृतियोक मुजगारवन्धक जीव हैं, अरूपतरवन्धक जीव हैं।

इस प्रकार समुत्कीर्तना समाप्त हुई।

#### स्वामित्वानुगम

७०७. म्वाभित्वानुगमकी अपेजा निर्देश दो प्रकारका है-स्रांध और आदेश। स्रांधमे

संज ०-भय-दुगुं० नेजा० — क०-वण्ण० ४ — अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० भुजगा० — अप्यद्०-अविद्व वंघो कस्स ? अण्णदरस्स । अवत्तव्व वंघो कस्स ? अण्णदरस्स उवसमगस्स परि-वदमाणस्स मणुसस्स वा मणुसिणीए वा पढमसमए देवस्स वा। थीणिगिद्धि० ३ — अणंताणु-वंघि० ४ भुज०-अप्पद०-अविद्व ० कस्स ? अण्णद० । अवत्त० कस्स ? संजमादो संजमासंजमादो सम्मामिच्छाति वा परिवदमाणस्स पढमसमयमिच्छाति द्विस्स वा सासणसम्मदिहिस्स वा। मिच्छत्त० भुज०-अप्प०-अविद्व० कस्स ? अण्णदरस्स । अवत्तव्व० कस्स ? अण्णद० संजमादो वा संजमासंज० समत्त० सम्मामि० सासण० वा परिवदमाणस्स पढमसमयमिच्छाति द्विस्स । अप्पचम्खाणा०४ तिण्णि पद० कस्स ? अण्णद० । अवत्त० कस्स० ? संजमादो वा संजमासंज० परिवदमाणस्स पढमसमय-मिच्छाति दिवि सासण० सम्मामि० असंजदसं० । पचक्खाणा०४ भुज०-अप्पद०-अविद्व० कस्स० ? अण्ण० । अवत्त० कस्स० ? अण्ण० संजमादो परिवदमाण० पढमसमय-मिच्छाति० सासण० सम्मामि० असंजदसं० संजदासंजद० । चदुण्णं आयुगाणं अवत्त० कस्स० ? अण्ण० पढमसमय-आयुगवंघ० । तेण परं अप्पदरवं० । आहार०-आहार०अंगो०-पर०-उस्सास०-आदाउजो० तित्थय० तिण्णिपद० कस्स० ? अण्ण० । अवत्तव्व० कस्स० ? अण्ण० पढम-

पाँच ज्ञातावरण, छह दर्शनावरण, चार मंज्वलन भय, जुगुल्सा, तैजस शरीर, कामणशरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु, उपघान, निर्माण और पाँच अन्तराय इनके भूजगार, अल्पतर और अवस्थित वन्धकका स्वामी कौन हैं ? अन्यतर नीव उनका स्वामी है। अवक्तव्यवन्धका स्वामी कौन हैं ? अन्यतर गिरनेवाला उपशामक मनुष्य और मनुष्यनी या प्रथम समयवर्ती देव अवक्तव्यवन्यका स्वामी है। स्त्यानगृद्धि तीन, अनन्तानवन्धी चारके भूजगार, अस्पतर और अवस्थितवन्धका स्वामी कौन हैं ? अन्यतर जीव उनका स्वामी है । अवक्तव्यवन्धका स्वामी कौन है ? संयमसे, संयमासंयमसे, संस्यक्त्वसे और सस्यग्मि मध्यात्वसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिध्यादृष्टि या मासादन सम्यग्दृष्टि जीव अवक्तव्यवन्धका स्वामी है। मिध्यात्वकं भूजगार, अल्पतर और अवस्थितबन्धका स्वामी कौन है ? ऋन्यतर जीव उक्त बन्धका स्वामी है। अबक्तव्यवन्धका स्वामी कौन है ? संयममे संयमासंयमसे, सम्यक्त्वसे, सम्यग्मिश्यात्वसे या सामाद्रनमम्यक्त्वसे गिरनेवाला प्रथम समयवाला मिध्यादृष्टि जीव त्रवक्तज्यवन्धका स्वामी हैं। त्रप्रात्याख्यातावरण चारके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? ऋन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी हैं । ऋवक्तव्यवन्धका स्वामी कौन है ? संयमसे या संयमा-संयमसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिध्यादृष्टि, सासादनमस्यग्दृष्टि, सस्यग्मध्यादृष्टि श्रीर श्रसंयतसम्यग्दृष्टि जीव अवक्तव्य पदका स्वामी है। प्रत्याख्यानावरण चारके भूजगार, श्रत्पतर श्रीर श्रवस्थितवन्यका स्वामी कीन है ? अन्यतर जीव उक्त वन्यका स्वामी है। श्रवक्तव्यवन्यका स्वामी कौन हैं ? संयमसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिण्यादृष्टि, सामादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मि-थ्यादृष्टि, त्र्यसंयतसम्यग्दृष्टि त्र्योर संयतासंयत त्र्यन्यतर् जीव त्र्यवक्तव्यवस्थका स्वामी है। चार अ।युओंके अवक्तव्यवन्धका स्वामी कीन है ? प्रथम समयवर्ता आयुकर्मका बन्ध करनेवाला अन्यतर जीव अवक्तव्यवन्धका स्वामी है। इससे आगे वह अन्यतर बन्धका स्वामी है। आहारक शरीर, अहारक आङ्गोपाङ्ग, परघात, उच्छास, आतप, उद्योत और तीर्थङ्कर प्रकृतिके तीन पदोंका स्वामी कौन हैं ? स्त्रन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। अवक्तव्य पदका स्वामी कौन है ? प्रथम समयमे

समयबं० । सेसाणं तिण्णिपद० कस्स० ? अण्ण० । अवत्तव्व० कस्स० ? अण्ण० परियत्त-माणपढमसमयबंध० ।

७०८. णिरएसु धुविगाणं तिष्णिपदा० कस्स० १ अण्ण० । सेसाणं ओघादो साघे-दच्वं । णवरि सत्तमाए तिरिक्खग-तिरिक्खाणु०-णीचा० थीणगिद्धि०मंगो । मणुसग०-मणुमाणु० उच्चा० तिष्णिपदा० कस्स० १ अण्ण० । अवत्त० कस्स० १ अण्ण० मिच्छ-त्तादो परिवद० पढमसमय सम्मामि० सम्मादिष्टि० ।

७०६. तिरिक्लेसु घुविगाणं तिण्णिपदा कस्स० १ अण्ण० । सेसाणं ओघादो साधे-दन्वं । एवं पंचिदियतिरिक्ख०३ । पंचिदियतिरिक्खअपज्ञत्त० धुविगाणं तिण्णिपदा० कस्स० १ अण्ण० । सेसाणं ओघं । एवं सन्वअपज्जत्तगाणं एइंदिय-विगलिंदिय-पंच-कायाणं च ।

- ७१०, मणुसा०३ ओघं। णवरि अवत्त० देवो त्ति ण भाणिदव्वं।
- ७११. देवाणं णिरयोघो याव उवरिमगेवज्जा ति । णवरि विसेसो णादव्वी । उवरि पज्जत्तभंगो ।
- ७१२. पंचिदि०-तम०२-पंचमण०-पंचविच०-कायजोगि ओरालि०-आभि०-सुद०-बन्ध करनेवाला अन्यतर जीव अवक्तज्य पदका स्वामी है। शेप कर्मीक तीन पदोका स्वामी कौन है १ अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। अवक्तज्य पदका स्वामी कौन है। परिवर्तमान प्रथम समयमें बन्ध करनेवाला अन्यतर जीव अवक्तज्यपदका स्वामी है।

७०८. नारिकयोंमें ध्रवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। शेप प्रकृतियोंक यथासम्भव पदोंका स्वामित्व त्रोघसे साध लेना चाहिये। इतनी विशेषता है कि सानवीं पृथिवीमे नियद्धगति, तियद्धगत्यानुपूर्वी त्रौर नीचगात्रका भङ्ग स्त्यानुगृद्धित्रिकके समान है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी त्रौर उच्चगोत्रके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? त्रान्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। अवक्तज्यपदका स्वामी कौन है ? मिध्यात्वसे ऊपर चढ़नेवाला प्रथम समयवर्ती सम्यग्मिध्यादृष्टि या सम्यग्दृष्टि अन्यतर जीव अवक्तज्य पदका स्वामी है।

७.९. तिर्येक्कों में ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियों के तीन पदोंका स्वामी कोन है ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। शेप प्रकृतियों के पदोंका स्वामित्व आंघके अनुसार साध लेना चाहिये। इसी प्रकार पक्षेत्रियतिर्यक्कित्रिक जानना चाहिये। पक्षेत्रियतिर्यक्क अपयप्तिकों में ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियों के तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। शेप प्रकृतियोंका भक्ष ओघके समान है। इसी प्रकार सब अपर्याप्तक, एकेन्द्रिय, विकलत्रय और पाँच स्थावरकायिक जीवोंके जानना चाहिये।

७१०. मनुष्यत्रिकमें त्र्याघके समान भङ्ग ह । इतनी विशेषना है कि इनमें त्र्यवक्तव्य पदका स्वामी देव है यह नहीं कहना चाहिये।

७११. देवोम उपरिम प्रवेयक तक नारिकयांके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि वहाँ जो विशेष हो उसे जानकर कहना चाहिये। इससे आगे पर्याप्तके समान भङ्ग है।

७१२ पञ्चेन्द्रियद्विक, त्रसद्विक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, काययोगी, श्रीदारिक

ओषि० चक्खुदं०-अचक्खुदं०-ओघिदं०-सुकले०-भवसि०-सम्मादि०-खइगस०- उनसम०-सण्णि-आहारग ति ओघो । णवरि पंचमण० पंचवचि०-ओरालिय० मणुसभंगो ।

७१३. ओरालियमि० धुविगाणं भ्रज०-अप्पद०-अबद्धि० कस्स०? अण्ण० । सेसाणं ओघं । देवगदि०४-तित्थय० तिण्णिपदा० कस्स० ? अण्ण० । मिच्छ० तिण्णिपदा कस्स ? अण्ण० । अवत्त० कस्स० ? सासण० परिवदमाण० पढमसमयमिच्छादिद्विस्स ।

७१४. वेउव्वियका० देव-णेरइगभंगो। वेउव्वियमि० धुविगाणं तिष्णिपदा० कस्स० १ अण्ण० देवस्स वा णेरइय० । मिच्छत्तस्स ओरालियमिस्सभंगो। सेसाणं ओघो। आहार०-आहारमि० धुविगाणं तिष्णिपदा कस्स० १ अण्ण०। सेसं ओघं। कम्मइय० धुविगाणं तिष्णि पदा० कस्स० १ अण्ण०। सेमाणं तिष्णि पदा० कस्स० १ अण्ण०। अवत्त० कस्स० १ अण्ण०। अवत्त० कस्स० १ अण्ण०। अवत्त० कस्स० १ अण्ण० परियत्तमा० पढमसमयवं०। मिच्छ०-देवगदि०४-तित्थय० ओरालियमिस्सभंगो। एवं अणाहार०।

७१५. इत्थि० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत तिण्णिपदा कस्स० १ अण्ण० । णिदा-पचला-भय-दुगुं०-तेजा०-क० यात्र णिमिण त्ति तिण्णि पदा कस्स० १

काययोगी, आमिनिवाधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, चनुःदर्शनी, अचनुदरानी, अवधि-दर्शनी, शुक्तलेश्यावाले, भव्य, सम्यग्दष्टि, क्षायिकसम्यग्दष्टि, उपशामसम्यग्द्रि, संज्ञी और आहा-रक जीवोंमें श्रोधके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि पाँच मनायोगी, पाँच वचनयोगी और औदारिककाययोगी जीवोंमें मनुष्योंके समान भङ्ग है।

७१३. श्रीदारिकमिश्रकाययोगी जीवोम श्रुववन्धवाली प्रकृतियोके भुजगार, श्रुह्मतर श्रीर श्रुविस्थत पदका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है । शेप प्रकृतियों के पदोंका स्वामी श्राधके समान है । देवगित चतुष्क श्रीर तीर्थङ्कर प्रकृतिके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? श्रुम्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है । मिश्यात्वके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? श्रुम्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है । अवक्तव्य पदका स्वामी कौन है ? माभादन राम्यक्विसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिश्यादृष्टि जीव अवक्तव्य पदका स्वामी है ।

७१४. वैक्रि येककाययांगी जीवोंमें देवो और नारिकयोंक समान भङ्ग है। वैक्रियिकिमिश्रका गयांगी जीवोंमें घुवबन्धवाली प्रकृतियोंक तीन पढ़ोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर देव और नारिका जीव उक्त पढ़ोंका स्वामी है। मिण्यात्वका भङ्ग औदारिकिमिश्रकाययोगी जीवोंक समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। आहारिकिमिश्रकाययोगी और आहारिकिमिश्रकाययोगी जीवोंमें घुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पढ़ाका स्वामी कोन है ? अन्यतर जीव उक्त पढ़ोंका स्वामी है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग आघके समान है। कार्मणकाययोगी जीवोंमें घुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पढ़ोंका स्वामी कोन है ? अन्यतर जीव उक्त पढ़ोंका स्वामी है। शेष प्रकृतियोंके तीन पढ़ोंका स्वामी कोन है ? अन्यतर जीव उक्त पढ़ोंका स्वामी है। अवक्तव्य पढ़का स्वामी कोन है ? अन्यतर परिवर्तमान प्रथम समयमें बन्ध करनेवाला जीव अवक्तव्य पढ़का स्वामी है। मिण्यात्व, देवगित चार और तीर्थङ्करका भङ्ग औदारिकिमिश्रकाययोगी जीवोंके समान है। इसी प्रकार अनाहारक जीवोंक जानना चाहिए।

७१५. स्त्रीवरी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पांच अन्त-रायके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव तीन पटोंका स्वामी है। निद्रा, प्रचला, भय, अण्ण तिगदियस्स । अवत्त व कस्स ० ? अण्ण व उवसम ० परिवदमा ० मणुस ० मणुसिणीए वा । सेसाणं ओघादो साघेदव्वं । णवरि तिगदियस्स । एवं पुरिस ० । णवरि णिद्दा-पचलादंडयस्स ओघो । सेसाणं वि ओघो । णवुंसगे इत्थिमंगो । अवगदवे० भुज ० अवत्त ० कस्स ० ? अण्ण ० उवसम ० परिवदमा ० पटमसमय ० । अप्पद ० - अवद्वि कस्स ० ? अण्ण ० उवसम ० । एवं सन्वाणं ।

७१६. कोघे३ पंचणा०-चढुदंस०-पंचंत० तिण्णिपदा कस्स० १ अण्ण०। कोघे चढुसंज० माणे तिण्णि संज० मायाए दो संज० णिद्दा-पचला-भय-दुगु० तेजइगादिणव० ओघो। सेसाणं ओघं। लोमे [१४] कोधभंगो। सेसं ओघं।

७१७. मदि०-सुद० धुविगाणं तिण्णिपदा कस्त० १ अण्ण० । मिच्छ० अवत्त० अोरालियमिस्सभंगो । सेसाणं ओघेण साघेदव्यं । एवं विभंग०-अब्भवसि०-मिच्छादि० । णबरि दोसु मिच्छत्तस्स अवत्त० णित्थ ।

७१८. मणपज्जव०-संजदे ध्रुविगाणं मणुसभंगो । एवं सेसाणं पि । सामाइ०-

जुगुप्सा, तंजसशरीर श्रांर कार्मण्शरीरसं लेकर निर्माण तक प्रकृतियोंक तीन पद्रोका स्वामी कौन है ? अन्यतर तीन गतिका जीव उक्त पद्रोका स्वामी है। अवक्तव्य पद्का स्वामी कीन है ? उपरामश्रीणंसे गिरनेवाला अन्यतर मनुष्य या मनुष्यनी अवक्तव्य पद्का स्वामी है। शप प्रकृतियोंके पद्रोंका स्वामित्व आंघसे साध लेना चाहिए। इतनी विशेषता है कि तीन गतिके जीवके स्वामित्व कहना चाहिए। इसी प्रकार पुरुपवेदी जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके निद्रा और प्रचला दण्डकका भङ्ग श्रोधके समान है। शेष प्रकृतियोंके पद्रोंका स्वामित्व भी श्रोधके समान है। नपुंसकवेदी जीवोंमें खीवदी जीवोंके समान भङ्ग है। अपगतवेदी जीवोंके भुजगार श्रोर श्रवक्तव्य पद्का स्वामी कौन है ? उपचमश्रीणंसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती श्रान्यतर जीव उक्त पद्रोंका स्वामी है। अस्पतर और श्रवस्थितपद्का स्वामी कौन है ? श्रन्यतर उपशामक या क्षपक श्रान्यतर जीव उक्त पद्रोंका स्वामी है। इसी प्रकार सव प्रकृतियोंका स्वामित्व जानना चाहिए।

७१६. क्रांध, मान श्रीर माया कपायवाले जीवोंमं पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण श्रीर पाँच अन्तरायके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव तीन पदोंका स्वामी है। क्रोध-कषायवाले जीवोंमें चार संज्वलन, मान कपायवाले जीवोंमें तीन संज्वलन श्रीर मायाकपायवाले जीवोंमें दो संज्वलन तथा निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा श्रीर तैजसशरीर आदि नौ प्रकृतियोंका भङ्ग श्रीषके समान है। तथा शेप प्रकृतियोंके पदोंका स्वामित्व श्रीयके समान है। लोभ कपायवाले जीवोंमे चौदह प्रकृतियोंका भङ्ग क्रोध कपायवाले जीवोंमे चौदह प्रकृतियोंका भङ्ग क्रोध कपायवाले जीवोंके ममान है। शेष प्रकृतियोंके पदोंका स्वामित्व श्रीप्रके समान है।

७१७. मत्यज्ञानी श्रोर श्रुताज्ञानी जीवोम श्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पद्मेका स्वामी कौन हैं ? श्रम्यतर जीव तीन पद्मेका स्वामी हैं। मिध्याखक अवक्तव्य पद्का स्वामित्व श्रोदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंक समान है। शेष प्रकृतियोंके पद्मेका स्वामित्व ओघसे साध लेना चाहिए। इसी प्रकार विभन्नज्ञानी, श्रभव्य श्रोर मिध्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अभव्य श्रोर मिध्यादृष्टि इन दो मार्गणाश्रोंमे मिध्याद्यका श्रवक्तव्य पद नहीं है।

७१८. मनःपर्यवानी और संयत जीवोंसे धवबन्धवाली प्रकृतियोंका भक्क मनुष्योके समान

ह्रेदो० धुनिगाणं तिष्णिपदा कस्स० ? अण्ण० । णिद्दा-पचला-तिष्णिसंज्ञ०-पुरिस०-भय-दुगुं० देवगदि-पंचिंदि०-तिष्णिसरीर-समचदु०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु० ४-पसत्थ०-तस० ४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-तित्थय० तिष्णिपदा कस्स ? अण्ण० । अवत्तव्व० कस्स ? अण्ण० उवसम० परिवद० पढमसमय मणुस० मणुसिणीए वा । सेसाणं ओघो । परि-हार० आहारकायजोगिभंगो । [सुदुमे सुज० कस्स० ? अण्ण० उवसम परिवद०। वेपदा कस्स० ? अण्ण० उवस० खवग० । ]

७१६. संजदासंज०-सम्मामि०—[सासाद०] अणुद्सभंगो। णविर संजदासंजदस्स तित्थयरस्स अवत्तव्वं ओघेण साघेदव्वो। असंजदा० तिरिक्खोघं। एवं तिण्णिलेस्साणं। णविर वि.ण्ण णीलाणं तित्थयरस्स अवत्तव्वं णित्थ। तेउए ध्रुविगाणं तिण्णिपदा कस्स० १ अण्ण०। सेसाणं ओघादो साघेदव्वं। एवं पम्माएं। वेदगे ध्रुविगाणं तिण्णिपदा कस्स० १ अण्ण०। सेसं ओघं। असण्णीसु ध्रुविगाणं तिण्णि पदा कस्स० १ अण्णदरस्स। सेसाणं ओघादो साघेदव्वं। एवं सामित्तं समत्तं।

### कालाणुगमो

७२०. कालाणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे० । ओघे० पंचणा०-णवदंसणा०-दोवेद-

हैं। इसी प्रकार शेप प्रकृतियों के विषयम जानना चाहिए। सामायिकसंयत और छद्दोपस्थापनासंयत जीवों में ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियों के तीन पदोंका स्वामी कीन हें ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी हैं। निद्रा, प्रचला; तीन संज्वलन, पुरुपवेद, भय, जुगुप्सा, देवगित, पर्छ्वान्द्रिय जाति, तीन शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित त्रसचतुष्क, मुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और तीथद्भर इनके तीन पदोंका स्वामी कीन हें ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी हैं। अवक्तव्यपदका स्वामी कोन हें ? उपशमश्रीणसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती अन्यतर मनुष्य या मनुष्यिती अवक्तव्यपदका स्वामी हैं। शेप प्रकृतियों के पदोंका भङ्ग श्रोधके समान हैं। परिहारविशुद्धिसंयत जीवों में आहारककाययोगी जीवों के समान भङ्ग हैं। सूदमसाम्परायिक संयत जीवों में मुजगारपदका स्वामी कोन हें ? अपशमश्रीणसे गिरनेवाला अन्यतर जीव भुजगारपदका स्वामी हैं। अल्पतर और अवस्थितपदका स्वामी कोन है ? अन्यतर उपशामक और इपक उक्त दो पदोंका स्वामी हैं।

०१६. संयतासंयत, सम्यग्मिश्यादृष्टि और सासाद्नसम्यग्दृष्टि जीवोका भङ्ग अनुद्रिशंक समान है। इतनी विशेषता है कि संयतासंयत जीवोंमें तीर्थङ्कर प्रकृतिका अवक्तत्र्यपद ओषसे साथ लेना चाहिए। असंयतोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके ममान भङ्ग है। इसीप्रकार तीन लेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कृष्ण और नील लेश्यावाले जीवोंमें तीर्थङ्करका अवक्तत्र्य पद नहीं है। पीत लेश्यावाले जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोका स्वामी कोन है? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। शेष प्रकृतियोंके पदोंका स्वामित्व आयसे साथ लेना चाहिए। इसीप्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए। वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंका स्वामी कोन है? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। शेषके प्रकृतियोंके पदोंका स्वामी है। असंज्ञी जीवोंमें ध्रुव प्रकृतियोंके तीन पदोंका स्वामी कोन है? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। शेष प्रकृतियोंके पदोंका स्वामित्व समाम हुआ। १

कालानुगम

७५०. कालानुगमकी अपना निर्देश दो प्रकारका ह-आघ आर आदेश। श्रोधसे पॉच

णी०-मिच्छ० सोलसक०-णवणोक० तिरिक्खग०-पंचिदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-छस्संठा०ओरालि०अंगो० छस्संघ० वण्ण०४—अगु०४—तिरिक्खाणु० उज्जो०—दोविहा०—तस बादरपज्जत-अपज्जत्त-पत्तेय० थिरादिछयुगल णिमि०-णीचा०-पंचंत० श्रुज० केवचिरं कालादो
होदि? जह० एग०, उक० चत्तारि समया। अप्पद०केव०? जह० एग०, उक० तिण्णि सम०।
अवद्वि० जह० एग, उक० अंतो०। अवत्त० जह० एग०, उक० एग०। चदुण्णं आयुगाणं अवत्तव्व० जह० उक० एग०। अप्पद० जह० उक० अंतो०। वेउव्वियछ०-आहारदुग-तित्थय० श्रुज०-अप्पद० जह० एग०, उक० वेसम०। अवद्वि० जह० एग०, उक०
अंतो०। अवत्त० जहण्ण० एगस०। मणुसग०-मणुसाणु० उचा० श्रुज० जह० एग०,
उक० चत्तारि सम०। अप्पद० जह० एग०, उक० वेसम०। अवद्वि० जह० एग०,
उक० अंतो०। अवत्त० जह० उक० एग०। एइंदिय आदाव थावर सुहुम-साधार० श्रुज०
जह० एग०, उक० वेसम०।अप्पद० जह० एग०, उक० तिण्णिसम०। अवत्त०-अवद्वि०
देवगदिभंगो। बीइंदि०-तीइंदि०-चदुरिं० श्रुज०-अप्पद० जह० एग०, उक० तिण्णि
सम०। अवद्वि०-अवत्त० देवगदिभंगो। सेसाणं पगदीणं श्रुज० जह० एग०, उक०

ज्ञानावरण, नो दुरानावरण, दो बंदुनीय, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, नो नोकपाय, तिर्यंचगात, पञ्चे-न्द्रियजाति, स्रोदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, छह संस्थान, स्रोदारिक स्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, वर्णचतुष्क, ऋगुरुलघुचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपृवीं, उद्यात, दा विहायागित, त्रस, वादर, पर्याप्त ऋषर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर ऋादि छह युगल, निर्माण, नीचगात्र ऋार पाँच अन्तराय इनके भुजगार-बन्धका कितना काल है ? जघन्यकाल एक समय है श्रीर उत्कृष्टकाल चार समय है। श्रन्पतरवन्धका कितना काल है ? जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थितपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल अन्तर्भुहर्त है। अवक्तव्यपदका जघन्यकाल एक समय है श्रीर उरकृष्टकाल एक समय है। चार आयुत्रोंके श्रवक्तव्यपदका जधन्य श्रीर उरकृष्टकाल एक समय है। ग्रह्मतरपदका जघन्य और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहर्त है। वैिक्रियक छह, ग्राहारकद्विक और तीर्थ-इरके भुजगार और श्रन्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उरकृष्टकाल दो समय है। अब-स्थितपदका जवन्यकाल एक समय है त्रीर उत्कृष्टकाल अन्तर्मृहर्त है। अवक्तव्यपदका जवन्य स्रोर उत्क्रप्रकाल एक समय है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगात्रक भुजगारपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल चार समय है। अल्पतर पदका जधन्यकाल एक समय है और उत्कृष्ट-काल दो समय है। अवस्थितपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहर्त है। अव-क्तव्यपदका जघन्य श्रीर उत्कृष्टकाल एक समय है। एकेन्द्रियजाति, त्रातप, स्थावर, सुद्दम श्रीर साधारणके भूजगारपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अल्पनरपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्ट ठाल तीन समय है। अवक्तव्य अौर अवस्थित पद्का भङ्ग देवगतिके समान है। द्वीन्द्रियजाति, त्रीन्द्रियजा त त्र्यौर चतुरिन्द्रियजातिके भुजगार त्र्रौर ऋल्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थित और अवक्तव्यपदका भुद्ध देवगतिके समान है। शेष प्रकृतियोंके भुजगारपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल चार समय है। ग्रह्पतरपदका जयन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल नीन समय है। अवस्थित पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल अन्तमुहूर्त है। अवक्तव्यपदका जघन्य और उत्कृष्ट

अंतो०। अवत्त० जहण्णु० एगस०। एवं ओघभंगो कायजोगि-कोघादि०४-मदि०-सुद्०-असंज०-अचक्खुदं०-तिण्णिले०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छादि०।

७२१. णिरएसु धुविगाणं भुज० अप्प० जह० एग०, उक्क० बेसम०। अवड्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। एवं सेसाणं पि। णवरि अवत्तव्त्रगो यस्स अत्थितस्स एय-समयं। एवं सव्वणिरयोणं।

७२२. तिरिक्खेसु ओघो। णवरि धुविगाणं अवत्तव्वं णित्थ। मणुसग०-मणुसाणु०उच्चा० देवगदिभंगो। पंचि दयतिरिक्खेसु मणुसग०-चदुजादि-मणुसाणु०-थावर-आदावसुहुम-साधार०-उच्चा० देवगदिभंगो। सेसाणं भुजा -अप्पद० जह० एग०, उक्क० तिण्णि
सम०। सेसं ओघं। पंचिदियपज्जत्त-जोणिणीसु एवं चेव। णवरि अपज्जत्तणाम देवगदिभंगो। पंचिदिय०अपज्ज० धुविगाणं भुज०-अप्पद० जह० एग०, उक्क० तिण्णिः
सम०। अवडि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। सादासाद०-पंचणोक०-तिरिक्खग०पंचिदि०-हुंडसं०-ओरालि०अंगो०-असंप०-तिरिक्खाणु०-तस०-बादर-अपज्ज०-पत्ते०-अथिरादिपंच-णीचा० भुज०-अप्पद० जह० एग०, उक्क० तिण्णि सम०। अवडि० ओघं।
सेसं णिरयभंगो।

काल एक समय है। इसीप्रकार ऋोघके समान काययोगी, क्रोधादि चार कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, ऋसंयन, अचलुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, ऋभव्य ऋोर मिण्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिये।

७२१. नारिकयों में घु ववन्धवाली प्रकृतियों के मुजगार और अन्पनरपदका जघन्यकाल एक समय है और उन्कृष्टकाल दो समय है। अवस्थितपदका जघन्यकाल एक समय है और उन्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार शेप प्रकृतियों के पदोंका काल जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि जिस प्रकृतिका अवक्तव्यपद है उसका जघन्य और उन्कृष्टकाल एक समय है। इसीप्रकार सब नारिक्यों के जानना चाहिये।

७२२. तिर्यक्कोंमें ओघके समान काल है। इतनी विशेषता है कि ध्र ववन्धवाली प्रकृतियोंका अवक्त्यपद नहीं हैं। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यान्द्रपूर्वी और उचगोत्रका भक्क देवगतिके समान है। पक्कोन्द्रिय तिर्यक्कोंमें मनुष्यगति, चार जाति, मनुष्यगत्यनुपूर्वी, स्थावर, आतप, सृद्धम, साधारण और उचगोत्रका भक्क देवगतिके समान है। शेष प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतरपदका जघन्य काल एक मय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। शेप भक्क ओघके समान है। पक्कोन्द्रिय पर्याप्त तिर्यक्क और योनिनी जीवोंमें इसीप्रकार जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनमें अपर्याप्त नामका भक्क देवगतिके समान है। पक्कोन्द्रिय निर्यक्क अपर्याप्तकोंमें ध्रु ववन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतरपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थित पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्टकाल अन्तमुहूर्त है। सातावेदनीय, असातावेदनीय पाँच नोकपाय, तिर्यक्कागति, पक्कोन्द्रयजाति; हुण्डसंस्थान, आंदारिक आङ्कोपाङ्क, असम्प्राप्तासृपाटिका मंहनन, तिर्यक्कागत्यानुपूर्वी, त्रस, वादर, अपर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आहि पाँच और नीचगोत्रके भुजागार और अस्पतरपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थितपदका काल ओघके समान है। शेप भङ्क नरिकयोंके समान है।

- ७२३. मणुसा०३ सन्वाणं भुज०-अप्प० जह० एग०,उक्क०बेसम०। अवहि०-अवसन्वं ओघं। एवं मणुसभंगो पंचमण०-पंचवचि०-ओरालि०-वेउन्वि०-वेउन्वियमि०-आहार०-आहारमि० विभंग०-आभि० सुद०-ओधि०-मणपज्ज०-संजदःसामाइ०-क्वेदो०-पिरहार०-संजदासंजद-ओधिदं०-तेउ०-पम्म०-सुक्तले०-सम्मादि०-खइग०-वेदगस०-उनसम०-सासण०-सम्मामि स्मिण ति । मणुसअपज्ज० णेरङ्गभंगो । एवं देवाणं एइंदिय-विगिलिंदिय-पंचकायाणं च ।
- ७२४. पंचिदिय०२ चतुआयु० ओघं। वेउन्वियछक-आहारदुग-तित्थय०-चतुजादिआदाव-थावर सुहुम-साधार० भुज० अप्पद० जह० एग०, उक्क० वेसम०। अविद्व०-अवत्तव्वं
  ओघं। सेसाणं भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। अविद्व०-अवत्त० ओघं।
  मणुसग०-मणुसाणु० उच्चा० भुज० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। अप्पद० जह०
  एग०, उक्क० वेसम०। अविद्व०-अवत्त० ओघं। पज्जत्त०-अपज्जत्तणामाणं देवगदिभंगो।
  पंचिदियअपज्ज० तिरिक्खअपज्जतभंगो। णविर मणुसग०-मणुसाणु० भुज० जह० एग०,
  उक्क० तिण्णिसम०। अप्पद० जह० एग०, उक्क० वेसम०। अविद्व०-अवत्त० ओघं।
- उन्३. मनुष्यित्रकमें सब प्रकृतियों के भुजगार और अरूपतरपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अवस्थित और अवक्तव्यपदका भङ्ग ओघके समान है। इसीप्रकार मनुष्यों के समान पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, ओदारिक काययोगी, वैक्रियिकयोगी, वैक्रियिक मिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, विभङ्गज्ञानी आभिनिवोधिकज्ञानी, श्रुत-ज्ञानी अविध्वानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविद्युद्धिसंयत, संयतामंयत, अवधिदर्शनी, पीतलेदयावाले, पद्मलेदयावाले, युक्तलेदयावाले, सम्यग्दिष्ट, चायिकसम्यग्दिष्ट, वेदकसम्यग्दिष्ट, उपशम सम्यग्दिष्ट; सासादनसम्यग्दिष्ट, सम्यग्निश्यादिष्ट और संज्ञी जीवोंक जानना चाहिये। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें नारिकयोंक समान भङ्ग है। इसीप्रकार देव, एकेन्द्रिय, विकलेग्द्रिय और पाँच स्थारकायिक जीवोंक जानना चाहिये।
- ७२४. पंद्रोन्द्रियद्विकमं चार आयुत्रोंका भङ्ग श्रोघकं समान है। वैक्रियिक छह, अहारकद्विक, तीर्थङ्कर, चार जाति, आतप, स्थावर, सूहम और साधारणके मुजगार और अल्पतर पदका
  जघन्यकाल एक समय हे और उत्कृष्टकाल दो समय है। अवस्थित और अवक्तव्य पदका काल
  श्रोघके समान है। शेष प्रकृतियोंके मुजगार और अल्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और
  उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थित और अवक्तव्य पदका भङ्ग श्रोघके समान है। मनुष्यगति,
  मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रके मुजगारपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय
  है। अल्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अवस्थित और
  अवक्तव्य पदका भङ्ग श्रोघके समान है। पर्याप्त श्रोर अपर्याप्त नामका भङ्ग देवगतिके समान है।
  पद्मिन्द्रिय अर्थाप्तकोंमें तिर्थेक्च अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगति और
  मनुष्यगत्यानुपूर्वीके मुजकार पदका जघन्य काल एक समय है और उक्ष्यकाल तीन समय है।
  अल्पतरपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है। अवस्थित और अवक्वव्य
  पदका भङ्ग स्रोघके समान हैं।

७२५. तस-तसपन्जत्त ० वेउन्वियछक्-एइंदि०-आहारदुग-आदाव-थावर-सुहुम-साधार-तित्थय० भुज०-अप्पद० जह० एग०, उक्क० वेसम०। अवट्ठि०-अवत्त० ओघं। बेइंदि० भुज० जह० एग०, उक्क० वेसम०। अप्पद० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। अवट्ठि० अवत्त० सेसाणं ओघं। पज्जत्ताणं अपज्जत्तणामाणं च देवगदिभंगो।

७२६. तसअपज्ज० धुविगाणं भ्रज० जह० एग०, उक्क० चत्तारिसम०। अप्पद० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। अविद्वि० ओघं। दोवेदणीय०-पंचणोक०-तिरिक्खग०-पंचिंदि०-हुंडसं० ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-तिरिक्खाणु०-तसन्बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-अथि-रादिपंच-णीचा० भ्रज० जह० एग०, उक्क० चत्तारिसम०। अप्पद० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। अविद्वि०-अवत्त० ओघं। मणुसग०-मणुसाणु० भ्रज० जह० एग०, उक्क० चत्तारिसम०। अप्पद० जह० एग०, उक्क० वेसम०। [अविद्वि०-अवत्त०] तिण्णिविगलिंदि०-तसणामाणं च ओघं। णवरि वेइंदि० भ्रज० वेसम०। सेसाणं भ्रज०-अप्प० जह० एग०, उक्क०-वेसम०। अविद्व०-अवत्त० आघं।

७२७. ओरालियमि० मणुसग० मणुसाणु० उच्चा० भ्रुज० अप्पद्० जह० एग०,उक्क० तिष्णिसम० बेसम० । अवद्धि० अवत्त० ओघं। देवगदि०४ –तित्थय० भ्रुज० – अप्पद०

७२५. त्रस अंदि त्रम पर्याप्त जीवामे वैकियिक छह, एकेन्द्रियजाति, आहारकाहक, आतप, स्थावर, मृह्म, नाधारण और तीथङ्कर प्रकृतिक मुजगार और अन्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अवस्थित और अवक्रव्य पदका भन्न आधिक समान है। हीन्द्रिय जातिक मुजगार पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अन्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थित और अवक्रव्य पदका तथा औप प्रकृतियोंका भन्न आधिक समान है। पर्याप्त और अपर्याप्तका भन्न देवगतिक समान है।

उरह. त्रस अपर्याप्तकों में घुववन्धवाली प्रकृतियों के मुजगार पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल वार समय है। अल्पनर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थित पदका भङ्ग खोघके समान है। दो वेदनीय, पांच नोकपाय, तिर्येख्वगित, पद्मेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, खोदारिक आङ्गोपाङ्ग, असस्प्राप्ताप्तास्प्राटिकासंहनन, तिर्थेख्वगत्यानुपूर्वी, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पांच और नीचगोत्रके भुजगार पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल चार समय है। अल्पनर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल चार समय है। अल्पनर पदका जघन्यकाल एक समय है और अल्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थित और अवक्तव्यपदकाभङ्ग खोघके समान है। मनुष्यगित और मनुष्यगत्यानुपूर्वीं भुजगार पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अवस्थित और अवक्तव्यपदका निक्रो जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। इननी विशोपता है कि हीन्द्रिय जातिक भुजगार पदका उत्कृष्टकाल दो समय है। अपिय क्रियेन और अन्यतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अपिय अल्पनर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अपिय अल्पनर और अवक्तव्य पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अपिय अल्पनर और अवक्तव्य पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अपिय अल्पनर और अवक्तव्य पदका अक्त ज्ञाघक समान है।

७२७. औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमे मनुष्यर्गात, मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रीर उच्चगोत्रके भुजगार श्रीर श्रत्पतरपद का जघन्यकाल एक समय है श्रीर उक्ष्मध्काल क्रममें तीन समय श्रीर दो समय है। अवस्थित और श्रवक्तव्य पदका भङ्ग श्रीष्ठके समान है। देवगति चार और तीर्थ- जह ० एग ०, उक्क ०, बेसम ० । सेसाणं ओघं । णवरि जेसिं चत्तारि समयं तेसिं तिण्णि समयं। ७२८. कम्मइ० धुविगाणं थावरपगरीणं च अविद्वि० जह० एग०, उक्क० तिण्णि सम० । अवत्त० [जहण्णु०] एगस० । सेसाणं अविद्वि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । अवत्त० जहण्णु० एग० । देवगदिपंचग० अविद्वि० जह० एग०. उक्क० बेसम० ।

७२६. इत्थिवेदे पंचणा अचदुदंस ०-चदुसंज ० पंचंतरा ० पंचिदियतिरिक्सभंगो । पंच-दंस ०-दोवेदणी ०-मिच्छ ० — बारसक ०-इत्थिवे० — हस्स-रिद-अरिद-सोग-भय — दुगुं० -तिरिक्स ग०-पंचिदि० - ओरालि० - तेजा० क० — छस्संठाणं — ओरालि० अंगो० - छस्संघ० - वणण० ४ -तिरिक्स णण० - अगु० ४ — उज्जो०दोविहा० - तस० ४ — थिरादिछ युगल - णिमि० - णीचा० भुज० - अपण० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम० । अबिहु० - अवत्त० ओघं । मणुसग० - मणुसाणु० - उच्चा० भुज० जह० एग०, उक्क० तिण्णिस० । अप्प० - अबिहु० - अवत्त० ओघं । सेसाणं भुज० अपण० जह० एग०, उक्क० तिण्णिस० । अपण० - अविहु० - अवत्त० ओघं । प्रित्सवेदे सो चेव भंगो । णविर पुरिस०दोपदा जह० एग०, उक्क० तिण्णिस० । अबिहु० - अवत्त० ओघं । णवुंसगे ओघं । णविर हित्थ० - पुरिस० देवगदिमंगो । अवगदवे० सन्त्रपगदीणं भुज० - अपण० क्कर प्रकृतिके भुजगार और अल्पतर पदका जधन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है । शेप प्रकृतियों के पदों का काल आपके समान है । इतनी विशेषता है कि जिनका आघसे चार समय काल है उनका काल यहाँ तीन समय है ।

७२८. कार्मणकाययोगी जीवोंमें ध्रुव और स्थावर प्रकृतियोंके अवस्थित पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है। शेप प्रकृतियों हे अवस्थित पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है। देवगतिपञ्चकके अवस्थित पदका जघन्यकाल एक समय है।

७२६. स्त्रीवरी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार मंज्वलन और पाँच अन्तरायका भङ्ग पर्छ्वन्द्रिय तिथळ्वांक समान है। पाँच दर्शनावरण, दो वदनीय, मिण्याख, बारह कषाय, स्त्रांवर, हास्य, रित, अरित, शांक, भय, जुगुएसा, नियंक्रगति, पळ्ठोन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, छह संस्थान, घोदारि आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, वर्णचतुष्क, नियंक्रगत्यानुपूर्वी, अगुरुलपुचतुष्क, उद्योत, दो विहायोगिति, असचतुष्क, स्थिर आदि छह युगल, निर्माण और नीचगात्रक मुजगार और अल्पनर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थित और अवक्तव्य पदका काल आघक समान है। मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगात्रक मुजगार पदका जवन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अल्पनर, अवस्थित और अवक्तव्य पदका काल आघक समान है। शेप प्रकृतियोंके मुजगार और अल्पनर, अवस्थित और अवक्तव्य पदका काल आघक समान है। इतनी विशेषता है कि पुरुपवेदके दा पदोंका जवन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थित और अवक्तव्य पदका काल आघक समान है। पुरुपवेदी जीवोमें यही भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि पुरुपवेदके दा पदोंका जवन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थित और अवक्तव्य पदका काल आघक समान है। नुपुंनकवेदी जीवोमें ओघक समान है। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद और पुरुपवेदका भङ्ग देवगितिके समान है। अपगतवेदी जीवोमें सब प्रकृतियोंक मुजगार, अल्पतर और अवक्तव्य पदका जावन्य आप उत्कृष्ट काल एक समय है। अवस्थित

#### अवस० एग० । अवद्वि० ओघं ।

- ७३०. सुहुमसंप० सन्वाणं भुज०-अप्प० एग०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। [चक्खुदं० तसपञ्जत्तभंगो।णवरि तेइंदि०-चदुरिं० भुज० जह० एग० उक्क० वे०।]
- ७३१. असण्णीसु वेउन्त्रियछ०-मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० बेसम०। अवद्धि०-अवत्त०ओघं। सेसाणं भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। णवरि इत्थिवेदादिपंचिदियसंजुत्ताणं पगदीणं उक्कस्सं अप्पदरं बेसमयं। अवद्धि०-अवत्त० ओघं। एइंदिय-आदाव-थावर-सुहुम-साधारणाणं ओघं।
- ७३२. आहारगेसु चदुआयु०-वेउव्वियञ्ज०-आहारदुग-तित्थय० ओघो। मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० भुज० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। अप्प० जह० एग०, उक्क० वेसम०। अवद्वि०-अवत्त० ओघं।एइंदिय-आदाव-थावर-सुहुम-साधारणं च ओघं। सेसाणं भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० तिण्णिस०। अवद्वि०-अवत्त० ओघं। अणाहार० कम्मइगभंगो। एवं कालं समत्तं।

## अंतराणुगमो

७३३. अंतराणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे० । ओघे० पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-पदका काल त्रोधक समान है।

७३०. सूद्रमसाम्परायिक जीवोंमें सब प्रकृतियोंके मुजगार श्रीर अल्पतर पदका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट काल एक समय है। श्रवस्थित पदका जघन्य काल एक समय है। श्रीर उत्कृष्ट काल श्रन्त- मुंहूर्त है। चन्नदर्शनवाले जीवोंमें त्रसपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि त्रीन्द्रिय श्रीर चतुरिन्द्रिय जातिक भुजगार पदका जघन्य काल एक समय है श्रीर उत्कृष्ट काल दो समय है।

७३१. श्रसंज्ञी जीवोंमें वैक्रियिक छह, मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रोर उच्चगोत्रके भुज-गार श्रोर अल्पतर पदका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल दो समय है। श्रवस्थित श्रोर श्रवक्तव्य पदका काल श्रांघके समान है। श्रेप प्रकृतियोंक भुजगार श्रोर श्रवपतर पदका जघन्य काल एक समय है श्रोर उत्कृष्ट काल तीन समय है। इतनी विशेपता है कि खीवेद श्रादि पश्चिन्द्रियसंयुक्त प्रकृतियोंके श्रवपतर पदका उत्कृष्ट काल दो समय है। अवस्थित श्रोर श्रवक्तव्य पदका काल श्रोधके समान है। एकेन्द्रियज्ञाति, श्रातप, स्थावर, सूदम श्रोर साधारणका भङ्ग श्रोघके समान है।

७३२. त्राहारक जीवोंमं चार त्रायु, वैक्रियिक छह, त्राहारकद्विक त्रांर तीर्थद्कर प्रकृतिका भज्ञ आंघके समान है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी त्रांर उच्चगात्रके भुजगार पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन समय है। त्राव्यक्त पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है। त्राविध्यत त्रार त्रावकत्व्य पदका काल त्रांचक समान है। एके-न्द्रियजाति, त्रातप, स्थावर, सूदम त्रीर साधारणका भङ्ग त्रांचक समान है। शेप प्रकृतियोंके भुजगार त्रीर त्रावकत्वर पदका जघन्य काल एक समय है त्रीर उत्कृष्ट काल तीन समय है। अवस्थित त्रीर त्रावक्तव्यपदका काल त्रीघके रूमान है। अनाहारक जीवोंमें कार्मणकाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है। इस प्रकार काल समाप्त हुत्रा।

अन्तरातुगमं ७३३. श्रम्तरानुगमकी श्रपेक्षा निर्देश दो प्रकारका हं—आंघ श्रोर ब्रादेश। आंघने पाँच भय-दुगुं - तेजा ० -क ० - वण्ण ० ४ -- अगु ० - उप ० - णिमि ० पंचंत ० स्वज ० अप्पद ० - अविह ० बंधं नरं केव ० १ जह ० एग ०, उक ० अंतो ० । अवत्त ० जह ० अंतो ०, उक ० अद्भोग्गल ० । थीणि गिद्धि ० ३ -- मिच्छ ० - अणंताणु बंधि ० ४ स्वज ० - अप ० - अविह ० जह ० एग ०, उक ० बेछाविह ० देस् ० । अवत्त ० जह ० अंतो ०, उक ० अद्भोग्गल ० । सादासाद ० -च दुणोक ० - थिराथिर-सुभासुभ-जस ० - अजस ० तिण्णिपदा जह ० एग ०, उक ० अंतो ० । अवत्त ० जह ० उंतो ० । अवत्त ० जह ० उंतो ० । अवत्त ० जह ० एग ०, उक ० वेछाविह ० देस ० । अवत्त ० जह ० अंतो ०, उक ० वेछाविह ० देस ० । पुरिस ० तिण्णिपदा ० णाणा ० भंगो । अवत्त ० जह ० अंतो ०, उक ० वेछाविह ० देस ० । पुरिस ० तिण्णिपदा ० णाणा ० भंगो । अवत्त ० जह ० अंतो ०, उक ० वेछाविह ० सादि २ । ण वंस ० पंचसंठा ० पंचसंघ ० - अप सत्थ ० -- दूभग - दुस्सर - अणादे ० तिण्णिपदा ० जह ० एग ०, उक ० वेछाविह ० सादि ० तिण्णि पिलदो ० देस ० । अवत्त ० जह ० अंतो ०, उक ० वेछाविह ० सादि ० तिण्णि पिलदो ० देस ० । तिणि आयु ० अवत्त ० अप्त ० जह ० अंतो ०, उक ० वेछाविह ० सादि ० तिण्णिपिलदो ० देस ० । तिणि आयु ० अवत्त ० अप्त ० जह ० अंतो ०, उक ० वेछाविह ० सावि ० तिण्णिपिलदो ० देस ० । तिणि आयु ० अवत्त ० अप्त ० जह ० अंतो ०, उक ० अणंतका ० । तिरिक्खायु ० अवत्त ० अप्त ० जह ० अंतो ०, उक ० अणंतका ० । विरिक्खायु ० जवत्त ० अप्त ० जह ० अंतो ०, उक ० अणंतका ० । विरिक्षायु ० जवत्त ० जह ० एग ०, अवत्त ० जह ० अंतो ०, उक ० अणंतका ० ।

ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार मंज्वलन, भय, जुगुप्सा, तेजस शरार, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुल्घु, उपघात, निर्माण ऋार पाँच अन्तरायकं भुजगार, ऋल्पतरऔर ऋवस्थितवन्धका अन्तर कितना है ? जघन्य अन्तर एक समय है त्र्यार उत्कृष्ट त्र्यन्तर त्र्यन्तर्मुहर्त है । त्र्यवक्तत्र्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहतं है और उत्कृष्ट अन्तर अर्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिण्यात्व श्रीर श्रनन्तानुबन्धी चारके भुजगार, श्रन्पतर श्रीर श्रवस्थित पदका जवन्य अन्तर एक समय है और उरकुष्ट अन्तर कुछ कम दो छ्वासठ सागरप्रमाण है। अवक्तव्य पड़का जवन्य अन्तर अन्तर्सुहूर्त हे और उत्कृष्ट अन्तर अर्धपुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, चार नोकपाय, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीति और अयशःकीतिके तीन पदोंका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहर्त है । अवक्तव्य पदका जवन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्महूर्त है। इसीप्रकार इन प्रकृतियोंका अनाहारक मार्गणातक यही भङ्ग है। आठ कपायोंके नीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है। और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। अवक्तव्यपदका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। स्त्रीवेदके तीन पदोका जघन्य अन्तर एक समय और उन्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छ्यासठ सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छुशासठ सागर है। पुरुपवेदके तीन पदोंका अन्तर ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तमुंहर्त है और उन्कृष्ट अन्तर साधिक दो छ्यासठसागर है। न्पुंसक्वंद, पाँच संस्थान,पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायागित, दुर्भग, दुःस्वर और अनादेयके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय हे ऋौर उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छ्यासठसागर ऋौर कुछ कम तीन पल्य है। ऋवक्तत्र्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहर्न है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासागर और कुछ कम तीन पर्यहै। तीन आयुओंके अवक्तव्य और अल्पतर पदका जवन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है । तिर्यक्रायुके अवक्तव्य ऋौर अल्पतर पदका जवन्य अन्तर ऋन्तर्मुहूर्त है और उस्कृष्ट ऋन्तर मी सागरपृथक्त हैं। वैक्रियिक छहके तीन पदोका जधन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका

तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु० तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० तेचिट्ठसागरोवमसद०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० असंखेजा लोगा। मणुसगदितिगं तिण्णिप० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० असंखेजा लोगा। चदुजादि-आदाव-थावरादि०४ तिण्णिप० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पंचसीदिसागरोवमसदं। पंचिदि०-पर०-उ०-तस०४ तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पंचासीदिसाग०सदं। ओरालि० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० तिण्णिपिलदो० सादि०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० अंतो०, उक्क० अंतो०, उक्क० अंतो०, उक्क० अंतो०, उक्क० अंतो०। समचदु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदेज० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० वेळाविट्ठ० सादि० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० तिण्णिपवा० तिरिक्खगदिभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेविट्ठसागरोवमसदं। णीचागो० तिण्णिपद० णवंसगभंगो। अवत्त० जह० उक्क० तिरिक्खगदिभंगो। तित्थय० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० उक्क० तिरिक्खगदिभंगो। तित्थय० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० अंतो, उक्क० तेविसं साग० सादि०।

जबन्य अन्तर अन्तमुहून हें श्रार उत्कृष्ट अन्तर सवका अनन्त काल है। तियेश्वगति श्रार तियञ्चगत्यानु-पूर्विक तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्क्रष्ट अन्तर एक सी त्रेसठ सागर है। ूँ अवक्तव्य पदका जघन्य त्रान्तर त्रान्तर्गुहूर्त है और उत्कृष्ट त्रान्तर त्रासंख्यात लाक है। मनुष्यगति-त्रिकके तीन पदोका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। चार जाति, आतप और स्थावर आदि चारके तीन पदींका जघन्य अन्तर एक समय है अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहून है और उत्कृष्ट अन्तर एक सी पचासी सागर है। पञ्चन्द्रिय जाति, परघान, उच्छास और त्रसचतुष्कके तीन पदोका जवन्य श्चन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहृत हैं। अवक्तव्य पदका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहृत हैं और उत्कृष्ट अन्तर एक सो पचासी सागर हैं। श्रीदारिक शरीरके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पत्य है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्सुहर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर अनन्त काल है। आहारक द्विकके तीन पदीका जघन्य अन्तर एक समय है, 'अवक्तत्र्य पदका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूत है और उत्क्रष्ट अन्तर अर्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। समचतुरस्त्रसंस्थान, प्रशस्त विहायोगीत, सुभग, सुस्वर श्रोर आदेयके तीन पदोका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जयन्य अन्तर अन्तर्मुहर्त है और उरुष्ट श्रन्तर साधिक दो छ्यासठ सागर श्रोर कुछ कम तीन पत्य है। श्रोदारिक आङ्गोपाङ्ग और वर्ऋपभनाराच सहननके तीन पदाका जघन्य अन्तर एक समय हे और उत्क्रष्ट अन्तर साधिक तीन पत्य है । त्रवक्तरुय पदका जघन्य त्रान्तर त्रान्तमुंहूर्त है और उत्कृष्ट त्रान्तर साधिक तेतीम सागर हैं। उद्योतके तीन पदोंका ऋन्तर तिर्यऋगतिके समान है। अवक्तव्य पदका जवन्य ऋन्तर ऋन्त-र्मुहुर्त है खोर उत्कृष्ट अन्तर एक सौ त्रेसठ सागर है। नीचगोत्रके तीन पदोंका भङ्ग नपसकवेदके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर तिर्यञ्जगतिक समान है। तीर्थद्वर प्रकृतिक तीन पदोका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहर्त है। अयक्तव्य पदका जघन्य चन्तर चन्तर्मुहूर्त हे त्रोर उत्कृष्ट चन्तर साधिक तेतीस सागर है।

७३४. णिरएस धुविगाणं भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अविष्ठ० जह० एग०, उक्क० वेसम०। पुरिस०-समचदु०-वज्जिरस० पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदेज्ज० विणिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं साग० देस्व०। धुत्रभंगो तित्थयरं। णविर अवत्तव्वं णित्थ अंतरं। सेसाणं पि पगदीणं तिण्णि पदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतोग्र०, उक्क० तेत्तीसं साग० देस्व०। दोत्रायु० दो पदा० जह० अंतो०, उक्क० छम्मासं देस्वणं। एवं सत्तम। ए। सेसाणं पि तं चेव पुढवि०। णविर मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० पुरिसवेदेण समं कादव्वं।

७३५. तिरिक्खेसु धुविगाणं भुज० अप्प० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवहि० जह० एग०, उक्क० चत्तारिसम०। थीणगिद्धि०३—मिच्छ० अणंताणुबंधि०४ तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० तिण्णिपलिदो० देस्व०। अवत्तव्वं श्रोघं। अपचक्खाणा०४- तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० पुन्वकोडी० देस्व०। अवत्त० ओघं। इत्थिवे० तिण्णिपदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णिपलिदो० देस्व०। णवुंस०- तिरिक्खग०-चदुजादि-ओरालि०-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-तिरिक्खाणु०-आदा- उज्जो०-अप्पसत्थ० थावरादि०४—दूभग-दुस्सर-अणादे०-णीचा० तिण्णिपदा० जह० एग०,

७३४. नारिकयों में घुववन्धवाली प्रकृतियों के मुजगार और अल्पतर पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। पुरुपवेद, समचतुरस्रसंस्थान, वर्अपभनाराचसंहनन, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर और आदेयक तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। तीर्थक्कर प्रकृतिका भक्ष धुववन्धवाली प्रकृतियों समान है। इतनी विशेषता है कि इसके अवक्तव्य पदका अन्तर नहीं है। शेष प्रकृतियों के भी तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। दो आयुओं के दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम छह महीना है। इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए। शेष पृथिवियोंमें भी यही भक्ष है। इतनी विशेषता है कि इनमें मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगात्रके पदोंका अन्तर पुरुपवेदके साथ कहना चाहिए।

७३५. तिर्यक्कोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंक भुजगार और अल्पतर पदका जघन्य अन्तर एक समय हें और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय हें और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर समय हैं। सत्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय हैं। स्रोत उत्कृष्ट अन्तर कुछ, कम तीन पत्य हैं। अवक्तव्य पदका भङ्ग श्रांघके समान है। अप्रत्याख्यानावरण चारके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय हैं और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकाटि हैं। अवक्तव्य पदका अन्तर आंघके समान है। खीवेदके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय हैं, अवक्तव्य पदका अन्तर अंघके समान है। खीवेदके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सबका कुछ कम तीन पत्य है। नपुंसकवेद, तिर्यक्रगिति, चार जाति, श्रोदाारक शरीर, पाँच संस्थान, श्रोदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, तिर्यक्रगत्यानुपूर्वी, आतप, उद्यात, अप्रशस्त विहायोगिति, स्थावर आदि चार, दुर्भग,दुःस्वर, अनादेय श्रोर नीच गोत्रके तीन पदोंका जवन्य अन्तर एक समय

अवत्त जह अंतो , उक्क पुन्वकोडी देस् । णविर तिरिक्खगिद-तिरिक्खाणु अगेरालि - णीचा अवत्त ओघं । पुरिस - समचदु - पंचिदि - परघा - उस्सा - पसत्थ - तस ०४ - सुभग-सुरसर-आदे । तिण्णिपदा जह एग ।, उक्क अंतो । अवत्त जह अंतो । अवत्त जह अंतो । अवत्त जह अंतो । उक्क अंतो । उक्क अंतो । उक्क विण्णिपलिदो । तिण्णि आयुगाणं दो पदा । जह अंतो । उक्क पुष्वकोडि तिभागं देस्णं । तिरिक्खायु । दो पदा । जह अंतो । उक्क पुष्वकोडि तिभागं देस्णं । तिरिक्खायु । दो पदा । जह अंतो । उक्क पुष्वकोडी सादिरे । वेउ विवय छक्कं मणुसग - मणुसाणु - उच्चा ओघं।

७३६. पंचिदियतिरिक्ख०३ धुविगाणं भुज०-अपण० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवद्वि० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० तिण्णिपिलदो० देख्व०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णपिलदो० पुन्नकोडिपुध०। अपचक्खाणा०४ तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० पुन्नकोडी देख्व०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुन्नकोडिपुध०। इत्थि० तिण्णिपदा० मिच्छ तमंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णिपिलदो० देख्व०। णवुंस०-तिण्णिगिदि-चदुजादि-ओरालि०-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-तिण्णिआणु०-आदाउज्जो० अप्प-

हैं, अवक्तव्य पदका जवन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है और उद्धृष्ट अन्तर सबका कुछ कम एक पूर्वकंदि हैं। इननी विशेषता है कि निर्यक्रगिति, निर्यक्रगत्यानुपूर्वी, औदारिक आङ्गोपाङ्ग और नीचगोत्रके अवक्तव्य पदका भङ्ग आपके समान है। पुरुपवेद, समचतुरस्रसंस्थान, पद्धन्त्रिय जाति, परघात, उच्छवास, प्रशस्त विहायोगिति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर और आदेयके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उद्धृष्ट अन्तर अन्तर्भुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त हैं और उद्धृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि हैं। इतनी विशेषता है कि पुरुपवेदके अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है और उद्धृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पत्य है। तीन आयुओं के दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है और उद्धृष्ट अन्तर एक पूर्वकोटिका कुछ कम तिभागप्रमाण है। तिर्यक्षायुके दो पदोंका जवन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है और उद्धृष्ट अन्तर एक पूर्वकोटिका कुछ कम सिभागप्रमाण है। तिर्यक्षायुके दो पदोंका जवन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है और उद्धृष्ट अन्तर साधिक एक पूर्वकोटि है। वैकियिक छह, मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उद्धृष्ट अन्तर साधिक एक पूर्वकोटि है।

७३६. पश्चेन्द्रियतिर्यञ्चित्रिकमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियों के भुजगार श्रोर अल्पतर पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उल्कृष्ट अन्तर अन्तर्भुहृत है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उल्कृष्ट अन्तर है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिण्यात्व श्रोर अनन्तानुन्धी चारके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उल्कृष्ट अन्तर हुछ कम तीन पत्य है। अवक्तत्र्य पदका जघन्य अन्तर श्रुव्त है और उल्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्तव श्रधिक तीन पत्य है। अप्रत्याच्यानावरण चारके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उल्कृष्ट अन्तर हुछ कम एक पूर्वकोटि है। अवक्तत्र्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर अन्तर मुर्वकोटि है। अवक्तत्र्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर अन्तर मुर्वकोटि पृथक्तव भ्रमाण है। स्त्रीवेदके तीन पदोंका भङ्ग मिण्यात्व के समान है। अवक्तत्र्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर भ्रमण है। स्त्रीवेदके तीन पदोंका भङ्ग मिण्यात्व के समान है। अवक्तत्र्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर भ्रमण है। स्त्रीवेदके तीन पदोंका भङ्ग मिण्यात्व के समान है। अवक्तत्र्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर भ्रार्थ, पाँच संस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, तीन श्रानुपूर्वी, श्रातप, उद्योत, श्रपशस्त विद्यागिति, स्थावर श्रादि चार, दुर्भग. दुःस्वर, श्रनादेय और नीचगोत्रके तीन पदोंका जघन्य

सत्थ०-थावरादि०४-दूभग-दुस्सर-अणादे०-णीचा० तिण्णिपदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुन्वकोडी देस्च० । पुरिस० तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देस्च० । चढुआयु० तिरिक्खोघं । देवगदि-पंचिदि०-वेउन्वि०-समचदु०-वेउन्वि०अंगो०-देवाणुपु०-परघा०-उस्सा० पसत्थ०-तस०४-सभग-सुस्सर-आदेज्ज०-उच्चा० तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुन्वकोडी देस्च० ।

७३७. पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तमे धुविगाणं दो पदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अविहु० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। सेसाणं तिण्णिपदा जह० एग०, उक्क० अंतो०, अवत्त० जह० उक्क० अंतो। दोआयु० दोपदा० जह० उक्क० अंतो०। एवं सन्वअप-ज्जत्ताणं एइंदिय-विगलिंदिय-पंचकायाणं च। णविर यो यम्स भुजगारकालो सो अविहु-दम्स अंतरं होदि। यो अविहुदकालो सो भुज०-अप्पद० अंतरं होदि। आयुगाणं दोण्णं पदाणं पगिद्अंतरं कादव्वं। किंचि विसेसो।

७३८. मणुसेसु पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-भय-दुर्गु०-णामणव-पंचंत० तिण्णि-पदा० ओघं। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुन्त्रिकोडिपुध०। आहारदुर्ग तिण्णिपदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुन्त्रिकोडिपुधत्तं। तित्थय० तिण्णिपदा

अन्तर एक समय है, अवक्तत्र्य पदका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सबका कुछ कम एक पूर्वकोटि है। पुरुषवेदके तीन पदोंका जबन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तत्र्य पदका जबन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पन्य है। चार आयुओंका भङ्ग सामान्य तिर्यक्चोंक समान है। देवगति, पद्धन्त्रिय जाति, वैक्रियिक शारीर, समचतुरक्ष संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, देवगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, प्रशम्त विहायोगित, असचतुरक, सुभग, सुम्बर, आदेय और उच्चोत्रके तीन पद्देका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तत्र्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तत्र्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

७३७. पश्चेन्द्रिय तिर्यश्च अपर्याप्तकों भे ध्रुववन्धवाली प्रकृतियों के दो पदोका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है। शेप प्रकृतियों के तीन पदोंका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है। शेप प्रकृतियों के तीन पदोंका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहूर्त हैं। अवक्तत्र्य पदका जधन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहूर्त है। दो आयुओं के दो पदोंका जधन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहूर्त है। दो आयुओं के दो पदोंका जधन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहूर्त है। दो अवक्तत्रय और पाँच स्थावरकायिक जीवों के जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जो जिसका भुजगारबन्धका काल है वह उसके अवस्थितबन्धका अन्तरकाल होना है नथा जो अवस्थितबन्धका काल है वह भुजगार और अन्यतरवन्धका अन्तर काल होता है। तथा आयुओं के दोनों पदोंका भुकृतिबन्धके अन्तरके समान अन्तर करना चाहिए। कुठ विशेषता है।

७३८. मनुष्योंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुष्सा, नामकी नी प्रकृतियाँ स्रोर पाँच श्रन्तरायके तीन पदोंका भङ्ग स्राघके समान है। स्रवक्तव्य पदका जघन्य स्रन्तर स्रन्तर्भहर्त हैं और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिष्ट्रथक्त्वप्रमाण है। स्राहारकद्विकके तीन पदोंका णाणावरणमंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुन्वकोडी देख्र० । सेसाणं पंचिदिय-तिरिक्खभंगो । मणुसायु० तिरिक्खायुभंगो ।

७३६. देवेसु ध्रविगाणं णिरयभंगो। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४इत्थि०-णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ० दूभग-दुस्सर-अणादे०-णीचा० चदुण्णं
पदाणं जह० एग०, उक्क० एकत्तीसं० देस्व०। णवरि अवत्त० जह० अंतो०। पुरिस०समचदु०-वज्जरिस० पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदेज्ज०-उच्चा० तिण्णिपदा सादभंगो। अवतच्वं इत्थिवेदभंगो। दोआयु० णिरयभंगो। तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जो० तिण्णिपदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, चदुण्णं पि अट्ठारस साग० सादि०। मणुसग०-मणुसाणु०-तिण्णिपदा सादभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० अट्ठारस सा०
सादि०। एइंदिय-आदाव थावर० तिण्णिपदा० जह० एगस०, अवत्त० जह० अंतो०.
उक्क० वेसागरोव० साद०। पंचिदि०-ओरालि०अंगो०-तस० तिण्णिपदा० सादमंगो।
अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० वेसाग० सादि०। तित्थय० णाणावरणभंगो। एदेण
कमेण सच्चदेवाणं अंतरं काद्व्यं।

७४०. पंचिदिय-पंचिदियपञ्जता० तस०-तसपञ्जता० पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-भय-दुगुं०-तेजइगादिणवणाम०-पंचंतराइ० तिण्णिप० ओघं। अवत्त० जह० अंता०, जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सबका पूर्वकोटिष्ट्रथक्त्वप्रमाण है। तीर्थद्वर प्रकृतिके तीन पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चोन्द्रय निर्यञ्चोंक समान है। मनुष्यायुका भङ्ग तिर्यञ्चायुके समान है।

७३६. देवोंमे ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग नारिकयोंके समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिश्यात्व, श्रनतानुवन्धी चार, स्रविद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, श्रप्रशस्त विहायांगित, दुर्भग, दुःस्वर, श्रनादेय श्रोर नीचगांत्रके चार पदोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। इतनी विशेषता है कि श्रवक्तत्र्य पदका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर् हैं। पुरुपवेद, समचतुरस्त्रसंस्थान, वश्रपंभनाराचसंहनन, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर, आदेय श्रोर उच्चगांत्रके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तत्र्य पदका भङ्ग स्त्रविदेके समान है। दो श्रायुओंका भङ्ग नारिकयोंके समान है। तिर्यञ्चगित, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी श्रोर उचोतके तीन पदोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है, श्रवक्तत्यपदका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है श्रोर चारों पदोंका उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक श्रठारह सागर है। मनुष्यगित श्रोर मनुष्यगत्यानुपूर्वी के तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। श्रवक्तव्य पदका जघन्य श्रन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक श्रठारह सागर है। एकेन्द्रियजाति, श्रातप श्रोर स्थावरके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है, श्रवक्तव्य पदका जघन्य श्रन्तर एक समय है, श्रवक्तव्य पदका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक हा सागर है। पश्चेन्द्रियजाति, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग और त्रसके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। श्रवक्तव्य पदका जघन्य श्रन्तर अन्तर्मुहूर्त है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक दं। सागर है। तिर्थङ्कर प्रवक्तव्य पदका जघन्य श्रन्तर अन्तर्मुहूर्त है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक दं। सागर है। तीर्थङ्कर प्रवक्तिका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। इसी व्यस्ते सब देवोंमें श्रन्तर प्राप्त करना चाहिए।

७४०. पञ्चेन्द्रिय, पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस श्रोर त्रस पर्याप्त जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा, तेजस श्रादि नौ नामकर्म श्रोर पाँच श्रन्तरायके तीन पदोंका भङ्ग त्रोविक समान है। त्रवक्तव्य पदका जघन्य त्रान्तर त्रान्तर्महर्त है त्रीर उक्तष्ट त्रान्तर अपनी स्थिति प्रमाण है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारके तीन पदोंका भङ्ग श्रोघके समान है। अवक्तज्य पदका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। इसी प्रकार स्त्रीवदके पदोंका श्चन्तरकाल जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसके श्रवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्सुहुर्त है और उक्कष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागर है। आठ कपायोंके तीन पदोंका अन्तर ओघके समान है। अवक्तत्र्य पदका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर, अनाद्य और नीचगात्रके तीन पदोंका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागर और कुछ कम तीन पहय है। अवक्तव्य पदका वही ऋन्तर हैं। इतनी विशेषता हैं कि जघन्य ऋन्तर अन्तर्मुहर्त हैं। पुरुषवेदके तीन पदों-का ज्ञानावरणके समान भङ्ग है। अवक्तव्य पदका भङ्ग त्रोघके समान है। तीन आयुत्रोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मृहर्त हैं और उत्कृष्ट अन्तर सी सागरपृथकत्व है। मनुष्यायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहर्न है और उत्कृष्ट अन्तर अपनी स्थिति प्रमाण है। पर्याप्तकोंमं चार आयुत्रों-के दो पदोंका जवन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त है त्रौर उत्कृष्ट त्रन्तर सौ सागरप्रथक्त्वप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि त्रसपर्याप्तकोंमें मनुष्यायुका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो हजार सागर है। नरकगित, नरकगत्यानुपूर्वी, चार जाति, त्यातप त्यार स्थावर त्यादि चारके तीन पदोंका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर एक सौ पचासी सागर है। अवक्तव्य पदका वही अन्तर है। इतनी विशेषता है कि इसका जवन्य अन्तर अन्तर्महर्त है। तिर्येख्नगति. तिर्यक्कगत्यानुपूर्वी त्र्योर उद्यानके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर एक सौ त्रेसठ सागर है। अवक्तव्य पदका वही अन्तर है। इतनी विशेषता है कि इसका जघन्य श्चन्तर अन्तर्मुहर्त है। मनुष्यगति, देवगति, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग और दो श्रानपूर्वीके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है त्योर उत्कृष्ट अन्तर साधिक तैतीस सागर है।

पर० उस्सा०-तस०४ तिण्णिपदा० णाणावरणभंगो । अवत्तव्वं ओघं । ओरालि०-ओरा-लि०अंगो० वज्जरिस० तिण्णिपदा० श्रोघं । श्रवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं साग० सादि० । आहारदुगं तिण्णिपदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० काय-द्विदी० । समचदु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदे० तिण्णिपदा० णाणावरणभंगो । अवत्त० ओघं । तित्थय० ओघं । उचा० तिण्णिपदा देवगदिभंगो । अवत्त० समचदु०भंगो ।

७४१. पंचमण०-पंचवचि० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ० सोलसक०-भय-दुगुं०तेजइगादिणव-आहारदुग-तित्थय०-पंचंत० भ्रुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० अंतो० ।
अवद्वि० जह० एग०, उक्क० वेसम० । अवत्त० णित्थ अंतरं । चदुआयु० दोपदा० णित्थ
अंतरं । सेसाणं पगदीणं तिष्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० णित्थ
अंतरं । एस भंगो ओरालि०-वेउच्चि०-आहार० । णविर ओरालिए ओरालि०-वेउच्चियछक्कं वज्ज परियत्तीणं अवत्त० जहण्णु० अंतो० । दोआयु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क०
पगदिअंतरं ।

७४२. कायजोगीसु पंचणा • -छदंसणा ० -चदुसंज ० भय-दुगुं ० -ते ज्रहगादिणव-वेउव्विय-

अवक्तन्य पदका वही अन्तर हैं। इननी विशेषता है कि इसका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। पश्चेन्द्रिय जाति, परघात, उन्द्वास और त्रसचतुष्किके तीन पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तन्य पदका भङ्ग श्रोघके समान है। श्रोदारिक शारीर, श्रोदारिक श्राङ्गापाङ्ग श्रोर वर्ज्र्षभ गाराच संहननके तीन पदोंका भङ्ग श्रोघके समान है। अवक्तन्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त हैं श्रोर उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। श्राहारकद्विकके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तन्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर अन्तर्मुहूर्त हैं श्रोर उत्कृष्ट अन्तर कायस्थिति प्रमाण है। समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विद्धायोगित, सुभग, सुस्वर श्रोर आदेयके तीन पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तन्य पदका भङ्ग श्रोघके समान है। तिर्थेङ्कर प्रकृतिया भङ्ग श्रोघके समान है। उच्चगोत्रकं तीन पदोंका भङ्ग देवगितके समान है। अवक्तन्य पदका भङ्ग समचतुरस्र संस्थानके समान है।

७४१. पाँच मनोयोगी और पाँच वचनयोगी जीवोंमं पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिण्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, तैजस शरीर आदि नो, आहारकद्विक, तीर्थङ्कर और पाँच अन्तरायके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। चार आयुओं के दो पदोंका अन्तरकाल नहीं है। शेप प्रकृतियों के तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। यही भङ्ग औदारिककाययोगी, वैक्रियिककाययोगी और आहारककाययोगी जीवों के जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि औदारिककाययोगी जीवों में औदारिक शरीर और वैक्रियिक छहको छोड़कर परिवर्तमान प्रकृतियों के अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। दो आयुओं के दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। दो आयुओं के दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । दो आयुओं के दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । दो आयुओं के दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर प्रकृतिबन्धके अन्तरके समान है।

७४२. काययोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा,

छक्कः ओरालि०-तित्थय०-पंचंत० तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० णित्थ अंतरं। थीणिगद्धि०३-मिच्छ०-बारसक०-आहारदुगं भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवद्धि० जह० एग०, उक्क० चत्तारिस०। णविर आहारदुग० अवद्धि० जह० एग०, उक्क० वेसम०। अवत्तव्व० णित्थ अंतरं। दोआयु० दोपदा० णित्थ अंतरं। तिरिक्खायु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० बाबीसं वाससहस्साणि सादि०। मणुसायु०-मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० ओघं। तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-णीचा० तिण्णिपदा साद-भंगो। अवत्तव्वं ओघं। दोवेदणी०-सत्तणोक०-पंचजादि-छस्संठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-पर०-उस्सा०-आदाउजो०-दोविहा०-तस-थावरादिदसयुगलं तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० उक्क० अंतो०।

७४३. ओरालियमि० धुविगाणं दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवड्ठि० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। दोआयु० अपजन्तभंगो। देवगदि०४-तित्थय० दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवड्ठि० जह० एग०, उक्क० वेसम०। सेसाणं तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० उक्क० अंतो०। णविर मिच्छत्तस्स अवत्त० णित्थ अंतरं। ७४४. वेडिव्वियमिस्सका० धुविगाणं दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवड्ठि०

नैजसशरीर श्रादि नी, वैकिथिकपट्क, श्रोदारिकशरीर, तीर्थक्कर श्रोर पाँच अन्तरायक नीन पदांका जवन्य श्रन्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहून है। अवक्तव्य पदका श्रन्तरकाल नहीं है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, बारह कपाय और श्राहारिद्धकंक भुजगार श्रोर श्रन्यतर पदका जवन्य श्रन्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तमुंहूर्त है। श्रवस्थित पदका जवन्य श्रन्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर चार समय है। इननी विशेषता है कि श्राहारकद्विकके श्रवस्थित पदका जवन्य अन्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर दो समय है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। दो श्रायुश्रोंके दो पदोंका अन्तरकाल नहीं है। तियंश्रायुक्त दो पदोंका जवन्य श्रन्तर अन्तर्मुहूर्त है श्रोर उत्कृष्ट अन्तर साधिक बाईस हजार वर्ष है। मनुष्यायु, मनुष्यगित्, मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रोर उत्कृष्ट अन्तर साधिक बाईस हजार वर्ष है। मनुष्यायु, मनुष्यगित्, मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रोर उत्कृष्ट अन्तर साधिक बाईस हजार वर्ष है। मनुष्यायु, मनुष्यगित्, मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रोर जिन्यांक समान है। श्रवक्तव्य पदका भक्न श्रोपके समान है। दो बदनीय, सात नोकषाय, पाँच जाति, छह संस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, परघात, उच्छ्वास, श्रातप, उद्यात, दो बिहायोगिति श्रोर त्रस-स्थावर दस युगलके तीन पदोंका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है।

७४३. औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय हे और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहृत है। अविस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है। दो आयुओंका भङ्ग अपर्याप्तकोंक समान है। देवगतिचतुष्क और तीर्थङ्कर प्रकृतिके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहृत है। अवस्थितपदका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। शेष प्रकृतियोंक तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। शेष प्रकृतियोंक तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहृत है। अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहृत है। अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहृत है। अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहृत है। इतनी विशेषता है कि मिध्यात्वक अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। अवक्रियक्तिकियकिमिश्रकाययोगी जीवोंम ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंक दो पदोंका जघन्य अन्तर

जह० एग०, उक्क० बेसम०। एवं तित्थय०। सेसाणं तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० उक्क० अंतो०। एवं आहारमि०। कम्मइग० सञ्चाणं अवट्ठि०-अवत्त० णित्थ अंतरं।

७४५. इत्थिवे० पंचणा० चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० दोपदा० जह० एग०, उक्क० त्रंतो० । अवद्वि० जह० एग०, उक्क० तिण्णि सम० । थीणगिद्धि०-मिच्छ०-अणंताणुबंधिध तिण्णि पदा० जह० एग०, उक्क० पणवण्णं पिलदो० देसू०। अवत्त० जह० ऋंतो०, उक्क० पलिदो० सदपुथत्तं०। णिहा-पयला-भय-दुर्ग्०-तेजइगादिणव तिण्णि पदा णाणावरणः भंगो । अवत्त ० णित्थ त्रांतरं । सादादिबारसण्णं ओघं । अहुक ० तिण्णि पदा ओघं । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पलिदोवमसदपुधत्तं०। इत्थि०-णवुंस०-तिरिक्खगदि-एइंदि०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-तिरिक्खाणु०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०- थावर-द्भग-दुस्सर-अणादे० णीचा० तिण्णि पदा० जह० एग०, उक्त० पणवण्णं पलिदो० देस्र०। एवं अवत्त० । णवरि जह० अंतो० । पुरिस० पंचिंदि० समचदु० पसत्थ० तस-सुभग सुस्सर-आदे०-उचा० तिण्णि पदा० जह० एग०, उक० श्रंतो०। अवत्त० जह० श्रंतो०, उक० पणवण्णं पलिदो० देस्र०। णिरयायु० दोपदा० जह० श्रंतो०, उक्क० पुन्वकोडितिभागं एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहर्त है। अवस्थित पदका जबन्य अन्तर एक समय है श्रोर उरकृष्ट अन्तर दो समय है। इसी प्रकार तीर्थङ्कर प्रकृतिके पदोंका श्रम्तरकाल जानना चाहिए। शेष प्रकृतियोंके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अब-कच्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहर्त हैं । इसी प्रकार श्राहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमे जानना चाहिये। कार्मणकाययांगी जीवोमें सब प्रकृतियोंके अविध्यत और अवक्तव्य पदका श्रन्तरकाल नहीं है ।

७४५. स्त्रीवदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संब्वलन और पाँच ऋन्तरायंक दो पदोंका जघन्य ऋन्तर एक समय है श्रीर उन्कृष्ट अन्तर ऋन्तर्मुहृतं है । ऋवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय हे और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्ता-नुबन्धी चारके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचवन पत्य है। प्रवक्तत्र्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहुर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सौ पल्यपृथक्त्व हैं। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा और तैजसशरीर ऋदि नो प्रकृतियोंके तीन पदोंका भन्न ज्ञानावरणके समान हैं । ऋवक्तव्य पदका ऋन्तरकाल नहीं है । साता वेदनीय ऋादि बारह प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोघके समान है। त्राठ कपायोंके तीन पदोंका भङ्ग त्र्योघके समान है। त्रयक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सी पल्यपृथक्त्व है। स्त्रीवेद, नपुंसक्वेद, तिर्यक्रानि, एकेन्द्रिय-जाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, निर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, त्र्यातप, उद्योत, त्रप्रप्रशस्त विहायागित, स्थावर, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और नीचगोत्रके तीन पदोंका जवन्य अन्तर एक समय है और उस्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचवन पल्य है। इसी प्रकार अवक्तत्र्य पदका अन्तरकाल है। इतनी विशे-षता है कि इसका जघन्य अन्तर श्रान्तर्भुहूर्त है । पुरुषवेद, पञ्चेन्द्रियज्ञाति, समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्त विहायोगित, त्रस, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्गोत्रके तीन पदोका जघन्य श्रन्तर एक समय है भौर उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त हैं। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर उछ कम पचवन पत्य है। नरकायुके दी पदीका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर देख् । तिरिक्खायु मणुसायु ० दोपदा ० जह ० अंतो ०, उक्क ० पिलदोत्रमसदपुधत्तं ० । देवायु ० दोपदा ० जह ० अंतो ०, उक्क ० अट्टावण्णं पिलदो ० पुच्च होडिपुधत्तणब्भिहि-याणि । वेउव्वियछ ० — तिण्णि जादि सुहुम-अपज्ञत्त — साधार ० तिण्णि पदा ० जह ० एग ०, उक्क ० पणवण्णं पिलदो ० सादिरे ० । एवं अवत्त ० । णविर जह ० अंतो ० । मणुसगिदिपंचग ० तिण्णि पदा ० जह ० एग ०, उक्क ० तिण्णि पिलदो ० देख् ० । अवत्त ० जह ० अंतो ०, उक्क ० पणवण्णं पिलदो ० देख ० । णविर ओरालि ० अवत्त ० जह ० अंतो ०, उक्क ० पणवण्णं पिलदो ० सादि ० । आहारदुग ० तिण्णिपदा ० जह ० एग ०, उक्क ० सगिहुदी ० । एवं अवत्त ० । णविर जह ० अंतो ० । पर ० - उस्सा ० - बादर - पज्जत्त पत्ते य ० तिण्णि पदा ० जह ० उक्क ० अंतो ० । अवत्त ० जह ० अंतो ० । अवत्व ० जह ० एग ०, उक्क ० वेसम ० । अवत्व ० जह ० एग ०, उक्क ० वेसम ० । अवत्व ० णित्थ श्रंतरं ।

७४६. पुरिसवे० अद्वारसण्णं इत्थिभंगो। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० बेछावद्वि० देख्क०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० सगद्विदी०। णिद्दा-पचला-भय-दुगुंछ-तेजइगादिणव तिण्णि पदा ओघं। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० कायद्विदी०। अद्वक० ओघं। णवरि अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० काय-

एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिभागप्रमाण है। निर्यक्षायु और मनुष्यायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त हैं और उत्कृष्ट अन्तर सो पह्यप्रथम्त्व प्रमाण है। देवायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त हैं और उत्कृष्ट अन्तर पृर्वकोटि पृथक्त्व अधिक अद्वावन पत्य है। वैक्रियिक छह, तीन जाति, सूद्म, अपयाप्त और साधारणंक तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय हैं और उत्कृष्ट अन्तर साधिक पचवन पत्य है। इसी प्रकार अवक्तव्य पदका अन्तरकाल है। इतनी विशेषता है कि उसका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। मनुष्यगानिपञ्चकके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक ममय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पत्य है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर कुछ कम पचवन पत्य है। इतनी विशेषता है कि औदारिक शरीरके अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर कुछ कम पचवन पत्य है। इतनी विशेषता है कि औदारिक शरीरके अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अपनी स्थित प्रमाण है। इसी प्रकार अवक्तव्य पदका अन्तरकाल है। इतनी विशेषता है कि इसका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। यशक्तव्य पदका अन्तरकाल है। इतनी विशेषता है कि इसका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। यशक्तव्य पदका अवन्तर अन्तर्मुहूर्त है आर उत्कृष्ट अन्तर साधिक पचवन पत्य है। तिर्थक्कर प्रकृतिके भुजगार और अल्पतर पत्का जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दे। समय है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है।

७४६. पुरुषवंदी जीवोंमं अठारह प्रकृतियोंका भङ्ग स्त्रविदी जीवोंक समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छ्यासठ सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अपनी स्थितिप्रमाण है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुष्सा और तैजस शरीर आदि नौ प्रकृतियोंके तीन पदोंका भङ्ग आघक समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट

द्विते । इत्थि ०-णवुं स० पंचसंठा० पंचसंघ०-श्रप्पसत्थ०-दृमग-दुस्सर-अणादे०-णीचा० पंचिदियपज्जत्तमंगो । पुरिस० तिण्णि पदा णाणावरणमंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० वेछाव द्वि० सादि० । समचदु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदे०-उच्चा० पुरिस०मंगो । णि'रय-तिरिक्ख-मणुसायूणं इत्थिमंगो । णवरि सागारोव०सदपुधत्तं० । देवायु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं सा० सादि० । णिरय तिरिक्खग०-चदुजादि-दोआणु०-आदा०-उज्जो०-थावरादि०४ तिण्णि पदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेवद्विसागरो०सदं। देवगदि०४-आहारदुगं पंचिदियपज्जत्तमंगो । मणुस०दुग०-ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिस० तिण्णि पदा० जह० एग०, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादि०। श्रवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं सा० सादि०। पंचिदि०-पर०-उस्सा० तस०४ तिण्णि पदा० तेजइगमंगो । अवत्त० णिरयगदिमंगो । तित्थय० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० श्रंतो० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडी देस्व०।

७४७. णवुंसमे धुविमाणं अद्वारसण्णं दो पदा० जह० एम०, उक्क० श्रंतो०। अवड्डि॰ जह॰ एग॰, उक्क॰ चत्तारि सम॰ । थीणगिद्धि॰३-मिच्छ॰-अणंताणुबंधि॰४-इत्थि णिवुं स-पंचसंठा०-पंचसंघ०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादे० तिण्णिपदा० श्चन्तर कायस्थितिप्रमाण है। त्राठ कपायोंका भङ्ग त्रांघक समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तज्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहृते है और उत्कृष्ट अन्तर कार्यास्थतिप्रमाण है। स्रावेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहतन, अप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुःस्वर, अना-देय त्रीर नीच गात्रका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंके समान है । पुरुपवेदके तीन पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवकतव्यपदका जघन्य अन्तर अन्तर्महर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छ्यासठ सागर है। समचतुरस्त्रसंस्थान, प्रशस्त विद्यांगति, सुभग, सुस्वर, त्रादेय त्रौर उचगोत्रका भङ्ग पुरुपवेदके समान हैं। नरकाय, तियञ्जाय त्रौर मनुष्यायुका भद्ग स्त्रीवदी जीवोके समान है। इतनी विशेषता है कि उत्कृष्ट अन्तर सी सागर पृथक्त्व प्रमाण है। देवायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। नरकगति, तिर्यञ्चगति, चार जाति, दो आनुपूर्वी, त्रातप, उद्योत श्रीर स्थावर श्रादि चारके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्महर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एकसौ त्रेसठ सागर है। देवगतिचतुष्क ऋार ऋाहारकद्विकका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंक समान है। मनुष्यगतिद्विक, श्रौदारिकशरीर, औदारिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रोर वज्रर्पभ नाराचसंहननके तीन पदोंका जयन्य श्रन्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक तीन पत्य है। श्रवक्तव्य पदका जवन्य श्रन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। पञ्चेन्द्रिय जाति, परघात, उच्छ्वास श्रीर त्रसचतुष्कके तीन पदोंका भङ्ग तैजस शरीरके समान है। अवक्तव्य पदका भङ्ग नरकगतिके समान है। तीर्थङ्कर प्रकृतिके तीन पदोंका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुब कम एक पूर्वकोटि है ।

७४७. नपुंसकवेदी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली अठारह प्रकृतियोंक दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उरकृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उरकृष्ट अन्तर चार समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व, अनन्तानुवन्बी चार, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संह्नन, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुःस्वर और अनादेयकं तीन

जह० एग०, उक्क० तेत्तीसं० देख०। एवं अवत्त०। णविर जह० अंतो०। णविर थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुवंधि०४ ओघं। पुरिस०-समचढु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर
आदे० तिण्णिपदा सादभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं देख०। णिदापचला-भय दुगुं०-तेजइगादिणव तिण्णिप० णाणावरणभंगो। अवत्तव्व० णित्थ अंतरं।
तिण्णिआयु०-वेउव्वियछ०-मणुस०३-आहारदुगं ओघं। देवायु०दो पदा० जह० अंतो०,
उक्क० पुव्वकोडितिभागं देख०। तिरिक्खगिद-तिरिक्खाणु०-णीचागो० तिण्णि पदा०
इत्थिभंगो। अवत्त० ओघं। चदुजादि-आदाव-थावरादि०४ तिण्णि पदा० जह० एग०,
उ० तेत्तीसं सा० सादि०। एवं अवत्त०। णविर जह० अंतो०। पंचिदि०-पर०-उस्सा०तस०४ तिण्णि पदा सादभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं सा० सादि०।
ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिस० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० पुव्वकोडी दे०।
ओरालि० अवत्त० ओघं। ओरालि० अंगो० अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं०
सादि०। वज्जरिस० अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं० देख०। तित्थय० तिण्णिप०
जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडितिभागं देख०।

पदोंका जवन्य अन्तर एक समय है और उन्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। उसी प्रकार श्रवक्तव्य पदका श्रन्तरकाल है। इतनी विशेषता है कि श्रवक्तव्य पदका जवन्य। श्रन्तर श्रन्त<u>र्म</u>हर्त है। इतनी और विशेषता है कि स्त्यानगृद्धि तीन, मिश्यात्व श्रांर श्रनन्तानुबन्धी चारका भङ्ग श्रोंघके समान है। पुरुपवेद, समचतुरहा संस्थान, प्रशस्त विहायागित, सुभग, सुस्वर और ऋदियके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पद्या जघन्य अन्तर अन्तर्मुहर्न है और उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम तेनीस सागर है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा ,श्रीर तेजस शरीर श्रादि, नौंक तीन पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तर्व्य पदका अन्तरकाल नहीं है। तीन आयु, वैक्रियिक छह, मनुष्यत्रिक और त्राहारकद्विकका भङ्ग त्रीयक समान है। देवायुक दो पदोंका जयन्य त्रान्तर अन्तर्महर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्वकांटिका कुछ कम त्रिभागप्रमाण है। निर्येख्यपति, तिर्येख्यगत्यान-पूर्वी और नीचगात्रके तीन पर्नेका भङ्ग स्विवेदके समान है। अवक्तव्य परका भङ्ग ओवके समान है। चार जाति. त्यातप त्यौर स्थावर त्यादि चारके तीन पदोंका जघन्य त्रान्तर एक समय है त्यौर उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। इसी प्रकार अवक्तव्य पदका अन्तरकाल है। इतनी विशेषता है कि इसका जधन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त है। पञ्चेन्द्रिय जाति, परधात, उच्छवास श्रीर त्रसचतुष्ककं तीन पदोंका भङ्ग सातावदनीयकं समान हैं। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मृहर्त हैं और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। श्रीदारिक शरीर, श्रीदारिक आङ्गोपाङ्ग श्रीर विश्वर्षभनाराच संहतनके तीन पर्होंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। ऋौदारिक शरीरके अवक्तव्य पदका अन्तर ओचके समान है। औदारिक आङ्गोपाङ्गके अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मृहर्त है ओर उरकृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। विश्वर्षभनाराच संहननके श्रवक्तव्य पदका जयन्य श्रन्तर अन्तर्मुहूर्त है श्रीर उन्द्रष्ट श्रन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। तीर्थं दूर प्रकृतिके तीन परोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्महुते है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त हैं और उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिभाग-प्रमाण है। ऋपगतवेदवाले जीवोंमें सब प्रकृतियोंके भुजगार श्रोर ऋल्पतर पदका जघन्य श्रीर अवगद्वे० सन्वाणं भ्रुज०-अप्प० जह० उक्क० श्रंतो०। अवद्वि० जह० एग०, उक्क० श्रंतो०। अवत्त० पत्थि अंतरं।

७४८. कोघे धुविगाणं अट्टारसण्हं दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्टि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम०। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-बारसक० दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्टि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम०। अवत्त० णित्थ अंतरं। णिद्दा-पचला-भय-दुगुं०-तेजइगादिणव-तित्थय०तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० णित्थ अंतरं। चदुआयु० दोपदा० णित्थ अंतरं। सेसाणं तिण्णि पदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० उक्क० अंतो०। एवं माणे। णविर धुवि-याणं सत्तारसण्णं। कोधसंज० णिद्दाए भंगो। एवं मायाए वि! णविर दोसंज० णिद्दाए भंगो। एवं चेव लोभे। णविर चत्तारि संज० णिद्दाए भंगो। आहारदुगं मणजोगिभंगो। सेसं कोधभंगो।

७४९. मदि०-सुद० धुविगाणं दो पदा जह० एग०, उक्क० श्रंतो०। अवद्वि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम०। सादासाद०-छण्णोक० ओघं सादभंगो। मिच्छ० णाणावरणभंगो। णवरि अवत्त० णित्थ अंतरं। णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्य०-

उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहर्त है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है।

७४८. क्रांधकपायवाले जीयोंमे ध्रुवदन्धवाली अठारह प्रकृतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहृत है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। स्यानगृद्धि तीन, मिश्यात्व और वारह कपायके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहृत है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर आन्तर भ्रुवन पदका अन्तरकाल नहीं है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा, तेजस शरीर आदि नो और तीर्थकर प्रकृतिक तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहृत है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। चार आयुओं के दो पदोंका अन्तरकाल नहीं है। शेप प्रकृतियोंके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहृत है। अवक्तव्य पदका अपन्तर्मुहृत है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहृत है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहृत है। इसी प्रकार मानकपायवाले जीवोंक जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके ध्रुववन्धवाली मत्रह प्रकृतियोंका अन्तरकाल कहना चाहिए। क्रोधसंज्वलनका भङ्ग निद्राके समान है। इसी प्रकार मायाकपायवाले जीवोंक भी कर्ना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके दो संज्वलनका भङ्ग निद्राके समान है। इसी प्रकार लोभकपायवाले जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इतनी विशेषता है कि इतनी विशेषता है कि इतनी विशेषता है कि इतनी चाहिए। इतनी विशेषता है कि इतनी चाहिए। इतनी विशेषता है कि इतनी चाहिए।

७४६. मत्यज्ञानी और श्रुनाज्ञानी जीवोंमे श्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्म् समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर कि समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। सातावेदनीय, अमानावेदनीय और छह नोकपायका भङ्ग ओघके सातावेदनीयके समान है। मिध्यात्वका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। इतनी विशेषता है कि इनके अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायागित, दुर्भग, दुःस्वर और

द्भग-दुस्सर-अणादे विणिप जह एग , उक विणि पिलदो देस् । एवं अवत्त । णविर जह अंतो । चदुआयु - वेउ व्वियछ - मणुसगिदिति गं ओघं । तिरिक्खा पृति विणिप पदा जह एग , उक एक तीसं सादिरे । अवत्त अोघं । चदुजादि-आदाव-थावरादि । तिणिपदा जह एग , अवत जिण्यदा जह एग , अवत जिण्यं । चदुजादि-आदाव-थावरादि । पेचिंदि - पर - उस्सा - तस शिलिप पदा साद मंगो । अवत्त जह अंतो , उक तेत्ती संसा साविष्ण पादि । ओरालि तिण्यि जह एग , उक तिण्य पिलदो देस । अवत्त ओघं । समच दु - पसत्थ - सुभग - सुस्सर - आदे विण्यि साद मंगो । अवत्त जह अंतो । अवत्त अोघं । समच दु - पसत्थ - सुभग - सुस्सर - आदे विण्यि साद मंगो । अवत्त जह अंतो , उक तिण्य पिलदो देस । ओरालि अंगो - [वज्जिरस ] ओरालिय मंगो । णविर अवत्त जह अंतो , उक तेत्ती संसा सादि । उज्जो तिण्य पदा तिरिक्ख गदि मंगो । अवत्त जह अंतो , उक एक तिलि पदा सादि । जिल्ला पदा तिरिक्ख गदि मंगो । अवत्त जह अंतो , उक एक तिलि पदा तिरिक्ख गदि मंगो । अवत्त जह अंतो ।

७५०. विभंगे धुविगाणं दोपदा० जह० एग०, उक्क० श्रंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । एवं मिच्छ० । णवरि अवत्त० णित्थ अंतरं । णिर्य-देवायूणं दोपदा० णत्थि त्रंतरं । तिरिक्ख-मणुसायूणं दोपदा० जह० त्र्रंतो०, उक्क० छम्मासं <del>ब्रानादेयके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है ब्रौर उत्कृष्ट ब्रान्तर कुछ कम तीन पत्य है । इसी</del> प्रकार अवक्तव्य पदका अन्तरकाल है। इतनी विशेषता है कि इसका जघन्य अन्तर अन्त-र्मृहर्त है। चार त्राय, वैक्रियिक छह त्र्योर मनुष्यगतित्रिकका भङ्ग आंघके समान है। तिर्यञ्चगति त्रीर तिर्यक्कगत्यानुपूर्वीके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय हे श्रीर उत्कृष्ट अन्तर साधिक इकतीस सागर है। अवक्तव्य पद्का अन्तर आंघके समान है। चार जाति, आतप और स्थावर ऋगदि चारके तीन पदोंका अन्तर एक समय है। अवक्तव्य पदका जधन्य अन्तर अन्तर्मुहर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। पञ्चेन्द्रिय जाति, परघात, उच्छवास श्रौर बस चतुष्कके तीन पदोंका भङ्ग सातांवदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका जधन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेनीस सागर है। श्रौदारिक शरीरके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पस्य है। अवक्तव्य पदका अन्तर श्रांघके समान है। समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विहायागित, सुभग, सुस्वर और आदेयके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। श्रवक्तव्य पदका जघन्य श्रन्तर श्रन्तमुंहूर्त है और उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम तीन पल्य है। श्रीदारिक श्रङ्गापाङ्ग श्रीर वस्रऋपभनाराच संहननका भङ्ग श्रीदारिक शरीरके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य पद्का जघन्य अन्तर अन्तर्महर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है । उद्योतके तीन पदोंका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है । त्रवक्तव्यपदका जवन्य त्रन्तर अन्तर्महर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक इकतीस सागर है। नीचगांत्रके तीन पदोंका भङ्ग नपुंसक वेदके समान है। अवक्तव्यपदका अन्तर श्रोघके समान है।

७५०. विभङ्गज्ञानी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंक दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट अन्तर श्रन्तमुंहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर हो समय है। इसी प्रकार मिध्यात्व प्रकृतिका जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इसके अवक्तव्य पदका अन्तर काल नहीं है। नरकायु और देवायुके दो पदोंका अन्तर काल नहीं है। विर्युख्वायु और मनुष्यायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उन्कृष्ट अन्तर कुछ कम

देस्च० । सेसाणं ओरालि०भंगो । णवरि तिण्णिजा०-सुहुम-अपज्जत्त-साधारण० तिण्णि पदा० जह० एग०, उ० अंतो० । अवत्त० णित्थ अंतरं ।

७५१. आमित्-सुद् ०-ओघि० पंचणा०-छदंसणा०-च दुसंज०-पुरिस०-भय-दुगुं०-पंचिंदि० तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-उचा० तिण्णिपदा ओघं। अवत्त० जह० श्रंतो०, उक्क० छाबिष्ट सा० सादि०। अड्ठक० तिण्णिप० ओघं। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं साग० सादि०। दोआयु० दो पदा० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं सा० सादि०। मणुसगदिपंचग० तिण्णि पदा० जह० एग०, उक्क० पुञ्चकोडि० सादि०। अवत्त० जह० पिठदो० सादि०, उक्क० तेत्तीसं सा० सादि०। देवगदि०४ तिण्णि प० जह० एग०, उक्क० तेत्तीसं सा० सादि०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं सा० सादि०। आहारदुगं देवगदिभंगो। तित्थय० चत्तारि पदा ओघं। एवं ओधिदंस०-सम्मादि०।

७५२. मणपज्जव० पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-पुरिस०-भय-दुगुं०-देवगदि-पंचिदि०-तिण्णिसरीर०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदेज्ज०-णिमि०-तित्थय०-उचा०-पंचेत० तिण्णि प० जह० एग०,

छह महीना है । शेप प्रकृतियोंका भङ्ग श्रौदारिक शरीरके समान है । इतनी विशेषता है कि तीन जाति, सूद्रम, श्रपर्याप्त श्रौर साधारणके तीन पदोंका जवन्य श्रन्तर एक समय है श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है । श्रवक्तव्य पदका श्रन्तर काल नहीं है ।

७५१. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमं पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुपवंद, भय, जुगुप्सा, पश्चिन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, ममचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तिबहायांगित, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेथ, निर्माण और उच्चगात्रके तीन पदोंका अन्तरकाल आघक समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक छ्यासठ सागर है। आठ कपायके तीन पदोंका अन्तर ओघके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। दो आयुओंके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। मनुष्यगतिपञ्चकके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक पूर्वकोट है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर साधिक एक पत्य है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। देवगित चतुष्कके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। देवगित चतुष्कके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर साधिक तेतीस सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्भूहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। आहारकद्विकका भद्भ देवगितिके समान है। तीर्थङ्कर प्रकृतिक चार पदोंका भद्भ ओचके समान है। इसीप्रकार अवधिदर्शनी और सम्यन्दिष्ठ जीवोंके जानना चाहियं।

७५२. मनःपर्ययद्वानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, भय, जुगुष्सा, देवगति, पल्लोद्वियजाति, तीन शरीर, समचतुस्त्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गापाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तिवहायोगित, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, तीर्थङ्कर, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायके तीन पदोंका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट

उक्क अंतो । अवत्त जह अंतो , उक्क पुन्वकोडी देख् । देवायु दोपदा ० पगदिअंतरं । सेसाणं तिण्णि पदा ० जह ० एग ०, उक्क ० अंतो ०। अवत्त ० जह ० उक्क ० श्रंतो ०। एवं संजदा ०।

७५३. सामाइ०-स्रेदो० पंचणा०-चदुदंसणा०-लोभसंज०-उचा०-पंचंत० दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवड्ठि० जह० एग०, उक्क० वेसम० । ऋाहारदुग० सादभंगो । शिद्दा-पचला-तिश्णिसंज०-पुरिस०-भय-दु०-देवगदि-पसत्थपणुबीस-तित्थय० दो पदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवड्ठि० जह० एग०, उक्क० वेसम० । अवत्त० णत्थि श्रंतरं । सेसाणं संजदभंगो ।

७५४. परिहार० धुविगाणं दो पदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम०। आहारदुगं चत्तारि पदा० जह० अंतो०, उक्क० श्रंतो०। तित्थय० तिण्णि पदा० णाणावरणभंगो। अवत्त० णत्थि अंतरं। सुहुमसंप० सन्वाणं० सुज०-अप्प० जह० उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० एग०। संजदासंजदा० परिहारभंगो।

७५५. असंजदे धुविगाणं दो पदा ओघं। अविहु० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम०। थोणगिद्धि०२—मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४—णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ० उज्जो०- अन्तर अन्तमुंहृतं हे। अवक्तव्य पदका जधन्य अन्तर अन्तमुंहृतं हे और उक्ष्य अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। देवायुकं दो पदोंका अन्तर प्रकृतिबन्धके अन्तरकं समान है। शेप प्रकृतियोंके तीन पदोंका जधन्य अन्तर एक समय है और उक्ष्य अन्तर अन्तर्मुहृतं है। अवक्तव्य पदका जधन्य और उक्ष्य अन्तर अन्तर्मुहृतं है। इसी प्रकार संयत जीवोकं जानना चाहिये।

७५३. सामायिकसंयत श्रांर छेदांपस्थापनासंयत जीवोंमे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, लांभ संज्वलन, उच्चगात्र श्रोर पाँच अन्तरायंक दा पदोंका जवन्य अन्तर एक समय हे श्रोर उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्महर्त है। अवस्थित पदका जवन्य अन्तर एक समय हे श्रोर उत्कृष्ट अन्तर दा समय है। आहारक द्विकका भङ्ग सातावेदनीयंक समान है। निद्रा, प्रचला, तीन संज्वलन, पुरुपंवद, भय, जुगुप्सा, देवगित आदि प्रशस्त पच्चीस प्रकृतियाँ श्रीर तीर्थङ्कर इनके दो पदोंका जवन्य अन्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्महर्त है। अवस्थित पदका जवन्य अन्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तव्य पदका अन्तर काल नहीं है। शेप प्रकृतियोंका भद्म संयतोंक समान है।

अश्व. परिहारविशुद्धि संयत जीवोमें ध्रुववन्धवाली प्रश्नतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मु हूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। आहारकद्विकके चार पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मु हूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मु हूर्त है। त्रीर्थङ्कर प्रकृतिक तीन पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य पदका अन्तर काल नहीं है। सूद्मसांपराय संयत जीवोंमें सब प्रकृतियोंक मुजगार और अरूपतर पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर क्रांतर है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। संयतासंयत जीवोंका भङ्ग परिहारविशुद्धि संयत जीवोंके समान है।

७५५. असंयत जीयोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंका भङ्ग श्रोधके समान है। श्रव-स्थित पदका जबन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। रूत्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, उद्योत, अप्रशस्त विहायो- अप्पसत्थि दूभग-दुस्सर-अणादे ०णवुं सगभंगो । पुरिस ०-समचदु ०-पसत्थ ०-सुभग-सुस्सर-आदे ० तिण्णि पदा सादभंगो । अवत्त ० जह ० त्रंतो ०, उक्क ० तेत्तीसं सा० देसू ० । ओरालि० – ओरालि० अंगो०-वज्जरिस० तिण्णि पदा ओघं । अवत्त ० णवुं सगभंगो । सेसं मदिभंगो । चक्खु ० तसपज्जतभंगो । अचक्खुदं ० ओघं ।

७५६. किण्ण-णील-काउलेस्सा० धुविगाणं दो पदा जह० एग०, उक्क० अंतो० । अविद्वि जह एए। उक्क चत्तारि सम । थीणगिद्धि ०३-मिच्छ ०-अणंताणुर्वाघ ०४-इत्थि-णवं स०-दोगि६-पंचसंठा-पंचसंघ०-दोआणु०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-दृभग-दुस्सर अणादे० णीचुचागो० तिण्णि प० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं सा० सत्तारस० सत्त साग० देख्र०। पुरिस० समचदु० वज्जरिसभ० पसत्थ० सुभग-सुस्सर-आदे ० तिण्णि पदा सादभंगो । अवत्त० जह० श्रंतो०, उक्क० तेत्तीसं० सत्तारस० सत्त-माग् देख्व । णिरय-देवायु० दोपद् । णित्थ अंतरं । तिरिक्ख-मणुसायु० णिरयगदिभंगो । णिस्य देवगदि-पंचजादि-ओरालि०-ओरालि०अंगो०-दोआणु०-पर०-उस्सा०-तम-थावर-चदयुग्लं तिण्णि पदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० णित्थ अंतरं । वेउन्वि०-वेउव्वि०अंगो० तिण्णि पदा जह० एग०, उक्क० बाबीसं सत्तारस० सत्त साग० गति, दुर्भग, दुस्वर त्रोर त्रनादेयका भङ्ग नपुंसकवदेक समान है । पुरुपवद, समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर और ऋ।देयके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मृहर्त हे और उन्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। औदा-रिक शरीर, ऋोदारिक आङ्गोपाङ्ग ऋोर वल्रऋपभनाराचसंहननक नीन पदोंका भङ्ग आंघक समान है । अवक्तव्य पदका भङ्ग नपुंसकवेदके समान हैं । शेप प्रकृतियोंका भङ्ग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है। चलुदर्शनवाले जीवोंसे त्रसपर्याप्तकोंक समान भन्न है। अचलुःदर्शनवाले जीवोसे स्रोपके समान भङ्ग हैं।

अ.६. कृष्ण, नील ऑर कपात लेश्यावाले जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय हे और उन्कृष्ट अन्तर अन्तरमुंहूर्त है। अर्वास्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय हे ओर उन्कृष्ट अन्तर चार समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्य, अनन्तानुवन्धी चार, स्त्रांवर, नपुंसक्वर, दो गित, पाँच संस्थान, पाँच संह्नन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग दुस्वर, अनादेय, नीचगोत्र और उच्चगोत्रके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्महूर्त हे और उन्कृष्ट अन्तर क्रमसे कुछ कम तेतीस सागर, कुछ कम सत्तरह सागर और कुछ कम सात सागर है। पुरुपंवर समचतुरस्र संस्थान, यन्नऋपभनाराचमंहनन, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर और आदयके तीन पदोंका भङ्ग सातावदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्महूर्त है और उन्कृष्ट अन्तर कमसे कुछ कम तेतीस सागर, कुछ कम सत्तरह सागर और कुछ कम सात सागर है। नरकायु और देवायुक दो पदोंका अन्तर काल नहीं है। तिर्यञ्जायु और मनुष्यायुका भङ्ग नरकगितके समान है। नरकगित, देवगित, पाँच जाति, औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, दो आनुपूर्वी, परचान, उद्ध्वास, त्रम स्थावर चार युगलके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उन्कृष्ट अन्तर अन्तर्महूर्त है। अवक्तव्य परका अन्तर काल नहीं है। वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उन्कृष्ट सन्तर स्वत्व स्थार अन्तर एक समय है और उन्कृष्ट अन्तर स्वत्व स्थार अन्तर एक समय है और विक्रियिक साईपर साधिक सत्तरह सागर श्रीर साधिक समय है और उन्कृष्ट स्थार सत्तरह सागर श्रीर साधिक समय है स्थार साधिक सत्तरह सागर श्रीर साधिक

सादि०। अवत्त० किण्णाए जह० सत्तारस० सादि०, उक्क० वाबीसं० साहि०। णीलाए जह० सत्तसाग० [सादि०, उक्क०] सत्तारस० सादिरे०। काऊए जह० दसवस्ससहस्साणि सादि०, उक्क० सत्त साग० सादि०। तित्थय० धुवभंगो। णवरि अवट्टि० जह० एग०, उक्क० बेसम०। काऊए तित्थय० णिरयभंगो। णील-काऊए मणुस०-मणुसाणु०-उच्चा० पुरिसवेदभंगो।

७५७. तेउले० धुविगाणं दो पदा जह० एग०, उक्क० श्रंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । थोणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-इत्थि०-णवुंस०-तिरिक्खाणु०-आदाउज्जो० -अप्पसत्थवि०-थावर-द्भग-दुस्सर-अणादे० णीचा० तिण्णिप० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० बेसाग० सादि० । पुरिस०-मणुसग०-पंचिंदि०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिस०-मणुसाणु०-पसत्थवि०-तस-सुभग-सुस्सर-आदे०-उच्चा० सोधम्मभंगो। अट्ठक० [ओराखि०-] आहारदुग-तित्थय० दोपदा जह० एग०, उक्क० श्रंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसाग० । अवत्रि० जह० एग०, उक्क० बेसाग० । वेवगदिचदुक्क० तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० बेसाग० सादि०। अवत्र०

सात सागर है। अवक्त य पदका कृष्णलेश्यामं जघन्य अन्तर साधिक सत्रह सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक वाईस सागर है। नीललेश्यामें जघन्य अन्तर साधिक सान मागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक सत्रह सागर है। कापोतलेश्यामें जघन्य अन्तर साधिक दस हजार वर्ष है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक सात सागर है। कापोतलेश्यामें जघन्य अन्तर साधिक दस हजार वर्ष है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक सात सागर है। नीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। कपोतलेश्यामें तीर्थङ्कर प्रकृतिका नारिकयोंके समान भङ्ग है। नील और कपोतलेश्यामें मनुष्य-गित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भङ्ग पुरुपवेदके समान है।

७४७. पीतलेश्यावाले जीवोंमं ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर क्र है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिण्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, स्त्रीवंद, नपुंसकवंद, तिर्यक्ष्मगित, एकेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, तिर्यक्षमत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगिति, स्थावर, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और नीचगोत्रके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मृहूर्त हे और उत्कृष्ट अन्तर सबका साधिक दो सागर है। पुरुषवंद, मनुष्य ।ति, पक्षेन्द्रियजाति, समचतुरस्त्रसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ञ्चभनाराच संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगित, त्रस, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रका भङ्ग सौधर्मकल्पके समान हे। आठ कपाय, औदारिक शरीर, आहारकिद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय हे और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहूर्त हे। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय हे और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त हे। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय हे और उत्कृष्ट अन्तर क्र समय हे। देव-गित चतुष्कके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय हे और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो सागर हे। देव-गित चतुष्कके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय हे और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो सागर हे। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार पद्मलेश्चावाले जीवोंमें भी जानना चाहिए। इतनी अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार पद्मलेश्चावाले जीवोंमें भी जानना चाहिए। इतनी

णित्थ अंतरं । एवं पम्माए वि । णवरि ओरालि०-आहारदुग-'ओरालि०अंगो०-अहुक०-तित्थय० दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अविष्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । अवत्त० णित्थ अंतरं । देवगदि०४ तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अहारस साग० सादि० । अवत्त० णित्थ अंतरं० ।

७५८. सुकाए पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-वणण० ४-अगु०४-णिमि०-तित्थय०-पंचंत० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० णित्थ अंतरं०। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-इत्थि-णवुंसगवेदादि० णवगेवज्ञभंगो। दोवदणीय चदुणोक०-त्राहारदुग-थिरादितिण्णियुगलं तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० उक्क० अंतो०। अट्ठक०-मणुसगदिपंचगं दोपदा जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवद्धि० जह० एग०, उक्क० वंसम०। अवत्त० णित्थ अंतरं। पुरिस०-समचदु०-वज्जिरस०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर आदे०-उच्चा० तिण्णिपदा सादभंगो। अवत्तव्वं देवभंगो। देवगिद०४ तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० तेत्तीसं साग० सादि०। अवत्तव्व० जह० अट्ठारस साग० सादि०, उक्क० तेत्तीसं साग० सादि०। भवसिद्धि० ओघं। अव्भवसि० मिच्छादि० मिद० भंगो।

७५६, खइगे ओधिभंगो । णवरि तेत्तीसं साग० सादि० । आयुग० पगदि अंतरं ।

विशेषता है कि खोदारिक शरीर, आहारकद्विक, खोदारिक आङ्गोपाङ्ग, आठ कगाय खोर तीर्थङ्कर प्रकृतिके दो पदोंका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जवन्य अन्तर एक समय है खोर उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। देवगति चतुष्कक तीन पदोंका जवन्य अन्तर एक समय है खोर उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है।

७५८. शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, ते प्स शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, निर्माण, तीर्थकर और पाँच अन्तरायके तीन पदोका जघन्य अन्तर एक समय हे और उत्कृष्ट अन्तर अन्त-मृहूर्त हे। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं हे। स्त्यानगृद्धि तीन, मिण्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, खांवर और नपुंसकवेद आदिका भङ्ग नौग्रैवेयकके समान है। दो वेदनीय, चार नोकपाय, आहारकि और स्थिर आदि तीन युगलके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय हे और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहूर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहूर्त है। आठ कपाय और मनुष्यगितपञ्चकके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय हे और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहूर्त है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। पुरुषवेद, समचतुरस्रसंस्थान, वअर्पभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चयोगिक तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका अन्तर साधिक तैतीस सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अठारह सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तैतीस सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अठारह सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अठारह सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अठारह सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अठारह सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अठारह सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अठारह सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अठारह सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अठारह सागर है और अविषय साम भङ्ग है। इतनी विशेपता है।

मणुसगदिपंचग० दोण्णिप० जह० एग० उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम०। अवत्त० णित्थि अंतरं।देवगदि०४-आहारदुगं तिण्णिपदा जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं साग० सादि०। तित्थय० ओर्घ।

७६०. वेद्गे धुविगाणं तिण्णिपदा परिहार०भंगो । अहुक०-मणुसगदिपंचग० ओधि-भंगो । देवगदिचदुक्क० तिण्णिप० ओधिभंगो। अवत्त० जह० पलिदो० सादि०, उक्क० तेत्तीसं साग० सादि० । दोआयु०-आहारदुगं ओधिभंगो । तित्थय० दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवहि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । अवत्त० णित्थ अंतरं ।

७६१. उवसम० पंचणा०-छदंसणा० वारसक०-पुरिस०-भय-दु० देवगदि०४-पंचि-दि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ० -तस०४-सुभग-सुस्सर-आदेञ्ज०-णिमि०-तित्थय०-उच्चा०-पंचंत० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० णित्थ अंतरं०। मणुसगदिपंचग० दोपदा जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवद्वि० जह० एग०, उक्क० वेसम०। अवत्त० णित्थ अंतरं। सादादिबारसं ओघं। एवं आहारदुगं।

७६२. सासणे धुविनाणं णिरयोवं । तिण्णिआयु० दोपदा० णित्थ अंतरं । सेसाणं

कि यहाँ साधिक तेतीस सागर कहना चाहिए। आयुकर्मका अन्तर प्रकृतिवन्धके अन्तरके समान है। मनुष्यगतिपञ्चकके दो पदोंका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहृत है। अवक्तर्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर है। अवक्तर्य पदका अन्तरकाल नहीं है। देवगतिचतुष्क और आहारकद्विकके तीन पदोंका जधन्य अन्तर एक समय है, अवक्तर्य पदका जधन्य अन्तर एक समय है, अवक्तर्य पदका जधन्य अन्तर अन्तर कृति है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीम सागर है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्क औष्टके समान है।

७६०. वेदकसम्यादृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंका भङ्ग परिहारिवशुद्धि संयत जीवोंके समान है। आठ कपाय और मनुष्यगितपञ्चकका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। अवक्तव्य पदका जवन्य अन्तर साधिक एक पत्य है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। दो आयु और आहारकि दिकका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। तीर्थङ्कर प्रकृतिके दो पदोंका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्वय पदका अवस्थित पदका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्वय पदका अन्तरकाल नहीं है।

७६१. उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, वारह कपाय, पुरुपवेद, भय, जुगुष्सा, देवगतिचतुष्क, पञ्चोन्द्रिय जाति, नेजम शरीर; कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, नीथङ्कर, उच्चगात्र और पाँच अन्तरायक तीन पदोंका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहूर्त है। अवक्तत्र्य पदका अन्तरकाल नहीं है। मनुष्यगतिपञ्चकक दो पदोंका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहूर्त है। अवस्थित पदका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। साना आदि वारह प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार आहारकद्विकका भङ्ग है।

७६२. सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंमं ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य नारिकयोंके

सादादीणं भ्रुज॰-अप्प॰ जह॰ एग॰. उक्क॰ अंतो॰। अवट्ठि॰ जह॰ एग॰, उक्क॰ बेसम॰। अवत्त॰ णत्थि अंतरं। सम्मामि॰ सादासाद॰-चदुणोक॰-थिरादितिण्णियुग॰ ओघं। सेसाणं धुविगाणं भ्रुज॰ अप्प॰ जह॰ एग॰, उक्क॰ अंतो॰। अवट्ठि॰ जह॰ एग॰, उक्क॰ बेसम॰।

७६३. सिण्णि० पंचिंदियपजन्तभंगो । असण्णी० ध्रुविगाणं भ्रुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क, अंतो० । अवड्डि० जह० एग०, उक्क० तिण्णि सम० । तिण्णिआयु० दो पदा जह० अंतो०, उक्क० पुन्वकोिडितिमागं देख० । तिरिक्खायु० दो पदा जह० अंतो०, उक्क० पुन्वकोडी सादि० । वेउन्विय०छ०-मणुस०तिग० ओघं । तिरिक्खगिद दुग-णीचा० तिण्णिपदा सादभंगो । अवत्तन्वं ओघं । ओराछ० तिण्णिपदा सादभंगो । अवत्तन्वं ओघं । सेसाणं सादभंगो । आहार० मूलोघं । णविर जिम्ह अणंतका० अद्व-पोग्गलपरि० तिम्ह अंगुलस्स असंखेन्ज० । अणाहार० कम्गइगभंगो । एवं अंतरं समन्तं।

# भंगविचयाणुगमो

७६४. णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमेण दुवि०—ओघे० आदे० । ओघे० पंचणा०-

समान है। तीन आयुओं के दो पदोंका अन्तरकाल नहीं है। शेप साता आदि प्रकृतियों के मुजगार और अरूपतर पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। सम्यग्मिण्यादृष्टि जीवों में सातावदनीय, असातावदनीय, चार नोकपाय और स्थिर आदि तीन युगलका भङ्ग अोघके समान है। शेप धुववन्धवाली प्रकृतियों के भुजगार और अरूपतर पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है।

७६३. संज्ञी जीवोंका भङ्ग पर्छ्योन्द्रय पर्याप्त जीवोंके समान हैं। असंज्ञी जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर भूर्ह्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है। तीन आयुआोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहत है और उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिभागप्रमाण है। तिर्यञ्चायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहत है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक पूर्वकोटि है। वैक्रियिक छह और मनुष्यगित त्रिकका भङ्ग आघक समान है। तिर्यञ्चगितिद्विक और नीचगात्रके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका भङ्ग आघक समान है। औदारिक शरीरके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। आहारक जीवोंका भङ्ग मूलाघके समान है। इतनी विशेषता है कि जहाँ पर अनन्तकाल और अर्धपुद्गल परिवर्तन काल कहा है वहाँ पर अङ्गलके असंख्यातवें भागप्रमाण काल कहना चाहिए। अनाहारक जीवोंका भङ्ग कार्मणकाययोगी जीवोंके समान कहना चाहिए। इस प्रकार अन्तरकाल समाप्त हुआ।

#### भङ्गविचयानुगम

७६४. नाना जीवोंका त्र्यालम्बन लेकर भङ्ग विचयानुगमकी त्र्रपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है— ४६ णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-ओरालि० तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०णिमि०-पंचंत० भ्रुज०-अप्प०-अविद्व० णियमा अत्थि । सिया एदे य अवत्तगे य । सिया
एदे य अवत्तगा य । तिण्णिआयुगाणं दो पदा भयणिज्जा । तिरिक्खायु० दो पदा
णियमा अत्थि । वेउव्वियछ०-आहारदुगःतित्थय० अविद्व० णियमा अत्थि । सेसाणि
पदाणि भयणिज्जाणि । सेसाणं सच्वपगदीणं भ्रुज०-अप्प०-अविद्व०-अवत्त० णियमा
अत्थि । एवं ओघभंगो तिरिक्खोघं कायजोगि-ओरालियका०-णवुंस०-कोधादि०४
मिद०-सुद०-असंज०-अचक्खुदं०-तिण्णिले०-भविस०-अब्मवसि०-मिच्छा०-असण्णि
आहारग ति ।

७६५. मणुसअपज्जत्त-वेउ व्वियमि ०-आहार ०-आहारमि ०-अवगद्वे ०-सुहुमसंप ०-उवसम ०-सासण ०-सम्मामि ० सन्वाणं पगदीणं सन्वपदा भयणिज्जा ।

७६६. एइंदिएस धुविगाणं तिण्णि पदा सेसाणं चत्तारि पदा तिरिक्खायु० दो पदा णियमा अत्थि । मणुसायु० दो पदा भयणिज्जा । एवं पुढवि०-आउ०-तेउ०- वाउ०-वादरवणप्फदिपत्तेय० एदेसि बादराणं तेसि चेव वादरअपज्ज० तेसि सन्बसुद्धुम० वणप्फदि—णियोद एइंदियभंगो ।

७६७, ओरालियमि०-कम्मइग०-त्र्रणाहारगेसु देवगदि०४-तित्थय० तिण्णि पदा

स्रोघ स्रोर श्रादेश। स्रोघमे पाँच ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, मिध्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, ओदारिक शर्रार, तेंजस शर्रार, कार्मण शर्रार, वर्णचतुष्क, त्रगुरलघु, उपघात, निर्माण स्रोर पाँच स्रन्तरायक मुजगार, सल्पतर स्रोर स्रवस्थित पदके बन्धक जीव नियमसे हैं। कदाचित इन पदोंके बन्धक जीव हैं। सदाचित इन पदोंके बन्धक जीव हैं। सदाचित इन पदोंके बन्धक जीव हैं। सदाचित इन पदोंके बन्धक जीव हैं। तेंन स्रायुत्रोंक दो पदवाले जीव भजनीय हैं। तियंख्यायुके दो पदवाले जीव नियमसे हैं। वेकियिक छह, स्राहारक द्विक, स्रोर तीयद्धर प्रकृतियोंके स्रजगार, स्रव्यत्वे जीव नियमसे हैं। शेप पदवाले जीव भजनीय हैं। शेप सब प्रकृतियोंके मुजगार, स्रव्यतर, स्रवस्थित स्रोर स्रवक्तव्य पदवाले जीव नियमसे हैं। इस प्रकार स्रोघके समान सामान्य तिर्यक्त, काययोगी, स्रोदारिक काययोगी, नपुंसकवेदी, कोधादि चार कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, स्रसंयत, स्रच्छःदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, स्रभव्य, मिध्यादृष्टि, स्रसंज्ञी स्रोर स्राहारक जीवोंके जानना चाहिये।

७६५. मनुष्यत्रपर्याप्त, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी, त्राहारकमिश्रकाय-योगी, त्र्यवगतवेदी, सूद्त्यसाम्परायसंयत, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिश्यादृष्टि जीवोंमें सब पद भजनीय हैं।

७६६. एकेन्द्रियोंमें श्रुवदन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पद, शेप प्रकृतियोंके चार पद और तिर्ग्रञ्चायुके दो पदवाले जीव नियमसे हैं। मनुष्यायुके दो पदवाले जीव नियमसे भजनीय हैं। इसी प्रकार पृथिवीकायिक, जलकायिक, अप्रिकायिक, वायुकायिक, वादर वनस्पतिकायिक प्रस्थेक शारीर, इनके वादर तथा इन्होंके बादर अपर्याप्त और इन्हों के सब सूद्रम, वनस्पतिकायिक और निगाद जीवोंके एन्द्रियोंके समान भङ्ग हैं।

७६७. श्रीदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी श्रीर श्रनाहारक जीवों में देवगति चतुष्क

भयणिङ्जा । सेसाणं ओघं । णिरयादि याव सण्णि त्ति संखेज्ज-असंखेज्जरासीणं अवट्ठि० णियमा अत्थि । सेसाणि पदाणि भयणिङ्जाणि । एवं भंगविचयं समत्तं ।

## भागाभागाणुगमो

७६८. भागाभागं दुवि० — ओघे० श्रादे० । ओघे० पंचणा० णवदंसणा० - मिच्छ०सोलसक० - भय-दुगुं० ओरालिय० - तेजा० क० - वण्ण०४ - अगु० - उप० - णिमि० - पंचंत० भुज० श्रप्प० केविडियो भागो । असंखेजिदिभागो ? अविद्वि० केव० ? असंखेज्जा भागा । अवत्त०
सच्व० केव० ? अणंतभागो । चदुण्णं आयु० अवत्त० सच्वजी० केव० ? असंखेज्ज० ।
अप्प० सच्व० केव० ? असंखेज्जा भा० । आहारदुगं भुज० अप्प० - अवत्त० सच्व० केव० ?
संखेज्जिदि० । अविद्वि० सच्व० केव० ? संखेज्जा भा० । सेसाणं सच्वपग० भुज० अप्प० अवत्त० सच्व० केव० ? असंखेज्ज० । अविद्व० सच्व० केव० ? असंखेज्जा भागा ।
एवं ओघभंगो तिरिक्खोधं कायजोगि - ओरालियका० - ओरालियमि० - कम्मइ० - णवुं स० कोधादि० ४ - मिद० - सुद० - असंज० - अचक्खुदं० तिण्णिले० भविस० - अब्भवसि० - मिच्छादि० असण्णि - आहार० - अणाहारग ति । णविर ओरालियमि० - कम्मइ० - अणाहारगेसु

श्रीर तीर्थङ्कर प्रकृतिकं तीन पदवालं जीव भजनीय है। रोप प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोघ के समान है। नरक गति से लेकर संज्ञी मार्गणातक संख्यात श्रीर श्रसंख्यात राशिवाली मार्गणाश्रोंमें श्रवस्थित पदवाले जीव नियम से हैं। शेप पदवाले जीव भजनीय हैं। इस प्रकार भङ्गविचय समाप्त हुआ।

#### भागाभागानुगम

७६८. भागाभाग दो प्रकार का है—श्रोघ श्रीर श्रादेश। श्रोघ से पाच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, श्रीदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पांच अन्तरायके भूजगार और अल्पतर पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं। अवस्थित पदवाले जीव सब जीवोंक कितने भाग प्रमाण हैं ? ऋसंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। अवक्तव्य पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं। श्रमन्तवें भाग प्रमाण हैं। चार आयुत्रोंके श्रवक्तव्य पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण हैं ? ऋल्पतर पद्वाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? त्र्यसंख्यात वहुभाग प्रमाण हैं। त्र्याहारकद्विकके भुजगार, अल्पतर श्रोर श्रवक्तव्य पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यातवें भाग प्रमाण हैं। अवस्थितपद्वाले जीव सव जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? बहुभाग प्रमाण हैं। रोष सब प्रकृतियों के मुजगार ऋल्पतर और ऋक्कव्य पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं १ ऋसंख्यातवें भागप्रमाण हैं । ऋर्वास्थतपद्वाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? ऋमंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। इस प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यक्र, काययांगी, त्रौदारिक काययोगी, त्रौदारिक मिश्रकाययोगी, कामण काययोगी, नपुंसक वेदी, क्रोधादि चार कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रताज्ञानी, असंयत, श्रचचुर्दर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिध्यादृष्टि, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषना है कि श्रीदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी श्रीर श्रनाहारक जीवोंमें देवगति पञ्चकके भुजगार

देवगदिपंचग० भ्रुज०-अप्प० सव्व० केव०१ संखेज्जदिभा०। अवड्डि० सव्व० केव०१ संखेज्जा भा०।

७६९. अवगदवे० सञ्वाणं भुज०-अप्पद०-अवत्त० सञ्व० केव० १ संखेज्ज० । अविष्ठि० सञ्व० केव० १ संखेज्जा भा० । सेसाणं णिरयादि याव सण्णि चि सञ्वेसिं असंखेज्जरासीणं ओघं सादभंगो कादच्वो । एसिं संखेज्जरासिं तेसिं ओघं आहारसरीर-भंगो कादच्वो । एवं भागाभागं समत्तं ।

# परिमाणाणुगमो

७७०. पारिमाणाणुगमेण दुवि०—ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा०-छदंसणा०अद्वक०-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० भ्रुज०-अप०-अवद्वि०
केत्तिया ? अणंता। अवत्त० केत्तिया ? संखेज्जा। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अट्ठक०ओरालि० तिण्णिपदा केत्तिया ? अणंता। अवत्त० केत्तिया ? असंखेज्जा। तिण्णि आयु०
दो पदा केत्तिया ? असंखेज्जा। तिरिक्खायु० दो पदा केत्तिया ? अणंता। वेउव्वियछ०
नत्तारि पदा केत्ति० ? असंखेज्जा। आहारदुगं चत्तारि पदा केत्तिया ? संखेज्जा।
तित्थय० तिण्णिपदा केत्तिया ? असंखेज्जा। अवत्त० केत्ति० ? संखेज्जा। सेसाणं सव्वपगदीणं चत्तारि पदा केत्तिया ? अणंता। एवं ओघमंगो तिरिक्खोघो कायजोगि-ओरालि-

श्रीर श्रत्पतर पदवालं जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यातवें भाग प्रमाण हैं। अव-स्थित पदवाले जीव सब जीवोंके कि ने भाग प्रमाण हैं ? संख्यात बहुभाग प्रमाण हैं।

७६६. ऋष्यात वेदवाले जीवोंमं सब प्रकृतियों के मुजगार ऋल्पतर और ऋबक्तव्य पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यातवें भाग प्रमाण हैं । ऋबस्थित पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यात बहुभाग प्रमाण हैं । रोप तरक गतिसे लेकर संज्ञी मार्गणा तक सब ऋसंख्यात राशिवाली मार्गणाओं में आघसे सातावेदनीयके समान भङ्ग जानना चाहिये । तथा जिन मार्गणाओंकी संख्यात राशि है उन मार्गणाओंमें छोघसे ऋहारक शरीरके समान भङ्ग जानना चाहिये । इस प्रकार भागाभाग समाप्त हुआ ।

#### परिमाणानुगम

७७०. परिमाणानुगमकी अपन्ना निर्देश दो प्रकारका है — आंघ और आदेश। श्रोघसे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, त्राठ कथाय, भय, जुगुप्सा, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु, उपचान, निर्माण श्रोर पाँच अन्तरायक भुजागार, अल्पतर और अवस्थित पदवाले जीव कितने हैं ? अवक्तव्य पदवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । स्त्यानगृद्धि नीन, मिथ्यात्व, आठ कपाय और ओदारिक शरीरक तीन पदवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं । अवक्तव्य पदवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । तीन आयुओं के दो पदवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । तिर्यक्रायुक दो पदवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं । विश्वक्रियक छहके चार पदवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । आवक्तविक्रे चार पदवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । तीर्थकर प्रकृतिके नीन पदवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । अवक्तव्यपद वाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । श्रेप सब प्रकृतियोंक चार पदवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । श्रेप सब प्रकृतियोंक चार पदवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं । इस प्रकार आंघके समान सामान्य तिर्यक्र

यका ०-णवुं स० कोधादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खुदं०-तिण्णिले०- भवसि० - अब्भ-वसि०-मिच्छादि० सिण्ण-आहारग ति एदे सब्वे असरिसा ओघेण साधेदव्वं। केसिं च धुविगाणं अवत्तव्वं अत्थि केसिं च णत्थि।

७७१. ओरालियमि०-कम्मइ०-अणाहार० देवगदि०४-तित्थय० तिण्णिपदा के० १ संखेज्जा । सेसं अोघं । ओरालिय०-वेउ वियमि०-इत्थिवेद-संजदासं जद-किण्ण-णीलासु उवसमसम्मादिद्वीसु तित्थय० चत्तारि पदा के० १ संखेज्जा । णवरि किण्ण-णीलासु अवत्त० णित्थ । सेसाणं णिरयादि याव सिण्ण ति संखेज्ज-असंखेज्जरासीणं अणंतरासीणं च ओघेण साघेदव्वं । एवं परिमाणं समत्तं ।

# खेताणुगमो

७७२. खेत्ताणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-ओरालि०-तेजइगादिणव-पंचंत० भ्रज०-अप्प०-अवट्टि० केविड खत्ते ? सन्वलोगे । अवत्त० केविड खेत्ते ? ला० असंखे०। वेउन्विय०-आहारदुग-तित्थय० चत्तारि पदा केव० खेत्ते ? लो० असंखे०। तिण्णिआयुगाणं [दोपदा०]केव० खेत्ते ? लो० असंखे०। सेसाणं सन्वपग० सन्वपदा केव० खेते ? सन्वलोगे। एवं तिरिक्खोघं

काययांगी, श्रीदारिक काययांगी, नपुंसक वदी, क्रोधादि चार कपायवाले, मध्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असयत, श्रचनुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, श्रभव्य, मिथ्यादृष्टि, संज्ञी और श्राहारक जीवों तक ये सब श्रासदश पदवाले जीव श्रोधक श्रनुसार साथ लेना चाहिये। इनमेसे किन्हींके ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका श्रवक्तव्य पद हे श्रीर किन्हींके नहीं है।

७७१. औदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी श्रोर श्रनाहारक जीवोंमे देवगति चतुष्क श्रोर तीर्थंकर प्रकृतिक तीन पदवालं जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । श्रप भङ्ग आंघके समान है । श्रोदारिक मिश्रकाययोगी, वैक्रियिक मिश्रकाययोगी, स्त्रीवदी, संयतासंयत, कृष्णलेश्यावालं, नील लंश्यावालं श्रोर उपशम सम्यग्दृष्टि जीवोंमें तीर्थंकर प्रकृतिक चार पदवालं जीव कितने हैं ? संख्यात है । इतनी विशेषता है कि कृष्ण श्रोर नील लंश्यावालं जीवोंमें श्रवक्तत्र्य पद नहीं है । श्रेप नरकगितिसे लंकर संज्ञी तक संख्यात, श्रसंख्यात श्रोर अनन्त राशिवाली मार्गणाश्रोमें आंघके समान साध लेना चाहिये । इस प्रकार परिमाण समाप्त हुआ

क्षेत्रातुगम

७७२. त्रंत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका हे—श्रांघ श्रोर श्रादेश। श्रांघसे पाँच ब्रानावरण, नौ दर्शनावरण, मिण्यात्व, सालह कषाय, भय, जुगुष्सा, श्रौदारिक शरीर, नैजसशरीर श्रादि नौ और पाँच अन्तरायक मुजगार, अल्पतर श्रोर अवस्थित पदके बन्धक जीवोका कितना त्रंत्र हें ? लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्र हैं । वैक्रियकद्विक, श्राहारकद्विक श्रोर तीर्थङ्करके चार पदोंके बन्धक जीवोंका कितना क्षेत्र हैं ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र हैं । तीन श्रायुओंके दो पदोंके बन्धक जीवोंका कितना त्रंत्र हैं ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र हैं । तीन श्रायुओंके दो पदोंके बन्धक जीवोंका कितना त्रंत्र हैं ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र हैं । शेप सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका कितना त्रंत्र हैं ? सब लोक क्षेत्र हैं । इसी प्रकार सामान्य तिर्थन्न, काययोगी,

क।यजोगि-ओरालि०-ओरालियमि०-कम्मइ०-णबुंस०-कोघादि०४ - मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खुदं० तिण्णिले०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छा०-असण्णि-आहार-अणाहारग ति । णवरि ओरालियमि०-कम्मइ०-अणाहार० देवगदि०४ तित्थय० सन्वपदा लोग० असंखे० ।

७७३. एइंदिएसु मणुसायु० ओघं। सेसाणं पगदीणं सन्त्रपदा सन्त्रलोगे। एवं सुहुम०। बादरपञ्जत्त-अपज्जत्त० धुविगाणं सादादीणं च दसपगदीणं सन्त्रपदा सन्त्रलोगे। इत्थि०-पुरिस०-चदुजादि-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-आदाउज्जो०-दोविहा०-तस-बादर-सुभग-दोसर०-आदे०-जसगि० चत्तारिपदा लोग० संवेज्ज०। एवं तिरिक्लायु० दोपदा०। मणुसायु०-मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० सन्त्रपदा लो० असंवे०। णवुं स०-एइंदि०-हुंडसं०-पर०-उस्सा०-थावर सुहुम०-पज्जत्तापज्जत्त-पत्ति०-साधार०-दूभग-अणादे०-अजस० तिण्णिप० सन्त्रलोगे। अवत्त० लो० संवेज्ज०। तिरिक्लग०-तिरिक्लाणु०-णीचा० तिण्णिप० सन्त्रलो०। अवत्त० लोग० असंवे०।

७७४. पुढिवि॰-आउ० तेउ० वाउ० सन्वसुहुमाणं च एइंदियभंगो । बादरपुढिवि-आउ० तेउ०-वाउ०-तेसि अपज्ज० धुविमाणं तिण्णि प० सन्वलो० । सादादीणं दसण्हं पगदीणं

अंदि।रिक काययोगी, श्रोदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कपाय-वाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, श्रसंयत, श्रचजुर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, श्रभव्य, मिश्यादृष्टि, श्रसंज्ञी, श्राहारक श्रोर श्रनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि औदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी श्रोर श्रनाहारक जीवोंमें देवगति चार और तीर्थेङ्कर प्रकृतिके सब पदोंके बन्धक जीवोंका तेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

७७३. एकेन्द्रियोंमं मनुष्यायुका भङ्ग आंघकं समान है। शेप प्रकृतियोंकं सब परोंके बन्धक जीवोंका त्रेत्र सब लोक है। इसी प्रकार सूदम एकेन्द्रिय जीवोंकं जानना चाहिए। वादर एकन्द्रिय श्रीर उनके पर्याप्त श्रायांत्र जीवोंमं ध्रु ववन्धवाली और साता आदि दस प्रकृतियोंकं सब परोंके वन्धक जीवोंका त्रेत्र सब लोक है। स्वावद, पुरुपवद, चार जाति, पाँच संस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गापाङ्ग, छह संहनन, श्रातप, उद्यात, दो विहायोगित, त्रस, वादर, सुभग, दो स्वर, श्रादेय श्रीर यशःकीतिंके चार परोंके बन्धक जीवोंका त्रेत्र लोकके संख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार तिर्धश्चायुके दो परोंकं बन्धक जीवोंका त्रेत्र जानना चाहिए। मनुष्यायु, मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उन्चगतिके सब परोंकं बन्धक जीवोंका त्रेत्र लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है। नपुंसकवद, एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, परवात, उन्ह्यास, स्थावर, सूदम, पर्याप्त, श्रप्यांप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, श्रनादेय और श्रयशःकीर्तिकं तीन परोंकं बन्धक जीवोंका त्रेत्र सब लोक है। श्रयक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका त्रेत्र लोकके संख्यातवें भागप्रमाण है। तिर्थञ्चगति, निर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रके तीन परोंकं बन्धक जीवोंका त्रेत्र सब लोक है। श्रयक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका त्रेत्र स्थानके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण है।

७७४. पृथिवीकायिक, जलकायिक, त्राग्निकायिक त्रोर वायुकायिक तथा इनके सब सूह्म जीवोंमें एकेन्द्रियोंके समान भङ्ग हैं। बादर पृथिवीकायिक, वादर जलकायिक बादर त्राग्निकायिक स्वीर बादर वायुकायिक तथा उनके अपर्याप्त जीवोंमें ध्रववन्धवाली प्रकृतियों के तीन पदोंके बन्धक चतारि पदा सव्वलो । णवुंस ०-तिरिक्खग ०-एइंदि ०-हुंडसं० तिरिक्खाण ०-पर ०-उस्सा ०-थावर-सुहुम-पञ्जत्तापञ्जत्त-साधार ०-दूभग ०-अणादे ०-अजस ०-णीचा ० तिण्णिप ० सव्वलो ० । अवत्त ० लो ० असंखे ० । सेसाणं सव्वपदा लोग ० असंखे ज ० । एवं बादरवण ०-णियोद-पञ्जतापञ्ज ० । णवरि वाऊणं जिम्ह लोगस्स असंखे ज ० तिम्ह लोगस्स संखे ज ० कादव्वो । बादरवण फिरियोद पाव सिण्ण। ति संखे अ-असंखे अरासीणं सव्वभंगो लोग ० असंखे ० । एवं खेतं समतं ।

# फोसणाणुगमो

७७५. फोसणाणुगमेण दुवि०-ओघे० आँदे०। ओघे० पंचणा०-छदंसणा०-अट्टक०-भय-दु०-तेजइगादिणव-पंचंत० भुज०-अप्प०-अवड्ठि०बंधगेहि केविड्यं खेत्तं फोसिदं १ सन्वलो०। अवत्त० खेत्तं। थीणगिद्धि०३-अणंताणुबिघ०४ तिष्णिपदा णाणावरणभंगो। अवत्त० अट्टचो०। मिच्छ० तिष्णिपदा णाणा०भंगो। अवत्त० अट्ट-बारह०। अपश्च-क्खाणा०४ तिष्णपदा णाणा०भंगो। अवत्त० छचोइ०। णिरयु-देवायु०-आहारदुगं सव्ब-

जीवोंका चेत्र सव लोक हैं। सातावेदनीय आदि दस प्रकृतियोंके चार पदींके बन्धक जीवोंका चेत्र सव लोक हैं। नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्ड संस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, परधात, उन्छ्वास, स्थावर, सूद्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, साधारण, दुर्भग, अनादेय, अयशाकीति श्रोर नीचगोत्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका केत्र सब लोक है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। शेप प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार वादर वनस्पितकायिक, वादर निगोद श्रोर उनके पर्याप्त अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता हैं कि वायुकायिक जीवोंके, जहाँ लोकका असंख्यातवाँ भागप्रमाण क्षेत्र कहा है, वहाँ लोकके संख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र कहना चाहिए। बादर वनस्पितकायिक प्रत्येक शरीर श्रोर उनके अपर्याप्त जीवोंमें वादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त जीवोंके समान भङ्ग है। शेप नरकगितसे लेकर संज्ञी मार्गणातक संख्यात श्रोर असंख्यात संख्यावाली राशियोंमें सब पदोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इस प्रकार क्षेत्र समाप्त हुआ।

### स्पर्शानानुगम

७७५. स्पर्शनानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है— ओघ और आदेश। श्रोघसे पाँच झानावरण, छह दर्शनावरण, आठ कपाय, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर आदि नव और पाँच अन्तरायके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्शन किया है ? सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अवक्तव्य पदका भंग चेत्रके समान है । स्त्यानगृद्धि तीन और अनन्तानुवन्धी चारके तीन पदोंके वन्धक जीवोंका भंग ज्ञानावरणके समान है । अवक्तव्य पदके वन्धक जीवोंने छुद्ध कम आठवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है । मिण्यात्वके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका भंग ज्ञानावरणके समान है । अवक्तव्य पदके वन्धक जीवोंने छुद्ध कम आठवटे चौदह राजु खेत्रका स्पर्शन किया है । अप्रत्याख्यानावरण चारके तीन पदोंके वन्धक जीवोंका भंग ज्ञानावरणके समान है । अवक्तव्य पदके वन्धक जीवोंने छुद्ध कम छहवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है । अप्रत्याख्यानावरण चारके तीन पदोंके वन्धक जीवोंका भंग ज्ञानावरणके समान है । अवक्तव्य पदके वन्धक जीवोंने छुद्ध कम छहवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है । चरकायु, देवायु और आहारक द्विकके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है । इसी प्रकार आहारक मार्गणा नक इन प्रकृतियोंके सब पदोंका स्पर्शन

पदा खेत्तमंगो । एवमेदाणं याव आहारग ति । [तिरिक्खायु० दोपदा सव्वलो० ।] मणुसायु० दोपदा अडुचोद्द० सव्वलोगो० । णिरयगदि-देवगदि-दोआणुपु० तिण्णि प० छचोद्द० । अवत्त० खेत्तमंगो । ओरालिय० तिण्णिपदा सव्वलोगो । अवत्त० बारहचोद्द-स० । वेउव्वि०-वेउव्व०अंगो० तिण्णिपदा बारहचोद्दस० । अवत्त० खेत्तमंगो । तित्थय० तिण्णिप० अडुचो० । अवत्त० खेत्त० । सेसाणं कम्माणं सव्वपदा सव्वलोगो ।

७७६. णिरएस धुविगाणं तिण्णिपदा सादादीणं बारसण्णं चत्तारिपदा० छचोद्दस०। दोआयु०-मणुसग० मणुसाणु०-तित्थय०-उचा० सन्वप० खेत्तभंगो। सेसाणं तिण्णिप० छचोद्द०। अवत्त० खेत्तभंगो। एवं सन्विणिरयाणं अप्पप्पणो फोसणं कादन्वं। णविरि मिन्छ० अवत्त० पंचचोद्द०।

७७७. तिरिक्खेसु धुविगाणं तिण्णिपदा० सन्वलोगो। थीणगिद्धि०३-मिन्छ०-अहुक०-ओरालि० तिण्णिप० सन्वलो०। अवत्त० लो० असंखेज०। णवरि मिन्छ० अवत्त० सत्त्वो०। सेसाणं ओघे०।

जानना चाहिए। निर्यक्क त्रायुके दो पदोंके बन्धक जीवोने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्य आयुके दो पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। नरकगति, देवगिन और दो आनुपूर्वीकं नीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। औदारिक शारीरके नीन पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारहबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। बिकियिक शारीर और बैकियिक आंगोपांगके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारहबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। नीर्थकर प्रकृतिके नीन पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष कमींके सत्र पदोंक बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

७७६. नारिकयों में ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियों के तीन पदों के बन्धक जीवोंने और साता आदि बारह प्रकृतियों के चार पदों के बन्धक जीवोंने कुछ कम छह वटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन क्या है। दो आयु, मनुष्यगित, मनुष्यानुपूर्वी, तीर्थकर प्रकृति और उच्चगात्रके सब पदों के बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रक समान है। रोप प्रकृतियों के तीन पदों के बन्धक जीवों के कुछ कम छहबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदक बन्धक जीवों का स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इसी प्रकार सब नारिकयों के अपना-अपना स्पर्शन करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मिण्या- त्वके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवों ने कुछकम पाँचवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है।

७७७. तिर्यक्कों में भ्रववन्धवाली प्रकृतियों के तीन पदों के वन्धक जीवोंने सब लोक द्वेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, आठ कपाय और ओदारिक रारीर के तीन पदों के बन्धक जीवोंने सब लोक देत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यात माग प्रमाण देत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातवटे चौदह राजु देत्रका स्पर्शन किया है। शेप प्रकृतियों के सब पदों के बन्धक जीवोंका स्पर्शन ओघके समान है।

७७८. पंचिदियतिरिक्ख०३ धुविगाणं तिण्णिपदां सादादिदसण्णं पगदीणं चत्तारि पदा० लोग० असंखे० सन्वलो०। श्रीणगिद्धि०३-मिन्छ०-अहुक० णवुंस०-तिरिक्खग०[ दुग- ] एइंदि०-ओरालि०-हुंडसं० - पर०-उस्सा०-थावर-सुहुम०-पञ्जतापञ्जत-पत्तेय०-साधार०-दूभग०-अणादे० अज्ञस० णीचा० तिण्णिप० लोग० असंखे० सन्वलो०। अवत्त० लो० असंखे०।णवरि मिन्छ०-अज्ञस० अवत्त० सत्तचो०। इत्थिवे० तिण्णिप० दिबहुचोइ०। अवत्त० खेत्त०। पुरिस०-णिरयगदि-देवगदि-समचदु० दोआणु०-दोविहा०-सुभग-दोसर-आदेञ्ज० उचा० तिण्णिप० छचो०। अवत्त० खेत्त०। पंचिदि०-वेउन्वि०- वेउन्वि०-अंगो०-तस० तिण्णिप० बारहचो०।अवत्त० खेत्त०। उज्ञो० जसगि० चत्तारिप० सत्तचो०। चदुआयु०-मणुसग०-तिण्णिजादि-चदुसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०मणुसाणु०-आदावं खेत्तभंगो। बादर०तिण्णिप० तेरह०। अवत्त० खेत्त०।

७७६. पंचिदियतिरिक्खअपञ्जत्तेसु धुविगाणं तिण्णिपदा सादादीणं चत्तारिप० लो० असंखे० सन्त्रलो०। णवंस०-तिरिक्ख०-हुंडसं०-एइंदि-तिरिक्खाणु०-पर०-उस्सास-थावर-सुहुम-पञ्जत्तापञ्ज०-पत्तेय० साधार०-दूभग०-अणादे०-णीचा० तिण्णिपदा लो० असंखे०

७७८. पंचेन्द्रियतिर्यञ्च त्रिकमे ध्रवबन्धवाली प्रकृतियोंक तीन पदोंके बन्धक जीवोंने तथा साता त्रादि दस प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके त्र्यसंख्यातवें भाग प्रमाण श्रीर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, त्राठ कपाय, नपुंसक वेद, तिर्थंचगति-द्विक, एकेन्द्रियजाति, श्रौदारिक शरीर, हंडसंस्थान, परघात, उच्छवास, स्थावर, सूच्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय, अयशःकीतिं और नीच गात्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सबलोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण नेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिध्यास्व और श्रयश:कीर्तिके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात्वटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। स्विवेदके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेडवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। पुरुषवेद, नरकगति, देवगति, समचतुरस्र संस्थान, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगित, सुभग, दो स्वर, आदेय और उच्चगोत्रके तीन पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके वन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। पंचेन्द्रियजाति, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक श्रांगोपांग श्रीर त्रस प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीबोंने कुछ कम बारह बटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अयक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। उद्योत और यशःकीर्तिके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। चार आयु, मनुष्यगति, तीन जाति, चार संस्थान, ऋौदारिक अंगोपांग, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी ऋौर आतपके सब पदोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। बादर प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम तेरहबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

७७९. पंचेन्द्रिय तिर्यक्क अपर्याप्तकोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके और सातादि प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सबलोक त्तेत्रका स्पर्शन किया है। नपुंसक वद, तिर्यंचगित, हुण्ड संस्थान, एकेन्द्रिय जाति, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, स्थावर, सूत्तम, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय और नीच-

सन्वलो । अवत्त ० खेत्त ० । उजो ० - जसि ० चतारिप ० सत्तचो ६० । बाद्र ० तिष्णिप ० सत्तचो ० । अवत्त ० खेत्त ० । अजस ० तिष्णिप ० सादमंगो । अवत्त ० सत्तचो ० । सेसाणं इत्थिवेदादीणं चत्तारिप ० खेत्तमंगो । एस मंगो सन्वअपञ्जत्तगाणं विगलिदियाणं बादर-पुढ वि० - आउ ० ने उ० - वाउ० - वादरवण फिदिपत्तेय ० पञ्जताणं च ।

७८०. मणुस०३ पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो । णवरि विसेसो णादन्त्रो । मिच्छ० अवत्त ० सत्तचो६० । दोआयु०-वेउन्त्रियछ०-आहारदुग तित्थय० सन्त्रपदा खेत्त० ।

७८१. देवेसु धुविगाणं तिण्णिपदा० अट्ट-णवचो६० । सादादीणं बारसण्णं मिच्छ०-उज्जो० चत्तारिपदा० अट्ट-णवचो० । एइंदिय-थावरसंजुत्त० [तिण्णिपदा] अट्ट-णव-चो६० । [अवत्त०] सेसाणं [सन्त्रपदा] अट्टचो० । एदेण बीजेण णेदन्वं । सन्त्रदेवाणं अप्पप्पणो फोसणं णेदन्वं ।

७८२. एइंदि० सञ्बसहुम०-पुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-वणफदि-णियोद० मणु-सायुगं मोत्तृण धुविगाणं तिण्णिप० सेसाणं चत्तारिप० सन्वलो० । मणुमायु० दोपदा०

गांत्रके तीन पदोंके वन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सवलोक चेत्रका स्पर्शत किया है। अवक्तव्यपदंक वन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। उद्योत और यशःकीर्तिके चार पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम सातवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। बादर प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। अयक्तव्यपदंके तीन पदोंके वन्धक जीवोंका स्पर्शन सातवेदनीयके समान है। अवक्तव्यपदंके वन्धक जीवोंने कुछ कम सातवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। शेप खीवेद आदि प्रकृतियोंके चार पदोंके वन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। यही भंग सब अपर्याप्तक, विकलिन्द्रिय, वादर प्रथिवीकायिक, वादर जलकायिक, वादर अप्रिकायिक, वादर वायुकायिक, वादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर और इनके पर्याप्तक जीवोंके जानना चाहिए।

७८०, मनुष्यत्रिकमें पंचेन्द्रिय तिर्थंच अपर्याप्तकोंके समान भंग है। किन्तु यहाँ जो विशेष हो, वह जान लेना चाहिए। मिथ्यात्वके अवक्तत्र्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। दो आयु, वैक्रियिक छह, आहारक द्विक और तीर्थकर प्रकृतिके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है।

७८१. देवोंमें घ्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके वन्धक जीवोने कुछ कम आठवटे चौदह राजु और कुछ कम नवबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। साता आदिक वारह प्रकृतियाँ, मिध्यात्व और उद्योतके चार पदोंके वन्धक जीवोने कुछ कम आठवटे चौदह राजु और कुछ कम नौ वटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्थावर सिहत एकेन्द्रिय जातिके तीन पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु और कुछ कम नव वटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इनके अवक्तव्य पदके तथा शेष प्रकृतियोंक सब पदोंक वन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी वीजपदके अनुसार शेप प्रकृतियोंक वन्धक जीवोंका स्पर्शन भी जानना चाहिए। तथा सब देवोंके अपना अपना स्पर्शन जानना चाहिए।

७८२. एकेन्द्रिय, सब सूच्म, पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, बायुका<mark>यिक,</mark> बनस्पतिकायिक और निगोद जीवोंमें मनुष्यायुको छोड़कर ध्रववन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके लो॰ असं सन्वलो॰ । बादरएइंदिय-पज्जत्तापज्जत्त० ध्रुविगाणं तिण्णिप॰ सादादीणं दसण्णं चत्तारिप॰ सन्वलो॰ । इत्थि॰ पुरिस॰ चदुजादि-पंचसंठा॰ ओरालि॰ अंगो॰ छस्संघ॰-आदा । दोविहा॰ तस सुभग-दोसर-आदे० चत्तारिपदा लो॰ संखेज । णवुं स॰ एइंदि॰ हुंडसं॰ पर॰ प्रसा०-थावर-सुहुम-पज्जत्त—अपज्जत्त—पत्तेष० साधार॰ — दृभग॰ अणादे० तिण्णिप॰ सन्वलो॰ । अवत्त॰ लोग॰ संखेज॰ । मणुसायु॰ दोपदा॰ लोग॰ असंखेज॰ । तिरिक्खायु॰ दोपदा॰ लोग॰ असंखेज॰ । तिरिक्खायु॰ गोचा॰ तिण्णिप॰ सन्वलो॰। अवत्त॰ लोग॰ असंखे॰ । मणुस॰ मणुसाणु॰ उचा० चत्तारिप॰ लोग॰ असंखे॰ । उज्जो॰ जसगि॰ चत्तारिप॰ सत्त्वो॰ । बादर॰ तिण्णिप॰ सत्त्वो॰ । अवत्तः खेत्त० । अजतः विण्णिप॰ सन्वलो॰ । अवतः सत्त्वोदः । एस मंगो बादरपुढवि॰ आउ॰ तेउ॰ वाउ॰ तेसिं च अपज्ज॰ । वादरवणप्फदि—णियोदाणं च पज्जत्तापज्जत्त—बादरवणप्फदि—पत्तेय॰ तस्सेव अपज्ज॰ । णविर विसेसो णादवो । जिम्ह बादरएइंदि॰ लोग॰ संखेज॰ तिम्ह वाउ॰ यजाणं लोग॰ असंखे॰ कादव्वं ।

बन्धक जावाने तथा शेप प्रकृतियांक चार पदोंक बन्धक जीवाने सब लाक क्षेत्रका स्परांन किया है। मनुष्यायुकं दो पदोंकं बन्धक जीवोंने लोकके ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। बादर एकेन्द्रिय ऋोर इनके पर्याप्त अपर्याप्त जीवोंमे भूववन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके श्रीर सातादि दस प्रकृतियोंके चार पदोके बन्धक जीवोंने सबलाक क्षत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवंद, पुरुपवंद, चार जाति, पांच संस्थान, श्रीदारिक श्रांगीपांग, छह संहनन, श्रातप, दो विहायोगति, त्रस, सुभग दो स्वर ऋौर आदेयके चार पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण क्षत्रका स्पर्शन किया है। नपुंसकवंद, एकेन्द्रियजाति, हुण्ड संस्थान, परवात, उच्छवास, स्थावर, सुद्म, पर्याप्त, ऋपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग और ऋनादेयके तीन पदोके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। त्र्यवक्तत्र्यपद्के बन्धक जीवोंने लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यायके दो पदोंके वन्धक जीवोंने लोकके ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तिर्थंच आयुके दो पदोंक बन्धक जीवोंने लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तिर्थंचगित, तियञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगात्रक तीन पदोंक बन्धक जीवोंने सब-लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके वन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण नेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी स्रोर उच्चगात्रकं चार पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत श्रीर यशः कीर्तिके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछकम सातबट चौंदह राजु चेत्रकका स्पर्शन किया है। बादर प्रकृतिक तीन पदोंक बन्धक जीयोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजु तंत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। अयशःकीर्तिके तीन पदोके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके वन्धक जीवोंन कुछ कम सातवटे चौदह राज् नेत्रका स्पर्शन किया है। यही भंग बादर पृथिबीकायिक, बादरजलकायिक, वादर अग्निकायिक, बादर वायुकायिक और उनके अपर्याप्तक जीवोंके जानना चाहिए। बाद्रवनल्पतिकायिक और निगोद्जीव तथा उनके पर्याप्त ऋगेर ऋपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर तथा उनके ऋपर्याप्त जीवोंमं इसी प्रकार जानना चाहिए । किन्तु इनमें जो विशेष हो वह जानना चाहिए । जिन वादर एकेन्द्रियोंमें लोकके संख्यातवें भाग स्पर्शन कहा है, उनमे वायुकायिक जीवोंको छोड़कर लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण स्परोन कहना चाहिए।

७८३. पंचिदिय तस०२ पंचणा०-छदंसणा०-अहुक०-भय-दुगुं०-तेजा०-क० वण्ण०४-अगु०४-पञ्जत-पत्तेय०-णिमि०-पंचंत० तिण्णिप० लो० असंखे० अहुचो६० सव्व लो०।
अवत्त० खेत्त०। धीणगिद्धि०३-अणंताणुबंधि०४-णवुंस०-एइंदि०-तिरिक्ख०-हुंडसं०तिरिक्खाणु०-थावर-दूभग-अणादेञ्ज०-णीचा० तिण्णिप० लोग० असंखे०ज० अहुचोहस०
सव्वलो०। अवत्त० अहुचोह०। सादादीणं दसण्णं चत्तारिप० लोग० असंखे० अहुचो०
सव्वलो०। मिच्छ० तिण्णिप० सादभंगो। अवत्त० अहु-बारह०। अपचक्खाणा०४
तिण्णिप० अहुचो० सव्वलो०। अवत्त० छचोह०। इत्थि०-पुरिस०-पंचिदि०-पंचसंठा०ओरालि० अंगो०-छस्संघ०-दोविहा०-तस-सुभग-दोसर० आदे० तिण्णिप० अहु बारह०।
अवत्त० अहुचो०। णिरय-देवायु-तिण्णिद्धा०-आहारदुगं खेत्तभंगो। दोआयु-मणुसग०मणुसाणु०- अद्वाउचा० चत्तारिप० अहुचो०। उज्जो०-जसगि० चत्तारिप० अहु-तेरह०।
बादर० तिण्णिप० अहु-तेरह०। अवत्त० खेत्त०। ओरालि० तिण्णिप० अहुचो०

७⊏३. पंचेन्द्रियद्विक ऋौर त्रसद्विक जीवोंमे पांच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, ऋाठ कषाय, भय, जुगुष्सा तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण श्रीर पांच अन्तरायके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातव भाग प्रमाण, कुछ कम आठवटे चौदह राज त्रीर सब लोक नंत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तत्र्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन नंत्रके समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, श्रमन्तानुबन्धी चार, नपुंसकवेद, एकन्द्रियजाति, निर्यञ्जगति, हण्डसंस्थान, तिर्यक्क्यगत्यानुपूर्वी, स्थावर, दुर्भग, श्रनादेय, श्रीर नीचगात्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण, आठबटे चीदह राजु और सब लोक ज्ञंका स्र्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राज क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साता आदि दस प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवांने लांकके असंख्यातवें भाग प्रमाण. आठ बटे चौदह राज श्रीर सब लांक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मिध्यात्वके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सातावदनीयके समान है। अयक्तज्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु श्रीर कुछ कम बारह बटं चादह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अप्रत्याख्यानावरण चारके तीन पदोंक बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बंट चौदह राजु और सब लाक क्षत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बंट चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवंद, पुरुषवेद, पञ्जेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आंगोपांग, छह संहनन, दो विहायो-गति, त्रस, सुभग, दो स्वर श्रीर श्रादेयके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बंटे चौदह राज् श्रीर कुछ कम बारह बटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीबोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नरकायु, देवायु, तीन जाति श्रीर आहा-रक द्विकके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। दो त्रायु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्या-नुपूर्वी. आतप श्रीर उच्चगोत्रके चार पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे राज क्षेत्रका स्पर्शन किया है। उद्यात और यशःकीर्तिके चार पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ-बटे चौदह राज श्रीर कुछ कम तरहबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। बादर प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजु और कुछ कम तेरहवटे चौदह राजु चेत्रका

१ मूलप्रतौ श्रादाउइजो० इति पाटः।

सन्वलो । अवत्त वारह । सुहुम-अपज -साधार विणिप लोग असंखे व सन्वलो । अवत्त खेत्त । अजस विणिप सादमंगो । अवत्त अट्ट-तेरह । वेउन्त्रियछक्क-तित्थय अधं । एस मंगो पंचमण व्यंचवि व - विमंग व - चक्खुदं व -सिण त्ति । णवरि जोगेसु ओरालि अवत्त खेत्त । विमंग देवगदि-देवाणु प्रविणिप व पंचचो । अवत्त खेत्त । ओरालि व - वेउन्वि अंगो विणिप प्कारह । अवत्त खेत्त ।

७८४. कायजोगि ०-ओरालि ० अचक्खु ० - भवसि ० - आहारूग ति मूलोघं। णविर किंचि विसेसो । ओरालिय ० तिरिक्खोघं। वेउ व्विय ० धुविगाणं साददीणं बारसण्णं उज्जो ० सन्वप ० अट्ट-तेरह ० । थीणगिद्धि ० ३ - अणंताणु वंधि ० ४ - णवुं स-तिरिक्ख ग ० हुंड ० -तिरिक्खाणु ० - दूभग-अणादे ० - णीचा ० तिण्णिप ० अट्ट-तेरह ० । अवत्त ० अट्टचो ० । एवं मिच्छ ० । णविर अवत्त ० अट्ट-बारह ० । इत्थि ० - पुरिस ० पंचिदि ० पंच संठा ० - ओरालि ०

स्पर्शन किया है। श्रवक्तव्य पद्के बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। श्रौदारिक शरीरके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवटे चौदह राजु और सवलोक चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रवक्तव्य पद्के बन्धक जीवोंने कुछ कम वारहवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। सूद्रम अपर्याप्त श्रौर साधारण प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने लांकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण श्रौर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चत्रके समान है। श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवटे चौदह राजु श्रौर कुछ कम तरहवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। वैकियक छह श्रौर तीर्थकर प्रकृतिक सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन श्रोपके समान है। यही मंग पाँच मनायागी, पाँच वचनयागी, विभंगज्ञानी, चजुदर्शनी, श्रौर संज्ञी जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि योगोंमे औदारिक शरीरके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँचबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। बिभंगज्ञानी जीवोंमें देवगित श्रौर देवगत्यानुपूर्वीकं तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँचबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर श्रौर वैक्रियिक धागोंपांगक तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम ग्यारहवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है।

७८४, काययागी, श्रोदारिककाययागी, श्रचलुदर्शनी, भव्य श्रोर श्राहारक जीवोंमें मूल श्रांघक समान भङ्ग है। किन्तु यहाँ पर कुछ विशेपता है। औदारिक काययागी जीवोंमें सामान्य निर्यक्कोंक समान भङ्ग है। बैकियिककायांगी जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियाँ, साता श्रादि बारह प्रकृतियाँ श्रोर उद्योतके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवटे चौदह राजु श्रोर कुछ कम तेरह बटे चौदह राजु दोन्नका स्पर्शन किया है। स्त्यानगृद्धि तीन, श्रनन्तानुवन्धी चार, नपुंसकवेद, तिर्यक्काति, हुण्डसंस्थान, तिर्यक्कात्यानुपूर्वी, दुर्भग, श्रनादेय श्रोर नीचगोत्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवटे चौदह राजु सेत्रका स्पर्शन किया है। श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवटे चौदह राजु सेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार मिध्यात्वका स्पर्शन जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इसके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु सेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार मिध्यात्वका स्पर्शन जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इसके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु सेत्रका स्पर्शन किया

श्रंगो ०-छस्संघ ०-दोविहा ० तस-सुभग-दोसर०-आदे ० तिण्णिप० अट्ट-बारह० । अवत्त० अट्टचोइ० । दो आयु दोपदा मणुसग० मणुसाणु०-आदा०-उचा० सन्वप० अट्टचोइ० । एइंदि०-थावर० तिण्णिप० अट्ट-णव० । अवत्त० अट्टचो० । तित्थय० ओघं ।

७८५. ओरालियमि० वेउन्त्रियमि० आहार०-आहारमि०-कम्मइ० अणाहार० खेत्त-भंगो । णवरि ओरालियमि० मणुसायु० दोष० लोग० असंखे० सन्त्रलो० । कम्मइ०-अणाहार० मिच्छत्तं अवत्त० एकारह० ।

७८६. इत्थिवदे धुविगाणं तिण्णि ति सादादीणं दसण्णं चत्तारिपदा अड्डचो० सन्वलो०। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-णवुंस-तिरिक्ख०-हुंड०-तिरिक्खाणु०-दूभग-अणादे०-णीचा० तिण्णिप० अड्डचो० सन्वलो०। अवत्त० अड्डचो०। णवरि-मिच्छ० अव० अट्ड-णवचो०। णिद्दा-पचला-अट्डक०-भय-दुर्गु-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-पज्जत-पत्ते०-णिमि० तिण्णिप० अट्टचो० सन्वलो०। अवत्त० खेत्त०।

है। स्नीवंद, पुरुषवंद, पक्चिन्द्रिय जाति, पांच संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो विहायोगिति, त्रस, सुभग, दो स्वर श्रौर श्रादेयके तीन पदोंके बन्यक जीवोंने कुछ कम श्राठवंट चौदह राजु त्रौर कुछ कम बारह वंट चौदह राजु त्रोत्रका स्पर्शन किया है। श्रवक्तत्र्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवंट चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है। दो श्रायुश्चोंके दो पदोंके बन्धक जीवोंने तथा मनुष्यगित, मनुष्यगत्यालुपूर्वी, श्रातप श्रोर उच्चगोत्रके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवंट चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रियजाति श्रौर स्थावर प्रकृतिकं तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवंट चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है। श्रवक्तत्र्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवंट चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है। त्रीर्थङ्कर प्रकृतिके सव पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवंट चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है। त्रीर्थङ्कर प्रकृतिके सव पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन श्रोघके समान है।

७५५. श्रौदारिकमिश्रकाययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, श्राहारककाययोगी, श्राहारक-मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, श्रौर श्रनाहारक जीवोंमें अपनी श्रपनी सब प्रकृतियोंके सब पदोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रौदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें मनुष्यायुके दो पदोंके वन्धक जीवोंका स्पर्शन लोकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण श्रौर सब लोक है। कामणकाययोगी श्रौर श्रनाहारक जीवोंमें मिथ्यात्वके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम ग्यारहबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है।

७८६. स्नीवेदी जीवोंमें ध्रव बन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके श्रीर साता आदि दस प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजु श्रीर सबलांक त्रेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिण्यात्व, श्रनन्तानुबन्धी चार, नपुंसक वेद, तिर्यञ्चगति, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, दुर्भग, श्रनादेय श्रीर नीचगोत्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबटे चौदह राजु और सब लांक त्रेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबटे चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिण्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है। निद्रा, प्रचला, श्राठ कषाय, भय, जुगुप्सा, श्रीदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, श्रगुरुलघु चतुष्क, पर्याप्त, प्रत्येक श्रीर निर्माणके तीन पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबटे चौदह राजु श्रीर सब लोंक त्रेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका

[ णवरि ओरासि० अवत्त० दिवडुचोइ० । इत्थि०-पुरिसवे०-पंचसंठा-ओरासि० अंगो०-छस्संघ०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदे० चत्तारिपदा अट्टचो० । दो आयु०-तिष्णिजादि-आहारदुग-तित्थय खेत्त० । दोआयुगस्स दोपदा मणुसग०-मणुसाणु०-आदाव-उच्चा० चत्तारिप० अट्टचो० । एइंदि०-थावर० तिष्णिप० अट्टचो० सव्वलो० । अवत्त० अट्टचो० । उज्जो०-जसगि० चत्तारिप० अट्ट-णवचो० । बादर तिष्णिप० अट्ट-तेरहचोइ० । अवत्त० खेत्तरंगो। बेउव्विय० ओघं । अजस० तिष्णिप० लो० असंखे० सव्वलो० । अवत्त० खेत्तमंगो। बेउव्विय० ओघं । अजस० तिष्णिप० अट्टचोइ० सव्वलो० । अवत्त० अट्ट-णवचोइ० । एवं पुरिस० वि । [ णवरि ] अपचक्खाणा०४-ओरालि० अवत्त० छचोइ० । तित्थय० ओघं ।

७८७. णवुंसमे अद्वारसण्णं तिण्णि पदा सव्वलोगो। पंचदंस० मिच्छत्त० बारसक० भय-दुगुं० -ओरालि० -तेंजा० क० -वण्ण०४ -अगु० -उप० [णिमि० ] तिण्णिप० सव्वलो०।

म्पर्शन चेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि ऋौदारिकके ऋवक्तत्र्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ्बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुपवेद, पाँच संस्थान, स्त्रीदारिक त्राङ्गापाङ्ग, छह संहनन, प्रशस्तविहायागिति, सुभग, सुस्वर, त्रादेयके चारपदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। दो आयु, तीन जाति, आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। दा त्रायुत्रोंके दो पदोंके त्र्यार मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, त्र्यातप और उच्चगोत्रके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ वटे चौदह राज, जेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रिय जाति और स्थावरके तीन पर्दोंक वन्धक जीवोंने कुछ कम त्राठ वटे चौदह राजु श्रीर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। उद्यात श्रीर यश:-कीर्तिक चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजु और कुछ कम नौबटे चौदह राजु नेत्रका स्पर्शन किया है। बादर प्रकृतिके तीन पदोंक वन्धक जीवोंने कुछ कम आठवट चौदह राज् और कुछ कम तेरहबटे चौदह राज सेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तत्र्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन नेत्रके समान है। सूदम, अपर्याप्त और साधारण प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने लांकके असं-ख्यातवें भाग प्रमाण ऋौर सब लोक त्रेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पद्के बन्धक जीवोंका स्पर्शन चोत्रके समान है। वैक्रियिक शरीरके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन स्रोधके समान है। अयश:कीर्तिके तीन पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु श्रौर सबलाक चेत्रका म्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु और कुछ कम नौवटे चोदह राज त्रेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार पुरुपवदी जीवोंके भी जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि अप्रत्याख्यानावरण चार और औदारिकशरीरके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। तीर्थकर प्रकृतिके सब पर्दोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है।

७८७. नपुंसकवेदी जीवोंमं अठारह प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक त्रेत्रका स्पर्शन किया है। पांच दर्शनावरण, मिध्यात्व, वारह कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु, उपघात और निर्माणके तीन पदोंकं बन्धक

अवत्त० खेत्त०। णवरि मिच्छत्त० अवत्त० बारहचो०। ओरालिय० अवत्तव्वं छचोह०। दोआयु०-वेउव्वियछकं-[ आहारदुग-] तित्थय० त्रोरालियकायजोगिभंगो। सेसाणं चत्तारि पदा सञ्वलो०।

७८८. कोधादि०४-मदि० सुद० ओघं। णवरि मदि० सुद० देवगदि-देवाणुपु० तिष्णिप० पंचचो०। अवत्त० खेत्तभंगो। वेउन्वि० वेउवि० ग्रंगो० तिष्णि पदा ओरालि० [अवत्त०] एकारह०। [वेउवि०दुग०] अवत्त० खेत्तभंगो।

७८६. आभि०-सुद०-ओघि० पंचणा०-छदंसणा०-अट्टक-पुरिस०-भय-दुगुं०-मणुसगदिपंचग०-पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-जण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-तित्थय०-उच्चा०-पंचंत० तिण्णि पदा अट्टचोइ०। अवत्त० खेत्तभंगो। णविर मणुसगदिपंचग० अवत्त० छच्चोइ०। सादादीणं बारस० चत्तारि पदा अट्ट०। मणुसायु० दो पदा अट्टचोइ०। देवायु-आहारदुगं खेत्तभंगो। अपच-क्खाणा०४ तिण्णि पदा अट्टचो०। अवत्त० छच्चोइ०। देवगदि०४ तिण्णि पदा छच्चो०।

जीवोंने सब लोक संत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तत्र्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन संत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वके अवक्तत्र्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारहबटे चौदह राजु संत्रका स्पर्शन किया है। औदारिक शारीरके अवक्तत्र्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौ रह राजु संत्रका स्पर्शन किया है। यो आयु, वैक्रियिक छह, आहारक दो और तीथँकर प्रकृतिके सब पदोंका भंग औदारिककाययोगी जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक संत्रका स्पर्शन किया है।

७८८. क्रोधादि चार कपायवाले, मत्यज्ञानी, और श्रुताज्ञानी जीवोंका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें देवगति और देवगत्यानुपूर्वीके तीन पहोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम पांचवटे चौदहराजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तज्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। वैक्रियिकशारीर और वैक्रियिकशांगोपांगक नीन पदोंके तथा औदारिकशारीरके अवक्तज्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम ग्यारहबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। वैक्रियिकदिकके अवक्तज्यपदके बन्धक जीवोंने का

७८६. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी श्रौर अवधिज्ञानी जीवोंमें पांच ज्ञानावरण, छहदर्शनावरण, श्राठ कपाय, पुरुपवेद, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगित पंचक, पंचेन्द्रियजाित, तैजसशरीर
कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क,
सुभग, सुस्वर, श्रादेय, निर्माण, तीर्थङ्कर, उच्चगात्र श्रौर पाँच अन्तरायके तीन पर्होंके बन्धक
जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदहराजु चत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका
स्पर्शन चत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगित पंचकके अवक्तव्यपदके बन्धक
जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साता श्रादि बारह प्रकृतियोंके
चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु च त्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यायुके
दो पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। देवायु
श्रोर आहारकद्विकके बन्धक जीवोंका स्पर्शन च त्रके समान है। अप्रत्याख्यानावरण चारके तीन
पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु च त्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके
बन्धक जीवोंने कुछ कम छह वटे चौदह राजु च त्रका स्पर्शन किया है। विवाति चारके तीन पदोंके

अवत्त ० खेत्त ० । मणपजनादि याव सुहुमसंपराइगा ति खेत्तभंगो ।

७९०. संजदासंजदा० देवायु-तित्थय० खेत्त०। धुविगाणं तिण्णि पदा वि सेसाणं चत्तारि पदा छचो०। असंजदे ओघं। ओघिदं०-सम्मादि०-खइग०-वेद्ग०-उवसम० आमिणि०मंगो। णवरि खइगे उवसम० देवगदि०४ चत्तारिपदा मणुसगदिपंचग० अवत्त० खेत्त०।

७६१. किण्ण०-णील०-काउसु धुविगाणं तिण्णि पदा सन्वलो०। थीणगिद्धि०३-मिन्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिण्णि पदा सन्वलो०। अवत्त० खेत्त०। णविर मिन्छ० अवत्त० पंच-चत्तारि-बेचोइ०। णिरय-देवायु-देवगिददुगं खेत्त०। णिरयगिद-वेउन्वि०-वेउन्वि०अंगो०-णिरयाणु० तिण्णिपदा छ-चत्तारि-बेचोइ०। अवत्त० खेत्त०। सेसाणं चत्तारि पदा सन्वलो०। तित्थय० चत्तारिपदा खेत्त०।

७६२. तेऊए धुविगाणं तिण्णि पदा अट्ट-णवचोइ०। थीणगिद्धि०३-अणंताणु-बंधि०४-णव् स०-तिरिक्खग०-एइंदि०-हुंड०-तिरिक्खाणु०-थावर-दूभग-अणादे०-

वन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजु दोत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपद्के बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। मनःपर्ययज्ञानी जीवोंसे लेकर सूद्दमसाम्परायिकसंयत जीवों तक स्पर्शन चेत्रके समान है।

७६०. संयतासंयत जीवोंमें देवायु और तीर्थकर प्रकृतिके वन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान हैं। ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके वन्धक जीवोंने और शेष प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछकम छहवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। असंयत जीवोंमें स्पर्शन खोषके समान है। अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि और उपशम सम्यग्दृष्टि जीवोंमें आभिनिवोधिकज्ञानी जीवोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि चायिक सम्यग्दृष्टि और उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंमें देवगित चतुष्कके चार पदोंके और मनुष्यगित पंचकके अवक्तव्यपद्के बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है।

७६१. कृष्ण, नील और कापोन लेश्यावाले जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके तीन परोंके वन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्श न किया है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिश्यात्व और श्रनन्तानुबन्धी चारके तीन परोंके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्श न किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवों का स्पर्श न चेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि मिश्यात्वके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवों ने कमसे कुछ कम पाँचवटे चोदह राजु, कुछ कम चारवटे चोदह राजु और कुछ कम दांबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्श न किया है। नरकायु, देवायु और देवगतिद्विकके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। नरकगित, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आंगोपांग और नरकगत्यानुपूर्वींके तीन परोंके बन्धक जीवोंने कमसे कुछ कम छहबटे चौदह राजु, कुछ कम चारवटे चौदह राजु और कुछ कम दांबटे चौदह राजु कोत्रका स्पर्शन किया है। त्रिर्थक किया है। त्रिर्थक किया है। त्रिर्थक चार पर्दोंके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। त्रिर्थक प्रकृतियोंके चार पर्दोंके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। त्रिर्थक प्रकृतिके चार पर्दोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है।

७६२. पीतलेश्यावाले जीवोंमें प्रवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम त्र्याठबटे चौदह राजु और कुछ कम नव्यटे चौदह राजु चत्रका स्पर्धन किया है। स्त्यानगृद्धि तीन, अनन्तानुबन्धी चार, नपुं सकवेद, तिर्थचगित, एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, तिर्थख्यास्यानुपूर्वी, स्थावर, दुर्भग अनादेय और नीचगोत्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे

णीचा० तिण्णिप० अद्व-णक्चो० । अवत्त० अद्वचो० । सादादिवारह-मिच्छत्त-उज्जो० चत्तारि पदा अद्व-णवचो० । अपचक्खाणा०४-ओरालि० तिण्णि प० अद्व-णवचो६० । अवत्त० दिवहुचो६० । इत्थिवे० चत्तारि पदा अद्वचो६० । एवं पुरिस० । मणुसगदि-पंचिंद०-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-मणुसाणु०-आदाव-दोविहा०-[तस०] सुभग-दोसर-आदे०-उचा०-देवगदि०४ तिण्णि पदा दिवहुचो६० । अवत्त० खेत्त० । णवरि मणुसदुग०-वज्जरिस०-ओरालि०अंगो० दिवहुचो० । पचक्खाणा०४-आहारदुग-तित्थय० ओघं । पम्माए तेउभंगो । णवरि याणि पदाणि दिवहुं तेसिं पंचचो० । सेसाणं अद्वचो० । एवं सुकाए वि । णवरि छचो६० ।

७६३. सासणे धुगिगाणं तिण्णि पदा अट्ट-बारह०। इत्थि०-पुरिस०-पंचसंठा पंच-संघ०-दोविहा०-सुभग-दोसर-आदे० तिण्णि पदा अट्ट-एकारह०। अवत्त० अट्टचो०। तिरिक्खगदिदुग दूभग अणादे० णीचागो० तिण्णिपदा अट्ट-बारह०। अवत्त० अट्टचो०।

चौदह राजु त्रौर कुछ कम नवबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तज्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम त्राठवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। साता त्रादि बारह प्रकृतियाँ. मिथ्यात्व और उद्योतके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु और कुछ कम नवबटे चौदह राज चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रप्रत्याख्यानावरण चार श्रीर श्रीदारिक शरीरके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछकम आठबटे चौदह राज ऋौर कुछ कम नवबटे चौदह राज नेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़वटे चौदह राज क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवंदके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राज च त्रका स्पर्श न किया है। इसी प्रकार प्रकषवेदके चार पदोंके बन्धक जीवोंका त्पर्शान जानना चाहिए। मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय नाति. पाँच संरथान, श्रीदारिक श्रांगोपांग, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रातप, दो विहा-योगित, त्रस, सुभग, दो स्वर, आदेय, उच्चगोत्र खौर देवगितचतुष्कें तीन पदींके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़ बटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्श न क्षेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगतिद्विक, वक्रपेभनार।चसंहनन श्रीर श्रीदारिक श्रांगापांगके श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछकम डेढ्बटे चौदहराज क्षेत्रका स्पर्शन किया है। प्रत्याख्यानावरण चार, स्नाहारकद्विक स्नौर तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है। पद्मलेश्यावाले जीवोंमें पीतलेश्यावाले जीवोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि जिन पदोंका कुछ कम डेढ्बटे चौदह राजु स्पर्शन कहा है उनका कुछ कम पाँचबटे चौदह राजु क्षेत्र प्रमाण स्पर्शन कहना चाहिए। शेष पदोंका कुछ कम त्राटबटे चौदह राजु चेत्र प्रमाणं स्पर्शन कहना चाहिए। इसी प्रकार शुक्रलेश्यावाले जीवोंमें भी जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यहाँपर कुछकम छहवटे चौदहराज क्षेत्र प्रमाण स्पर्शन कहना चाहिए।

७६३. स'सादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु और कुछ कम वारहवटे चौदहराजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुपवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो विहायागित, सुभग, दो स्वर और आदेयके तीन पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु और कुछ कम ग्यारहवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। विर्युद्धगितिद्विक, दुर्भग, अनादेय और नीचग।त्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे

सादादीणं परियत्तमाणियाणं उज्जो॰ चत्तारिप॰ अट्ट-बारह॰। दोत्रायु॰-मणुसग॰-मणुसाणु॰-उचा॰ चत्तारिपदा अट्टचोइस॰। [देवायु॰ खेत्तमंगो ] देवगदि॰४ तिष्णि-पदा पंचचोइस॰। भवत्त॰ खेत्त॰। ओरालि॰ तिष्णिपदा अट्ट-बारह॰। अवत्त॰ पंचचोइ॰।

७६४. सम्मामि० धुविगाणं तिण्णिपदा अड्डचो० । सादादीणं चत्तारिपदा अड्डचो० । [ णवरि देवगदि४ लोग० असंखे० । ] असण्णीसु णिरय देवायु०-वेउव्विय०- [ छ ] ओरालि० खेत्तभंगो । सेसाणं एइंदियभंगो । एवं फोसणं समतं।

## कालाणुगमो

७६५. कालाणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे० । ओघे० भ्रज०-अप्पद०-अवत्त० एसिं परिमाणे अणंता असंखेजा लोगरासीणं तेसिं सुन्वद्धा । असंखेजरासिं जहण्णेण एयस०, उक्क० आविलयाए असंखेज० । जेसिं संखेजजीवा तेसिं जह० एग०, उक्क० संखेज समय० । अवद्वि० सन्वेसिं सन्वद्धा० । णविर जेसिं भयणिजरासिं तेसिं अवद्विद-

चौदह राजु श्रौर कुछ कम वारहबंट चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रवक्तव्य पद्के बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबंट चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। साता श्रादि परिवर्तमान प्रकृतियाँ श्रौर उद्योत प्रकृतिके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबंट चौदह राजु श्रौर कुछ कम बारह बंट चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। दो श्रायु, मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी श्रौर उच्च-गोत्रके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबंट चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। देवायुक्त बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। देवगति चतुष्कके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँचबंट चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। श्रोदारिकशरीरके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबंट चौदह राजु श्रोर कुछ कम बारहबंट चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँच-बंट चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

५६४. सम्यग्मिध्यादृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु च त्रका स्पर्शन किया है। साता आदि प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु च त्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि देवगित चतुष्कके चार पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके आसंख्यातवें भाग प्रमाण च त्रका स्पर्शन किया है। असंज्ञी जीवोंमें नरकायु, देवायु, वैक्रियिक छह और औदारिक शरीरके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन च त्रके समान है। शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका समान है। इस प्रकार स्पर्शन समाप्त हुआ।

कालानुगम

७६५. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है-श्रोघ और आदेश। श्रोघसे जिन मार्ग-णाओं में भुजगार, अल्पतर और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका परिमाण अनन्त और असंख्यात लोक प्रमाण है, उनका काल सर्वदा है। जिनका परिमाण असंख्यात है उनका जधन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। जिनका परिमाण संख्यात है उनका जधन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल संख्यात समय है। अवस्थितपदवाले सब जीवोंका काल कालो अप्पप्पणो पगदिकालो कादन्वो । णवरि जह० एग०। तिण्णिआयुगाणं अवत्त-न्वगा जह० एग०, उक्क० आवलि० असंखे०। अप्पद० ज० अंतो०, उक्क० पलिदो० असंखे०। तिरिक्खायु० दोपदा सन्वद्धा। एवं याव अणाहारग ति णेदन्वं ।

### एवं कालं समर्ता।

## अंतराणुगमो

७९६. अंतराणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०सोलसक०-भय-दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४- अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत०
भुज०-अप्पद०-अविद्वि० णित्थ अंतरं। अवत्त० ज० एग०, उक्कस्सेण थीणिगिद्धि०३मिच्छ०-अणंताणुवंधि०४ सत्त रादिंदियाणि। अपचक्खाणा०४ चोइस रादिंदियाणि।
पचक्खाणा०४ पण्णारस रादिंदियाणि। ओरालि० अंतो०। सेसाणं वासपुधत्तं०,।
वेउव्वियछ०-आहारदुगं भुज०-अप्पद०-अवत्त० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अविद्वि० णित्थ अंतरं। तिण्णि आयुगाणं अवत्त०-अप्पद० जह० एग०, उक्क० चदुवीस मुदु०।
तिरिक्खायुगस्स दोपदा० णित्थ अंतरं। तित्थय० दो पदा जह० एग०, उक्क० अंतो०।

सर्बदा है। इतनी विशेषता है कि जिन मार्गणाओं की राशि भजनीय है, उनके अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका काल अपने अपने प्रकृतिवन्धक कालके समान कहना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जधन्यकाल एक समय है। तीन आयुत्रोंके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवींका जधन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल आवलींके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अल्पतर पदके वन्धक जीवोंका जधन्यकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्टकाल पत्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। तियंच आयुके दो पदोंके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये।

इस प्रकार काल समाप्त हुआ।

#### अन्तरानुगम

उध्ह. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—आंघ और आदेश। आंघसे पाँच ज्ञानावरण; नव दशीनावरण, मिण्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तरायके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर स्त्यानगृद्धि तीन, मिण्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारका सात दिनरात है। अप्रत्याख्यानवरण चारका चौदह दिनरात है। प्रत्याख्यानावरण चारका पन्द्रह दिनरात है, ओदारिकशरीरका अन्तर्मुहूर्त है और शेप प्रकृतियोंका वर्षपृथक्तव है। वैक्रियिकछह, आहारकिद्विकके भुजगार, अल्पतर और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितपदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। तीन आयु-अोंके अवक्तव्य और अल्पतरपदके बन्धक जीवोंका जवन्य समय है और उत्कृष्ट अन्तर चौबीस मुहूर्त है। तियच आयुके दो पदोंके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। तीथक्कर प्रकृतिके दो पदोंके बन्धक जीवोंका जवन्य अन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है। आवस्थित एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चौबीस मुहूर्त है। तियच आयुके दो पदोंके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। जीवस्थित वर्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर अन्तर का विशेष जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर एक समय है स्वार्थ जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर एक समय है अवस्थित वर्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक

अवट्ठि॰ णित्थि अंतरं। अवत्त ॰ जह ॰ एग ॰, उक्क ॰ वासपुधत्तं ॰। सेसाणं चत्तारि पदा णित्थि अंतरं।

७६७. णिरएस धुविगाणं दो पदा जह ० एग०, उक्क० अंतो०। अविष्ठ ० णित्थ अंतरं। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिण्णिपदा णाणावरणभंगो। अवत्त० जह० एग०, उक्क० सत्त रादिंदियाणि। तित्थय० दो पदा जह० एग०, उक्क० अंतो०। अविष्ठ० णित्थ अंतरं। अवत्त० जह० एग०, उक्क० पितदो० असं०भागो। अथवा जह० एग०, उक्क० वासपुधत्तं०। दो आयु० पगदिअंतरं। सेसाणं तिण्णिपदा जह० एग० उक्क० अंतो। अविष्ठ० णित्थ अंतरं। एवं सव्विणिरयाणं। णविर सत्तमाए दोगिदि-दोआणु०-दोगोदं थीणगिद्धिभंगो।

७६ ८. तिरिक्खेसु ओघं। पंचिंदिय तिरिक्ख ०३ धुविगाणं तिण्णिपदा णिरयगिदभंगो। थीणिग ०३-मिच्छ ० – अद्वक ० ओघं। सेसाणं णिरयगिदभंगो। आयुगाणं पगिदअंतरं। पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज ० णिरयोघं। एवं सन्वअपज्ज ० – विगिलिंदि ० – बादरपुढवि ० – आउ० – तेउ० – वाउ० – वणप्कदिपत्तेय ० पज्जत्ता। णविरि मणुसअपज्ज ० धुविगाणं

समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है। शेष प्रकृतियोंके चार पदोंक बन्धक जीवोंका अन्तर-काल नहीं है।

७६७. नारिकयों में घु वबन्धवाली प्रकृतियों के दो पदों के बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तमुंहूर्त है। अवस्थितपदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं हैं। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारके तीन पदों के बन्धक जीवोंका मंग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन रात है। तीर्थक्कर प्रकृतिके दो पदों के बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पत्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है, अथवा जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पत्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है, अथवा जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथकत्व है। दो आयुआंके दो पदोंक बन्धक जीवों का अन्तरकाल प्रकृतिबन्धके अन्तरकालके समान है। शोष प्रकृतियोंक तीन पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तरमुंहूर्त है। अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तरमुंहूर्त है। अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार सब नारिकयोंके जानना चाहिए। इतनी विशोपता है कि सातवीं पृथिवीमें दो गति, दो आनुपूर्वी और दो गोत्रका भङ्ग स्त्यानगृद्ध प्रकृतिके समान है।

७६८. तिर्यक्कों में श्रांघके समान भङ्ग है। पञ्चिन्द्रिय तिर्यक्कित्रिक्में ध्रवबन्धवाली प्रकृतियों के तीन पदों के बन्धक जीवोंका भङ्ग नरकगितके समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिश्यान्त्र श्रोर श्राठ कषायका भङ्ग श्रोधके समान है। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग नरकगितके समान है। श्रायुत्रोंका भङ्ग प्रकृतिबन्धके अन्तरके समान है। पञ्चिन्द्रिय तिर्यक्क अपर्याप्तकों सामान्य नारिकयों के समान भङ्ग है। इसी प्रकार सब श्रपर्याप्तक, विकलेन्द्रिय, बादर प्रथिवीकायिक पर्याप्त बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर श्राप्तकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त, वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवों के जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्य श्रपर्याप्तकों में ध्रववन्धवाली प्रकृतियों के तीन पदों के बन्धक जीवों का जवन्य श्रान्तर एक समय है और उद्कृष्ट श्रान्तर पत्यके श्रासंख्यातवें भाग प्रमाण है।

तिण्णि पदा ज॰ ए॰, उ॰ पलिदो॰ असंखे॰। सेसाणं चत्तारि प॰ ज॰ ए॰, उ॰ पलिदो॰ असंखे॰।

७६६. मणुस०३ धुविगाणं दो पदा ज० ए०, उ० अंतो०। अबद्धि० णित्थ अंतरं। अवतः अधं। सेसाणं तिण्णि प० ज० ए०, उ० अंतो०। अबद्धि० णित्थ अंतरं।[आउगाणं पगदिअंतरं।] एवं पंचिदिय—तस०२-पंचमण०—पंचवचि०-इत्थि०— पुरिस०-चक्खुदं०। देवेसु विभंगे णिरयभंगो। कायजोगि—ओरालिय०—णवुंस०— कोघादि०४—मदि०—सुद०-असंज०-अवक्खु०— तिण्णिले०-भवसि०-अब्भवसि०— मिच्छादि०-अःहार० ओघं। णवरि धुविगाणं विसेसो णाद्व्वो।

८००. ओरालियमिस्से देवगदि०४ तिष्णि प० ज० ए०, उ० मासपुघ० । तित्थय० तिष्णिप० ज० ए०, उ० वासपुघ० । मिच्छ० अवत्त० ज० ए०, उ० पिलदो० असंखे० । सेसाणं सन्वपदा णित्थ अंतरं । एवं कम्मइ० । वे अव्वियका० णिरयभंगो । वे उव्वियमि० तित्थय० तिष्णिपदा जह० एग०, उक्क० वासपुघ० । सेसाणं सव्वपदा जह० एग०, उक्क० बारस मुद्दु० । एइंदियतिगस्स चदुवीस मुद्दु० । मिच्छ० अवत्त० जह० एग०,

शेष प्रकृतियोंके चार पदोके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय हैं श्रीर उत्कृष्ट श्रम्तर पल्यके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है।

७६६. मनुष्यित्रकमें ध्रवबन्धवाली प्रकृतियों के दो पदों के बन्धक जीवों का जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन भूं हूर्त है। अवस्थित पदके बन्धक जीवों का अन्तरकाल नहीं है। अवक्ष्यक पदके बन्धक जीवों का अन्तरकाल आंघक समान है। सेप प्रकृतियों के तीन गदों के बन्धक जीवों का जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन मुहूर्त है। अवस्थितपर के बन्धक जीवों का अन्तरकाल नहीं है। आयुओं का भङ्ग प्रकृतिबन्धके अन्तरक समान है। इसी प्रकार प्रकृत्यित्य दिक, त्रसिद्धक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, स्वीवदी, पुरुषवदी और चन्नुःदर्शनी जीवों के जानना चाहिये। देवों में और विभङ्गज्ञानी जीवों में नारिकयों के समान भङ्ग है। काययोगी, औदारिक काययोगी, नपुंसक वेदी, कोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचन्नुःदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिध्यादृष्टि और आहारकों में श्रोधके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि ध्रववन्धवाली प्रकृतियों का विशेष जानना चाहिये।

द्वार क्रीदारिकिनिश्रकाययोगी जीवोंमें देवगित चतुष्कके तीन पदोंकं बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर मास पृथक्त है। तीर्थंकर प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वषपृथक्त है। मिण्यात्वके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पर्चके असंख्यात माग प्रमाण है। रोप प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार कार्मणकाययोगी जीवोंके जानना चाहिये। वैक्रियिककाययोगी जीवोंमें नारिकयोंके समान भङ्ग है। वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें तीर्थंकर प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वषपृथक्त है। रोष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वषपृथक्त है। रोष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वारह मुहूर्त है। एकेन्द्रियत्रिकका चौवीस मुहूर्त है। मिण्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पर्चके असंख्यात वें

उक्क० पलिदो० असंखे०। आहार०-आहारमि० सम्वाणं सन्वे भंगा जह०एग०, उक्क० वासपुष्ठ०।

८०१. अवगदे० सञ्च हम्मा० भ्रुज०-अवत० जह० एग०, उक्क० वासपुघ०। अप्पद०-स्रविद्ध० जह० एग०, उक्क० छम्मासं०। एवं सुहुमसंप०। णवरि अवत्तव्वं णरिथ अंतरं।

८०२. आभि०-सुद०-ओधिणाणी० धुविगाणं तित्थयः मणुसभंगो। देगदि-दोसरीर-दोअंगो०-वज्जरिस०-[दो आणु०] दोण्णि पदा जहः एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० एग०, उक्क० मासपुध०। सेसाणं तिण्णि प० जह० एग०, उक्क० अंतो०। सन्वाणं अवद्वि० णित्थ अंतरं। एवं ओधिदंस०-सम्मादि०-वेदगसम्मा०। मणपज० धुविगाणं मणुसि०भंगो। सेसाणं अधिभंगो। एवं संजदा संजदासजदा।

८०३. सामाइ०-छेदो० धुविगाणं विसेसो णादक्वो । परिहारे धुविगाणं भुज०-अप्प० ज० एग०, उक्क० अंतो० । अवद्वि० णत्थि अंतरं । सेसाणं पि एस भंगो० । णवरि अवत्त० विसेसो ।

८०४. तेउए देवगदि०४ भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि०

भाग प्रमाण है। त्र्याहारककाययोगी ऋार त्र्याहारकमिश्रकाययोगी जीवोमें सब प्रकृतियोंकं सब पदोके बन्धक जीवोंका जवन्य त्र्यन्तर एक समय है स्रोर उत्कृष्ट अन्तर वर्षग्रथक्त्व है।

५०१. अपगतवेदी जीवोंमें सब कर्मोंके भुजगार और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्ष पृथक्त है। अल्पतर और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महिना है। इसीप्रकार सूद्रमसाम्परा-यिक संयत जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है।

प्रशासिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी त्रोर अवधिज्ञानी जीवोंमें श्रुवबन्दवाली प्रकृतियाँ त्रीर तीर्थंकर प्रकृतिके बन्धक जीवोंका भङ्ग मनुष्योंके समान है। दो गित, दो शारीर, दो त्राङ्गापाङ्ग, वित्रत्र प्रकृतिके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर मास पृथक्तव है। जोप प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर मास पृथक्तव है। जोप प्रकृतियोंके तीन पदोंके अवस्थित पदका अन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि और वदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिये। मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके समान है। इसी प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्यिनयोंके समान है। श्रोप प्रकृतियोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। इसी प्रकार संयत और संयतासंयन जीवोंके जानना चाहिये।

द०३. सामायिकसंयत श्रौर छेदोपस्थापनासंयत जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियों-का विशेष जानना चाहिये। परिहारिवशुद्धि संयत जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार और श्रुल्पतर पदके वन्धक जीवोंका जधन्य श्रुन्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्रुन्तर अन्तर्मुहूर्त है। श्रुवस्थितपदके बन्धक जीवोंका श्रुन्तरकाल नहीं है। शेष प्रकृतियोंक बन्धक जीवोंका भी यही भक्त है। किन्तु श्रुवक्तत्र्य पदमें कुछ विशेषता है।

८०४. पीतलेश्यावाले जीवोंमें देवगति चतुष्क के मुजगार श्रौर श्राट्यतर पदके बन्धक

णित्य अंतरं । अवत्त० जह० एग०, उक्क० मासपुध० । ओरालिय० अवत्त० जह० एग०, उक्क० अडदालीसं धुदु० । मिच्छ० अवत्त० जह० एग०, उक्क० सत्त रादिंदि-याणि । सेसाणं मणुसोघो । विसेसो णाद्व्वो । पम्माए देवगदि०४ तेउमंगो । ओरालि०-ओरालि०अंगो० अवत्त० जह० एग०, उक्क० दिवसपुध० । सेसाणं च तेउ-मंगो । सुकाए मणुसगदि-देवगदि-दोसरीर-दोअंगो०—दोआणु० ओधिमंगो । सेसाणं मणुसि०मंगो ।

८०५. खह्गे धुविगाणं मणुसगिद-देवगिद-दोसरीर-दोअंगो०-वज्जिरिस०-दो आणु० अवत्त० जह० एग०, उक्त० वासपुध०। सेसाणं ओधिमंगो। उवसम० पंचणा-णावरणा० तिण्णि पदा जह० एग०, उक्त० सत्त रादिंदियाणि। एवं सव्वाणं। णविर आहार०-आहार०अंगो०-तित्थय० भुज०-अप्पद०-अविद्वि०-अवत्त० जह० एग०, उक्त० वासपुध०। सेसाणं अवत्त० ओधं।

८०६. सासगो धुविगाणं तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० पित्रदो० असंखे०। सेसागां चत्तारि प० ज० एग०, उक्क० पित्रदो० असंखे०। एवं सम्मामि०। सण्णि०

जीवोंका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर मासप्रथक्त्व है। औदारिक शरीरके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अड़तालीस सुहूर्त है। मिण्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन रात है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य मनुष्योंके समान है। यहाँ पर जो विशेष हो वह जानना चाहिये। पद्मलेश्यावाले जीवोंमें देवगित चतुष्कका भङ्ग पीत लेश्याके समान है। औदारिक शरीर और औदारिक आङ्गापाङ्गके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका जयन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दिवस प्रथक्त्व है। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग पीतलेश्याके समान है। शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें मनुष्यगित, देवगित, दो शरीर, दो आङ्गापाङ्ग और दो आनुपूर्वीका भङ्ग अविद्यानी जीवोंके समान है। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्यिनयोंके समान है।

द्वायकसम्यग्दृष्टि जीवोंमें ध्रववन्धवाली प्रकृतियों, मनुष्यगित, देवगित, दो शारीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वन्नऋषभनाराचसंहनन और दो आनुपूर्वीके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। उपशम सम्यग्दृष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरणके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन रात है। इसी प्रकार सब प्रकृतियोंका जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि आहारक शरीर, आहारक आङ्गोपाङ्ग और तीर्थङ्कर प्रकृतिके मुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्ष है। शेष प्रकृतियोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल ओधके समान है।

५०६. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पत्यके अमंख्यातवें भाग प्रमाण है। शेष प्रकृतियोंके पंचिदियमंगी । असण्णीसु वेउन्वियछ०-ओराज्ञि० तिरिक्खोघं । सेसाणं ओघं । अणाहार० कम्मइगमंगी । एवं अंतरं समत्तं ।

# भावाणुगमो

८०७. भावाणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे०। श्रोघे० पंचणा० चत्तारिपदा बंधगा ति को भावो १ ओदइगो भावो। एवं सञ्चपगदीणं सञ्चत्थ गोदग्वं याव अणाहारग ति । एवं भावं समत्तं

# अपाबहुआणुगमो

८०८. अप्पाबहुगं दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा०-णवदंसणा-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०- पंचंत० सव्वत्थोवा अवत्तव्वबंधगा। अप्पद० अणंतगु०। भ्रुजागारबंध० विसे०। अवद्वि० असंखे०। दोवेदणी०-सत्तणोक०-द्वोगदि-पंचिंदि०-छस्संठा०-ओरालि० श्रंगो०-छस्संघ०-दोआणु०-पर०-उस्सा०-उज्जो०-दोविहा०-तस-बादर-पज्जतापज्जत्त-पत्ते०-थिरा-दिछयुग०-दोगोद० सव्वत्थोवा अवत्त०। अप्पद० संखेज्ज०। भ्रुज० विसे०। अवद्वि० असंखेज्ज०। चदुआयु० सव्वत्थोवा अवत्त०। अप्पद० असंखे०। वेउव्वियछ० सव्व-

चार पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पह्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। इसी प्रकार सम्यग्मिश्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिये। संज्ञियोंमें प्रेक्चेन्द्रियोंके समान भक्क है। असंज्ञियोंमें वैक्वियिक छह और औदारिक शरीरका भक्क सामन्य तिर्यक्कोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भक्क आंघके समान है। अनाहारकोंमें कार्मणकाययोगी जीवोंके समान भक्क है। इस प्रकार अन्तरकाल समाप्त हुआ।

#### भावानुगम

८०७. भावानुगमकी ऋषेद्धा निर्देश दो प्रकारका है—ऋांघ ऋषेर ऋषिया। ऋषेघसे पाँच ज्ञानावरणके चार पदोंके वन्धक जीवोंका कौनसा भाव है १ ऋषेदियक भाव है। इसी प्रकार सब प्रकृतियोंका सर्वत्र ऋनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये। इसप्रकार भावानुगम समाप्त हुआ।

#### अल्पबहुत्वानुगम

५०५. अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—श्रोघ और आदेश। श्रोघसे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिध्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुष्सा, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण-चतुष्क, अगुरुलघु, उपघान, निर्माण और पाँच अन्तरायके अवक्तत्र्यपदके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अल्पतरपदके बन्धक जीव श्रमच्यातगुणे हैं। इनसे भुजगार पदके वन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। दो वेदनीय, सान नोकषाय, दो गति, पक्चित्रयंजाति, छह संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, परघात, उच्छवास, उद्योत, दो विहायो ति, त्रस, बादर, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर आदि छह युगल और दो गात्रके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव संख्यात गुणे हैं। इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। चार आयुत्रोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक है। इनसे अल्पतर

त्योवा अवत्त । भ्रज ० - अप्पद ० दो वि सरिसा संखेज्ज ० । अवट्ठि० असंखे० । तिण्णि-जादी देवगदिमंगो । एइंदि० - आदाव - थावर - सुहुम - साधार ० सव्वत्थो० अवत्त ० । भ्रज ० संखेज्ज ० । अप्पद ० विसे० । अवट्ठि० असंखेज्ज ० । [ आहार ० :] आहार ० अंगो० सव्वत्थो० अवत्त ० । दोपदा० संखेज्ज ० । अवट्ठि० संखेज्ज ० । तित्थय० सव्वत्थो० अवत्त ० । दोपदा असंखेज्ज ० । अवट्ठि० असंखेज्ज ० ।

८०६. णिरए धुनिगाणं सन्वत्थोवा भुज०-अप्पद्०। अवद्वि० असंखे०। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-तित्थय० सन्वत्थोवा अवत्त०। भुज०-अप्पद्०
असंखेज्ज०। अवद्वि० असंखे०। सेसाणं सन्वत्थोवा अवत्त०। भुज०-अप्पद्० संखेज०।
अवद्वि० असंखेज्ज०। तिरिक्खायु० ओघं। मणुसायु० सन्वत्थो० अवत्त०। अप्पद०
संखेज्ज०। एवं सत्तसु पुढवीसु। णवरि सत्तमाए दोगदी-दोआणु०-दोगोद०
थीणगिद्धिभंगो।

८१०. तिरिक्खेस धुविगाणं सन्वत्थो० अप्पद् । धुज० विसे० । अविहु० असंखेजज० । सेसाणं ओघं । पंचिदियतिरिक्खेस धुविगाणं णिरयभंगो । थीणगिद्धि०३- पदकं बन्धक जीव असंख्यातगुर्ण है । विकिथिक छह्कं अवक्तव्य पदकं बन्धक जीव मबसे स्तांक हैं । इनसे भुजगार और अल्पनर पदके बन्धक जीव दोनो ही समान होकर संख्यातगुर्ण हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुर्ण हैं । तीन जातियोंका भक्त देवगितकं समान हे । एके- निद्रय जाति, आतप, स्थावर, सूदम और साधारण प्रकृतिकं अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव संख्यातगुर्ण हैं । इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुर्ण हैं । अहारकश्रार और आहारक आङ्गोपाङ्गकं अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनमे आविश्वर प्रकृतिकं अवक्तव्य पदके बन्धक जीव संख्यातगुर्ण हैं । त्रार्थेङ्कर प्रकृतिकं अवक्तव्य पदके बन्धक जीव संख्यातगुर्ण हैं । इनसे आविश्वर प्रकृतिकं अवक्तव्य पदके बन्धक जीव संख्यातगुर्ण हैं । इनसे अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे इनसे दो पदोके बन्धक जीव असंख्यातगुर्ण हैं । इनसे अवक्तव्य पदके बन्धक जीव असंख्यातगुर्ण हैं ।

न०६. नारिकयों में धुववन्धवाली प्रकृतियों के भुजगार श्रीर अल्पतर पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व, श्रमन्तानुबन्धी चार और तीर्थकर प्रकृतिके अवक्तत्र्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार श्रीर अल्पतर पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेप प्रकृतियों के अवक्तत्र्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक है। इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। तिर्यक्षायुका भङ्ग ओघक समान है। मनुष्यायुके अवक्तत्र्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे श्रहपतर पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार सातों पृथिवियों जानना चाहिये। इननी विशेषता है कि सातवीं पृथिवीमें दो गित, दो श्रानुपूर्वी श्रीर दो गोत्रका भङ्ग स्त्यानगृद्धिके समान है।

८१०. तिर्यक्कोंमें ध्रववन्धवाली प्रकृतियोके अल्पतर पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यात गुणे हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधक समान है। पक्केन्द्रिय तिर्यक्कोमें ध्रववन्धवाली प्रकृतियोंका मिच्छ०-अट्टकः-ओरालि० सन्वत्थो० अवत्त०। भ्रुज०-अप्पद० असंखेज्ज०। अवट्टि० असंखेज्ज०। सेसाणं सन्वत्थो० अवत्त०। दोपदा संखेज्जगु०। अवट्टि० असंखेज्ज०। पंचिदियतिरिक्खपज्ज०-पंचिदियतिरिक्खजोणिणीसु धुविगाणं पंचिदियतिरिक्खोषं। णवरि ओरालि० सादभंगो। सेसाणं पि सादभंगो। पंचिदियतिरिक्खअपज्जत्तगेसु धुविगाणं सेसाणं च णिरयोघं।

- ८११. मणुसेसु धुविगाणं ओरालि० सन्वत्थो० अवत्त०। धुज०-अप्पद० असंखेजज०। अवद्वि० असंखेजज०। सेसाणं पंचिदियतिरिक्खभंगो। वेउन्वियष्ठ०-आहारदुग-तित्थय० संखेजजगुणं कादन्वं। मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु तं चेव। णविर संखेजज०। मणुसअपज्ज०-सन्वएइंदि०-सन्वविगलिंदि०-पंचकायाणं पंचिदि०अपज्ज० तिरिक्खअपज्जत्भंगो। देवाणं णिरयभंगो।
- ८१२. पंचिंदिएसु धुविगाणं ओरालि० सन्वत्थो० अवत्त० । भुज०-अप्प० दोपदा असंखे० । अविष्ट श्रमंखे० । मणुसग०-मणुसाणु०-उचा० ओघं । सेसं पंचिंदियिति-रिक्खमंगो । पंचिंदियपज्जत्तगेसु ओरालि० सादमंगो । सेसं तं चेव ।
- भङ्ग नारिकयों के समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिण्यात्व, आठ कपाय और ओदारिक शरीर के अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव असंख्यातगुरें। हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुरें। हैं। शेष अकृतियों के अवक्तव्य पदके बन्धक जीय सबसे स्तोक हैं। इनसे दो पदों के बन्धक जीव संख्यातगुरें। हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुरें। हैं। पश्चिन्द्रिय तिर्थक्चित्र्य तिर्थक्चित्र अपनान है। इत्ति अत्रित्यों के समान है।
  - ५११. मनुष्योंमे ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियो श्रोर श्रीदारिक शरीरके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और श्रल्पतर पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनमें अवस्थित पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इंग् प्रकृतियोंका भङ्ग पश्चेन्द्रिय तिर्यक्षोंके समान है। किन्तु वैक्रियिक छह, श्राहारकद्विक श्रोर तीर्थक्करके पदोंको संख्यातगुण। करना चाहिये। मनुष्य पर्याप्त श्रोर मनुष्यिकयोंमें इसी प्रकारसे ही जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि यहाँ संख्यात गुणा कहना चाहिये। मनुष्य अपर्याप्तक, सब एकेन्द्रिय, सब विकलेन्द्रिय, पाँच स्थावरकाय श्रोर पश्चेन्द्रिय श्रपर्याप्तकोंका भङ्ग तिर्यक्ष श्रपर्याप्तकोंक समान है। देवोंमें नारिकयोंके समान भक्न है।
  - ५१२. पञ्चन्द्रियोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकितया और औदारिक शरीरके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तांक हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर इन दो पदोंक बन्धक जीव असंख्यागुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यागुणे हैं। मनुष्यगित, मनुष्यगित्यानुपूर्वी और उच्चगित्र का भङ्ग आधिक समान है। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चन्द्रिय निर्यक्रोंक समान है। पञ्चन्द्रिय पर्याप्रकोंमें औदारिक शरीरका भङ्ग साता बंदनीयके समान है। शेप भेग उसी प्रकार है।

८१३. तसेसु चेउव्वियछ०-आहारदुगं [मणुसभंगो | ] आदाव-थावर-सुहुम-साधार० देवगदिभंगो | सेसाणं ओघं | णवरि यम्हि अणंतगुणं तम्हि असंखेज्ज० | एवं पञ्जत्त० | जावरि ओरालि० सादभंगो |

८१४. तसअपजन धुविगाणं सन्वत्थो० भुज०। अप्प० विसे०। अविष्ठ० असंखेजज०। सादासादा०-पंचणोक०-तिरिक्खग०-पंचिदि०-हुंडसं०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-तिरिक्खाणु०-तस०-बादर-पज्जन-पत्ते०-अथिरादिपंच-णीचा० सन्वत्थो० अवत्त०। अप्पद० संखेज्ज०। भुज० विसे०। अविष्ठ० असंखे०। मणुसगदि-मणुसाणु० ओघं। बीइंदि० सन्वत्थो० अवत्त०। भुज० संखेज्ज०। अप्पद० विसे०। अविष्ठ० असंखेजज०। सेसं तिरिक्खमंगो।

८१५. पंचमण०-तिष्णिवचि० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोस्रसक०-भय-दुगुं०-देवगदि-ओरालि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-वेउव्वि०अंगो० वण्ण०४-देवाणु०-अगु०-[उप०-] बादर-पज्जस-पत्तेय०-णिमि०-तित्थय०-पंचंत० सव्वत्थो० अवत्त०। भ्रुज०-अप्पद० असंखेज्ज०। अवद्वि० असंखेज्ज०। चदुआयु०-आहारदुगं ओर्घ। सेसाणं सव्वत्थो०

८१३. त्रसोंम वैकिश्यिक छह त्र्यार त्राहारक द्विकका भङ्ग मनुष्यांक समान है। त्रानप, स्थावर, सूदम त्र्योर साधारण प्रकृतिका भङ्ग देवगितके समान है। रोष प्रकृतियोंका भङ्ग त्र्यायके समान है। इननी विशेषता है कि जहाँ पर त्रानन्तगुणा कहा है वहाँ पर त्रासंख्यातगुणा कहना चाहिय। इसी प्रकार पर्याप्त त्रसोंक जानना चाहिय। इतनी विशेषता है कि औदारिक शरीरका भङ्ग साता-विद्नीयके समान है।

दश्यः त्रस अपर्याप्तकों में ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियों के भुजगार पदके बन्धक जीव सबसे स्तांक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव विशेष अधिक है। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। सातांवदनीय, असातांवदनीय, पाँच नोकपाय, तिर्थक्कात्ति, पक्केन्द्रिय जाति, हुण्ड संस्थान, औदारिक आक्कोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, तिर्थक्कात्यानुपूर्वी, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्यंक, अस्थिर आदि पाँच और नीचगांत्रके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तांक हैं। इनसे अस्पतर पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। मनुष्य गति और मनुष्य गत्यानुपूर्वीका भङ्ग श्रांघके समान हें। द्वीन्द्रिय जातिक अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तांक हैं। इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे है। इनसे अस्पतर पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे है। इनसे अस्पतर पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे है। शेषप्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यक्कोंके समान है।

द्रश्य. पांच मनायागी और तीन वचनयागी जीवोंमें पांच ज्ञानावरण, नव दर्शनावरण, मिण्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, देवगति, श्रोदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वैक्रियिक श्राङ्गापांग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघान, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण, तीथंकर श्रोर पांच श्रन्तरायके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्ताक हैं। इनसे भुजगार श्रोर श्रस्पतर पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। चार श्रायु श्रोर श्राहारकद्विकका भंग श्रोघकं समान है। शेप प्रकृतियोंकं अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्ताक हैं। इनसे भुजगार श्रोर अल्पतर पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे श्रुविधित

अवत्तः । भ्रुजः अप्पदः संस्तेज्जः । अवद्विः असंस्तेज्जः । दोवचिः तसपज्जत्तमंगो । णवरि भ्रुजगार-अप्पदरं समं कादन्वं ।

८१६. कायजोगि० ओघं। ओरालिय० तिरिक्खोघं। णविर भुज०-अप्पद० सिरसं०। णविर तित्थय० मणुसिभंगो। ओरालियिम० धुविगाणं पंचिदियितिरिक्खभंगो। एइंदि०-आदाव-थावर-सुहुम-साधार० सन्वत्थो० अवत्त०। भुज० संखेज्ज०। अप्पद० विसे०। अवद्वि० असंखे०। मणुस०-मणुसाणु०-उच्चा० ओघं०। सेसाणं पंचिदियिति-रिक्खभंगो। णविर देवगदि०४ सन्वत्थोवा भुज०। अप्पद०-अवद्वि० संखेज्ज०। एवं तित्थय०। अवत्त० णित्थ।

८१७. वेउन्वि०-वेउन्वियमिस्स० देवोघं । णवरि थीणगिद्धि०३-अणंताणुबंघि०४ अवत्त० णित्थ । आहार०-आहारमि० सन्बहुभंगो । कम्मइ० ओरालियमिस्सभंगो। णवरि अन्थदो विसेसो० ।

८१८. इत्थिवे० धुवि० तिरिक्खअपज्जत्तभंगो । पंचदंस० मिच्छ० बारसक० भय-दुर्गु० तेजा० क०-वण्ण०४-अगु० उप०-णिमि० सच्वत्थोवा अवत्त०-भुज० । अप्पद०

्षदके बन्धक जीव ऋसंख्यातगुणे हैं । दो वचनयोगी जीवोका भंग त्रस पर्याप्तकोके समान है । इतनी ः विशेषता है कि इनमें भुजगार ऋौर ऋस्पतरपदकी मुख्यतासे ऋस्पबहुत्व एक समान कहना चाहिए ।

म्हित काययांगी जीवोंमें अल्पबहुत्व आंघके समान है। श्रीदारिक काययांगी जीवोंमें सामान्य तिर्यक्कोंके समान है। इतनी विशेषता है कि इनमें भुजगार और श्रह्मतर पदकी मुख्यतासे अल्पबहुत्व एक समान कहना चाहिए। उसमें भी इतनी विशेषता आंर है कि तीर्थंकर प्रकृतिका मंग मनुष्यित्योंके समान है। औदारिकमिश्रकाययांगी जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियांका मंग पंचेन्द्रिय तिर्यक्कोंके समान है। एकेन्द्रिय जाति, आतप, स्थावर, सूदम और साधारण प्रकृतिके अवक्तव्यपदके बन्धक जीव सबसे स्तांक हैं। इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगांत्रका मंग आंघक समान है। शेष प्रकृतियोंका भक्न पंक्रोन्द्रिय तिर्यक्कोंक समान है। इतनी विशेषता है कि देवगतिचनुष्कके भुजगार पदके बन्धक जीव सबके स्तांक हैं। इनसे अल्पतर और अवस्थित पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार तीर्थंकर प्रकृतिकी अपंक्षा अल्पबहुत्व जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसका श्रवक्तव्य पद नहीं है।

्र ७. वैक्रियिककाययोगी और वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंमे श्रन्पबहुत्व मामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि स्त्यानगृद्धि तीन और श्रनन्तानुबन्धी चारका श्रवक्तव्य पद नहीं है। श्राहारक काययोगी और श्राहारक मिश्रकाययोगी जीवोंमें मर्वार्थसिद्धिके देवोंके समान श्रन्यबहुत्व है। कार्मणकाययोगी जीवोंमें औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान अन्यबहुत्व है। इतनी विशेषता है कि इस विषयमें वस्तृतः जो विशेषता हो वह जान लेनी चाहिये।

असंखे० । अवद्वि० असंखेज्ज० । आहारदुग-तित्थय० मणुसभंगो । सेसाणं पंचिदियभंगो । एवं पुरिसवेदे वि । णवरि तित्थयरस्स ओघं ।

८१९. णवुंसमे धुविमाणं सन्वत्थो० अप्प० । भुज० विसे० । अवद्वि० असंखे० । पंचदंस० मिच्छ० बारसक० भय-दुगुं० ओरालि० तेजा० क० वण्ण०४ अगु० उप० -णिमि० सन्वत्थो० अवत्त० । अप्पद० अणंतगु० । भुज० विसे० । अवद्वि० असंखेज्ज० । इत्थिवे० -पुरिस० णिरयमंगो । सेसाणं ओघं । अवगदवे० सन्वपगदीणं सन्वत्थो० अवत्त० । भुज० संखेज्ज० । अप्पद० संखेज्ज० । अवद्वि० संखेज्ज० ।

८२०. कोधकसाए धुविगाणं णबुंसगभंगो। सेसाणं ओघं। एवं माण-माया-लोभाणं।

८२१. मदि०-सुद० धुविगाणं तिरिक्खोघं। मिच्छ०-ओराजि० सव्बत्थो० अवत्त०। अप्पद० अणंतगु०। भुज० विसे०। अविष्ठ० असंखेज्ज०। सेसाणं ओघं। विभंगे धुविगाणं देवोघं। मिच्छ०-देवगदि०-ओराजि०-वेउव्वि०-वेउव्विअंगो०-देवाणु०-पर०- उस्सा०-बादर-पज्जत्त-पत्तेय० सव्वत्थो० अवत्त०। भुज०-अप्प० असंखेज्जगु०। [अविष्ठ० है। ब्राहारकिष्ठक ब्रांर नीथंकर प्रकृतिका भन्न मनुष्याके समान है। शंप प्रकृतियांका भन्न पब्रोन्द्रयोंके समान है। इसी प्रकार पुरुपवेदी जीवोंमं भी जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनमें तीथंकर प्रकृतिका भन्न ब्रांघके समान है।

न्१ह. नपुंसकवेदी जीवोमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके श्राह्मतर पदके वन्धक जीव सबसे होत हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव विशेष श्राधिक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। पाँच दर्शनावरण, मिध्यात्व, वारह कषाय, भय, जुगुष्सा, श्रोदारिक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलाष्ठ, उपयात श्रोर निर्माणके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे हतांक हैं। इनसे श्राह्मतर पदके बन्धक जीव श्राह्मते अधिक हैं। इनसे श्राह्मते श्राह्मते विशेष अधिक हैं। इनसे श्राह्मते श्राह्मते पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे श्राह्मते श्राह्मते प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधके समान है। श्राप्यतं विशेष सब प्रकृतियोंके श्राह्मते विशेष पदके बन्धक जीव सबसे हतां हैं। इनसे श्राह्मते श्राह्मते जीवोंमें सब प्रकृतियोंके श्राह्मते विशेष वि

द२०. क्रोध कषायवाले जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग नपुंसकोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग आंघके समान है। इसी प्रकार मान, माया और लोभ कपायवाले जीवोंके जानना चाहिये।

द्रश्. मत्यज्ञानी त्रींर श्रुताज्ञानी जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्यक्रींके समान है। मिश्यात्व त्रीर आंदारिक शरीरके अवक्तत्र्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव अनन्तगुणे हैं। इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग आघके समान है। विभङ्गज्ञानी जीवोंमे ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। मिश्यात्व, देवगति, ओदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, वेक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, देवगत्यानुपूर्वी, परघात, उन्द्वास, बादर, पर्याप्त और प्रत्यंकके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यातगुणे हैं। इनसे स्वाप्य प्रस्थातगुणे हैं। इनसे असंख्यातगुणे हैं। इनसे स्वाप्य स्वाप्य स्वप्य स्वयंत्य स्

#### श्रसंखे । सेसाणं पंचिंदियभंगो ।

८२२. आभि०-सुद०-ओघि० पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०-पुरिस०-भय०-दु०-दोगदि-पंचिदि० - चत्तारिसरीर-समचदु०-दोअंगो० वज्जरि०-वण्ण०४-दोआणु०-अगु०४ पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-श्रादे०-णिमि०-तित्थय०-उच्चा० पंचंत० सन्वत्थो० अवत्त०। सुज०-अप्पद० असंखे०। अवद्वि० असंखे०। सादादिबारस० मणुसभंगो। मणुसायु०-देवायुग-आहारदुगं ओघं।

८२३. मणपज्जव० सन्वकम्माणं सन्वत्थो० अवत्त०। दोपदा० संखेज्ज०। अवट्टि० संखेज्ज०। दो आयु० मणुसि०भंगो। एवं संजद०।

८२४. सामाइ० छेदोव० धुविगाणं सन्वत्थो० भुज०-अप्पद०। अविष्ठ० संखेजि०। सेसाणं मणपज्जवभंगो। परिहार०[आहार-] कायजोगिभंगो। णविर आहारदुगं अत्थि। सुहुमसंप० सन्वाणं सन्वत्थो० भुज०। अप्प० संखेज्ज०। अविष्ठ० संखेज्ज०। संजदासंजद० धुविगाणं सन्वत्थो भुज०-अप्पद०। अविष्ठि० असंखेज्ज०। सेसाणं ओधिभंगो। णविर तित्थय० मणुसि०भंगो। असंजद० सन्वपगदीणं ओघं।

प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रियोंके समान है।

पर्श. आभिनिवाधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, श्रोर श्रविज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, वारह कपाय, पुरुपवेद, भय, जुगुप्सा,दां गित,पश्चेन्द्रिय जाति,चार शरीर, ममचनुरस्त्रसं स्थान, दो श्राङ्गोपाङ्ग, वन्नऋपभनाराचसंहनन, वर्णचतुष्क, दो आनुपूर्वी, श्रगुरुत्तपु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगिति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, तीथँकर, उच्चगात्र और पाँच श्रन्तरायकं श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार श्रोर अन्पतर पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे श्रवस्थित पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। माता श्रादि बारह प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्योंके समान है। मनुष्यायु, देवायु श्रीर श्राहारकद्विकका भङ्ग आंघकं समान है।

५२३. मनःपर्ययज्ञानी जीवोंमें सब कर्मोंके अवक्तत्र्य पदकं बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे दो पदोंके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। दो आयुओंका भङ्ग मनुष्यतियोंके समान है। इसी प्रकार संयत जीवोंक जानना चाहिये।

प्रश्र. सामायिकसंयत श्रीर छेदोपस्थापनासंयत जीवोंमं ध्रुववन्धवाली प्रकृतियों भुजगार श्रीर श्रम्पतर पदके बन्धक जीव सबसे स्तांक हैं। इनसे श्रवस्थित पदके बन्धक जीव संख्यातगुण हैं। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग मनःपर्ययज्ञानी जीवोंक समान है। परिहारिविशृद्धि संयत जीवोंका भङ्ग श्राहारक काययोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि इनमें श्राहारकिहक है। तृद्मसाम्परायिक संयत जीवोंमें सब प्रकृतियोंके भुजगार पदके बन्धक जीव सबसे स्तांक हैं। इनसे श्रवपतर पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। संयतासंयत जीवोंमें ध्रवबन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार श्रीर श्रम्पतर पदके बन्धक जीव सबसे स्तांक हैं। इनमें श्रवस्थित पदके बन्धक जीव सवसे स्तांक हैं। इनमें श्रवस्थित पदके बन्धक जीव श्रवसे जीवोंके सुनान है। इननी विशेषता है कि तीर्थकर प्रकृतिका भङ्ग मनुष्यिनियोंके समान है। श्रमंयतोंमें सब प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधक समान है।

८२५. चक्खुदंस० तसपज्जत्तभंगो । अचक्खुदं० श्रोघं । ओघिदं० ओघि-णाणिभंगो ।

=२६. किण्ण णील काऊमु तिरिक्खोघं। णवरि किण्ण-णीलासु तित्थय० मणुसि-मंगो। काऊए णिरयमंगो।

८२७. तेऊए धुविगाणं सन्वत्थो० भ्रज०-अप्प०। अवट्टि० असंखेज्ज०। थीण-गिद्धि०३-मिच्छ०-बारसक०-देवगदि०४-ओरालि०-तित्थय० सन्वत्थो० अवत्त०। भ्रज०-अप्प० असंखे०। अवट्टि० असंखे०। सेसाणं सन्वत्थोवा अवत्त०। भ्रज०-अप्प० संखेज्ज०। अवट्टि० असंखेज्ज०। आहारदुगं ओघं। तिरिक्ख-देवायु० विभंग-भंगो। मणुसायु० देवभंगो। एवं पम्माए वि। णवरि ओरालि०अंगो देवगदिभंगो।

८२८. सुकाए पंचणा०-णवदंस०-मिच्छत्त ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-दोगदि-पंचिदि०-चदुसरीर-दोत्रंगो०-वण्ण०४-दोत्राणु०-अगु०४-णिमि०-तित्थय०-पंचंत० सन्वत्थोवा अवत्त० । भुज०-अप्पद० असंखेज० । अवद्वि० असंखेज० । सेसाणं पम्माए भंगो । दोआयु० मणु०सिभंगो ।

८२५. चत्तुदर्शनवाले जीवोंमें त्रसपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है। अचत्तुःदर्शनवाले जीवोंमें स्रोचके समान भङ्ग है। अवधिदर्शनवाले जीवोंमें अवधिज्ञानी जीवोंके समान भङ्ग है।

द्द. कृष्ण, नील और कापोत लेश्यावाले जीवोंमें सामान्य तिर्यक्कोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि कृष्ण श्रौर नील लेश्यावाले जीवोंमें तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग मनुष्यिनियोंके समान है। कापोत लेश्यावाले जीवोंमें तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग नारिकयोंके समान है।

द्रश्. पीत लेश्यावाले जीवोंमें ध्रववन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार श्रोर अल्पतर पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। स्त्यानगृद्धि तीन, मिश्यात्व, बारह कपाय, देवगित चतुष्क, श्रोदारिक शरीर श्रोर तीर्थंकर प्रकृतिके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार श्रोर अल्पतर पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शोष प्रकृतियोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार श्रोर अल्पतर पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। श्रोहारकद्विकका भन्न श्रोधके समान है। तिर्यञ्चायु श्रोर देवायुका भन्न विभन्नज्ञानियोंके समान है। सनुष्यायुका भन्न देवोंके समान है। इसी प्रकार पद्मलेश्याव ले जीवोंमें भी जानना चाहिये। इतनी विशोपता है कि श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्गका भन्न देवगितके समान है।

द्भारत शुक्तलेश्यावाले जीवोंमं पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिध्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुष्सा, दो गति, पक्चिन्द्रिय जाति, चार शरीर, दो श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, दो श्रानुपूर्वी, श्रागुरुलघु चतुष्क, निर्माण, तीर्थकर श्रोर पाँच श्रान्तरायके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार श्रोर श्रन्तरायके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे श्रवस्थित पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। शोप प्रकृतियोंका भङ्ग पद्म लेश्याके समान है। दो श्रायुओंका भङ्ग मनुष्यिनियोंके समान है।

८२१. भवसि० ओर्घ । अब्मवसि० मदि०मंगो । णवरि मिच्छ० अवसब्बं णत्य । ८३०. सम्माइ०-खइगस० ओधिमंगो । णवरि खह्गे देवायु०मणुसि०मंगो । वेदगे धुविगाणं सव्वत्थो० धुज०-अप्पद० । अबद्धि० असंखेजा० । सेसं ओधिमंगो । उवसम० ओधिमंगो । णवरि तित्थय० मणुसि०मंगो । सासणे धुविगाणं देवमंगो । सेसाणं साद-मंगो । णवरि ओरालि०-ओरालि० झंगो० सव्वत्थो० अवत्त०। धुज०-अप्पद० असंखेजा०। अवद्धि० असंखेजज०। सम्मामि० सासण० मंगो । किंचि विसेसो । मिच्छादिद्वि० मदि० मंगो ।

८३१, सिण्णि० मणजोगिभंगो । असण्णीसु ओरालि०-ओरालि०अंगो० ओघं । सेसं मदि०भंगो । आहार० ओघं । अणहार० कम्मइगभंगो ।

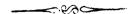
> एवं अप्पाबहुगं समत्तं। एवं भुजगारवंधो समत्तो।

=२६. भव्य जीवोंके त्र्योघके समान भङ्ग है। श्रभव्य जीवोंमे मन्यज्ञानियांके समान भङ्ग है। इननी विशेषना है कि मिथ्यात्वका त्र्यवक्तव्य पद नहीं है।

न्दरः सम्यन्दृष्टि श्रीर क्षायिकसम्यन्दृष्टि जीवोंमें श्रविध्वानी जीवोंके समान भन्न हैं। इतनी विशेषता है कि क्षायिकसम्यन्दृष्टि जीवोंमें देवायुका भन्न मनुष्यिनियोंके समान है। वेद्र सम्यन्दृष्टि जीवोंमें भुजगार श्रीर अल्पतर पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुण हैं। शेष प्रकृतियोंका भन्न श्रविध्वानी जीवोंके समान है। उपशम सम्यन्दृष्टि जीवोंमें श्रविध्वानी जीवोंके समान भन्न है। इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिका भन्न मनुष्यिनियोंके समान है। सामादनसम्यन्दृष्टि जीवोंमें ध्रववन्धवाली प्रकृतियोंका भन्न देवांके समान है। श्रेष प्रकृतियोंका भंग साता वेदनीयके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रीदारिक शरीर श्रोर श्रोर श्रोदारिक श्राहित श्राह्में अवक्तव्य पदके बन्धक जीव समसे स्तोक हैं। इनमें भुजगार श्रोर अल्पतर पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुण हैं। इनमें श्रविध्यत पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुण हैं। सम्यग्मिध्यादृष्टि जीवोंमें सासादनसम्यन्दृष्टि जीवोंके समान भन्न है। किन्तु यहां कुछ विशेषता है। मिध्यादृष्टि जीवोंमें मत्यज्ञानी जीवोंके समान भन्न है।

५३१. संज्ञी जीवोंमें मनोयोगी जीवोंक समान भङ्ग है। असंज्ञी जीवों में श्रोदारिक शरीर श्रीद श्रीदारिक आङ्गोपाङ्ग का भङ्ग श्रोघके समान है। श्रोप प्रकृतियोका भङ्ग मत्यद्वानी जीवोंके समान है। श्राहारक जीवोंमें श्रोधके समान भङ्ग है। श्रानाहारक जीवोंमें कार्मणकाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है।

इस प्रकार अल्पबहुत्व समाप्त हुआ। इस प्रकार भजगारवन्य समाप्त हुआ।



# पदणिक्खेवो

८३२. पदणिक्खेवे तिष्णि अणियोगदाराणि । तत्थ इमाणि सम्रुक्तित्तणा सामित्तं अप्याबद्धगे ति ।

समुक्कित्तणा

- ८३३. सम्रक्तित्तणाए दुविधं-जहण्णयं उकस्सयं च। उकस्सए पगदं। दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० सन्वाणं पगदीणं अत्थि उकस्सिया बङ्घी उकस्सिया हाणी उकस्सय-मबद्वाणं। एवं अणाहारग ति।
- =३४. जहण्णए पगदं। दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० सन्वाणं पगदीणं अत्थि जहण्णिया बड्ढी जहण्णिया हाणी जहण्णयमबद्घाणं। एवं याव अणाहारग ति।

### एवं समुक्तित्तणा समता।

# सामित्तं

८३५. सामित्तं दृविधं — जहण्णयं उक्तस्सयं च । उक्तस्सए पगदं। दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा० मिच्छ०-सोलसक०-णवंस०-अरिद-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खगदि-एइं।द०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-आदाउजो०-थावर बादर पज्जत-पत्ते०-अथिरादिपंच०-णिमि०-णीचा०-पंचंत०उक्क०वड्ढी कस्स होदि? यो चदुद्वाणिययवमज्झस्स उविर अंतोकोडाकोडी द्विदिबंधमाणो तप्पाओग्ग-उक्तस्ससंकिलेसेण उक्तस्सयं दाहं गदो तत्तो उक्कस्सयं द्विदिबंधो तस्स उक्किस्सया बङ्की।

#### पदनिक्षेप

=३२. पद्तिकेषमे तीन अनुयोग द्वार हैं। जो ये हैं—समुर्कार्तना, स्वामित्व ऋौर ऋत्पबहुत्व। समुत्मीर्तना

=३३. समुत्कीर्तना दं प्रकारका है—जघन्य और उन्कृष्ट । उन्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेदा निर्देश दो प्रकारका है—आंघ और आदेश । आंघसे सब प्रकृतियोंकी उन्कृष्ट बृद्धि, उन्कृष्ट हानि और उन्कृष्ट श्रवस्थान है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

=३४. जघन्यका प्रकरण है। उसकी अपेद्या निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और अदिश। श्रांघमे सब प्रकृतियोंकी जघन्य बृद्धि, जघन्य हानि और जघन्य अवस्थान है। इसी प्रकार अना-हारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

# इम प्रकार समुत्कीर्तना समाप्र हुई।

#### स्वामित्व

इश्. स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—जोघ और आदेश । आघमे पाँच ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, असाता-वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरित, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यक्क्षगति, एकेन्द्रिय-जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यक्कगत्यानुपूर्वी, अगुरुलप् चतुष्क, आतप, उद्योत, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायकी उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कौन है ? जो चतुःस्थानिक यवमध्यके उत्तर अन्तःकोडाकोडी स्थितिका बन्ध करनेवाला नत्यायाग्य उत्कृष्ट संक्लेशसे अत्कृष्ट दाहको प्राप्त

उक्कस्सिया हाणी कस्स० ? यो उक्कस्सयं द्विदिषंधमाणो मदो एइंदिए जादो तप्पाओग्गाजहण्णए पिंडदो तस्स उक्कस्सिया हाणी। उक्कस्सयमवद्वाणं कस्स० १ यो उक्कस्सयं द्विदिबंधमाणो सागारक्खयेण पिंडमग्गो तप्पाओग्गजहण्णाए पिंडदो तस्स उक्कस्सयमवद्वाणं ।
साद।वे०-हस्स-रिद-थिर सुभ-जसिंग एदाणं णाणावरणभंगो। णविर तप्पाओग्गसंकिलिद्वा
ति भाणिदव्वं । इत्थि०-पुरिस०-मणुस० देवर्गाद-तिष्णिजादि ओरालियसरीरअंगोवंगपंचसंठा०-पंचसंघ०-दोआणु०-पसत्थ०-सुहुम-[अ-] पञ्जत्त-साधार०-सुभग-सुस्सर-आदे०उचा० उक्कस्सिया बहुी कस्स० ? यो यवमज्झस्स उविर अंतोकोडाकोडी द्विदिबंधमाणो
तप्पाओग्गसंकिलेसेण तप्पाओग्गउक्कस्सदाहं गदो तप्पाओग्गउक्कस्सिद्विवंधो तस्स उक्कस्सिया बहुी। उक्कस्सिया हाणी कस्स० ? यो उक्कस्सद्विदिबंधमाणो सागारक्खएण पिंडभग्गो तप्पाओग्गजहण्णए पिंडदो तस्स उक्कस्सिया हाणी। तस्सेव से काले उक्कस्सयमवहाणं। णिरयगदि-पंचिदि०-वेउव्व०-वेउव्विअंगो०-असंपत्त०-णिरयाणु०-अप्पत्थ०तस-दुस्सर० उक्कस्सिया बहुी कस्स० ? यो चदुद्वाणिययवमज्झस्स उविर अंतोकोडाकोडी
द्विदिबंधमाणो उक्कस्सयं दाहं गदो तदो उक्कस्सयं द्विदिबंधो तस्स उक्क० बहुी। उक्क०
हाणी० कस्स होदि ? यो उक्कस्सयं द्विदिबंधमाणो सागारक्खयेण पिंडमग्गो तप्पाओग्गजहण्णए पिंडदो तस्स उक्कस्सिया हाणी। तस्सेव से काले उक्कस्सयमवद्वाणं। आहार०

होकर उन्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है वह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है। उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन है १ जो उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला मरकर एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर तत्प्रायोग्य जधन्य स्थितिका बन्ध करने लगता है वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है। उत्कृष्ट श्रवस्थानका स्वामी कीन है ? जो उन्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला साकार उपयोगका क्षय होनेसे प्रतिभन्न होकर तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिका बन्ध करता है वह उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है। सातावदनीय, हास्य, रित, स्थिर, शुभ ऋौर यशःकीति इनका ज्ञानावरणके समान भङ्ग है। उतनी विशेषता है कि यहाँ तत्प्रा-यांग्य संक्षिष्ट जीव स्वामी होता है ऐसा कहना चाहिए। स्त्रीवेद, पुरुपवेद, मनुष्यगति, देवगति. तीन जाति, औदारिक शरीर आङ्गोपाङ्ग. पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो त्रानुपूर्वी, प्रशस्त विहायो-गति, सूद्रम, अपर्याप्त, साधारण, सुभग, सुस्वर, आदेव और उच्चगात्रकी उत्कृष्ट बृद्धिका स्वामी कौन हैं ? जो यवमध्यके उत्पर अन्तःकोडाकोडी स्थितिका बन्ध करनेवाला तत्प्रायोग्य संक्षेशके कारण तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट दाहको प्राप्त होकर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है वह उत्कृष्ट बृद्धिका स्वामी है। उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन है ? जो उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला माकार उपयोगका क्षय होनेसे प्रतिभन्न होकर तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिका बन्ध करता है वह उन्क्रष्ट हानिका स्वामी हैं। तथा वही तदनन्तर समयमें उन्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है। नरकगित, पक्चिन्द्रियजाति, वैकियिक शरीर, वैकियिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका मंहनन, नरकगत्यानुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगित, त्रस त्रौर दुःस्वरकी उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कौन है। जो चतुःस्थानिक यवमध्यके उपर अन्तःकांडाकांडी स्थितिका बन्ध करनेवाला उत्कृष्ट दाहको प्राप्त होकर उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है वह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है। उत्कृष्ट हानिका स्वामी कीन हैं ? जो उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला साकार उपयोगका क्षय होनेसे प्रतिभग्न होकर तत्प्रायाग्य जघन्य स्थितिका बन्ध करता है वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है। तथा वही तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है। आहारक

आहार ० अंगो ० - तित्थय ० उक्क ० वड्ढी कस्स ० १ यो तप्पाओग्ग जहण्णयं द्विदिवंधमाणो तप्पाओग्ग जहण्णियादो संकिलेसादो तप्पाओग्ग उक्कस्सयं संकिलेसं गदो तप्पाओग्ग उक्क ० द्विदि० तस्स उक्किस्सिया वड्ढी । उक्क ० हाणी कस्स ० १ यो तप्पओग्ग उक्कस्सयं द्विदिवंध-माणो सागारक्खयेण पडिभग्गो तप्पाओग्ग जहण्णए पडिदो तस्स उक्किस्सिया हाणी । तस्सेव से काले उक्कस्सयमवद्वाणं । एवं ओघमंगो कायजोगि-कोधादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-अचक्सुदं०-भवसि०-अब्मवसि०-मिच्छादि०-आहारग ति ।

८३६. णिरएसु पंचणाणावरणादीणं उकस्सयं संकिलिहाणं ओघं णिरयगदिणाम-भंगो । सादादीणं तप्पाओग्गसंकिलिहाणं ओघं इत्थिबेदभंगो । तित्थय० ओघभंगो । एवं सव्वणिरयाणं । णवरि सत्तमाए मणुसग०-मणुसाणु०-उचा० तित्थयरभंगो ।

८३७. तिरिक्खेसु णिरयोघभंगो। मणुस०३-पंचिदि०२-तस०२-पंचमण०-पंच-वचि०-ओरालि०-इत्थि०-पुरिस०-णवुंस०-विभंग०-चक्खुदं०-पम्मले०-सण्णि ति एद।णं उक्कस्ससंकिलिट्टाणं ओघं णिरयगदिभंगो। तप्पाओग्गसंकिलिट्टाणं ओघं इत्थि०भंगो।

८३८, सव्वअपज्जत्त० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरिद-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खग०-एइंदि०-आरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०-वण्ण०४ - तिरि-क्खाणु०-अगु०-उप०-थावरादि०४-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० उक्क० वड्ढी०

शरीर, आहारक आङ्गोपाङ्ग और तीर्थंकर प्रकृतिकी उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कीन हे १ जो नत्यायोग्य जघन्य स्थितिका बन्ध करनेवाला तत्यायोग्य जघन्य संक्रशसे नत्यायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर तत्यायोग्य उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करना है वह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है। उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन है १ जो तत्यायोग्य उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला माकार उपयोगका क्ष्य होनेसे प्रतिभन्न होकर तत्यायोग्य जघन्य स्थितिका बन्ध करना है वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है। तथा वहीं तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है। इसी प्रकार ओघके समान काययोगी, कोधादि चार कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताङ्गानी, असंयत, अचलुदर्शनी, भव्य, अभव्य, मिण्यादृष्टि और आहारक जीवोंक जानना चाहिए।

न्देह. नारिकयों में पाँच ब्रानावरण आदि उत्कृष्ट संक्लेशसे व्धनेवाली प्रकृतियोका भङ्ग ब्रोचमें कही गयी नरकगति नामकर्मकी प्रकृतिक समान है। तत्प्रायोग्य संक्लेशसे व्यनेवाली साताआदि प्रकृतियोका भङ्ग ओचके अनुसार कहे गये खीवदक समान है। तीर्थकर प्रकृतिका भङ्ग आंचके समान है। इसी प्रकार सब नारिकयों के जानना चाहिए। इतनी विशेपता है कि सातवीं पृथिवीमें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भङ्ग तीर्थद्वर प्रकृतिक समान है।

इश्. तियेश्वीमें मामान्य नारिकयोंक समान भङ्ग है। मनुष्यित्रक, पश्चेन्द्रियद्विक, त्रसिद्वक, पांच मनोयोगी, पोच वचनयोगी, श्रीदारिक काययोगी, स्त्रीवेदी, पुरुपवेदी, नपुंसकवेदी, विभङ्गज्ञानी, चन्नुदर्शनी, पद्मलेश्यावाले श्रीर संज्ञी इनमें उत्कृष्ट संक्लेशमें वैधनेवाली प्रकृतियोक। भङ्ग ओघमें कहीं गई नरकगतिक समान है। तत्प्रयोग्य संक्लेशमें वैधनेवाली प्रकृतियोक। भङ्ग श्रोघमें कहें गये स्त्रीवेदके समान है।

द्दः सब अपर्याप्त जीवोमे पाँच ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, असाप्ता वेदनीय, मिध्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुष्मा, तिर्यक्रगति, एकेन्द्रियजाति, श्रोदारिक शरीर, तेजम शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डमंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यक्रगत्यानुपूर्वी, श्रगुरुलघु, उपघान, कस्स० १ यो जहण्णगादो संकिलेसादो उक्कस्सयं संकिलेसं गदो उक्कस्सयं द्विदि पि बंघो तस्स उक्क० बङ्की । उक्क० हाणी कस्स होदि १ यो उक्कस्सयं द्विदिवं० सागारक्खएण० पिंडभग्गो तप्पाश्रोग्गजहण्णए पिंददो तस्स उक्किस्सिया हाणी। तस्सेव से काले उक्कस्सय-मवद्वाणं । सेसाणं सादादीणं तं चेव । णविर तप्पाओग्ग ति भाणिदव्वं । एवं आणदादि याव सव्वद्वा ति सव्वएइंदि०-विगलिदि० पंचकायाणं च । देवा याव सहस्सार ति णिरयभंगो । ओरालिय०-वेउव्वियमि०-आहारमि० अपज्जत्तभंगो। वे विवय०-आहारका० देवभंगो । कम्महगा० ओरालियमिस्सभंगो । णविर अवद्वाणं बादरएइंदियस्स कादव्वं ।

८३६. अवगद्वे० पंचणा०-चदुदंसणा० सादा०-चदुसंज०-जसिग०-उचा०-पंचंत० उक्त० वड्ढी कस्स० ? अण्णद् उवसामगस्स अणियद्दीबादरसांपराइगस्स दुचिरमादो हिदिबंधादो चिरमे हिदिबंधे वद्दमाणगस्स तस्स उक्त० बड्ढी । उक्त० हाणी कस्स० ? अण्णद्रस्स खवगस्स अणियद्दि० पढमादो हिदिबंधादो विदिए हिदिबंधे वद्दमाण० तस्स० उक्त० हाणी । तस्सेव से काले उक्त० अवद्वाणं।

८४०, आभि०-सुद्०-ओधि० पंचणा०-छदंसणा०-असादा० बारसक०-पुरिस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-दोगदि-पंचिदि०-चदुसरी०-समचदु०-[ दो ] अंगो०-वज्ररिस०

स्थावर आदि चार, अस्थिर आदि पांच, निर्माण, नीचगांत्र और पांच अन्तरायका उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कोन है ? जो जघन्य संक्लेशसे उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करना है वह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है । उत्कृष्ट हानिका स्वामी कोन है ? जो उत्कृष्ट स्थितिका वन्ध करनेवाला साकार उपयोगका क्षय होनेसे प्रतिभग्न होकर तत्यायाग्य जघन्य बन्ध कर रहा है वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है । तथा वह तदनन्तर समयमे उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है । रोप मातादि प्रकृतियोका यही भन्न है । इतनी विशेषता है कि तत्यायोग्यके कहना चाहिए । इसी प्रकार आनत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंके तथा सब एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और पांच स्थायरकायिक जीवोंक कहना चाहिए । सामान्य देव और सहस्रार कल्पतकके देवोंमे नारिकयोंके समान भन्न है । औदारिक मिश्रकाययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमे अपयोगकोंक समान भन्न है । कार्मणकाययोगी जीवोंमे औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमे अपदानकोंक समान भन्न है । कार्मणकाययोगी जीवोंमे औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंक समान भन्न है । इतनी विशेषता ह कि अवस्थान वादर एकेन्द्रियके करना चाहिए ।

=३६. ऋष्गतवदी जीवोमे पांच झानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार मंख्यलन. यशःकीति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायकी उत्कृष्ट बृद्धिका स्वामी कौन है ? जो अन्यतर उपशामक अनिवृत्तिवादरसाम्परायिक जीव द्विचरम म्थितिवन्धसे अन्तिम स्थितिवन्धमे अवस्थित है वह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है। उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन है ? जो अन्यतर अपक अनिवृत्तिकरण जीव प्रथम स्थितिवन्धसे द्वितीय स्थितिवन्धमे विद्यमान है वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है। तथा वही तद्नन्तर समयमे उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है।

५४०. श्राभिनिवाधिकज्ञानी, श्रवज्ञानी श्रीर श्रवधिज्ञानी जीवोमे पाच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, श्रसाता वेदनीय, वारह कपाय, पुरुषवद, अर्रात. शोक, भय, जुगुप्सा, दो गति, पञ्चे-

१ मूलप्रतौ-लिदि० पंचिदि-तसपज्जत पच-इति पाठः।

वणण०४-दोआण०-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-अथिर-असुम-सुमग-सुस्सर-आदे०अज०-णिमि०-उचा०-पंचंत० उक्क० वड्डी कस्स०? यो जहण्णयं द्विदिवंधमाणो
तप्पाओग्गजहण्णगादो संकिलेसादो उक्कस्सयं संकिलेसं गदो उक्कस्सयं द्विदिवंधो तस्स
मिच्छत्ताभिमुहस्स चिरमे उक्कस्सए द्विदिवंधे वट्टमाण० तस्स उक्क० वट्ठी । उक्क० हाणो
कस्स० १ उक्कस्सयं द्विदिवंधमाणो सागारक्खयेण पिडभग्गो तप्पाओग्ग० जह० द्विदी०
तस्म उक्क० हाणी । वट्ठीए चेव उक्कस्सयं अवद्वायं । सादावे०-हस्स-रिद-आहारदुग-थिरसुभ०-जसिग० आहार०भंगो । एवं मणपज्जव-संजद-सामाइयच्छेदो०-पिरहार०-संजदासंज०-छोधिदं०-सम्मादि०-खइग०-वेदग०-उवसम०-सम्मामिच्छा० । णविर खइगे उक्कस्सयं संकिलेसं कादव्वं। सुहुमसंप० अवगद०भंगो। [ किण्ण० णील काउ० णिरयभंगो।
तेउए सोधम्मभंगो । मुक्काए ] णवगेवज्जभंगो । सासणे णेरइगभंगो । असण्णि० तिरिक्खोघं । अणाहार० कम्मइगभंगो ।

#### एवं उकस्ससामित्तं समत्तं

८४१. जहण्णए पगदं । दुवि०-ओघे० आदे० । ओघे० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-तिरिक्खदुग-पंचिंदि०-ओरालि०-वेउच्वि०-तेजा०-क०-दो-अंगो०--वण्ण०४-अगु०४-उज्जोव-तस०४-णिमि०-णीचा०-पंचेत० जह० कस्स० १

न्द्रिय जाति, चार शरीर, समचतुरस्र संस्थान, दो त्राङ्गोपाङ्ग, वन्नर्पभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, दो त्रानुपूर्वी, त्रगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रमचतुष्क, त्रस्थिर, त्रशुभ; सुभग, सुस्वर, त्रादेय, त्रयशःकीति, निर्माण, उच्चगीत्र त्रीर पाँच त्रन्तरायकी उत्कृष्ट बृद्धिका स्वामी कीन है ? जो जघन्य स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तत्प्रायोग्य जवन्य संक्लेशने उत्क्रष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करता है और जो मिध्यात्वक अभिमुख होकर अन्तिम उत्कृष्ट स्थितिबन्धमे विद्यमान है वह उत्कृष्ट बृद्धिका स्वामी है। उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन है? जो उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव साकार उपयोगका क्षय होनेसे प्रतिभन्न होकर तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिका बन्ध करता है वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है। श्रीर वृद्धिकं हानेपर ही उत्कृष्ट अवस्थान होता है। सातावेदनीय, हास्य, रंति, आहारकद्विक, स्थिर, शुभ और यशःकीर्तिका भङ्ग त्राहारककाययांगी जीवोंकं समान है। इसी प्रकार मनःपर्यज्ञानी, संयत, सामायिक संयत, छेदोपस्थापना संयत, परिहारिवशुद्धि संयत,संयतासंयत, ऋविवदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिक सम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यर्ग्हाष्ट्र, उपशम सम्यर्ग्हाष्ट्र और सम्यग्मिश्यादृष्टि जीवोके जानना चाहिय । इतनी विशेषता है कि क्षायिक सम्यक्त्वमं उन्कृष्ट संक्लेश करना चाहिय। सूचमसाम्परायिकसंयत जीवोंमे श्रपगत-वेदी जीवोंके समान भन्न है। कृष्ण, नील श्रीर कापीतलेश्यावाले जीवोंमे नारिकयोंके समान भन्न है। पीतलेश्यावाले जीवोंमें सौधर्म कल्पके समान भङ्ग है। श्रुक्तलेश्यावाले जीवोंम नोमैवेयकके समान भङ्ग है। सासादन सम्यग्दष्टिजीवोंमें नारिकयोंके रूमानभङ्ग है। ऋसंज्ञी जीवोंमें सामान्य तिर्यक्कोंके समार भङ्ग है। अनाहारक जीवोंमें कार्मणकाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है।

इस प्रकार उत्कृष्ट स्वामित्व समाप्त हुन्ना ।

८४१. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—आंच श्रीर श्रादेश। श्रीघसे पॉच झानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चिद्वक, पञ्चे न्द्रिय जाति, स्रोदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, तैज्ञस शरीर, कार्मण शरीर, दो त्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, श्रगुरू-

अण्ण वो समयुणं उकस्सिद्धिदिं वंघमाणी पुण्णाए द्विदिवंधगद्धाए उकस्सए संकिलेसं गदो तदो उक्कस्सयं द्विदिं पबद्धो तस्स जह ० वड्डी । जहण्णिया हाणी कस्स० १ यो समजुत्तरं सन्वजह० द्विदि० पुण्णाए द्विदिबंधगद्धाए उक्तस्सयं विसोधि गदो तदो दाह० द्रिदि० तस्स जहण्णिया हाणी । एकदरत्थमवट्ठाणं । सादावे० पुरिस०-हस्स-रदि-दो-गदि-समचदु०-वजरिस >-दोआणु०-पसत्थ०-थिरादिछ०-उचा० जह० बहुी कस्स ? यो समयूणं तप्पाओग्गउकस्सयं द्विदिं बंध० तप्पाओग्गउक संकिले० तदा उक० द्विदिबंध० तस्स जहण्णिया बङ्की । जह० हाणी कस्स० ? यो समजुत्तरं तथ्याओग्गजह० माणो उकस्सं विसोधि गदो तदो सव्व जह० तस्स जह० हाणी। एकदरत्थमवट्टाणं। असादा०-णवुंस०-अरदि-सोग-णिरयगदि-एइंदि०-हुंड०-असंपत्त० णिरयाणु०-अप्प-सत्थवि०-आदाव-थावर-अथिरादिछ० जह० वड्ढी कस्स०१ यो समयूणं उकस्सयं द्विदि बंध० पुण्णाए द्विदि बंध० उक्तस्सियं संकिलेसं गदो तदो उक्त० द्विदि० तस्स जह० बड्डी । जह० हाणी० कस्स०? या तप्पाओग्गजह० समजुत्तरं हिदि० तप्पाओग्ग विसोधि गदो तदो जह० द्विदि० तस्स जह० हाणी। एगटरत्थमवद्वाणं। इत्थिबे०-तिण्णिजादि-चद्संठा०-चद्संघ०-सुह्रम-अपज्ज०-साधार० जह० बङ्गी कस्स ? यो समयणं तप्पाओग्गउकः द्विदि०माणो पुण्णाए द्विदिवंधगद्वाए लघुचतुष्क, उद्योत, त्रस चतुष्क, निर्माण, नीचगात्र, श्रोर पाँच श्रन्तरायकी जघना गृद्धिका स्वामी कौन है ? अन्यतर जो एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव उत्कृष्ट स्थितिबन्ध कालके पूर्ण हो जानेपर उन्दृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर उत्दृष्ट स्थितिबन्ध करता है वह जघन्य वृद्धिका स्वामी है। जघन्य हानिका स्वामी कौन है ? जो एक समय अधिक सबसे जघन्य स्थितिबन्ध करने-वाला स्थितिबन्धके कालके पूर्ण होनेपर उत्कृष्ट विज्ञृद्धिको प्राप्त होकर जयन्य स्थितिबन्ध करता है वह जघन्य हानिका स्वामी हैं। तथा इनमेंसे किसी एकके जघन्य अवस्थान होता है। सातावेदनीय, पुरुषवेद, हास्य. रति, दो गति, समचतुरस्र संस्थान, वन्नऋषभनाराच संहनन, दो आनुपृवी, प्रशस्त विहायोगित, स्थिर ऋदि छह और उच्चगोत्रकी जधन्य वृद्धिका स्वामी कौन है ? ।जो एक समय कम तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करनेवाला जीव तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करता है वह जघन्य बृद्धिका स्वामी हैं। जघन्य हानिका स्वामी कौन हैं ? जो एक समय अधिक तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिबन्ध करनेवाला जीव उन्कृष्ट विशुद्धिका प्राप्त होकर सबसे जघन्य स्थितिबन्ध करता है वह जघन्य हानिका स्वामी है। तथा इनमेंसे किसी एकके जघन्य अवस्थान होता है। ऋसातावेदनीय, नपुंसक्वेद, ऋरति, शोक, नग्कगति, एकेन्द्रियज्ञाति, हण्ड-संस्थान, असम्प्रप्रास्ट्रपाटिका संहनन, नरकगत्यानुपूर्वी, अप्रशस्त्रविहायोगित, आतप, स्थावर और अस्थिर आदि छहकी जघन्य बृद्धिका स्वामी कीन है ? जो एक समय कम अकुष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव स्थितिबन्ध कालके पूर्ण हो जानेपर उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करता है वह जघन्य वृद्धिका स्वामी हैं। जघन्य हानिका स्वामी कौन हैं। जो एक समय श्रधिक तत्प्रायोग्य जधन्य स्थितिवन्ध करनेवाला जीव तत्प्रायाग्य विद्युद्धिको प्राप्त होकर जघन्य स्थितिबन्ध करता है वह जघन्य हानिका स्वामी है । तथा इनमेंसे किसी एकके जघन्य ऋवस्थान होता है । स्त्रीवेद, तीन जाति, चार संस्थान, चार संहनन, सूच्म, अपर्याप्र और साधारणकी जघन्य बृद्धिका स्वामी कीन है १ जो एक समय कम तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिवन्ध करनेवाला जीव स्थितिवन्ध

द्विदि० तस्स जह० वहुं। जह० हाणी कस्स० १ समजुत्तरं तप्पाओग्गज० द्विदि० पुण्णाए द्विदिवं० तप्पाओग्गउक्क० विसोधं गदो तप्पाओग्गजह० द्विदि० तस्स जह० हाणी। एकदरत्थमवद्वाणं। आहार०-आहार०अंगो०-तित्थय० जह० वहुं। कस्स० १ यो समजुत्तरं तप्पाओग्गउक्क० द्विदो० पुण्णाए द्विदिवं० तप्पाओ० उक्कस्ससंकिले० तदो तप्पाओ० उक्क० द्विदि० तस्स जह० वहुं। जह० हाणी कस्स० १ यो समजुत्तरं सन्व जह० द्विदि० पुण्णाए द्विदिवंधगद्धाए उक्कस्सिया विसोधं गदो तदो सन्व जह० बंधो तस्स जह० हाणी। एकदरत्थमवद्वाणं। एवं ओघभंगो पंचिदिय-तस०२-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि-कोघादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-चक्खुदं०-अचक्खुदं०-भवसि०-अन्यस्तरि०-मिच्छा०-सण्णि-आहारग ति।

८४२. णेरइएसु पंचणा०-णवदंदणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि०-पंचंत० जह० बङ्ढी हाणी अबद्वाणं ओघं णाणावरणीयभंगो।साद०-पुरिस०-हस्स रिद्द मणुसग०-समचदु०-बङ्कारिस०-मणुसाणु०-पसत्थ०-थिरादिछ०-उच्चा० जह० बङ्कि-हाणि-अबद्वाणं ओघं। असादा०-णवुंस०-अरदि-सोग-तिरिक्खग०-हुंड०-असंपत्त०-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-अप्य-

कालके पूर्ण हो जानेपर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करता है वह जघन्य वृद्धिका स्वामी है। जघन्य हानिका स्वामी कोन हे ? जो एक समय अधिक तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिबन्ध करनेवाला जीव स्थितिबन्ध कालक पूर्ण हो जानपर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट विशुद्धिको प्राप्त होकर तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिबन्ध करता है वह जघन्य हानिका स्वामी है। तथा इनमेंसे किसी एकके जघन्य अवस्थान होता है। आहारक शरीर, आहारक आङ्गापाङ्ग और तीर्थंकर प्रकृतिकी जघन्य वृद्धिका स्वामी कोन हे ? जो एक समय अधिक तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करनेवाला जीव स्थितिबन्ध कालके पूर्ण हो जानेपर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करनेवाला जीव स्थितिबन्ध करता है वह जघन्य वृद्धिका स्वामी है। जघन्य हानिका स्वामी कोन है ? जो एक समय अधिक मयसे अधिक जघन्य वृद्धिका स्वामी है। जघन्य हानिका स्वामी है। तथा इनमेसे किसी एकके जघन्य अवस्थानहोता है। इसी प्रकार आघके समान पञ्चेन्द्रिय, त्रसद्धिक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, काययोगी, कोधादि चार कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, चजुदर्शनी, अचजुदर्शनी, भन्य, अभन्य, मिथ्यादृष्टि, संज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिये।

च्छर. नारिकयों में पाँच ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, मिण्यात्व, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, पक्चेन्द्रियज्ञाति, श्रोदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रम चतुष्क, निर्माण श्रोर पाँच श्रन्तरायकी जघन्य बृद्धि, जघन्य हानि श्रोर जघन्य श्रवस्थानका स्वामी श्रोधमे कहे गये ज्ञानावरणीयके समान है। सातावदनीय, पुरुषवद, हास्य, रित, मनुष्यगति, समचतुरस्त्र संस्थान, वश्रपंभनाराचमहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायागित, स्थिर आदि छह श्रोर उच्चगोत्रकी जघन्य बृद्धि, जघन्य हानिश्रोर जघन्य अवस्थानका स्वामी ओघके समान है। श्रमातावदनीय, नपुंसकवद, श्ररित,शोक, तिर्यद्धगति, हुण्डसंस्थान, श्रस-रप्राप्तानुप्रादिका संहनन, तिर्यद्धगत्यानुपूर्वी, उद्योत, श्रप्रशस्त विहायोगित, श्रस्थिर श्रादि छह श्रोर

सत्थ०-अथिरादिछ० णीचाः अोघं असादमंगो । इत्थिवे० चदुसंठा० चदुसंघ० ओघं इत्थिमंगो । तित्थय० ओघं । एवं सञ्वणिरयाणं । णवरि सत्तमाए मणुस० मणुसाणु० — उच्चा० तित्थय० मंगो ।

८४३. तिरिक्खेस ओघेण साघेदव्वं। पंचिदियतिरिक्खअपञ्चन पंचणा०-णधदं-सणा०-सोलसक०-मिच्छ०-भय-दुर्गु०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० जहण्णि० तिण्णि वि ओघमंगो। साद०-पुरिस०-हस्स-रिद-मणुसगिद-पंचिदि०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वञ्जरिस०-मणुसाणु०-पर०-उस्सा-०पसत्थ०-तस०४-थिरा-दिछ०-उच्चा० ओघं आहारसरीरभंगो। असादा०-णवुंस०-अरिद-सोग-तिरिक्खगिदि-एइंदि०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-थावरादि०४-अथिरादिछ०-णीचा० ओघं असादमंगो। इत्थिवे०-तिण्णिजादि-चदुसंठा०-चदुसंघ०-आदाउञ्जो०-अप्पसत्थ०-दुस्सर० ओघं इत्थि-भंगो। एवं सव्वअपञ्चन्तगाणं आणद याव उवरिमाणं देवाणं। हेट्ठाणं णिरयमंगो।

=४४. मणुस०३ तिरिक्खमंगो। एइंदिय-पंचकायाणं विगलिदियाणं च अपजत्त-भंगो। ओरालियका०-ओरालियमि० तिरिक्खोधं। वेउन्त्रिय० वेउन्त्रियमि० देवोधं। णवरि मिस्से त्राणदर्भगो। आहार०-आहारमिस्स० णिरयभंगो। कम्मइग० अवहुाणं

नीचगोत्रका भङ्ग श्रोघमें कहे गये असातावेदनीयके समान है। स्त्रीवेद, चार संस्थान और चार संहननका भङ्ग श्रोघके अनुसार कहे गये स्त्रीवेदके समान है। तीथकर प्रकृतिका भङ्ग श्रोघके समान है। इसी प्रकार सब नारिकयोंक जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सातवीं पृथिवीमे मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उद्यगीत्रका भंग तीर्थद्वर प्रकृतिके समान है।

मध्ये. तिर्यक्कोंमें त्रोघके अनुसार साध लेना चाहिए। पक्केन्द्रिय तिर्यक्क अपयामकोंमे पांच ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, सोलह कपाय, मिण्यास्य, भय, जुगुष्मा, ओदारिक शरीर, नैजम शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुल्यु, उपघात, निर्माण श्रीर पांच अन्तरायके जघन्य तीनो ही आंघके समान हैं। सातावेदनीय, पुरुपवेद, हास्य, रित, मनुष्यगित, पक्केन्द्रियज्ञाति, समचतुरक्क संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वअर्षभनाराचसंहनन, मनुष्यगित्राचनुपूर्वी, परधात, उच्छुाम, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और उच्चगोत्रका भङ्ग आघम कहे गये आहारक शरीरके समान है। असातावेदनीय, नपुंसकवेद, अरित, शांक, निर्यक्कगित, एकेन्द्रियज्ञाति, हण्डसंस्थान, निर्यक्कगित्यानुपूर्वी, स्थावर आदि चार, अस्थिर आदि छह और नीचगोत्रका भङ्ग आघम कहे गये असातावेदनीयके समान है। स्थावेद, तीन जाति, चार संस्थान, चार संहनन, आन्तप, उद्योन, अप्रशस्त विहायोगित और दुःस्वरका भङ्ग आघम कहे गये स्थावेदके समान है। इसी प्रकार सव अपर्याप्तकोंके तथा आनत करपसे लेकर उपरिम प्रवेयक तकके देवोंके जानना चाहिए। नीचेके देवोंके नारिकयोंके समान भङ्ग है।

५४४. मनुष्यत्रिकमें तिर्यञ्चोंक समान भङ्ग है। एकेन्द्रिय, पाँच स्थावरकायिक श्रीर विकलेन्द्रियोंमें अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है। श्रीदारिक काययोगी श्रीर श्रीदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें समान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है। बैक्रियक काययोगी श्रीर वैक्रियिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य देवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि वैक्रियिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें श्रानन कल्पके समान भङ्ग है। श्राहारक काययोगी श्रीर श्राहारक मिश्रकाययोगी जीवोंमें नारिकयोंके

#### एइंदियभंगी । सेसाणि णत्थि ।

८४५. इत्थि०-पुरिस० पंचिदियतिरिक्खभंगो । णवुंसगे तिरिक्खोघं । अवगदवे० सव्वकमाणं जह० वड्ढी कस्स० ? अण्णदरस्स उवसमग० परिवद० पटमिट्ठिदिबंघादो विदिए द्विदिबंघे वट्टमा० तस्स जहण्णिया वड्ढी । जह० हाणी कस्स० ? अण्णद० खवग० सुहुमसंप० दुचरिमादो द्विदिबंघादो चरिमे द्विदिबंधे वट्टमा० तस्स जह० हाणो । तस्सेव से काले जह० अवट्ठाणं । चदुमंज० अवट्विदस्स कादव्वं । एवं सुहुमसंप० । [ विभंगे णिरयमंगो ]

८४६. आभि०-सुद०-ओधि० मणपञ्ज०-संजद-सामाइ०-छेदो०-परिहार-संजदा-संजद-ओधिदंस०-सम्मादि०-खइग०-वेदगस०-उवसम०-सासण०-सम्मामि० णाणा-वरणादि-सादासाद-आहारदुग-तित्थय० एदे अप्पप्पणो द्विदिवंधेण ओधेण साधेदव्वं। किण्ण-णील-काउ० णिरयोघं। तेउ० सोधम्मभंगो। पम्माए सहस्सारभंगो। सुकाए णवगेवञ्जभंगो। असण्णि० तिरिक्खोघं। अणाहार० कम्मइगभंगो।

#### एवं जहण्णसामित्तं समत्तं।

८४७. एत्तो जहण्णुकमस्ससामित्तसाधणद्वं जहण्णुकस्समद्भच्छेदादो उक्स्स-मंकिलिद्वं तप्पाओग्गसंकिलिद्वं उक्स्सविसोधि-तप्पाओग्गविसोधीहि जहण्णुक्कस्स-

८४६. आभिनिवाधिकज्ञानी, श्रतज्ञानी, अयधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिक-संयत, छेदापस्थापनासंयत, परिहारिवशुद्धिसंयत, संयतासंयत, श्रविदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, चायिक-सम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशामसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यदृष्टि श्रोर सम्यग्निध्यादृष्टि जीवोंमं ज्ञानावरणादि, सातावदर्नाय, असातावदनीय, श्राहारकद्विक श्रोर तीर्थङ्कर इन प्रकृतियोंकी ज्ञयन्य यृद्धिवन्ध श्रादिका स्वामित्व श्रपने श्रपने स्थितवन्धको ध्यानमें रखकर ओघके श्रनुसार साध लेना चाहिए। कृष्ण, नील श्रोर कापातलेश्यावाले जीवोमें सामान्य नारिकयोंके समान भङ्ग है। पीतलेश्यावाले जीवोमें सोधर्म कल्पके समान भङ्ग है। पद्मलेश्यावाले जीवोमें सोधर्म कल्पके समान भङ्ग है। पद्मलेश्यावाले जीवोमें सहस्रार कल्पके समान भङ्ग है। श्रुक्रलेश्यावाले जीवोमें सोधिवयकके देवोके समान भङ्ग है। श्रम्हा जीवोमें सामान्य तिर्यक्षीके समान भङ्ग है। श्रमाहारक जीवोमें कार्मणकाययांगी जीवोंक समान भङ्ग है।

#### इस प्रकार जघन्य स्वामित्व समाप्त हुन्ना।

५४७. इसके त्रागे जघन्योत्कृष्ट स्वामिस्वकी सिद्धि करनेके लिए जघन्य उत्कृष्ट अद्धाच्छेदके अनुसार उत्कृष्ट संक्रिष्ट, तत्प्रायोग्य संक्रिष्ट, उत्कृष्ट विशुद्धि स्त्रीर तत्प्रायोग्य विशुद्धिको जहाँ जो

#### सामित्तं साधेदव्वं ।

# एवं सामित्तं समत्तं। अप्पाबहुगं

८४८. अप्पाबहुगं दुविधं-जहण्णयं उक्कस्सयं च । उक्कस्सए पगदं । दुविधं-ओधे० आदे०। ओधे० पंचणा०-णवदंसणा०-दोवदणी०-मिच्छ० सोलसक०-णवुंस०-चदुणोक०-भय-दु०-तिरिक्खाण०-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०-वण्ण०४-तिरिक्खाण०-अगु०४-आदाउजो० -थावर-वादर-पज्ञत्त-पत्तेय०-धिराधिर-सुभासुभ-दृभग-अणादे०-जम०-अजस०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० सन्वत्थोवा उक्क० बहुी । उक्क० अवहुाणं विसे० । उक्क० हाणी विसे० । आहारदुगं सन्वत्थोवा उक्क० हाणी अवहुाणं च । वड्डी संखेजगु० । तित्थय० सन्वत्थोवा उक्क० हाणी अवहुाणं च । उ० वड्डी संखेजगु० । सेसाणं सन्वत्थोवा उक्क० बड्डी । हाणी अवहुाणं च दो वि तुल्लाणि विसे० । एवं ओघभंगो कायजोगि-कोधादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खुदं०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छादि०-आहारग ति ।

८४६. अवगदवे०-सुहुमसंप० सन्वाणं सन्वत्थोवा उक्क० हाणी अवहाणं च दो वि तुल्ला। उक्क० वङ्की संखेजगु०। आभि०-सुद०-ओधि०-मणपज्जव-संजद-सामाइ०-स्रेदो०-परिहार०-संजदासंजद०-ओधिदं०-सम्मादि०-खइग०-वेदग०-उवसम०-सम्मामि०

सम्भव हो ध्यानमे रखकर जघन्योत्कृष्ट स्वामित्व साध लेना चाहिए । इस प्रकार स्वामित्व समाप्त हुऋा ।

#### अल्पबहुत्व

नश्नः अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—आंघ और आदेश । आंघसे पाँच ज्ञानावरण, नो दर्शनावरण, दो बेदनीय, मिण्यात्व, सोलह कपाय, नपुंसकवद, चार नोकपाय, भय, जुगुप्मा, निर्यक्कानि, एकेन्द्रियजानि, ओदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचनुष्क, निर्यक्कान्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, आतप, उद्यान, स्थावर, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुर्भग, अनादेय, यशाकीति, अयशाकीतिं, निर्माण, नीचगांव और पाँच अन्तरायकी उत्कृष्ट वृद्धि सबसे स्ताक है । इससे उत्कृष्ट अवस्थान विशेष अधिक है । आहारकद्विकची उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान सबसे स्ताक है । इसमें उत्कृष्ट वृद्धि संख्यानगुणी है । नीर्थक्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान सबसे स्ताक है । इसमें उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान सबसे स्ताक है । इसमें उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान सबसे स्ताक है । इसमें उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान सबसे स्ताक है । इसमें उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान दोनों ही तुल्य होकर विशेष अधिक है । इसी प्रकार ओघक समान काय-योगी, कोधादि चार कथायवाले, मत्यक्कानी, श्रनाक्कानी, असंयन, अचनुदर्शनी, भव्य. अभव्य, मिण्यादृष्टि और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

५४६. त्रपगतवदी श्रोर सूद्रमसाम्परायिक संयत जीवोम सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट हानि श्रोर उत्कृष्ट श्रवस्थान दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्ताक हैं। इनमें उत्कृष्ट वृद्धि संख्यातगुणी है। श्राभिनिबोधिकज्ञानी, श्रतज्ञानी, श्रवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामाधिक संयत, छेदो-पस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धि संयत, संयतासंयत, श्रविधदर्शनी, सम्यग्दष्टि, ज्ञायिकसम्यग्दष्टि, सन्वत्थोवा उक्किस्सिया हाणी अवट्ठाणं च दो वि तुल्ला । उ० वड्डी संखे अगु० । सादादीणं एसिं सत्थाणं उक्किस्सियं तेसिं सन्वत्थोवा उक्क० वड्डी । उक्क० हाणी अवट्ठाणं च दो वि तुल्ला विसे० । सेसाणं णिरयादि याव असण्णि ति सन्वत्थोवा उक्क० वड्डी । उक्क० हाणी अवट्ठाणं च दो वि तुल्ला विसे० । णविर कम्मइग-अणाहारगेसु सन्वत्थोवा उक्क० अवट्ठाणं । वड्डी संखे अगु० । उ० हाणी विसेसाहिया ।

#### एवं उकस्सयं समत्तं

८५०. जहण्णए पगदं । दुवि०-ओघे० आदे० । ओघे० सन्वकम्माणं जह० विष्टु-हाणि-अवट्ठाणं च तिण्णि वि तुल्ला । एवं णेरइगादि याव अणाहारग त्ति णेदव्वं । णवरि अवगदवे० सन्वन्थोवा जह० हाणी अवट्ठाणं च दो वि तुल्ला । जह० वङ्की संखेज्जगु० । एवं सुदुमसंप० ।

> एवं अप्पाबहुगं समत्तं। पदणिक्खेवे ति समत्तं।

# विश्ववंधो

८५१. विद्विषंधे ति तत्थ इमाणि तेरसेव अणियोगदाराणि। तं यथा—सम्रक्तित्तणा याव अप्पाबहुगे ति ।

वेदकसम्यग्हिष्ट, उपशमसम्यग्हिष्ट और सम्यग्मिश्याहिष्ट जीवोंमे उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान दोनों ही तुत्य होकर सबसे स्तोक है। इनमें उत्कृष्ट वृद्धि संख्यातगुणी है। सातादिमेसे जिनका स्वस्थान उत्कृष्ट होता है उनकी उत्कृष्ट वृद्धि सबसे स्तोक है। इससे उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान दोनों ही तुस्य होकर विशेष अधिक है। शेष नारिकयोंसे लेकर असंज्ञी तककी मार्गणाओंसे उत्कृष्ट धृद्धि सबसे स्तोक है। इससे उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवत्थान दोनों ही तुस्य हाकर विशेष अधिक है। इतनी विशेषता है कि कार्मणकाययांगी और अनाहारक जीवोंसे उत्कृष्ट अवस्थान सबसे स्ताक है। इससे उत्कृष्ट वृद्धि संख्यातगुणी है। इससे उत्कृष्ट हानि विशेष अधिक है।

#### इस प्रकार उत्कृष्ट ऋरपबहुख समाप्र हुआ।

दश्रः जवन्यका प्रकरण है। उसकी अपेश्चा निर्देश को प्रकार है—ओव और आदेश। आंघमे सब कर्मीकी जघन्य वृद्धि, जघन्य हानि ओर जघन्य श्रवस्थान नीनों ही तुल्य हैं। इसी प्रकार नारिकयोंसे लेकर अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपगत-वेदी जीवोंसे जघन्य हानि और जघन्य अवस्थान दोनों ही तुल्य हो कर सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य वृद्धि संख्यानगुणी है। इसी प्रकार सृद्धमसाम्परायिक जीवोंके जानना चाहिए।

इस प्रकार ऋल्पबहुत्व समाप्त हुन्त्रा । इस प्रकार पर्दानचेप समाप्त हुन्त्रा ।

#### षृद्धिबन्ध

५५१. श्रव वृद्धिवन्धका प्रकरण है। वहाँ ये तेरह श्रनुयोगद्वार हैं। यथा-समुर्स्कार्ननामे लेकर श्रह्मवहत्व तक।

# समुक्तिना

- ८५२. सम्रुक्तिनाण दुवि० ओघे० आदे०। ओघे० खवगपगदीणं अत्थि नत्तारि वड्डी चत्तारिहाणी अवद्विद-अवत्तव्ववंधगा य। चदुण्णं आयुगाणं मृलपगदिभंगो। सेमाणं पगदीणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि० अवत्तव्ववंधगा य। एवं ओधमंगो मणुस०३-पंचिदिय-तस०२-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि-ओरालि०-चक्खुदं०-अच-क्खुदं०-भवसि०-सण्णि-आहारग ति।
- ८५३. णेरहएसु धुवियाणं अत्थि तिण्णिवङ्गि-हाणि-अवद्विद-बंधगा य । सेसाणं तित्थयरेण सह अत्थि तिण्णिवङ्गि-हाणि-अवद्विद-अवत्तव्य-बंधगा य । दो आयु० अत्थि असंखेजभागहाणि-अवत्तव्यवंधगा य । एवं सव्वणिरय सव्वतिरिक्ख-मणुसअपज्ञ०-सव्यदेव० पंचिदिय-तसअपज्जत्माणं च ।
- ८५८. एइंदिय-पंचकाएस ध्रुविमाणं अत्थि एकवड्डि-हाणि-अवद्विद-बंधमा य । सेसाणं अत्थि एक-बड्डि-हाणि-अवद्विदअवत्तव्ववंधमा य । विगलिदिय-पज्जत्त-अपजत्तम् ध्रुविमाणं अत्थि वे बड्डि-हाणि-अवद्विदवंधमा य । सेसाणं अत्थि वे-बड्डि-हाणि-अवद्विद-अवत्तव्ववंधमा य ।
- ८५५. ओरालियमि० पंचणा०-णवदंसणा०-सोलसक०-भय-दुगुं०-देवगदि-ओरालि०-वेउच्चि०-तेजा०-क०-वेउच्चि०अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०-उप०-णिमि०-

# समुत्कीर्तना

न्पर. समुत्किर्तिनाकी अपेचा निर्देश दो प्रकारका है—आंघ और आदेश। आंघसे श्लवक प्रकृतियोंकी चार वृद्धि, चार हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके वन्धक जीव हैं। चार आयु- ओका भङ्ग मृल प्रकृतिवन्धके समान हें। रोप प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। इसी प्रकार ओघके समान सनुष्यित्रक, पर्ख्वेन्द्रियद्विक, असिद्धक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, काययोगी, औदारिककाययोगी, चश्रुदर्शनी, अचश्रुदर्शनी, भव्य, मंज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

प्य.३. नारकी जीवोमं घ्रुचयन्धवाली प्रकृतियोकी तीन वृद्धि, तीन हानि, श्रीर श्रवस्थित पर्क बन्धक जीव हैं। तीर्थङ्कर प्रकृतिके साथ शेप प्रकृतियोकी तीन वृद्धि, तीन हानि, श्रवस्थित श्रीर अवक्तव्य पर्क बन्धक जीव हैं। दो श्रायुत्र्योकी असंख्यात भागहानि श्रीर श्रवक्तव्य पर्क बन्धक जीव हैं। इसीप्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य श्रपयाप्त, सब देव, पञ्चिन्द्रिय अपयाप्त श्रीर त्रस अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए।

५.४४. एकंन्द्रिय और पाँच स्थावरकायिक जीवोमं ध्रववन्धवाली प्रकृतियोकी एक युद्धि, एक हानि और अवस्थित पदंक बन्धक जीव है। शेप प्रकृतियोकी एक युद्धि, एक हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदंके बन्धक जीव है। विकलेन्द्रिय और इनके प्रयोप्त और अपर्याप्त जीवोमे ध्रव-वन्धवाली प्रकृतियोंकी दो वृद्धि, दो हानि और अवस्थित पदंके बन्धक जीव है। शेप प्रकृतियोंकी दो युद्धि, दो हानि और अवक्तव्य पदंके बन्धक जीव हैं।

न्ध्य. श्रीदारिक मिश्रकाययोगी जीवोमे पाँच ज्ञानावरण, नी दशनावरण, सोलह कपाय, भय, जुगुण्सा, देवगीत, श्रीदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, नैजयशरीर, कार्मणशरीर, वैक्रियिकआ- तित्थय ० पंचंत ० अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्विद ० । सादादीणं मिच्छत्तस्स च सव्व पगदीणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि ० -अवत्तव्वयं ० ।

८५६. वेउव्वि० देवोघं। वेउव्वियमि० पंचणा० णवदंसणा०-सोलसक० भय-दु०-ओरालि० तेजा० क० वण्ण०४-अगु०४- बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-णिमि०-तित्थय०-पंचंत० अत्यि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि०। सेसाणं० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्विद-अवत्तव्व-बंधगा य।

८५७. आहार०-आहारमि० धुविगाणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्विद्वं० । सेसाणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्विद अवत्तव्ववं० । कम्मइ० धुविगाणं देवगदि०४-तित्थय० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि०वं० । सेसाणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्विद-अवत्त० ।

ङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, दवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण, ताथङ्कर स्रोर पाच अन्तरायका तीन वृद्धि, तीन हानि स्रोर अवस्थित पदक वन्धक जीव हैं। साता आदि स्रोर मिध्यात्वसे लेकर सब प्रकृतियाकी तीन वृद्धि, तीन हानि, स्रावस्थित स्रोर स्रावक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं।।

५५६. वैक्रियिककाययोगी जीवोमं सामान्य देवोंकं समान भङ्ग है। वैक्रियिकमिस्त्रकाययोगी जीवोमं पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सोलह कपाय, भय, जुगुप्सा, ऋौदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्ण चतुष्क, ऋगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण, तीर्थङ्कर ऋौर पाँच ऋन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पद्कं वन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, श्रवस्थित ऋंगेर अवक्ष्य पदके वन्धक जीव हैं।

न्य. श्राहाककाययोगी और श्राहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रुव वन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रोर श्रवस्थित पदक बन्धक जीव हैं। रोप प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन-हानि, श्रवस्थित श्रोर श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। कार्मणकाययोगी जीवोंमें ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियाँ, देवगति चतुष्क श्रोर तीर्थङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रोर श्रवस्थितपदके बन्धक जीव हैं। रोप प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित श्रोर श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं।

न्ध्रमः स्तिवेदी, पुरुपवेदी और नपुंसकवेदी जीवोमे अठारह प्रकृतियोंकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। सातावंदनीय, पुरुपवेद, यशःक्षीति, और उच्चगांत्रकी चार वृद्धि, चार हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। शेप प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। अपगतवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यात-गुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। सातावंदनीय, यशःक्षीति और उच्चगांत्रकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं।

चरुसंज ० अस्थि संखेजभागवड्डि-हाणि-अवट्टि०-अवत्त ०।

८५६. कोधे पंचणा०-चंदुदंसणा०-चंदुसंज०-पंचंत० अतिथ चत्तारिवड्डि-हाणि-अवट्ठि०। सादावे०-पुरिस०-जस०-उचा० अतिथ चत्तारिवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त०। सेसाणं ओघं। माणे पंचणा०-चंदुदंस०-तिण्णिसंज०-पंचंत० अतिथ चत्तारिवड्डि-हाणि-अवट्ठि०। कोधसंजलण० सादभंगो। सेसं ओघं। मायाए पंचणा०-चंदुदंस०-दोसंज०-पंचंत० अतिथ चत्तारिवड्डि-हाणि अवट्ठि०। सेसाणं ओघं। लोभे ओघं। णवरि चोद्दस० अवत्तव्वं णतिथ।

८६०. मदि०-सुद० धुविगाणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि०। चदुआयु० ओघं।मिच्छ० सेसाणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० अवत्त०।एवं विभंग०-अब्भवसि०-मिच्छादि०। णवरि अब्भवसि०-मिच्छादि० मिच्छत्तस्स अवत्त० णित्थ।

८६१. आभिणि०-सुद०-ओधि० पंचणा०-चरुदंसणा०-सादा०-चरुसंज०-पुरिस०जसगि०-उचा०-पंचंत० अत्थि चत्तारिवड्डि-हाणि अवद्वि०-अवत्त० । सेसाणं अत्थि तिःण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि०-अवत्त० । एवं मणपज्ञ०-संजद-ओधिदं०-सम्मादि०-खइग०उवसम० ।

चार संज्वलनकी संख्यानभागवृद्धि, संख्यानभागहानि, ऋवस्थित ऋौर ऋवक्तव्य पद्के बन्धक जीव हैं।

द्धि. क्रांध कपायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण. चार मंज्वलन श्रोर पाँच श्रन्तरायकी चार वृद्धि, चार हानि श्रोर श्रवस्थित पदके वन्धक जीव है। सातावदनीय, पुरुपवंद, यशःकीर्ति, श्रोर उच्चगांत्रकी चार वृद्धि, चार हानि, श्रवस्थित श्रोर श्रवक्तव्य पदके वन्धक जीव हैं। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग श्राघके समान है। मान कपायवाले जीवोंमे पाच ज्ञानावरण चार दर्शनावरण, तीन संज्वलन श्रोर पांच श्रन्तरायकी चार वृद्धि चार हानि श्रोर श्रवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। क्रांध संज्वलनका भङ्ग सातावदनीयके समान है। श्रेप प्रकृतियोका भङ्ग ओघके समान है। माया कषायवाले जीवोंमें पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, दं संज्वलन श्रोर पांच श्रन्तरायकी चार वृद्धि, चार हानि श्रोर श्रवस्थित पदके वन्धक जीव हैं। श्रेप प्रकृतियोंका भङ्ग श्रांघके समान है। लोभ कपायवाले जीवोंमें श्रोधके समान है। इतनी विशेपता है कि चाँदह प्रकृतियोंका श्रवक्तन्य पद नहीं है।

्वि०. मत्यज्ञानी ख्रोर श्रुताज्ञानी जीवोमें ध्रुयबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि ख्रोर अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। चार ख्रायुख्रोंका भङ्ग ख्रायके समान है। मिण्यात्व श्रोर शेप प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, ख्रवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। इसी प्रकार विभङ्गज्ञानी, ख्रभव्य ख्रोर मिण्यादृष्टि जीवोंक जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि अभव्य ख्रोर मिण्यादृष्टि जीवोंके ज्ञानना चहिये। इतनी विशेषता है कि

५६१. ऋाभिनिवाधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अविधिज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार संज्वलन, पुरुपवेद, यशःकीर्ति. उच्चगात्र और पाँच ऋन्तरायकी चार वृद्धि, चार हानि, अवस्थित और अवक्तत्य पदके वन्धक जीव हैं। रोप प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तत्य पदके बन्धक जीव हैं। इसी प्रकार सनःपर्ययञ्जानी, संयत, अविधिद्शीनी, सम्यग्दृष्टि, चायिकसम्यग्दृष्टि और उपशाससम्यग्दृष्टि जीवोंक ज्ञानना चाहिये।

द्दर. सामाइ०-छेदो० पंचणा०-चदुदंस०-लोभसंज०-उचा०-पंचंत० अस्थि चत्तारिवह्नि-हाणि-अवट्टि०। सेसाणं ओघं। परिहार०-संजदासंजदा० आहारकाय-जोगिभंगो।सुहुमसंप० पंचणा०-चदुदंस०-सादावे०-जस०-उचा०-पंचंत० अस्थि संखे- अभागवृद्धि-हाणि-अवट्टि०। असंजदे पंचणा० छदंसणा० वारसक०-भय०-दु०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि० पंचंत० अस्थि तिण्णिवृद्धि-हाणि-अवट्टि०। सेसाणं अस्थि तिण्णिवृद्धि-हाणि-अवट्टि०-अवत्त०। एवं किण्ण-णील-काऊणं। णवरि किण्ण-णीलाणं तित्थय० अवत्त० णित्थ।

८६३. तेऊए पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-भय-दु०-तेजासरीरादि-पंचंतरा० अत्थि तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०। सेसाणं अत्थि तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त ०। पम्माए पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-भय०-दु०-पंचिदियादिपण्णरस-पंचंत० अत्थि-तिण्णिवड्ढिहाणी०-अवट्ठि०। सेसाणं तिण्णिवड्ढिहाणी-अवट्ठि०-अवत्त ०। सुकाए ओघं।

८६४. वेदगस० धुविगाणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि०। सेसाणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि०-अवत्त०। सासणे धुविगाणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि०। सेसाणं० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि०-अवत्त०। सम्मामिच्छा० पंचणा०-छदंसणा०-

द्ध. सामायिक और छेदापस्थापना संयत जीवोंमें पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण, लोभ संज्वलन, उच्चगात्र और पाँच अन्तराययी चार वृद्धि, चार हानि, और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग आंघके समान है। परिहारिवशुद्धि संयत और संयतासंयत जीवोंमें आहारककाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है। सूक्ससाम्परायिक संयत जीवोंमें पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण, सातावदनीय, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और अवस्थितपदके बन्धक जीव हैं। अस्यत जीवोंमें पाँच झानावरण, छह दर्शनावरण, वारह कपाय, भय, जुगुप्सा, नैजमशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, अपचात, निर्माण और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेप प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। इसी प्रकार कृष्ण, नील और कापांतलेस्यावाले जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशोपना है कि कृष्ण और नीललेस्यावाले जीवोंके तीर्थङ्कर प्रकृतिका अवक्तव्य पद नहीं है।

द्द. पीतलेश्यावाले जीवोंमें पाँच झानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर आदि ओर पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि ओर अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेप प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। पद्मलेश्यावाले जावोंमे पाँच झानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा, पद्मेत्रिय जाति आदि पन्द्रह और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेप प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीव हैं। शुक्रलेश्यावाले जीवांभें आपके समान भङ्ग है।

्रदश्च. वेदकसम्यग्दष्टि जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवन्धित स्थार अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवन्धित स्थार स्थित स्थार स्था स्थार स

बारसक०-पुरिस०-भय०-दु०-दोगदि पंचिंदि०-चदुसरीर-समचदु०-दोअंगो०-बजारिस०-वण्ण०४-दोआणु०-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-पंचंत० अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवडि०। सेसाणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवडि०-अवत्त०। ८६५. असण्णीसु धुविगाणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवडि०। सेसाणं अत्थि

८५५. अराजानु नुराया आत्य ताण्याङ्ग-हाण-अवाहुः । ससाण आत्य तिण्णिवड्डि-हाणि-अवडि०-अवत्त० । अणाहार० कम्मइगमंगो । एवं सम्रक्षितणा समता । सामित्तं

८६६, सामित्ताणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा०-चदुदंस०चदुसंज०-पंचंत० असंखेजभाग-बिह्न-हाणि-अविद्वि० कस्म० १ अण्णद० एइंदियस्स वा
बोइंदियस्स वा तीइंदि० चदुरिंदि० पंचिदि० सिण्णि० असिण्णि० बाद्र० सहुम० पञ्जता
अपज्जत्त०। संखेजभागविह्न-हाणिबंधो कस्स० १ अण्ण० बेइंदि० तीइंदि० चदुरिंदि०
पंचिदि० सिण्णि० असिण्णि० पज्जत० अपज्ज०। संखेजगुणविद्वि-हाणि० कस्स० १ अण्ण०
पंचिदि० सिण्णि० असिण्ण० पज्जत० अपज्जत०। असंखेजगुणविद्विबंधो कस्स० १ अण्ण०
अणियद्विवादर० उवसमणादो परिवदमाणस्स मणुसस्स वा मणुसिएणी वा पदमसमय
देवस्स वा। असंखेजगुणहाणिबंधो कस्स० १ अण्ण० उवसामगस्स वा खवगस्स वा

स्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। सम्यग्मिण्यादृष्टि जीवोमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कपाय, पुरुपवेद, भय, जुगुप्सा, दो गिन, पञ्चेन्द्रिय जाति, चार शरीर, समचतुरस्त्र संस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, वन्नपंभनाराचसंहनन, वर्णचतुष्क, दो आनुपूर्वी, अगुरुलधुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और पाँच अन्तरायकी तीन बृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन बृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं।

८६५. असंज्ञी जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियांकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर श्रवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, श्रवस्थित श्रीर श्रवक्तव्य पदके यन्थक जीव हैं। श्रनाहारक जीवोंमें कार्मणकाययोगी जीवोंके समान भक्त हैं।

इस प्रकार समुत्कीर्तना समाप्त दुई।

#### स्वामित्व

द्६. स्वामित्वानुगमकी अपेत्ता निर्देश दो प्रकारका है—आंघ और आदेश। आंघसे पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण,चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी असंख्यानभागवृद्धि, असंख्या तभागहानि और अवस्थित पदका स्वामी कीन है ? अन्यतर एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पञ्चोन्द्रिय, संज्ञी, असंझी, वादर, सूत्तम, पर्याप्त या अपर्याप्त जीव स्वामी है। संख्यानभागवृद्धि और संख्यातभागहानिका स्वामी कौन है ? अन्यतर द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पञ्चोन्द्रिय, मंज्ञी, असंझी, पर्याप्त या अपर्याप्त जीव स्वामी है। संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका स्वामी कौन है ? अन्यतर पञ्चोन्द्रिय संज्ञी असंज्ञी पर्याप्त या अपर्याप्त जीव स्वामी है। असंख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका गणवृद्धिवन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर उपशामअणिसं गिरनेवाला अनिवृत्तिवादरसाम्परायिक मनुष्य या मनुष्यनी अथवा प्रथम समयवर्ती देव स्वामी है। असंख्यातगुणहानिवन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर उपशामक या क्षपक अनिवृत्तिवादरसाम्परायिक जीव स्वामी है। अवक्तव्य

अणियहिबादरसांपराइगस्स । अवत्त० कस्स होदि ? उवसमणादो परिवदमाणस्स मणुसस्स वा मणुसिणीए वा पढमसमयदेवस्स वा । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुवंधि०४ तिण्णिविद्धि-हाणि-अविद्धि० णाणावरणभंगो । अवत्त० कस्स० ? अण्ण० संजमादो वा संजमासंजमादो वा सम्मामिच्छादो वा परिवदमाणगस्स पढमसमय—मिच्छादिद्धस्स वा सासणसम्मादिद्धिस्स वा । णविर मिच्छत्तस्स सासणादो वा पढम समयमिच्छादिद्धिस्स वा । साद०-पुरिस०-जस०-उचा० चत्तारिविद्ध हाणि-अविद्धि० णाणावरणभंगा । अवत्त० कस्स०? अण्ण० परियत्त० । णिद्दा-पचसा-भय०-दु०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०तिण्णिविद्ध-हाणि-अविद्धि०-अवत्त० णाणावरणभंगो । असाद०-इत्थि०-णवुंस०-चदुणोक०-तिरिक्ख-मणुसग०-पंचजादि-छस्संठा०-छस्संघ०-दोश्राणु०-दोविद्दा०-तस-थावरादिणवयुगल-अजस०-णोचा० तिण्णिविद्ध-हाणि-अविद्ध० णाणावरणभंगो । अवत्त० सादभंगो । अपचक्खाणा०४-तिण्णिविद्ध-हाणि-अविद्ध० णाणावरणभंगो । अवत्त० संजमादो वा संजमासंजमादो वा परिवदमा० पटमस० मिच्छादि० सासण० सम्मामिच्छादिद्विस्स वा असंजद० वा । पचक्खाणा०४-तिण्णिविद्ध-हाणि-अविद्ध० णाणावरणभंगो । अवत्त० संजमादो परिवदमा० पटम० मिच्छा० सासण० सम्मामि० असंज० संजदासंजदस्स वा । चदुआयु० अवत्त० कस्स० ? अण्ण० पटमसमय-आयुग० बंधमा-

बन्धका स्वामी कौन है ? उपशमश्रीणमे गिरनेवाला मनुष्य या मनुष्यिती अथवा प्रथम समयवर्ती देव स्वामी है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिश्यान्व, श्रीर श्रनन्तानुबन्धी चारकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर अवस्थित बन्धका स्वामी ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य वन्धका स्वामी कौन है १ अन्यतर संयमसे संयमासंयमसे. सम्यक्त्वसे या सम्यग्मिथ्यात्वसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि श्रीर सासा-दनसम्यग्दृष्टि जीव स्वामी है। इतनी विशेषता है कि मिध्यात्व प्रकृतिकी अपेक्षा अवक्तव्य बन्धका म्बामी संयमादि चार स्थानोंसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिध्यादृष्टि जीव तो है ही। साथ ही मासादनसम्यक्त्वसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिण्यादृष्टि भी है। सातावेदनीय, पुरुपवेद, यशः कीर्ति श्रीर उच्चगोत्रकी चार वृद्धि, चार हानि श्रीर श्रवस्थित वन्धका स्वामी ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर परिवर्तमान जीव स्वामी है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात त्र्यौर निर्माणकी तीन वृद्धि, तीन हानि, श्रवस्थित श्रीर श्रवक्तव्य बन्धका स्वामी ज्ञानावरणके समान है। श्रसातावेदनीय, क्रीवेद, नपुंसकवेद, चार नाकपाय, तिर्यक्रगति, मनुष्यगति, पाँच जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो श्रानुपूर्वी, दो विहायोगति, त्रस श्रीर स्थावर आदि नौ युगल, श्रयशःकीर्ति श्रीर नीचगोत्रकी तीन वृद्धि. तीन हानि श्रीर अवस्थित वन्धका भङ्ग ज्ञान।वरणके समान है। श्रवक्तव्यवन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अप्रत्याख्यानावरणचारकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। श्रवक्तव्य बन्धका स्वामी संयम या संयमासंयमसे गिरनेवाला प्रथम ममयवर्ती मिथ्य। दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्य। दृष्टि या असंयतसम्यग्दृष्टि जीव है। प्रत्या-क्यानावरण चारकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर श्रवस्थित वन्धका स्वामी ज्ञानावरणके समान है। श्रवक्तव्य बन्धका स्वामी संयमसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिध्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्य। दृष्टि, असं यतसम्यग्दृष्टि या संयतासंयत जीव है। चार आयुओंके अवक्तव्यवन्यका णस्स । तेण परं असंखेजमागहाणी । वेउन्वियछ० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि० कस्स० ! अवन्तव्य० अण्ण० सण्णि० असण्णि० । णवरि संखेजगुणवड्डि-हाणि० सण्णिपज्ञत्त० । अवन्तव्य० सादमंगो । आहारदुग-पर०-उस्सा०-आदाउजो०-तित्थय० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि० कस्स० ! अण्ण० । अवन्त० कस्स० ! अण्णद० पढमसमयबंधमा० । ओरालि०-ओरालि०-अंगो० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि० णाणावरणमंगो । अवन्त० कस्स० ! अण्ण० पढम-समयबंध० । एवं ओधमंगो कायजोगि-अन्वक्खु०-भवसि०-आहारग नि ।

द्धः णेरइएसु धुविगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० कस्स० १ अण्ण० । सेसं ओघादो साधेदव्वं । णविर सत्तमाए तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-णीचा० थीणिगिद्धिमंगो । मणुस०-मणुसाणु०-उचा० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णाणावरणमंगो । अवत्त० कस्स० १ अण्ण० मिच्छत्तादो परिवद० पढम० असंज० सम्मामि० ।

=६=, तिरिक्खेसु धुविगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवड्ढि० कस्स० ? अण्ण० । सेसाणं ओघं । एवं पंचिंदियतिरिक्ख०३ । पंचिंदि०तिरिक्खअपज्जत्त० धुविगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि अवड्ढि० कस्स० ? अण्ण० । सेसं ओघं । एवं सन्वअपज्ज० अणुदिसदेवाणं च । मणुसेसु

स्वामी कोन है ? अन्यतर प्रथम समयमं आयुक्सका वन्ध करनेवाला जीव स्वामी है। उसके दृष्ट असंख्यातमागहानि होती है। वैक्रियिक छहकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन हे ? अन्यतर संज्ञी और असंज्ञी जीव स्वामी है। इतनी विशेषता है कि संख्यात-गुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका स्वामी संज्ञी पर्याप्त जीव है। अवक्तव्यवन्धका स्वामी सातावेष-नीयके समान है! आहारकद्विक, परघात, उच्छास, आतण, उद्योन और तीथकरकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित वन्धका स्वामी कौन हे ? अन्यतर जीव स्वामी है। अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन हे ? अन्यतर जीव स्वामी है। अवेदारिकशरीर और औदारिकआङ्गोपाङ्गकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित वन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर प्रथम समयमें वन्ध करनेवाला जीव स्वामी क्रानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर प्रथम समयमें वन्ध करनेवाला जीव स्वामी क्रानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर प्रथम समयमें वन्ध करनेवाला जीव स्वामी है। इसी प्रकार औष्ठिक समान काययोगी, अचनुचर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंक जानना चाहिए।

द्ध. नारिकयों में घ्रवबन्धवाली प्रकृतियों की तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पर्का स्वामी कीन है ? अन्यतर जीव स्वामी है। शेप श्रीविक अनुसार साध लेना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सातवीं पृथिवीमें तिर्यक्षगित, तियक्षगित्यानुपूर्वी और नीचगात्रका भक्क स्त्यानगृद्धिके समान है। मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर अवस्थित अन्यका स्वामी कीन है ? अन्यतर मिध्यात्वसे असंयत सम्यक्ती बानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका स्वामी कीन है ? अन्यतर मिध्यात्वसे असंयत सम्यक्ती वास्की जीव स्वामी है।

्रद्र. तिर्यक्कोमं ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन र्याद्ध, तीन हानि श्रोर अवस्थितबन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोषक समान है। इसी प्रकार पक्कीन्द्रय तिर्यक्कित्रिकके जानना चाहिए। पक्कीन्द्रय तिर्यक्क अपर्याप्तकोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन युद्धि, तीन हानि ध्रोर अवस्थित बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार सब अपर्याप्त श्रोर अनुदिश देवोके जानना चाहिए। मनुष्योंमें श्रोषके समान है। इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्य बन्धका स्वामी प्रथम समय-

ओघं। णवरि अवत्त ० देवो त्ति ण भाणिदव्वं। एवं पंचमण०-पंचवचि०ं। देवेषु

द्ह. एइंदिय-पंचकाएस धुनिगाणं एकवड्ढि हाणि-अवद्वि० कस्स० ? अण्णद० । सेसाणं एकवड्ढि हाणि-अवद्वि० कस्स० ? अण्ण० । अवत्त० कस्स० ? अण्ण० परियत्त० पढम० । विगल्लिदिएस धुनिगाणं दोवड्ढि हाणि-अवद्वि० बंधो कस्स० ? अण्ण० । सेसाणं दोण्णिवड्ढि हाणि-अवद्वि० बंधो कस्स० ? अण्ण० । सेसाणं दोण्णिवड्ढि हाणि-अवद्वि० णाणावरणभंगो । अवत्त० कस्स० ? अण्ण० परियत्त० पढम० । पंचिदि० तस्सेव पज्जता ओधं । णवरि पंचिदि० सण्णि०-असण्णि०-पज्जत्त०-अपज्जत्त ति भाणिद्वं । तस-तसपज्जत्ता ओघं । णवरि बीइंदि० तीइंदि० चदुरिंदि० पंचिदि० सण्णि० असण्णि० पज्जता अपज्जता ति भाणिद्वं ।

८७०. ओरालिका० ओघं। णविर देवो ति ण भाणिद्व्वं। ओरालियमि० तिरिक्खोघं। णविर मिच्छ० कस्स० ? अण्ण० सासण० परिवद० पढम० मिच्छादिद्वि०। देवगदि०४-तित्थय० अवत्त० णित्थि। देउन्विय०-वेउन्वियमि० देवोघं। आहार०-आहारमि० धुविगाणं तिण्णिविद्वि-हाणि-अवद्वि० कस्स० ? अण्णद०। सेसाणं तिण्णिविद्वि-हाणि-अवद्वि० कास्स० ? अण्णद०। सेसाणं तिण्णिविद्वि-हाणि-अवद्वि० णाणावरणभंगो। अवत्त० ओघं सादभंगो। कम्महग० धुविगाणं देवगदि

वर्ती देव होता है यह नहीं कहना चाहिए। इसी प्रकार पाँच मनोयोगी और पाँच वचनयोगी जीवोंके जानना चाहिए। देवोंमें नारिकयोंके समान भङ्ग है।

्ह. एकेन्द्रियोंमें और पाँच स्थावर कायिक जीवोमें ध्रववन्धवाली प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन हें ? अन्यतर जीव स्वामी हैं। शेप प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थितवन्धका स्वामी कौन हें ? अन्यतर जीव स्वामी हैं। अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन हें ? अन्यतर परिवर्तमान प्रथम समयवर्ती जीव स्वामी हैं। विकलेन्द्रियोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी दो वृद्धि, दो हानि और अवस्थित वन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी हैं। शंप प्रकृतियोंकी दो वृद्धि, दो हानि और अवस्थित वन्धका मङ्ग झानावरणके समान है। अवक्तव्यबन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर परिवर्तमान प्रथम समयवर्ती जीव स्वामी है। पर्छन्द्रिय और पर्छन्द्रिय पर्याप्त जीवोंमें आवके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि पर्छन्द्रिय संज्ञी असंज्ञी पर्याप्त और अपर्याप्त एसा कहना चाहिए। त्रस और त्रमपर्याप्त जीवोंमें आवके समान भंग है। इतनी विशेषता है दि द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पर्छन्द्रिय संज्ञी असंज्ञी पर्याप्त कहना चाहिए।

पंचगस्स च अवद्धिः कस्सः ? अण्णः । सेसाणं अवद्धिः-अवत्तः कस्सः ? अण्णः । एवं अणाहारः ।

८७१. इत्थि० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० कस्स० १ अण्ण० । णवि असंखेजगुणवड्डि-हाणि० अणियद्वि० । णिद्दादंडस्स अवत्त० देवो ति ण माणिदव्वं । सेसाणं ओघं । पुरिसेसु ओघं । णवुंसगे धुविगाणं इत्थिभंगो । सेसाणं ओघं । अवगदवे० पंचणा०-चदुदंसणा०-पंचंत० संखेजमागवड्डि-संखेजगुणवड्डि-अवत्त० कस्स० १ अण्णद० उवसम परिवद० । तेसिं हाणि-अवट्ठि० कस्स० १ अण्ण० उवसम० खवग० । सादावे०-जस०-उचा० संखेजमागवड्डि-संखेजगुणवड्डि-असंखेजगु०-अवत्त० कस्स० १ अण्ण० उवसम० परिवद० । तेसिं हाणि-अवट्ठि० कस्स० १ अण्ण० उवसम० परिवद० । तेसिं हाणि-अवट्ठि० कस्स० १ अण्ण० उवसाम० परिवद० । संखेजमागहाणि-अवट्ठि० कस्स० १ अण्ण० उवसाम० परिवद० । संखेजमागहाणि-अवट्ठि० कस्स० १ अण्ण० उवसाम० परिवद० । संखेजमागहाणि-अवट्ठि० कस्स० १ अण्ण० उवसाम०

८७२. कोघेसु पंचणा०-चदुदंसणा० चदुसंज० पंचंत० तिण्णिवड्डि-हाणि-असंखेज्जगु-णवड्डि-हाणि-अवट्ठि० ओघं। अवत्त० णित्थि। सेसाणं च ओघं। माणे तिण्णिसंजलणं,

कार्मणकाययोगी जीवोंमे ध्रुवबन्धवाली और देवगितपञ्चकं अर्वास्थतवन्धका स्वामी कोन हं ? अन्यतर जीव स्वामी है। शेष प्रकृतियोंके अवस्थित और अवक्तव्य वन्धका स्वामी कोन हं ? अन्यतर जीव स्वामी है। इसी प्रकार अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए।

क्षित्रे जीवोमें पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्यलन और पाच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित वन्धका स्वामी कौन हें? अन्यतर जीव स्वामी हैं। इतना विशेषता है कि असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणवानिका स्वामी अनिवृत्तिकरण जीव है। निद्रादण्डकके अवक्तव्य वन्धका स्वामी देव हैं ऐसा नहीं कहना चाहिए। शेप प्रकृतियोंका भंग आघके समान हैं। पुरुषवेदी जीवोंमें आधके समान भंग हैं। नपुंसकवेदी जीवोंम ध्रुववन्ध्याली प्रकृतियोंका भंग खोवके समान हैं। अपगतवेदी जीवोंमें पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, और अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन हैं? अन्यतर गिरनेवाला उपशामक और चपक जीव स्वामी हैं। मातावेदनीय, यशकीति और उच्चगोत्रकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, और अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन हैं? अन्यतर उपशामक और चपक जीव स्वामी हैं। चार संज्यलनोंकी संख्यातभागवृद्धि और अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन हैं? अन्यतर शिरनेवाला उपशामक जीव स्वामी हैं। उनकी हानि और अवक्तिव्य बन्धका स्वामी कौन हैं? अन्यतर शिरनेवाला उपशामक जीव स्वामी हैं। चार संज्यलनोंकी संख्यातभागवृद्धि और अवक्तव्य वन्धका स्वामी हैं। चार संज्यलनोंकी संख्यातभागवृद्धि और अवक्तव्य वन्धका स्वामी हैं। संख्यातभागहानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन हैं? अन्यतर उपशामक और लिक जीव स्वामी हैं। संख्यातभागहानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन हैं? अन्यतर उपशामक और लिक जीव स्वामी हैं।

५७२. कोधकपायवाले जीवोंमे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार मंज्यलन श्रोर पाँच श्रन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि, असंख्यातगुणवृद्धि, श्रमंख्यातगुणहानि श्रोर अवस्थित वन्धका भैग श्रोचके समान है। यहाँ श्रयक्तव्य वन्ध नहीं है। शेप प्रकृतियोका भंग श्रोचके समान है। मानमे तीन संज्यलन श्रोर मायामे दो संज्यलनोकं तीन पद कहने चाहिये। शेप भङ्ग श्रोचके समान मायाए दोसंज ० तिण्णि भाणिदव्वं । सेसं ओघं । लोभे पंचणा०-चदुदंस०-पंचंत० अवत्तव्वं णित्य । सेसाणं ओघं ।

८७३. मदि०-सुद० धुविगाणं अत्थि तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवड्ढि० तिरिक्खोघं। सेसाणं ओघं। एवं विभंग०-अब्भवसि०-मिच्छा०। णवरि अब्भवसि०-मिच्छादि० मिच्छत्त० अवत्त० णत्थि।

८७४. आभि०-सुद् ओघि० पंचणा०-चदुदं स०-चदुसं ज -पुरिस०-उच्चा०-पंचंत० तिण्णिविहु-हाणि-अविहु० कस्स० १ अण्ण० । असंखे अगुणविहु-हाणि-अवित्त० ओघं । मणुसगिद्दिपंच गस्स तिण्णिविहु-हाणि-अविहु० कस्स० १ अण्ण० । अवत्त० कस्स० १ अण्ण० पढमस० देवस्स वा णेरहगस्स वा । सादावे०-जस० असंखे जगुणविहु-हाणि० ओघं । सेसाणं णाणावरणभंगो । णिद्दा पचलादीणं अवत्त० ओघं । सेसाणं णाणावरणभंगो । णविर अवत्त० कस्स० १ अण्ण० पिरयत्तमा० । णविर देवगदि०४-तिण्णिविहु-हाणि-अविहु०-अवत्त० कस्स० १ अण्ण० । एवं ओधिदंस-सम्मादि० खद्दग०-वेदग०-उवसम० । णविर वेदगे किंचि विसेसो । उवसमे वि असंखे जगुणविहु० कस्स० १ अण्ण० उवसाम-गस्स परिवदमा० पढमस० देवस्स वा । असंखे जगुणहाणि० कस्स० १ अण्ण० उवसाम०

हैं। लोभ कपायवाले जीवोमे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका अवक्तव्य यन्ध नहीं है। रोप प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोयके समान है।

द७३. मत्यज्ञानी और श्रृताज्ञानी जीवोमे प्रुववन्धवाली प्रकृतियोकी तीन वृद्धि, तीन हानि और श्रृविस्थतवन्धका स्वामी तिर्यक्कोंकं समान हैं। रोप प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधकं समान है। इसी प्रकार विभङ्गज्ञानी, स्रभव्य श्रीर मिण्यादृष्टि जीवोंकं जानना चाहिये। इतनी विरोषता है कि स्रभव्य श्रीर मिण्यादृष्टि जीवोमें मिण्यात्वका अवक्तव्यवन्ध नहीं है।

दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवंद, उच्चगांत्र और अवधिक्षानी जीवोम पांच क्षानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवंद, उच्चगांत्र और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका स्वामी कौन हें ? अन्यतर जीव स्वामी हें । असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवस्थितबन्धका स्वामी कौन हें ? अन्यतर जीव स्वामी हें । अवक्तव्यबन्धका स्वामी कौन हें ? अन्यतर जीव स्वामी हें । आवक्तव्यबन्धका स्वामी कौन हें ? अन्यतर प्रथम समयवर्ती देव और नारकी जीव स्वामी हें । सातावेदनीय और यशः कीतिकी असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका स्वामी आधिके समान हें । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान हें । निद्रा और प्रचला आदिकके अवक्तव्यबन्धका स्वामी हें । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान हें । हत्नी विशेषता है कि इनके अवक्तव्यबन्धका स्वामी कौन हें ? अन्यतर परिवर्तमान जीव स्वामी हें । इतनी विशेषता है कि देवगित चतुष्ककी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यबन्धका स्वामी कौन हें । अन्यतर जीव स्वामी हैं । इसी प्रकार अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यन्दृष्टि, और उपशमसम्यन्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि वेदकसम्यन्द्यमें कुछ विशेषता है । उपशमसम्यन्दृष्टि मी भी असंख्यातगुणवृद्धिका स्वामी कौन हें ? अन्यतर उपशमश्रणीसे गिरकर प्रथम समयमें देव हुआ जीव स्वामी है । असंख्यातगुणहानिका स्वामी कौन हें ? अन्यतर उपशामक अनिवृत्तिकरण

अणियहि॰। मणपजन-संजदे ओधिमंगो। णनरि खहगाणं पगदीणं असंखेजगुणनहि-हाणि-अनत्त॰ मणुसिभंगो।

८७४. सामाई०-छेदोव० पंचणा०-चदुदंस०-लोभसंज०-उचा०-पंचंत० अवत्त० णित्थ । सेसाणं मणवजवभंगो । परिहार० आहारकायजोगिभंगो । सुहुमसंप० पंचणा०-चदुदंस०-सादावे०-जस०-उचा०-पंचंत० संखेजभागवड्डि० कस्स० १ अण्णदरस्स उवसाम० परिवद० । संखेजभागहा०-अवद्वि० कस्स० १ अण्णद० उवसाम० वा खवगस्स वा । संजदासंजदेस ध्रविगाणं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि० कस्स० १ अण्ण० । सेसाणं परिहारभंगो । असंजदे ध्रविगाणं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्विदं कस्स० १ अण्ण० । सेसाणं तिरिक्षों । णवरि तित्थयरं ओधं । एवं किण्णा-णीज-काउ० ।

८७६. चक्खुदं० तसपञ्जत्तमंगो। किंचि विसेसो। तेऊए पंचणा० छदंसणा०-चदुसंजल०-भय०-दु०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-णिमि०-पंचंत० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि० कस्स० १ अण्ण०। थीणगिद्धितिग-मिन्छत्त-बारसक० अवत्तव्यं ओघं। सेसं णाणावरणभंगो। सेसाणं पगदीणं तिण्णिवड्डि-हाणि अविद्वि०

जीव स्वामी है। मनःपर्ययज्ञानी श्रोर मंयत जीवोंमे श्रवधिज्ञानी जीवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि चायिक प्रकृतियोंकी श्रमंख्यातगुणवृद्धि, श्रमंख्यातगुणहानि श्रोर अवक्तव्यबन्धका स्वामी मनुष्यिनियोंके समान है।

न्छ. सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, लोम संज्वलन, उच्चगोत्र ख्रीर पाँच अन्तरायका अवक्तत्र्यवन्ध नहीं है। शेप प्रकृतियोंका भक्त मनःप्रयद्यज्ञानी जीवोंके समान है। परिहारिवशुद्धिसंयत जीवोंमें श्राहारककाययोगी जीवोंके समान भक्क है।सूहमसास्परायिक संयत जीवोंमें पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावदनीय, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पांच अन्तरायकी संख्यातभागदृद्धिका स्वामी कोन है श्रान्यतर गिरनेवाला उपशामक जीव स्वामी है श्रास्थातभागदृद्धिका स्वामी कोन है श्रास्थान क्यामी कोन है श्रास्थान अपशामक और चपक जीव स्वामी है। संयतासंयत जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन युद्धि, तीन हानि श्रीर अवस्थितवन्धका स्वामी कोन है श्रास्थान जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी भक्क परिहारिवशुद्धिसंयत जीवोंके समान है। असंयत जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन युद्धि, तीन हानि श्रीर अवस्थितवन्धका स्वामी कोन है श्रास्थान जीवोंके समान है। श्राम प्रकृतियोंका मक्क सामान्य तिर्थञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि नीर्थञ्कर प्रकृतिकः भक्क श्रोधके समान है। इसी प्रकार कृष्ण, नील श्रीर कापोत लेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिये।

= १६. चक्षुदर्शनी जीवोंमें त्रसपर्याप्तकोंके समान भन्न है। कुछ विशेषता है। पीनलेश्यावाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्ञ्यलन, भय, जुगुष्मा, तेजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलाधुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि तीन हानि और अवस्थितवन्धका स्वामी कीन है ? अन्यतर जीव स्वामी है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिश्यात्व और वारह कषायके अवक्तव्यवन्धका स्वामी आधिके समान है। शेष ज्ञानावरणके ममान भन्न है। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका स्वामी कीन है ? अन्यतर जीव स्वामी है। अवक्तव्यवन्धका स्वामी आधिके समान है। इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंमे जानना चाहिये।

कस्स० ? अण्ण० ! अवत्तव्वं ओघं । एवं पम्माए । सुकाए खवगपगदीणं असंखेष्जगुण-वड्टि-हाणि अवत्तव्वं ओघं । सेसाणं तेउभंगो ।

८७७, सासणे धुविगाणं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवड्डि० कस्स० १ अण्ण० । सेसाणं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवड्डि०-अवत्त० विभंगभंगो । सम्मामि० धुविगाणं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवड्डि० कस्स० १ अण्ण० । सेसाणं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवड्डि० कस्स० १ अण्ण० । अवत्त० कस्स० १ वंधगस्स पढमसम० ।

८७८. सण्णीसु पंचिदियमंगो । णवरि सण्णि ति भाणिद्वं । असण्णीसु धुविगाणं दोवड्डि-हाणि-अवट्ठि॰ कस्म॰ ? अण्ण॰ । सेसाणं दोवड्डि-हाणि-अवट्ठि॰ कस्स॰ ? अण्ण॰ । अवत्तव्वं कस्स॰ ? परिय॰ । मणुसगिददुग-वेउव्विगछ०-उचागोद विज्ञत्ता सेसाणं-संवेज्जगु॰ कस्स॰ ? अण्ण॰ एइंदि॰ विगलिंदियस्स वा विगलिंदिएसु असण्णिपंचिदिएसु उवव॰ पटमसम॰ । संवेज्जगुणहाणी कस्स॰ ? अण्ण॰ विगलिंदि॰ असण्णिपंचिदि॰ एइंदिएसु वा विगलिंदिएसु उवव॰ पटम॰ । णविर एइंदि॰ आदाव थावर-सुदुम-साधार॰ वड्डी णित्थ ।

#### एवं सामित्तं समत्तं

शुक्रलेश्यावाले जीवोंमें चपक प्रकृतियोंकी अमंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि श्रौर अवक्तव्य-वन्थका स्वामी श्रोवके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पीतलेश्यावाले जीवोंके समान है।

५७७. मासादनमम्यग्दृष्टि जीवोंमं ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका स्वामी कोन है ? अन्यतर जीव स्वामी है। शेप प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यवन्धका स्वामी विभङ्गज्ञानी जीवोंके समान है। सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोमे ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका स्वामी कौन है । अन्यतर जीव स्वामी है। अवक्तव्यवन्धका स्वामी कौन है। प्रथम समयमें बन्ध करनेवाला जीव स्वामी है।

दश्द. संज्ञी जीवोंमें पद्मन्द्रियोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि संज्ञी ऐसा कहना चाहिए। असंज्ञी जीवोंमें प्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी दो वृद्धि, दो हानि और श्रवस्थित बन्धका स्वामी कीन है ? श्रन्यतर जीव स्वामी है। श्रेष प्रकृतियोंकी दो वृद्धि, दो हानि श्रीर श्रवस्थित वन्धका स्वामी कीन है ? श्रन्यतर जीव स्वामी है। श्रवक्तव्य बन्धका स्वामी कीन है ? परिवर्तमान प्रथम समयवर्ती जीव स्वामी है। मनुष्यगिनिद्धिक, वैक्रियिक छह और उच्चगोत्रको छोड़कर शेष प्रकृतियोंकी संख्यातगुणवृद्धिका स्वामी कीन है ? श्रन्यतर एकेन्द्रिय श्रीर विकलेन्द्रिय जीव मरकर जब विकलेन्द्रियों और असंज्ञी पश्चिन्द्रियोंमें उत्पन्न होता है तो ऐसा जीव पहले समयमें स्वामी है। संख्यातगुणवृद्धिका स्वामी कोन हे ? श्रन्यतर विकलेन्द्रिय श्रीर श्रमंज्ञी पश्चेन्द्रिय जीव जब मरकर एकेन्द्रियों श्रीर विकलेन्द्रियोंमें उत्पन्न होता है तब उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें वह स्वामी है। इननी विशेषता है कि एकेन्द्रियोंमें श्रातप, स्थावर, सूद्म श्रीर साधारण प्रकृतिकी वृद्धि नहीं है।

### कालो

= ७६. कालागुणमेण दुवि०-ओघे० आदे०। ओघेण खवगपगदीणं 'चतारिविड्डितिण्णिहाणिवंघ० केवचि० ? जह० एग०, उक० बेसमयं। असंखेज्जगुण हाणि-अवत्तव्वं
केव० ? एग०। अविड्डिद० जह० एग०, उक० श्रंतो०। चदुण्णं आयुगाणं अवत्तव्वं एग०।
असंखेजजभागहाणी जहण्णुकस्सेण अंतो०। सेसाणं तिण्णिविड्डि-हाणी जह० एग०, उक०
बेसमयं। अविड्डि० जह० एग०, उक० श्रंतो०। अवत्तव्वं एग०। एवं ओघभंगो
पंचिदिय-तम०२-कायजोगि-पुरिस०-कोधादि०४-श्राभि०-सुद०-ओधि०-चक्खु०-अचक्खु०
ओधिदं०-सुकले०-भविति०-सम्मादि०-खइग०-उवसम०-सण्णि-आहारग ति। मणुसतिण्णि-पंचमण०-पंचवि०-श्रोरालिय० ओघं। णविर असंखेजजगुणविद्धी वे समयं
ण लभिद्द। एगसभपं भविद्द। मणपञ्जवसंजद-सामाइ०-छेदोवद्दावण० मणुसभंगो।

८८०, अवगदवेदे पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज० सन्वत्थ संखेज्जभागवड्ढि-हाणी संखेज्जगुगत्रड्ढि-हाणी अत्रत्त० एग० । अत्रद्विदं ओघं । सादावे०-जस०-उचा० संखेज्ज-भागत्रड्ढि-हाणी संखेज्जगुणत्रड्ढि-हाणि असंखेज्जगुणत्रड्ढि-हाणी अत्रत्तन्वं एग० । अत्रद्धि०

#### काल

प्रकृतियोंके चार वृद्धिवत्य और तीत हानियन्धांका कितना काल है ? जवत्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है । असंख्यातगुण्हानि और अवक्तर्यवन्धका कितना काल है ? जवत्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अवस्थितवन्धका जवन्य काल एक समय है । अवस्थितवन्धका जवन्य काल एक समय है । असंख्यातगुण्हानि और अवक्तर्यवन्धका कितना काल है ? असंख्यातमुह्ते हैं । चारो आयुओं के अवक्तर्यवन्धका जवन्य और उन्कृष्टकाल एक समय है । असंख्यातमागहानियन्धका जवन्य और उन्कृष्ट काल अन्तर्मुह्ते हैं । शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जवन्य काल एक समय है और उन्कृष्ट काल दो समय है । अवस्थितवन्धका जवन्यकाल एक समय है । इसी प्रकार और उन्कृष्ट काल अन्तर्मुह्ते हैं । अवक्तर्यवन्धका जवन्य और उन्कृष्टकाल एक समय है । इसी प्रकार और उन्कृष्टकाल एक समय है । इसी प्रकार और उन्कृष्टकाल एक समय है । इसी प्रकार और अमान पञ्चतिस्यदिक, अमिद्धक, काप्योगी, पुरुषवेदी, कोधादि चार कपायवाले, आमिनिवोधिकज्ञानी, श्रुतञ्जानी, अवधिज्ञानी, चन्नर्यानी, अचनुदर्शनी, अवधिदर्शनी, श्रुक्तेत्यावाले, भन्य, सम्यन्दृष्टि, न्यायिकसम्यन्दृष्टि, उपशामसम्यन्दृष्टि संज्ञी और आहारक जीधाके जानता च।हिए । मनुष्यिक, पांच मनोयोगी, पांच वचनयोगी ओर ओदारिक काययोगी जीवोम आधिक समान काल है । इतनी विशेषता है कि इन मार्गणाओंमे असंख्यानगुणवृद्धिका दो समय काल उपलब्ध नहीं होता । किन्तु जबन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । मनःपर्ययञ्चानी, संयत सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोमें मनुष्योंक समान भन्न है ।

८८०. अपगतवदी जीयोमे पाच झानावरण, चार दशनावरण और चार संज्यलनकी सर्वत्र संख्यातभागष्टिद्ध, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि श्रोर अवक्तव्य वन्धका जवन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अवस्थित वन्धका काल ओवके समान है। सातावदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगात्रकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागदानि, संख्यातगुणवृद्धि संख्यात गुणहानि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवकत्यवन्धका जवन्य और उत्कृष्ट काल

१ मूलप्रतौ चत्तारितिण्णिवड्टिहाणि इति पाठः । २ मूलप्रतौ गुणवड्टिहाणि० इति पाठः ।

बं० ओघं । सुदूमसंप० सन्वपग० संखेज्जभागवड्डि हाणी एगस० । अवट्टि० ओघं ।

द्र प्रार्थि ध्रविगाणं सेसाणं च सन्वे भंगा ओघं णिरयगदीणामभंगो। णविर पर्गादिविसेसं णादन्वं। एवं याव अणाहारग ति णेदन्वं। णविर कम्मइ०-अणाहा० ध्रुविगाणं अविद्धदं जह० एग०, उक्क० तिण्णिसमयं। देवगदिपंचगस्स अविद्धदं जह० एग०, उक्क० वेसमयं। सेसाणं थावरपगदीणं अविद्धदं जह० एग०, उक्क० तिण्णिसमयं। इत्थि०-पुरिस०-मणुसग०-चदुजादि-पंचसंठाण-ओरालि०अंगो०-छस्संघडण-मणुसाणु० दोविहा०-तस-सुभग-दोसर-आदेजज०-उच्चागो० अविद्धि० जह० एग०, उक्क० वेसम०। अवत्त० एग०।

#### एवं कालं समत्तं।

### अंतरं

्र व्याप्रामेण दुवि०-श्रोघे० आदे०। ओघे० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंतरा० असंखेजजभागवड्ढि-हाणि-अवद्वि० अंतरं केव०१ जह० एग०, उक्क० अंतो०। वेवड्डि-हाणीबंघ० जह० एग०, उक्क० अणंतकालं०। असंखेजजगुणवड्डि-हाणि-अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० अद्योग्गल०। णवरि असंखेजजगुणव० जह०

एक समय है। तथा श्रवस्थितवन्धका काल श्रोचके समान है। सूद्रमसाम्परायिक संयत जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी संख्यातभागवृद्धि श्रोर संख्यातभागहानिका जवन्य श्रोर उक्तप्र काल एक समय है। तथा अवस्थितवन्धका काल आंघके समान है।

मन्दर. नारिकयोमें ध्रुवबन्धवाली तथा शेष प्रकृतियों के सब भङ्ग श्रोचके अनुमार नरकगित नामकर्मके समान है। इतनी विशेषता है कि प्रकृतिविशेष जानना चाहिए। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कामणकाययांगी और अनाहारक जीवोंमें ध्रुवच्यवाली प्रकृतियों के अवस्थितबन्धका जयन्य काल एक समय है और उन्कृष्ट काल तीन समय है। देवगित पञ्चकके अवस्थितबन्धका जयन्य काल एक समय है और उन्कृष्ट काल दो समय है। श्रेष स्थावरप्रकृतियों के अवस्थितबन्धका जयन्य काल एक समय है और उन्कृष्ट काल तीन समय है। श्रोवद, पुरुषवेद, मनुष्यगित, चार जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गापाङ्ग, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, दो विहायगित, त्रम, सुभग, दो स्वर, आदेय और उच्चगोत्रके अवस्थित बन्धका जयन्य और उन्कृष्ट काल एक समय है। अवक्तव्य बन्धका जयन्य और उन्कृष्ट काल एक समय है।

इस प्रकार एक जीवकी अपेक्षा काल समाप्त हुआ।

#### अन्तर

द्र स्वत्यानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है — श्रोघ और श्रादेश। ओघसे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यात श्रोर श्रविक्षित्र श्रोर श्रविक्षित्र श्रीर श्रविक्ष्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि श्रीर श्रवक्तव्य वन्धका

एग० । थीणगि०२ — मिच्छ० अणंताणु०४ असंखेज्जभागविद्व-हाणि अविद्वि० जह० एग०, उक्क० बेछाविद्व० देख० । बेबिट्व-हाणि-अवत्तव्वं णाणावरणभंगो । णिद्दा-पचला-भय०- दुगुं० — तेजइगादिणव तिण्णिविद्व-हाणि — अविद्वि० — अवत्त० णाणावरणभंगो । सादावेदणीय- जसिग० चत्तारिविद्व-हाणि अविद्विदं णाणावरणभंगो । अवत्तव्वं जहण्णु० अंतो० । असाद०- चदुणोकसाय-थिराथिर-सुभासुभ — अजस० तिण्णिविद्विल्वाणि - अविद्वित्व अवत्तव्वं सादभंगो । अद्वक्तसा० असंखे०भागविद्व-हाणि - अविद्विल्व जह० एग०, उक्क० पुव्वको० देख० । बेबिट्व- हाणि - अवत्तव्वं णाणावरणभंगो । इत्थिवे० तिण्णिविद्व-हाणि - अविद्विल्व शिणाविद्वभंगो । अवत्तव्वं जह० अंतो०, उक्क० बेछाविद्वसाग० सादि० । पुरिसवेदं चत्तारिविद्व-हाणि - अविद्वं णाणावरणभंगो । अवत्तव्वं जह० अंतो०, उक्क० बेछाविद्वसाग० सादिरे० । णयुंस० - पंचसंघ० - अपसत्थ० - दूभग - दुस्सर - अणादे० असंखेज्ज० विद्विल्व हाणि - अविद्विल्व हाणि । अवत्तव्वं जहण्णेण अंतो०, उक्क० बेछाविद्व सादि० विण्णिपिलिदोवमाणि देख० । बेबिट्व- हाणि० णाणावरणभंगो । अवत्तव्वं जहण्णेण अंतो०, उक्क० बेछाविद्वि० सादि० तिण्णिपिलिदोव सावि० तिण्णिपिलिदोव सावि० तिण्णिपिलिदोव सावि० तिण्णिपिलिदोव सावि० तिण्णिपिलिदोव सावि० विर्वाव सावि० विण्य पिलिदो० देख० । णिरय - मणुस - देवापूणं असंखेज्जभागहाणि - अवत्तव्वं जह० अंतो०, उक्क० वेछाविद्व ति ।

जवन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अर्धपुद्गलपरिवर्तन प्रमाण है। इतनी विजेपता हैं कि त्र्यसंख्यातगुणवृद्धिका जबन्य अन्तर एक समय हैं । स्त्यानवृद्धि तीन, मिथ्यात्व श्रीर श्रक्रै न्तानुबन्धी चारकी त्र्रसंख्यतभागवृद्धि, त्र्रसंख्यातभागहानि श्रीर अवस्थित बन्धका जधन्य श्रन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छ्यासठ सागर है। दो वृद्धि, दो हानि और अव-क्तव्यवन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुष्सा श्रीर नैजमशर्रार आदि नोकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित त्र्यार अवक्तव्यवन्धका भन्न ज्ञानावरणके समान है। साता-वेदनीय और यशःकीर्तिकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थित वन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान हैं। अवक्तज्य वस्थका जधस्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहर्त है। असातांबदनीय, घार नाकपाय, स्थिर, ऋस्थिर, ग्रुभ, ऋग्रुभ ऋोर ऋयशःकीर्तिकी तीन वृद्धि, तीन हानि, ऋवस्थित और अव-क्तव्यवन्थका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। आठ कपायोंकी अमंख्यातमागवृद्धि, असंख्यातमाग हानि और अवस्थित बन्धका जधन्य अन्तर एक समय हैं और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्व-कोटि है। दो वृद्धि, दो हानि स्त्रीर अवक्तव्य बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। स्त्रीवेदकी तीन वृद्धि, तीन हानि स्रोर स्रवस्थित पदका भङ्ग स्त्यानगृद्धिके समान है। अवक्तव्य बन्धका जयन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त हे और उत्कृष्ट अन्तर माधिक दो ह्यासट मागर है। पुरुपवेदकी चार वृद्धि, चार हानि श्रौर श्रवस्थित पदका भङ्ग ज्ञानावरणके समान हैं। अयक्तव्य वन्धका जघन्य श्चन्तर अन्तर्मु हूर्त है और उत्कृष्ट श्चन्तर साधिक दो छ्यासठ सागर है। नपुंमकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, त्रप्रशस्त विहायागिति, दुर्भग, दुस्वर श्रोर श्रनादेयकी ध्रसंख्यात भागर्युद्धि. अमंख्यात भागहानि ऋौर अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय हे और अकृष्ट अन्तर साधिक दो छगासठ सागर ऋोर कुछ कम तीन पस्य हैं। दो वृद्धि ऋोर दो हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तज्य वन्धका जबन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक देंग छ्यासठ मागर श्रीर कुछ कम तीन पत्य है। नरकायु, मनुष्यायु श्रीर देवायुके श्रमंख्यातभाग हानि श्रीर श्रय-क्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त हैं और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुदुगलपरिवर्तन प्रमाण है। तिर्यञ्जायुकी असंख्यात भागहानि और अवक्तात्र्य वश्यका जवन्य श्चन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सौ सागर पृथक्तव प्रमाण है। वैक्रियिक छहकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर श्रनन्तकाल है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त है और उन्कृष्ट अन्तर अनुन्तकाल है जो असंख्यात पुद्गज परिवर्तन प्रमाण है। तिर्यञ्चगित और नियञ्चगत्यानुपूर्वाकी त्र्यसंख्यान भागवृद्धि, त्र्यग्रख्यात भागहानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्क्रप्ट अन्तर एक सौ त्रेस्ट सागर है। दो बृद्धि और दो हानियोंका भद्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य वन्धका जधन्य श्चन्तर अन्तर्महर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्चन्तर श्रमंख्यान जोक प्रमाण है। मनुष्यगिन और मनुष्यग-त्यानुपूर्वीकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि स्रोर स्त्रवस्थित वन्यका जवन्य स्नन्तर श्चन्तम्हर्त है। श्रवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर श्चन्तर्महर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्चन्तर श्चसंख्यात लाक प्रमाण है। दो वृद्धि श्रीर दो हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। चार जाति, आतप और स्थावर त्रादि चारकी असंख्यातभागवृद्धि, त्र्रसंख्यातभागहानि श्रोर त्र्रवस्थित वन्धका जवन्य श्चन्तर एक समय है. श्रवक्तव्य बन्धका जघन्य श्चन्तर श्चन्तुर्मृहर्त है और उत्कृष्ट श्चन्तर इन सबका एक सी पचासी सागर है। दो वृद्धि और दो हानियोंका भन्न झानावरणके समान है। पद्मीन्द्रय जाति. परघात, उच्छास और त्रस चतुष्कके तीन वृद्धि, तीन हानि त्र्योर अवस्थित बन्धवा भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य वन्धका जवन्य अन्तर अन्तर्महर्त है और उत्क्रप्ट अन्तर एक सौ पचासी सागर है। ऋौदारिकशरीरकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि खार अव-स्थित बन्धका जधन्य ऋन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पत्त्व है। दो बृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अधक्तव्य वन्धका जवन्य अन्तर अन्तर्महर्त है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर श्रनन्तकाल है जो श्रसंख्यात पुरुगल परिवर्तन प्रमाण है। श्राहारकद्विककी तीन बद्धि, तीन हानि श्रीर अवस्थितवन्धका अधन्य अन्तर एक समय है। अवक्तव्य वन्धका

१ मुलप्रती साग० सत्त बे इति पाठः।

सक अद्वर्णगाल । समचर् ०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदे० तिण्णिवहि-हाणि-अविहि० णाणावरणमंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० बेळाविहि० सादि० तिण्णिपिलदो० देस्च० । ओरालि०अंगो०-वज्जिरि० तिण्णिविहि-हाणि-अविह० ओरालियसरीरभंगो । अवत्त-वं जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं साग० सादि० । उज्जो० तिण्णिविहि-हाणि-अविहि० तिरिक्खगिदिभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेविहिसागरो०सदं । तित्थयरं तिण्णिविहि-हाणि-अविहि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्तव्वं जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं साग० सादि० । उचागो० तिण्णिविहि-हाणि अविह० मणुसगिदिभंगो । अवत्तव्वं तं चेव । असंखेजजगुणविहि हाणि० णाणावरणभंगो । णीचागो० असंखेजजभागविहि-हाणि अविह० जह० एग०, उक्क० बेळाविहिसाग० सादि० तिण्णिपिलदोवमाणि देस्च० । बेविहि हाणी० णाणावरणभंगो । अवत्तव्वं जहण्णेण अंतो०, उक्क० असंखेजजा लोगा ।

८८३. णिरएस धुविगाणं तिष्णिवड्डिं हाणी० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवड्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम०। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणु०४-इत्थि० णवुंस०-दोगिद०-पंचसंठा० पंचसंघ०- दोआणु०-उज्जो०-अप्पसत्थवि०- दूभग-दुस्सर अणादे० णीचुचागोदं तिष्णिवड्डि हाणि अवद्धि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क०

जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त हैं। अंदर उत्कृष्ट अन्तर इन सपका अधपुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। सम-चतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विहायोगित, सुभग, सुस्वर और त्रादेयकी, तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर अवस्थित वस्थका भद्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बस्थका जयस्य अस्तर अस्तर्महर्त हैं श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक दो छ्यामठ सागर श्रीर कुछ कम तीन पल्य है। श्रीदारिक श्राङ्गी-पाङ्ग और वज्रर्पभनाराचसंहननकी तीन बृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग औदारिक शरीरके समान है । अवक्तव्य बन्धका जेवन्य अन्तर अन्तर्ग्रहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर माधिक तेनीस सागर है। उद्योतकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अर्थस्थल बन्धका भन्न तिर्यक्रगतिके समान है। अवक्तव्य बन्धका जबन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उन्छष्ट अन्तर एक सौ त्रेसठ सागर है। तीर्थक्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित वन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भुहूर्त है। अवक्तव्य वन्धका जवन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। उच्चगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर अवस्थित वन्धका भङ्ग मनुष्यगतिकं समान है। श्रवक्तव्य वन्धका वर्श भङ्ग है। श्रमंख्यातगुणवृद्धि श्रीर श्रसंख्यातगुणहानिका भन्न ज्ञानावरणके समान है। नीचगोत्रकी श्रसंख्यातभागवृद्धि, असंख्यात भा हानि स्रोर स्रवस्थित बन्धका जबन्य स्रन्तर एक समय है स्रोर उन्ह्रष्ट स्रन्तर माधिक दो छुयासठ सागर और कुछ कम तीन पत्य है। दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । अवक्तव्य वस्थका जवस्य अन्तर् अन्तर्भुहूर्त हे और उत्कृष्ट अन्तर श्रसंख्यात लोक प्रमाण है ।

नन्द. नारिकयोंमे ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हार्नियोंका जधन्य अन्तर एक समय हैं और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहूर्त है। अवस्थितवन्धका जघन्य अन्तर एक समय हैं और उत्कृष्ट अन्तर क्षन्तर्मृहूर्त है। अवस्थितवन्धका जघन्य अन्तर एक समय हैं और उन्कृष्ट अन्तर दो समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, स्त्रीवद, नपुंसकवद, दो गति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगित, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय,

मूलप्रती दोअंगो० उज्जो० इति पाठः ।

तेत्तीसं साग० देस्०। सादादिवारस० तिण्णिवड्डि-हाणि-श्रवद्विदं जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० उक्क० अंतो०। पुरिस०-समचदु० वज्जिरि०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदे० तिण्णिवड्डि-हाणि अवड्ठि० सादभंगो। अवत्तव्वं इत्थिभंगो। दोआयु० दोपदा जह० अंतो०, उक्क० छम्मासं देस०। तित्थय० तिण्णिवड्डि-हाणि० ज० एग०, उक्क० अंतो०। अवड्ठि० जह० एग०, उक्क० वेसमयं। अवत्त० णित्थ अंतरं। एवं तीसु पुढवीसु तित्थक०। णवरि पढमाए अवत्त० णित्थ। छसु उवरिमासु मणुस०-मणु-साणुपुव्वीणं उच्चा० पुरिसभंगो। सेसाणं अप्पष्पणो अंतरं भाणिद्वं। सत्तमाए णिरयोघं।

८८४. तिरिक्खेसु धुविगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि० ओघं। अवद्वि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि समयं। थीणणिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ असंखेज्ज०बड्ढि-हाणि-अवद्वि० जह० एग०, उक्क० तिण्णि पत्तिदो० देस्च०। बेबड्ढि-हाणि-अवत्त० ओघं। सादादिबारस ओघं। इत्थिवे० तिण्णिवड्ढि हाणि-अवद्वि० थीणगिद्धिभंगो। अवत्त० जह० द्यंतो०, उक्क० तिण्णि पिरुदो० देस्च०। अपचक्खाणा०४-णवुंस०-पंचसंठा-

नीचगात्र और उच्चगात्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका जवन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्यवन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्महूर्त है और उच्छष्ट अन्तर इन सवका कुछ कम तेतीस सागर है। साता आदि वारह प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उच्छष्ट अन्तर अन्तर्महूर्त है। अवक्तव्यवन्धका जघन्य और उच्छष्ट अन्तर अन्तर्महूर्त है। पुरुपवद, समचतुरस्रसंस्थान, वित्रस्थानसाराचसंहनन, प्रशस्त विह्रायांगित, सुभग, सुस्वर और आदेयकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्यवन्धका भन्न सातावदनीयके समान है। अवक्तव्यवन्धका भन्न स्वावदनीयके समान है। अवक्तव्यवन्धका भन्न स्वावदनीयके समान है। वार्थिकर प्रकृतिकी तीन वृद्धि और तीन हानियांका जघन्य अन्तर एक समय है और उच्छष्ट अन्तर कुल कम छह महीना है। त्रिथंकर प्रकृतिकी तीन वृद्धि और तीन हानियांका जघन्य अन्तर एक समय है और उच्छष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तव्यवन्धका अन्तर काल नहीं है। इसी प्रकार तीन पृथिवियोंमें त्रिथंकर प्रकृतिका अन्तर काल है। इतनी विशेषता है कि पहली पृथिवीमें अवक्तव्यपद नहीं है। आगोकी छह पृथिवियोंमें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगात्रका भन्न पुरुपवेदके समान है। शेप प्रकृतियोंका अपना अपना अन्तर काल कहना चाहिये। सातवीं पृथिवीमे सामान्य नारियोंके समान भन्न है।

द्य तिर्येखों में ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियों की तीन वृद्धि और तीन हानियों का भङ्ग श्री घके समान है। श्रविध्यतबन्धका जघन्य श्रन्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्रन्तर चार समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिण्यात्व श्रीर श्रनन्तानुबन्धी चारकी श्रसंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि श्रीर श्रविध्यतबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम तीन पत्य है। दो वृद्धि, दो हानि श्रीर श्रवक्तव्यवन्धका श्रन्तर काल श्रोघके समान है। साता आदि वारह प्रकृतियों का भङ्ग श्रोघके समान है। स्रोवेदकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर श्रविध्यतबन्धका भङ्ग स्त्यानगृद्धिके समान है। श्रवक्तव्यवन्धका जघन्य श्रन्तर अन्तर्मुहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम तीन पत्य है। श्रवक्तव्यवन्धका जघन्य श्रन्तर अन्तर्मुहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम तीन पत्य है। श्रवक्तव्यवन्धका जघन्य श्रन्तर अन्तर्मुहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम तीन पत्य है। श्रवक्तव्यवन्धका चार, नपुंसकवंद, पाँच संस्थान, श्रीदारिक आङ्गापाङ्ग, छह संहनन, श्रातप,

१ मूलप्रसी जह० एग० उक्क० इसि पाठः।

अरालिश्रंगो०-छस्संघडण-आदाउज्जो०-अप्पसत्यवि० दूभग दुस्सर-अणादे० असंसेज्ज-भागविष्ट-हाणि-अविद्वं जह० एग०,उक० पुन्नकोडी देस्०। बेबिहु-हाणी० ओघं। अवत्त० जह० स्रंतो०, उक्क० पुन्नकोडि०। णविर अपचक्खाणा० अवत्त० उक्क० अद्धपोगा० लपरि०। पुरिस० तिण्णिविष्टु-हाणि-अविद्वि० णाणावरणभंगो। स्रवत्त० जह० स्रंतो०, उक्क० तिण्णि पिलदो० देस्०। तिण्णिआयुगाणं दोपदा जह० अंतो०, उक्क० पुन्वकोडितिमागं देस्णं। तिरिक्खायुगस्स दोपदा जह० अंतो०, उक्क० पुन्वकोडी० सादि०। वेउन्वियन्छक-मणुसगदि-मणुसाणु०-उच्चागो० ओघं। पंचिदि० समचद० पर०-उस्सा०-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे० तिण्णिविष्टु-हाणि-अविद्वि० पुरिसबंदभंगो। अवत्तन्वं जह० अंतो०, उक्क० पुन्वकोडी देस्णं। तिरिक्खाण०-चदुजादि-ओरालि०-तिरिक्खाण०-थावरादि०४-णीचागो० णवुंसगभंगो। णविर तिरिक्खगदि-ओरालि०-तिरिक्खाण०-णीचा० अवत्तन्वं ओघं।

द्रप. पंचिंदि०तिरिक्ख०३ धुविगाणं बेवड्ढि हाणी० जह० एग०, उक्क० अंतो०। संखेज्जगुणत्रङ्कि हाणी० जह० एग०, उक्क० पुन्तकोडिपुधत्तं । अवट्टि० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम० । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिण्णित्रङ्कि-हाणि-अवद्विदं जह०

उद्योत, अप्रशस्तविद्दायोगित, दुर्भग, दुस्वर श्रोर श्रनादेयकी श्रसंख्यातमागपृद्धि, असंख्यात-भागहानि चौर अवस्थितवन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उन्दृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। दो वृद्धि ऋौर दो हानियोंका भङ्ग ऋोघके समान है। श्रवक्तव्यवन्यका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर बुद्ध कम एक पूर्वकोटि है। इतनी विशेषता है कि अप्रत्यास्याना-वरण चारके अवक्तव्यवन्धका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। पुरुपंवदकी तीन वृद्धि, तीन हानि स्रौर स्रवस्थितवस्थका भन्न ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्यवस्थका जयस्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उन्द्रष्ट अन्तर कुछ कम तीन पत्य है। तीन आयुओक दो पदोका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहूर्त हे और उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिभाग प्रमाण है। तिर्यक्कायुके दो पदोंका जबन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर माधिक एक पूर्वकोटि है। वैक्रियिक छह, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगात्रका भङ्ग आघक समाने हैं। पक्केन्द्रियज्ञाति, समचतुरस्त्रसंस्थान, परवान, उच्छ्रोस, प्रशस्तविहायोगिन, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर और ऋ।देयकी तीन वृद्धि, तीन हानि स्रोर स्रवस्थित वन्धका भङ्ग पुरुपवेदके समान है। अवक्तव्य वन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्न है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि हैं। तिर्यक्रगति, चार जाति श्रोदारिकरारीर, तिर्येश्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर त्रादि चार त्रीर नीचगात्रका भन्न नपुंमकवेदक समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्येख्यगति, श्रोदारिकशरीर, तिर्यक्वगत्यानुपूर्वी श्रोर नीचगोत्रके त्रवक्तव्यवन्धका भङ्ग ओघके समान है ।

प्रमा पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रिकमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी दो वृद्धि श्रोर दो हानियोंका जघन्य श्रन्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त हैं। संख्यातगुणवृद्धि श्रोर संख्यातगुणहानिका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्व प्रमाण हैं। अवस्थितवन्धका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट अन्तर तीन समय हैं। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व श्रोर अनन्तानुवन्धी चारकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रोर अवस्थित वन्धका जघन्य श्रन्तर एक समय है

एग०, उक्क० तिण्णिपिलदो० देस्०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णिपिलदो० देस्० पुन्वकोडिपुघ०। अपचक्साणा०४ णवुं सगभंगो। णविर अवत्तन्त्रं जह० अंतो०, उक्क० पुन्वकोडिपुघतं। सादादिवारस वेबङ्कि-हाणि अविहि अभत्त० णिरयभंगो। संखेड गुणविङ्कि हाणि जह० एग०, उक्क० पुन्वकोडिपुघ०। इत्थिवे० तिण्णिविङ्कि-हा०-अविह जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णिपिलदो० देस०। पुरिसवे० तिण्णिविङ्कि-हाणि-अविह लादमंगो। अवत० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णिपिल्लि० देस०। णवुं सकवे०-तिण्णिगिदि-चदुजादि-ओरालि०-पंचसंठा०-ओरालि० अंगो०—छस्संघ०-तिण्णिआणु०-आदा-उज्जो०—अप्पसत्थवि०-थावरादि०४-दूमग-दुम्सर अणादे०-णीचागो०वेबिङ्कि-हाणि-अविह जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुन्वकोडी० देस०। संखे०गुणविङ्कि-हाणि० णाणावरणभंगो। चदुण्णं आयुगाणं तिरिक्खोघो। देवगदि०४-पंचिदि०-समचदु० पर०-उस्सास-पसत्थवि०-तस०४-सुभग सुस्सर-आदे०-उच्चा० तिण्णिविङ्कि-हाणि-अविह ल साद-भंगो। अवत्त० णवुं सगभंगो।

८८६. पंचिदियतिरिक्खअपञ्जत्तमेमु धुविगाणं तिण्णिबह्धि हाणि० जह० एग०,

श्रीर उत्कृष्ण श्रन्तर कुछ कम तीन परय है। अपकाय बन्यका जबन्य अन्तर श्रन्तर्महर्न है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक कुद्रकम तीन पत्य है। अप्रत्याख्यानावरण चारका भङ्ग नपुंसक वेद्रे समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तज्य वंधका जवन्य अन्तर अन्तमृहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुद्र कम पूर्वकोटि एथकव प्रमाण है। साता आदि वारह प्रकृतियोंकी दो वृद्धि, दो हानि, अवस्थित और अवक्तव्यवन्धका भङ्ग नारिकयोंक समान है। संख्यातगुणवृद्धि और संख्यात-गुणहानिका जवन्य अन्तर एक समय है और उन्छष्ट अन्तर कुछ कम पूर्वकोटि पृथकत्व प्रमाण है। स्रीवंदकी तीन वृद्धि, तीन हानि स्रीर अवस्थितवन्धका जघन्य स्रान्तर एक समय है स्रावक्तव्य-बन्धका जवन्य श्रन्तर श्रन्तर्मुहुर्त है श्रीर इन सबका उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम तीन पत्य है। पुरुष-वेदकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर अवस्थितवन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है । अवक्तव्यवन्धका जवन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर बुद्ध कम तीन पत्य है। नपुंसकवंद, तीन गति, चार जाति, श्रोदारिकशरीर, पाँच संस्थान, श्रोदारिकश्राङ्गापांग, छह संहनन, तीन श्रानुपूर्वी, श्रानप उद्योत, अप्रशस्तिविद्दायागिति, स्थावर आदि चार, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय और नीचगोत्रकी दो वृद्धि, दो हानि त्रीर त्रवस्थितवन्यका जवन्य अन्तर एक समय है, त्रवक्तव्यवन्धका जवन्य त्रन्तर श्चन्तम्हर्त है और उत्कृष्ट अन्तर इन सबका कुछ कम एक पूर्वकोटि है। संख्यातगुणवृद्धि स्रोर संख्यातगुणहानिका भंग ज्ञानावरणके समान है। चार त्रायुत्र्योंका भन्न सामान्य तिर्यक्कोंके समान हैं। देवगतिचतुष्क, पस्त्रेन्द्रियजाति, समचतुरस्रसंस्थान, परवात, उच्छास, प्रशस्तविहायोगित. त्रमचतुष्क, मुभग, मुस्वर, आदेय और उच्चगांत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्थका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्त व्यवस्थका भङ्ग नपुंसकवेदी जीवोके समाज है।

==६. ५ऋदित्रयतिर्येकः अपर्याप्तकों में ध्रवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्क्रष्ट अन्तर अन्तर्मुहुर्त है। अवस्थितवन्धका उक्क अंतो । अवडि जह । एग ०,उक्क तिण्णिसमयं । सेसाणं णिरयसादमंगी । एघं सन्वअपज्जत्ताणं ।

८८७. मणुस०३ पंचिदियतिरिक्खभंगो। णवरि संखेजजगुणविष्टु-हाणि० उक्क० अंतो०। खिवयाणं असंखेजजगुणविष्टु-हाणि-अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुन्वकोिडपुधत्तं। मणुसअप० धुवियाणं तिरिक्खअपज्जत्तमंगो। णविर अविष्टि० जह० एग०, उक्क० वेसम०। सेसाणं सादमंगो।

८८८. देवेसु धुविगाणं णिरयभंगो। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४इत्थि०-णवंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दूभग दुस्सर-अणादे०-णीचा० तिण्णिविद्विहाणि-अविद्वि० जह० एग०, अवत्त०जह०अंतो०,उक०एकत्तीसं साग० देख०। सादादिवारस० णिरयभंगो। पुरिस०-समचदु०-वज्जरि०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदेज्ज०-उच्चा०
तिण्णिविद्वि-हाणि-अविद्वि० सादभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक० एकत्तीसं सा०
देख०। दोआयु० णिरयभंगो। तिरिक्खगिद-तिरिक्खाणुपु०-उज्जोवं तिण्णिविद्वि-हाणिअविद्वि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक० अद्वारस सागरोवमाणि सादि०।
मणुसगिद-मणुसाणु० तिण्णिविद्वि-हाणि-अविद्वि० सादभंगो। अवत्त० तिरिक्खगिदभंगो।
एइंदिय-आदाव-थावर० तिण्णिविद्वि-हाणि-अविद्वि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०,

जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है। शेष प्रकृतियोका भङ्ग नारिकयोंमें साताबेदनीयके समान है। इसी प्रकार सब अपर्याप्रक जीवोंके जानना चाहिये।

प्राप्तृति संज्यात प्राप्तृतिकमें पञ्चिन्द्रियतिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि संज्यात गुणवृद्धि और संज्यातगुणहानिका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भुहृत है। चपक प्रकृतियोंकी असंज्यातगुणवृद्धि, असंज्यातगुणहानि और अवक्तत्र्य बन्धका जवन्य अन्तर अन्तर्भुहृत है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथकत्व प्रमाण है। मनुष्य अपर्याप्तकोमें धुववन्थवाली प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यञ्च-अपर्याप्तोंके समान है। इतनी विशेषता है कि अवस्थित वन्धका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग साता वेदनीयके समान है।

मन्म देवों में ध्ववन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग नारिकयों के समान हैं। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, श्रनन्तानुवन्धी चार, स्त्रीवंद, तपुं संक्वेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विद्दार्थोगिति, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय और नीचगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और श्रवस्थित बन्धका जवन्य श्रन्तर एक समय हैं, अवक्तव्यवन्धका जवन्य श्रन्तर श्रन्तमुंहृत हैं और इन सबका उद्धृष्ट श्रन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। साता श्रादि बारह प्रकृतियोंका भङ्ग नारिकयोंके समान है। पुरुपवंद, समचतुरस्त्रसंस्थान, वश्रस्थभनाराच संहनन, प्रशस्त्रिवहायोगिति, सुभग, सुरुवर, श्रादेय और उच्चगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रोर अवस्थित वन्धका भङ्ग सातावंदनीयके समान है। श्रवक्तव्यवन्धका जवन्य श्रन्तर अन्तरमुंहूर्त हैं श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। दो श्रायुश्चोंका भङ्ग नारिकयोंके समान है। तिर्थञ्चगित, तिर्थञ्चगत्यानुपूर्वी श्रोर उद्योतकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रोर श्रवस्थित बन्धका जघन्य श्रन्तर एक समय हें, अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर श्रन्तर्मुहूर्त हैं श्रोर इन सबका उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक श्रवरारह सागर है। मनुष्यगति, श्रोर मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रोर अवस्थित बन्धका भङ्ग सानावंदनीयके समान है। श्रवन्त्रयज्ञाति, श्रातप श्रार स्थावरकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रोर अवस्थित बन्धका भङ्ग सानावंदनीयके समान है। श्रवन्त्रयज्ञाति, श्रातप श्रीर स्थावरकी तीन वृद्धि, तीन क्रव्यवन्धका भङ्ग तिर्थेश्वगतिके समान है। एकन्द्रियज्ञाति, श्रातप श्रीर स्थावरकी तीन वृद्धि, तीन

उक्क० बेसागरो० सादि०। पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-तस० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवद्धि० सादभंगो। अवत्त० एइंदियभंगो। तित्थय० धुवभंगो। एवं सन्वदेवाणं अप्पप्पणो अंतरं कादन्वं।

८८९. एइंदिएस धुनियाणं एक्कबिंहु-हाणी जह० एग०, उक्क० अंतो०। अविद्वि० जह० एग०, उक्क० वेसम०। एवं सन्वएइंदियाणं णादन्वं। णविर तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-णीचा० अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० असंखेजजलोगा। बादरे कम्मिद्धि। पज्जत्ते संखेजजाणि वाससहस्साणि। सुहुमे असंखेजजा लोगा। मणुसगदिदुग-उच्चागो० एक्कबिंहु-हाणि-अविद्वि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० असंखेज्जा लोगा। बादरे कम्मिद्धि। पज्जत्ते संखेजजाणि वाससहस्साणि। सुहुमे असंखेजजा लोगा। बादरे कम्मिद्धि। पज्जत्ते संखेजजाणि वाससहस्साणि। सुहुमे असंखेजजा लोगा। सेसाणं अपज्जत्तभंगो। णविर दाजायुगं पगदिअंतरं। विगलिदि० दोजायु० पगदिअंतरं। सेसाणं मणुसअपज्जत्तभगो।

८६०. पंचिदिय०२ पंचणा० चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंतरा० वेबिहु-हाणि-अब्रिहि० जह० एग०. उक्क० अंतो० । संखेजजगुणबह्धि-हाणी० जह० एग०, उक्क० पुन्वकोडि-पुधत्तं । असंखेजजगुणबिहु-हाणि-अबत्तन्वं जह० अंतो०, उक्क० कायिद्वदी० । णबिर

हानि खोर अवस्थित वन्यका जवन्य अनार एक समय है, अवक्तज्य वन्धका जवन्य अन्तर अन्तर भ्रुहृत है और इन सबका उन्छए अन्तर साधिक दो सागर है। पंक्षेन्ट्रिय जाति, खोदारिक आङ्गो-पाङ्ग खोर जमकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित वन्यका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य वन्धका भङ्ग एकेन्द्रियके समान है। तीर्थेङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। इसी प्रकार सब देवोंके, अपना अपना अन्तर काल जान लेना चाहिये।

द्धः एकेन्द्रियों में ध्रववन्धवाली प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, और एक हातिका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित वन्धका जवन्य अन्तर एक समय है अंदि उत्कृष्ट अन्तर हो। इसी प्रकार सव एकेन्द्रियोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है। तिर्थेश्वर्गात, तिर्थेश्वर्गात्यानुपूर्धी और नीचगोत्रके अवक्तत्र्य बन्धका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उक्ष्य अन्तर असेख्यात लोक प्रमाण है। वादर एकेन्द्रियोंमें कर्मस्थित प्रमाण है। पर्याप्तकोंमें संख्यात हजार वर्ष है। सूदम एकेन्द्रियोंमें असंख्यात लोक प्रमाण है। मनुष्यगिति दिक और उच्चगात्र्या एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थित बन्धका जवन्य अन्तर एक समय है, अवक्तत्र्य बन्धका जवन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त हे और इन सबका उक्ष्य अन्तर असेख्यात लोक प्रमाण है। वादर एकेन्द्र्योंमें कर्मस्थिति प्रमाण है। पर्याप्तकोंमें संख्यात हजार वर्ष है। सूदम एकेन्द्रियोंमें असंख्यात लोक प्रमाण है। रोप प्रकृतियोका भङ्ग अपर्याप्तकोंक समान है। इतनी विशेषता है कि दो आयुओंका भङ्ग प्रकृतिवन्धके अन्तरके समान है। विकलिन्द्रियोंमें दो आयुओंका भङ्ग प्रकृतिवन्धके अन्तरके समान है। विकलिन्द्रियोंमें दो आयुओंका भङ्ग प्रकृतिवन्धके अन्तरके समान है। होप प्रकृतियोका भङ्ग सनुष्य अपर्याप्तकोंक समान है।

=१०. पञ्चित्रियाद्वकमे पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वतन और पाँच अन्तरायकी हो वृद्धि, दो हानि और अवस्थितवन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भृहूर्त है। संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि प्रथक्तव प्रमाण है। असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानिकीर अवक्तव्यवन्धका जघन्य अन्तर अन्तमुंहूत है और उत्कृष्ट अन्तर कायस्थित प्रमाण है। इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणवृद्धिका

असंखज्जगुणबह्नि० जह० एग०। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिण्णिबह्निहाणि-अविद्वि० जह० एग०, उक० वेछाबिहुसाग० देस्०। अवत० णाणावरणभंगो।
सादा० जस० चतारिबिह्नि-हाणि-अविद्वि० णाणावरणभंगो। अवत० जह० उक्क० अंतो०।
णिहा-पचला-भय०-दुगुं०-तेजा०-कम्मइगादिणव० तिण्णिबिह्नि-हाणि-अविद्वि०-अवत्त० सादावे०भंगो।
अहक०दोबिह्नि-दोहाणि० अविद्वि तिण्णिबिह्नि-हाणि-अविद्वि०-अवत्त० सादावे०भंगो।
अहक०दोबिह्नि-दोहाणि० अविद्वि० जह० एग०, उक्क० पुन्वकोडी देस्व०।संखेज्जगुणबिह्नि-हाण-अवत्त० णाणावरणभंगो। इत्थिवे० तिण्णिबिह्नि हाणि-अविद्वि० णाणावरणभंगो।
अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० वेछाबिहि० सादि० दोहि पुन्वकोडीहि०। णवुस०-पचसंठा०पंचसंघ०-अप्पसत्य०-द्भग दुस्सर-अणादे० तिण्णिबिह्नि-हाणि-अविद्वि० जह० एग०,
अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० वेछाबिह० सादिरे० तिण्णिविद्वि देस्०। तिण्णियापु०
दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० सागरो०सदपुध०। मणुसायु० दोपदा० जह० अंतो०,
उक्क० सागरोवमसहस्सा० पुन्वकोडिपुधत्तं। पज्जतमे चदुण्णअपुगाणं दोपदा० जह०
अंतो०, उक्क० सागरो०सदपु०। णिरयगदि-चदुजादि-णिरयाणु०-आदाव-थावरादि०४
तिण्णिबिह्नि-हाणि-अबिद्वि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पंचासीदिसागरो०-

जघन्य अन्तर एक समय है । स्त्यानगृद्धि तीन मिध्यात्य श्रीर श्रमन्तानुबन्धी चारकी तीन वाँढ़, तीन हानि और अवस्थितबन्धका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुंद्र कम दो छ्वासेठसागर है। अवक्तव्यवस्थका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। सातावदनीय और यश:क्वातिकी चार बद्धि, चार हानि श्रीर श्रवस्थितवन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । श्रवक्तव्यवन्धका जयन्य और उत्कृष्ट श्रन्तर अन्तर्सुहूर्त है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुष्सा, तैजसशरीर और कामंगशरीरादि नो प्रकातयाकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यवस्थका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। असाता आदि दस प्रकृतियोंकी तीन बृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तत्र्यवन्यका भङ्ग सातावेदनीयके समान हैं। त्राठ कपायोंकी दो बृद्धि, दो हानि श्रोर श्रवस्थितवन्यका जवन्य श्रन्तर एक समय हं श्रार अ**छ**ष्ट श्रन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि श्रोर श्रयक्तव्यवन्धकाभंग झाना-वरणके समान है। स्त्रीवेदकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका जवन्य अन्तर एक ममय है, अवक्तटयवन्धका जवन्य अन्तर अन्तर्भूहर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छगासठ सागर है। पुरुषवेदकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थितवन्यका भंग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्यवस्थका जयस्य अस्तर अस्तर्मुहूर्त हैं श्रीर उत्कृष्ट अस्तर दो पूर्वकोटि अधिक दो छयासठ मागर हैं। नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगिते, दुर्भग, दुस्वर श्रीर श्रनादे-यकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रोर अवस्थितवन्धका ज्ञवन्य अन्तर एक समय है, अवक्त यवन्धका जघन्य अन्तर अन्तेर्मुहूर्त है और इन सबका **उ**त्कृष्ट अन्तर साधिक दो छथासठ सागर और कुछ कम तीन पस्य हैं। तीन त्र्यायुओंक दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साँ सागर पृथक्त्व प्रमाण है । मनुष्यायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकाटि पृथक्त्व अधिक एक हजार सागर है। पर्याप्तकोम चारों आयुआक दो पदोंका जचन्य अन्तर अन्तर मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सो सागर पृथक्तव प्रमाण है। नरकगति, चार जाति, नरकगत्यानुपूर्वा, श्रातप श्रोर स्थावर त्रादि चारकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रोर अवस्थितवन्धका जयन्य श्रन्तर एक

सद० । तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु० उज्जो० तिण्णिवहि-हाणि-अविह० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेविहसाग०सदं० । मणुसग०-देवग०-वेउव्वि० वेउव्वि०-अंगो०-वेआणु० तिण्णिवहि-हा०-अविह० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं साग० सादि० । पंचिदि०-पर०-उस्सास-तस०४ तिण्णिविहि-हा०-अविहि णाणावरणभंगो । अवत्त० जह० श्रंतो०, उक्क० पंचासीदिसाग०सद० । ओरालि०-ओरालि०अंगो० वर्जारस० तिण्णिविहि-हाणि-अविह० जह० एग०, उक्क० तिण्णिपिलदो० सादि० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं सा० सादि० । आहारदुगं तिण्णिविहि-हाण-अविह० णाणावरणभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० कायिहिदी० । समचदु० पसत्थ० सुमग-सुस्सर-आदे० तिण्णिविहि-हाणि अविह० णाणावरणभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० वेछाविहिसाग० सादि० तिण्णिपिलिदो० देस० । तित्थय० ओघं । णीचा० णवंस-गमंगो । उचा० तिण्णिविहि-हाणि-अविह० देवगदिभंगो । असंखेजगुणविहि-हाणी० सादमंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० वेछाविह० सादि० तिण्णिपिलिदो० देस० । एवं तस-तसपज्जिगे । णविर सगिहिदी भाणिद०वा ।

८६१. तसअपज्जत्तमेसु धुविगाणं तिण्णिवड्टि-हाणी० जह० एग०. उक्क० अंतो० । समय हैं. अवक्त यबस्यका जबस्य अन्तर अन्तमुंहूत हे और उत्कृष्ट अन्तर एकसी पचासी सागर हैं। तिर्यक्कार्ति, तिर्यक्कारत्यानुपूर्वी श्रीर उद्योतकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर अवस्थितवन्धका जयन्य श्चन्तर एक समय है, श्रवक्तव्यवन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूत है श्रीर इन सबका उत्कृष्ट अन्तर एकसौ न्नेसठ सागर है। मनुष्यगति, देवगति, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकआंगापाङ्ग, श्रीर दो आनु-पूर्वीकी तीन पृद्धि, तीन हानि त्रोर अवस्थितबन्धका जघन्य त्रान्तर एक समय है, अवक्तव्यबन्धका ज्ञचन्य ब्रान्तरअन्तर्मुहर्त है और इन सबका उत्कृष्ट ब्रान्तर साधिक तेतीस सागर है । पञ्चेन्द्रिय जाति, परघात, उच्छवास त्रौर त्रसचतुष्ककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान हैं। अवेक्तव्यवन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एकसौपचासी सागर है। औदारिकशरीर, श्रौदारित्रांगोपांग श्रोर वश्रऋषभनाराच संहननकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रौर श्चावस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पत्य है। श्रवक्तत्र्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। आहारफद्विककी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रौर श्रवस्थितवन्धका जधन्य अन्तर एक समय है, श्रवक्तव्यवन्धका जधन्य अन्तर अन्तर्महर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर कायस्थिति प्रमाण है समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर श्रीर आदेयकी तीन वृद्धि, तीन हानि और श्रवस्थितवन्धका भक्त ज्ञानावरणके समान है। श्रवक्तव्यवन्धका जघन्य श्रन्तर श्रन्तर्भृहर्त है श्रीर उःकृष्ट अन्तर साधिक दो खयासठ सागर और कुछ कम तीन पहर्य है तीर्थंकर प्रकृतिका भंग श्रोपके समान है। नीचगोत्रका भंग नपुंसकवेदके समान है। उच्चगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित-बन्धका भक्न देवगतिके समान है। असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका भक्न साता-वदनीयके समान हैं। श्रवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो ह्यासठ सागर श्रीर कुछ कम तीन पल्य हैं। इसी प्रकार त्रस श्रीर त्रसपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी स्थित कहनी चाहिये।

E. इस अपर्याप्तकोंमं ध्वयन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन द्दानियोंका जवन्य

अवद्वि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि स० । सेसाणं तिरिक्खअपजनभंगो ।

८९२. पंचमण०-पंचवचि० पंचणा०अद्वारस० तिण्णिबहु-हा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अविष्ठि जह० एग०, उक्क० बेसमयं। असंखेज्जगुणबहु हाणि० जहण्णु० अंतो०। अवत्त० णित्थ अंतरं। पंचदंस०-मिच्छ० बारसक०-भय दुगु०-तेजइगादिणब-आहारदुग-तित्थयर० तिण्णिबहु-हा०-अविद्वि०-अवत्त० णाणावरणभंगो। सादा०-पुरिस०-जस०-उच्चा० तिण्णिबहु-हाणि-अविद्वि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। असंखेज्जगुणबिहु-हा० जह० उक्क० अंतो०। अवत्त० णित्थ अंतरं। इत्थि०-णवुंस०-हस्स रिद-अरिद-सोग-चदुगदि-पंचजादि-ओरालि०-वेउव्वि० छस्संठाण-दोअंगो० छस्संघ०-चदुआणु०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-दोविहा०-तस-थावरादिणवयुगल-अजस०-णीचा० तिण्णिबहु-हा०-अविद्व० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० णित्थ अंतरं। चदुण्णं आयुगाणं दोपदा० णित्थ अंतरं। एवं ओरालि०-वेउव्वि०-आहार०। णविर ओरालि० काईसु० विसेसो। परियत्तमाणिगाणं अवत्त० जहण्णु० अंतो०।

८९३. कायजोईसु पंचणा०-चदुर्दस०-चदुसंज०-पंचंत० तिण्णियड्डि-हा०-अयट्ठि० ओघं। असंखेजजगुणबङ्खि-हा० जह० उक्क० अंतो०। णविर बड्डि० जह० एग०। अवत्तरकाल एक समय हे और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमुहूत हे। अर्थास्थतवन्धका जवन्य अन्तरकाल एक समय हे और उत्कृष्ट अन्तरकाल चार समय है। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यक्ष अपर्याप्तकोंके समान है।

८६२. पाँच मनोयोगी ऋोर पाँच वचनयोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण श्रादि आठारह प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जबन्य अन्तरकाल एक समय है और उन्कृष्ट श्रन्तर काल श्रन्तमुंहर्त है। श्रवस्थितवन्धका जघन्य श्रन्तर काल एक समय है और उस्कृष्ट व्यन्तरकाल दो समय है। ब्रासंख्यातगुणबृद्धि और व्यसंख्यात गुणटानिका जघन्य श्रीर उल्हेष्ट अन्तर काल श्रन्तर्मुहर्त है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। पॉच दर्शनावरण, मिध्याव, दारह कषाय, भय, जुगुप्सा, तैजमशरीर आदि नी, आहारकद्विक और तीर्थद्वर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित श्रीर अवक्तत्र्य वन्यका भन्न झानावरणके समान है। सातावेदनीय, पुरुपेवेद, यशःकीर्ति और उच्चगात्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य श्रान्तर काल एक समय है और उन्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहर्त है। श्रामान्यातगुणवृद्धि श्रीर असंख्यात गुणहानिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तरकाल श्रन्तर्मुहूर्न हूँ । श्रवक्तव्य वन्धका श्रन्तर काल नहीं है। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, हास्य, रित, अरित, शांक, चारगित, पाँच जाति, श्रीदारिक-शरीर, वैक्रियिकशरीर, छह संस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, चार आनुपूर्वी, परघान, उच्छवास, त्रातप, उद्योत, दो विहायोगित, त्रस आर स्थावर त्रादि नौ युगल, त्र्यशाकीर्ति और नीचगात्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रांर श्रवस्थित बन्धका जधन्य श्रन्तर एक समय है श्रांर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्भृहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका श्रन्तर काल नहीं है। चार श्रायुश्रींक दो पदींका अन्तर काल नहीं हैं। इसीप्रकार श्रीदारिक काययांगी, वैकियिक काययांगी श्रीर श्राहारककाय-योगी जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि श्रीदारिककाययोगी जीवोंमें परिवर्तमान प्रकृतियोंके अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उक्ट अन्तर काल अन्तर्मुहुर्त है।

८२३. काययोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनवरण, चार संज्वलन श्रीर पाँच श्रम्त-रायकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर श्रवस्थित वन्धका भङ्ग श्रोघके समान है। श्रसंख्यातगुणवृद्धि णित्य अंतरं । थीणिगिद्धितिग-मिच्छ०-नारसक० तिण्णिनिष्टु-हा० णाणानरणमंगो । अनिष्टु० जह० एग०, उक्क० चत्तारिसम० । णिहा-पचला-भय-दु० ओरालि०-तेजहगादि-णय असंखेज्जभागविष्टु-हाणि-अनिष्ट्रि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । बेनिष्टु-हा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । बेनिष्टु-हा० जह० एग०, उक्क० अणंतकालं असंख० । अनत० णित्य अंतरं । साद०-पुरिस०-जस० चता-रिबिष्टु-हा०-अनिष्टु० णाणानरणभंगो । अनत० जह० उक्क० अंतो० । आसाद०-छण्णो-कसाय-पंचजादि-छह्मंठा०-ओरानियंगो०-छह्संघ०-पर०-उस्सा० आदाउज्जो०-दोनिहा०-तस-यानरादिणन्युगल अजस० तिण्णिनिष्टु-हाणि० णाणानरणभंगो । अनत० जह० उक्क० अंतो० । णिरय-देनायुगस्स दोपदा० णित्य अंतरं । तिरक्छायु० दोपदा० ज० अंतो०, उक्क० बानीसं नाससहस्मा० सादि० । मणुमायु० दो नि पदा ओघं । मणुसग०-मणुसाणु० ओघं । वेउन्नियछक्क-आहारदुग-तित्थयरं तिण्णि-निष्टु-हाणि-अनिष्टु० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अनत० णित्य अंतरं । तिरिक्छग०-तिरिक्छाणु०-णीचा० संखेजजभागनिष्टु-हाणि-अनिष्टु० जह० एग०, उक्क० अंतो० । बेनिष्टु हाणि-अनत० मणुसगदिमंगो । उच्चा० मणुसगदिमंगो । णनिर असंखेजजगुणनिष्टु० जह० एग०, उक्क० अंतो० । असं-

श्रीर असंख्यात गुणहानिका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट अन्तर काल श्रन्तर्मुहर्न है। इतनी विशेषता है कि श्रसंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य श्रन्तर काल एक समय है। श्रवक्तत्रय वन्यका श्रन्तर काल नहीं है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व श्रौर वारह कपायकी तीन वृद्धि श्रौर तीन हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा, श्रीदारिकशरीर और तैजसशरीरादि नौ प्रकृतियोंकी श्रसं-ख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अप्रास्थित बन्धका जधन्य अन्तर एक समय है और उक्छ अन्तर अन्तमुंहूर्त है। दो यद्धि और दो हानियोंका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्रन्तर श्रनन्त काल है जो असे ल्यान पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। श्रवक्तव्य बन्धका श्रन्तर काल नहीं है। सातावदनीय, पुरुपवेद और यशःकीर्तिकी चार वृद्धि, चार हानि स्रीर अवस्थित बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका जबन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहुर्त है। श्रमाता वेदनीय, बह नोकपाय, पाँच जाति, छह संस्थान, श्रौदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, परघात, उच्छवास, त्र्यातप, उद्यात, दो विहायागित, त्रस और स्थावर आदि नी युगल और श्चायशःकीर्तिकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका भन्न झानावरणके समान है। श्ववक्तव्य बन्धका जघन्य श्रीर उत्कृष्ट अन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है। नरकायु श्रीर देवायुके दो पदोंका श्रन्तर काल नहीं है। तिर्यक्रायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक बाईस हजार वर्ष ्है। मनुष्यायुके दोनों ही पदोंका भङ्ग श्रोघक समान है। मनुष्यगति श्रीर मनुष्यगत्यानुपूर्वीका भुद्ध श्रांघक समान है। वैकियिक छह, श्राहारकद्विक श्रीर तीर्थक्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि और श्रवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तमुंहर्त है। श्रवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। तिर्यक्रगति, तिर्यक्रगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रकी संख्यातभागवृद्धि. संख्यातभागहानि स्रोर स्रवस्थित बन्धका जघन्य स्रन्तर एक समय है स्रोर उत्कृष्ट स्रन्तर स्रन्त-र्महर्त है। दो वृद्धि, दो हानि श्रीर अवक्तव्य बन्यका भङ्ग मनुष्यगतिके समान है। उच्चगोत्रका भक्त मनुष्यगतिके समान है। इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणवृद्धिका जधन्य अन्तर एक खेज्जगुणहा० जह० उक्त० श्रंतो० । एवं सन्वाणं असंखेज्जगुणवह्नि-हाणी० ।

८६४. ओरालियमिस्सका० धुविगाणं ति िणाविङ्ग-हा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अविद्या जह० एग०, उक्क० ति िण सम०। देवगदि०४-तित्थय० ति िणाविङ्गाहु-हा० णाणावरणमंगो। अविद्ये जह० एग०, उक्क० बेसम०। दोआयु० दोपदा० अपज्जत्त-भंगो। सेसाणं परियत्तमाणियाणं ति िणाविङ्गि-हाणि-अविद्ये जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जहण्यु० अंतो०।

८६५. वेउव्वियमि० वेउव्वियकायजोगिभंगो । णवरि परियत्तमाणियाणं अवस्त जह० उक्क० त्रांतो० । एवं आहारमि० । कम्मइ० सव्वाणं णित्थ अंतरं । अथवा वेउव्वि-यमि०-ओरालियमि०-कम्मइ० अवत्त० णित्य त्रांतरं ।

८९६. इत्थिवे० पंचणा०-चदुदंस०-चदुमंज०-पंचंत० बेबिहु-हाणी० जह० एग०, उक्क० अंतो०। संखेजजगुणविहु-हा० जह० एग०, उक्क० पुन्नकोडिपुध०। असंखेजजगुणविहु-हा० जह० एग०, उक्क० प्रव्यकोडिपुध०। असंखेजजगुणविहु-हा० जह० उक्क० अंतो०। अबिहु० जह० एग० उक्क० तिण्णि समयं। थीणिगिद्धि०३ मिन्छ०-अणंताणुवंधि०४ तिण्णिविहु-हा०-अबिहु० जह० एग०, उक्क० पणवण्णं पिलदो० देस्र०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पिलदोवमसदपुध०। णिहा-

समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातगुणहानिका जवन्य और उक्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार सब जीवोके असंख्यातगुणहाद्धि और असंख्यातगुणहानिका अन्तर काल जानना चाहिये।

म्हिश. श्रीदारिकमिश्रकाययागी जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि श्रीर तीन हानियोंका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्महूं है। श्रवस्थित वन्धका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है। देवगित चार श्रीर तीथङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका भङ्ग झानावरणके समान है। श्रवस्थित वन्धका जवन्य अन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। दो श्रापुत्रोंके दो पदांका भङ्ग अपर्याप्तकोंके समान है। श्रेप परिवर्तमान प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर अवस्थित वन्धका जवन्य अन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्त वन्धका जवन्य श्रीर उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्त वन्धका जवन्य श्रीर उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

महिष्. वैक्रियिकमिश्रक यथोगी जीवोंका भङ्ग वैक्रियिककाययोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि परिवर्तमान प्रकृतियोंके अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उन्कृष्ट अन्तर अन्तमुंहृतं है। इसीप्रकार आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिय। कार्मणकाययोगी जीवोंके सब कर्मीका अन्तर काल नहीं है। अथवा वैक्रियकमिश्रकाययोगी, और किम्भ कार्ययोगी जीवोंके अवक्तव्य बन्धका अन्तरकाल नहीं है।

८६६. स्त्रीवंदी जीवोंमे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन श्रीर पाँच श्रन्त-रायकी दो वृद्धि श्रीर दो हानियोंका जवन्य अन्तर एक ममय हे श्रीर उक्ष्र अन्तर श्रन्तमुंहुन है। संख्यातगुणवृद्धि श्रीर संख्यातगुणहानिका जवन्य श्रन्तर एक समय हे श्रीर उक्ष्र अन्तर पूर्वकोटि पृथक्तव प्रमाण है। श्रासंख्यातगुणवृद्धि श्रीर श्रासंख्यातगुणहानिका जवन्य श्रीर अक्ष्र श्रन्तर श्रन्तमुंहुते है। श्रावस्थित वन्धका जवन्य श्रन्तर एक समय हे श्रीर अन्त्रष्ट अन्तर तीन समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व और श्रानन्तानुवन्धीचारकी तीन वृद्धि, तीन हानि और श्रावस्थित पचला भय-दुगुं०-तेजइगादिणव० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि० णाणावरणभंगो। अवत्त०णित्य अंतरं। सादा०-जसगि० तिण्णि-चड्डि-हा० णाणावरणभंगो। असंखेजजगुणवड्डि-हा०-अवत्त० जह० उक्क० अंतो०। अवद्वि० जह० एग०, उक्क अंतो०। असादादिदस० पंचिदियभंगो। अहुकसा० बेबड्डि हा०-अविह० जह० एग०, उक्क० पुन्वकोडी देस्र०। संखेजजगुणहाणी० णाणावरणभंगो। अवत्त० जह० श्रंतो०, उक्क० पित्रदोवमसदपुधत्तं। इत्थि० णवुं स० तिरिक्खग०-एइदि०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-तिरिक्खाणु०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ० थावर-दूभग-दुस्सर-अणादे० णीचा० तिण्णिवड्डि-हाणि-अविह० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पणवण्णं पित्रदो० देस्र०। णिरयायु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० पुन्वकोडितिभागं देस्र०। तिरिक्ख-मणुसायु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० पत्तिदो० सदपुध०। [देवायु०] दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० अहुवण्णं पत्तिदो० पुन्वकोडिपुध०। मणुसगदिपंचगं तिण्णिवड्डि-हाणि अविह० जह० एग०, उक्क० [तिण्णि] पित्रदो० देस्र०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पणवण्णं पत्तिदो० सेस्र०। णविरे ओरा-तिण्यवड्डि-हाणि अविह० तिण्णिजादि-सुहुम-अपज्ज०-साधार० तिण्णिवड्डि-हाणि अववह० जह० एग०, अवत्त० जह० श्रंतो०, उक्क० पणवण्णं पत्तिया हु-हाणि अविह० जह० एग०, अवत्त० जह० श्रंतो०, उक्क० पणवण्णं पत्तिया हु-हाणि अविह० जह० एग०, अवत्त० जह० श्रंतो०, उक्क० पणवण्णं पत्तिया हु-हाणि अविह० जह० एग०, अवत्त० जह० श्रंतो०, उक्क० पणवण्णं पत्तिया हु-हाणि अविह० जह० एग०, अवत्त० जह० श्रंतो०, उक्क० पणवण्णं पत्तिया हि-सुहुम-अपज्ज०-

बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उन्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचपन परुय है। अवक्तज्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त है और उत्कृष्ट अन्त सो पत्य पृथक्त्व प्रमाण है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा और तैजसशरीर त्रादि नौ प्रकृतियांकी तीन वृद्धि, तीन हानि और त्रवस्थितवन्धका भक्न ज्ञानवरणके समान है। अवक्तात्र्य वन्धका अन्तर काल नहीं है। सातावेदनीय श्रीर यश:-कीर्तिकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। असंख्यातगुणवृद्धि, असं-ख्यात्मणहानि श्रीर श्रवक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहुर्त है। अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उक्ष्य अन्तर अन्तर्महर्त है। असाता आदि दस प्रकृ-तियोंका भन्न पक्केन्द्रियोंक समान है। आठ कपायोंकी दो वृद्धि, दो हानि श्रीर श्रवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकांटि है। संख्यातगुणहानिका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्यवन्धका जधन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सौ पल्य पृथक्त प्रमाण हैं। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, तिर्यद्भगत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय श्रीर नीचगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर अवस्थित वन्धका जधन्य श्रन्तर एक समय है, श्रव-क्तज्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचपन परुव है। नरकायके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक पर्व कोटिका कुछ कम त्रिभाग-प्रमाण है। तिर्यञ्जायु और मनुष्यायुके दो पदोंका जवन्य अन्तर्महूर्त है। और उत्कृष्ट अन्तर सौ पत्य प्रथक्त प्रमाण है। देवायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मूहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्व कोटि पृथक्त अधिक अहावन परुष है। मनुष्यगतिपञ्चककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य ऋन्तर एक समय है और उत्कृष्ट ऋन्तर कुछ कम तीन पत्य है। अवक्तज्य बन्धका जघन्य श्चन्तर श्चन्तर्मुहर्त है श्रीर उत्कृष्ट श्चन्तर कुछ कम पचरन पत्य है। इतनी विशेषता है कि श्रीदारिक-शरीरका साधिक पचपन परुप है। वैिक्रियिक छह, तीन जाति, सूदम, अपर्याप्त और साधारणकी पलिदो॰ सादि॰ । पुरिस॰ – उच्चा॰ चतारिविहु-हाणि-अविदु॰ णाणावरणमंगो । अवत्त॰ जह॰ अंतो॰, उक्क॰ पणवण्णं पलिदो॰ देग्च॰ । [ पंचिदि-समच॰-पसत्थ॰ तस॰ सुभगः सुस्सर॰-आदे॰ ] तिण्णिविहु-हाणि-अविदु॰ 'सादमंगो । अवत्त॰ जह॰ अंतो॰, उक्क॰ पणवण्णं पलिदो॰ देग्च॰ । आहारदुगं तिण्णिविहु-हाणि-अविदु॰ जह॰ एग॰, अवत्त॰ जह॰ अंतो॰, उक्क॰ सगिहिदो॰ । पर० – उस्सा॰ – बादर – पज्जत्त – पत्ते॰ तिण्णिविहु-हाणि – अविदु॰ सादभंगो । अवत्त॰ जह॰ अंतो॰, उक्क॰ पणवण्णं पलिदो॰ सादि॰ । तित्थय॰ तिण्णिविहु-हा॰ जह॰ एग॰, उक्क॰ श्रंतो॰। अविदु॰ जह॰ एग॰, उक्क॰ बेसम॰। अवत्त॰ णित्य अंतरं।

८६७. पुरिस० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० चत्तारिवङ्गि-हाणि-अबट्टि० पंचिदियपज्जत्तभंगो । णवरि अवट्टि० जह० एग०, उक्क० तिण्णि सम०। अवत्त० णित्य अंतरं। सेसाणं सन्वाणं पंचिंदियपज्जत्तभंगो। यो विसेसी तं भणिस्सामो। प्रिसे अवत्त जह अंतो , उक्क बेछावद्विसाग सादि । णिरयायु दोपदा जह ०-अंती०, उक्क० पुन्त्रकोडितिमागं देख्न०। देवायु० दोपदा० जह० अंती०, उक्क० तेत्तीसं तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है। अवक्तत्र्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तमुहूर्त है और इन सवका उत्कृष्ट अन्तर साधिक पचपन पल्य है। गुरुपवंद श्रीर उच्चगोत्रकी चार वृद्धि, चार हानि श्रौर श्रवस्थित वन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवकत्र्य बन्धका जधन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त हैं और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचपन पल्य है। पक्केन्द्रिय-जाति, समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्तविद्दायोगति, त्रस, सुभग, सुस्वर त्रीर त्रादेयकी तीनवृद्धि, तीन हानि ऋौर अवस्थित बन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समानहै। अवक्तव्य बन्धकाजधन्य धन्तर अन्त-र्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचपन पत्य है। आहारकद्विकर्का तीनवृद्धि, तीन हानि **सीर** त्रवस्थित वन्धका जघन्य त्रम्नर एक समय है, त्रवक्तन्य वन्धका जघन्य त्रम्तर त्रम्तमुहूर्त हूं श्रोर इन सबका उत्कृष्ट ऋन्तर अपनी स्थिति प्रमाण है। परघात, उच्छुवास, बादर, पर्याप्त और प्रत्येक-की तीन वृद्धि, तीन हानि त्र्यौर त्र्यवस्थित बन्धका भङ्ग सातावदनीयकं समान है। अवक्तत्र्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्भृहर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक पचपन पल्य है। तीर्थक्कर प्रकृतिकी नीन वृद्धि श्रीर तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्महर्त हैं। अब-स्थित बन्धको जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तव्य बन्धका अन्तरकाल नहीं है।

म्हण. पुरुषंवदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन श्रोर पाँच श्रान्तरायकी चार वृद्धि, चार हानि श्रोर श्रावस्थितवन्धका भङ्ग पश्चेन्द्रिय पर्याप्तक जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि श्रावस्थितवन्धका ज्ञान्य श्रान्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रान्तर तीन समय है। श्रावक्तव्यवन्धका श्रान्तर काल नहीं है। शेष सब प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय पर्याप्रक जीवोंके समान है। जो विशेषता है उसे कहते हैं—पुरुषंवदके श्रावक्तव्यवन्धका ज्ञान्य श्रान्तर श्रान्तर्भुहर्त है और उत्कृष्ट श्रान्तर साधिक दो छ्यासठ सागर है। नरकायुके दो पदोंका ज्ञान्य श्रान्तर श्रान्तर्भुहर्त है श्रोर उत्कृष्ट श्रान्तर एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिभाग प्रमाण है। देशायुके दो

१ मूलप्रतौ देस् । सेसाणं ओघं। ओराङि०अंगो० तिण्णि० इति पाठः। २ मूलप्रतौ भवद्वि० मणुसगदिभंगो इति पाठः।

साग० सादि०। मणुसगदिपंचगस्स तिण्णिविष्ट-हाणि-अविष्टि० जह० एग०, उक्क० तिण्णि पिलदो० सादि०। अवत्त० जह० झंतो०, उक्क० तेत्तीसं साग० सादि०। समचदु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदे० तिण्णिविष्ट-हाणि-अविष्टि० सादभंगो। अवत्त० जह० झंतो०, उक्क० बेछाविष्ट सा० सादि० तिण्णि पिलदो० देस०। उचा० चत्तारि-विष्ट-हाणि-अविष्टि० सादभंगो। अवत्त० समचदु०भंगो। एसिं० असंखेजजगुणहाणि-बंधंतरं कायिहदी० तेसिं तेत्तीसं सा० सादि० पुन्वकोडी सादिरे०।

८६८. णवुंस० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंजल०-पंचंत० तिण्णिविष्टु-हाणी० अग्रेषं । असंखेजजगुणविष्टु-हाणी० जह० उक्क० श्रंतो० । अवद्वि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम० । थीणगिद्धिश्च-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ असंखेजअभागविष्टु-हाणि-अवद्वि० जह० एग०, उक्क० तेत्तीसं सा० देस्च० । चेविष्टु-हाणि-अवत्व० ओघं । णिहा-पचला-भय-दुगुं०-तेजइगादिणव० तिण्णिविष्टु-हाणि-अवद्वि० णाणावरणभंगो० । अवत्त० णित्थ श्रंतरं । सादावे०-जसगि० तिण्णिविष्टु-हाणि-अवद्वि०-अवत्त० ओघं । असंखेजजगुणविष्टु-हाणी० जह० उक्क० श्रंतो० । असादादिदस-अहकसा०-तिण्णिआय०-वेउ-विवयछ०-मणुसगदिदुग०-आहारदुग० ओघं । देवायु० तिरिक्खभंगो । इत्थि०-णवुंस०-पंचसंघ०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-दुभग-दुस्सर-अणादे० असंखेजजभागविष्टु-

पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त हे और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेनीस सागर है। मनुष्यगित पञ्चककी तीन बृद्धि, तीन हानि और अयस्थितवन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पत्य है। अवक्तः यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेनीस सागर है। समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विहायोगित, मुभग, मुस्यर और आदेयकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तः यवन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छ्यासठ सागर और कुछ कम तीन पत्य है। उच्चगोत्रकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थितघन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तः यदन्धका भङ्ग समचतुरस्र संस्थानके समान है। जिनके असंख्यात गुणहानिबन्धका अन्तर कायस्थित प्रमाण है उनके वह पूर्वकोटि अधिक साधिक तेतीस सागर है।

दश्न. नपुंसकवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका भङ्ग अंघके समान हैं। असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर मुहूर्त है। अवस्थितवन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्य और अनन्तानुवन्धी चारकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितवन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। दो वृद्धि, दो हानि और अवक्तञ्यवन्धका भङ्ग श्रोघके समान है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुष्सा और तैजसशरीर आदि नो प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका भङ्ग ज्ञानवरणके समान है। अवक्तञ्य वन्धका अन्तरकाल नहीं है। सातावेदनीय और यशःकीर्तिकी तीन वृद्धि, तीन हानि अवस्थित और अवक्तञ्यवन्धका अन्तरकाल श्रोघके समान है। असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्भुहूर्त है। असातावेदनीय आदि दस, आठ कपाय, तीन आयु, वैक्रियिक छह, मनुष्यगतिद्धिक और आहारकद्धिका भङ्ग आघिके समान है। देवायुका भङ्ग तिर्यक्षोके समान है। स्रीवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच

हाणि-अवहि० जह० एग०, उक्क० तेत्तीसं सा० देख्०। बेबड्डि-हाणी० ओघं। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं सा० देख०। पुरि०-सम्ब०-पसत्थ०-सुमग०-सुस्सर०-आदे० तिण्णिवड्डि-हाणि० सादमं०। अवत्त० जह० अंतो, उक्क० तेत्तीसं सा० देख०। ] तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-णीचा० असंखेज्जमागवड्डि-हाणि-अवट्ठि० इत्थिवेदमंगो। बेबड्डि-हाणी-अवत्त० ओघं। चदुजादि-आदाव-थावरादि०४ एकवड्डि-हाणि-अविट्ठि० जह० एग०, उक्क० तेत्तीसं सा० सादि०। बेबड्डि-हा० ओघं। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं सा० सादि०। पंचिदि०-पर०-उस्सा०-तस०४ तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० सादमंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं साग० सादि०। ओरालि०-अगिलि०अंगो०-वज्जरिस० असंखेज्जमागवड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० पुन्वकोडी० देख०। बेबड्डि-हा० ओघं। ओरालि० अवत्त० जह० यंतो०, उक्क० तेत्तीसं० सा० सादि०। वज्जरिस० देख०। तित्थय० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० यंतो०, उक्क० पुन्वकोडि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० यंतो०, उक्क० पुन्वकोडि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० यंतो०, उक्क० पुन्वकोडि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० यंतो०, उक्क० पुन्वकोडि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० यंतो०, उक्क० पुन्वकोडि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० यंतो०, उक्क० पुन्वकोडि-हाणा-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० यंतो०, इक्क० पुन्वकोडि-हाणा-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० यंतो०, इक्क० पुन्वकोडि-हाणा-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० यंतो०, इक्क० पुन्वकोडि-हाणा-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० यंतो०, इक्क० पुन्वकोडि-हाणा-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० यंतो०।

मंहनन, उद्योत, अप्रशस्तविहायोगित, दुर्भग, दुस्वर खोर अनादेयकी अमंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि स्रोर अवस्थितवन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग श्रोघके समान है श्रवक्तत्र्यवन्यका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेनीस सागर है। पुरुषवेद, समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्तविद्यागिति, सुभग, सुस्वर स्रोर आदेयकी तीन वृद्धि स्रोर तीन हानियोंका भन्न सातावदनीयके समान है। अवक्तज्यवन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्भुहृत है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। तिर्यक्रगति, तिर्यक्रगत्यानुपूर्वी श्रोर नीचगात्रकी श्रसंख्यात भागवृद्धि, त्रसंख्यात भागहानि त्रौर श्रवस्थितवन्यका भङ्ग स्त्रीवंदके समान है। दो वृद्धि, दो हानि श्रौर अवक्तव्यवन्धका भङ्ग खोघक समान है। चार जाति, खातप और स्थावर स्रादि चारकी एक हुद्धि, एक हानि त्रौर अवस्थितवन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। दो वृद्धि श्रोर दो हानियोंका भङ्ग आंघके समान है। श्रवक्तव्यवन्थका जघन्य श्रन्तर अन्तर्मुहूर्त है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक तेतीस सागर है। पक्केन्द्रियजाति, परघात, उच्छास और त्रस चतुष्ककी तीन वृद्धि, तीन हानि त्रीर अवस्थितवन्धका भङ्ग सानावेदनीयके समान है। अवक्तज्यबन्धका जघन्य अन्तर् अन्तर्भुहूर्न है स्रोर उस्क्रुप्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर हैं । श्रीदारिक शरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रौर वत्रऋपमनाराच संहननकी श्रसंख्यातभागवृद्धि, श्रसंख्यातभाग-हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। दो वृद्धि ख्रीर दो हानियोंका भङ्ग ओघके समान है। श्रीकारिकशरीरका भक्क श्रोघके समान है। श्रीदारिक त्राङ्गोपाङ्गके श्रवक्तज्यबन्धका जयन्य श्रन्तर अन्तर्मुहूर्त हे श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक तेतीस सागर है। तथा वन्नऋपभनाराच संहननका कुळ कम तेतीस सागर है। नीर्थेकर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रौर अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है श्रौर उत्क्रप्ट श्रन्तर श्रन्त-र्मुहूर्त है। ऋवक्तत्र्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ऋौर उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिभाग प्रमाण है। उच्चगोत्रका भङ्ग मनुष्यगतिक समान है। इतनी विशेषता है कि अस-ख्यात गुणवृद्धि और असंख्यान गुणहानिका भन्न स्रीवेदके समान है।

- ८१६. अवगद्वे० सञ्चपगदीणं वड्डि-हाणी० जह० उक्त० अंतो०। अवड्डि० जह० एग०, उक्त० अंतो०। अवत्त० णित्थ अंतरं। एवं सहुमसंपराइ०। णवरि अवट्डि० जह० उक्त० एग०। अवत्त० णित्थ अंतरं।
- ९००. कोघे पंचणाणावरणादिअद्वारसण्णं तिण्णिविष्ठु-हाणि०-असंखे अगुणविष्ठु जह० एग०, उक्त अंतो०। असंखे अगुणहाणी जह० 'उक्त० अंतो०। अविष्ठ० जह० एग०, उक्त० चत्तारि समयं। श्रीणिगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिण्णिविष्ठु-हाणि० अविष्ठ० णाणावरणभंगो। अवत्त० णित्थ अंतरं। चदुआयु-आहारदुगं मणजोगिभंगो। सेसाणं तिण्णिविष्ठु-हाणि-अविष्ठ० जह० एग०, उक्त० अंतो०। अवत्त० णित्थ अंतरं। एसिं असंखे ज्जगुणविष्ठु-हाणि-अविष्ठ० तेसिं० णाणावरणभंगो। एवं माण-माया-लोभाणं। णविर माणे कोधसंज० अवत्त० भाणिद्वं। मायाए दो संज० अवत्त०। लोभे चदुसंज० अवत्त० भाणिद्वं।
- ६०१. मदि०-सुद० धुविगाणं तिरिक्खोघं । सादादिवारस०-इत्थि०-पुरिस० तिष्णिविहु-हाणि-अविद्वि० ओघं सादभंगो । अवत्त० जह० उक्क० श्रंतो० । णवुंस०-पंचसंठा०-छस्संघ०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादे० असंखेज्जभागविहु-हाणि-अविद्वि०
- द्धः श्रपगतवदी जीवोंमं सब प्रकृतियोंकी वृद्धि श्रोर हानिका जघन्य श्रोर उत्कृष्ट अन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है। श्रवस्थितवन्धका जघन्य अन्तर एक समय है श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्यवन्धका श्रन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार सूद्धमसाम्परायसंयत जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषना है कि श्रवस्थितवन्धका जघन्य और उत्कृष्ट श्रन्तर एक समय है। श्रवक्तव्यवन्धका अन्तर काल नहीं है।
- ६००. क्रोधकपायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण त्रादि अठारह प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और असंख्यात गुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय हे श्रीर उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितवन्धका जघन्य अत्तर एक सयय है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर श्रान्त्र श्रांतर उत्कृष्ट अन्तर श्रान्त्र श्रांतर उत्कृष्ट अन्तर वार समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तत्र्यबन्धका अन्तरकाल नहीं है। चार आयु और आहारकद्विकका भंग मनोयोगी जीवोंके समान है। श्रेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितवन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तत्र्यवन्धका अन्तरकाल नहीं है। जिनका असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवस्थित बन्ध होता है उनका ज्ञानावरणके समान भङ्ग है। इसी प्रकार मान, माया और लाभ कषायवाले जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि मानकषायवाले जीवोंमें कोध राज्यलनका अवक्तव्य कहना चाहिये। माया कपायवाले जीवामें दो संज्यलनोंका अवक्तव्य कहना चाहिये।
- ह०१. मध्यक्कानी श्रीर श्रुताज्ञानी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्य-क्बोंक समान है। साता श्रादि बारह प्रकृतियाँ, स्त्रीवेद श्रोर पुरुपवेदकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर श्रवस्थित बन्धका भङ्ग श्रोघके श्रनुसार सातावेदनीयके समान है। अवक्तत्र्य बन्धका जधन्य

भूलप्रतौ-गुणविद्दहाणी इति पाठः ∔ २ मूलप्रतौ जह० एग० अविद्दि० इति पाठः ।

जह १एग०, उक्क० तिण्णिपिलदो० देस्व०। बेबिड्ड-हाणी० णाणाव०भंगो। अवत्त०जह० श्रंतो०, उक्क० तिण्णि पिलदो० देस्व०। चदुआयु-वेउव्वियछ०-मणुसगिदिदुग-उच्चा० ओघं। तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु० असंखेज्जभागविड्ड-हाणि-अविट्डि० जह० एग०, उक्क० एकत्तीसं सा० सादि०। बेबिड्ड-हाणी-अवत्त० ओघं। चदुजादि-आदाव-थाव-रादि०४ णवुंसगभंगो। पंचिंदि०-पर०-उस्सा०-तस०४ णवुंसगभंगो। ओरालि०-ओरालि०अंगो० एकविड्ड-हाणि-अविट्डि० जह० एग०, उक्क० तिण्णि पिलदो० देस्व०। सेसं ओघं। समचदु०-[पसत्थ०-] सुभग-सुस्सर-आदे० अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णिपिलदो० देस्व०। सेसं सादभंगो। उज्जो० एकविड्ड-हाणि-अविट्डि० जह० एग०, उक्क० एकत्तीसं सा० सादि०। बेबिड्ड-हाणि-अविट्डि० जह० एग०, उक्क० एकत्तीसं सा० सादि०। णीचा० एकविड्ड-हाणि-अविट्डि० जह० एग०, उक्क० एकत्तीसं सा० सादि०। णीचा० एकविड्ड-हाणि-अविट्ड० जह० एग०, उक्क० पिण्य पिलदो० देस्व०। बेबिड्ड-हाणि-अवत्र० ओघं। विभंगे भ्रजगारभंगो।

९०२. आभि०-सुँद० ओधि० पंचणा०-चदुदंस० चदुसंज०-पुरिस०-उज्ञा०-पंचंत० तिण्णिवड्डि-हाणि अवद्धि० जह० एग०, उक्त० अंतो०। असंखेजगुणवङ्की जह० एग०,

श्रीर उक्तप्ट श्रन्तर अन्तर्महूर्न है। नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, छह संहनन, अप्रशस्त विहायागित. दुर्भग, दुस्वर और श्रनादेयकी श्रसंख्यानभागवृद्धि, श्रसंख्यानभागहानि श्रीर अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पत्य है। दो वृद्धि और दो हानियों का भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य वन्धका जयन्य अन्तर अन्तर्मृहूर्त हैं श्रीर उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन परुष है। चार ऋाष, वैक्रियिक छह, मनुष्यगतिद्विक और उच्चगात्रका भङ्ग श्रांघके समान है। तिर्यञ्चगति श्रीर तियञ्चगत्यानुपूर्वीकी श्रसंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि श्रीर श्रवस्थित बन्धका जघन्य श्रन्तर एक सभय है और उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक इकतीस सागर है। दो वृद्धि, दो हानि ऋौर ऋवक्तव्य बन्धका अन्तर श्रोपके समान हं! चार जाति, आतप और स्थावर त्रादि चारका भन्न नपंसकवेदके समान है। पञ्चेन्द्रिय जाति, परघात, उच्छवास श्रीर त्रस चतुष्कका भङ्ग नपुंसकवेदके समान हैं। स्रोदारिकशरीर श्रांर स्रोदारिक स्राङ्गोपाङ्गकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थित बन्धका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ तीन पत्य है। शेष भङ्ग श्रांघके समान है। समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्तविद्दायांगति, सुभग, सुस्वर घौर श्रादेयके अवक्तज्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पत्य हैं। शेष भङ्ग सातावेदनीयके समान है। उद्यानकी एक वृद्धि, एक हानि श्रीर अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है ऋौर उत्कृष्ट अन्तर साधिक इकतीस मागर है। दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग ओघके समान है। अवक्तज्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उक्तप्र अन्तर साधिक इकतीस सागर है। नीचगात्रकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है ऋौर उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पत्य है। दो वृद्धि, दो हानि श्रोर अवक्तव्य बन्धका भङ्ग श्रोघके समान है। विभङ्गज्ञानी जीवोंमे श्रपनी सब प्रकृतियोका भङ्ग भुजगार बन्धके समान है।

है०२. श्राभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, श्रीर श्रविधज्ञानी जीवोंसे पाँच ज्ञानावरण, सार देशीनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, उच्चगात्र श्रीर पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि. तीन हानि श्रीर अवस्थित बन्धका जघन्य श्रन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तमुंहूर्त है। श्रसंख्यातगुण- हाणी-अवस० वह० श्रंतो०, उक० छावडि० साग० सादि०। सादावे०-जसिग० चसारिविट्ठ-हाणि-अवडि० णाणाव०मंगो । अवस० जह० उक० अंतो । असादादिदस० सादमंगो । श्रहकसा० तिण्णिविट्ठ-हाणि-अविट्ठ० मणुसमंगो । अवस० जह० अंतो०, उक० तेत्रीसं सा० सादि०। दोआयु० दोपदा० जह० अंतो०, उक० तेत्रीसं सा० सादि०। मणुसग-दिपंषागस्स तिण्णिविट्ठ-हाणि-अवट्ठि० वह० एग०, उक० पुन्वकोडी सादि०। अवस० बह० पंविदो० सादि०। उक० तेत्रीसं सा० सादि०। देवगदि०४-आहारदुगं तिण्णिविट्ठ-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक० तेत्रीसं साग० सादि०। तिजहगािष-धृवि०तिण्णिविट्ठ-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० णाणावरणमंगो। तित्थय० ओघं। एवं ओघिदं०-सम्मादि० खहग०। णविर खहग० मणुसायु० दोपदा० जह० श्रंतो०, उक० छम्मासं० देसू०। देवायु० दोपदा जह० अंतो०, उक० पुन्वकोडितिमागं देस०। मणुसगदिपंच-गस्स तिण्णिविट्ठ-हाणी० जह० एग०, उक० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक० वेसम०। अवत० णिय अंतरं। सेसाणं जिन्ह छावट्ठि० तिम्ह तेत्रीसं सा० कादव्वं। ९०३. मणपञ्ज० पंचणा०-चद्दंसणा०-चद्संज०-पुरिस०-उचा०-पंचंत० तिण्णि

वृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्य वन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्महर्त है श्रोर इन सबका उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक छ्यासठ सागर है। सातावेदनीय श्रोर यशः कीर्तिकी चार वृद्धि, चार हानि श्रीर श्रवस्थित बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। श्रवक्तव्य बन्धका जधन्य श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तमूहूर्त हैं। श्रसाता श्रादि दस प्रकृतियोंका भक्न सातांबद-नीयके समान है। आठ कषायोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर श्रवस्थित वन्यका भङ्ग मनुष्योंके समान है। अवक्तव्य बन्धका जयन्य अन्तर अन्तर्महूर्त है और उक्कष्ट अन्तर साविक तेतीस सागर है। दो त्रायत्रोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मृहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। मनुष्यगति पञ्चककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका जबन्य अन्तर एक समय है और उन्कृष्ट अन्तर साधिक एक पूर्वकोटि है। अवक्तज्य बन्धका जधन्य अन्तर साधिक एक पत्य है श्रीर अकुष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। देवगति चतुष्क श्रीर श्राहारक द्विककी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रौर अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है. अवक्तत्र्य बन्धका जचन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर इन सबका साधिक तेतीस सागर है। तैजसशरीर आदि धववन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तज्य बन्धका भन्न ज्ञानावरणके समान है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका भन्न त्रोधके समान है। इसी प्रकार श्रवधि दर्शनी, सम्यग्दष्टि त्र्यौर चायिकसन्यर्म्दाष्ट जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है, कि चायिक सम्यन्द्रष्टि जीवोंमें मनुष्यायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्महुर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम छह महिना है। देवायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्व-कोटिका कुछ कम त्रिभाग प्रमाण है। मनुष्यगति पद्मककी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जयन्य अन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट अन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है। श्रवस्थित बन्धका जघन्य श्रन्तर एक समय है ऋौर उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तव्य बन्धका श्रन्तर काल नहीं है। शेष प्रकृतियोंका जहाँ छ्यासठ सागर अन्तर काल कहा है वहाँ तेतीस सागर कड्ना चाहिये।

६०३. मनःपर्ययज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद,

१ मूखप्रती मणुक्षाणु० दो-इति पाठः। २ मूखप्रती कादम्यं मणुक्षपञ्जते पंच-इति पाटः।

वहि-हाणि-अवहि० जह० एग०, उक० अंतो० । असंसेक्षगुणवहि-हाणि-अवस॰ जह॰ अंतो०, उक० पुण्वकोही देस० । सादावे०-जस० णाणावरणभंगो । णवरि अवस० जह० उक्क० अंतो० । णिहा-पचला-भय-दुगुं०-देवगदि-पंचिदि०-वेउन्वि०-तेजा० क०-समचदु०-वेउन्वि०अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४ • सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-तित्थय० तिण्णिवहि०-हाणि०-अविद्व०-जह० एग०, उक० अंतो० । अवत्त० जह० अंतो० । अवत्त० जह० प्रवकोही देस० । असादा०-चदुणोक०-णिराथिर-सुमासुम-अजस० तिण्णिवहि-हाणि-अविदि० जह० एग०, उक० अंतो० । अवत्त० जह० उक० अंतो० । देवायु० मणुसि०भंगो । एवं संजदा० ।

६०४. सामाइ०-छेदो० पंचणा०-चहुदंस०-सोमसंज०-उचा०-पंचंत० तिण्णिबहुि-हा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। असंखेआगुणबहुि-हा० जह० उक्क० अंतो०। अबहुि० जह० एग०, उक्क० बेसम०। णिदा-पचला तिण्णिसंज०-पुरिस०-भय-दुगुं०-देवगदि• पंचिदि०-वेउव्वि० तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्व०अंगो०— वण्ण०४—देवाणु०-अगु०४ पसत्य०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिम०-तित्थय० तिण्णिवड्डि-हाणि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अबद्वि० जह० एग०, उक्क० बेसम०। णवरि तिण्णिसंज०-पुरिस०

उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर श्रवस्थित बन्धका जघन्य सन्तर एक समय है श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर अन्तर्मुहूर्त है। श्रसंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि श्रीर श्रवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम एक पूर्वकांटि है। सातावेदनीय श्रीर यशाकीर्तिका भङ्ग झानावरणके समान हे। इतनी विशेषता है कि श्रवक्तव्य बन्धका जघन्य स्थार उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तम्भूहूर्त है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा, देवगति, पश्रवन्द्रियजाति, वैक्रियिकशरीर, तेजसशरीर, कामणशरीर, समचतुरक्तसंस्थान, वैक्रियिक श्राङ्गोपङ्ग, वर्ण चतुष्क, देवगत्थानुपूर्वी, श्रगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायागित, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, श्रादेय, निमणि श्रीर तथिकरकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर अवस्थित बन्धका जघन्य श्रन्तर एक समय हे श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तम्भूहूर्त है। श्रवक्तव्य बन्धका जघन्य श्रन्तर श्रम्तम्भूहूर्त है। श्रासत वेदनीय, चार नोकषाय, स्थिर, श्रिस्थर, श्रुभ, श्रशुभ श्रीर अयशाकीर्तिकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर श्रवस्थित बन्धका जघन्य श्रन्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तम्भूहूर्त है। श्रवक्तव्य बन्धका जघन्य श्रान्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तम्भूहूर्त है। श्रवक्तव्य बन्धका जघन्य श्रान्तर श्रन्तम्भूहूर्त है। देवायुका भङ्ग मनुष्यि नियोंके समान है। इसीप्रकार संयत जीवोंक जानना चाहिये।

६०४. सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, लोम संज्ञलन, उच्चगोत्र, और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्न है। असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यानगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। निद्रा, पचला, तीन संज्वलन, पुरुषवद, भय, जुगुप्सा, देवगित, पश्चन्द्रिय-जाति, वैक्रियिकशरीर, तेजसरारीर, कार्मणरारीर, समचतुरक्तसंस्थान, वैक्रियिकशहीर, तेजसरारीर, कार्मणरारीर, समचतुरक्तसंस्थान, वैक्रियिकश्चाङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगात्यानुपूर्वी, अगुरुलधुचतुष्क, प्रशस्तिवहायोगिति, अस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और तीर्थङ्करकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर

असंखे अगुणविष्टु-हाणी० णाणावर०भंगो। सादावे०-जस० णाणाव०भंगो। णविर अवत्त० ज० उक्त० श्रंतो०। सेसाणं णिहादीणं अवत्त० णित्थ अंतरं। असादादिदस-आहारदुगं तिण्णिविष्टु-हाणि-अविद्धि० ज० ए०, उक्त० अंतो०। अवत्त० जह० उक्त० अंतो०। परिहारे ध्विगाणं सेसाणं च भ्रजगारभंगो। एवं संजदासंजदे।

९०५. असंजदे धुविगाणं मदि०भंगो। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४इत्थि०-णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दृभग-दुस्मर-अणादे० णवुंसगभंगो।
सादादिवारस मदि०भंगो। पुरिस०-समचदु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदे० अवत्त०
ज० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं सा० देस्च०। सेसाणं सादभंगो। चदुआयु०-वेउन्वियछ०मणुसगिदिदुग-उच्चा० ओघं। तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा० णवुंस०भंगो।
ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिस० ओघं। णवरि वज्जरि० अवत्त० उक्क० तेत्तीसं
सा० देस्च०। चदुजादिदंडओ पंचिंदियदंडओ णवुंसगभंगो। तित्थय० णवुंस०भंगो।

ह०६, तिण्णिले० धुनिगाणं तिण्णिनिष्ठि हाणी० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अविह० ज० ए०, उ० चतारि सम० । णिरय-देवायु० दोपदा० णिरथ श्रंतरं । तिरिक्ख-अन्तर्मुहूर्त है । श्रवस्थित बन्धका जवन्य श्रन्तर एक समय हे श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर दो समय है । इतनी विशेषता है कि तीन संज्वलन श्रोर पुरुपवेदकी श्रसंख्यातगुणवृद्धि और श्रसंख्यातगुणहानिका भक्क झानावरणके समान है । सातावेदनीय श्रोर यशःकीर्तिका भक्क झानावरणके समान है । इतनी विशेषता है कि श्रवक्तव्य बन्धका जवन्य श्रोर उत्कृष्ट अन्तर श्रन्तमृहूर्त है । शेष निद्रा श्रादिकके अवक्तव्य बन्धका श्रवन्य श्रोर असाता श्रादि दस श्रोर श्राहारकिष्ठककी तीन वृद्धि, तीन हानि और श्रवस्थित बन्धका जवन्य श्रन्तर एक समय हैं श्रोर उत्कृष्ट श्रन्तर अन्तर्मुहूर्त है । श्रवक्तव्य बन्धका जवन्य और उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है । श्रवक्तव्य बन्धका जवन्य और उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तर्मुहूर्त है । परिहारविशुद्धिसंयन जीवोंमें धुववन्यवाली और शेप प्रकृतियोंका भक्क मुजगारवन्धके समान है । इसी प्रकार संयतासंयत जीवोंके जानना चाहिये।

हि० ४. श्रसंयत जीवोंमें ध्रवबन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिण्यात्व, श्रनन्तानुबन्धी चार, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहतन, श्रप्रशस्तांवहायोगिति, दुर्भग, दुस्वर श्रौर श्रनादेयका भङ्ग नपुंसकवेदके समान है। साताआदिक वारह प्रकृतियोंका भङ्ग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है। पुरुपवेद, समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्तविहायोगिति, सुभग, सुस्वर और श्रादेयके श्रवक्तव्य बन्धका जधन्य श्रन्तर अन्तर्मुहूर्त है श्रौर उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। श्रेप प्रकृतियोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। चार श्रायु, बैकियिक छह, मनुष्यगतिद्विक श्रौर उच्चगोत्रका भङ्ग श्रोधके समान है। तिर्यक्र्याति, तिर्यक्र्यात्यानुपूर्वी, उद्योत श्रौरनीचगोत्रका भङ्ग नपुंसकवेदी जीवोंके समान है। औदारिकशरीर, श्रौदारिक श्राङ्गोपङ्ग, श्रौर वश्रक्षपयनाराचसंहननका भङ्ग नपुंसकवेदी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि वश्रक्रष्टमनाराच संहननके श्रवक्तव्य बन्धका उत्कृष्ट श्रन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। चार जातिदण्डक श्रौर पश्चिन्द्रयदण्डकका भङ्ग नपुंसकवेदके समान है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग नपुंसकवेदके समान है।

ह०६. तीन लेश्यावाले जीवोंमें ध्रववन्थवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि श्रीर तीन हानियोंका ज्ञधन्य अन्तर एक समय हे श्रीर उत्कृष्ट श्रन्तर श्रन्तमुंहूर्त है। श्रवस्थित वन्धका जघन्य श्रन्तर

मणुसायु० णिरयभंगो । दोगदि-पंचिंदि०-ओरालि०-ओरालि०अंगो०-दोआणु०-पर०-उस्सा०-आदाव-तस-थावरादिचदुयुगलं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह०एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० णित्य अंतरं । वेउन्वि०-वेउन्वि०अंगो० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बावीसं सत्तारस सत्त सागरो० सादि० । अवत्त० किण्णाए जह० सत्तारससा० सादि०, उक्क० बावीसं सा० सादि० । णीलाए जह० सत्त साग० सादि०, उक्क० सत्तारस साग० सादि० । काऊए जह० दसवस्ससहस्सा० सादि०, उक्क० सत्ताग० सादि० । काऊए जह० दसवस्ससहस्सा० सादि०, उक्क० सत्ताग० सादि० । तित्थय० तिण्णिवड्डि-हाणी० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसमयं । सेसाणं णिरयोघं । णवरि णील-काऊए मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० पुरिसभंगो । काऊए० तित्थय० अवत्त० णित्थ अंतरं ।

६०७. तेऊए धुविगाणं तिण्णिबहुि-हाणी० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अबिहु० जह० एग०, उक्क० बेसमयं। अहुक०-ओरालि०-आहारदुग-तित्थय० धुविगाण भंगो। णबिर अवत्त० णित्थि अंतरं। देवायु० दोपदा णित्थि अंतरं। देवगदि०४ तिण्णिबिहु-हाणि-अबिहु० जह० एग०, उक्क० बेसाग० सादि०। अवत्त० णित्थि अंतरं। थीण-

एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। नरकायु और देवायुक दो पदोंका अन्तरकाल नहीं है। तियंश्चायु और सनुष्यायुका भङ्ग नारिकयोंक समान है। दो गित, पर्छ्वान्द्रयजाित, श्रोदारिकशरीर, ओदारिक आङ्गोपाङ्ग, दो आनुपूर्वी, परघान, उच्छ्वास, आनप, त्रम और स्थावर आदि चार युगलकी तीन वृद्धि, तीन हािन और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। वैक्रियिकशरीर और वैक्रियिकशङ्गोपाङ्गकी तीन वृद्धि, तीन हािन और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कमसे साधिक वाईस सागर, माधिक सत्तरह सागर और माधिक सात सागर है। अवक्तव्य बन्धका कृष्णलेश्यामें जघन्य अन्तर साधिक सत्तरह सागर और उत्कृष्ट अन्तर माधिक बाईस सागर है। नीललेश्यामें जघन्य अन्तर साधिक सात मागर है। कापातलेश्यामें जघन्य अन्तर साधिक दमहजार वर्ष और उत्कृष्ट अन्तर साधिक सात सागर है। तिथेङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि और तीन हािनयोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक सात हो। सोथ कृत्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित वन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर हो। समय है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग नारिकयोंके समान है! इत्तर्ग विशेषताहै कि नील और कापात लेश्यामें मनुष्यगित, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भङ्ग पुरुपवेदके समान है। कापातलेश्यामें नीथेङ्कर प्रकृतिके अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं हैं।

६०७. पीतलेश्यावाले जीवोंमे ध्रवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहूर्त है। अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर हो। आठ कपाय, औदारिक शरीर, आहारकद्विक और तीर्थक्कर प्रकृतिका भङ्ग ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तत्र्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। देवायुके दो पदोंका अन्तर काल नहीं है। देवगत वतुष्ककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उन्कृष्ट अन्तर साधिक

१ मुळप्रतौ-भंगो तित्थय० अवत्त० णित्थ अंतरं । काऊए० तेऊए इति पाटः ।

गिद्धि०३दंडओ साददंडओ इत्थिदंडओ पुरिसदंडओ तिरिक्ख मणुसायुग० सोधम्मभंगो । एवं पम्माए वि । णवरि ओरालि०-ओरालि० यंगो० अट्टक० मंगो । सेसाणं सहस्सारमंगो ।

ह०द्र. सुकाए पंचणा०अद्वारसण्णं चत्तारिबड्डि-हाणि-अबट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। असंबेजगुणहाणी० जह० उक्क० अंतो०। अबत्त० णित्थ अंतरं। थीणिगिद्धि०३ दंडओ णवगेवज्ञवभंगो। णिद्दा-पचला-भय-दृ०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि०-तित्थय० तिण्णिबड्डि-हाणि-अबट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० णित्थ अतरं। साद०-जस० णाणावरणभंगो। णवरि अवत्त० जह० उक्क० अंतो०। असादादिदस-आहारदुगं तिण्णिबड्डि-हाणि-अबट्ठि०-अवत्त० सादभंगो। णवरि आहारदुगं अवत्त० णित्थ अंतरं। अट्ठकसा०-मणुसग०-ओरालि०-ओरालि० अंगो०-बज्जरिस०-मणुपाणु० सादभंगो। णवरि अबट्ठि० जह० एग०, उक्क० वेसम०। श्रवत्त० णित्थ अंतरं। पुरिस०-उच्चा० अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० एकत्तीसं सा० देस्व०। सेसाणं णाणावरणभंगो। देवगदि०४ तिण्णिबड्डि-हाणी-अबट्ठि० जह० एग०,

दो सागर है। त्रावक्तव्य वन्धका अन्तर काल नहीं है। स्त्यानगृद्धित्रिकदण्डक, साताबेदनीयदण्डक, स्नीबेददण्डक, पुरुपवेददण्डक, तिर्यक्षायु खोर मनुष्यायुका भङ्ग सौर्धमकल्पके समान है। इसी-प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंके भी जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि खोदारिकशरीर खौर खाँदारिक खङ्गोपाङ्गका भङ्ग खाठ कपायके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सहस्रारकल्पके समान है।

६०८. शुक्रलेश्यावालं जीवोंमं पाँच ज्ञानावरणादि आठरह प्रकृतियोंकी चार वृद्धि, चार हानि श्रीर अवस्थित बन्धका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। असं-ख्यातगुणहानिका जवन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूत है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। स्त्यानगृद्धित्रिकदण्डकका भङ्ग नौ धैवेयिकके समान है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्ण चतुष्क, त्रागुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निमाण श्रीर तीथेङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित वन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट श्चन्तर श्चन्तर्महूर्त है। अवक्तव्य बन्धका अन्तरकाल नहीं है। सातावेदनीय और यशःकीर्तिका भक्त ज्ञानावरणके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य बन्धका जवन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्महते हैं। असातावदनीय आदि दस और आहारकद्विककी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित श्रीर प्रवक्तत्रय बन्धका भङ्ग साताबेदनीयके समान है। इतनी विशेपता कि त्राहारकद्विकके श्चाक्कज्य वन्धका अन्तरकाल नहीं है। आठ कपाय, मनुष्यगति, औदारिकशारीर, ओदारिक आङ्कापाङ्क, वन्नऋपभनाराचसंहनन त्र्योर मनुष्यगत्यानुपूर्वीका भङ्ग सातावदनीयक समान है। इतनी विशेषता है कि अवस्थित बन्धका जवन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तज्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। पुरुष्वेद और उच्चगोत्रक अबक्तज्य बन्धका जयन्य अन्तर अन्तर्भृहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुद्र कम इकतीस सागर है। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग झाना-वरणके समान है। देवगति चतुष्ककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। अवक्तव्य बन्धका जवन्य अन्तर साधिक

उक्कः तेत्तीसं सा० सादि० । अवत्त० जह० अट्टारस साग० सादि०, उक्कः वेत्तीसं साग० सादि० । सेसाणं भ्रजगारमंगो । भवसि० ओघं । अब्भवसि० मदि०मंगो ।

६०६. वेदने धुविगाणं सादादिवारस० परिहारभंगो । अहुक०-दोआयु०-मणुस-गदिपंचग-आहारदुगं ओधिभंगो । देवगदि०४ तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० ओधिभंगो । अवत्त० जह० परिदो० सादि०, उक्क० तेत्तीसं० सादि० । तित्थय० तेउभंगो ।

६१०. उवसम० पंचणा०अट्ठारस० चत्तारिवड्डि-हाणि-अबद्धि० जह० एग०, उक्त० अंतो०। णवरि असंखेजजगुणहाणी जह० उक्त० अंतो०। अवत्त० णित्थ अंतरं। णिदा-पचला-भय-दुगुं०-देवगदि-पंचिदि०-वेउव्वि०-तेजा०-५० समचदु०-वेउव्विप० अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सभग-सस्सर-आदे०-णिमि० तित्थय० णाणावरणभंगो। सादावे०-जस० अवत्त० जह० उक्त० अंतो०। सेसाणं णाणावरणभंगो। असादा०-अट्ठक०-चदुणोक०-आहारदुग-थिरादिपंच सादभंगो। मणुसगदिपंचग० तिण्णिवड्डि-हाणी० जह० एग०, उक्त० अंतो०। अबद्धि० जह० एग०, उ० वेसम०। अवत्त० णित्थ अतरं।

९११. सासणे धुविगाणं वेदगभंगो । सेसाणं मणजोगिभंगो । सम्मामि० धुविगाणं

श्रठारह सागर है और उत्कृष्ट श्रन्तर साधिक तेतीस सागर है। शेप भङ्ग भुजगारणे समान है। भव्य जीवोंमें श्रोधके समान भङ्ग है। अभव्य जीवोंमें मत्यज्ञानी जीवोंक समान भङ्ग है।

६०६. वेदक सम्यद्दष्टि जीवोंमे ध्रववन्धवाली और सातावेदनीय आदि वारह प्रकृतियोंक। भङ्ग परिहारिविद्युद्धि संयतोंके समान है। आठ कपाय, दो आयु, मनुष्यगित पञ्चक और आहारक-दिकका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। देवगति चतुष्ककी तीन दृद्धि, तीन हानि और अवस्थित वन्धका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। अवक्तव्य वन्धका जघन्य अन्तर साधिक एक नल्य है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेनीस सागर है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग पीनलेश्याषाले जीवोंके समान है।

ह१०. उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंमं पाँच ज्ञानावरण आदि अठारह प्रकृतियोंकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थित वन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उन्कृष्ट अन्तर अन्तमुंहूर्त है। इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणहानिका जघन्य और उन्कृष्ट अन्तर अन्तमुंहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका अन्तरकाल नहीं है। निद्रा, प्रचला, भय जुगुएमा, देवगित, पर्श्वन्द्रिय जाति, वैक्रियिक-शर्रार, तेजसशरीर, कार्मणशर्रार, समचतुरक्षसंस्थान, वैक्रियिक आङ्गापाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगित, त्रसचतुष्क, सुभग, सुम्वर, आदेय, निर्माण और तीर्थ-क्कर प्रकृतिका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। सातावेदनीय और यशःकीर्ति के अवक्तव्य पदका जघन्य और उन्कृष्ट अन्तर अन्तर्मृहूर्त है। शेप पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। आसात्वेदनीय, आठ कपाय, चार नोकषाय, आहारकद्विक और स्थिर आदि पाँचका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। मनुष्यगितपञ्चककी तीन वृद्धि और तीन हानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उन्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उन्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तव्य वन्धका अवन्तर काल नहीं है।

६११. सासादनसम्यग्टिष्ठ जीवोंमे ध्रुवयन्थवाली प्रकृतियोका भङ्ग घेदकसम्यग्टिष्ट जीवोके

वेदगभंगो । सेसाणं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० ज० ए०, उ० अंतो० । अवत्त० जह० एग०, उ० अंतो० । मिच्छ० मदि०भंगो । सण्णि० पंचिदियपजतभंगो ।

ह१२. असण्णीस धुनिगाणं असंखेज्जभागविद्ध-हाणि० जह० एग०, उ० अंतो०। संखेज्जभागविद्ध-हाणि० जह० एग०, उ० अणंतका०। एवं संखेज्जगुणविद्ध-हाणि०। णविर जह० खुद्दा० समयू०। एसं संखेज्जगुडविद्ध-हाणि० अत्थि तेसिं सन्वेसिं पि एवं वेव। अविद्धि० जह० एग०, उ० बे-तिण्णि सम०। चदुआयु०-बेउन्वियछ०-मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० तिरिक्खोधं। तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-णीचा० असंखेजभागविद्ध-हाणि-अविद्ध० जह० एग०, उ० अंतो०। संखेजभागविद्ध-हाणि० णाणावरणभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उ० असंखेजा लोगा। सेस।णं असंखेजभागविद्ध-हाणि-अविद्ध० जह० एग०, उ० अंतो०। संखेजभागविद्ध-हाणी० णाणावरणभंगो। अवत्त० जह० उंतो०।

११३. अहारा० ओघं। णवरि यम्हि अणंतका० तम्हि अगुल० असंखेज० कादन्वो। सेसं ओघं। अणाहार० कम्मइगभंगो। एवं अंतरं समत्तं।

समान हैं। शेष प्रकृतियोंका भन्न मनायोगी जीवोंक समान है। सम्याग्मण्यादृष्टि जीवोंमे ध्रुवबन्धन्वाली प्रकृतियोंका भन्न बेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तमुंहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तमुंहूर्त है। मिण्यादृष्टि जीवोंमें मत्य-बानी जीवोंके समान भन्न है। संज्ञी जीवोंमे पक्षेन्द्रियपर्याप्त जीवोंके समान भन्न है।

६५२. असंज्ञी जीवोंमं घुववन्धवाली प्रकृतियोंकी असंख्यातभागगृद्धि और असंख्यात भागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर मृहते हैं। संख्यात भागगृद्धि, और संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर काल है। इसी प्रकार संख्यातगुणगृद्धि और संख्यातगुणगृद्धि और संख्यातगुणगृद्धि और संख्यातगुणगृद्धि और संख्यातगुणगृद्धि और संख्यातगुणगृद्धि और संख्यातगुणगृद्धि है। जानकी संख्यातगुणगृद्धि और संख्यातगुणगृद्धि और संख्यातगुणगृद्धि अपेर संख्यातगुणगृद्धि और उत्कृष्ट अन्तर दो तीन समय है। चार आयु, वैकियिक छह, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उत्कृष्ट अन्तर दो तीन समय है। चार आयु, वैकियिक छह, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उत्कृष्ट अन्तर दो तीन समय तिर्यक्कोंके समान है। तिर्यक्काति, तिर्यक्कात्यानुपूर्वी और जीचगोत्रकी असंख्यात भागगृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित बन्धका जधन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर मृहति है। संख्यातभागगृद्धि और संख्यातभागगृद्धि और संख्यातभागगृद्धि और संख्यातभागगृद्धि और संख्यातभागगृद्धि और संख्यातभागगृद्धि और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात कोकप्रमाण है। अवक्तव्य वन्धका जधन्य अन्तर असंख्यात भागगृद्धि और संख्यात भागगृद्धि अपेर उत्कृष्ट अन्तर अन्तर पुरु समय है। सेख्यात भागगृद्धि और संख्यात भागगृद्धि अपेर उत्कृष्ट अन्तर अन्तर अन्तर मृत्य क्वान्य अन्तर एक समय है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर क्वान्य अन्तर अन्तर अन्तर क्वान अन्तर अन्वर समान है।

६१३. श्राहारक जीवोंमें श्राघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि जहाँ अनन्तकाल कहा है वहाँ श्रङ्गलका श्रसंख्यातवाँ भाग प्रमाण अन्तर कहना चाहिये। शेप भङ्ग श्रोघके समान है। श्रमाहारक जीवोंका भङ्ग कार्मणकाययांगी जीवोंके समान है। इसप्रकार श्रन्तर काल समाप्त हुआ।

# णाणाजीवेहि भंगविचओ

ह१४. णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा० णवदंसणा० मिच्छ० -सोलसक० भय० दुगुं० -थोरालि० तेजा० क० वण्ण०४ -अगु० -उप० णिमि० - पंचंत० असंखेजभागविड्ड हाणि अविड्ड० वं० णियमा अतिथ। सेसाणि पदाणि भयणिजाणि। तिण्णिआयु० पदा० भयणिजाणि। वेउन्त्रियछ० -आहारदुग-तित्थय० अविड्ड० णियमा अतिथ। सेसपदाणि भयणिजाणि। सेसाणं असंखेजभागविड्डि -हाणि अविड्ड० -अवत्त० णियमा अतिथ। सेसपदाणि भयणिजाणि। एवं ओघभंगो कायजोगि अविड्ड० -अवत्त० णियमा अतिथ। सेसपदाणि भयणिजाणि। एवं ओघभंगो कायजोगि ओरालि० - ओरालि० मि० कम्मइ० णवुंस० -कोधादि० ४ - मदि० -सुद० असंज० - अवक्खुदं० - तिण्णिले० - भवसि० - अन्यतिश्व - भिच्छा० - आहार० - अणाहारग ति। णविर ओरालियमि० कम्मइ० - अणाहार० मिच्छ० अवत्त० देवगदिपंचग० अविड्ड० भयणिजा। सेसाणं अविड्ड० अवत्त० णियमा अतिथ।

९१५, तिरिक्खेसु ओघं। मणुसअपञ्जत्त०-वेउन्वियमि०-आहार०-आहारमि०-अवगद्वे०-सुहुमसंप०-उवसम०-सासण०-सम्मामि० सन्वपदा भयणिजा। एइंदिय-वणफदि-णियोद-बादरपञ्जत्तापञ्ज०-पुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-सन्वसुहुमबादरपुढवि-आउ०-तेउ०-वाउ०-बादरवणफदिपत्तेय० तेसिं अपञ्ज० सन्वपदा णियमा अत्थि।

### नाना जीवोंकी अपेक्षा मङ्गविचय

हि१४. नाना जीवोंकी अपेना भन्न विचयानुगमसे निर्देश दो प्रकारका हे—स्रोध श्रांर आदेश। श्रांघसे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिण्याहव, सांलह कपाय, भय, जुगुप्मा, श्रांदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघान, निर्मण श्रांर पाँच अन्तरायकी असंख्यात भागद्यद्धि, असंख्यात भागद्यानि श्रांर अवस्थित पदके वन्धक जीव नियमसे हैं। श्रेष पद भजनीय हैं। तीन आयुआंके पद भजनीय हैं। वैकियिक छह, आहारकद्विक श्रांर तीर्थद्धर प्रकृतिके अवस्थित पदके बन्धक जीव नियमसे हैं। श्रेष पद भजनीय हैं। श्रेष प्रकृतियोंकी असंख्यात भागद्यद्धि, असंख्यात भागद्यद्धि, असंख्यात भागद्यद्धि, असंख्यात भागद्यद्धि, अवस्थित श्रोघके समान काययोगी, आदारिककाययोगी, आंदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंमकवेशी, कोधादि चार कपायवाले, मत्यज्ञानी, अताज्ञानी, असंयत, अचजुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिण्याद्यि, आहारक श्रोर अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि ओदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि ओदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंके प्रवत्त श्रेष प्रकृतियोंक अवस्थित और देवगित पद्धकके अवस्थित पदके बन्धक जीव भजनीय हैं। शेष प्रकृतियोंक अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव नियममे हैं।

११५. तिर्यञ्जोंमें त्रांघके समान भङ्ग है। मनुष्य अपर्याप्त, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, आहारक काययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, अपगतवंदी, सूत्तममाम्परायसंयत, उपशममम्यग्रष्टि, सासादन सम्यग्रष्टि और सम्यग्मिध्याद्दि जीवोंमे सब पद भजनीय हैं। एकेन्द्रिय, वनस्पतिकायिक, निगोद और इनके बादर पर्याप्त और अपर्याप्त, पृथिवीकायिक, जलकायिक, अभिकायिक, वायुकायिक, सबस्दम, बादर पृथिवीकायिक, वादर जलकायिक, बादर श्रिकायिक, वादर वायुकायिक, बादर

सेसाणं णिरयादि याव सण्णि त्ति असंखेज-संखेजरासीणं आयुगवजाणं अवद्वि० णियमा अत्थि । सेसपदा भयणिजा । आयु० सन्वपदा भयणिजा ।

#### एवं भंगविचयं समचं

# भागाभागो

ह१६. भागाभागाणु० दुवि०-अधि० आदे०। ओघे० पंचणा०-चदुदंस०-चरुसंज०-पंचंत० असंखेजभागवड्डि-हाणिबंघगा सन्वजीवाणं केविडियो भागो १ असखेज०भागो। तिण्णिवड्डि-हाणि-अवत्त०बंध० सन्वजी० अणंतभा०। अविद्वि० सन्वजी० केव० १ असंखे०भा०। पंचदंसणा०-मिच्छ०-बारसक०-भय०-दु०-ओरालि०-तेजहगादिणव० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवद्वि०-अवत्त० णाणावरणभंगो। सादावे० पुरिस०-जसगि०-उच्चा० असंखेजभागवड्डि-हाणि-अवत्त० सन्वजी० केव० १ असंखेजदिभा०। तिण्णिवड्डि-हाणी० सन्व० केव० १ अणंतभाग०। अवद्वि० सन्व० केव० १ असंखेजभा०। असादा०-इत्थि०-णवुंस०-चदुणोक० दोगदि-पंचजादि०-छस्संठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ० दोआणु०-पर०-उस्सा०-अदाउजो०-दोविहा०-तसथावरालिणवयुगल-अजस०-णीचा० सादभंगो। चदु-

वनस्पितकायिक प्रत्येकशरीर श्रीर इनके अपर्याप्त जीवोमें सव पदवाले जीव नियमसे हैं। नरक-गितसे लेकर संज्ञीतक शेप सब श्रसंख्यात श्रीर संख्यात राशिवाली मार्गणाश्रीमें श्रायुकर्मको छोड़कर श्रवस्थित पदवाले जीव नियमसे हैं। शेप पदवाले जीव भजनीय हैं। श्रायुकर्मके सब पदवाले जीव भजनीय हैं।

इस प्रकार भङ्गविचय समाप्त हुन्छा।

#### भागाभाग

ह१६. भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है— श्रांच और ब्रादेश। श्रोंघसे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन श्रोर पाँच अन्तरायकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धि और अवक्तव्य पदके वन्धक जीव सब जीवोंके अनन्तवें भाग प्रमाण हैं। तीन वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्य पदके वन्धक जीव सब जीवोंके अनन्तवें भाग प्रमाण हैं। याच दर्शनावरण, मिश्यात्व, बारह कपाय, भय, जुगुप्सा, औदारिकशरीर और तैजसशरीर आदि नो प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके वन्धक जीवोंका भङ्ग ज्ञानवरणके समान है। सानावदनीय, पुरुपवद, यशःकांति श्रोर उच्चगात्रकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवक्तव्यपदके वन्धक जीव सब जीवोंके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। तीन वृद्धि और तीन हानियोंके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं। अनन्तवें भाग प्रमाण हैं। असंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। असंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। असातावदनीय, खीवद, नपुंसकवेद, चार नाकपाय, दो गति, पाँच जाति, छह संस्थान, औदारिक आङ्गापाङ्ग, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, परघात, उच्छुास, आतप, उद्यात, दो विहायोगित, त्रस और स्थावर आदि नो युगल, अयराध्वात, उच्छुास, आतप, उद्यात, दो विहायोगित, त्रस और स्थावर आदि नो युगल, अयराध-

आयु० अवत्त० सच्च० केव० ? असंखेजिदिमागो । असंखेजिदिमागहाणी सच्च० केव० ? असंखेजि मागा । वेउव्वियछ०-तित्थय तिण्णिविष्ठ-हाणि-अवत्त० सच्च० केव० ? असंखेजिदिमागो । अविष्ठ० सच्च० केव० ? असंखेजि मागा । आहारदुगं तिण्णिविष्ठे हा०-अवत्त० सच्च० केव० ? संखेजिमागो । अविष्ठ० सच्च० केव० ? संखेजिमागो । एवं तिरिक्खोघं कायजोगि—ओरालि०—ओरालियिम०-णवुं स०-कोधादि०४-मिद०-सुद०-असंज०-अचक्खुदं०-तिण्णिले०-भविस०-अब्भविस०-मिच्छा०-आहारग ति एदेसि ओधेण साधेद्ण अप्पप्पणो पगदी णाद्ण काद्व्यं । एसि असंखेजिजीविगा तेसि ओधे देवगदि-भंगो । ए संखेजिजीविगा ते आहारसरीरमंगो । ए अणंतजीविगा ते असादमंगो । णविर एइंदिय-वणप्कादि-णियोदाणं धुविगाणं असंखे० भागविष्ठ-हाणी केव० ? असंखेजिदिभागो । अविष्ठ० असंखेजा भागा । सेसाणं एगविष्ठ-हाणि-अवत्त० सच्च० केव० ? असंखेजिदिभागो । अविष्ठ० सच्च० केव० ? असंखेजा भागा ।

६१७. कम्मइग० परियत्तमणियाणि अवत्त० सब्व० केव० १ असंखेज्जिदिभागो । अवद्वि० सब्व० केव० १ असंखेज्जा भागा । एवं अणाहारा० ।

कीर्ति स्रोर नीचगोत्रका भंग सातावेदनीयके समान है। चार स्रायुत्रोके स्रवक्तव्यपदके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यात भागहानिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण है ? असंख्यात बहुभाग प्रमाण है। वैक्रियिक छह श्रीर तीर्थंकर प्रकृतिकी तीन बृद्धि. तीन हानि श्रीर श्रवक्तव्यपदंके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं १ ऋसंख्यातवें भागप्रमाण हैं। ऋवस्थितपदके बन्धक जीय सब जीवोकं कितने भाग प्रमाण हैं ? ऋसंख्यात बहभाग प्रमाण हैं । ऋाहारकद्विककी तीन वृद्धि, तीन हानि ऋौर श्रवक्तव्य-पद्के बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यातवें भाग प्रमाण हैं । अवस्थितपदके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण है ? संख्यात बहुभाग प्रमाण है । इसी प्रकार सामान्य तिर्येख्व, काययोगी, स्रोदारिक काययोगी, स्रोदारिक मिन्नकाययोगी, नप्सकनेदी, क्रोधादि चार कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रताज्ञानी, श्रमंयत, अचजुःदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिध्यादृष्टि और आहारक इनके आपसे साधकर अपनी अपनी प्रकृतियोको जानकर भागाभाग कहना चाहिये । जिन मार्गणात्र्योंका प्रमाण त्र्यसंख्यात है उनमे त्र्यायके त्र्यनुसार देवगतिकं त्र्यनुसार भंग जानना चाहिये । तथा जिन मार्गणाओंका प्रमाण संख्यात है उनका श्रोघक श्रमुसार श्राहारक शरीरके समान भंग जानना चाहिये। त्रोर जिन मार्गणात्रोंका प्रमाण स्रनन्त है उनका स्रसाता-वेदनीयके समान भंग जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय, वनस्पतिकायिक आँर निगोद जीवोंमें भ्रवबन्धवाली प्रकृतियोंकी असंख्यात भागवृद्धि और असंख्यात भागहानिके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं । अवस्थितपदके बन्धक जीव असंख्यात वह भाग प्रमाण हैं। द्येप प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि और अवक्तव्यपदके बन्धक जीव सब जीबोंक कितने भाग प्रमाण है ? असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं। अवस्थितपदके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण है ? असंख्यात बहुभाग प्रमाण है ।

६१७. कार्मणकाययोगी जीवोंमे परिवर्तमान प्रकृतियोक अवक्तव्य रदेक वन्धक जीव सब, जीवोंक कितने भाग प्रमाण हैं १ असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं । अवस्थितपदंक वन्धक जीव सब जीवोंक कितने भाग प्रमाण हैं १ असंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं । इसी प्रकार अनाहारक जीवोंक जानना चाहिये ।

हरदः अवगद्वे० पंचणा०-चदुदंस० चदुसंज०-पंचंतरा० संखेज्जभागविष्टु—हाणी संखेजजगुणविष्टु हाणि-अवत्त० सन्व० केव० १ संखेजजिदभागो । अविष्टि० सन्वजी० केव० १ संखेजजिदभागो । अविष्टि० सन्वजी० केव० १ संखेजजा भागा । सादावे०-जसिग०-उचा० तिण्णिविष्टु-हाणि-अवत्त० संखेजजिद्मागो । अविष्टि० संखेजजा भागा । सुहुमसंप० सन्वाणं संखेजजभागविष्टु-हाणी संखेजजिदमागो । अविष्टि० संखेजजा भागा ।

#### एवं भागाभागं समत्तं

# परिमाणं

ह१६. परिमाणाणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा० चदुदंसणा०-चदुभंज०-पंचंत० असंखेज्जभागवड्डि-हाणि-अर्वाह० केविडया? अणंता। बेविड्डि-हाणी केव०? असंखेज्जा। असंखेज्जसुणवड्डि हाणि-अवत्त० केव०? संखेज्जा। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुवंधि०४-अपचक्खाणा०४-ओरालिय० णाणाव०भंगो। णवरि अवत्त० असंखेज्जा। णिहा-पचला-पचक्खाणा०४-भय०-दुगुं०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि० असंखेज्जभागवड्डि-हाणि-अवड्डि० अणंता। वेविड्डि-हाणि केव०? असंखेज्जा। अवत्त० संखेज्जा। तिण्णिआयु० दोपदा० असंखेज्जा। तिरिक्खायु० दोपदा अणंता।

६१८. श्रपगतवेदी जीवोंमें पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन श्रोर पाँच श्रम्तरायकी संख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागवृद्धि, संख्यात श्रीर श्रवक्तव्यपदके वन्यक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यात वहुभाग प्रमाण हैं । श्रवस्थितपदके वन्यक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यात वहुभाग प्रमाण हैं । सातावेदनीय, यशःकीर्ति श्रीर उच्चगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और श्रवक्तव्यपदके वन्यक जीव संख्यातवें भाग प्रमाण हैं । श्रवस्थितपदके वन्यक जीव संख्यात वहुभाग प्रमाण हैं । सूद्दमसाम्परायसंयत जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी संख्यात भागवृद्धि श्रीर संख्यात वहुभाग प्रमाण हैं ।

इस प्रकार भागाभाग समाप्त हुन्त्रा ।

#### परिमाण

६१६. परिमाणानुगमकी ऋषेदा निर्देश दो प्रकारका है—ऋं घ और ऋादेश। ऋं घसे पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन ऋौर पाँच ऋन्तरायकी ऋसंख्यात भागवृद्धि, ऋसंख्यात भागवृद्धि, ऋसंख्यात भागवृद्धि, ऋसंख्यात ऋगिर ऋवस्थितपदके बन्धक जीव कितने हैं ? ऋसंख्यात गुणवृद्धि, ऋपत्यात्यात अनन्तानुबन्धी चार, ऋप्रत्याख्यानावरण चार और ऋादारिक शरीरका भंग ज्ञानावरणके समान है। इतनी विशेषता है कि ऋवक्तव्यपदके बन्धक जीव ऋसंख्यात हैं। निद्रा, प्रचला, प्रत्याख्यानावरण चार, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, ऋगुरुलघु चतुष्क, उपघात और निर्माणकी असंख्यात भागवृद्धि, ऋसंख्यात भागहानि और ऋवस्थितपदके बन्धक जीव ऋनन्त हैं। दो वृद्धि ऋौर दो हानि पदोंके बन्धक जीव कितने हैं ? ऋसंख्यात हैं। अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यात हैं। तीन

वेउन्वियछकं तिण्णिश्रिह्न-हाणि-अविष्ठ ०-अवत्त केव ० १ असंखेज्जा । आहारदुगं तिण्णिविष्ठ-हाणि-अविष्ठ ० अवत् ० केव ० १ संखेजा । तित्थय तिण्णिविष्ठ - हाणि-अविष्ठ ० असंखेजा । अवत्त ० संखेजा । सेसाणं असंखेजभागविष्ठ - हाणि-अविष्ठ ० केव ० १ अणंता । सेसपदा केव ० १ असंखेजा । एवं ओघभंगो तिरिक्खोधं कायजोगि-ओरालि ०-ओरालि - यमि ० — णवुं स० - कोधादि ० ४ — मदि ० — सुद ० — असंज ० — अचक्खुदं ० — तिण्णिले ० — भविस ० अब्भविस ० - मिच्छादि ० - असिण्ण — आहारग ति । णविर ओरालियमि ० देवगदिपंचग ० तिण्णिविष्ठ - हा० - अविष्ठ ० केव ० १ संखेजा । सेसाणं पि किंचि विसेसो णाद्व्यो ।

- ६२०. णिरएसु मणुसायु० दोपदा नित्थय० अवत्त० संखेज्जा । सेसाणं सन्वपदा असंखेज्जा । एवं सन्वणेरइय-देवाणं वेउवि०। णवरि सन्बहे संखेजा ।
- ६२१. सन्वर्षचिदियतिरिक्ख० सन्वपगदीणं सन्वपदा असंखेजा । एवं मणुसअपज्जत्त-सन्वविगलिदि०-सन्वपुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-वादरवणप्फदिपत्ते०-पंचिदिय-तसअपञ्जत्त-वेउन्वियमि०-विभंग०।

६२२. मणुसेसु पंचणा० णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-द०-तेजा० क०-

श्रायुत्रोंके दो परोंके वन्धक जीव असंख्यात हैं। तिर्यक्रायुके दो परोंके बन्धक जीव अनन्त हैं। विक्रियक छहकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित खोर अवक्तव्यपर्के बन्धक जीव कितने हैं १ असंख्यात हैं। आहारकद्विककी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपर्के बन्धक जीव कितने हैं १ संख्यात हैं। तीर्थकरकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपर्कं बन्धक जीव असंख्यात हैं। अवक्तव्यपर्के बन्धक जीव संख्यात हैं। शेप प्रकृतियोंकी असंख्यात भागवृद्धि, श्रम्ंख्यात भागहानि और अवस्थितपर्कं बन्धक जीव कितने हैं १ अनन्त हैं। शेप परोंके बन्धक जीव कितने हैं १ अस्वक्त काययोगी, श्रांदारि

वाययोगी, श्रोदारिकमिश्रकाययोगी, नपुंसकंवरी, क्रांधादि चार कपायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुनाज्ञानी, श्रुमां श्रुमा श्रुमां श्रुमा श्रुमां श्रुमा श्रु

जाननी चाहिये।

६२०. नारिकयोंमें मनुष्यायुके दो पदोंके और तीर्थक्कर प्रकृतिक अवक्तव्य पदके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेप प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। इसी प्रकार सब नारकी, देव, श्रीर वैक्रियिककाययोगी जीवोंक जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि सर्वार्थमिद्धिमें सब पहाले सब पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं।

हिर. सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमं सब प्रकृतियोंकं सब पदोकं बन्धक जीव अमंख्यान हैं। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, सब विकलेन्द्रिय, सब पृथवी कायिक, मब जलकायिक, सब अप्रिकायिक, सब वायुकायिक, बाद्र बनस्पित काथिक प्रत्येवशरीर, पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त, बम अप-याप्त, वैकियिकमिश्रकाययोगी और विभङ्गज्ञानी जीवोंमें जानना चाहिये।

६२२. मनुष्योंमें पाँच ज्ञानावरण नी दर्शनावरण, मिथ्यात्व, मोलह कपाय, भय, जुगुष्मा, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, श्रगुलघु, उपघात, निर्माण श्रीर पाँच श्रन्तरायकी तीन- वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवड्ठि० केव० १ असंखेआ। सेसपदा संखेज्जा। दोश्रायु०-वेउन्त्रियछ०-आहारदुग-तित्थय० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवड्ठि० अवत्त० संखेज्जा। सेसाणं सन्त्रपदा असंखेज्जा। णविर साद०-जस०-उचा० असंखेजगु-णवड्ढि-हाणी केव० १ संखेज्जा। मणुसपज्ज०-मणुसिणीसु सन्त्रपदा संखेजा। एवं एस मंगो आहार०-आहारमि०-अरगदवे०-मणपज्ज०-संजद-सामाइ०-छेदो०-परिहार०-सुहुम०।

६२३. सन्वएइंदिय वणप्फदि-णियोदेसु मणुसायुगस्स दोपदा असंखेज्जा । सेसाणं सन्वपदा अणंता ।

६२४. पंचिदिय-तस०२ पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० असंखेजगुणविद्धिहाणी-अवत्त० केव० १ संखेज्जा । सेसपदा असंखेजा । णिदा-पचला-भय-दु०-पचक्खाणा०४-तेजइगादिणव-तित्थय० अवत्त० केव० १ संखेज्जा । सेसपदा असंखेज्जा ।
आहारदुगं ओघं । सेसाणं सन्वपगदीणं सन्वपदा केव० १ असंखेज्जा । एवं पंचमण०-पंचवचि०-इत्थि०-पुरिस०-चक्खुदं०-सण्णि ति । णवरि इत्थि० तित्थय०
सन्वपदा संखेजजा० ।

९२५. कम्मइग०-अणाहार० देवगदिपंचगस्स अवट्ठि० केवडिया १ संखेज्जा । सेसाणि अवट्ठि०-अवत्त० केव० १ अणंता । मिच्छत्त० अवत्त० असंखेजा ।

वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके वन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। रोप पदोंके वन्धक जीव संख्यात हैं। दो आयु, वैक्रियिक छह, आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित, और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव संख्यात हैं। रोप प्रकृतियोंक सब पदोंके वन्धक जीव असंख्यात हैं। इतनी विशेषता है कि सातावदनीय, यशाकीर्ति और उच्चगोत्रकी असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानिक वन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात है। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यित्यांमें सब पदोंके वन्धक जीव संख्यात हैं। इसी प्रकार यह मङ्ग आहारककाययोगी, आहारक मिश्रकाययोगी, अपगतवदी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापना संयत, परिहारविशुद्धिसंयत और सूद्दमसाम्परायिक संयत जीवोंके जानना चाहियं।

हर्वे. सब एकेन्द्रिय, वनस्पतिकायिक और निगाद जीवोंमें मनुष्यायुके दो पदोंके वन्धक जीव असंख्यात हैं। शेप प्रकृतियोंके सब पदोंके वन्धक जीव अनन्त हैं।

६२४. पक्च न्द्रियद्विक और त्रसद्विक जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्य पदके वन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । शेप पदोंके वन्धक जीव असंख्यात हैं । निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा, प्रत्याख्यानावरण चार, तैजसशरीरादि नौ और तीर्धङ्कर प्रकृतिके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । शेप पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं । शाहारकिष्ठिकका भद्ग आंघके समान हैं । शेप प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । इसी प्रकार पाँच मनायोगी, पाँच वचनयोगी, स्त्रीवदी, पुरुपवदी, चज्ञःदर्शनी और संज्ञी जावोंके जानना चाहिये ! इतनी विशेषता हैं कि स्त्रीवदी जीवोंमें तीर्थङ्कर प्रकृतिके सब पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं ।

६२५. कार्मण काययोगी और अनाहारक जीवोंमें देवगति पञ्चकके अवस्थित पदके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंके अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। मिध्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव अप्रसंख्यात है।

९२६. आभि०-सुद०-ओधि० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पुग्सि०-उच्चा० पंचंत० तिण्णिनड्डि-हाणि-अवडि० असंखेज्जा। असंखेज्जगुणबङ्ढि-हाणि-अवत्त० केव० ? संखेजा। णिद्दा-पचला-पचक्खाणा०४-भय-दु०-देवगदि-पंचिदि०-वेउच्चि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउच्चि० अंगो०--वण्ण०४-देवाणु०--अगु०४-पसत्थ०-तस०४--सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-तित्थय० तिण्णिनड्डि-हाणि-अवडि० असंखेज्जा। अवत्त० संखेज्जा। सादावे०-जस० तिण्णिनड्डि-हाणि-अवडि०-अवत्त० असंखेज्जा। असंखेज्जगुणवड्डि-हाणी संखेजा। असादा०-अपचक्खाणा०४-चदुणोक०-मणुसग०-ओरालि०-ओरालि०अंगो० वजरिस०-मणुसाणु०-थिराथिर-सुभासुभ-अजस० तिण्णि-बड्डिहाणि-अवडि०-अवत्त० असंखेज्जा। मणुसाणु०-थिराथिर-सुभासुभ-अजस० तिण्णि-बड्डिहाणि-अवडि०-अवत्त० असंखेज्जा। मणुसायु० दोपदा आहारदुगं सन्वपदा संखेज्जा। देवायु० दोपदा असंखेज्जा। एवं ओधिदंस०-सम्मादि०। संजदासंजदे तित्थय० सन्वपदा संखेज्जा। सेसा असंखेजा।

६२७. तेऊए पचक्खाणा०४-देवगदि-तित्थय० अवत्त० संखन्जा । सेसा असंखन्जा । मणुसायु० दोपदा० असंखन्जा । आहारदुगं ओघं । सेसाणं सन्वपदा असंखन्जा । एवं पम्माए वि । सुकाए वि असादवे०-थीणगिद्धि०३-मिन्छ०-अहुक०- छण्णोक०-छस्संठा०-छस्संघ०-दोविहा०-थिरादिपंचयुगल-अजस०-णीचा० तिण्णिवड्डि-

**८२६. ऋाभिनिवाधिक ज्ञानी, श्रुतज्ञानी ऋौर** अवधिज्ञानी जीवोमे पाच ज्ञानावरण, चार दर्शनवरण, चार संज्वलन, पुरुपवेद, उद्घराात्र स्रोर पाँच स्रन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि स्रोर अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यात हैं। असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि आर अवक्तव्य पद्के बन्धक जीव कितने हैं १ संख्यात हैं । निद्रा, प्रचला, प्रत्याख्यानावरण चार, भय, जुगुष्मा, देव-गति, पंद्र्वे न्द्रिय जाति, वैकियिकशरीर, तेजशशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैकियिक त्राङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, त्रगुरुतघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगित, त्रमचतुष्क, सुभग, गुम्बर आदेय, निर्माण और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित परंक वन्धक जीव ऋसंख्यात हैं। ऋवक्तज्य पदके बन्धक जीव संख्यात हैं। मातावेदनीय और यशःकीर्तिकी तीन बुद्धि, तीन हानि, अवस्थित ऋौर अवक्तव्य पदके बन्धक जीव श्रमंत्यात है । श्रमंख्यातगुणवृद्धि त्रीर असंख्यातगुणहानिके बन्धक जीव संख्यात हैं। ऋमातावेदनीय, अप्रत्याख्यानावरण चार, चार नोकपाय, मनुष्यगित, श्रोदारिकशरीर, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, वश्रवृपमनाराच महनन, मनुष्य-गत्यानुपूर्वी, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ और अयशःकीर्तिकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित, श्रीर अवक्तव्य पदके बन्धक जीव असंख्यात हैं। मनुष्यायुके दो पदो श्रीर आहारकद्विकके सब पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं। देवायुके दो पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। इसी प्रकार अवधिदर्शनी त्रौर सम्यग्द्रष्टि जीवोकं जानना चाहिये। संयतासंयत जीवोमें तीर्थद्वर प्रकृतिक सव पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेप प्रकृतियोंके सब पदोके बन्धक जीव ऋसंख्यात हैं।

हिए. पीत लेश्यावाले जीवोमे प्रत्यास्यानावरण चार, देवगति श्रोर तीर्थङ्कर प्रकृतिक अव-कृष्य पदके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेप पदोंके बन्धक जीव असंस्थात हैं। मनुष्यायुक दोनों ही पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। आहारकद्विकका भङ्ग श्रोचक समान है। शेप प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंमें भी जानना चाहिये। युक्तलेश्यावाले जीवोंमें असातावेदतीय, स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व, आठ कपाय, छह नो कपाय, छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगित, स्थिर आदि पाँच युगल, श्रायशार्कात, श्रीर नीच- हाणि-अवद्वि०-अवत्त० श्रसंखेज्जा । सादावे०-जसगि०-उच्चा० ओधिमंगो । दोआयु०-आहारदुग० मणुसिमंगो । सेसाणं असंखेज्जगुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० संखेज्जा । सेसपदा असंखेज्जा ।

६२८. खइग० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज-पुरिस-उच्चा०-पंचंत-सादादिबारसओधि-मंगो । दोआयु०-आहारदुगं सन्त्रपदा संखेज्जा । सेसाणं अवत्त० संखेज्जा । सेसपदा असंखेज्जा । वेदगे सादादिबारस-अपचक्खाणा०४-मणुसगदिपंचग० तिण्णिवड्डि हाणि-अवड्डि०-अबत्त० असंखेज्जा । सेसाणं अवत्त० संखेज्जा । सेसाणं अवत्त० संखेज्जा । उत्तरम० पंचणा चदुदंस-चदुसंज-पुरिस-उच्चा० ओधिमंगो । सादावे०-जसिग० असंखेज्जगुणवड्डि-हाणी-संखेज्जा । सेसं असंखेज्जा । असादादिदस०-अपचक्खाणा०४ सन्त्रपदा असंखेज्जा । आहारदुग-तित्थय० सन्त्रपदा संखेज्जा । सेसाणं पगदीणं अवत्त० संखेज्जा । सेसं० असंखेज्जा । सामामि०, सन्वेसिं सन्त्रपदा असंखेज्जा । सम्मामि०, सन्वेसिं सन्त्रपदा असंखेज्जा ।

### एवं परिमाणं समत्तं।

गोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तत्र्य पद्के वन्धक जीव असंख्यात हैं। सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका भङ्ग अविधिज्ञानी जीवोंक समान है। दो आयु और आहारकद्विकका भङ्ग मनुष्यनियोंक समान है। शेप प्रकृतियोंकी असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यात हैं।

हर्द्र. चायिक संन्यरहिष्ट जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुष-वेद, उच्चगांत्र पाँच अन्तराय श्रोर साता श्रादिक पाँच प्रकृतियोंका भङ्ग अविधिज्ञानी जीवोंके समान हैं। दो श्रायु श्रोर श्राहारकिष्ठकं सन परोंके वन्धक जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंके श्रषकत्यपदके वन्धक जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंके श्रषकत्यपदके वन्धक जीव संख्यात हैं। वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंमें साता आदिक वारह, अप्रत्याख्यानावरण चार श्रोर मनुष्यगति पश्रक्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि, श्रविध्यत श्रोर श्रवक्तव्यपदके वन्धक जीव श्रसंख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंके श्रवक्तव्यपदके वन्धक जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंके श्रवक्तव्यपदके वन्धक जीव श्रसंख्यात हैं। उपशामसम्यग्दृष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, पुरुपवेद श्रोर उच्चगात्रका भङ्ग श्रवधिज्ञानी जीवोंके समान है। सातावेदनीय श्रोर यशःकीतिकी असंख्यात गुणवृद्धि श्रोर असंख्यात गुणहानिके वन्धक जीव संख्यात हैं। शेष पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। श्राहारकिष्ठक श्रोर तीर्थकर प्रकृतिके सब पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं। शाहारकिष्ठक श्रोर तीर्थकर प्रकृतिके सब पदोंके बन्धक जीव श्रसंख्यात हैं। सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं। सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं। शाहारकिष्ठिक हो। सम्यग्निध्यादिष्ठ जीवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। सम्यग्निध्यादिष्ठ जीवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं।

# खेत्तं

हर९. खेत्ताणुगमेण दुवि०-श्रोघे० आदे०। ओघे० पंचणा० चदुदंसणा० चदुसंज-पंचंत० असंखेज्ज-मागविद्व-हाणि-अविद्वि० केविड खेते ? सव्वलोगे। सेसपदा लोगस्स असंखेज्जिदिभागे। पंचदंस०-मिच्छ० बारसक०-भय-दुगुं०-तेज्ञइगादिणव०णाणावरणभंगो। सादावे०-पुरिस०-जस० उचा० असंखेज्जभागविद्व-हाणि अविद्वि०-अवत्त० सव्वलोगे। सेसपदा लोगस्स असंखेज्जिदिभागे। तिण्णिआयु०-बेउव्वियछ०-आहारदुग-तित्थय० सव्वपदा लोगस्स असंखे०। तिरिक्खायु० दोपदा केविड खेते ? सव्वलोगे। सेसाणं असंखेज्जभागविद्व-हाणि-अविद्व०-अवत्त० सव्वलोगे। दोविद्व-हाणी लोगस्स असंखे०। एवं ओघभंगो तिरिक्खोघो कायजोगि-ओरालियका०-ओरालियिम०-णवंस०-कोघादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खुदं०-तिण्णिले०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छा०-असण्णि-आहा-रग ति। तं पि खेत्तं ओघेण साधेदव्वं।

६३०. एइंदिय-सुद्रुमएइंदिय-पञ्जत्तापञ्जत्ता पुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ० तेसिं सुद्रुम-पञ्जत्त-अपञ्जत्त-वणप्फदि-णियोद० तेसिं च सुद्रुम पञ्जत्तावज्जताणं मणुसायु० दोपदा लोगस्स असंखे० । सेसाणं सन्वपगदीणं सन्वपदा सन्वलोगे । सन्वबादरेइंदिए

#### क्षेत्र

हरह. क्षेत्रानुगमकी अपेचा निर्देश दो प्रकारको हं—आंघ श्रीर श्रादेश। श्रोघसे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन श्रीर पाँच श्रान्तरायकी श्रमंख्यान भागवृद्धि, श्रमंख्यान भागहानि और श्रयस्थितपदके वन्धक जीवोंका कितना चेत्र हें ? मव लोक क्षेत्र हें। शेप पदोके वन्धक जीवोंका लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्र हें। पांच दर्शनावरण, मिध्यात्व, वारह कपाय, भय, जुगुत्सा और तेजसङ्गरीरादि नो प्रकृतियोंका भंग ज्ञानावरण समान हैं। सातावेदनीय, पुरुपवेद, यशःकीनि और उच्चगोत्रकी श्रमंख्यात भागवृद्धि, श्रमंख्यात भागहानि, श्रवस्थित और श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका सव लोक चेत्र हें। शेप पदोके बन्धक जीवोंका लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्र हें। तीन श्रायु, वैकियक छह, श्राहारकिक श्रोर नीथकर प्रकृतिके सब पदोंका लोकके श्रमंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्र हें। तीन श्रायु, वैकियक छह, श्राहारकिक श्रोर नीथकर प्रकृतिके सब पदोंका लोकके श्रमंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्र हें। दो वृद्धि श्रोर दो हानिके वन्धक जीवोंका चेत्र हैं। सब लोक क्षेत्र हें। शेप प्रकृतियोंकी श्रमंख्यात भागवृद्धि, श्रमंख्यात भागहानि, श्रयस्थित और श्रवक्तव्यपदके वन्धक जीवोंका सब लोक चेत्र हें। दो वृद्धि श्रोर दो हानिके वन्धक जीवोंका लोकके श्रमंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्र हें। इसी प्रकार श्रोयंक समान सामान्य तिर्यञ्ज, काययोगी, श्रौदारिक काययोगी, श्रौदारिक मिश्रकाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कपायवाले, मन्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, श्रसंयत, श्रचचुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, श्रभव्य, मिध्यादृष्टि, श्रसंज्ञी और श्राहारक जीवोंके जानना चाहिये। यह चेत्र भी श्रोष्टक समान साध लेना चाहिये।

६३०. एकेन्द्रिय, सूच्म एकेन्द्रिय, उनके पर्याप्त और अपर्याप्त पृथिवीकायिक, जलकायिक, अमिकायिक, वायुकायिक तथा इनके सूच्म तथा पर्याप्त और अपर्याप्त, वनस्पतिकायिक, निगोद तथा इनके सूच्म तथा पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोम मनुष्यायुके दो पदोंका केत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। शेष सब प्रकृतियोंके सब पदोंका केत्र सब लोक है। सब बादर एकेन्द्रिय जीवोंमे

धुनिगाणं असंखेजजभागवड्डि-हाणि अवट्ठि० सन्वलो० । सादादिदस० एक्कवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० सन्वलो० । इत्थि०-पुरिस०-चदुजादि-पंचसंठा-ओरालि०अंगो० छस्संघ०-आदाउज्जो०-दोविहा० तस-बादर-सुभग-दोसर० आदेज्ज०-जसगि० एक्कवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० केविह खेते १ लोग० संखेज्ज० । णवुंस०-एइंदि०-हुंड०-पर०-उस्सा-०थावर-सुहुम-पज्जत्त-अपज्जत्त-पत्तेय०-साधार०-दूभग०-अणादे०-अजस० एक-विह्डि-हाणि अवट्ठि० सन्वलो० । अवत्त० लोग० संखेज्ज० । तिरिक्खायु० दोपदा लोग० संखेज्ज० । मणुसायु० दोपदा ओघं । तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु० णीचा० एक्ववड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० लोग० असंखे० । मणुसगहदुग०-उचा० एकवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० लोग० असंखे० । मणुसगहदुग०-उचा० एकवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० लो० असंखे० । एवं बादरवाउ० बादरवाउ० अपज्ज० । णगरि तिरिक्खगइतिगं धुवं काद्व्यं ।

९३१. बादरपुढवि०-आउ०- तेउ० तेसिं च अपज्ज० धुविगाणं एक्कविहु-हाणि-अविद्वि०-सादादिदसण्णं एक्कविहु-हाणि-अविद्वि०-अवत्त० सच्वलो०। णवुंस०-तिरिक्खग०- एहंदि०-हुंड०-तिरिक्खाणु०-पर०-उस्सा०-थावर-सहुम पज्जतापज्ज०-पत्तेय०-साधार०-द्मग०-अणादे०-अजस०-णीचा० एकविहु-हाणि-अविद्वि० सच्वलो०। अवत्त० लो०

ध्रववन्धवाली प्रकृतियोंकी ऋसंख्यात भागवृद्धि, श्रसंख्यात भागहानि श्रीर अवस्थितपदंके वन्धक जीवोंका सब लोक त्तेत्र है। साता त्र्यादि दस प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि, त्र्रावस्थित और श्चवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका सब लोक देत्र है। स्त्रीवंद, पुरुपवंद, चार जाति, पाँच संस्थान, भीदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, आतप, उद्योत, दो विहायोगित, त्रस, वादर, सुभा, दो स्वर, त्र्यादेय स्त्रीर यशःकीर्तिकी एक वृद्धि, एक हानि, स्रवस्थित और स्रवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका कितना चेत्र है ? लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण चेत्र है। नपुंसकत्रेद, एकेन्द्रिय जाति, हुण्ड-संस्थान, परचात, उच्छुास, स्थावर, सूद्रम, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय श्रीर श्रायशःकीर्तिका एक वृद्धि, एक हानि श्रीर श्रावस्थितपदके बन्धक जीवोंका सब लोक त्रेत्र है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण देत्र है। तिर्यक्रायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंका लोककं संख्यातवें भाग प्रमाण तंत्र है। मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंका स्रोघके समान चेत्र है। तिर्यद्मगति, तिर्यक्मगत्यानुपूर्वी स्रोर नीचगात्रकी एक वृद्धि, एक हानि, अवस्थित और श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका लांकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण क्रेत्र है। मनुष्य-गतिद्विक, श्रीर उच्चगात्रकी एक वृद्धि, एक हानि, अवस्थित श्रीर अवक्तव्यपद्के बन्धक जीवोंका लोकके श्रमंख्यातवें भाग प्रमाण त्तेत्र है। इसी प्रकार वादर वायुकायिक और वादर वायुकायिक अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनमें तिर्येक्खगति त्रिकको ध्रव करना चाहिये।

£३१. बादर पृथिवीकायिक, बादर जलकायिक और वादर अग्निकायिक तथा इनके अपर्याप्तक जीवोंमें अववन्धवाली प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंका तथा साता आदि दस प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका सब लोक त्रेत्र है। नपुंसकवद, तियंक्र्याति, एकेन्द्रियजाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यक्र्यात्यानुपूर्वी, परघात उच्छास, स्थावर, सूदम, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंका सब लोक त्रेत्र है। अवक्तव्य

असंखे । सेसाणं सञ्वपगदीणं सञ्वपवदा लो असंखे । एवं ।बादरवणफदि-णियोद-पज्जत्त-अपज्जत्त बादरवणफदिपत्तेय ० तेसिं अपज्जत्त ।

९३२. कम्मइ० अणाहारगेसु देवगइपंचगरस सम्बपदा लो असं०। सेसाणं सम्ब-पगदीणं सन्वपदा सन्वलो०। सेसाणं णिरयादि याव सण्णि ति संखेज्ज-असंखेज्ज-जीविगाणं सन्वासिं पगदीणं सन्वपदा लोगस्स असंखेज्ज०।

### एवं खेत्तं समत्तं।

# फोसणं

६३३. फोससाणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे०।ओघे० पंचणा०-चदुदंसणा-चदुसंज०-पंचंत० असंखेजभागवड्डि-हाणि अवद्वि०बंधगेहि केविडयं खेत्तं फोसिदं १ सव्बलो०। बेविड्डि-हाणि० लोग० असंखे० अहचो० सव्वलोगो वा। असंखेजगुणवड्डि-हाणि-अवत० लो० असंखे०। थीणगिद्धि०३—अणंताणुबंधि०४ अवत्त० अवहचोहस०। सेसपदा णाणावरणभंगो। णिद्दा-पचला-पचक्खाणा०४—भय०-दु० तेजहगादिणव० अवत्त० लोग० असंखेज्ज०। सेसपदा णणावरणभंगो। सादावे० अवत्त० सव्वलो०। सेसपदा णाणा-

पदंक वन्धक जावोंका लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण त्रंत्र है। शेष सब प्रकृतियांके मब पदोकं वन्धक जीवोंका लोकके ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण त्रंत्र है। इसी प्रकार बादर वनस्पतिकायिक, निगाद आर इनके पर्याप्त, अपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर और इनके अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये।

६३२. कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंमें देवगित पक्कके सब पदोक बन्धक जीवोंका त्रेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। शेप सब प्रकृतियोंके मब पदोके बन्धक जीवोंका चेत्र मब लोक है। शेप नरकगितसे लेकर संज्ञी मार्गणातक संख्यात और असंख्यात जीव राशि-वाली मार्गणाओं से सब प्रकृतियोंके सब पदोंक बन्धक जीवोंका त्रेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है।

#### इसप्रकार चेत्र समाप्त हुआ। स्पर्धान

हिन्दी स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—स्रोध स्रीर स्रादेश। स्रोध से पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन स्रीर पाँच अन्तरायकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यातभाग हानि स्रीर अवस्थित पदके वन्धक जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्शन किया है ? मव लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है ! दो वृद्धि स्रीर दो हानियोंके वन्धक जीवोंने लोकके अमंख्यातवंभाग प्रमाण, कुछ काम आठवटे चौदह राजु श्रीर सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गिणवृद्धि, असंख्यात गिणवृद्धि, असंख्यात गिणवृद्धि, अपेक स्था है । क्षेप पद्धि अस्वक्ता पदके वन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेप पद्धि वन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेप पद्धि वन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेप पद्धिका भङ्ग झानावरणके समान है । सातावेदनीयके अवक्तव्य पदके वन्धक जीवोंने

वरणभंगो । असादादिदस० अवत्त० सन्वलो० । सेसं णाणावरणभंगो । मिन्छ० अवत्त० अट्ट-बारह० । सेसं णाणावरणभंगो । अपचक्खाणा०४ अवत्त० छचोह० । सेसाणं णाणा-वरणभंगो । इत्थिवे० पंचिदि० पंचसंठा० – ओरालि० अंगो० - छस्सं० – दोविहा० - तस-सुभग-दोसर-आदेय० असंखेज्जभागविष्ट-हाणि अविद्धि० - अवत्त० सन्वलो० । दोविष्ट्ट-हाणी० लो० असंखे० अट्ट-बारहचो० । पुरिसवे० दोविष्ट्वि-हाणी इत्थिवेदभंगो । सेसपदा सादभंगो । णवुंस० - तिरिक्खग० - एइंदि० - हुंड० - तिरिक्खाणु० - पर० - उस्सा० - थावर - पज्जत्त - पत्ते० दूम० - अणादे० पेणीचा० एकविष्टि-हाणि - अविद्धि० - अवत्त० । स्वतिष्टिक्खाणु० वेषदा सन्वलो० । मणुसायु० सम्वलो० । णिरय-देवायु० दोपदा खेत्त० । तिरिक्खायु० दोपदा सन्वलो० । मणुसायु० दोपदा अट्टचोह० सन्वलो० । णिरय-देवायु० दोपदा खेत० । तिरिक्खायु० दोपदा सन्वलो० । मणुसायु० दोपदा अट्टचोह० सन्वलो० । मणुसायु० वोषदा अट्टचोह० सन्वलो० । मणुसायु० - आदाव० एकविष्टि - हाणि - अविद्धि० - अवत्त० सन्वलो० । दोविष्टि-हाणि० - अट्टचोह० । बेहंदि० - तेहंदि० - चदुरिंदि० दोविष्टि-हाण लोग०

सब लोक त्रेत्रका स्पर्शनिकया है। शेप पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। असातावेदनीय आदि दस प्रकृतियोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोने सव लोक न्रेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भक्त ज्ञानावरणके समान हैं। मिथ्यात्वकं श्रवक्तत्र्य पदके वन्यक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राज श्रीर कुछ कम वारहवटे चौदह राजु नेत्रका स्पर्शन किया है। शेप पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। ऋपत्याख्यानावरण चारके ऋवक्तन्य पदके बन्धक जीवोंने बुछ कम छःबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेप परोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। स्त्रीवंद, पञ्चेन्द्रिय जाति. पाँच संस्थान, ऋौदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो विहायोगित, त्रस, सुभग, दो स्वर और आदेयकी ऋसंख्यात भागवृद्धि ऋसंख्यात भागहानि, ऋवस्थित श्रीर ऋवक्तव्य पदके बन्यक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोने लोकके श्चसंख्यातचें भागप्रमाण, कुछ कम आठवटे चौदह राजु और कुछ कम बारहवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। पुरुपवेदकी दो वृद्धि और दो हानियोंका भन्न स्त्रीवेदके समान है। शेप पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। नपुसंकवेद, तिर्यञ्चगित, एकेन्द्रिय जाति, हुण्ड संस्थान, तिर्य-ख्रात्यानुपूर्वी, परघात, उच्छास, स्थावर, पर्याप्त, प्रत्येक, दुर्भग अनादेय और नीचगोत्रकी एक वृद्धि एक हानि. अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। दो विद्ध श्रीर दो हानियोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबटे चौदह राज श्रीर सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नरकायु श्रीर देवायुके दो पदोंक बन्धक जीवोंका स्परान क्षेत्रके समान है। तिर्यक्रायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सब लोक है। मनुष्यायुके दो पदोंक बन्धक जीवोंका स्पर्शन कुछ कम आठवटे चौदह राजु और सब लोक है। नरकगति, देवगति और दो ब्यानपर्वीकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर अवस्थित पदके वन्धक जीवोंका स्पर्शन कुछ कम छह-बटे चौदह राजु है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। मनुष्यगति, मनु-ध्यगत्यानुपूर्वी, अौर आतपकी एक वृद्धि, एक हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सव लोक है। दो वृद्धि श्रोर दो हानियोंक बन्धक जीवोंका स्पर्शन कुछ कम श्राठबट्टे चौदह राजु है। द्वीन्द्रिय जाति, त्रिन्द्रिय जाति श्रीर चतुरिन्द्रिय जातिकी दो वृद्धि

९ मूळप्रती भणादे० अज्ञस० णीचा० इति पाठः।

असं । सेसं णाणावरणमंगो । वेउन्वि - वेउन्वि - अंगोवंग । सन्वपदा केव । की । शे लो । असं भा । वारहचो हस । देस । अवच । खेचं । ओरालि । अवच । बारह । सेसपदा तिरिक्खगदिमंगो । आहारदुगं खेचं । उजो । नवि हु-हा । लो असंखेज । अह ने तेरह । सेसं सादमंगो । सुहुम-अपज । नाधार । दोवि हु-हा । लो असंखेज । सन्व लो । सेसं तिरिक्खगदिमंगो । ति तथ्य । ति णिणवि हु-हाणि-अवि ह । अहचो । अवच । खेच । उचा । असंखेज भागवि हु-हाणि-अवि ह । असंखेज । वेवि हु-हाणि अहचो । एवं ओधमंगो कायजोगि-कोधादि । अचक्खुदं । असंखेज गुणवि हु-हाणि । खेचे भोगो । एवं ओधमंगो कायजोगि-कोधादि । अचक्खुदं । असंखेज गुणवि हु-हाणि । खेचे ।

६३४. णेरइएस धुतिगाणं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्टि० सादादिवारस-उज्जो० सन्त्रपदा छचोइ० । दोआयु०-मणुसगदिदुग-तित्थय०-उचा० सन्त्रपदा खेत्त० । मिच्छत्त० अवत्त० पंचचोइस० । सेसाणं अवत्त० खेत्तभंगो । सेसाणं सन्त्रपदा छचोइ० । एवं सन्त्रणेरइगाणं

श्रीर दो हानियोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन लोकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण है। शेप पदोंक बन्धक जीवोंका स्पर्शन ज्ञानावरणके समान है। वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिकश्राङ्गापाङ्गके सब पर्होंके बन्धक जीवोंने कितने चेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रीर कुछ कम बारहबटे चौदह राजु नेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदका भङ्ग नेत्रके समान है। श्रीदा-रिकशरीरके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोने छुछ कम बारहवटे चींदह राज त्रंत्रका स्वर्शन किया हैं। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका अङ्ग तिर्यऋगतिके समान हैं। ब्राहार रुद्धिकका अङ्ग क्षेत्रके समान है। उद्योत, बादर और यशःकीर्तिकी दो वृद्धि और दो हानियोंक वन्यक जीवोने कुछ कम श्राठ-बटे छौदह राज और कुछ कम तेरहबटे चौदह राज क्रेंत्रका स्वर्शन किया है। शेप पदोंका भन्न साताबेदनीयके समान है। सुद्दम, अपर्याप्त और साधारणकी दो वृद्धि और दो हानियोक बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक जेन्नका स्पर्शन किया है। शेप पदाका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है। तीर्थङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर श्रवस्थित पद्के बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तज्य पदर बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान हैं। उच्चगोत्रकी ऋसंख्यात भागवृद्धि, ऋसंख्यात भागदानि, ऋव-स्थित स्रोर स्रवक्तात्य पदके बन्धक जीवोंने सव लोक तेत्रका स्पर्शन किया है। दो बृद्ध स्रोर दो हानियोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। ऋसंख्यात-गुणवृद्धि स्रोर असंख्यात गुणहानिके बन्धक जीवोंका स्परान तेत्रके समान हैं। इसीप्रकार श्रोधके समान काययोगी, कोधादि चार कपायवाले, अचलुदर्शनी, भन्य श्रीर श्राहारक जीयोंके जानना चाहिये।

६३४. नारिकयों में ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि स्त्रीर अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने तथा सातात्रादि बारह स्त्रीर उद्योतके सय पदांके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। दो स्त्रायु, मनुष्यगतिद्विक, तीर्थद्वर स्त्रीर उत्तर्यगात्रके सय पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। मिण्यात्रके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँचवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंके सव पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। शेष प्रकृतियोंके सव पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे

### अप्पष्पणी फोसणं कादव्वं।

६३५. तिरिक्खेसु धुनिगाणं एकविहु-हाणि-अविहु ० सन्वलो० । बेबिहु हा० लो० असं० सन्वलो० । सादादिएकारह० एकविहु-हाणि-अविहु०-अवत्त० सन्वलो० । बेबिहु-हा० लो० असं० सन्वलो० । धीणगिद्धि०३—अहक० अवत्त० खेत्त० । मिन्छ० अवत्त० सत्त्वोह० । सेसपदा सादमंगो । हित्थवे० बेबिहु-हा० दिष्टुचोह० । सेसाणं सादमंगो । पुरिस०-समचदु०-दोविहा०-सुभग-दोसर-आदे०-उचा० दोविहु-हाणि लो० असं० छचोह० । सेसं इत्थिवेदमंगो । णवंस०-तिरिक्खग०-एइंदि०-हुंड०-तिरिक्खाणु०-पर०-उस्सा०-थावर-सुहुम-पज्जतापज्जत-पत्तेय-साधार०-दूभग०-अणादे०-णीचागो० दोबिहु-हा० लो० असं० सन्वलो० । अवत्त० खेत्त० । सेसं सादमंगो । णिरय-देवायु०-वेउन्वियछ० ओघं । तिरिक्खायु० खेत्तमंगो । मणुसायुगस्स दोपदा लो० असंखे० सन्वलो० । मणुसगिददुग-तिणिजादि—चदुमंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-आदाव० दोबिहु-हाणि० लोग० असंखेज० । सेसं सादमंगो। उज्जोव-बादर-जसिंगित्ति० दोबिहु-हाणी सत्तचोह० । णविर

चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार सव नारिकयोंके अपना अपना स्पर्शन करना चाहिये।

६३५. तिर्येख्वोंमें ध्रव बन्धवाली प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थित पदके वन्धक जीवोने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साता आदि ग्यारह प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हाति, अवस्थित और अवक्तःय पदके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानियोंके वन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्परान किया है। स्थानगृद्धि तीन श्रीर त्राठ कपायके अवक्तज्य पदके वन्धक जीवोंका स्पर्शन ज्ञेत्रके समान है। मिथ्यत्यके अवक्तत्र्य पदके वन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राज चेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन साताबेदनीयके समान है। स्त्रीवेदकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्यत किया है। शेप पदोंका भन्न सातावदनीयके समान है। पुरुपवेद, समचतुरस्रसंस्थान, दो विहायागति, सुभग, दो स्वर, आदेय और उच्चगांत्रकी दो वृद्धि स्त्रीर दो हानिक बस्थक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभागप्रमाण और कुछ कम छह्वटे चौदह राज क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, हण्डसंस्थान, विर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छवास, स्थावर, सूदम, पर्याप्त, त्रपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अतादेय और नीचगोत्रकी दो वृद्धि, दो हानिक वन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण श्रीर सब लांक चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। होत पदोंका भन्न सातावेदनीय के समान है। नरकाय, देवाय और वैक्रियिक ब्रह्का भन्न त्रोयके समान है। तिर्यञ्चायका भङ्ग चौत्रके समान है। मनुष्यायके दं। पदों के बन्यक जीवोंने लोक के असं इयातवें भाग प्रमाण और सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यगतिद्विक, तीन जाति. चार संस्थान, ऋोदारिक ऋाङ्गोपाङ, छह संहनन ऋौर ऋातपकी दो बृद्धि ऋौर दो हाति के बन्यक जोबोंने लाक के ऋमं खातबें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेप भक्क साताबे-दर्नायके समान है। उग्रात, बादर ऋोर यशःकीर्तिको दा बृद्धि ऋोर दो हानिके बन्धक जीवोंने बादरे तेरह० । पंचंदि०-तस० दोनड्डि-हाणी० लो० असंखेज्ज० बारहचोद० । ओरालि० दोनड्डि-हाणि०सन्त्रेसिं अणंतजीवाणं असंखेज्जभागनड्डि-हाणि-अनद्धि०-अन्तन० सन्त्रलो०। ओरालियसरीर० अनत्तन्त्रं खेत्त० ।

९३६. पंचिंदियतिरिक्ख०३ धुविगाणं तिष्णिवड्डिहाणि अवद्भि० लोग० असंखे० सब्बलो० । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अहुक०-णवुंसग०-तिरिक्खग०-एइंदि०-ओरालि०-हुंड०-तिरिक्खाणु०-परघा०-उस्सा०-थावर सुहुम-पञ्जतापञ्जत-पत्ते ० साधार० दुभग०-अणादे०-अजस० णीचा० तिण्णिवड्टि-हाणि-अवट्टि० लोग० असंखे० सन्वलो०। अःस० खेत्त । णवरि मिच्छ०-अजस० अवत्त० सत्तचोद्द । इत्थिवे० अवत्त० खेत्त । सेसं दिबङ्कचोइस० । सादादिदस० सन्वपदा लोगस्स असंखे० सन्वलो० । पुरिसवे० णिरय-देवगदि समचदु ०-दोआणु० दोविहा०-सुभग-दोसर-आदे०-उचा० अवत्त० खेत० । सेस-पदा छत्त्वोद्द । चदुआयु० खेत्त । मणुसगदि तिण्णिजादि-चदुसंठा० ओरालि० अंगो०-छस्तंघ०-आदाव० सब्बपदा खेत्त० । पंचिंदि०-चेउविवयः बेउविवयः गो० तस० अवत्त० खेत्त । सेसपदा बारहचोद्द । उज्जा ०-जस० सन्त्रपदा सत्तचोद्द । बादर० अत्रत्त० कुछ कम सातबंट चौदह राजु चेत्रका स्परांन किया है। इतना विशेषता है कि बादर प्रकृतिका त्रपेक्षा कुछ कम तेरहबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। पञ्चीन्द्रयजाति श्रीर त्रसकी दो वृद्धि श्रौर दो हानियोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग श्रौर बारहबटे चौदह राजन्नेत्रका स्पर्शन किया है। ऋौदारिक शारीरकी दो वृद्धि ऋौर दो हानि तथा सब ऋतन्त जीवोंके ऋसंख्यान भागगृद्धि, त्र्यसंख्यात भाग हानि, अवस्थित त्र्यौर त्रवक्तव्य पदके वन्धक जीयोंने सब लीक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। ऋौदारिकशरीरके ऋवक्तत्र्य पदके बन्यक जीवोंकास्पर्शन क्षेत्रके समान है।

६३६. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चित्रिकमं ध्रवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और त्रवस्थित पदके वन्धक जीवोंने लोकके त्रासंख्यातवें भाग प्रमाण श्रौर सवजोक नंत्रका स्पर्शन किया रे । स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यान्व, **ऋाठ कपाय, नपुंसक वेद, तिर्यक्रग**ित, एकन्द्रियजाित, ऋौ<mark>दारिक</mark> शरीर, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, परघात, उन्छास, स्थावर, सूच्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, माधारण, दुर्भग, श्रनादेय, श्रयशःकीर्ति श्रौर नीचगात्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रौर श्रवस्थित-पदके वन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण त्रौर सव लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तञ्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। इनर्ना विशेषता है कि मिथ्यात्व श्रौर अयशःकीर्तिकं झत्रक्रज्यपदके बन्धक जीबोंने कुछ कम सातबटे चोंदह राजु देत्रका स्पर्शन किया है । स्त्रीवेदके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है । शेप स्पर्शन कुछ कम डेढ़बंटे चौदह राजु है। साता ऋादि दस प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके ऋसंख्यातवें भाग-भमाण और सब लांक वेत्रका स्पर्शन विया है। पुरुपवेद, नरकगति, देवगति, समचतुरस्रसंस्थान, रो आनुपूर्वी, दो विहायोगित, सुभग, दो स्वर, आदेय और उच्चगोत्रके अवक्तव्यपदेक बन्धक जीवोंका स्पर्शन त्रेत्रक समान है। होप पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन कुछ कम छहबटे चेंदह राजु है। चार त्रायुत्रोंका भक्न चेत्रके समान है । मनुष्यगति, तीन जाति, चार संस्थान, श्रॉदारिकआक्नोपाक्न, छुट संहतन और त्रातपके सब पदोंके बन्धक जीबोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। पञ्चेन्द्रियज्ञानि, वैकियिकशारीर, वैकियिकआङ्गोपाङ्ग और त्रसके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोका स्पर्शन चेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारहवट चौदह राजु नेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत श्रीर यशःकीतिके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम मातबटे चाँदह राजु सेत्रका स्पर्शन

खेत्रमंगो । सेसपदा तेरहचोइ० ।

६३७. पंचिदियतिरिक्खअपज्जत्तगेस धुनिगाणं तिण्णिनिष्ठ-हाणि-अनिष्ट होग० अमंखे० सन्वलो० । सादादिदस० सन्वपदा लोग० असंखे० सन्वलो० । णवुंस०-तिरिक्खग०-एइंदि०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-परघादुस्सा०-थानर-सुहुम-पज्जत्त-अपज्जत्त-पत्तेय०-साधार०-दूमग-अणादे०-णीचा० अवत्त० खेत्त० । सेसपदा लोग० असंखे० सन्वलो० । उज्जो०-जसगि० सन्वपदा सत्तचोह० । बादर० अवत्त० खेत्त० । सेसपदा सत्तचोह० । अज० अवत्त० सत्तचो० । सेसं णवुंसगभंगो । सेसाणं सन्वपदा खोत्त० । एवं मणुसअपज्ज०-सन्वविगलिदि ०-पंचिदिय-तसअपज्ज०-बादरपुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउकाइयपज्जत्त नादरवण्कदिपत्तेयपज्जत्त ति ।

६३८. मणुस०३ धुवियाणं असंकोज्जगुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० कोत्त०। सेसाणं च पंचिदियतिरिक्खभंगो। तसपगदीणं कोत्त०।

६३६. देवेसु धुविगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि-श्रवद्वि० साद्यदिवारस०-मिच्छ० उज्जोव० सम्बपदा अट्ट-णवचोइसमागा वा देखणा। इत्थिवे०-पुरिसवे०-तिरिक्खायु०-मणुसायु०-

किया है। बादर प्रकृतिके अवक्तज्यपद्के बन्धक जीवोंका स्पर्शन त्रेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम तेरहबटे चौदह राजु त्रेत्रका स्पर्शन किया है।

£३७. पठ्चेन्द्रिय तिर्यक्च अपर्याप्तकों मध्यवन्धवाली प्रश्नतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रौर श्रवस्थितपदके बन्धक जीवोंने लांकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण और सवलांक चेत्रका स्पर्शन किया है। साता आदि दस प्रश्नितयोंक सब पदों बन्धक जीवोंने लांकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रौर सब लोंक चेत्रका स्पर्शन किया है। नपुंसकवंद, तिर्यक्चगति, एकेन्द्रियज्ञाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यक्चगत्यानुपूर्वी, परघात, उन्द्वास, स्थावर, सूद्म, पर्याप्त, श्रपयाप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय श्रौर नीचगांत्रके श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। श्रेष पदोंके बन्धक जीवोंने लांकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रोर सब लोंक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत, श्रौर यशःकीर्तिके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातवंट चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। बादर प्रश्नितंक श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन किया है। श्रेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबंट चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रेष पदोंके श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन किया है। श्रेष पदोंको भङ्ग नपुंसकवेदके समान है। श्रेष प्रश्नतियोंके सब पदोंक बन्धक जीवोंका स्पर्शन किया है। श्रेष पदोंका भङ्ग नपुंसकवेदके समान है। श्रेष प्रश्नतियोंके सब पदोंक बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इसी प्रकार मनुष्य श्रपर्याप्त, सब विकलेन्द्रिय, पञ्चन्द्रिय श्रपर्यांत, त्रस श्रार्याप्त, वादरप्रथिवीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अप्रकारिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त और वादर चनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये।

६३८. मनुष्यित्रकमं ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी ऋसंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और ऋवक्तज्यपदंके बन्धक जीवोंका भङ्ग चेत्रके समान है। शेष पदोका भङ्ग पर्ख्वोन्द्रिय तिर्यक्कोंके समान है। त्रस प्रकृतियोका भङ्ग चेत्रके समान है।

हिश्ह. देवोंमे ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रीर श्रवस्थितपदके बन्धक जीबोंने तथा साता श्रादि बारह, मिध्यात्व श्रीर उद्योतक सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु और कुछ कम नोबट चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्नाबद, पुरुषवेद, मणुसगदि-पंचिदिय॰-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छम्संघ०-मणुसाणु०-'आदाव०-दोवि-हा०-तस-सुभग-दोसर आदेज्ज०-तित्थय० उच्चा० सन्त्रपदा अडुचोइ०। सेसपगदीणं अवच० अडुचो०। सेसपदा अडु-णवचोइ०। एवं सन्वदेवाणं अप्पप्पणो फासणं णेदन्वं।

६४०. एइंदिय-वणप्पदि-णियोद पुढवीकाइय-आउ०-तेउ०-वाउ०-सन्बसुहुमाणं मणुसायु० तिरिक्खोघं । सेसाणं सन्वपगदीणं सन्वलो० । बादरएइंदियपन्जत्त-अपन्ज० धुविगाणं सादादीण दस० च सन्वपदा सन्वलो० । इत्थिवे०-पुरिस०-चदुजादि-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो० छस्संघ०-आदाव-दोविहा० तस सुभग दोसर आदेज्ज० सन्वपदा लोगस्स संखेज्जदिभागो । णवुंस०-एइंदि० हुंडसं० परघा० उस्सा०-थावर सुहुम पज्जत्त अपज्ज०-पत्तेय०-साधार०-दूभग० अणादे० एकवड्डि-हाणि-अवद्वि० सन्वलो० । अवत्त० लो० असंखे० । दोआयु०-मणुसगदिदुग-उचा० सन्वपदा खेत्त० । तिरिक्खगदितिगं अवत्त० लोग० असंखे० । सेसपदा असादभंगो । बादर उज्जो० जस्मि० सन्वपदा सत्तचोइ० । णवरि बादर-अवत्त० खेत० । अजस० अवत्त० सत्तचोइ० । सेसपदा सन्वलो० । एवं

नियंद्र्वायु, मनुष्यायु, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रियज्ञाति, पांच संस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गापाङ्ग, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रानप, दां विहायागिति, त्रस, सुभग, दां स्वर, श्रादेय, नीर्थंकर और उच्चगाञ्चकं सव पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। शेप प्रकृतियोंके श्रवक्तव्यपदके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। शेप पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवटे चौदह राजु श्रीर कुछ कम नौवटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार सव देवोंके श्रपना श्रपना स्पर्शन जानना चाहिये।

६४०. एकेन्द्रिय, वनस्पतिकायिक, निगोद, पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुका-यिक श्रौर सब सुद्दम जीवोंमें मनुष्यायुका भङ्ग सामान्य तिर्यख्रोंक समानहै । शेप सब प्रकृतियोंक सब पदोंकेबन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त श्रीर बादर एकेन्द्रिय श्रपर्याप्त जीवोंमें ध्रववन्यवाली प्रकृतियाँ और साता श्रादिदस प्रकृतियोंके सब पदोंके वन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका रूपर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुपवेद, चार जाति, पाँच संस्थान, स्रादारिक आङ्गापाङ्क, छह संहनन, आतप, दो विहायोगित. त्रस, सुभग, दो स्वर, श्रौर श्रादेयकं सब पदींकं बन्धक जीवोंने लोकके संख्यातवें भागप्रमाण चेत्रका स्पर्शन किया है। नपुंसकवेद, एकेन्द्रियजाति, हुण्ड-संस्थान, परघात, उच्छ्वास, स्थावर, सूद्दम, पर्याप्त, श्रपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग और श्रनादेयकी एक वृद्धि, एके हानि श्रीर श्रवस्थितपदके बन्धक जीवोने सब लोक श्रेत्रका स्पर्शन किया है। श्रवक्तञ्यपद्के बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण चंत्रका स्परीन किया है। दो आयु मनुष्यगतिद्विक स्रोर उच्चगात्रकं सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्परीन क्षेत्रके समान हैं। निर्धेश्चगनित्रिकके श्रवक्तव्यपद्के बन्धक जीवोने लोकके असंख्यानवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेप पदोंक बन्धक जीवोंका भङ्ग असातावेदनीयक समान है। बादर, उद्योत और यशः कीर्तिके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम सानवटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इननी विशेषता है कि बादरके श्रवक्तज्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शत चेत्रके समान है। अयराकार्तिके अवक्तव्यपदके बन्धक जीबोने कुछ कम सातबटे चींदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्वर्शन किया है। इसी प्रकार बादर-

१ मुख्यती मणुसायु० भादाव-इति पाठः।

बादरबाउका० बादरबाउकाइयअपन्जत्त । बादरपुढवी०-आउका०-तेउका० तेसिं बादर-अपन्जत्त बादरवणप्कदिपत्तेय०अपन्जत्त वादरएइंदियभंगो । णवरि जिम्ह लोगस्स संखेजबिदमागो तिम्ह लोगस्स असंखेजजिदमागा काद्व्यो ।

९४१. पंचिदिय तस०२ पंचणा० चदुदंस० चदुसंज० पंचंतराइगाणं तिण्णिवडुि हाणि अद्वचोद्द० सन्वलो० । असंखेज्ज गुणबड्ढि-हाणि अवत्त० खेत्तमंगो । थीणिगिद्धि० मिच्छ० अणंताणुबंधि०४ - णवुं स० - तिरिक्खग० गृहंदि० हुंडसं० तिरिक्खाणु० - थावर - द्मग-अणादे० णीचा० तिण्णिबड्ढि हाणि - अबद्वि० अद्वचोद्द० सन्वलो० । अवत्त० अट्ट-चोद्द० । णवरि मिच्छ० अवत्त० अट्ट-बारहचोद्दस० । णिदा - पचला - भय दुगुं० तेजहगा दिण ग-परघादुस्सा० पज्जत्त पत्ते० अवत्त० खेत्तमंगो । तिण्णिबड्ढि हाणि - अबद्वि० अट्टचोद्द० सन्वलो० । सादावे० तिण्णिबड्ढि हाणि - अबद्वि० - अवत्त० अट्टचोद्द० सन्वलो० । असंखे जजगुणबङ्ढि हाणी खेत्त० । असादादिदस० तिण्णिबड्ढि हाणि - अबद्वि० - अवत्वक्षाणा ०४ सन्वपदा णाणावरणभंगो । णवरि अवत्त० अट्ट-तेरह चोद्दस० । अपचक्खाणा ०४ सन्वपदा णाणावरणभंगो । णवरि अवत्त० छचोद्द० । इत्थि० - पंचसंठा० - ओरालि० अंगो० -

वायुकायिक और वादरवायुकायिक अपर्याप्त जीवोक जानना चाहिये। वादर पृथिवीकायिक, वादर जलकायिक और वादर अप्रिकायिक तथा उनके वादर अपर्याप्त और वादरवनम्यतिकायिक प्रत्येक अपर्याप्त जीवोका भक्क वादर एकेन्द्रियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि जहाँ लोकका संख्यात-वाँ भाग कहा है वहाँ लोकका असंख्यातवाँ भाग करना चाहिये।

६४१. पञ्चेद्रियद्विक और त्रमद्विक जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संब्वलन श्रीर पाँच अन्तरायकी तीन बृद्धि श्रीर तीनहानि पर्तिक बन्यक जीवोने कुछ कम श्राठवटे चीदह राज् श्रीर सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्यपद्के बन्धक जीवोंका भङ्ग चेत्रके समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिध्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, नपुंसकवंद तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर, दुर्भग, अनादेय और नीच गोत्रकी तीन बृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवाने कुछ कम आठबटे चौदह राज श्रीर सव लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपद्के वन्धक जीवोने कुछ कम आठवटे चौरह राज चेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिश्यात्वके अवक्तज्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबटे चौदह राजु श्रीर कुछ कम बारहबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुष्सा, तैजस शरीर ऋादि नौ, परघात, उच्छ्वास, पर्याप्त ऋौर प्रत्येकके अयक्तव्यपद्के बन्धक जीवोंका भन्न चेत्रके समान है। तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपद्के बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साता-वदनीयकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तप्यपद्के बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रक समान है। श्रमानावेदनीय श्रादि दसकी तीन बृद्धि, तीन हानि, श्रवस्थित श्रीर श्रवक्तव्य पद्के बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु और सब लोक न्नेज्ञका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि अयशःकीर्तिक अवक्तर्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबटे चौदह राजु अगेर कुछ कम तेरहबटे चौदह राजु च त्रका स्पर्शन किया है। अप्रत्याख्यानावरण चारके सब पर्शका भन्न ज्ञानावरणके समान है। इतनी विशेषता

छस्संघ०-दोविहा०-पंचिंदि०-तस-सुभग-दोसर-आदे० तिण्णिबिह हाणि-अबिह अहु-बारह० । अवत्त० अहु-चोह्ह० । पुरिसे तिण्णिबिहु-हाणि-अबत्त० हिश्यमंगो । असंखे-जजगुणबिहु-हाणी० णाणावरणमंगो । णिरय-देवायुग-तिण्णिजादि-आहारदुगं खेत० । तिरिक्ख-मणुसायु० दोपदा अहुचोह० । वेउन्तियछ०-तित्थय० ओघं । मणुसगिद मणु-साणु०-आदाव० सन्वपदा अहुचोह० । उज्जो० सन्वपदा अहु-तेरह० । एवं बादर० । णवरि अवत्त० खेत्त० । सुहुम-अपज्जत्त-साधारण० तिण्णिबिहु-हाणि-अबिह० लो० असंखे० सन्वलो० । अवत्त० खेत्त० । जसिग० असंखेज्जगुणबिहु-हाणी० खेत्त० । सेसपदा अहु-तेरहचो० । [उचा० असंखेज्जगुणबिहु-हाणी खेत्त० । सेसपदा अहुचो० ।] एवं पंचिदियमंगो पंचमण० पंचविच० चक्खुदं०-सिण्ण ति ।

६४२. ओरालियकायजोगीसु पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज० पंचंत० असंखेजजभागविहु-हाणि-अवद्वि० सन्वलो० । दोवड्डि-हा० लोगस्स असंखे० सन्वलो०। असंखेजजगुणविह्न-

है कि अप्रवक्त प्रपद्के बन्धक जीवोने कुछ कम छह बटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पाँच संस्थान, औदारिक आगोपाङ्ग, छह संहनन, दो विहायागित, पर्ख्वोन्द्रयजाति, त्रम, सुभग, दो स्वर ऋौर आदेयकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबटे चोदह राजु श्रोर बुद्ध कम बारह बटे चोदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तज्यपदके वन्यक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पुरुपवेदकी तीन बृद्धि. तीन हानि और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानिका भङ्क झानावरणंक समान है। नरकाय, देवाय, तीन जाति और आहारक-द्विकका भङ्ग क्षेत्रके समान है। तिर्यक्षाय और मनुष्यायुके दो पदांके बन्धक जीवोंने कुछ कम त्राठबटे चोदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। वैकियिक छह और नीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग श्रोघके समान है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और आतपके सव पदीं वन्धक जीवोने कुछ कम अ।ठबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है । उद्योतके सब पद्कि बन्यक जीवोने कुछ कम आठबटे चौदह राजु और बुद्ध कम तेरह बटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार बादर प्रकृतिकी अपेदा स्पर्शन जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यपद्के बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। सूच्म, अपर्याप्र और माधारणकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पद्के बन्धक जीवाने लोकके असंख्यातवें भागश्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। त्र्यवक्तायपदके वन्धक जीवोंक। स्पर्शन क्षेत्रके समान है। यशःकीर्तिकी असंख्यात गुण**द**द्धि श्रीर असंख्यात गुणहानिके बन्धक जीवांका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। दोप पदोंके बन्धक जीवांने कुछ कम श्राटबंटे चौरह राज और कुछ कम तेरहबंटे चौरह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। उच्चगांबकी असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानिका भन्न क्षत्र के समान है। शेप पदोंके बन्धक जीयोंने कुछ कम आठबटे चोदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार पर्ख्वोन्द्रयोके समान पाँच मनी-योगी, पाँच वचनयोगी, चलुःदर्शनी और संज्ञी जीवोक जानना चाहिये।

६४२. औदारिककाययोगी जीवोमे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन श्रोर पाँच श्रन्तरायकी असंख्यातभागवृद्धि, श्रमंख्यात भागहानि श्रोर अवस्थित पदके बन्धक जीवोने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि श्रीर दो हानियोके बन्धक जीवोंने लोकके श्रसंख्या- हाणि-अवत्त ० खेत्त ० । पंचदंसणा०-बारसक०-भय-दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप० णिमि० अवत्त ० खेत्रमंगो। सेसपदा० णाणावरणमंगो। मिन्छ० अवत्त ० सत्त्वोह ० । सेसपदा० णाणावरणमंगो। सादावे० असंखेजजभागवड्ढि०-हाणि०-अवद्वि०-अवत्त ० सन्वलो० । सेसपदा० णाणावरणमंगो। असादादिएकारस० सादमंगो। हित्यवे० दोवड्ढि-हाणी दिवड्ढचोह ० । सेसाणं णाणावरणमंगो। पुरिस० दोवड्ढि-हाणी छच्चोह ० । सेसपदा सादमंगो। णवुंस०-तिरिक्खग०-एइंदि०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-परघादुस्सा०-धावर-सुहुम-पज्जत्त-अपञ्चत-पत्तेय०-साधार०-दूभग-अणादे०-णीचा० सन्वपदा असाद-मंगो। चादुआयु०-वेउन्वियछ०-मणुसगदिदुग-चदुजादि-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०- छस्संघ०-आदाउज्जो० दोविहा०-तस-बादर-सुभग-दोसर-आदे०-उचा० तिरिक्खोघं। आहारदुग० तित्थय० खेत्त०।

९४३. ओरालियमिस्से ध्रविगाणं दोबङ्गि-हा० लोग० असंखोज्ज० सब्बलोगो वा । सेसपदा सन्वलोगो । णवरि मिन्छ० अवत्त० छोत्तमंगो । देवगदिपंचगस्स तिण्णिवड्डि-हाणि-अबद्धि ॰ रोत्त । सादादिएकारसपगदीणं असंरोज्जभागवङ्गि-हाणि-अबद्धि ०-अबत्त ० तवं भागप्रमाण श्रीर सब लाक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि श्रीर श्रवक्तज्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। पाँच दर्शनावरण, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा औदारिक शरीर, नैजस शरीर, कामण शरीर, वर्णचतुष्क, श्रगुरुत्तघु, उपघात और निर्माणके अवक्तव्यके बन्धक जीवांका भन्न क्षेत्रके समान है। शेप पदोंके बन्धक जीवोंका भन्न ज्ञानावरणके समान है। मिण्यात्वके त्रावक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातवटे चौदह राज चेत्रका स्पर्शन किया है। शेप पर्शिक बन्धक जीवोंका भन्न ज्ञानावरणक समान है। साता-वेदनीयकी ऋसंख्यातभागर्बाद्ध, ऋसंख्यात भागहानि, ऋवस्थित ऋौर अवक्तज्य पदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेप पदांके बन्यक जीवोंका भन्न ज्ञानावरणके समान है। श्रसाता श्रादि ग्यारह प्रकृतियोका भङ्ग सातावदनीयके समान है। खीवदकी दो बृद्धि श्रीर दो हानियों के बन्धक जीवोने कुछ कम डेढ़बटे चौदह राज चेत्रका स्पर्शन किया है। शेप पदोके बन्धक जीवोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। पुरुपत्रेदकी दो वृद्धि और दो हानियोके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहवटे चौदह राजु च्रेत्रका स्पर्शन किया है। शेप पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग सातांबदनीयके समान है। नपुंस बंद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, तियञ्चगत्यानु-पूर्वी, परघात, उच्छ्वास, स्थावर, सूदम, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय और नीचगोत्रके सब पदोंके बन्धक जीबोंका भङ्ग आसातावेदनीयक समान है। चार श्राय, वैकि-यिक छह, मनुष्यगतिदिक, चार जाति, पाँच संस्थान, श्रीदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, श्रातप, उद्यात, दो विहायोगित, त्रस, बादर, सुभग, दो स्वर, श्रादेय श्रीर उच्चगोत्रके सब पदोंका भङ्ग सामान्य तिर्यख्रोंके समान है। श्राहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिके सब पदोंके बन्धक जीवोंका भक्त क्षेत्रके समान है।

हिश्व. और रिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रुववन्धवाली श्रीर श्रीदारिक शरीरकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोने लोकके श्रमंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक त्रेत्रका स्पर्शन किया है। श्रेप पदोके वन्धक जीवोने सब लोक त्रेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिध्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। देवगति पद्धककी तीन वृद्धि, तीन हानि और श्रवस्थित पदके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। साता श्रादि ग्यारह

सम्बक्षी । दोविष्टु-हाणी लोगस्स असंलोब्जदिमागो सन्वलो । णवुं स०-तिरिक्खग ०- एइंदि०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-पर०-उस्सा०-थावर-सुहुम-पज्जत्त-अपज्जत-पत्तेय०-साधार०- द्मग०-अणादे०-णीचा० एकविष्टु-हाणि-अविष्टु० सन्वलो । दोविष्टु-हाणी लो ० असंलो ० सन्वलो ० । अवत्त ० लोत्त ० । दोआयु० तिरिक्खोधं । इत्थि०-पुरिस०-मणुसगदिदुग- चदुजादि-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-आदाव-दोविहा०-तस-सुभग-दोसर-आदेज- उचा० दोविष्टु-हाणि ० लोग० असंलो ० । सेसं सन्वलो ० । उज्जो०-जसिग०-बादर० दोविष्टु-हाणि० सत्तचोइ० । सेसाणं सन्वलो० ।

९४४. वेउन्वियकायजोगीसु धुविगाणं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवड्डि० अट्ड-तेरह०। सादा-दिबारस०-उज्जोव० सन्वपदा अट्ड-तेरहचो०। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-श्रणंताणुबंधि०४-णवुंस०-तिरिक्खग०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-दूभग-अणादे०-णोचा० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० अट्ड-तेरह०। अवच० अट्डचोह०। णवरि मिच्छ० अवच० अट्ड-बारह०। इत्थि०-

प्रकृतियोंकी असंख्यातभाग वृद्धि, असंख्यात भागहानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोने सब लोक चंत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानिके वन्धक जीवोने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नपुंसक्वंद, निर्यक्काति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यक्कात्यानुपृत्री, परचात, उछ्जाम, स्थावर, मृद्धम, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय और नीचगोत्रकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थित पदके वन्धक जीवोने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानिके वन्धक जीवोने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोने साम अभाग है। दो आयुका भङ्ग सामान्य निर्यक्कोंके समान है। क्षेत्रद, पुरुपवेद, मनुष्यगतिद्विक, चार जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, आतप, दो विहायोगिति, त्रस, सुभग, दो स्वर, आदेय और उच्चगात्रकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेप पदोंके बन्धक जीवोंने सब लाक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत, यशःकीर्ति और वादरकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबढे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। शेप पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

हिश्श. वैक्रियिककाययोगी जीवोंमं ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन युद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजु और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजु और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजु और कुछ कम तेरहवटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सत्यान युद्धि तीन, मिध्यात्य, अनन्तानुधन्धी चार, नपुंसकवद, निर्यक्षगित, हुण्डसंस्थान, निर्यक्षगत्यान युपूर्वी, दुभेग, अनादेय और नीचगांत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजु और कुछ कम तेरहवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजु केत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषना है कि मिध्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजु अत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषना है कि मिध्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजु ओर कुछ कम बारहबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

पुरिस०-पंचिदि०-पंचसंठा०-शोरालि०अंगो०-छस्संघ०-दोविहा०-तस०-सुमग-दोसर-आदेऊ तिण्णिवह्नि हाणि-अवद्वि० अट्ट-बारह० । अवत्त० अट्टचो० । दोशायु० दोपदा अट्टचोह० । मणुसग०-मणुसाणु०-आदा०-उच्चागो० सन्वपदा अट्टचोह० । एइंदि०-थावर-अवत्त० अट्टचोह० । सेसाणं पदा अट्ट-णवचो० । तित्थय० अवत्त० खेत्त० । सेसपदा अट्टचोह० ।

९४५. वेउन्त्रिमि०-आहार०-आहारमि०-कम्मइ०-अत्रगद्वे०-मणपञ्जव०-संजद-सामाइ०-छेदो०-परिहार०-सुहुमसंप० खेत्त०। णवरि कम्मइ० मिच्छत्त० अवत्त० एकारह०।

हिश्ह, इत्थिवे॰ पंचणा-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० पंचिदियमंगो। णविर अवत्त० णित्य। श्रीणिगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुवंधि०४-णवुंस०-तिरिक्खाण०-एइंदि०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-थावर-दूमग-अणादे०-णीचा० अवत्त० अहुचोइ०। सेसपदा अहुचोइ० सच्वलो०। णविर मिच्छत्त० अवत्त० अहु-णवचो०। णिहा-पचला-अहुकसाय-भय०-पाँच संस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो विहायांगित, त्रस, सुभग, द स्वरो श्रोर श्रादेयकी तीन वृद्धि, तीन हानि श्रोर अवस्थित पदंक वन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवटे चौदह राजु श्रोतका स्पर्शन किया है। त्राञ्चक्तव्य पदंके वन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो श्रायुश्चोंके दो पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रातप और उच्चगात्रके सव पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रिय जाति श्रोर स्थावरके श्रवक्तव्य पदंके वन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवटे चौदह राजु श्रोर कुछ कम नौ वटे चौदह राजु स्त्रेत्रका स्पर्शन किया है। श्रेप पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवटे चौदह राजु श्रोर कुछ कम नौ वटे चौदह राजु स्त्रेत्रका स्पर्शन किया है। श्रेप पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवटे चौदह राजु श्रोतका स्पर्शन किया है। श्रेप पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवटे चौदह राजु श्रोतका स्पर्शन किया है। श्रेप पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवटे चौदह राजु श्रोतका स्पर्शन किया है।

हिश्या वैक्रियिकिमिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी, आहारकिमिश्रकाययोगी, कार्मणकाय-योंगी, श्रापगतवेदी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारिवशुद्धि-संयत श्रीर सूदमसाम्परायसंयत जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। इतनी विशेपता है कि कार्मण-काययोगी जीवोंमें मिथ्यात्वके श्रवक्तत्र्य पदके बन्धक जीवोंने कुळ कम ग्यारहबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

हिश्द. स्त्रीवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन श्रीर पाँच श्रन्त-रायका भन्न पख्रेन्द्रियोक समान है। इतनी विशेषता है कि यहाँ इनका श्रवक्तव्य पद नहीं है। स्चानगृद्धि तीन, मिण्यात्व, श्रनन्तानुवन्धी चार, नपुंसकवेद, निर्यक्रगित, एकेन्द्रिय जाति, हुण्ड संस्थान, निर्यक्रगत्यानुपूर्वी, स्थावर, दुर्भग, श्रनादेय श्रीर नीचगोत्रके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवटे चौदह राजु क्रेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ-कम श्राठवटे चौदह राजु और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिध्या-त्वके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवटे चौदह राजु श्रीर कुछ कम नौबटे चौदह राजु च त्रका स्पर्शन किया है। निद्रा, प्रचला, आठ कपाय, भय, जुगुप्सा, श्रीदारिक शरीर, तैजस- दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-पज्जत-पत्तय०-णिमि० अवत्त० होत० ।
सेसपदा णाणावरणभंगो । णवरि ओरालिय० अवत्त० दिवहुचो६० । सादावे० असंहोजज्ञगुणविहु-हा० होत्त० । सेसं अट्टचो० सव्वलो० । असादादिणव० तिण्णिविहु-हाणिअविठ०-अवत्त० अट्टचो६० सव्वलो० । इत्थि०-पुरिस०-मणुसगिद-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-मणुसाणु०-आदाव-पसत्यवि०-सुभग-सुस्सर-आदे०-उच्चागो० सव्वपदा
अट्टचो० । [णवरि उच्चा असंहो०गुणविहु-हाणि० होत्त० ।]दोआयुग०-तिण्णिजादि-आहारदुगतित्थय० होत्त० । दोआयु० दोपदा अट्टचो० । वेउव्वियछ० ओघं । पंचिदि०-तसअप्पसत्थवि०-दुस्सर० तसभंगो । उज्जोव० सव्वपदा अट्ट-णवचो० । बादर० तिण्णिविहुहाणि-अविट्ठि० अट्ट-तेरह० । अवत्त० होत्त० । सहुम-अपज्ज०-साधार० अवत्त० होत्तं० ।
सेसपदा लो० असंहो० [सव्वलोग० ।] जसगि० उज्जोवभंगो । णविर असंहोज्जगुणविहुहाणी सादभंगो । अजस० अवत्त० अट्ट-णवचो० । सेसपदा सादभंगो । [एवं पुरिस० ।]

शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, पर्याप्त, प्रत्येक स्रोर निर्माणके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान हैं। शेष पदीके बन्धक जीवोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। इतनी विशेषता है कि स्रोदारिकशरीरके स्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़-बटे चौद्ह राज च त्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीयकी असंख्यानगुण वृद्धि श्रौर असंख्यात-गुगहानिके बन्धक जीवोंक। भङ्ग क्षेत्रके समान है। शेष पदींके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चींदह राजु त्र्यौर सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। त्र्यसाता त्रादि नौ प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि. तीन हानि, अवस्थित श्रीर अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राज श्रीर सब लोक च्रेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवंद, पुरुपवंद, मनुष्यगति, पाँच संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गा-पाङ्ग, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, त्र्यानप, प्रशस्तविहायांगति, सुभग, सुस्वर, त्रादेय श्रीर उच्चगोत्रके सब पदोंक बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु क्षेत्रका स्परान किया है। इतनी विशेषता है कि उच्चगात्रकी ऋसंख्यातगुणवृद्धि और ऋसंख्यातगुणहानिका स्पर्शन च त्रके समान है। दो आयु, तीन जाति, आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भन्न क्षेत्रके ममान है। दो श्रायुयोंके दो पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठ बटे चौदह राजु च त्रेका स्पर्शन किया है। वैक्रियिक छहका भङ्ग आंघके समान है। पक्चेन्द्रिय जाति, त्रस, अप्रशस्त विद्वायो-गति ऋौर दुस्वरका भङ्ग त्रस जीवोंके समान है। उद्योतके सब पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम त्राठबटे चौरह राजु और कुछ कम नोबटे चौरह राजु श्रोत्रका स्पर्शन किया है। बादर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजु और कुछ कम तेरहबंट चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीबोंका भक्क चे त्रके समान है। सूदम, ऋपयाप्त स्त्रोर साधारणके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन च त्र<mark>के</mark> समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। यशःकीर्तिका भङ्ग उद्योतके समान है। इतनी विशेषता है कि अमंख्यातगुण-वृद्धि ऋौर असंख्यातगुणहानिका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अयशःकीर्तिके अवक्तव्य पदके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु आर कुछ कम नौवट चौदह राजु अ त्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भक्न सातावदनीयक समान है। इसी प्रकार पुरुपवंदी जीवोंके जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि अप्रत्याख्यानावरण चार और औदारिक शरीरक अवक्तव्य पदके बन्धक णवरि अपचक्खाणा०४-ओरालि० अवत्त० छचोद्द०। तित्थय० ओघं।

६४७. णवुंस० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० असंखेजमागविष्टु-हाणि-अविद्वि० सन्वलो० । दोविष्टु-हाणी लो० असंखे० सन्वलो० । असंखेजगुणविष्टु-हाणी खेत० । अवत्त० णित्य । पंचदंस०-मिच्छ०-बारसक०-भय०-दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि० अवत्त० खेत्त० । सेसपदा णाणावरणमंगो । णविर्दिमच्छ० अवत्त० बारहचो० । ओरालि० अवत्त० छचोह० । सादावे० अवत्त० सन्वलो० । सेसपदा णाणावरणमंगो । असादादिदस० एकविष्टु-हाणि-अविद्वि०-अवत्त० सन्वलो० । बेविष्टु-हाणि लोगस्स असंखे० सन्वलोगो वा । णवुंस०-तिरिक्खग०-एइंदि०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-पर०-उस्सा०-थावर-सुहुम-पज्जत्तापज्जत्त-पत्तेय०-साधार०-दुभग-अणादे० णीचा० दोविष्टु-हाणी लोग० असं० सन्वलो० । सेसपदा सन्वलोगो । इत्थिवे० दोविष्टु-हाणि० लोग० असं० सन्वलो० । सेसपदा सन्वलोगो । इत्थिवे० दोविष्टु-हाणि० लोग० असं० छचोइ० । सेसपदा सन्वलोगो० । पुरिस० सम्बद्ध०-दोविहा०-सुभग-दोसर-आदेज्ज० बेविष्टु-हाणी० बारहचोइ० । सेसपदा सन्वलोगे० । सेसपदा सम्बहोगो० बारहचोइ० । सेसपदा सम्बहो औष्टिक्ट सम्बद्ध का स्वत्ते हुन स्वत्ति । सेसपदा सम्बहो आपक समान है ।

६४७. नपुंसकवेदी जीवोंमें पाँच ब्लानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन अौर पाँच श्रन्तरायकी श्रसंख्यात भागवृद्धि, श्रसंख्यात भागहानि और श्रवस्थितपदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण श्रीर सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। श्रसंख्यात गुणवृद्धि श्रीर असंख्यात गुणहानिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन स्नेत्रके समान है। त्रावक्तत्र्यपद नहीं है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, श्रोंकारिकशरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघू, उपचात और निर्माणक श्रवक्तव्यपदंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। इतनी विशेषता है कि मिध्यात्वके श्रवक्तत्र्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारहबटे चौदह राज चेत्रका स्पर्शन किया है। श्रौदारिकशारीरके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साताबंदनीयके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्रेत्रका स्परान किया है। शेप पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। असाना ऋादि दसकी एक बुद्धि, एक हानि, अवस्थित श्रीर श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने सव लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो बुद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके ऋसंख्यातवें भागप्रमाण ऋौर सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नपुंसकवेद, तिर्यक्रगति, एकेन्द्रियजाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यक्रगत्यानुपूर्वी, परघात उच्छवास, स्थावर, सूदम, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय श्रौर नीचगोत्रकी दो गृद्धि श्रीर दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रीर सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेप पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्नीवेद की दो बुद्धि ऋौर दो हानिके बन्धक जीबोंने लोकके ऋसंख्यातवें भाग प्रमाण ऋौर सब लोक नेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोके बन्धक जीवोंने सब लोक नेत्रका स्पर्शन किया है। चार संस्थान, श्रीदारिक त्राङ्गापाङ्ग त्रीर छह संहननकी दो वृद्धि त्रीर दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भागप्रमाण श्रौर कुछ कम छहबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेप पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक च्रेत्रका स्पर्शन किया है। पुरुष्वेद, समचतुरस्रसंस्थान, दो विहायोगति, मुभग, दो स्वर श्रीर श्रादेयकी दो वृद्धि श्रीर दो हानिके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारहबटे चौदह सन्बली । चदुआयु०-वेउव्वियछ० मणुसगदि-तिण्णिजादि मणुसाणु० आदाव० - उचा० तिरिक्सोघं। पंचिदिय-तस० दोवड्डि-हाणी लोग० असंखे० बारहचो०। सेसं सन्बलो०। आहारदुगं तित्थय० कोत्तमंगो। उज्जोव० दोवड्डि-हाणी तेरहचो०। सेसं सादमंगो। एवं जसगित्ति बादरणामं पि।

६४८. कोधकसाइसु पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० एक्कविहु-हाणि-अविद्धि० सन्वलो०। दोविहु-हाणी अद्वचोद्द० सन्वलो०। असंलोज्जगुणविहु-हाणी खोत्त०। सेसं ओघं। माणे पंचणा०-चदुदंस०-तिण्णिसंज०-पंचंत०कोधभंगो। सेसं ओघं। मायाए पंचणा०-चदुदंसणा०-दोसंज०-पंचंत० कोधभंगो। सेसं ओघं। लोमे मूलोघं।

९४९. मदि०-सुद० खवगपगदीणं असंकोज्जगुणविद्ध-हाणि-अवचन्वज्जाणि सेसाणि [य सन्वपदा] ओघं।णविर देवगदि-देवाणुपु० अवच०कोच्च०। सेसपदा पंचचोद्द०। ओरालिय० अवच० एकारह०। वेउन्वि०-वेउन्वि०अंगो० सन्वपदा एकारहचो०। अवच० खेच०।

राजु च त्रका स्पर्शन किया है। शेप पदोंक बन्धक जीवोंने सब लोकच त्रका स्पर्शन किया है। चार आयु, वैकियिक छह, मनुष्यगित, तीन जाति, मनुष्यानुपूर्वी, आतप और उच्चगोत्रका भङ्ग सामान्य तियंक्खोंक समान है। पद्धोन्द्रयजाति और त्रसकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और कुछ कम बारहबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक च त्रका स्पर्शन किया है। आहारकिहक और तीथंकर प्रकृतिका भङ्ग च त्रके समान है। उद्योगकी दो वृद्धि और हानिके बन्धक जीवोंने कुछ कम तेरहबटे चौदह राजु च त्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोका भङ्ग सातावेदनीयक समान है। इसी प्रकार यशःकीर्ति और बादर नामकर्मकी मुख्यतासे स्पर्शन जानना चाहियं।

हिंद क्रोधकषायवाले जीवोंमे पाँच झानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन श्रीर पाँच श्रन्तरायकी एक वृद्धि, एक हानि श्रीर श्रवस्थितपदक वन्धक जीवोंने सब लोक च त्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानिके वन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठवटे चौदह राजु श्रीर सब लोक च त्रका स्पर्शन किया है। श्रवसंख्यातगुणवृद्धि श्रीर श्रसंख्यात गुणहानिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। शेष भक्क श्रोधके समान है। मान कषायवाले जीवोंमें पाँच झानावरण, चार दर्शना वरण, तीन संज्वलन श्रीर पाँच श्रन्तरायके बन्धक जीवोंका भक्क क्रोधकषायवाले जीवोंके समान है। शेष भक्क श्रोधके समान है। गायाकपायवाले जीवोंमे पाँच झानावरण, चार दर्शना श्रीर पाँच श्रन्तरायके बन्धक जीवोंको भक्क क्रोधक समान है। शेष भक्क श्रोधके समान है। लोभकषायवाले जीवोंमे अपनी सब प्रकृतियोंके बन्धक जीवोंको भक्क मृत श्रोधके समान है।

६४६. मत्यज्ञानी श्रोर श्रुताज्ञानी जीयोंमं चपक प्रकृतियोंकी श्रसंख्यात गुणवृद्धि, श्रसंख्यात गुणवृद्धि, श्रसंख्यात गुणवृद्धि, श्रासंख्यात गुणवृद्धि, श्रासंख्यात गुणवृद्धि, श्रासंख्यात गुणवृद्धि, श्रासंख्यात गुणवृद्धि, श्रासंख्यात है। इतनी विशेषता है कि देवगति श्रीर देवगत्यानुतृर्विके श्रावक्तव्यपदंके वश्यक जीयोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। शेष पदोक वन्धक जीयोंने कुछ कम पाँचवटे चौदह राजु च श्रका स्पर्शन किया है। श्रीदारिकशारीरके श्रावक्तव्यपदंके वश्यक जीयोंने कुछ कम ग्यारहवटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। वैक्रियिकशारीर श्रीर वैक्रियिकशाङ्गां पाङ्गके सव पदोंक वश्यक जीयोंने कुछ कम ग्यारहवटे चौदह राजु च श्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि श्रावक्तव्यपदंके वन्धक जीयोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

६५०. विमंगे धुविगाणं तिण्णिविष्ठ-हाणि-अविष्ठि० अद्वचोह० सन्वलो० । सादादि दस० सन्वपदा लोग० असंखे० अद्वचोह० सन्वलो० । मिच्छत्त० अवत्त० अद्व-बारह० । सेसपदा णाणावरणमंगो । इत्थि०—पुरिस०—पंचिदि०—पंचसंठा०ओरालि०अंगो०छस्संघ०-दोविहा०-तस० सुभग-दोसर आदे० तिण्णिविष्ठ-हाणि-अविद्ठि० अट्ट-बारहचो० । अवत्त० अट्टचो० । णवुं स०—तिरिक्ख०—एइंदि०—ओरालि० हुंडसं०—तिरिक्खाणु०-थावर—दूमग-अणादे०-णीचागो० तिण्णिविष्ठ-हाणि-अविद्ठि० अट्टचो० सन्वलो० । अवत्त० अट्टचोह० । णविर ओरालि० अवत्त० कोत्त० । दोआयु०-तिण्णिजादि० खेत० । मणुसायु-मणुसगिदि-मणुसाणु०—आदाव—उचा० सन्वपदा अट्टचोह० । वेउन्वियछ० मिदमंगो । उज्जोव-जसिग० सन्वपदा अट्ट-तेरहचो० । पर०-उस्सा०-पज्जत्त-पत्ते० सन्वपदा सादमंगो । णविर अवत्त० खेत० । बादर० अवत्त० खेत० । सेसपदा अट्ट-तेरह० । सुहुम-अपज्जत्त-साधार० तिण्णिविष्ठि—हाणि—अविद्ठ० लोग०-असंखे०-सन्वलो० । अवत्त०-खेत०। अजस० अवत्त० अट्ट-तेरह० । सेसं सादमंगो ।

६५०. विभङ्गज्ञानी जीवोंन ध्रववन्धवाली प्रकृतियोकी तीन वृद्धि, तीन हानि ऋौर ऋवस्थित-पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम त्राठबटे चौदह राजु श्रीर सब लांक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साता श्रादि दस प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवाने लोकके श्ररांख्यातवें भागप्रमाण, कुछ कम आठवटे चौदह राजु श्रीर सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मिथ्यात्वके अवक्तज्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु श्रीर कुछ कम बारहवटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। स्त्रीवंद, पुरुपवंद, पञ्चेन्द्रियजाति, पाँच हांस्थान, श्रीदारिकश्राङ्गोपाङ्ग, छह हांहनन, दो विहायागित, त्रस, मुभग, दो स्वर श्रीर त्रादियकी तीन बृद्धि, तीन हानि श्रीर श्रवस्थित पदके बन्धक जीवाने कुछ कम श्राठबटे चौदह राजु श्रीर कुछ कम बारहवटे चौदहराजु चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। नपुंसकवंद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, श्रौदारिकशरीर, हुण्डसंस्थान, तिर्येख्वगत्यानुपूर्वी, स्थावर, दुर्भग, अनादेय श्रीर नीचगात्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि न्त्रीर स्रवस्थितपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु स्रौर सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तज्यपदके वन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदद राजु देत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि त्रोदारिकशरीरके श्रवक्तव्यपद्के बन्धक जीवोंका स्पर्शन त्रेत्रके समान है। दो श्चाय श्रौर तीन जातिके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन ज्ञेत्रके समान है। मनुष्यायु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, श्रातप श्रीर उच्चगात्रके सब पदोंकं बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबटे चौदह राज न्ने त्रका स्पर्शन किया है । वैक्रियिक छहके सब पदोंके बन्धक जीवोंका भक्त मत्यज्ञानी जीवोंके समान है। उद्योत श्रीर यशःकीर्तिके सब पदोंकं बन्धकजीवोंने कुछ कम त्राठबटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। परघात उच्छास पर्याप्त श्रीर प्रत्येकक सब पदोंके बन्धक जीवोंका भक्त साताबद्नीयके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यपद्के बन्धक जीवोंका भङ्ग च्रेत्रके समान है। बादर प्रकृतिके श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीवोका भङ्ग च त्रके समान है। शेप पदोंक बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजु श्रौर कुछ कम तेरह बटे चौदह राज स्ंत्रका स्पर्शन किया है। सूस्म, श्रपर्याप्त श्रौर साधारणकी तीन वृद्धि, तीन हानि ऋौर अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग-प्रमाण श्रौर सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। श्रवक्तव्यपद्के बन्धक जीवोंका स्पर्शन च श्रके समान है। अयशःकीर्तिक अवक्तव्यपद्के बन्धक जीवोने कुछ कम आठवटे चौदह राजु और कुछ कम तेरहबट चौदह राज क्षेत्रका स्पर्श न किया है। शेष भङ्ग सातावदनीयके समान है।

६५१. आमि०-सुद०-ओघि० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पुरिस०-सादा०जसगि०-उचा०-पंचंत० तिण्णिगड्डि-हाणि-अग्रहि० अहुचो६० । असंखेजजगुणवड्डि-हाणिअवत्त० खेत्त० । णगरि सादावे०-जसगि० अवत्त० अहुचो६० । णिदा-पचला-पचक्खाणा०४-भय-दुगुं०-पंचिदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४सुभग-सुस्सर-आदेज्ज०-णिमि०-तित्थय० तिण्णिगड्डि-हाणि-अन्दि० अहुचो० । अवत्त०
खेत्त० । अपच्चक्खाणा०४-मणुसगदिपंच० तिण्णिगड्डि-हाणि-अन्दि० अहुचो० । अवत्त०
छचो६० । असादादिदस-[अपज्ज०] सन्त्रपदा अहुचो६०। मणुसायु० दोपदा अहुचो६०।
देवायु-आहारदुगं खेत्त०। देवगदि०४ सन्वपदा छचो६०। अवत्त० खेत्त०। एवं
ओधिदंस०-सम्मादि०-खइग०-वेदगस०-उनसम०। णगरि खह्गे उनसमे च अपचक्खाणा०४-मणुसगदिपंचग० अवत्त० खेत्त०। देवगदि०४ सन्वपदा खेत्त०।

९५२. संजदासंजदे देवायु०-तित्थय० सन्वपदा खेत्त० । सेसाणं सन्वपदा छन्नोइ० ।

६५१. त्राभिनिवाधिज्ञानी, श्रतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दश नावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, सानावेदनीय, यशःकीर्ति, उच्चगात्र और पाँच श्रन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु **क्षेत्रका** स्पर्श न किया है। असंख्यानगुणवृद्धि, असंख्यानगुणहानि और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका भक्त च त्रके समान है। इतनी विशेषता है कि साता वेदनीय और यशःकीर्तिके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम त्याठबटे चौदह राज चेत्रका स्पर्शन किया है। निद्रा, प्रचला, प्रत्याख्याना-वरण चार, भय, जगुष्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, श्रगुरुलघुचतुष्क. प्रशस्तविहायोगित, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, त्रादेय, निर्माण श्रौर तीर्थंकरकी तीन वृद्धि. तीन हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राज क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अप्रत्याख्यानावरण चार त्रीर मनुष्यगतिपञ्चककी तीन वृद्धि, तीन हानि, त्रीर अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम श्राठबटे चौदह राज चीत्रका स्पर्शन किया है। श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राज क्षेत्रका स्पर्श न किया है। असातावेदनीय आदि दस और अपर्याप्तके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम अ।ठवटे चौदह राजु चेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यायुके दो पर्दोके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राज क्षेत्रका स्परीन किया है। देवाय और आहारक-द्विकके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन जो त्रके समान है। देवगतिचतुष्कके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह्वटे चौदह राज क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चे अर्के समान है। इसीप्रकार अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वदक संम्यग्दृष्टि, त्रौर उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोके जानना चाहिये। इतनी विशे-पता है कि क्षायिकसम्यग्द्दि आर उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंमें अप्रत्याख्यानावरण चार और मनुष्य-गतिपद्धकके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन त्रेत्रके समान है। तथा देवगतिचतुष्कके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्श न चेत्रके समान है।

६५२. संयतासंयत जीवोंम देवायु श्रीर तीर्थङ्करके सव पदोंके वन्धक जीवोंका स्पर्शन चे त्रका समान है। शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके वन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजु च त्रका स्पर्शन किया है। श्रसंयतोंमें प्रव बन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है।

असंजदे धुवियाणं मदिभंगो। थीणगिद्धि०३-अणंताणुबंधि०४ अवरा० अहुचो०। सेसं ओघं।

६५३. किण्ण-णील-काऊणं धुविगाणं एकविह्न-हाणि-अविद्वि० सञ्बलो० । बेविह्न-हाणी लोग० असंखे० सञ्बलो० । णिरयगदि-वेउव्वि०-[बेउविव०] श्रंगो०-णिरयाणु० अवत्त० खेत्त० । सेसपदा छ-चत्तारि-बेचोइस० । णिरय-देवायु०-देवगदि-देवाणुपु०-तित्थय० खेत्त० । सेसं तिरिक्खोधं । णविर इत्थि-पुरिस०-पंचिदि०-पंचसंठा०-ओरालि०-अंगो०-छस्संघ०-उज्जो०-दोविहा०-तस-सुभग-दोसर-आदेज्ज० दोविह्न-हाणी० छ-चत्तारि-बेचोइस० । मिच्छत्त० अवत्त० पंच चत्तारि-बेचोइस० ।

६५४. तेऊए मिच्छत्त० सव्वपदा अहु-णवचो० । एवं उज्जो० । अपचक्खाणा०४ अवत्त० दिवहुचोह्स० । एवं ओरालि०। देवगदि०४ सव्वपदा दिवहुचोह्स० । अवत्त० खेत्त० । सेसपदा सेसाणं पगदीणं सोधम्मभंगो ।

हिप्प. पम्माए अपचक्खाणा०४ अवत्त० पंचनोद्द०। सेसपदा अहुचोद्द०। स्त्यानगृद्धि तीन श्रीर अनन्तानुबन्धी चारके अवक्तत्व्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौद्द राजु च त्रका स्पर्शन किया है। शेप पदोंका तथा शेप प्रकृतियोंके सब पदोंका भङ्ग श्रोधके समान है।

हैं शुरुण, नील श्रीर कापीतलेश्यावाले जीवों में ध्रुव वन्धवाली प्रकृतियों की एक वृद्धि, एक हानि श्रीर श्रवस्थित पदके वन्धक जीवोंने सब लोक चेत्रका स्पर्शन किया है। दा वृद्धि श्रीर दो हानिके वन्धक जीवोंने लोकके श्रसंख्यातवें भाग प्रमाण श्रीर सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नरकगति, वैक्रियिकशारीर, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्ग श्रीर नरकगत्यानुपूर्वीके अवक्तव्य पदके वन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेप पदोंके बन्धक जीवोंने कमसे कुछ कम छह- वटे चौदह राजु, कुछ कम चारबटे चौदह राजु श्रोर कुछ कम दोबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नरकायु, देवायु, देवगति, देवगत्यानुपूर्वी श्रोर तीर्थङ्कर प्रकृतिके सब पदोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। श्रेष भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि स्वीवद, पुरुष वेद, पञ्चिन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, श्रीदारिकश्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, उद्योत, दो विहायोगित, त्रस, मुभग, दो स्वर श्रोर आदेयकी दो वृद्धि श्रीर दो हानिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजु, कुछ कम चार बटे चौदह राजु और कुछ कम दोबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मिण्यात्वके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कमसे कुछ कम पाँचबटे चौदह राजु, कुछ कम चारबटे चौदह राजु, कुछ

हप्तिः पीतलेश्यावाले जीवोंमें मिध्यात्वकं सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु झौर कुछ कम नौबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार उद्योतकी मुख्यतासे स्पर्शन जानना चाहिये। अप्रत्याख्यानावरण चारके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़बटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार औदारिकशरीरकी मुख्यतासे स्पर्शन जानना चाहिये। देवगित चतुष्कके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़बटे चौदह राज क्षेत्रका स्पर्शन किया है। श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन चेत्रके समान है। श्रेष पदोंके बन्धक जीवोंका तथा शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सौधर्म कल्पके समान है।

६५५. पद्मलेश्यावाले जीवोंमें अप्रत्याख्यानावरण चारके अवक्तज्य पदके बन्धक जीवोंने

देवगदि०४ तिष्णिवङ्गि-हाणि-अवडि० पंचचोइस०। अवत्त० छोत्त०। ओरालि०-ओरालि०अंगो० अवत्त० पंचचो०। सेसपदा अडुचो०। सेसाणं सञ्वपगदीणं सहस्सारभंगो।

६४६. सुकाए अपचक्खाणा०४-मणुसग०-ओरालि०-ओरालि०-श्रंगी०- .....

अपाबहुअं

६५७....पर०-उस्सा०-पसत्थ०—तस०४—सभग—सुस्सर-आदे० उचा० सन्वत्थोवा संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि तुल्ला। अवत्त० संखेज्जगुणा। सेसपदा ध्रुवभंगो। णवुं स०-तिण्णिगदि-चदुजादि-ओरालि०-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-तिण्णि-आणु०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-थावर०४-द्भग-दुस्सर-अणादे० सन्वत्थोवा संखेज्जगुणवड्ढि०-हाणी दो वि तुल्ला। अवत्त० असंखेज्जगु०। संखेज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० संखेज्ज०। सेसाणं ध्रुवभंगो। चदुआयु० ओघं।

हभट, पंचिदियतिरिक्खअपज्जत्तगेसु धुविगाणं सन्वत्थोवा संखेज्जगुणविहु-हाणी। संखेजजभागविहु-हाणी दो वि० असंखेजजगु०। असंखेजजभागविहु-हाणी दो वि० कुछ कम पाँचवटे चौदह राजु को त्रका स्पर्शन किया है। शेष परोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ-वटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। देवगतिचतुष्ककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँचवटे चौदह राजु को त्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका भङ्ग च त्रके समान है। औदारिकशरीर और औदारिक आङ्गोपाङ्गके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँचवटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठवटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष सब प्रकृतियोंका भङ्ग सहस्रार करुपके समान है।

६५६. शुक्तलेश्यावाले जीवोंमं श्रप्रत्याख्यानावरण चार, मनुष्यगति, श्रौदारिकशरीर, औदा-

रिकश्राङ्गोपाङ्ग .....

अल्पबहुत्व

ह्यण्णापरघात, उच्छुास, प्रशस्त विहायागित, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुण-हानिके बन्धक जीव दोनों ही तुस्य होकर सबसे स्तोक है। इनसे अवक्तत्र्य पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका भक्क ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। नपुंसकवेद, तीन गित, चार जाति, श्रीदारिक शरीर, पाँच संस्थान, श्रीदारिक आङ्गोपाङ्क, छह संहनन, तीन आंनुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगित, स्थावर चतुष्क, दुभग, दुस्वर और अनादेयकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुण हानिके बन्धक जीव दोनों ही तुस्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे अवक्तत्र्य पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यात भागवृद्धि और संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यात भागवृद्धि और संख्यात भागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुस्य होकर संख्यातगुणे हैं। शेष पदोंका भङ्ग ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। चार आयुका भङ्ग ओघके समान है।

६५८. पक्चेन्द्रिय तिर्येश्व अपर्याप्तकोंमें संख्यातगुणवृद्धि श्रीर संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यात भागवृद्धि, श्रीर संख्यात भागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे श्रसंख्यात भागवृद्धि श्रीर श्रसंख्यात भाग संखेज्ज० । अवट्ठि० असंखेजगु० । सादादीणं परियत्तमाणियाणं पंचिदियतिरिक्खमंगी ।

६५६. मणुसेसु पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० सव्वत्थोवा अवत्त०। असंखेज्जगुणवह्नी संखेज्जगु०। श्रसंखेज्जगुणहाणी संखेजजगु०। संखेज्जगुणवह्नि-हाणी दो वि० संखेज्जगु०। असंखेज्जभाग-विद्वि-हाणी दो वि० संखेजजगु०। अविद्वि० असंखेज्जगु०। पंचदंस०-मिच्छत्त०-बारसक०-मय-दु०-ओरालि०-तेजहगादिणव० सव्वत्थोवा अवत्त०। संखेजगुणविद्वि-हाणी दो वि० असंवेज्जगुणविद्वि-हाणी दो वि० असंवेज्जगुणविद्वी। असंखेजजगुणहाणी संखेजगु०। संखेजगुणविद्वि-हाणी दो वि सिर-साणि असंखेजगुणाणि। अवत्त० संखेजजगु०। संखेजगुणविद्वि-हाणी दो वि० संखेजजगुणाणि। अवत्त० संखेजजगु०। संखेजजगुणविद्वि-हाणी दो वि० संखेजज०। सेसपदा णाणावरणभंगो। वेउव्वियछक्क-आहारदुगं ओघं आहारसरीरभंगो। सेसाणं असादादीणं सव्वपगदीणं णिरयभंगो। णविर तित्थय०...सव्वत्थो० संखेजजगुणं कादव्वं। मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु तं चेव। णविर संखेजं कादव्वं। मणुसअपज्जत्तेसु धुविगाणं सव्वत्थो० संखेजजगुणविद्वि-हाणी दो वि०। संखेजजभागविद्वि-हाणी दो वि

हानिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर .संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे है। साता आदि परिवर्तनमान प्रकृतियोंका.भङ्ग पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चोंके समान है।

८५८. मनुष्योंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्श नावरण, चार संख्वलन ऋौर पाँच अन्तरायके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे असंख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव संख्यात-गरंग हैं। इनसे ऋसंख्यानगुण हानिके बन्धक जीव संख्यानगरंग हैं। इनसे संख्यातगणबृद्धि श्रीर संख्यानगुणहानिक वन्धक जीव दानों ही तुल्य होकर असंख्यानगुणे हैं। इनसे संख्यानभागवृद्धि और संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुन्य होकर संख्यातगुर्ण हैं। इनसे असंख्यात-भागवृद्धि ऋौर असंख्यात भागहानिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगरो हैं। इनसे त्र्यवस्थित पदके बन्धक जीव ऋसंख्यातगुर्णे हैं। पॉच दर्शनावरण, मिध्यात्व, वारह कपाय, भय, जगुप्सा. श्रोदारिकशारीर श्रोर तैजसशारीर श्रादि नौके अव कव्य पदके वन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर ऋसंख्यात-गणे हैं। शेप पदोंके वन्धक जीवोंका भङ्ग ज्ञानावरएक समान है। सातावेदनीय, पुरुपवेद, यशः-कीर्ति. श्रीर उच्चगात्रकी असंख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे असंख्यागुण हानिक वन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि श्रीर संख्यात गुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं। इनमे अवक्तज्य, पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि श्रीर संख्यातभागहानिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगरे हैं। शेप परोंके वन्धक जीवोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। वैक्रियिक छह श्रीर स्त्राहारकद्विकका भक्त त्र्योघमें कहे गये त्राहारकशरीरके समान है। शेप त्रासाता त्राहि सब प्रकृतियोंका भक्त नारिक-योंके समान हैं। इतनी विशेषता है कि तीर्थङ्करप्रकृति ..... सबसे स्तोक हैं इसके स्थानमें संख्यातगुणा करना चाहिये। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें वही भक्क है। इतनी विशेषता है कि यहाँ ऋसंख्यातगुरोके स्थानमें संख्यातगुणा करना चाहिये। मनुष्य ऋपर्याप्तकोंमें ध्रव बन्धवाली प्रकृतियोंकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे

तु० संखेज्ज० । असंखेज०वड्ढि-हाणी दो वि तु० संखेज्ज० । अवट्ठि० असंखेज्जगु० सेसाणं पगदीणं मणुसोघभंगो । देवाणं णिरयभंगो । णवरि विसेसो णादन्वो ।

६६०. सन्वएइंदिय-पंचकायाणं धुविगाणं सन्वत्थोवा असंखेज्जभागवड्डि-हाणी दो वि०। अवड्डि० असंखेज्ज०। सेसाणं परियत्तमाणियाणं पगदीणं सन्वत्थो० अवत्त०। असंखेज्जभागवड्डि-हाणी दो वि० संखेज्ज०। अवद्धि० असंखे०। दो आयु० ओघं।

६६१. सञ्विवगिलिंदिएसु धुविगाणं सन्वत्थोवा संखेजभागविष्टु-हाणी दो वि तु०। असंखेजभागविष्टु-हाणी दो वि तु० संखेजगु०। अविष्टि० असंखेज्जगु०। सेसाणं सन्वत्थोवा अवत्त०। संखेजभागविष्टु-हाणी दो वि संखेजगु०। असंखेज्जभागविष्टु-हाणी दो वि तु० संखेजजभागविष्टु-हाणी दो वि तु० संखेज०। अविष्टि० असंखेजगु०। आयु० मणुसअपज्जत्तभंगो।

६६२. पंचिंदिएसु पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० सन्वत्थो० अवत्त०। असंखेजजगुणवह्नी संखेजजगु०। असंखेजगुणहाणी संखेजजगु०। संखेजजगुणविद्वि-हाणी दो वि० असंखेज । संखेजजगणविद्वि-हाणी दो वि० असंखेज । संखेजजगणविद्वि-हाणी

स्तांक हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि श्रांर संख्यातभागहानिकं बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुरे हैं। इनसे श्रसंख्यात भागवृद्धि और श्रसंख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों है तुल्य होकर संख्यातगुरे हैं। इनसे श्रवस्थित पदके वन्धक जीव श्रसंख्यातगुरे हैं। शेष प्रकृतियोका भङ्ग सामान्य मनुष्योंके समान है। देवोंका भङ्ग नारिकयोंके समान है। इतनी विशेषता है कि यहाँ जो विशेष हो वह जान लेना चाहिये।

६६०. सब एकेन्द्रिय और पाँच स्थावरकायिक जीवोंमें असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुस्य हांकर सबसे स्तांक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष परिवर्तमान प्रकृतियोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तांक हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिके वन्धक जीव दोनों ही तुस्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। दो आयुओंका भङ्ग ओघके समान है।

६६१. सव विकलेन्द्रियोंमं ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी संख्यातभागवृद्धि श्रोर संख्यातभागवृद्धि श्रोर संख्यातभागहानिके बन्धक जीव तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे श्रसंख्यात भागवृद्धि और श्रसंख्यातभाग हानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे श्रवस्थित पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुणे हैं। शेप सब प्रकृतियोंके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि श्रोर संख्यातभागहानि इन दोनों ही पदोंके बन्धक जीव तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धि श्रोर असंख्यातभागहानि इन दोनों ही पदोंके बन्धक जीव तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे श्रवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। श्रायुकर्मका भङ्ग मनुष्य अपर्याप्तकोंके समान है।

६६२. पद्मेन्द्रियों में पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन श्रोर पाँच अन्तरायकं श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव सब स्तोक हैं। इनसे असंख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातगुणवृद्धि श्रोर संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि श्रोर संख्यातगुणहानि दोनों ही पदोंके बन्धक जीव तुल्य होकर श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि श्रोर संख्यातभागहानि दोनों ही पदोंके बन्धक जीव तुल्य होकर श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे

दो वि० संखेजगु०। अविह ० असंखेज०। पंचदंसणा०-मिच्छत्त०-बारसक०-भय-दु०-तेजइगादिणव० सन्वत्थो० अवत्त०। संखेजगुणविहु-हाणी दो वि० असंखेजगु०। संखेजगणविहु-हाणी दो वि० असंखेजगु०। असंखेजगणविहु-हाणी दो वि० संखेजगु०। अविह ० असंखेज०। सादावे०-पुरिस० जसगि०-उचागो० सन्वत्थोवा असंखेजगुणविहु। असंखेजगणहाणी संखेजगु०। संखेजगणविहु-हाणी दो वि० असंखेजज०। अवत्त० असंखेजजगु०। संखेजगणविहु-हाणी दो वि० असंखेजजगु०। असंखेजगणविहु-हाणी संखेजगु०। असंखेजगणविहु-हाणी संखेजगु०। असंखेजगणविहु-हाणी संखेजगु०। अविह० असंखेजगु०। असादावे०-छण्णोक०-दोगदि-पंचजादि-

९६३. पंचिदियपञ्जत्तमे पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज० पंचंत० सन्बत्थो० अवत्त०। असंखेजगुणवङ्की संखेजगु०। असंखेजजगुणहाणी संखेजजगु०। संखेजजगुणवङ्की संखेजगु०।

श्रसंख्यातभागवृद्धि श्रीर असंख्यातभागहानि इन दोनो ही पदोकं बन्धक जीव तत्य हाकर संख्यातगुरो हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुरो हैं। पाँच दर्शनावरण, मिध्या-त्व. बारह कषाय. भय. जुगुप्सा श्रीर तैजसशरीर त्रादि नौके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातगणवृद्धि श्रीर संख्यातगणहानि इन दोनों ही पदोंक वन्धक जीव तस्य होकर असंख्यातगुरो हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि श्रीर संख्यातभागहानि इन दोनों ही पदोंक बन्धक जीव तुल्य होकर श्रसंख्यात्गुरो हैं। इनसे श्रसंख्यातभागवृद्धि और श्रसंख्यातभागहानि इन दोनों ही पदोंके बन्धक जीव तुल्य होकर संख्यातगुर्ण हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुर्णे हैं। सातावंदनीय, पुरुषवेद, यशःकीर्ति श्रीर उच्चगोत्रकी श्रसंख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे असंख्यातगुणहानिक बन्धक जीव संख्यातगुण हैं। इनसे संख्यातगुणबृद्धि श्रीर संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर श्रासंख्यातगुणे हैं। इनसे श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुरो हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि श्रीर संख्यातभाग हानिके बन्धक जीव दोंनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुर्ण हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धि और असं-ख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोंनों ही तुल्य होकर संख्यातगुरो हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगणे हैं। श्रसातांवदनीय, छह नोकषाय, दो गति, पाँच जाति, श्रीदारिक-शरीर, छह संस्थान, श्रौदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो त्रानुपूर्वी, आतप, उद्योत, दो विहा-योगति, परघात, उच्छास, त्रस, स्थावर त्रादि नौ युगल, त्रायशःकीर्ति त्रीर नीचगोत्रकी संख्यात-गुणवृद्धि श्रीर संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोंनों ही तुत्य होकर सबसे स्तोक हैं। इससे श्रव-क्तव्य पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेप पदोंका भङ्ग निद्राके समान है। चार आयु. नरकगति, देवगति, वैक्रियिकशारीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, दो आनुपूर्वी, आहारकद्विक और तीर्थ-दूरप्रकृतिका भङ्ग श्रोघके समान है।

६६३. पञ्चीन्द्रयपर्याप्त जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्श नावरण, चार संज्वलन और पाँच श्रम्तरायके श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीव सबसे स्तांक हैं। इनसे श्रसंख्यात गुणवृद्धिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यात गुणहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि

<sup>🤋</sup> मूळप्रती जादि संखेजगु० ओरा०इति पाठः ।

वि तु० असंखेज्जगु० । संखेजजभागविष्टु-हाणी दो वि० संखेज्जगु० । असंखेज्जभागविष्टु-हाणी दो वि तु० संखेज्जगु० । अविष्ट्ठ० असंखेजजगु० । पंचदंसणा०-मिच्छ०-बारस० क०-भय-दु०-तेजहगादिणव० पंचिंदियओघो । असादावे०-छण्णोक० — तिण्णिगदि — दोजादि-ओराखि०-वेउन्वि०-छस्संठा-दोअंगो०-छस्संघ० तिण्णिआणु०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो० — दोविहा०-तस थावर-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-थिरादिपंचयुगल० — अजस० — णीचा० सन्वत्यो० संखेजजगुणविष्टु-हाणी दो वि तु० । अवत्त० संखेजजगु० । उविर णाणावरणभंगो । सादावे० — पुरिस० — जसिंग० — उचा० सन्वत्थो० असंखेजजगुणविष्टु — हाणी दो वि तु० असंखेजजगु० । अवत्त० संखोजजगु० । उविर णिहाए भंगो । णिरयगदि-तिण्णिज। दि-णिरयाणु०-सुहुम-अपज्जत्त-साधारण० सन्वत्थोवा संखेज्जगुणविद्धि-हाणी । अवत्त० असंखोजजगु० । उविर णिहाए भंगो । चदुआयु०-आहारदुग-तित्थय० ओघं । पंचिदियअपज्ज० पंचिदियतिरिक्खअपजत्तभंगो । तसकाइय० पंचिदियर्मगो । पञ्जत्ता पञ्जत्तभंगो । अपज्जत्त० अपज्जत्तभंगो ।

९६४. पंचमण०-तिण्णिवचिजो० पंचणा०अद्वारस० पंचिदियपज्जत्तमंगो। चढु-दंसणा०-मिच्छ०-बारसक०-भय०-दुगुं०-देवगदि-ओरालि०-वेउन्विय०-तेजा०-क०-

ऋौर संख्यात गुणहानिकं बन्यक जीव दोनी ही तुल्य होकर ऋसंख्यातगुण है। इनसे संख्यात भागवृद्धि और संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुर्ण हैं। इनसे असंख्यात भागवृद्धि श्रीर श्रसंख्यात भागहानिके वन्धक जीव दानों ही तुल्य हाकर संख्यातगुरो हैं। इनसे अवस्थितपदके बन्धक जीव असंख्यातगुण हैं। 'पाँच दर्श नावरण, मिध्यात्व, बारह कषाय, भय, जगुप्सा ऋौर तैजसशरीर आदि नौका भङ्ग पञ्चेन्द्रियोके त्र्यांघक समान है। असातावदनीय छह नोकषाय, तीन गति, दो जाति, औदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीर, छह संस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, छह संहतन, तीन त्रानपूर्वी, परघात, उछवास, त्रातप, उद्योत, दो विहायागित, त्रस, स्थावर, बादर पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर आदि पाँच युगल, अयशःकीर्ति और नीचगात्रकी संख्यात गुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिक बन्धक जीव दानो ही तुल्य होकर सबसे स्तांक हैं। इनसे अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यातगुरो हैं। इससे त्रागेका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। सातावदनीय, पुरुपवंद, यश:-कीर्ति श्रीर उच्चगोत्रकी श्रसंख्यात गुणवृद्धिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे श्रसंख्यातगुण-हानिके बन्धक जीव संख्यातगरो हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुण हैं। इनसे अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इससे त्रागेका भङ्ग निद्रा प्रकृतिके समान हैं। नरकगित, तीन जाति, नरकगत्यानुपूर्वी, सूदम, अपर्याप्त श्रीर साधारणकी संख्यातगुणवृद्धि, श्रीर संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक है। इनसे अवक्तव्यपद्के बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इससे आगेका भङ्ग निद्रा प्रकृतिके समान है। चार श्राय, आहारकद्विक श्रीर तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग श्रोपके समान है। प्रस्नेन्द्रिय श्रपर्याप्तकोमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च श्रपर्याप्तकोंके समान भन्न है। त्रसकायिक जीवोंमें पञ्चेन्द्रियोंके समान भक्त है। इनके पर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तकोंके समान भक्त है। इनके अपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिन्य श्रपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है।

६६४. पाँच मनायोगी और तीन वचनयोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरणादि अठारह प्रकृतियोंका भक्क पञ्च न्द्रिय पर्याप्तकोंके समान भक्क है। चार दर्श नावरण, मिध्यास्व, बारह कवाय, भय,

वेउिव्यिअंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४ -बाद्र-पज्जत्त-पत्तेय०-णिमि० सव्वत्थो० अवत्त० । संखेज्जगुणविद्ध-हाणी दो वि० तु० असंखेज्ज० । उवरिमपदा णाणावरणभंगो । सादावे० पुरिस०-जसगि० उचा० पंचिदियपज्जत्तभंगो । असादा०-छण्णोक०-तिण्णिगदि-पंचजादि-छस्संठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-तिण्णिआणु०-आदाउज्जो०-दोविहायगदि-तस-थावर-सुहुम०-अपज्जत्त०-साधार०-थिरादिपंचयुगल-अजस०-णीचा० सव्वत्थो० संखेज्जगुणविद्ध-हाणी दो वि० । अवत्त० संखेज्जगु० । उविर णिहाए भंगो । चदुआयु०-आहारदुग-तित्थय० ओघं । विचजोगि-असचमोसवचि० तसपज्जत्तभंगो । ओरालियमि० तिरिक्खोघं । णविर देवगदिपंचगस्स सव्वत्थो० संखज्जगुणविद्ध-हाणी दो वि० तु० । संखेज्जभागविद्ध-हाणी दो वि० तु० ।

९६५. वेउन्वि०-वेउन्वियमिस्सका० देवोघं। णवरि वेउन्वियका० तित्थय० णिरयोघं। आहार०-आहारमिस्सका० सन्वद्वभंगो। कम्मइगका० सन्वत्थो० मिन्छत्त० अवत्त०। अवद्विद० अणंतगु०। सेसाणं परियत्तमाणियाणं पगदीणं सन्वत्थो० अवत्त०। अवद्वि० असंखेजजगु०। एवं अणाहारगे०।

ज्याप्सा. देवगति, श्रौदारिकशरीर, वैक्रिथिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैक्रिथिकश्राङ्गापाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, त्रमुफलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक त्रौर निर्माणके अवक्तन्यपद्के बन्धक जीव सबसे स्तोक है। इनसे संख्यातगुणवृद्धि, श्रौर संख्यातगुणहानिपदके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर श्रसंख्यातगुणे हैं। इससे श्रागेक पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। साता-वेदनीय, पुरुषवेद, यशःकीर्ति श्रौर उच्चगोत्रका भङ्ग पञ्चोन्द्रियपर्याप्त जीवोंकं समान है। श्रसाता-वेदनीय, छह नोकपाय, तीन गति, पाँच जाति, छह संस्थान, श्रौदारिक श्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, तीन श्रानुपूर्वी, श्रातप, उद्योत, दो विहायोगित, त्रस, स्थावर, सूचम अपर्याप्त, साधारण, स्थिर श्रादि पाँच युगल, श्रयशःकीर्ति श्रौर नीचगोत्रकी संख्यातगुणवृद्धि श्रौर संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यातगुरो हैं। इससे आगेका भन्न निद्रा प्रकृतिके समान है। चार आयु, आहार रुद्धिक और तीर्थंकर प्रकृतिका भक्क त्रोघके समान है। वचनयोगी त्रोर श्रयस्यमृपा वचनयोगी जीवोंमे त्रसपर्याप्त जीवोंके समान भक्न है । ऋौदारिकमिश्रकाययोगी जीवोमें सामान्य तिर्येश्चोंके समान भक्न है । इतनी विशेषता हैं कि देवगतिपञ्चककी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि श्रौर संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थितपदके बन्धक जीव संख्यातगणे हैं।

६६५. वैकियिककाययोगी श्रोर वैकियिकिमश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य देवोंके समान भक्त है। इतनी विशेषता है कि वैकियिककाययोगी जीवोंमें तीर्थंकर प्रकृतिका भक्त सामान्य नारिकयोंके समान है। श्राहारककाययोगी श्रोर श्राहारक मिश्रकाययोगी जीवोंमें सर्वार्थ-सिद्धिके देवोंके समान भक्त है। कामणकाययोगी जीवोंमें मिध्यात्वके श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीव सबसे स्तांक हैं। इनसे अवस्थितपदके बन्धक जीव अनन्तगुणे हैं। शेष परिवर्तमान प्रकृतियोंके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे श्रवस्थितपदके बन्धक जीव श्रमंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार श्रनाहारक जीवोंके जानना चाहियं।

६६६. इत्थिवे० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० सव्वत्थो० असंखेज्जगुण-वहुी। असंखेज्जगुणहाणी संखेज्जगु०। संखेज्जगुणवाहु-हाणी दो वि० तु० असं०गु०। संसपदा पंचिंदियपज्जत्तमंगो। पंचदंसणा०-मिच्छत्त०-बारसक०-भय०-दुगुं०-तेजहगादि-णव० पंचिंदियपज्जत्तमंगो। सादावे०-पुरिस०-जमिग०-उच्चा० पंचिंदियपज्जत्तमंगो। असादा०-छण्णोकसा०-तिण्णिगदि-दोजादि-ओरालि०-वेउव्व०-छस्संघा-दोअंगो०-छस्संघ०-तिण्णिआणु०-आदाउज्जो०-दोविहा०-तस-थावरादिपंचयुगल-अजस०णीचा० सम्बत्थो० संखेज्जगुणवाहु-हाणी दो वि० तु०। अवत्त० संखेज्जगु०। संखेज्जभागवाहु-हाणी दो वि० तु०। असंखेज्जभागवाहु-हाणी० दो वि० तु० संखेज्जगु०। अवद्वि० असंखेज्जगु०। चदुआयु० ओघं। णिरयगदि-तिण्णिजादि-णिरयाणु० सहुम-अपज्ज०-साधार० सन्वत्थो० संखेज्जगुणवाहु-हाणी दो वि०। अवत्त० असंखेज्जगु०। संखेज्जगु०। संखेज्जगु०। अवद्वि० असंखेज्जगु०। आहारदुग-तित्थय० मणुसि०मंगो। पर०-उस्सा०-बादर-पज्जत्त-पत्ते० सन्वत्थोवा अवत्त०। संखेज्जगुणवाहु-हाणी दो वि० संखेज्जगुणवाहु-हाणी हो वि० संखेज्जगुणवाहु-हाणी दो वि० संखेजजगुणवाहु-हाणी दो वि० संखेजजगुणवाहु-हाणी

६६६. स्त्रीवदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन श्रौर पाँच अन्तराय-की श्रसंख्यातगुणवृद्धिके वन्धक जीव सबसे स्ताक हैं। इनसे श्रसंख्यातगुणहानिके बन्धक जीव संख्यानगुणे हैं। इनसे संख्यानगुणवृद्धि श्रीर संख्यानगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर त्रसंख्यातगुणे हैं। शेप पदोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रियपर्याप्त जीवोंके समान है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कपाय, भय, जुगुप्सा और तैजसशरीर आदि नौ का भङ्ग पञ्चीन्द्रयपर्याप्त जीवोंके समान है। सातावेदनीय, पुरुषवंद, यशाःकीर्ति और उच्चगोत्रका भङ्ग पञ्चेन्द्रियपर्याप्त जीवोंके समान है। श्रसानावेदनीय, छह नोकषाय, तीन गति, दो जाति, श्रौदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीर, छह संस्थान, दो त्राङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, तीन त्रानुपूर्वी, त्रातप, उद्योत, दो विहायोगित, त्रस त्रीर स्थावर श्रादि पाँच युगल, श्रयशःकीर्ति श्रीर नीचगोत्रकी संख्यातगुणवृद्धि श्रीर संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तांक हैं। इनसे अवक्तव्यपदकं बन्धक जीव संख्यात्गुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि स्त्रीर संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दानों ही तुल्य होकर संख्यातगणे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिकं बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगणे हैं। इनसे श्रवस्थितपदके बन्धक जीव श्रसंख्यातगुरो हैं। चारों श्रायुओंका भङ्ग श्रोघके समान है। नरकगति, तीन जाति, नरकगत्यानुपूर्वी, सूदम, अपर्याप्त और साधारणकी संख्यातगुणवृद्धि श्रीर संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे अवक्तव्यपदके बन्धक र्जाव श्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि श्रौर संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगणे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिके बन्धक जीव दांनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थितपद्के बन्धक जीव असंख्यातगणे हैं। आहा-रकद्विक और तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग मनुष्यिनयोके समान है। परघात, उच्छास, वादर, पर्याप्त श्रीर प्रत्येककं श्रवक्तव्यपद्के बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यात-गुणहानिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातमागृद्धि श्रीर संख्यात-भागउ।निके बन्धक जीव दानों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धि श्रीर दो वि० संखेज्जगु०। अवद्वि० असंखेज्जगु०। पुरिसेसु इत्थिमंगो। णवरि तित्थवरं ओघं।

६६७. णबु सगे० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज० पंचंत० सन्वत्थोवा असंखेज्ज-गुणवड्ढी । असंखेज्जगुणहाणी संखेज्जगु० । सेसपदा ओघं। पंचदंसणावरणादिएगुणतीसं पगदीणं ओघं । ओरालि० सन्वत्थोवा संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि० । अवत्त० असं-खोज्जगु० उवरि ओघमंगो । वेउन्वियछ० ओघं णिरयगदिमंगो । सेसाणं पगदीणं ओघं।

९६८. अवगदवे० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० सन्वत्थोवा अवत्त०।
संखेजजगुणवट्टी संखेजजगु०। संखेजजभागवट्टी संखेजजगु०। संखेजजगुणहाणी संखेजजगु०। संखेजजभागद्दाणी पंखेजजगु०। सादावे०—जसगि०-उच्चा० सन्वत्थोवा
अवत्त०। असंखेजजगुणवट्टी संखोजजगु०। संखेजजगुणवट्टी संखेजजगु०। संखेजजभागवट्टी संखोजजगुण०। असंखोजजगुणहाणी संखोजजगु०। संखेजजगुणहाणी संखेजजगु०।
संखेजजभागद्दाणी संखेजजगु०। अवट्टि० संखेजजगु०। चदुसंज० सन्वत्थोवा अवत्त०।
संखेजजभागवट्टी संखेजजगु०। संखेजजभागहाणी संखेजजगु०। अवट्टि० संखेजजगु०।

६६६. कोधकसाए० पंचणा० चदुदंस० चदुसंज० पंचंत० ओघं। णवरि अवत्त०

असंख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे अविश्वितपदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। पुरुषवेदी जीवोंमें स्त्रीवदी जीवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि तीर्थकर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है।

६६७. नपुंसकतेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन श्रीर पाँच श्रम्त-रायकी असंख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे श्रसंख्यात गुणहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। शेष पदोंका भङ्ग श्रोघके समान है। पाँच दर्शनावरण आदि उनतीस प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोघके समान है। श्रीदारिक शरीरकी संख्यातगुणवृद्धि श्रीर संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव असंख्यात गुणे हैं। इससे श्रागेका भङ्ग ओघके समान है। वैकियिक छह का भङ्ग ओघमें कहे गये नरकगित-के समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोघके समान है।

६६६. क्रोधकषायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण चार संज्वलन और पाँच

णित्य । सेसाणं पि ओघं । माणे सत्तारण्णं पि अवत्त० णित्थ । सेसाणं पि ओघं । मायाए सोलसण्णं पि अवत्त० णित्थ । सेसाणं पि ओघं । लोमे पंचणा०-बहुदंस०-पंचंत० अवत्त० णित्थ । सेसपदा ओघभंगो ।

६७०. मदि०-सुद० धुनिगाणं मिच्छत्त० तिरिक्खोघं। सेसाणं ओघं। विभंगे धुनियाणं णिरयभंगो। मिच्छत्त०-देनगदि-पंचिदि० ओरालिय०-नेउन्निय०-समचदु०-नेउन्निय०अंगो०-देनाणुपु०-पर०-उस्सास-बादर-पज्जत्त-पत्तेय० सन्नत्थोना अवत्त०। संखेज्जग्णविद्व-हाणी दो वि० असंखेज्जगु०। उनिरमपदा धुनभंगो। सादासाद०-सत्तणोक०-तिण्णिगदि-चदुजादि-पंचसंठाण-ओरालि० अंगो०-छस्संघ०-तिण्णिआपु०-आदा० उज्जो०-दोनिहाय० तस-थानर-सुहुम-अपज्जत्त-साधार०-थिरादिखयुगल-दोगोद० सन्नत्थोना संखेजजग्णविद्व-हाणी दो वि०। अनत्त० संखेजजग्०। उनिरमपदा धुनभंगो।

६७१. आभि०-सुद्०-ओधि० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पुरिस-उचा०-पंचंत० सम्बत्थो० अवत्त०। असंखेज्जगुणवड्ढी संखेजगु०। असंखेजगुणहाणी संखेजगु०। संखेजगुणवड्ढि-हाणी दो वि० असं०गु०। संखेजभागवड्ढि-हाणी दो वि० संखेजगु०।

अन्तरायका भङ्ग श्रोघके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य पद नहीं है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग भी श्रोघके समान है। मान कपायवाले जीवोंमें सत्तरह प्रकृतियोंका भी अवक्त व्य भङ्ग नहीं है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। माया कपायवाले जीवोंमें सोलह प्रकृतियोंका श्रवक्तव्य पद नहीं है। शेष प्रकृतियोंका भी भङ्ग श्रोघके समान है। लोभ कषायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण श्रोर पाँच अन्तरायका अवक्तव्य पद नहीं है। शेष पदोंका भङ्ग ओघके समान है।

६७०. मत्यज्ञानी और श्रुनाज्ञानी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियों और मिध्यात्वका भक्क सामान्य तिर्यक्क्षोंके समान है। शेप प्रकृतियोंका भक्क श्रोघके समान है। विभक्क्षानी जीवोंमें ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंका भक्क नारिकयोंके समान है। मिध्यात्व, देवगित, प्रख्लेन्द्रिय जाति, श्रोदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक श्राङ्गोपाङ्क, देवगत्यानुपूर्वी, परघात, उन्द्र्शास, बादर, पर्याप्त और प्रत्येकके श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यानगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिक बन्धक जीव दोनों ही तुस्य होकर श्रमंख्यातगुण हैं। इससे श्रागेक पदोंका भक्क ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। सातावेदनीय, श्रमतावेदनीय. सात नोकषाय, तीनगित, चार जाति, पाँच संस्थान, श्रोदारिक श्राङ्गोपाङ्क, छह संहनन, तीन श्रानुपूर्वी, श्रातप, उद्योत, दो विहायोगित, त्रस, स्थावर, सूदम, अपर्याप्त, साधारण, स्थिर श्रादि छह युगल और दो गोत्रकी संख्यातगुणवृद्धि श्रोर संख्यात गुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुस्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे श्रवक्तव्य पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इससे श्रागेक पदोंका भक्क ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके समान है।

हण्श. ऋाभिनिबोधिकज्ञानी, श्रृतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवों पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, उच्चगोत्र और पाँच ऋन्तरायके ऋवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे ऋसंख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव संख्यातगुण हैं। इनसे ऋसंख्यातगुण- हानिके बन्धक जीव संख्यातगुणहिद्ध और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव

असंखेजभागविद्व-हाणी संखेजगु०। अविद्वि० असं०गु०। णिहा-पचला-अद्वक०-भय०दुगुं०-दोगदि-पंचिंदि०-चदुसरीर०-समचदु०-दोअंगो०-वज्जरिस०-वण्ण०४-दोआणु०अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-तित्थय० सन्वत्थोवा अवत्त०।
संखेजगुणविद्व-हाणी दो वि० असं०गु०। उविरमपदा णाणावरणभंगो। सादादिबारस०
मणजोगिभंगो। देवायु० ओघं। मणुसायु० देवोघं। आहारदुगं ओघं। एवं ओधिदंस०सम्मादि०-खइग०-वेदगसम्मा०। णवरि खहगे दोआयु० मणुसि० भंगो।

१७२. मणपज्ज० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पुरिस०-उचा० पंचंत० ओधिमंगो । सेसाणं आमिणि०मंगो । णवरि संखेज्जं कादव्वं । एवं संजद० ।

९७३. सामाइ०-स्रेदो० पंचणा०-चदुदंसणा०-स्रोभसंज०-उचा०-पंचंत० अवत्त० णित्य । सेसं मणपज्जवमंगो । परिहार० आहारकाय-जोगिमंगो । णवरि आहारदुगं ओघं । सुद्रुमसंप० अवगदवेदमंगो । णवरि अवत्त० णित्य । संजदासंजदे धुविगाणं सादादीणं च देवमंगो । णवरि तित्थय० इत्थिमंगो । अमंजदे धुविगाणं तिरिक्खोघं । सेसाणं

दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके वन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके वन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। निद्रा, प्रचला, आठ कपाय, भय, जुगुण्सा, दो गित, पख्चे न्द्रियजाति, चार शरीर, समचतुरक्रसंस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, वअऋप्यनाराचसंहन्न, वर्णचतुष्क, दो आनुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगित, त्रसचतुष्क, सुभग, मुस्वर, आदेय, निर्माण और तीर्थङ्करके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्नांक हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं। इनसे आगेक पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। माता आदि बारह प्रकृतियोंका भङ्ग मनायोगी जीवोंके समान है। देवायुका भङ्ग आघके समान है। मनुष्यायुका भङ्ग समान्य देवोंके समान है। आहारकद्विकका भङ्ग आघके समान है। इसी प्रकार अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्ट, क्षायिकसम्यग्दृष्ट जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि चायिकसम्यग्दृष्ट जीवोंमें दो आयुओंका भङ्ग मनुष्यिनियोंके समान है।

१७२. मनःपर्ययज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनवरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, उच्चगोत्र श्रौर पाँच अन्तरायका भङ्ग श्रवधिज्ञानी जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग श्राभिनिबोधिज्ञानी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि संग्यातगुणा करना चाहिये। इसी- प्रकार संयत जीवोंके जानना चाहिये।

६७३. सामायिकसंयत और छेदापस्थापनासंयत जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, लोभ संज्वलन, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका अवक्तव्य पद नहीं है। शेप भङ्ग मनःपर्ययक्ञानी जीवोंके समान है। परिहारिवशुद्धिसंयत जीवोंमें आहारककाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि आहारकदिकका भङ्ग श्रोधके समान है। सूद्मसाम्परायिक संयत जीवोंमें अपगतवदी जीवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य पद नहीं है। संयतासंयत जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली और साता आदि प्रकृतियोंका भङ्ग देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग स्विद्धी जीवोंके समान है। असंयत जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका

# मृलोघं । चक्खुदंस० तसपन्जतभंगो ।

६७४. किण्णलेस्साए देवगदि०४ सन्वत्थो० संखेज्जगुणविहु-हाणी दो वि०। अवत्त० असंखेज्जगु०। दोविहु-हाणी संखेज्जगुणा कादन्वा। अविहु० असंखेज्जगु०। ओरालि० सन्वत्थो० संखेज्जगुणविहु-हा० दो वि०। अवत्त० असं०गु०। उविहिं धुवभंगो। तित्थय० इत्थिभंगो। णविर अवत्त० णित्थ। सेसाणं पगदीणं असंजदभंगो। एवं णील-काऊए। णविर काऊए तित्थय० णिरयभंगो। देवगदिचदुकस्स य अवत्त० संखेज्जगु०।

१७५. तेऊए धुविगाणं देवभंगो। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-बारसक०-देवगदिओरालि०-वेउव्वि-वेउव्वि०अंगो०-देवाणु०-तित्थय० सन्वत्थो० अवत्त०। संखेजगुणविद्वि-हाणी दो वि० असं०गु०। उविरं धुवभंगो। सादासाद०-सत्तणोक०-दोगदिदोजादि-छस्संठा०-ओरालि०श्रंगो०-छस्संघ०-दोआणु०-दोविहा०-आदाव० [उज्जो०-]
तस-थावर०-थिरादिछयुग०-णीचागो०-उचा० सव्वत्थो० संखेज्जगुणविद्व-हाणी दो
वि०। अवत्त० संखेज्जगु०। सेसपदा धुवभंगो। [आहादुगं ओषं।] एवं पम्माए वि।

भङ्ग सामान्य निर्यञ्चोके समान है। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग मूल श्रोधके समान है। चतुर्द्शनवाले जीवोंमें त्रसपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है।

हिण्छ. कृष्णलेश्यावाले जीवोंमें देवगतिचतुष्ककी संख्यात गुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिक वन्यक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे अवक्तव्यपदंक बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष दो वृद्धि और दो हानिक बन्धक जीव संख्यातगुणे करने चाहिये। इनसे अवस्थित-पदंके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। औदारिकशरीरकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिक वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे अवक्तव्यपदंके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इससे आगेका भङ्ग ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ख्रांबदी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य पद नहीं है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग असंयतोंक समान है। इसीप्रकार नील और कार्पातलेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि कार्पातलेश्यावाले जीवोंमे तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग नारिकयोंक समान है तथा देवगति चतुष्कक अवक्तव्यपदंके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं।

६७५. पीतलेश्यावाले जीवोंमें ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग देवोंक समान है। स्त्यानगृद्धि नीन, भिथ्यात्व, बारह कपाय, देवगति, श्रोदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियकशरोगापांग, देवगति। श्रोदारिकशरीर, वैक्रियकशरीर, वैक्रियकशरोगापांग, देवगत्यानुपूर्वी श्रोर तीथंकरके अवक्तत्र्यपदके बन्धक जीव सबसे स्तांक हैं। इससे संख्यातगुणवृद्धि श्रोर संख्यातगुणहानिक वन्धक जीव दानों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं। इससे श्रागंका भंग ध्रववन्धवाली प्रकृतियोंके समान हे। सातावेदनीय, श्रासातावेदनीय, सात नोकषाय, दो गित, दो जाति, छह संस्थान, श्रोदारिकश्रागोपांग, छह संहनन, दो श्रानुपूर्वी, दो विहायांगित, श्रातप, उद्यात, अस, स्थावर, स्थिर श्रादि छह युगल, नीचगांत्र श्रोर उच्चगांत्रकी संख्यागुणवृद्धि और संख्यात गुणहानिक वन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तांक हैं। श्रवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यात गुणे हैं। श्रेप पदोंका भंग ध्रुववन्धवाली प्रकृतियोंक समान हे। श्राहारकद्विकका भङ्ग श्रोपके समान है। इसी प्रकार पद्मलहयावाले जीवोंमें भी जानना चाहियं। इतनी विशेषता है कि श्रीदारिक-

णवरि ओरालि०अंगो० देवगदिमंगो। पंचिदिय-तस० धुविगाण भंगो। णवरि तिष्णि-वेद०-समचदु०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदे०-उचा० थीणगिद्धिमंगो।

१७६. सुकाए पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० सन्वत्थो० अवत्त० । असंखेन्जगुणवृत्ती संखेन्जगु० । असंखेन्जगुणहाणी संखेन्जगु० । संखेन्जगुणवृत्ति-हाणी
दो वि० असंखेजगु० । संखेजगणवृत्ति-हाणी दो वि० संखेजगु० । उन्निरं देवगदिभंगो ।
पंचदंसणा०-विच्छ०-बारसक०-भय-दुगुं०-दोगदि-पंचिदि०-चदुसरीर०-समचदु०-दोअंगो०वज्जरिस०-वण्ण०४-दोआणु०-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-सुमग-सुस्सर-आदे०-णिमि०तित्थय० सन्वत्थोवा अवत्त० । संखेन्जगुणवृत्ति-हाणी दो वि तु० असंखेन्जगु० । उवरिमपदा णाणावरणमंगो । सादावेद०-जसगि० उचा० ओधिमंगो । आसादवे०-इत्थिवे०णवुंस०-चदुणोक०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-थिराथिर-सुभासुभ-दूभग-दुस्सरअणादे०-अजस०-णीचा० आणदमंगो । पुरिसवेद० ओधिमंगो । णविर अवत्त० असादभंगो । [आहारदुगं ओघं । ] अन्भवसिद्धिय-मिन्छा० मदि०मंगो ।

९७७, उबसमसं० पंचणा० चहुदंस० चहुसंज० पुरिस० -उचा० पंचंत० सन्वत्थोवा अवत्र० । असंखेज्जगुणवड्डि-हाणी संखेज्जगु० । संखेज्जगुणवड्डी० विसे० । सेसपदा

त्राङ्गोपाङ्गका भङ्ग देवगतिकं समान है। पख्च न्द्रियजाति स्रोर त्रस प्रकृतिका भङ्ग ध्रवबन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि तीन वद, समचतुरस्त्रसंस्थान, प्रशस्तविहायोगित, सुभग, सुस्वर, आदेय स्रोर उच्चगोत्रका भङ्ग स्त्यानगृद्धित्रिकके समान है।

१७६. शुक्तलेश्यावालं जीवोंमं पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायके अवक्तन्यपदके बन्धक जीव सबसे स्तांक हैं। इनसे असंख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिक बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इससे आगेका भन्न देवगतिके समान है। पाँच दर्शनावरण, मिध्यात्व, बारह कपाय, भय, जुगुप्सा, दो गति, पक्क न्द्रियजाति, चार शरीर, समचतुरक्षसंस्थान, दो आङ्गापाङ्ग, व अऋपभनाराचसंहनन, वर्णचतुष्क, दो आनुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्तिवहायोगित, असचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और तीर्थकरके अवक्तन्यपदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं। इससे आगेके पदोंका भग ज्ञानावरणके समान है। सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका भंग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। असातावेदनीय, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, चार नोकषाय, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्तिवहायोगिति, स्थिर, अस्थिर, ग्रुम, अग्रुभ, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रका भंग आनत कल्पके समान है। पुरुषवेदका भंग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। श्राहारकद्विकका भंग असातावेदनीयके समान है। आहारकद्विकका भंग ओषके समान है। अभव्य और मिध्यादृष्टि जीवोंमें मस्यज्ञानी जीवोंके समान भग है।

८७७. उपरामसम्यग्दृष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, उच-गोत्र और पांच अन्तरायके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगणहानिके बन्धक जीव संख्यातगुण हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव विशेष अधिक ओघिमंगो०। आहारदुग-तित्थय० एकत्थ भाणिद्व्वं। सेसाणं पगदीणं ओघिभंगो। सासणे णिरयभंगो। सम्मामिच्छा० देव०भंगो। सण्णीसु मणजोगिभंगो।

६७८. असण्णीसु धुविगाणं सन्तरथोवा संखेजजगुणविष्ठु-हाणी दो वि तु० । संखेजजभागविष्ठु-हाणी दो वि० असं०गु० । असंखेजजभागविष्ठु-हाणी दो वि तु० अणंतगु० ।
अविष्ठि० असंखेजजगु० । सेसाणं परियत्तमाणियाणं पगदीणं सन्वरथोवा संखेजजगुणविष्ठुहाणी दो वि० । संखेजजभागविष्ठु-हाणी दो वि० असंखेजजगु० । अवत्त० अणंतगु० ।
उविरमपदा णाणावरणभंगो । णविर चदुआयु०-वेउन्वियछ० तिरिक्खोधं । एइंदि०आदाव-थावर०-सुदुम-साधार० सन्वत्थोवा संखेजजगुणविष्ठु-हाणी दो वि० । संखेजजभागविष्ठु हाणी दो वि असं०गु० । उविरमपदा धुवभंगो । मणुसगदिदुग-उचा०
संखेजजगुणविष्ठु-हाणी णितथ । सेसं च भाणिद्व्वं । एवं अप्पाबहुगं समत्तं ।

एवं वहुनंधो समत्तो अज्झवसाणसमुदाहारो

९७९. अज्झवसाणसम्रदाहारे ति तत्थ इमाणि तिण्णि अणियोगदाराणि-पगदिसम्रदा-हारो द्विदिसम्रदाहारो तिन्वमंददा ति ।

हैं।शेष पदोंका भङ्ग श्रवधिज्ञानी जीवोंक समान है। इतनी विशेषता है कि आहारकद्विक भौर तीथेक्टर इनको एक जगह कहना चाहिये।शेष प्रकृतियोंका भङ्ग श्रवधिज्ञानी जीवोंके समान है। सासादन-सम्यग्दृष्टि जीवोंमें नारिकयोंके समान भङ्ग है। सम्यग्मिध्यादृष्टि जीवोंमें देवोंक समान भङ्ग है। संज्ञी जीवोंमें मनोयोगी जीवोंके समान भङ्ग है।

हिण्यः असंज्ञी जीवोंमें ध्रवबन्धवाली प्रकृतियोंकी संख्यानगणवृद्धि और संख्यातगणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुण हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातगुण हैं। शेष परिवर्तनमान प्रकृतियोंकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिक बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्ताक हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिक बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवक्तव्य पदके बन्धक जीव अनन्तगुणे हैं। इससे आगेके पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। इतनी विशेषता है कि चार आयु और विक्रियक छहका भङ्ग सामान्य तिर्यक्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि चार आयु और साधारणकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इससे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं। इससे आगेके पदोंका भङ्ग ध्रव बन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। मनुष्यगितिद्विक और उच्चगोत्रकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानि नहीं है। शेष पद कहने चाहिय।

इस प्रकार व्यल्पबहुत्व समाप्त हुन्ना । इस प्रकार वृद्धिबन्ध समाप्त हुन्ना ।

### अध्यवसानसमुदाहार

८७६. ऋध्यवसानसमुदाहारका प्रकरण है। उसमे ये तीन अनुयोगद्वार होते हैं—प्रकृतिस•
मुदाहार, स्थितिसमुदाहार और तीव्रमन्दता।

# पगदिसमुदाहारो

६८०. पगदिसमुदाहारे ति तत्थ इमाणि दुवे अणियोगद्दाराणि-पमाणाणुगमो अप्पाबहुगे ति ।

## पमाणाणुगमो

६८१. पमाणाणुगमो पंचणाणात्ररणीयाणं असंखेज्जा लोगा द्विदिबंधज्झवसाणहा-णाणि । एवं सन्त्रासिं पगदीणं याव अणाहारगे ति णादन्वं । णवरि अवगदे सुहुमसंप-राह्गेसु अंतोसुहुत्तमेत्ताणि अज्जवसाणहाणाणि ।

एवं पमाणाणुगमो समत्तो ।

# अपाबहुअं

६८२. अप्पाबहुगं दुविहं-सत्थाणअप्भाबहुगं चेव परत्थाणअप्पाबहुगं चेव। सत्थाणअप्पाबहुगं पगदं। दुविधो णिहेसो-ओघेण आदेसेण यः ओघेण पंचणाणावर-णीयाणं सिरसाणि अज्झवसाणहाणाणि । सन्वत्थोवाणि थीणिगिद्धि०३ हिदिबंधज्झवसाणहाणाणि । णिहा-पचला० हिदिबंधज्झवसाणहाणाणि विसेसाहियाणि । चदुदंसणा० हिदिबंधज्झवसाणहाणाणि विसे०। सन्वत्थोवा सादस्स हिदिबंधज्झवसाणहाण०। असादस्स हिदिबंधज्झवसाणहाणाणि असंखेजजगुणाणि। सन्वत्थोवा० हस्सरिद० हिदि-बंधज्झवसाण०। पुरिस० हिदिबं० विसे०। हित्थ० हिदिबं० असंखेजजगुणाणि। णवुंस०

## प्रकृतिसम्बदाहार

६८०. प्रकृतिसमुदाहारका प्रकरण हैं । उसमें ये दो अनुयोगद्वार होते हैं-प्रमाणानुगम ऋोर अल्पबहुत्व ।

### प्रमाणानुगम

६८१. प्रमाणानुगम—पांच ज्ञानावरणीयके श्रसंख्यातलांक प्रमाणिस्थितबन्धाध्यवसान स्थान हाते हैं । इसी प्रकार सभी प्रकृतियोंके श्रमाहारकमार्गणा तक ज्ञानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि श्रपगतवेदी श्रोर सूद्त्मसाम्परायिक संयत जीवोंमे अन्तर्मुहूर्त प्रमाण स्थिति श्रध्यवसानस्थान होते हैं । इस प्रकार प्रमाणानुगम समाप्त हुआ ।

## अल्पबहुत्व

६८२. अल्पबहुत्व दो प्रकार का है—स्वस्थान अल्पबहुत्व श्रोर परस्थान अल्पबहुत्व। स्वस्थान अल्पबहुत्वका प्रकरण है। उसकी अपेन्ना निर्देश दो प्रकार हें—श्रोघ और आदेश। आपमे पाँच ज्ञानावरणीयके अध्यवसानस्थान समान होते हैं। स्त्यानगृद्धित्रिकके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोक होते हैं। इनसे निद्रा और प्रचलांक स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे चार दर्शनावरणंक स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। सातावदन्तीयके स्थितबन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोक होते हैं। इनसे असातावदनीयके स्थितबन्धाध्यवसान स्थान असंख्यातगुणं होते हैं। हास्य और रितके स्थितबन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोकहोते हैं। इनसे पुरुषवदिके स्थितबन्धाध्यवसान स्थान असंख्यातगुणं होते हैं। इनसे निर्देश अधिक होते हैं। इनसे क्षीवदिके स्थितबन्धाध्यवसान स्थान असंख्यातगुणं होते हैं। इनसे निर्देश अधिक होते हैं। इनसे क्षीवदिके स्थितबन्धाध्यवसान स्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे निर्देशके हथितबन्धाध्यवसान स्थान असंख्यातगुणे हाते हैं। इनसे निर्देशके हथितबन्धाध्यवसान स्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे निर्देशके हथितबन्धाध्यवसान स्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे निर्देशके हथितबन्धाध्यवसान स्थान असंख्यातगुणे होते हैं।

हिदिबं० असंखे० । अरिद-सोग० हिदिबं० विसे० । सय-दुगुं० हिदिबं० विसे० । अणंताणुबंधि०४ हिदिबं० असंखेज्ज० । अपचक्खाणा०४ हिदिबं० विसे० । पचक्खाणा०४ हिदिबं० विसे० । कोधसंज० हिदिबं० विसे० । माणसंज० हिदिबंधज्ञा० विसे० । मायासंज० हिदिबंध जा० विसे० । लोभसंज० हिदिबं० विसे० । मच्छ० हिदिबं० असंखेज्जगु० । सच्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायूणं हिदिबं० । णिरयायुग० हिदिबं० असंखेज्जगु० । देवायुग० हिदिबं० विसेसा० । सच्वत्थोवा देवगदिणामाए हिदिबं० । मणुसगदिणामाए हिदिबं० । मणुसगदिणामाए हिदिबं० असंखेज्जगु० । णिरयगदि० हिदिबं० असंखेज्जगु० । तिरिक्खगदि० हिदिबं० विसे० । सच्वत्थोवा चदुरिंदि० हिदिबं० । तीइंदि० हिदिबं० विसे० । बीइंदि० हिदिबं० विसे० । एइंदि० हिदिबं० असंखेज्जगु० । पंचिदिय० हिदिबं० विसे० । सच्वत्थोवा० आहारसरीर० हिदिबं० । ओरालि० हिदिबं० असंखेज्जगु० । वेउच्चिय० हिदिबं० विसे० । तोजइगादिणव० हिदिबं० विसे० । सच्वत्थोवाणि समचदु० हिदिबं० । णग्गोद० हिदिबं० असंखेज्जगु० । सादिय० हिदिबं० असंखेज्जगु० । खुज्ज० हिदिबं० असंखेज्जगु० । सादिय० हिदिबं० असंखेज्जगु० । खुज्ज० हिदिबं० असंखे

नगणे होते हैं। इनसे अरित और शोकके स्थितिबन्धाध्यसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे भय श्रीर जगुष्साके स्थिति वन्याध्यवसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे श्रनन्तानुबन्धी चतुष्ककं स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान ऋसंख्यातगुणे होते हैं। इनसे ऋप्रत्याख्यानावरण चतुष्कके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। इनमे प्रत्याख्यानावरण चतुष्कके स्थितिबन्धा-ध्यवसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे क्रोध संज्वलनके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष ऋधिक होते हैं। इनसे मान संज्वलनके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष ऋधिक होते हैं। इनसे मायारांज्वलनके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष श्रधिक होते हैं। इनसे लोभ-संज्वलनके स्थितिवन्धाध्यसानस्थान विशेष अधिक होते हैं । इनसे मिध्यात्वके स्थितिबन्धाध्य-वसानस्थान ऋसांख्यातगुणे होते हैं। तिर्यक्काय और मनुष्यायके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोक होते हैं। इनसे नरकायुके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगणे होते हैं। इनसे देवायके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हाते हैं। देवगतिनामकर्मके स्थितिबन्धाध्यवसान-म्थान सबसे स्तोक होते हैं। इससे मनुष्यगतिके स्थितबन्धाध्यवसानस्थान ऋसंख्यातगणे होते हैं। इनसे नरकगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान श्रशंख्यातगुणे होते हैं। इनसे तिर्युख्यातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक होते हैं। चतुरिन्द्रिय जातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक होते हैं। इनसे त्रीन्द्रिय जातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष ऋधिक हाते हैं। इनसे द्रीन्दिय जातिके स्थितिक धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे एकेन्द्रिय जातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे प्रक्रोन्द्रिय जातिके स्थितिबन्धाध्यवसान-स्थान विशेष ऋषिक होते हैं। श्राहारकशरीरके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक होते हैं। इनसे ऋौदारिकशरीरके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यानगुणे होते हैं। इनसे वैक्रियिक शरीरके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हाते हैं। इनसे तैजसशरीर आदि नौ प्रकृतियोंके स्थितिबन्याध्यवसानस्थान विशेष अधिक होते हैं। समचतुरस्रसंस्थानके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक होते हैं। इनसे न्यप्रोधपरिमण्डलसंस्थानक स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान असंख्यात-गुणे होते हैं। इनसे स्वातिसंस्थानके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान श्रासंख्यातगुणे होते हैं। इनसे बुदजकसंस्थानके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान श्रासंख्यानगणे होते हैं। इनमे बामन संस्थानके

ज्जगु०। वामणसंठा० द्विदिवं० असंखेज्जगु०। द्वुंडसं० द्विदिवं०-असंखेज्जगु०। सम्बन्त्रथोवा० आहारसरीरअंगो० द्विदिवं०। ओरालिय०मंगो० द्विदिवं० असंखेज्जगु०। वेउच्विय०अंगो० द्विदिवं० विसे०। सन्वत्थोवा० वज्जरिस० द्विदिवं०। एवं यथा संठाणं तथा संघडणं। यथा गदो तथा आणुपुन्वी। सन्वत्थोवा० पसत्थवि० द्विदिवं०। अप्यसत्थ० द्विदिवं० असंखेजगु०। सन्वत्थोवा० थावरणामाए द्विदिवं०। तस० द्विदिवं० विसे०। सन्वत्थोवा० सुदुम-अपजत्तः साधारण-थिर-सुम-सुस्सर-आदेज-जसिग०-उचा० द्विदिवं०। तप्पडिपक्खाणं द्विदिवं० असंखेजगु०। पंचंतरा० द्विदिवं० सरि-साणि। एवं ओघभंगो कायजोगि-कोधादि०४-अचक्खुदं०-भवसि०-आहारगे ति।

६८३. णेरइएस सन्वत्थोवा थीणगिद्धि०३ द्विदिवं०। छदंसणा० विसे०। सादा-सादा० ओघमंगो। सन्वत्थो० पुरिस०। हस्स रिद० द्विदिवं० असंखे०। [इित्थ० द्विदिवं० असंखेज०। ] णवुंस० द्विदिवं० असंखेजगु०। अरिद्धिनं० द्विदिवं० विसे०। भय०-दु० द्विदिवं० विसे०। अणंताणुवंधि०४ द्विदिवं० असंखेज्जगु०। बारसक० द्विदिवं० विसे०। मिच्छत्त० द्विदिवं० असंखेज्जगु०। सन्वत्थो० मणुसग० द्विदिवं०।

स्थितिबन्धाध्यवतानस्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे हुण्डसंस्थानके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान स्थान हैं। इनसे स्थानिबन्धाध्यवसानस्थान स्थान स्थान

६८३. नारिकयोंमें स्त्यानगृद्धित्रिकके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे छह दर्शनावरणके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। सातावेदनीय और असाता वेदनीयका मंग ओघके समान है। पुरुषवेदके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे हास्य और रितके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे स्थितबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे स्थितबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे अप्तिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे अप्तिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे अप्तिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे अनन्तानुबन्धी चारके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे बारह कषायोंके स्थितबन्धाध्यावसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे मिश्यात्वके स्थितबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे बारह कषायोंके स्थितबन्धाध्यावसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे मिश्यात्वके स्थितबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। मनुष्यगितके स्थितबन्धाध्यवसानस्थान

तिरिक्खग ० द्विदिवं ० असंखेज्जगु ० । सेसाणं पगदीणं ओघं । एवं सत्तसु पुढवीसु ० ।

६८४. तिरिक्खेसु दंसणावरणीय-वेदणीय-मोहणीय०णिरयभंगो । णवरि मोहणीय-अण्चक्खाणा०४ द्विदिबं० विसे० । अद्वकसा० द्विदिबं० विसे० । मिच्छ० द्विदिबं० असंखेज्जगु० । सन्वत्थोवा० तिरिक्ख-मणुसायूणं द्विदिबं० । देवायु० द्विदिबं० असंखेज्जगु० । णिरयायु० द्विदिबं० असंखेज्जगु० । सन्वत्थो० देवगदि० द्विदिबं० असंखेजजगु० । तिरिक्खगदि० द्विदिबं० असंखेजजगु० । णिरयगदि० द्विदिबं० असंखेजजगु० । सन्वत्थो० चदुरिदिवं० द्विदिबं० असंखेजजगु० । सन्वत्थो० चदुरिदिवं० द्विदिवं० । तीइंदि० द्विदिवं० विसे० । बेइंदि० द्विदिवं० विसे० । एइंदि० द्विदिवं० विसे० । पंचिदि० द्विदिवं० असंखेजजगु० । सन्वत्थो० ओरालि० द्विदिवं० विसे० । पंचिदि० द्विदिवं० असंखेजजगु० । सन्वत्थो० ओरालि० द्विदिवं० । वेउन्वि० द्विदिवं० असंखेजजगु० । तेजा०-क० द्विदिवं० विसे० । संठाणं संघडणं ओघं । णवरि खीलियसंघडणादो असंपत्तसेवट्ट० विसे० । सेसाणं ओघं । एवं पंचिदियतिरिक्खपज्जत्त-जोणिणोसु ।

६८५. पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तगेसु सव्वत्थोवाणि सादावेद० द्विदिबं०। असादा० द्विदिबं० असंखेज्ज०। सव्वत्थोवा० पुरिस० द्विदिबं०। इत्थिवे० द्विदिबं० असंखेज्जगु०। हस्स-रदीणं द्विदिबं० असंखेज्जगु०। णवुं स० द्विदिबं० असंखेज्जगु०। अरदि-वसानस्थान सवसं स्तांक है। इनसे तिर्यञ्चगतिके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान ऋसंख्यातगुणे हैं। शेप प्रकृतियोंका भंग खोघके समान है। इसी प्रकार सातों पृथिवियोंमें जानना चाहिये।

६८४. तिर्यञ्जोंमे दर्शनावरणीय, वदनीय श्रीर मोहनीयका भंग नारिकयोंके समान है। इतनी विशेषता है कि मोहनीयमे अप्रत्याख्यानावरण चारके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष श्रधिक हैं। इनसे आठ कपायोंके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष ऋधिक हैं। इनसे मिध्यास्वके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान ऋसंख्यातगुणे हैं। तिर्यक्काय और मनुष्यायके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्ताक हैं। इनसे देवायके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगण हैं। इनसे नरकायके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। देवगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे मनुष्यगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान ऋसंख्यातगुणे हैं । इनसे तिर्यक्कगतिके स्थिति-वन्याध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे नरकगतिके स्थिनबन्धाध्यवसानस्थान श्रसंख्यातगुणे हैं । चतुरिन्द्रियज्ञातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे त्रीन्द्रियज्ञातिके स्थिति-वन्धाध्यवसानस्थान विशेष ऋधिक हैं। इनसे द्वीन्द्रिय जातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे एकेन्द्रियजातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष ऋधिक हैं। इनसे पञ्चेन्द्रिय-जातिके स्थितिबन्याध्यवसानस्थान ऋसंख्यातगुणे हैं। ऋौदारिक शरीरके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्ताक हैं। इनसे बैकियिकशारीरके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान ऋसंख्यातगुणे हैं। इनसे नेजस ऋौर कार्मणशरीरके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष ऋधिक हैं। संस्थानों और संहननोंका भक्क त्र्योचके समान है। इतनी विशेषता है कि इनमें कीलकसंहननसे असम्प्राप्तासूप।टिकासंहननके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। शेप प्रकृतियोंका भंग श्रोघके समान है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चपर्याप्त और पञ्चे न्द्रियतिर्यञ्चयोनिनी जीवोंमें जानना चाहिये।

६ न्नं ५. पञ्चेन्द्रियतिर्यव्च अपर्याप्त जीवोंमें सातावेदनीयके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे असातावेदनीयके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। पुरुपवेदके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे स्वीवेदके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे नपुंसकवेदके

सोग० द्विदिबं० विसे० । भय०-दुगुं० द्विदिबं० विसे० । सोलसक० द्विदिबं० असंखे-ज्ञगु० । मिच्छत्त० द्विदिबं० असंखेजगु० । सव्वत्थोवाणि मणुसगदि० द्विदिबं० । तिरिक्खगदि० द्विदिबं० असंखेजगु० । सव्वत्थोवाणि पंचिदि० द्विदिबं० । चदुरिदि० द्विदिबं० असंखेजगु० । तीइंदि० द्विदिबं० असंखेजगु० । बीइंदि० द्विदिबं० असंखेजगु० । एइंदि० द्विदिबं० असंखेजगु० । संठाणं संघडणं विहायगदी ओषं । सम्बत्थो० तसणामाए द्विदिबंधन्त्र । थावर० द्विदिबं० असंखेजगु० । सेसाणं ओषं । एवं मणुसअपज्ञत्त-सव्वविगलिदिय-पंचिदिय-तसअपज्ज० सव्वएइंदि०-पंचकायाणं च ।

९८६. मणुसेसु हेद्विष्ठियो ओघभंगो । गदिणामाए जादिणामाए च तिरिक्खोघं । णवरि वेउन्विय ० असंखञ्जगु० । सेसं तिरिक्खोघं ।

९८७. देवाणं णिरयभंगो । णविर सन्त्रत्थोवा० एइंदि० द्विदिवं० । पंचिदिय० द्विदिवं० विसे० । एवं तस-थावराणं । भवणवा०-वाणवेंत०-जोदिसि०-सोधम्मीसाणेसु सन्त्रत्थो० पंचिदिय० द्विदिवं० । एइंदि० द्विदिवं० असंखेज्जगु० । एवं तस-थावराणं । सन्वत्थोवा असंपत्तसेवह० द्विदिवं० । खोलिय० विसे० । सेसाणं देवोघं । सणक्मार-

स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे अरित और शोकके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे भय और जुगुष्साके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे सोलह कपायोंके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे मिण्यात्वके स्थितवन्धाध्यन्मानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे मिण्यात्वके स्थितवन्धाध्यन्मानस्थान असंख्यातगुणे हैं। मनुष्यगितके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे तिर्यक्षगितके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान संख्यातगुणे हैं। पञ्चेन्द्रियज्ञातिके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे वितिवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यागुणे हैं। इनसे व्रीन्द्रियज्ञातिके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यागुणे हैं। इनसे हीन्द्रियज्ञातिके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यानगुणे हैं। इनसे एकेन्द्रियज्ञातिके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यानगुणे हैं। इनसे एकेन्द्रियज्ञातिके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यानगुणे हैं। इनसे एकेन्द्रियज्ञातिके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यानगुणे हैं। इनसे स्थावरनामकर्मके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यानगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग अधिके समान है। इसी प्रकार मनुष्यअपर्याप्त, सब विकलेन्द्रिय, पञ्चेन्द्रियअपर्याप्त, त्रसअपर्याप्त, सब एकेन्द्रिय और पांच स्थावरकायिक जीवोंके जानना चाहिये।

८८६. मनुष्योंमें नीचेकी प्रकृतियोंका भङ्ग श्रोधके समान है। गतिनामकर्म श्रीर जाति-नामकर्मका भङ्ग सामान्य तिर्यक्कोंके समान है। इतनी विशेषता है कि वैक्रियिकशरीरके स्थितिबन्धा-ध्यवसानस्थान श्रसंख्यानगुणे हैं। शेष भङ्ग सामान्य तिर्यक्कोंके समान है।

६०७. देवोंमें सामान्य नारिकयोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रियजातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनमे पक्केन्द्रियजातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष ऋधिक हैं। इसी प्रकार त्रस और स्थावर प्रकृतियोंका ऋल्पबहुन्व जानना चाहिये। भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और सौधर्मेंशानकल्पके देवोंमें पक्केन्द्रियजातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे एकेन्द्रिय जातिक स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान ऋसंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार त्रस और स्थावर प्रकृतियोंकी अपेक्षा जानना चाहिये। ऋसम्प्राप्तस्थापिकासंहननके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे कीलकसंहननके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे कीलकसंहननके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोक हैं।

याव ० उविश्मिगेवज्जा पढमपुढवीभंगो । अणुहिस याव सन्बद्वेस सन्वतथो ० हस्स-रदीणं द्विदिवं ० । अरिद-सोग ० द्विदिवं ० असंखेज्जगु ० । पुरिस ० - भय ० - दुर्गु ० विसे ० । बारमक ० द्विदिवं ० असं ० गु ० । सेसाणं णिरयभंगो । एवं एस भंगो आहार ० - आहारमि ० - आभि ० सुद ० - आधि ० - मणपज्जव ० - सन्वसंजद - ओधिदं ० - सम्मादि ० - खइग ० - वेदगस ० - उवसमस ० - सासण ० - सम्मामि च्छा ० ।

६८८. पंचिदि०-तस०२-पंचमण०-पंचवचि०-पुरिस०-चक्खुदं०-सण्णि ति मूलोघं। ओरालियका० मणुसिभंगो। ओरालियमि० तिरिक्खअपज्जत्तभंगो। णविर देवगदि०४ अत्थि। वेउन्वि० देवोघं। एवं चेव वेउन्वियमिस्स०। कम्मइ०-अणाहारगे तिरिक्ख-अपज्जत्तभंगो। तिसेसो ओघेणेव साधेदन्वं। इत्थिवे० पंचिदियमंगो। किंचि विसेसो०। णवंसगेस ओघं। जादिणामेस विसेसो०। अवगदवेदे ओघेण साधेदन्वं। एवं सुहुम-संपरा०। मदि०-सुद०-विमंगणाणि-अन्भवसिद्धिय-मिन्छा० ओघं। णविर सम्मत्तपगदीस विसेसो। असंजदे ओघं। आयु० विसेसो। एवं तिण्णिले०। णविर किंचि विसेसो।

६८६. तेऊए मोहणीयो ओघो। सेसाणं सोधम्मभंगो। एवं पम्माए वि। णवरि

अधिक हैं। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। सानत्कुमार कल्पसे लेकर उपरिमप्रवेयक तकके देवोंमें पहली पृथ्वीके समान मङ्ग हैं। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमे
हास्य और रितके स्थितिवन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे अरित और शांकके
स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुण हैं। इनसे पुरुपवेद, भय और जुगुप्साके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे बारह कषायोंके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग नारिकयोंके समान है। इसी प्रकार यह भङ्ग आहारककाययांगी आहार
किमिश्रकाययांगी, आभिनिवाधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अविज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, सब संयत, अविध,
दर्शनी, सम्यग्दष्टि, चायिकसम्यग्दिष्ट, वेदकसम्यग्दिष्ट, उपशमसम्यग्दिष्ट, सासादनसम्यग्दिष्ट और
सम्यग्मिश्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिये।

६८८. पञ्चेन्द्रियद्विक, त्रसद्विक, पाँच मनायागी, पाँच वचनयोगी, पुरुषवेदी, चल्चदर्शनी श्रोर मंज्ञी जीवोंमें, मूल श्रोपके समान भङ्ग है। श्रोदारिककाययोगी जीवोंमें मनुष्यिनयोंके समान भङ्ग है। श्रोदारिकिमिश्रकाययोगी जीवोंमें तिर्यञ्चश्रपयाप्रकोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि इनमें देवगतिचतुष्क है। वैक्रियिककाययोगी जीवोंमें मामान्य देवोंके समान भङ्ग है। इसीप्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिये। कार्मणकाययोगी श्रोर श्रनाहारक जीवोंमें निर्यञ्चश्रपयाप्तकोंके समान भङ्ग है। जो विशेष हो उसे श्राचसे साध लेना चाहिये। स्वीवदी जीवोंमें पञ्चित्र्यके समान भङ्ग है। किन्तु कुछ विशेषता है। नपुंसकवदी जीवोंमें श्रोपके समान भङ्ग है। किन्तु जातिनामककर्मकी प्रकृतियोंमें कुछ विशेषता है। श्रपगनवेदी जीवोंमें श्रोपके समान साध लेना चाहिये। इमीप्रकार सूद्मसाम्परायसंयत जीवोंके जानना चाहिये। मत्यज्ञानी, श्रताज्ञानी, विभङ्गज्ञानी, श्रभव्य श्रोर मिध्यादृष्टि जीवोंमें श्रोपके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्यसम्बन्धी प्रकृतियोंमें विशेषता जाननी चाहिये। श्रसंयतोंमें श्रोपके समान भङ्ग है। किन्तु चार श्रायुत्रोंमें विशेषता जाननी चाहिये। इसीप्रकार तीन लेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिये। किन्तु इतमें कुछ विशेषता है।

८८६. पीतलेश्यावाले जीवोंमें मोहनीयका भङ्ग स्रोघके समान है। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग साधर्मकरूपके समान है। इसीप्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंमें भी जानना चाहिये। इतनी विशेषता है सहस्सारभंगो । सुकाए ओघं । णविर णामे विसेसो । सन्वत्थोशा० मणुसगिद० हिदिबं० । देवगिद० हिदिबं० विसे० । अथवा देवगिद० बंध० थोवा० । मणुसगिद० हिदिबं० असंखेज्जगु० । एवं सन्वणामाणं णेदच्वं । असण्णीसु मोहणीयं अपज्जत्तभंगो । चदु० आयु० तिरिक्खोघं । सेसाणं तिरिक्खोघं । एवं सत्थाणअप्पाबहुगं समत्तं

हह ०. परत्थाणअप्पावहुगं पगदं । दुविधो णिइसो — ओघेण आदेसेण य । ओघेण सन्वत्थोवाणि तिरिक्ख-मणुसायूणं द्विदिबंधन्झवसाणद्वाणाणि । णिरयायुगस्स द्विदिबंधन्स्भवसाणद्वाणाणि असंखेन्जगुणाणि । देवायु० द्विदिबंध० विसेसाहियाणि । आहार-सरीर० द्विदिबं० असंखेन्जगु० । देवगदि० द्विदिबं० असंखेन्जगु० । हस्स-रदीणं द्विदिबं० विसेसा० । पुरिस० द्विदिबं० विसे० । जस०-उच्चा० द्विदिबं० विसे० । सादावे० द्विदिबं० असंखेन्जगु० । मणुसगदि० द्विदिबं० विसे० । इत्थिवे० द्विदिबं० विसेसा० । णिरयगदि० द्विदिबं० असंखेन्जगु० । णवुंस० द्विदिबं० विसे० । अरदि-सोग०-अनस० द्विदिबं० विसे० । तिरिक्खगदि-णीचागो० द्विदिबं० विसेसा० । ओराखिय० द्विदिवं० विसे० । वेजन्विय० द्विदिबं० विसे० । तेजा०-कम्म० द्विदिबं० विसे० । भय-दुगुं० द्विदिवं०

कि इतमें सहस्रारकल्पके समान भङ्ग है। शुक्रालेश्यावाले जीवोंभे श्रोधके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि नामकर्ममे छुछ विशेषता जाननी चाहिये। मनुष्यगतिके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्ताक हैं। इनसे देवगतिके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। अथवा देवगदिकं स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्ताक है। इनसे मनुष्यगतिके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्ताक है। इनसे मनुष्यगतिके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार सब नामकर्मकी प्रकृतियोंके विषयने जानना चाहिये। असंज्ञियोंमें मोहनी-यकर्मका भङ्ग अपर्याप्तकोंके समान है। चारों आयुआंका भङ्ग सामान्य तिर्यक्खोंके समान है। नथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्यक्खोंके समान है।

#### इस प्रकार स्वस्थान ऋरपबहुत्व समाप्त हुआ।

हि०. परस्थान अल्पबहुत्वका प्रकरण है। उसकी अपेचा निर्देश दा प्रकारका है—श्रांघ श्रोर श्रादेश। श्रांघसे तिर्यञ्चायु श्रोर मनुष्यायु के स्थितवन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तांक हैं। इनसे तरकायुके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे देवायुके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे देवायुके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान श्रांच विशेष श्रिष्ठिक हैं। इनसे देवगितके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान श्रांक हैं। इनसे देवगितके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान श्रांक हैं। इनसे यशाकीर्ति श्रोर उच्चगांत्रके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष श्रिष्ठ हैं। इनसे यशाकीर्ति श्रोर उच्चगांत्रके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष श्रिष्ठ हैं। इनसे सातावेदनीयके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान श्रांक श्रोर अथराकीर्तिक स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष श्रिक हैं। इनसे श्रोक श्रोर श्रिक श्रोर अथराकीर्तिक स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष श्रिक श्रोर श्रीक श्रोर श्रीक स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष श्रीक हैं। इनसे त्रीकारारिक स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष श्रीक हैं। इनसे विशे

विसे । असाद ० द्विदिबं ० असंखेज्जगु । श्रीणगिद्धि ० ३ द्विदिबं ० विसे ० । णिदा-पचला ० द्विदिबं ० विसे ० । पंचणाणा ० चिद्दंसणा ० - पंचंत ० द्विदिबं धज्झवसाण हाणाणि विसेसा ० । अणंताणु वं धि ० ४ द्विदिबं धज्झवसाण ० असंखेजगु ० । अप्पचक्खाणा ० ४ द्विदिबं ० विसे ० । पचक्खाणा ० ४ द्विदिबं घज्झवसाण हाणाणि विसेसा ० । को घसंज ० द्विदिबं ० विसे ० । माणसंज ० द्विदिबं ० विसे ० । मायासंज ० द्विदिबं ० विसे ० । लो भसंज ० द्विदिबं घज्झ ० विसेसा ० । मिच्छत्त ० द्विदिबं घज्झव ० असंखेजगु ० । एवं ओघं पंचिदिय-तस ० २ - पंचमण ० - पंचवचि ० - कायजोगि - पुरिस ० - को घादि ० ४ - चक्खुदं ० - अचक्खुदं ० -मवसि ० - सिण्ण-आहार ग ति । णवरि पुरिस ० को घादिसु च मो हणीए विसेसो ओघेण साघेदव्वं ।

६६१. णिरएसु सन्वत्थोवाणि दोण्णं आयुगाणं द्विदिवंधज्झवसाणद्वाणाणि। पुरिस०हस्स-रिद-जसगि०-उच्चा० द्विदिवंधज्झवसाणद्वाणाणि असंखेज्जगु०। सादावे० द्विदिवं०
असंखेजगु०। इत्थिवे० द्विदिवं० विसेसा०। मणुसगिद० द्विदिवंधज्झव० विसे०।
णवुंस० द्विदिवंध० असंखेजजगु०। अरिद-सोग-अजसगित्ति० द्विदिवं० विसेसा०।
तिरिक्खगिदिणीचागो० द्विदिवंध० विसेसा०। भय-दुगुं०-ओरालिय-तेजा०-कम्मइय०

भय त्रोर जुगुप्साक स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष त्रधिक हैं। इनसे त्रसातावेदनीयक स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान त्रसंख्यातगुणे हैं। इनसे स्त्यानगृद्धि तीनक स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष त्रधिक हैं। इनसे निद्रा त्रोर प्रचलाक स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष त्रधिक हैं। इनसे पाँच- ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण त्रोर पाँच त्रान्तरायक स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष त्रधिक हैं। इनसे त्रप्रत्याख्यानावरण चारक स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष त्रधिक हैं। इनसे त्रप्राच्यानावरण चारक स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष त्रधिक हैं। इनसे प्रत्याख्यानावरण चारक स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष त्रधिक हैं। इनसे प्रत्याख्यानावरण चारक स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष त्रधिक हैं। इनसे मान संज्यलनक स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष त्रधिक हैं। इनसे मान संज्यलनक स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष त्रधिक हैं। इनसे लोग मंज्यलनक स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष त्रधिक हैं। इनसे माथा संज्यलनक स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष त्रधिक हैं। इनसे माथा संज्यलनक स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष त्रधिक हैं। इनसे मिण्यात्यक स्थितवन्धाध्यवसानस्थान त्रसंख्यातगणे हैं। इसमे प्रकार त्रोघक समान पञ्चिन्द्रयद्विक, त्रमद्विक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, काययोगी, पुरुषेवदी, क्रोधादि चार कपायवाले, चजुःदर्शनी, त्रचुःदर्शनी, भव्य, संझी त्रोर त्राद्याले जीवोंक जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि पुरुषेवदी त्रोर क्रोधादि चार कपायवाले जीवोंमे मोहनीयकी विशेषता त्रोघक त्रनुसार साध लेना चाहिये।

६६१. नारिकयों में दो आयुआंके स्थितिवन्धाध्यवमानस्थान सबसे स्तांक हैं। इनसे पुरुष-वद, हास्य, रित, यशःकीर्ति और उचगात्रके स्थितिवन्धाध्यवमानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे सातावदनीयके स्थितिवन्धाध्यवमानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे सातावदनीयके स्थितिवन्धाध्यवमानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे मनुष्यगतिके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे नपुंसकवदके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे अरित, शोक और अयशःकीर्तिके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे तिर्यक्षगित और नीचगोत्रके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे भय, जुगुप्सा, औदारिकशगीर, तैजसशरीर और कार्मणशरीरके

द्वितंधि विसेसा । असादा द्वितंधि असंखे अगुणाणि । थीणिगिद्धि ३ द्वितंधि विसेसाहियाणि । पंचणा ० न्छदंसणा ० पंचंत ० द्वित्वंध ज्ञ्ञवसाण ० विसेसाहियाणि । अणं-ताणुवंधि ० ४ द्वितंधि ० असंखे ज्जगु ० । बारसक ० द्वित्वंध ० विसे ० । मिच्छत्त ० द्वित्वंध ० असंखे ज्जगु ० । एवं पढमाए पुढवीए । णवरि मणुसगिद ० द्वित्वंध ० विसे ० । तिरिक्खगिद ० द्वित्वंध ० असंखे अगु ० । णीचागो ० द्वित्वंध ० विसे ० । णवंस ० द्वित्वंध ० विसे ० । अरित्सोग — अजस ० द्वित्वंध ० विसे ० । उवरि णिरयोषं । एवं याव छिट्ठ ति ।

<i>६</i> ८२.	सत्तमाए	सन्वत्थोवा०	तिरिक्खायु ०	द्विदिबंध० ।	मणुसगदि–उचा	गो०
द्विदिवंध०	असंखेजजगु	० । पुरिस०-	-इस्स-रदि-ज	सगित्ति०द्विदि	बंघ० असंखेज्जगु	[0
सादावे० डि	दिवंघ० अ	सखेजगु० । इ	त्थिवे० द्विदिव	घ०¹	••••••••••	

# जीवसमुदाहारो

६६३. .....असादस्स चदुद्वाणबंधगा जीवा । आभिणि० जहण्णियाए द्विदीए जीवेहिंतो तदो पलिदे।वमस्स असंखेजदिभागं गंतूण दुगुणबद्धिदा । एवं दुगुणबद्धिदा

स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे असानावेदनीयके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे स्त्यानगृद्धित्रिकके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण और पाँच अन्तरायके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे अनन्तानुवन्धी चारके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे बारह कपायोंके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे मिण्यात्वके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार पहली पृथ्वीमें जानना चाहिय। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगतिके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे तिर्यक्षगतिके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे तिर्यक्षगतिके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे है। इनसे नीचगात्रके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इससे अपति होसे अरित शोक और अयशःकीतिके स्थितवन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इससे आगे सामान्य नारकियोंके समान भङ्ग है। इसी प्रकार छठवीं पृथिवी तक जानना चाहिये।

६६२. सानवी पृथिवीमें निर्यञ्चायुके स्थिनिवन्धाध्यवसानस्थान सवसे स्नोक हैं। इनसे मनुष्यगित श्रोर उच्चगागके स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे पुरुपवेद, हास्य, रित श्रोर यशःकीर्तिक स्थिनिवन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे सातावदनीयके स्थिति-बन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे स्नोवदिक स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान

### जीवसमुदाहार

६६३. ..... असाताके चतुःस्थानवन्धक जीव हैं। आभिनिवाधज ज्ञानावरणकी जघन्यस्थितिके वन्धक जीवोंसे पत्योपमके असंख्यातवेंभागप्रमाण स्थान जाकर दृनी वृद्धिको

१ क्रमाङ्क ११२ ताडपणं त्रुटितम्।

दुगुणविद्वा याव सागरोवमसदपुधत्तं । तेण परं पिलदोवमस्स असंखेज्जिदिभागं गंतृण दुगुणहीणा । एवं दुगुणहीणा दुगुणहीणा याव सादस्स असादस्स य उक्तस्सिया द्विदि त्ति । उवरि मूलपगदिभंगो ।

# एवं जीवसम्रदाहारे ति समत्तमणियोगदारं। एवं उत्तरपगदिद्विदिवंधो समत्तो। एवं द्विदिवंधो समत्तो।

प्राप्त हुये हैं। इसीप्रकार सो सागर प्रथकत्वतक दृनी दृनी वृद्धिको प्राप्त हुये हैं। उससे आगे पत्यके असंख्यातवेंभाग प्रमाण जाकर दृने हीन हैं। इसप्रकार सातावेदनीय आरे असातावेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके प्राप्त होने तक दृनें दृनें हीन होते गये हैं। इससे आगे भक्त मूलप्रकृतिवन्धके समान है।

इस प्रकार जीवसमुदाहार ऋनुयोगद्वार समाप्त हुआ। इस प्रकार उत्तरप्रकृतिस्थितिवन्ध समाप्त हुआ।। इस प्रकार स्थितिवन्ध समाप्त हुआ।



## 

# ज्ञानपीरके सांस्कृतिक प्रकाशन

# [ प्राकृत, संस्कृत ग्रन्थ ]

<ol> <li>महावन्ध मिहाधवल सिद्धाम्त शास्त्र ]-प्रथग भाग, हिन्दी श्रनुवाद सहित</li> </ol>	१२)				
२. महायन्ध- [ महाधवल सिद्धान्तशास्त्र ]-द्वितीय भाग	<b>१</b> १)				
३. करलक्खण[ सामुद्रिक शास्त्र ]-[ द्वितीय संस्करण ] इन्तरेखा विज्ञानका नवीन ग्रन्थ	111 <b>)</b>				
<b>४. मदनपरा</b> जय [ भाषानुवाद तथा ७ <b>≍</b> पृष्ठकी विस्तृत प्रस्तावना ]	<b>5</b> )				
५. कन्नडप्रान्तीय ताडपत्रीय यन्थमृची	१३)				
६. न्यायविनिश्चयविवरण [ प्रथम भाग ]	(۲ <b>۳</b> )				
७. न्यायविनिश्चयत्रियरण [ द्वितीय भाग ]	<b>૧પ</b> )				
<ul><li>तत्त्वार्थवृत्ति [ श्रुतसागर सूरिरचित टीका ] हिन्दी सार सहित</li></ul>	१६)				
<ol> <li>आदिपुराण [ भाग १ ] भगवान् ऋषभदेवका पुण्य चरित्र</li> </ol>	₹0)				
१०. ऋा <b>दिपुराण'</b> [ भाग २ ] भगवान् ऋषभदेवका पुण्य चरित्र	(ه)				
११. उत्तरपुराण तेर्इस तीथङ्करोंको पुण्य चरित्र	१०)				
१२. नाममाला सभाष्य [ कोश ]	₹11)				
१३. केवलज्ञानप्रश्रच्डामणि [ प्रश्नसास्त्रका त्र्रद्वितीय ग्रन्थ ]	٧)				
१४. सभाष्यरत्नमंजृषा [ छन्दशास्त्र ]	۲)				
१५. समयसार—[ त्रंग्रेज़ी ]	ج)				
१६. थिरूकुरल—तामिल भाषाका पञ्चमवेद [ तामिल लिपि ]	٧)				
१७. वसुनन्दि-श्रावकाचार	<b>4</b> )				
१५. तत्त्वार्थवार्तिक [ राजवार्तिक ] भाग १ [ इिन्दी सार सहित ]	१२)				
१६. जातक [ प्रथम भाग ]					
२०. जिनसहस्रानाम					
२१. सर्वार्थसिद्धि	१२)				
[ हिन्दी ग्रन्थ ]					
२२. ऋाधुनिक जैन कवि [ परिचय एवं कविताएँ ]	३॥।)				
२३. जैनशासन [ जैनधर्मका परिचय तथा विवेचन करनेवाली मुन्दर रचना ]	₹)				
२४. कुन्दतुन्दाचार्यके तीन रत्न [ अध्यात्मवादका अद्भुत प्रन्थ ]					
२५. हिन्दो जैन साहित्यका मंज्ञिप्र इतिहास	२) २॥=)				
भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुण्ड रोड, बनारस ५					